महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व-साहूणं
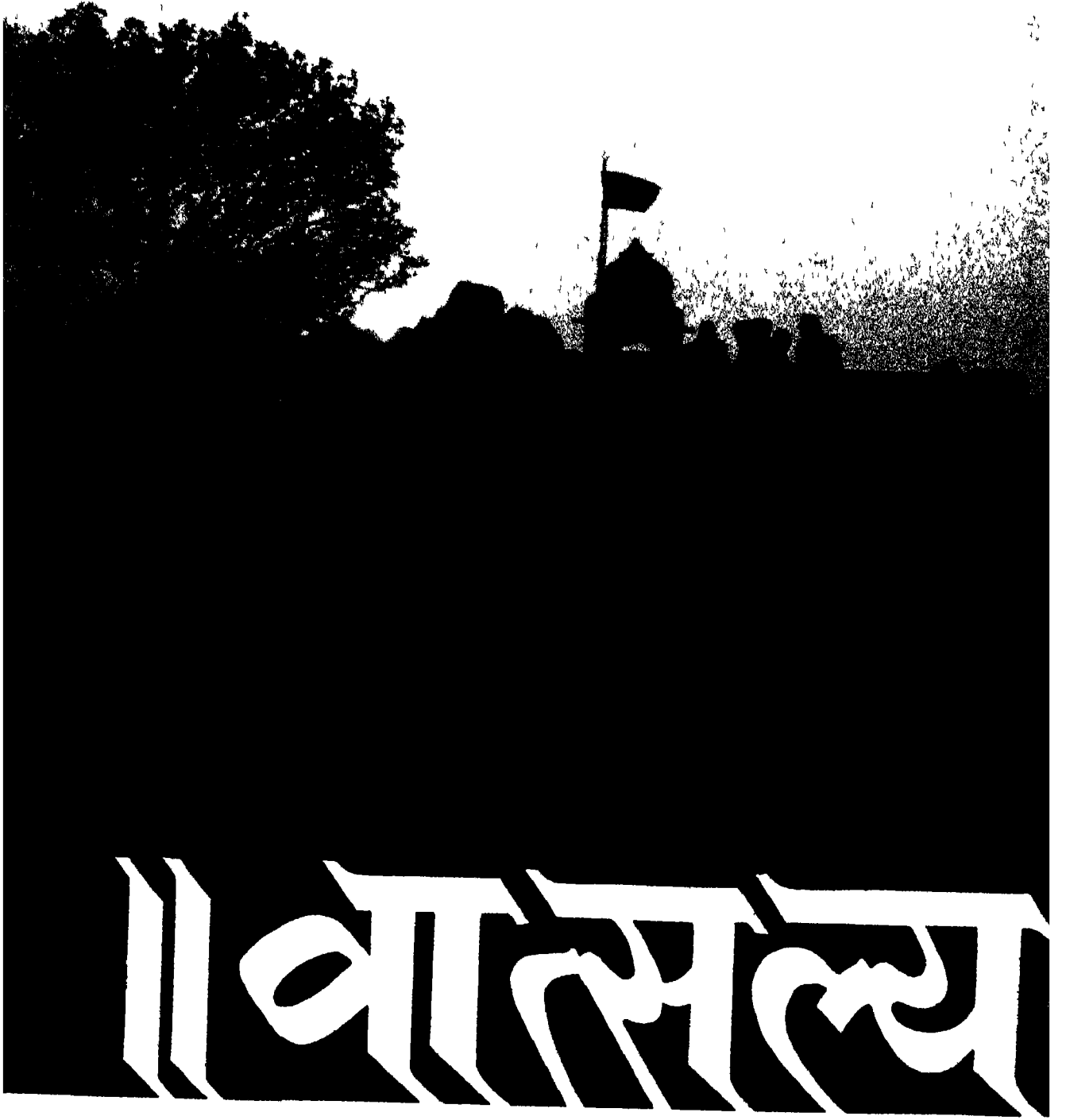
जय-जय आचार्य श्री विमलसागर!

जय-जय वात्सल्य-रत्नाकरवर!

जय-जय सन्मार्ग सूर्य!

जय-जय तुभ्यं नमोस्तु!
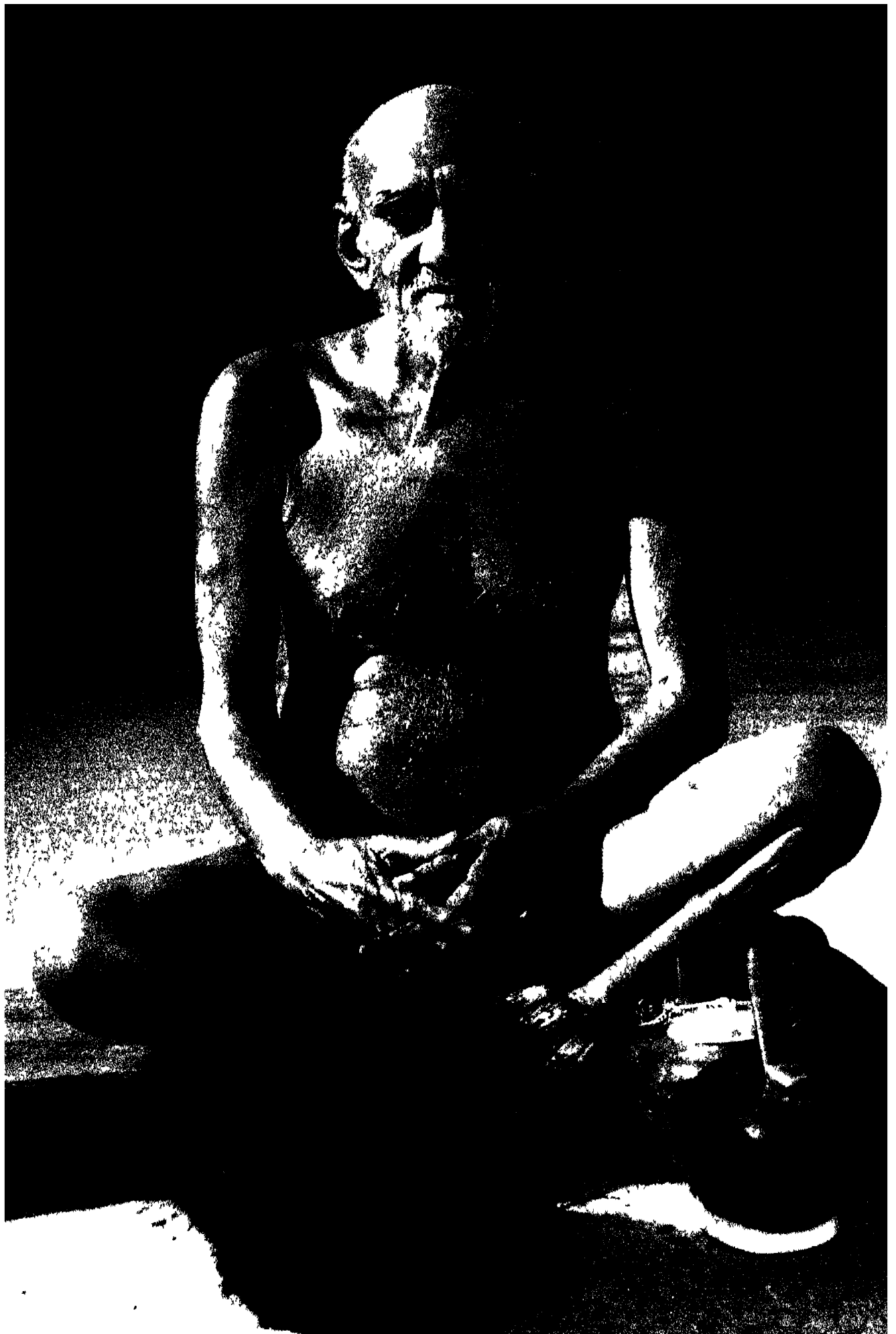
सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमलसागर अभिवन्दन ग्रन्थ

॥ वात्सल्य रत्नाकर ॥

प्रेरणास्त्रोत

उपाध्याय श्री भरतसागरजी

प्रधान सम्पादिका

आर्यिका स्याद्वादमती

प्रकाशक

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद

आशीर्वाद
स्व आचार्यकल्प १०८ श्री श्रुतसागरजी महाराज

प्रेरणास्रोत
उपाध्याय १०८ श्री मुनि भरतसागरजी

प्रकाशक
भारतवर्षीय अनेकात विद्वत् परिषद (I S B N 81 8583-04-3)

प्राप्ति स्थान
भारतवर्षीय अनेकात विद्वत् परिषद
श्री दिगम्बर जैन बीसपथी कोठी, मधुबन
पोस्ट शिखरजी-८२५३२९
जिला गिरडीह (बिहार)

आवृत्ति
प्रथम प्रति १०००

आचार्य श्री विमलसागर ७८ वी जन्म जयन्ती
आश्विन वदी ७, वि स २०५०
वीर नि स २५१९
दिनाक ८ अक्टूबर १९९३

मूल्य
स्वाध्याय

मुद्रक
एम् ॲडर्व्हटायझिग, बम्बई

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

युगप्रधान चारित्र चक्रवर्ती
सन्मार्ग दिवाकर
तपोवृद्ध ज्ञानवृद्ध शीलवृद्ध
करुणामूर्ति वत्सल रत्न
अतिशय योगी बालब्रह्मचारी
शान्ति सुधामृत के दानी
प्रशम संवेग अनुकंपा आस्तिक्य के खजाने
तेज पुञ्ज दुःखहर्ता सुखकर्ता समदृष्टा
कल्याणकर्ता प्रतिबोधक विश्वप्रकाशक
विचारमंच धुरन्धर समता मूलधर्मी के उपासक
तपःपूत, मुक्तिदूत सत्पथ पुजारी
क्षमा के निर्झरने
मधुर मुस्कान से सुशोभित
बीसवीं सदी के अमर सन्त
जिन भक्ति के अमर स्रोत
जिनबिंब निर्माण में रुचि लेने वाले
अद्वितीय सन्त
आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज के
चरण कमलों में
शतशत अभिनन्दन

प्रेरणा स्त्रोत

उपाध्याय श्री भरतसागर

सम्मेद शिखर

आशीर्वाद

श्रमण संस्कृति के इतिहास में सुनहरा पृष्ठ जोड़ने वाले "वात्सल्य रत्नाकर" अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन व प्रकाशन करने वाले सभी भव्यात्माओं को समाधिरस्तु धर्मवृद्धिरस्तु आशीर्वाद।

उपाध्याय मुनि भरतसागर
५-७-१९९३

श्रावण कृष्णा २
वी.नि. स. २५१९
वि.स. २०५०
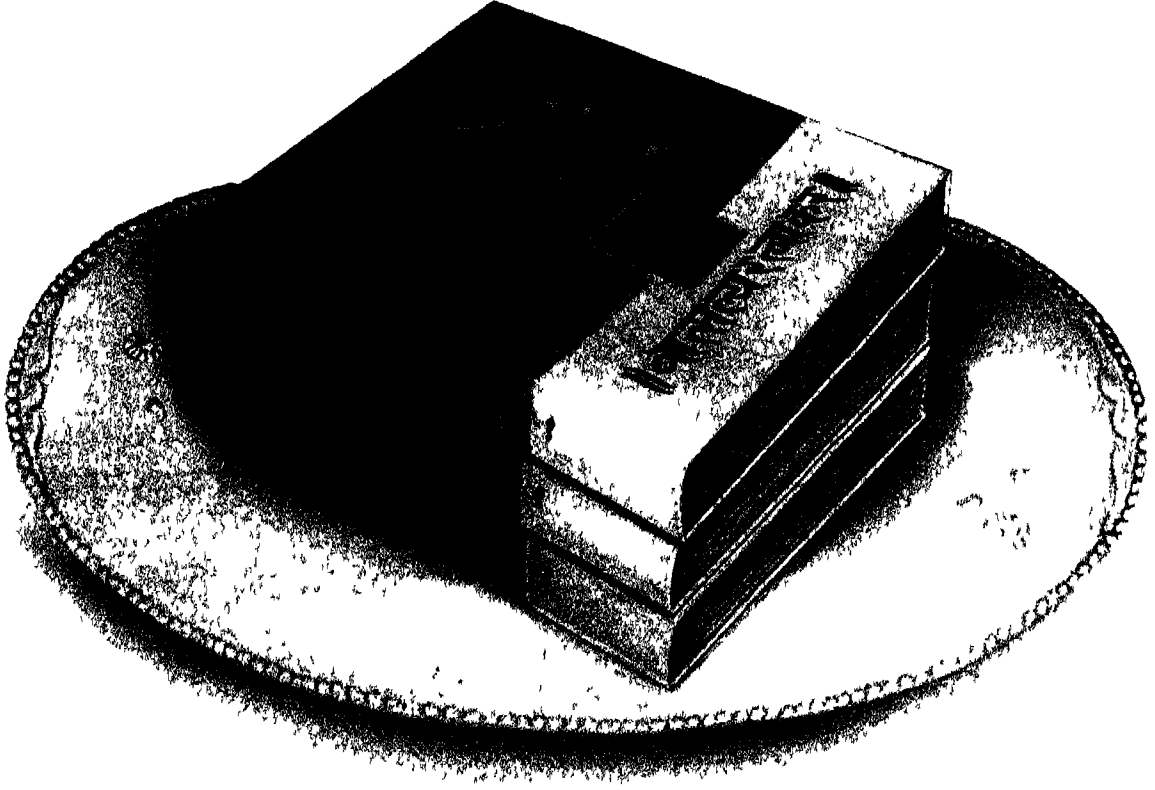
मोहनलाल चन्द्रवती जैन चैरिटेबल ट्रस्ट

श्री श्रीपाल जैन, राजेन्द्रकुमार जैन (आर. के. जैन), शरत जैन

पहाडी धीरज, देहली

९४, आर्केडिया, नरीमन पॉइन्ट, बम्बई

श्री शिखरचंद पांचूलाल पहाड़िया

कुचामनसिटी, बम्बई

श्री चेतनप्रकाश सुरेन्द्रकुमार जैन

देहली

की ओरसे

सादर समर्पित

प्रणामाञ्जलि

परम पूज्य, प्रात स्मरणीय, तपोनिधि, सन्मार्ग दिवाकर, चारित्र चक्रवर्ती १०८ आचार्यश्री विमल सागरजी महाराज वर्तमान युग के प्रमुख आचार्य है।

आचार्य परमेष्ठी पद पर विराजमान, छत्तीस मुलगुणो के धारक, रत्नत्रय के साधक, बाल-ब्रम्हचारी, परम तपस्वी, परम विद्वान, पूज्य आचार्यश्री दशक वर्षो से प्रतिष्ठित आचार्य है। चतुर्विध सघ से सुशोभित पूज्य आचार्यश्री के अनेको शिष्य पूरे भारत मे आचार्य, उपाध्याय, मुनि एव आर्यिका जैसे पावन पदो पर प्रतिष्ठित हैं तथा धर्म के प्रचार-प्रसार मे अविस्मरणीय योगदान कर रहे है। दीक्षा और सयम की दृष्टि से आप वरिष्ठतम है।

सत्य, अहिसा, दया, शान्ति, सयम, अपरिग्रह एव ब्रम्हचर्य के आप प्रतीक है। सूर्य सा तेज, चन्द्रमा सी शीतलता, सागर जैसी गम्भीरता, पर्वत जैसी अ[illegible]ता, [illegible] जैसी निर्भीकता आचार्यश्री का व्यक्तित्व है। वे त्याग और वैराग्य की, धर्म और अध्यात्म की, आत्मीयता और उदा[illegible] की साक्षात् मूर्ति है। सतत साधना एव तपश्चर्या ही आपका जीवन है।

पूज्य आचार्यश्री जैन धर्म और श्रमण [illegible] मे सर्वोपरि है। पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण पूरे भारत मे आचार्यश्री ने अनेको बा[illegible]है। आपकी प्रेरणा से कोने-कोने मे अनगिनत जिन मन्दिरो, पाठशालाओ, पुस्तकालयो, औषधाल[illegible] निर्माण एव जीर्णोद्धार हुआ है। जिनबिम्बो की प्रतिष्ठा कराने मे आचार्यश्री का परम योगदान [illegible]र्य मन्त्र देने से जिनप्रतिमाये जीवित हो उठती है। घर-घर मे मन्दिर हो, सदाचार हो, [illegible] यही [illegible]की भावना रहती है।

वात्सल्यमूर्ति, करूणा सागर, लोक [illegible]णकारी, जगत् हितैषी, [illegible] प्रसिद्ध, अत्यन्त उदार आचार्यश्री अत्यन्त लोकप्रिय है। आपकी आत्मा जन-जन के कल्याण में [illegible] है। [illegible]पका वात्सल्यभाव मानव कल्याण मे हर समय अग्रसर रहता है। आप आत्म दर्शन के द्वारा आध्यात्मिक दि[illegible] करा[illegible]र लोक यात्रा मे ससार के अनन्त प्राणियो की अपार सहायता करते है। आत्मा [illegible] आ[illegible] के साथ [illegible]णीमात्र का कल्याण आपके जीवन का प्रमुख लक्ष्य है। आप सर्व हितकारी है।

निमित्त ज्ञानी आचार्यश्री अन्तर्दृष्टा है। आपकी अहर्निश तपस्या के प्रताप से अनगिनत लोग कृतज्ञ हो चुके है। आपकी आत्मसाधना तथा तपश्चर्या मानव कल्याण के लिए अप्रतिम वरदान है। आप मानव को सासारिक दुखो से मुक्ति दिलाकर अणुव्रत धारण करने के लिए प्रेरित करते है।

आचार्यश्री के दर्शन से सिद्ध तीर्थो के दर्शन का अनुभव एव पुण्य होता है। आचार्यश्री चलते फिरते जैन तीर्थो में सम्मेद शिखर है।

आचार्यश्री मगल स्वरूप है। आप रिद्धि-सिद्धि दायक है। कितनी ही शक्तिया आपकी आज्ञा का पालन करती है। आपके दर्शन मात्र मे ही सासारिक दु ख दूर हो जाते है। आपके चरणो म जाने से आपके चारो ओर का वायुमण्डल प्रत्येक प्राणी मे त्याग और सयम की भावना जागृत करता है। आपके भामण्डल का कण-कण हमे मोक्ष मार्ग की ओर प्रेरित करता है। आपकी महिमा अपरम्पार है।

ऐसे युग प्रमुख आचार्य 'श्री विमल सागरजी महाराज' के कर-कमलों मे 'वात्सल्यरत्नाकर' ग्रथ को समर्पित करते हुए चरणो में शत शत वदन।

आसोज बदी सप्तमी, वि स २०५०,
वीर नि स २५१९
८ अक्टूबर १९९३

आर. के. जैन
९४ आर्केडिया, नरिमन पॉइन्ट
बम्बई ४०० ०२१

हे शरणागत वत्सल मुनीन्द्र तुम आश्रय हो हम आश्रित है
हे चितामणि हे कल्पवृक्ष तुम रक्षक हो हम रक्षित है
करूणा विगलित मूर्ति तुमको पाकर हम गर्वित है
इस ग्रथ रूप मे विमल भक्ति के श्रद्धा सुमन समर्पित है

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

मंगलाचरण

विशुद्धवंश परमाभिरूपो,
जितेन्द्रियो धर्मकथाप्रसक्त ।

सुखर्द्धि लाभेष्वविक्तचित्तो,
बुधैः सदाचार्य इति प्रशस्तः ॥

विजितमदनकेतुं निर्मलं निर्विकारं ।
रहितसकलसंगं संयमासक्तचित्तं ।

सुनयनिपुणभावं ज्ञाततत्त्वप्रपञ्चम् ।
जननमरणभीतं सद्गुरूं नौमि नित्यम् ॥

सम्यग्दर्शनमूलं ज्ञानस्कंधं चरित्रशाखाढ्यम् ।
मुनिगणविहगाकी[illegible]महाद्रुमं वंदे ॥

आद्य मिताक्षर

''उत्तमखमाए पुढवी, पसण्ण भावेण अच्छजलसरिसा।
कम्मिधणदहणादो, अगणीवाऊ असगादो।।
गयणमिव णिरुवलेवा, अक्खोहा सायरुव्व मुणिवसहा।
एरिसगुणणिलयाणं, पायं पणमामि सुद्धमणो।।

आचार्य उत्तम क्षमा से पृथ्वी के समान है, निर्मल भावो से स्वच्छ जल के सदृश है, कर्मरूपी ईधन के जलाने से अग्नि स्वरूप है तथा परिग्रह से रहित होने के कारण वायुरूप है। वे मुनिश्रेष्ठ आचार्य आकाश की तरह निर्लेप और सागर की तरह क्षोभरहित होते है। ऐसे गुणो के घर आचार्य परमेष्ठी के चरणो को मै शुद्ध मन से नमस्कार करता हूँ।

''**परोपकाराय सता विभूतय:**'' महापुरुषो का जीवन परोपकार के लिये होता है। प्राणी मात्र के कल्याण की भावना जिनके रग-रग मे स्फुरायमान रहती है, जो भव्यजनोके रोम-रोम मे अपनी अनुपम छवि अकित कर चुके है, अद्वितीय अलौकिक चुम्बक, हृदयस्पर्शी तथा श्रद्धालुओ के भक्तिसुमन जिन चरणारविन्दो मे सतत अर्पण हो रहे है, ऐसे परोपकारी महासन्त गुरुदेव के पावन चरण-कमलो मे त्रिकाल सिद्ध-श्रुत-आचार्यभक्ति पुरस्सर नमोस्तु। नमोस्तु। नमोस्तु।

कलिकाल मे भी अनुपम तप, बल व साधन के धनी आचार्य श्री के सहज सरल व्यक्तित्त्व को अमर कीर्ति का मूर्त रूप कैसे दिया जाय? सभी के भीतर जिज्ञासा थी। त्यागी, विद्वान्, धनिक वर्ग और जैन समाज की एक ही पुकार उठी आचार्य श्री को अभिवन्दन ग्रन्थ का समर्पण किया जावे।

सर्वप्रथम अशोकजी दिल्लीवालो ने इस भार को पूर्णरूपेण सम्हालने की सहर्ष आज्ञा मागी थी, परन्तु प्रारभ मे ग्रन्थकी रूपरेखा गहन रूप लेकर सामने आई अत अशोकजी ने असमर्थता व्यक्त की। कार्य दुरुह तो था

ही साथ ही ''श्रेयासि बहु विघ्नानि'' वाली उक्ति भी चरितार्थ हो रही थी। समस्या जटिल बनती गई, विषम परिस्थितियो से घिरा मै स्वय निर्णय लेने मे असमर्थ हुआ।

पुण्य योग से श्री पद्मपुरा अतिशय क्षेत्र पर पूज्य स्व. आचार्यकल्प श्री १०८ श्रुतसागरजी के पुनीत दर्शन का लाभ प्राप्त हुआ। महाराजश्री गभीर, दूरदर्शी व तत्त्वज्ञ, सिद्धान्त मर्मज्ञ महापुरुष थे। मैने महाराजश्री के चरण सान्निध्य मे विचार विमर्श करते हुए ग्रन्थ सम्बन्धी अपनी समस्या को रखा। आपका विशाल स्नेह और उचित निर्देश मुझे प्राप्त हुआ। मैने शीघ्रही साधुवर्ग, विद्वद्वर्ग व श्रावको से विचार विमर्श किया। सभी ने आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज के निर्देशानुसार ग्रन्थ की सयोजना मे सहमति देकर अपना सहयोग देने की सम्मति प्रदान की।

सम्पादक मडल का चयन किया गया। सभी के सामने एक समस्या थी वह यह कि विशालग्रन्थ के सम्पादन का महत् भार किसे सौपा जाय? प श्यामसुन्दरजी, नरेन्द्रप्रकाशजी का नाम सामने आया। पर व्यस्तता होने से किसी ने स्वीकृति प्रदान नही की। अत मैने व दोनों मडल के सदस्यो ने आर्यिका स्याद्वादमती का नाम इस कार्य के लिये निर्णीत किया। माताजी ने भी इस भार को उठाने मे अपनी असमर्थता व्यक्त की। माताजी ने कहा- मै जिनवाणी की सेवा व गुरु भक्ति के लिये सतत योग्यतानुसार तत्पर हूँ परन्तु यह महाभार मुझ अल्पज्ञ पर डालना उचित नही है। हम सभी मौन रह गये। कार्य प्रारभ हुआ। कार्य जब अन्तिम हद तक पहुच गया तब तक भी माताजी ने प्रधान सम्पादिका का भार लेने की स्वीकृति प्रदान नही की। अन्त मे परामर्शमडल व सम्पादक मडल तथा बुधजनो के विशेष आग्रह पर शरीर की रुग्णता के बावजूद भी आपने गुरु आशीर्वाद मान शिरोधार्य किया। माताजी को हमारा समाधिरस्तु आशीर्वाद है।

ग्रन्थ सामग्री को सचय करने के लिये विशेष त्यागीवर्ग से सम्पर्क करना, पत्र व्यवहार करना आदि मुख्य कार्यो के लिये प धर्मचन्दजी, ब्र कु प्रभाजी ने विशेष परिश्रम कर हमे विशेष सहयोग प्रदान किया है, दोनो के लिये हमारा यही आशीर्वाद है कि आप लोग जिन दीक्षा लेकर स्व-पर कल्याण करे।

साथ ही इस कार्य के लिये विशेष अर्थ सहयोगी सघपति श्री श्रीपालजी, आर के जैन, बम्बई, सघपति श्री शिखरचन्दजी पाचूलालजी पहाड़िया, बम्बई, श्री सुरेन्द्रजी, दिल्ली तथा अन्य भी सहयोगियो को हमारा यही आशीर्वाद है कि अपनी चचला लक्ष्मी का सप्तक्षेत्रो मे दान देकर जीवन को कृतार्थ करे।

उपाध्याय भरतसागर

''जना घनाश्च वाचालाः सुलभाः स्युर्वृथोत्थिताः।
दुर्लभा ह्यन्तरार्द्रास्ते जगदभ्युज्जिहीर्षवः''॥४॥ आ.॥

जिनका उत्थान (उत्पत्ति और प्रयत्न) व्यर्थ है ऐसे वाचाल मनुष्य और मेघ दोनो ही सरलता से प्राप्त होते है किन्तु जो भीतर से आर्द्र होकर (दयालु और जलसे पूर्ण होकर) जगत् का उद्धार करना चाहते है ऐसे मनुष्य और मेघ दोनों ही दुर्लभ है।

''गुणस्तोक तदुलघ्य तद्बहुत्त्वकथा स्तुति।
आनन्त्याते गुणावक्तु शक्यास्त्वयि सा कथम्''॥

स्तुति किसे कहते है? गुणो का अतिक्रम करके कथन करना स्तुति कहलाती है पर आचार्य देव श्री गुरुवर्य अनन्तगुणो के आगार है फिर उनका स्तवन, उनकी अभिवन्दना हम तुच्छ बुद्धियो के लिये कैसे शक्य हो सकती है? फिर भी जहाँ सूर्य का प्रकाश नही वहाँ दीप के टिमटिमाते प्रकाश से भी कार्य चलता ही है। आचार्य श्री का पावन व्यक्तित्त्व स्व-परोपकार की निर्झरणी मे गोता लगाते हुए पवित्रता की चरम सीमा की ओर बढता चला जा रहा है।

पूज्य गुरुदेव के अभिवन्दनार्थ अभिवन्दन ग्रन्थ का समर्पण तो एक नियोग पूर्त मात्र है, सच तो यह है कि तवकृत उपकार इस भारत वसुन्धरा पर अगण्य है। समुद्र मे पानी की बूदो को गिनने का प्रयास वाचाल व्यक्ति ही करेगा, सभ्य व्यक्ति इस अज्ञता को क्यो करेगा, हम लोगो का यह अभिवन्दन ग्रन्थ समर्पण का प्रयास भी उसी प्रकार की वाचालता समझना चाहिये।

हे गुरुदेव। चन्द्रसम शीतल सूर्यसम तेजपुञ्ज। पृथ्वी सम क्षमाशील। सरोवर सम गभीर। अनुकपाशील हृदय के धारक। आपके अप्रतिम गुणो का गान करने के लिये बृहस्पति भी समर्थ नही है, फिर हम अल्पज्ञो का इसमे

प्रवेश कैसे हो सकता है। फिर भी आपकी एकमात्र भक्ति ही हम भक्तगण शिष्यजनो को बलात् ऐसा करने के लिये प्रेरित कर रही है। आप जैसे निस्पृही सत को इससे क्या लाभ? लाभ तो हमारा है। स्तवन या अभिवन्दन से आपका क्या उपकार होगा? उपकार या अनुपकार से आपको प्रयोजन भी क्या? उपकार तो हमारा होगा—**''अभिवन्दना आपकी उपकार हमारा''।**

हे गुरुदेव। राग से रहित होने के कारण आपको पूजा से कोई प्रयोजन नही है और वैर से रहित होने से आपको निन्दा से कोई मतलब नही है। फिर भी आपके प्रशस्त गुणो का स्मरण हमारे मनको पापरूपी कालिमा से दूर करने वाला है।

अनादिकाल से भारतभूमि ऋषि मुनियो की भूमि रही। इस धरा पर जब तक दिगम्बर सन्तो का विचरण रहेगा तभी तक यहाँ धर्म भी रहेगा। जिस क्षण दिगम्बर सन्तो का अभाव होगा उसी क्षण धर्म का भी अभाव इस धरातल से हो जायेगा। दिगम्बर सन्त इस वसुन्धरा की अमूल्य निधि है। सन्त कौन है— **''जिसने सम्यक् प्रकारेण तृष्णा का अन्त किया है वही सन्त कहलाता है''।**

सन्तो ने अपने अध्यात्म मार्ग मे विहार करते हुए भी करुणापूर्वक सन्मार्गोपदेश देकर पथ प्रदर्शन किया है। पथ विस्मृत भव्यो को सत्पथप्रदर्शन द्वारा मोक्षमार्गारूढ करना सन्तो का अपाय-विचय धर्म्यध्यान कहलाता है। सत्पथ प्रदर्शक श्रमणसस्कृति के उन्नायक अनुकपापूर्ण आचार्यो ने धर्म का प्रद्योतन कर जिनधर्म की प्रभावना कर धर्मतीर्थ को गतिमान रखा।

भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् गौतमगणधर स्वामी को केवलज्ञान हुआ। गौतमस्वामी के निर्वाण के पश्चात् सुधर्माचार्य को केवलज्ञान हुआ। अन्तिम अनुबद्ध केवली जम्बूस्वामी हुए। क्रमश ज्ञान का ऱ्हास होता गया। तीर्थ के सरक्षक आचार्यो ने अपना कर्तव्य निभाया। आचार्य गुणधर, धरषेण, पुष्पदन्त, भूतबली, यतिवृषभ तथा कुन्दकुन्द उमास्वामी, समन्तभद्र, पूज्यपाद, अकलकदेव, विद्यानन्दस्वामी आदि महायशस्वी आचार्य हुए। इन्होंने अपने ज्ञान और वैराग्य तथा साधना के बल पर स्व-पर कल्याण किया। इन श्रमणराजो ने वीर शासन की प्रभावना मे अद्वितीय योगदान दिया। इसी श्रमणपरम्परा मे बीसवीं सदी मे महातपस्वी अनुकपापूर्ण आचार्य श्री महावीर कीर्तिजी अठारह भाषा के ज्ञाता, तत्त्वज्ञ, जिनधर्म मर्मज्ञ हुए। आचार्य महावीर कीर्तिजी के प्रथम व परम शिष्य आचार्य विमलसागरजी है। आचार्य श्री अध्यात्म की जीती जागती मूरत, दया-करुणा-क्षमा की साक्षात् मूर्ति इस युग मे सम्प्रति प्रधान जैनाचार्य है।

सम्प्रति मानव जीवन मिथ्यात्व की चकाचौंध मे फसा सच्चे देव-शास्त्र-गुरु को भी नही पहचानता, सत्य से गुमराह हो भटक रहा है। ऐसे विषम कलिकाल मे धर्मनेता आचार्य श्री जी ने अपनी अनुकम्पा से लाखो जीवो को मिथ्यात्व से छुड़ाकर सन्मार्ग पर लगाया है। आपने इस भारत वसुन्धरा पर यत्र-तत्र विहार कर जिन शासन की महती प्रभावना करते हुए समाज का जितना उपकार किया है उसे जैन या भारतीय इतिहास कभी भी विस्मृत नही कर पायेगा। अनेकानेक वर्षो मे इस धरा पर ऐसे महापुरुषो का जन्म होता है। आप जैसा साधक, जन-मन प्रभावक, करुणामूर्ति सन्त, आज इस पृथ्वीतल पर दुर्लभ है।

धर्म के दो तट है— मुनि-आर्यिका व श्रावक-श्राविका। इनकी व्युच्छित्ति होगी तो धर्म का नाश हो जायेगा।

बिन्दुओ के योग से सिन्धु है। यदि एक बिन्दु भी सिन्धु से पृथक हो जाता है तो सूर्य रश्मि उसे सुखा देती है उसी प्रकार जो साधु या श्रावक समाज से हटकर रहेगा वह सूख जावेगा।

प्रथम तीर्थंकर वृषभदेव से लेकर आज तक साधु व समाज की "परस्परोपग्रहो जीवानाम्" रूप परिपाटी अनवरत चली आ रही है। कभी इसका उत्थान व पतन भी देखा गया। "तिलोयपण्णत्ति" ग्रन्थ मे उल्लेख मिलता है कि चौबीस तीर्थंकरो के बीच सात बार मुनि दीक्षा का ह्रास हुआ, सात बार यह परिपाटी छूटी, फलत उस समय धर्म की व्युच्छित्ति हुई, आचार-विचार की हीनता हुई। जब तक धर्मात्मा है तब तक ही धर्म रहेगा **"न धर्मो धार्मिकैर्बिना" धर्मात्मा के बिना धर्म नही।**

जैसे गाडी बनानेवाला कोई होता है और उसे चलानेवाला कोई और होता है ठीक इसी प्रकार तीर्थंकरो ने जिन सिद्धान्तो का प्रवर्तन किया आचार्यो ने उसका उपबृहण किया। तीर्थकर तीर्थ के प्रवर्तक है और आचार्य उसके दिग्दर्शक है। जैसे ड्राइवर के हाथो गाड़ी की सुरक्षा है, यात्रियो की सुरक्षा है वैसे ही आचार्यो के हाथो मे धर्मतीर्थ व धर्मात्माओ की सुरक्षा है।

"न हि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति" स्व-पर उपकारी सन्तराज के उपकारो को लिपिबद्ध करना समुद्र मे मोतियो को गिनने के समान अशक्य है। आचार्य श्री के अभिवन्दनार्थ अभिवन्दन ग्रन्थ समर्पण की प्रथम चर्चा सन् १९८० में श्री अशोकजी दिल्लीवालो ने उपाध्याय श्री भरतसागरजी महाराज के समक्ष रखी थी। उपाध्यायजी ने स्वीकृति दी थी। इस योजना का क्रियान्वयन भी नही हो पाया कि इस सबध मे दूसरी-दूसरी रूपरेखाए उपाध्याय श्री के समक्ष आती रही। "श्रेयासि बहुविघ्नानि"। अशोकजी भी अपने कार्य को मूर्त रूप नही दे पाए। कारण अनेकानेक विघ्नरूप दीवारे सामने आकर खडी हो गई। इसी ऊहापोह मे अभिवदन ग्रन्थ की चर्चा समाज के विद्वद्वर्ग, श्रेष्ठीवर्ग तक पहुँच गई। परन्तु ग्रन्थ की सही रूपरेखा नही बन पाई। इसी परेशानी मे लगभग ८ वर्ष की लबी अवधि बीत गई।

सन् १९८९ मे सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री के ७४ वे जन्म-जयन्ती के शुभावसर पर जैन समाज की एक आवाज गूज उठी "अब अभिवन्दन ग्रन्थ कब?" यह गूज उपाध्याय श्री के कर्ण को बार-बार स्पर्श करने लगी। जैन समाज के कतिपय विद्वानो व श्रेष्ठीवर्ग ने उपाध्याय श्री के चरण सान्निध्य मे ग्रन्थ की नवीन सयोजना करने का विचार प्रस्तुत किया। तत्काल ही सारी रूप रेखा तैयार कर ग्रन्थ के शीघ्र प्रकाशन का निर्णय लिया गया।

आचार्य श्री जी धर्मरत्न के धारक महातीर्थ है। यही कारण है कि उनके सान्निध्य मे परमशान्ति का अनुभव होता है। नीतिकार की निम्न पक्तिया चितनीय है—

> चन्दन शीतल लोके चन्दनादपि चन्द्रमा।
> चन्द्र चन्दनयोर्मध्ये, शीतला साधुसगति ॥

पचमकालीन इन आचार्य श्री ने गुरु परम्परा से प्राप्त मन्त्र-तन्त्र विद्याओ मे पारगत हो सहस्रों दुखी जीवो के दुख दारिद्र को दूर करते हुए उन्हे मोक्षमार्ग पर आरूढ किया है। आज भी शताधिक लोग प्रतिदिन गुरुदेव के चरणो मे अपनी दुख भरी कथा कहने आते है और प्रसन्न वदन लौटते है।

ऐसे मुनि पुगव, आचार्यरत्न की पुण्यकीर्ति को अक्षुण्ण व चिरस्थायी बनाये रखनेवाला यह अभिवन्दन ग्रन्थ सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री के जीवन का कीर्ति स्तभ है। इस ग्रन्थ का सार्थक नाम ''वात्सल्य रत्नाकर'' है जिसका चयन प नरेन्द्रप्रकाशजी फिरोजाबाद ने किया।

इस विशालकाय ग्रन्थ को तीन खण्डो मे विभाजित किया गया

प्रथम खण्ड— वात्सल्य रत्नाकर का प्रथम खण्ड पूर्णतया वात्सल्यमूर्ति सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमलसागरजी के कर-कमलों मे समर्पित है। इस खण्ड का विभाजन सात उपखण्डो मे हुआ है— १ श्रद्धा सुमन, २ भावोद्गार, ३ मनोज्ञ व्यक्तित्त्व, ४ बोधामृत, ५ तीर्थाटन व धर्मप्रभावना, ६ योग साधना व ७ प्रश्न हमारे उत्तर आपके। इस प्रकार यह खण्ड आचार्य श्री के प्रेरणास्पद व्यक्तित्त्व की स्पष्ट झलक से पाठको को आकर्षित करता है।

द्वितीय खण्ड— यह खण्ड चार उपखण्डो मे विभाजित है— १ पञ्च परमेष्ठी २ जैन दर्शन आगम और सिद्धान्त ३ आचार्य कुन्दकुन्द ४ जैन शासन के प्रभावक आचार्य। इस खण्ड मे विशिष्ट त्यागीवर्ग, आचार्य, उपाध्याय, मुनि व विदुषी आर्यिका माताओ तथा विद्वानो के सारगर्भित लेख है।

तृतीय खण्ड— यह खण्ड श्रमण सस्कृति के उपासको को समर्पित है। जो श्रमण सघाधिपति आचार्यो, उपाध्यायो, मुनियो व श्रावकों के आचार के प्रति सागोपाग विवेचन प्रस्तुत करता है। यह खण्ड ''नौ'' उपखण्डो मे विभाजित किया गया है— १ श्रमणाचार २ श्रावकाचार ३ ससार मार्ग ४ जैन तीर्थ ५ जैन पर्व ६ जैन सस्कृति व साहित्य ७ प्रकीर्णक व ८ जैन रामायण। यह खण्ड विविध सामग्रियो से भरपूर मूर्तिकला, मन्त्र विद्या आदि सामग्री से पाठक को आकर्षित कर रहा है।

विशालकाय ग्रन्थ के सम्पादन का महत् भार मुझ जैसी अल्पज्ञा के कधों पर डाला गया। यह कार्य मेरे लिये अतिभारारोपण ही था। फिर भी शक्त्यनुसार, अपनी बुद्धि अनुसार इसे सुन्दर सरस तथा उपयोगी बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है। उपाध्याय श्री की यही भावना रही कि ग्रन्थ के विषय ऐसे हो जो व्युत्पन्न-अव्युत्पन्न सभी के उपयोगी हो, यह मात्र अल्मारी की शोभा बढाकर न रह जावे। तदनुसार ही लेखो का चयन भी हुआ है। मुझे विश्वास है कि यह ग्रन्थ जन-जन का उपयोगी होकर अज्ञान अन्धकार को दूर कर ज्ञान किरण को प्रसारित करने मे सक्षम होगा।

एक कार्य को पूर्ण करने के लिये अनेक समर्थ कारणो की महती आवश्यकता है। सर्वप्रथम मै उन दिवगत आत्मा परम श्रद्धेय आचार्यकल्प श्री १०८ श्रुतसागरजी महाराज के प्रति नतमस्तक हूँ जिन्होंने ''पद्मपुरा तीर्थ'' पर ग्रन्थ प्रकाशन के लिये दिशा बोध दिया तथा विशेष महत्त्वपूर्ण विचारो से हमे अवगत कराया।

मै नतमस्तक हूँ हमारे प्रेरणा स्रोत गमक गुरु उपाध्याय श्री १०८ भरतसागरजी महाराज के चरण-कमलो मे जिनका सान्निध्य, जिनके विचार, जिनका परामर्श तथा जिनका आशीर्वाद हमे प्रतिपल सम्बल देता रहा। आपश्री की उदारता, विशाल सहृदयता ने सतत मार्ग दर्शन देकर मुझे अनुगृहीत किया है। अन्यथा मुझ अल्पज्ञा के लिये यह कार्य असभव ही था।

ग्रन्थ की रूप रेखा व विषयो के चयन मे सहयोगी पूज्य मुनि श्री अमितसागरजी महाराज के उपकार को विस्मृत नही किया जा सकता। उन सभी त्यागी वृन्द (आचार्य, मुनि, आर्यिका) के प्रति मै कृतज्ञता व्यक्त करती

हूँ जिन्होने हमें समयावधि मे ही अपनी विनयाञ्जलि और लेख तथा भावोद्गार आदि प्रेषित कर उपकृत किया है क्योकि ये ही हमारे मूल स्तभ है। परन्तु मै क्षमाप्रार्थी हूँ कि हम कारणवशात् समयावधि मे ग्रन्थ प्रकाशन नही कर पाये, अतिक्रम हो गया है।

मै उन बुधजनो के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होने अपनी लेखनी को आचार्य श्री के गुणानुवाद से पावन कर लिया है तथा जिन्होने आगमानुकूल सैद्धान्तिक लेखो का लेखन कर हमे अपनी सेवा का समर्पण किया है, वे भी धन्यवाद के पात्र है।

पूज्या १०५ आर्यिका नन्दामतीजी माताजी जिन्होने हमे विशेष सहयोग दिया, मै उनकी उदारता के लिए कृतज्ञता ज्ञापन करती हूँ। लेखो के वाचन के समय विभिन्न ग्रन्थो की आवश्यकता पड़ने पर जब भी माताजी के पास पहुँचते उन्होने तुरन्त ग्रन्थ प्रदान किये, कभी इन्कार नही किया। मै आप श्री के चरणो मे नतमस्तक हूँ।

विभिन्न लेखको के लेख विभिन्न प्रकार के रहे। किन्ही मे वर्ण-मात्रा की अपेक्षा अशुद्धता अथवा लिपि की अस्पष्टता रही अत कुछ लेखो की प्रेस कापी पुन की गई इस कार्य मे आर्यिका मुक्तिमतीजी, क्षुल्लक स्याद्वादसागरजी, क्षु उद्धारमतीजी, सघस्थ ब्र प्रभाजी, कुसुमजी व उर्मिलाजी व श्रीमान् देवेन्द्रकुमारजी गोधा ग्वालियर का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ ये सभी आशीर्वाद के पात्र है। सबके सहयोग के लिये मै कृतज्ञता ज्ञापन करती हूँ।

धर्मनेता, श्रेष्ठी वर्ग, राजनेता, देश नेता, सभी आर्य पुरुष धन्यवाद के पात्र है जिन्होने विनयाञ्जलि, भावोद्गार आदि प्रस्तुत कर अपने जीवन को सफल बनाया है।

कर्मठ कार्यकर्ता धर्मचन्दजी शास्त्री के श्रम को विस्मृत नही किया जा सकता जिन्होने ग्रन्थ की विशाल सामग्री जुटाने मे, विशेष अनुभव प्रदान करने मे हमारा पूर्ण सहयोग किया है।

ग्रन्थ के प्रथम व प्रमुख परामर्शदाता भाई अशोकजी दिल्लीवालो के लिये पूर्ण आशीर्वाद है जिनके सुन्दर विचारो से आज यह महान् कार्य हुआ है।

गुरुभक्ति मे निरत श्रद्धालु दान-शिरोमणि सघपति सेठश्री श्रीपालजी व उनका परिवार धन्यवाद के पात्र है। आपके पुत्र चिरजीव राजेन्द्रजी का प्रबल पुरुषार्थ इस ग्रन्थ मे अकथनीय है। आपने तन-मन-धन से एकजूट होकर इस कार्य को अनेको कठिनाईयो का सामना करते हुए धैर्य व साहस के साथ पूर्ण किया है, आप के लिये कोटिश आशीर्वाद है। गुरुभक्त सघपति श्री श्रीपालजी राजेन्द्रकुमारजी, बम्बई व सघपति श्री शिखरचन्दजी पाचूलालजी पहाडिया, बम्बई-कुवामनसिटी, श्री सुरेन्द्रजी जैन, दिल्ली तथा सम्माननीय सभी सदस्यगण दातारो को पुन पुन आशीर्वाद है जिन्होने अपनी चचला लक्ष्मी को गुरु भक्ति मे समर्पितकर यश प्राप्त किया है।

ग्रन्थ के इस महत् कार्य मे फोटोग्राफर श्री अविनाश मेहता, बम्बई, साज-सज्जा मे निपुण श्री प्रशान्त शाह, बम्बई, तथा श्री भरतकुमार काला, सौ शैलबाला काला, बम्बई आदि तथा इसके अलावा प्रत्यक्ष-परोक्षरूप से सहयोगी सभी कार्यकर्ताओ के लिये हमारा आशीर्वाद है। अन्त मे सभी सहयोगियो के लिये मै कृतज्ञता ज्ञापन करती हूँ।

"को न विमुह्यति शास्त्र समुद्रे" वात्सल्य रत्नाकर अभिवन्दन ग्रन्थ का महत् भार मुझ अल्पज्ञ ने भक्तिवशात्

यथायोग्य पूर्ण करने का प्रयास किया है फिर भी सयोजन मे, शुद्धि करण मे, आभार व्यक्त करने मे त्रुटी रह जाना स्वाभाविक है अत विज्ञजन क्षमा करेगे। ज्ञानी गुरुजन त्रुटियो का सशोधन कर मुझे अनुगृहीत करे यह मेरी करबद्ध प्रार्थना है।

अन्त मे यह सुनिश्चित है कि ''एक कार्य के लिये अनेक कारणो की आवश्यकता होती है'' तथा बिना कारण के कार्य नही होता। अत आचार्य श्री के पावन कर-कमलो मे गुरु भक्ति का समर्पण एक छोटा सा सुगधित पुष्प जिसकी कमलवासना मे प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से भी जिन-जिन त्यागीवृन्द तथा भव्य महानुभावो का हमे सहयोग प्राप्त हुआ है उन सभी का हमारी ग्रन्थ प्रकाशन समिति कृतज्ञता ज्ञापन करती है। ''हम कृतज्ञ है सभी सहयोगियो के''।

अन्त मे सन्मार्ग-दिवाकर, वात्सल्य-रत्नाकर परमपूज्य गुरुदेव आचार्यश्री के पावन चरणारविन्द मे केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद बार शतश सिद्ध श्रुत आचार्य भक्ति पुरस्सर नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

''तुभ्य नम करुणामृत सागराय, तुभ्य नम सकलतीर्थ सुवन्दकाय।
स्याद्वाद सूक्ति सरणि प्रतिबोधकाय, तुभ्य नम विमलसिन्धु गुणार्णवाय''।।

आ स्याद्वादमती

आभार

भारतीय सस्कृति ऋषियो, मुनियों, साधु एव सन्तो की परम्परा से भरी पड़ी है, उनके उपदेश हमे सास्कृतिक विरासत के रूप मे मिले है।

आज के विकासवादी विज्ञान का मूल आधार प्राचीन महापुरूषो के चिन्तन का ही फल है, जिसे आज का युग विज्ञान प्रयोग रुप में प्रतिपालन करता है।

भगवान महावीर के जन कल्याणकारी सन्देश आज चारो ओर मुखरित हो रहे है तथा जन जन के जीवन मे सत्य अहिसा और विश्व मैत्री के भाव स्फुरित हो रहे है यह अत्यन्त हर्ष का विषय है।

प पू वात्सल्य रत्नाकर, त्यागमूर्ति, चारित्र उपासक आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज का हृदय बड़ा विशाल है, वे सरलता की मूर्ति है, त्याग वैराग्य की धारा उनके जीवन मे प्रवाहित हो रही है। स्वपर कल्याणार्थ आचार्य श्री ने ७८ वर्ष का मूल्यवान जीवन समर्पित किया है। सत्य, अहिसा और विश्व मैत्री के प्रचारार्थ उन्होने हजारो मीलो की पद यात्राऐं कर जन जीवन को उद्‌बोधित किया है।

आचार्य श्री की हीरक जयती वर्ष के उपलक्ष्य मे स्मृति स्वरुप परम पू आचार्य श्री के विशिष्ठ शिष्य ज्ञान दिवाकर उपाध्याय श्री भरतसागर जी महाराज की प्रेरणा एव पू आर्यिका स्याद्‌वादमती माताजी के निर्देशन मे ७५ आचार्य प्रणीत ग्रन्थो के प्रकाशन का महानतम कार्य सुन्दर रुप मे सम्पन्न हुआ। यह हम सब के लिए प्रसन्नता का विषय है। इस अवसर पर अनेक स्थानो पर शिक्षण शिबिर, वाचनालय आदि जन सेवा के कार्य के साथ ७५ विद्वानो का सम्मान भी किया गया है। इसी प्रकार ७५७५ युवावर्ग मे सप्तव्यसन का त्याग करने का सकल्प लिया। यह सभी कार्य पू उपाध्यायश्री की प्रेरणा एव आशीर्वाद का फल है।

अभिवन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन मे श्री ज्ञान दिवाकर पू श्री उपाध्याय भरतसागरजी का तो योगदान है ही। ग्रन्थ की प्रधान सम्पादिका पू आर्यिका स्याद्‌वादमतीजी ने स्वास्थ ठीक न होते हुए भी अपना पूर्ण योगदान देकर महानतम कार्य जो वर्षो से रुका पडा था उस ज्ञान यज्ञ को अब पूर्ण कर आचार्यश्री के कर कमलो मे भेंट करने का सकल्प लिया है। साथ ही इस ज्ञान यज्ञ को पूर्ण करने मे सघ सचालिका-ब्र श्री चित्राबाईजी दिगे, ब्र कु प्रभा पाटनी, सघस्थ तथा अन्य धर्म बन्धुओ का प्रत्यक्ष और परोक्ष रुप मे सहयोग प्राप्त हुआ है जिनका मै क्या धन्यवाद ज्ञापन करुँ? मेरे पास धन्यवाद के शब्द ही नही है। यह सब उनकी गुरु भक्ति है।

इस ग्रन्थ के मुख्य कर्णधार श्रीमान दानवीर आधुनिक भामाशाह सघपति सेठ श्री श्रीपाल राजेन्द्रकुमारजी, बम्बई ने जो उदारता पूर्वक अर्थ का सहयोग किया है मै उनको हृदय से धन्यवाद देता हूँ तथा विशेष सहयोगी वर्तमान मे सघपति श्री शिखरचन्द पाचूलाल पहाडिया, सुरेन्द्रजी जैन को भी धन्यवाद देता हूँ तथा वीर प्रभू से प्रार्थना करता हूँ कि वे सपरिवार दीर्घ काल तक धर्म एव समाज की सेवा करते रहे।

जैसे वर्षा से पूर्व या वर्षा के पश्चात् जब कभी नीलगगन मे इन्द्र धनुष्य की मनोहर छटा छिटकती है

तो दर्शक मुग्ध हो कर देखते रहते है, उस सुरम्य दृश्य को देखते-देखते आँखे अघाती नही, मन भरता नही और हृदय की उत्सुकता कम नही होती, वैसे जैनाचार्य वात्सल्य रत्नाकर, त्यागमूर्ति, तीर्थभक्त आचार्य श्री विमल सागर जी का व्यक्तित्व का दर्शन करते समय भी मन कभी अघाता नही, बार बार उन्हे देखने को तृषित होता है। जब जब ज्ञान की आँखो मे श्रद्धा की ज्योति जगती है और आचार्य श्री के स्वच्छ, सौम्य, दिव्य व्यक्तित्व की प्रतिमा का दर्शन करते है तो सचमुच ऐसा ही लगता है कि अहो। उनका व्यक्तित्व कितने रमणीय रगो मे रगा है, यह कह पाना व समझ पाना अति कठिन है, सिर्फ अनुभूति होती है। आचार्य श्री सरलता की साकार मूर्ति है, विनम्रता के पुञ्ज है। ऐसे महान साधक के कर कमलो मे अभिवन्दन ग्रन्थ समर्पित करना महान सौभाग्य की बात है। सत पुरुष राष्ट्र पुरुष होते है। इन राष्ट्र पुरुषो का अभिवन्दन राष्ट्र का अभिवन्दन है। प्रकाशन समिति आचार्य श्री के कर कमलो मे बृहद्काय ग्रन्थ समर्पित कर स्वय गौरव का अनुभव करती है।

ग्रन्थ के प्रकाशन मे आशीर्वाद प्रदाता, प्रेरणा स्रोत सन्त श्री, सम्पादक मण्डल, प्रकाशन समिति, दानवीर आदि का बहुत ही आभारी हूँ जिनके अमूल्य मार्गदर्शन से यह सब सम्भव हुआ। ग्रन्थ की साज सज्जा एव उत्कृष्ट मुद्रण के लिए भाई श्री आर के जैन, प्रशान्त शाह, श्री भरतकुमार काला, सौ शैलबाला काला, बम्बई सर्वाधिक धन्यवाद के पात्र है जिन्होने अपना पूरा समय इस कार्य मे लगाकर सत्यता को सुन्दरता के साचे मे ढाला है।

अन्त मे प पू उपाध्यायश्री के चरणो मे वदन करता हूँ कि पू श्री के निर्देशन मे श्री भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सस्था का निर्माण हुवा तथा अल्प अवधि मे अनेकानेक आचार्य प्रणीत ग्रन्थो का प्रकाशन हो सका। आज सस्था युवा रुप मे है तथा पू श्री को विश्वास दिलाता हूँ कि सस्था आपके मगलमय आशीर्वाद से आगे धार्मिक एव पुण्यवर्धक कार्य करती रहेगी।

पू आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज शतायु होकर आत्म साधना मे लीन हो परोपकार म सहायी बने। पू श्री के चरणो मे नमोस्तु करता हूँ, तथा आशीर्वाद चाहता हूँ कि यह परिषद जैन धर्म, साहित्य एव समाज की निरन्तर सेवा करती रहे। इसी भावना के साथ पुन सभी चारित्र आराधका के चरणो मे वदन।

णमो लोए सव्वसाहूण।

ब्र धर्मचद शास्त्री
प्रतिष्ठाचार्य
अध्यक्ष
श्री भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
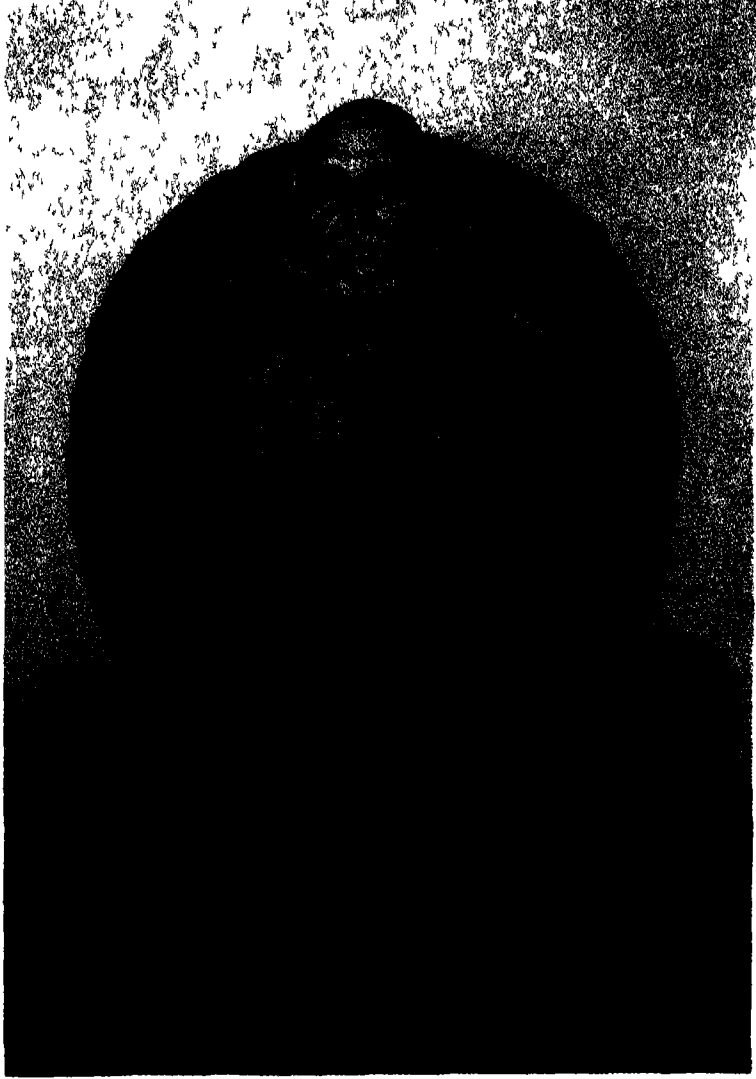
आचार्य श्री विमलसागरजी महाराजके दीक्षा गुरु

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

अनुक्रमणिका

प्रथम खंड

श्रद्धासुमन

भावोद्गार

अनुक्रमणिका

द्वितीय खण्ड

पञ्चपरमेष्ठी

जैन दर्शन आगम और सिद्धान्त

आचार्य कुन्दकुन्द

जैन शासन के प्रभावक आचार्य

अनुक्रमणिका

तृतीय खण्ड

श्रमणाचार

श्रावकाचार

संसार मार्ग

अष्ट कर्म

जैनतीर्थ. .

जैन पर्व और व्रत विधान

जैन संस्कृति व साहित्य

प्रकीर्णक

राष्ट्रपति
भारत गणतंत्र
PRESIDENT
REPUBLIC OF INDIA

२ अक्तुबर १९९३

सन्देश

जैन दर्शन एक वैज्ञानिक दर्शन है और व्यावहारिक भी। इसमें निहित विश्व कल्याण की उदात्त चेतना स्तुत्य है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि जैन दर्शन पर "वात्सल्य रत्नाकर" ग्रथ का प्रकाशन किया जा रहा है।

मै इस प्रयास की सराहना करता हूँ।

शंकर दयाल शर्मा
डॉ. शंकर दयाल शर्मा

कृषि मंत्री
भारत सरकार
नई दिल्ली-११०००१
AGRICULTURE MINISTER
GOVERNMENT OF INDIA
NEW DELHI-110 001

दिनाक २० सितम्बर, १९९३

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज के तत्वावधान में "वात्सल्य रत्नाकर" बृहद् ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है। उक्त ग्रन्थ में जैन सस्कृति के विश्व व्यापी सिद्धान्तों एव जगत् के प्राणी मात्र के कल्याण तथा सुख शान्ति हेतु २४ तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित उपदेशों का इस ग्रन्थ में सकलन एक सराहनीय कार्य है। देश में व्याप्त वर्तमान वातावरण के परिप्रेक्ष में ऐसे प्रकाशन की महत्वपूर्ण भूमिका है।

"वात्सल्य रत्नाकर" ग्रन्थ का समर्पण समारोह परमपूज्य सन्मार्ग दिवाकर, चारित्र चक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के ७८ वें जन्मजयन्ती के शुभ अवसर पर दिनांक ८ अक्टूबर, ९३ को मधुबन, सम्मेदशिखरजी (पार्श्वनाथ) बिहार में बड़े उत्साहपूर्वक आयोजन के साथसाथ उक्त ग्रन्थ पूज्य आचार्यश्री को भेंट किया जाना उपयुक्त निर्णय है।

मुझे उम्मीद है कि "वात्सल्य रत्नाकर" बृहद् ग्रन्थ में प्रकाशित सामग्री नि.सन्देह न केवल जैन लोगों के लिए वरन सम्पूर्ण मानव समाज के लिए लाभप्रद सिद्ध होगी।

मैं "वात्सल्य रत्नाकर" ग्रन्थ के प्रकाशन एवं आदरणीय महाराजजी के ७८ वें जन्मजयन्ती समारोह की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

बलराम जाखड़

राजभवन
पटना
२७/९/९३

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज के सौजन्य से "वात्सल्य रत्नाकर" नामक बृहद् ग्रन्थ का सृजन किया जा रहा है जो स्वयं में एक अभूतपूर्व कार्य है। इस बृहद् रचना द्वारा सम्पूर्ण विश्व को जैन धर्म, जैन तीर्थंकर, अहिंसा के उपदेश, जैन संस्कृति एवं जैन धर्मस्थलों की पूर्णरुपेण जानकारी होगी जिससे विश्व में भाईचारे का माहौल बनेगा और स्थाई शाति स्थापित हो सकेगी। बिहार वासियों के लिए इसका महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि २४ तीर्थंकरो में २२ तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि बिहार ही है।

इस महाग्रन्थ का विमोचन २० तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि सम्मेद शिखर मधुबन मे जैन गुरु आचार्य श्री विमल सागर महाराज के जन्म जयती महोत्सव पर होना और भी स्मरणीय होगा।

इस पवित्र एवं पावन अवसर पर मेरी हार्दिक शुभ कामनाएँ।

अ. र. किदवाई

डॉ. ए.आर. किदवाई
राज्यपाल, बिहार

मुख्यमत्री
बिहार

पटना

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि अखिल भारतीय दिगम्बर जैन समाज के सौजन्य से "वात्सल्य रत्नाकर" नामक बृहद् ग्रथ का प्रकाशन किया जा रहा है, जिसमें सभी चौबीस तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित उपदेशों का सग्रह किया जायगा।

इस अपूर्व ग्रथ के प्रकाशन के लिए "वात्सल्य रत्नाकर" महोत्सव समिति तथा उससे सम्बद्ध सभी लोग धन्यवाद के पात्र है।

कृपया इस पुनीत कार्य के लिए मेरी शुभकामना स्वीकार करें। यदि सभव हुआ तो आपकी भावना का आदर करते हुए मैं कार्यक्रम मे सम्मिलित होने का प्रयास करुगा।

लालू प्रसाद

६/९/१९९३

मुख्यमंत्री
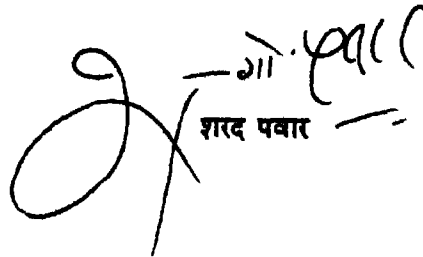
महाराष्ट्र

मंत्रालय, मुंबई-४०० ०३२.
दिनांक: २० सप्टेंबर ९३

शुभकामनाएँ

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज के सौजन्य से "वात्सल्य रत्नाकर" महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है और इसके दौरान आचार्य श्री विमलसागर जन्म जयन्ती समारोह मनाया जा रहा है। इसी सिलसिले मे "वात्सल्य रत्नाकर" नामक बृहद् ग्रथ का दि. ८ अक्टूबर १९९३ को मधुबन, सम्मेदशिखरजी (पार्श्वनाथ) बिहार में विमोचन आयोजित करने का उपक्रम स्वागतार्ह है। इस ग्रथ में जैन सस्कृति के विश्वव्यापी सिद्धातों तथा विश्व के प्राणीमात्र के कल्याण, सुख और शाति हेतु २४ तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित उपदेशों का सग्रह होने की बजह से यह ग्रथ पठनीय और संग्रहणीय साबित होगा। इस ग्रथ के प्रकाशन के लिए तथा आचार्य श्री विमलसागर जन्म जयन्ती समारोह के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ

शरद पवार

राम निवास मिर्धा
MEMBER OF PARLIAMENT
(LOK SABHA)

७, लोदी इस्टेट, नई दिल्ली
११० ००३.

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अखिल भारतवर्षीय जैन समाज के सौजन्य से "वात्सल्य रत्नाकर" बृहद् ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है। आशा है इस ग्रन्थ में जैन सस्कृति के विश्व व्यापी सिद्धान्तों तथा जगत् प्राणी मात्र के कल्याण सुख और शाति के उपदेशों का सग्रह किया जाएगा। जो जन मानस के लिए प्रेरणादायक होंगे।

जैन समाज द्वारा जैन धर्म के विचारों को जन-जन तक पहुँचाकर मानव कल्याण का जो अपूर्व कार्य किया जा रहा है वह सर्वथा प्रशसनीय है।

इस शुभ अवसर पर में "वात्सल्य रत्नाकर" बृहद् ग्रन्थ के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ और सस्था के सभी कार्यकर्ताओं को बधाई देता हूँ।

रा० मिर्धा

नई दिल्ली · २५-९-१९९३

राम निवास मिर्धा

SUSHIL KUMAR SHINDE
GENERAL SECRETARY

24 AKBAR ROAD
NEWDELHI-110011

25 SEPTEMBER 93

MESSAGE

It gives me immense pleasure to learn that the Vatsalya Ratnakar Mahotsava Committee is celebrating the Birth Anniversary of Acharya Shri Vimal Sagar on October 7, 8, and 9. 1993; and on the occasion is bringing out an epic granth - "Vatsalya Ratnakar" The granth gives a moving representation of the universal ideals and principles of Jainism Comprising the views, philosophy and ideals, propounded by the 24 Tirthankars of Jainism, as it does, this, I am sure will a long way in bringing peace, prosperity and salvation of human brotherhood.

In around 2,000 pages, consisting of three parts, the granth sums up the valuable contributions of Jainacharyas on modern science, mathematics, astrology and geography, which will serve the humanity and posterity for all times to come, in bringing about peace and universal brotherhood and propagating the message of non-violence

I wish all success to the Mahotsava Committee in the celebrations and all its endeavours.

(Sushilkumar Shinde)
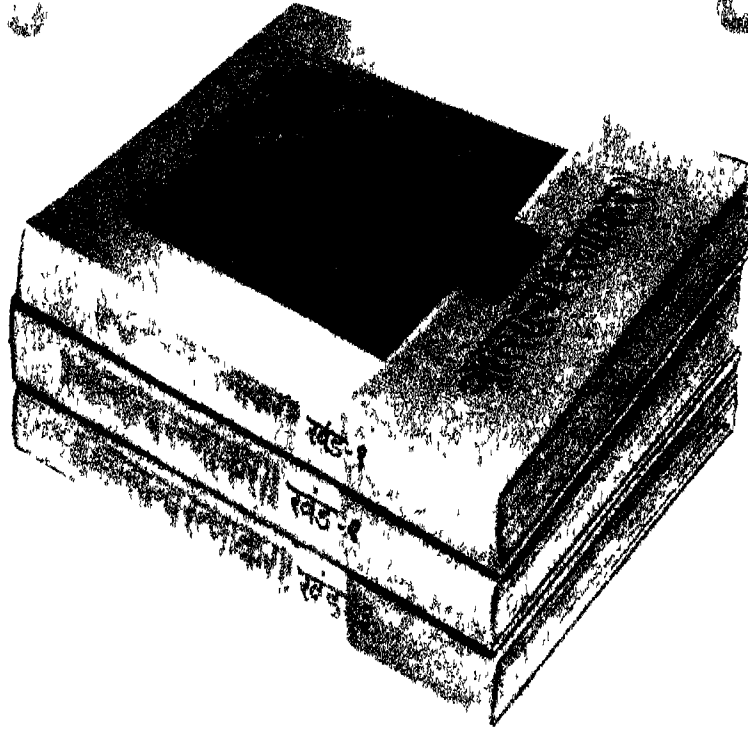
यह महा ग्रंथ भ्रम और भ्रांति की जटिल ग्रंथियां खोलेगा
इसका हर अक्षर जिनवाणी के शाश्वत स्वर में बोलेगा
जो भाग्यवान श्रावक अपने मानस में इसे संजो लेगा
वात्सल्य विमल रत्नाकर से वह कलुश भेद तम धो लेगा

❑ *रवीन्द्र जैन, गीतकार-संगीतकार*

श्रध्दासुमन
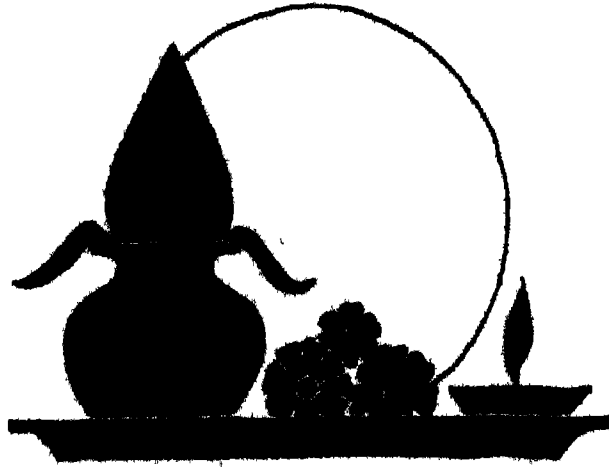
॥वात्सल्यरत्नाकर॥

श्रद्धासुमन

आदि कीर्तिस्तम्भ

❑ ***आचार्यश्री सन्मतिसागर***

आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज परहित के साथ स्वात्मा को परमात्मा बनाने मे सलग्न है। वर्तमान आचार्यों में आप सबसे बड़े आचार्य है। आपकी कीर्ति दशों दिशाओं में फैल रही है। प पू चारित्रचक्रवर्ती दिगम्बराचार्यश्री आदिसागर जी अकलीकर के पट्टाधीश प पू आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज के आप परम शिष्य है। आचार्यश्री को मै बोधिसमाधि की सिद्धि के लिए श्रद्धासुमन समर्पित करता हूँ।

विमलसिन्धु गुरुवर

❑ ***आचार्यश्री सम्भवसागर***

गुरु शब्द बहुत अर्थवान् है। 'गु' का अर्थ है अधकार और 'रु' का अर्थ है रश्मि अर्थात् अज्ञानरूप अधकार को दूर करने के लिए जो ज्ञानरूपी किरण है, वे ही स्वपरकल्याणकारी गुरु कहलाते है।

गुरु ही साक्षात् मुक्ति के कारण है। परोपकारी, समताधारी, हितोपदेशक गुरुवर आचार्यश्री विमलसागर जी को प्राणीमात्र के प्रति समदृष्टि रखने के कारण ही 'सन्मार्ग दिवाकर' का पद प्राप्त हुआ है। उनसे मुझे जो वात्सल्य, स्नेह व प्रेम प्राप्त हुआ है, वह किसी अन्य से नही मिला। आचार्यश्री का जीवन उत्तम साधना की ओर अग्रसर है। वे तप-त्यागमय जीवन को ही श्रेष्ठ जीवन मानते है। आपने चरित्रशुद्धि के १२३४ उपवास, कनकावली, सोलह कारण, दशलक्षण, कर्मदहनादि कई व्रत एव उपवास किये है तथा चातुर्मास में एक उपवास, एक आहार (अन्न का आजीवन त्याग) तथा दशलक्षणपर्व में दो दिन उपवास, एक दिन आहार का क्रम रहता है। इसके अतिरिक्त भी कई उपवास। जहा भी विहार में रुक गये, उपवास करके इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने का अभ्यास जारी रहता है। बाल्यकाल से ही आप निडर एव २५ दोषो से रहित है। उनसे ही मैने सातवी प्रतिमा ली थी। तभी से मै आत्मोन्नति के पथ पर अग्रसर हूँ। जिन्होंने मुझे मोक्ष का मार्ग दिखाया है ऐसे सन्मार्गदर्शक आचार्यश्री के चरणों में नमोऽस्तु।

जय विमलसागर

❑ *गणधराचार्यश्री कुन्थुसागर*

आचार्यश्री का दर्शन ही अभिवन्दन स्वरूप है। आचार्यश्री विमलसागर जी का जीवन एक कसौटी पर कसे हुए स्वर्ण के समान शोभायमान है। गुरु के समान ससार में ऐसा कोई भी वात्सल्य देने वाला नहीं है। आचार्यश्री की अभिवन्दना करता हुआ मै जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता हूँ कि आचार्यश्री शतायु हो।

भावना

❑ *आचार्यश्री दर्शनसागर*

जाव ण भावइ तच्च जाव ण चितणीयाइ।
ताव ण पावइ जीवो जरा-मरणविवज्जिय ठाण॥

अर्थात् जब तक यह जीवात्मा जीवादि तत्त्वों की भावना नही करता है और चिन्तन करने योग्य धर्मध्यान, शुक्लध्यान तथा अनुप्रेक्षा भावना आदि का चिन्तवन नही करता है, तब तक जरामरण से रहित स्थान अर्थात् मोक्ष को नही पाता है।

अपने परिणामों को निर्मल बनाने के लिए णमोकार मन्त्र का चिन्तवन करना चाहिए। आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का एक मात्र लक्ष्य आत्मविशुद्धि और पर-कल्याण है। आप अपना समय आत्मचितन, तीर्थक्षेत्रों के ध्यान, मन्त्रों के चिन्तन में व्यतीत करते हैं। आप जैसी परिणामों की निर्मलता, सरलता और सहजता इस कलियुग में प्राय दुष्कर है।

आचार्यश्री के पादारविन्द में त्रिभक्तिपूर्वक शतश नमन।

एक स्मृति जिसे भूले नहीं भूलता

❑ *आचार्यश्री वर्धमानसागर*

सन् १९६८ का जनवरी माह। बाँसवाड़ा जिले के अन्देश्वर पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र पर आर्यिका सघ के साथ आगमन तथा वहाँ से प पू वात्सल्यमूर्ति आचार्यप्रवर विमलसागर जी महाराज के दर्शनार्थ बागीदौरा जाना हुआ। दि जैन मन्दिर के विशाल प्रागण में सायकालीन प्रतिक्रमण की पावन वेला में समस्त सघ उपस्थित था। आचार्यश्री एवं सघ की वन्दना के अनन्तर मै योग्य स्थान पर प्रतीक्षा रत बैठा रहा। प्रतिक्रमण के अनन्तर उच्चपीठासीन आचार्य परमेष्ठी का चरण-सान्निध्य प्राप्त हुआ। सन्निकट जाकर वन्दना के अनन्तर अमृतमयी वाणी में प्रश्न हुआ- "कहाँ से आए हो?" मैने कहा- "आर्यिकाश्री ज्ञानमती जी के साथ अन्देश्वर पार्श्वनाथ आया हूँ। वहाँ से मै आप के दर्शनार्थ यहाँ आ गया।" वात्सल्यपुज आचार्यदेव ने पुन पूछा- "ज्ञानमती जी ठीक तो है। यहाँ नही आयेगी?" मैने थोड़ा साहस बटोरा और उत्तर दिया, 'वे यहाँ तो नही आयेगी, उन्होंने एव सभी आर्यिकाओं

ने आपके चरणों में नमोऽस्तु कहलाया है। सभी ठीक हैं।"

थोड़ी ही देर मे चित्राबाई जी को आदेश मिला, "अन्देश्वर जाओ, और ज्ञानमती से कहना कि वह विहार इसी ओर से करे।" तब सामायिक का समय हो जाने से मैने शान्तिमूर्ति आचार्यश्री के चरणों की पुन वन्दना की और चित्राबाई जी के साथ अन्देश्वर आ गया। बागीदौरा में जो कुछ घटा, वह मैंने यथावत् आर्यिकाश्री को कह सुनाया। चित्राबाई जी ने आचार्यश्री का आदेश सुनाया। चूँकि सन् १९६६ का वर्षायोग सोलापुर नगर में आर्यिका सघ ने आचार्यश्री के साथ ही व्यतीत किया था, अत फिर परिचय होने से आचार्यश्री के वात्सल्य भरे आदेश को पालन करने के लिए आर्यिका सघ बाध्य हुआ तथा शीघ्र ही निर्णय हुआ कि प्रात. बागीदौरा के लिए आर्यिका सघ विहार करेगा। इस निर्णय से मेरे में भी प्रसन्नता हुई कि वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री के चरणों का सान्निध्य पुन प्राप्त होगा। प्रात विहार कर आर्यिका सघ ने आचार्यश्री का दर्शन किया। मार्ग में ही आर्यिकाश्री की प्रेरणा प्राप्त हो चुकी थी कि वहाँ पहुँचकर आचार्यश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करना है, चूँकि दो माह पूर्व ही मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र पर आर्यिका ज्ञानमतीजी से पाँच वर्ष के लिए ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर चुका था। अत. आर्यिकाश्री के प्रेरणास्पद वचनों से अन्तर्मन को बल मिला और क्रियान्वयन हेतु उस मगल अवसर को मै छोड़ न सका।

आचार्य-वन्दना के अनन्तर उस तेजपुञ्ज व्यक्तित्व के पावन चरणों में श्रीफल भेंट करके प्रार्थना की कि "हे महाराज। आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करना चाहता हूँ। आप कृपया मुझे यह भव बीजाकुर-नाशक महान व्रत देकर कृतार्थ करे।" प्रार्थना सुनकर आचार्यश्री ने प्रसन्नता व्यक्त की और अपनी सुदूर दृष्टि से पात्र जानकर एव आर्यिकाश्री की अनुमोदना पर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत प्रदान किया। व्रत-ग्रहणानन्तर आचार्यश्री को आहार दिया। यह मगलमय प्रभात और भी मगलमय बन गया था। क्योंकि जीवन मे प्रथम बार उत्तम पात्र आचार्य परमेष्ठी को आहार दिया था। चूँकि उससे तीन माह पूर्व ही आहार देना प्रारम्भ किया था और तब तक आर्यिकाओं को ही आहार देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मै धन्य हुआ। मेरी मानव पर्याय सार्थक हुई। दोहरी प्रसन्नता थी। अत महदानन्द का अनुभव हुआ। क्योकि उस दिन आर्यिका ज्ञानमती जी द्वारा वपित भवविनाशक व्रत बीज को आचार्यश्री के वात्सल्य मृताभिसिचित वरदहस्त से अकुरित एव वर्धित होने का अवसर मिला। बस, तभी मैं आचार्यश्री को व्रताकुरारोपक आचार्य के रूप में स्मरण करता हूँ। उन्ही के द्वारा अकुरित एव अभिवर्धित बीज पर यह महाव्रतरूपी वृक्ष खडा है।

आचार्यश्री के मुझ पर अनन्त उपकार है। मै महामना आचार्य परमेष्ठी के चरणों में अपनी विनम्र श्रद्धाभिव्यक्ति एव विनयाञ्जलि समर्पित करता हूँ। तथा यह अभिवाञ्छा करता हूँ कि आचार्य। आप जैसे विमल-निर्मल महापुरुषों के आशीर्वाद से मेरा रत्नत्रयवृक्ष निरन्तर दृढ एव अभिवृद्धि को प्राप्त होता रहे।

शुभकामना

❑ ***आचार्यकल्पश्री सन्मतिसागर***

आचार्य विमल के चरणों में अभिवन्दन शत-शत वन्दन।
स्याद्वाद विद्याभूषण हैं, जिनवाणी माता के नन्दन॥

वात्सल्यदिवाकर, करुणासागर, सन्तशिरोमणि, परम पूज्य श्री १०८ आचार्यरत्न विमलसागर जी महाराज को कौन नही जानता? आपकी यश पताका से अखिल वसुन्धरा ४३ वर्षों से गौरवान्वित हो रही है।

बाल्यकाल में न मालूम कितनी माताओं का प्यार लिया तो किशोरावस्था में धर्म की ओर मुड़ गये एवं युवावस्था में धार्मिक तथा नैतिक क्रान्ति का बिगुल बजा दिया।

युगप्रतिष्ठित, तीर्थोद्धारक, पूज्यपाद आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी के कर-कमलों से जैनेश्वरी दीक्षा लेकर आपने महावीर जैसी धूम मचा दी और मिथ्याभिमानी, एकान्तवादी अनेक भटों को निरभिमान कर स्याद्वाद रूप जिनवाणी माँ की रक्षा करते हुए भव्यात्माओं को सन्मार्ग प्रदर्शित किया।

जन्म-जरा-मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की भावना से आपने अखिल भारत वसुन्धरा के तीर्थराजों की त्रियोग से त्रयबार वदना करते हुए चतुर्विध सघ का कीर्तिमान स्थापित किया है। आपके जनकल्याण सुमधुर सदुपदेश से अगणित साधु-सन्त, त्यागीव्रती बने है एव समाज-उत्थान की दिशा में समाज-सगठन, ज्ञान-प्रसार हेतु विद्यालय, धर्म प्रभावना हेतु जिनबिम्बों आदि की स्थापना हुई है।

समाज के दु खी वर्ग को देखकर आपका हृदय करुणा-विभोर हो जाता है। आप करुणानिधि है। आपके वात्सल्य गुण से प्रभावित होकर मैंने आपके चरण सान्निध्य में काफी लम्बा समय व्यतीत किया एव आपके मगल आशीर्वाद से सम्यग्ज्ञान प्रसार के क्षेत्र में अनेक कार्य कराये है।

अतिशय क्षेत्र रामटेक जी में यह जानकर कि पूज्य आचार्यश्री का अभिवन्दन ग्रन्थ जैन सिद्धान्तों को सजोकर प्रकाशित हो रहा है, मेरा मन आनन्द-विभोर हो गया। आचार्यश्री के कर-कमलों में तो प्रतिवर्ष एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जाए, वह भी कम है उनके उपकारों की तुलना में।

वास्तव में आचार्यश्री समाज की एक अनुपम धरोहर है। सम्भवत वर्तमान में आप जैसे चिरदीक्षित भारत में अन्य मुनिराज नही है। आपके सागर तुल्य गम्भीर आत्मगुणों की व्याख्या करना तो मुझ जैसे अल्पज्ञ से सम्भव ही नही है। अत आप चिरायु रहते हुए हमें आशीर्वाद एव प्रेरणा देते रहे, यही अन्तर्मन की शुभाकाक्षा है।

गुण गरिमा अरु यशोगान गुरु, सुर गुरु भी नही गा पाये।
युग-युग जिओ धरा पर स्वामी, सन्मति चरणों सिर नाये॥

मैं ऋणी हूँ उनका

❑ *उपाध्यायश्री भरतसागर*

मै शाति का प्यासा भटकता रहा। खोज चालू थी, कहाँ जाऊँ, मेरी शाति मुझे कहाँ, कैसे मिलेगी? बस, इसी उधेड़-बुन में समय बीतता गया। एक दिन सोचा- 'बिना सद्ज्ञान के शान्ति कहाँ? चलो ज्ञान के लिए मोरेना विद्यालय चले'- इन्ही विचारों का ताना-बाना बुन रहा था कि विशाल हृदय, ऊँचा कद, मधुर मुस्कान, धर्मध्यानी, स्वर्ण के समान पीत वर्ण, तेजस्वी काति के धारक महाचार्य अपने सघ सहित बांसवाड़ा पधारे।

मै महानिधि के दर्शन कर कृतार्थ हुआ। आपके दर्शन मात्र से मुझे अपूर्व शाति का लाभ हुआ। तीन दिन

मैं आचार्यश्री के चरण-सान्निध्य मे रहा।

मैंने आचार्यश्री से प्रार्थना की- "गुरुदेव! मुझे अपने साथ ले चलिए, आपके चरणो की सेवा करके शाति प्राप्त होगी।"

आचार्यश्री मुस्कराये तथा मुझे साथ मे चलने की स्वीकृति प्रदान की। आचार्य महाराज मुझे जैसा कहते रहे, मै वैसा करता रहा; कुछ जानता तो था ही नही- बस, 'बाबा वाक्य प्रमाण'। आचार्यश्री के मार्ग-निर्देशन में मैंने जैन धर्म के अध्ययन के साथ त्याग-मार्ग मे भी प्रवेश किया। ज्ञान और चारित्र की दोनो धाराएँ एक साथ जीवन में प्रवाहित हुई। त्याग-मार्ग में मुझे अपूर्व शान्ति का अनुभव हुआ। मै गुरुदेव का ऋणी हूँ। श्रद्धा-भक्ति, शान्ति तथा ज्ञान चारित्र की अविरल धारा जीवन मे बह रही थी। क्षुल्लक अवस्था मे शरीर को रोग ने आ घेरा। आचार्यश्री बारबार कहते रहे- शान्तिसागर! मुनि बनो मुनि बने बिना कभी पूर्ण शाति नही मिलेगी।

मै सदैव इन्कार करता रहा। पर करुणासिन्धु से रहा नही गया। गुरुदेव ने पुन: मुझे अपने पास बुलाकर कहा- "बेटा! मुनि बन जाओ, फिर देखो कितनी शान्ति मिलती है।"

मैंने कहा- "गुरुदेव! मुझे दो बीमारियॉं मुनि-दीक्षा से रोक रही है।" गुरुदेव ने कहा- "क्या तकलीफ है? मुझे बताओ।" मैंने कहा- "गुरुदेव! मुझे आधा आहार करते ही वमन हो जाता है तथा मुँह में सदा छाले बने रहते है। ये रोग जायेंगे तब मै मुनि-दीक्षा धारण कर सकूँगा।" गुरुदेव ने कहा- "शान्तिसागरजी, हमारी बात मानो, जब तुम मुनि बन जाओगे, तब तुम्हारी बीमारियॉं भी दूर हो जायेगी।" धैर्य धारण कर, गुरु-वचनों को प्रमाण मानकर मुनि दीक्षा प्राप्त की। सच कहता हूँ, किस समय दीक्षा हुई, और किस समय निरोग हुआ मै भेद भी नही कर पाया।

आचार्यश्री के वचनों की सिद्धि और तपस्या के प्रभाव को देखकर मेरे आश्चर्य की सीमा नही रही। जिस शान्ति की खोज के लिए मै चिन्तित था, जिसे प्राप्त करने के लिए मै लालायित था वह निधि आचार्य गुरुदेव के चरण सान्निध्य में उनके बताये मार्ग से चलने पर मुझे प्राप्त हुई। मै गुरुदेव का चिरऋणी हूँ।

भावाञ्जली

❑ *उपाध्यायश्री अभिनन्दनसागर*

सन्मार्गदिवाकर, वात्सल्यमूर्ति, परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का गुणानुवाद करना मुझ जैसे अल्पज्ञ के लिए अति कठिन है। जैसा नाम वैसी ही सौम्यता, समता, मुस्कराहट आपके तेज पुज से टपकती रहती है। ऐसे महान ऋषिराज का चरण-सान्निध्य मुझे कई बार प्राप्त हुआ। उनकी वात्सल्य भावना ने मुझे ओत-प्रोत कर भाव-विभोर कर दिया। मै उनकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।
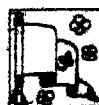
सन्त-शिरोमणि

❑ *मुनिश्री अरहसागर*

इस भौतिक युग में, जब की मानव कभी न सतृप्त होने वाली इच्छाओं के पोषण में ही लगा है, इच्छानिरोध की पराकाष्ठा पर पहुँचे सन्त ही धर्म की प्रभावना करते हैं। ऐसे सन्तशिरोमणि आचार्यप्रवर श्री विमलसागर जी महाराज के दीर्घायुष्य की कामना करते हुए उन्हें नमन करता हूँ।

ऋषिराज

❑ *मुनिश्री समतासागर*

परमपूज्य, चारित्र चक्रवर्ती, आचार्यप्रवर, समता के सागर, अद्वितीय गुणों से शोभायमान आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ऐसे ऋषिराज है, जिनका दर्शन प्राणी मात्र के उत्थान के लिए मगलमय है।

आचार्यश्री की वाणी कभी व्यर्थ नही होती। ब्रह्मचारी अवस्था में उन्होंने मुझसे कहा था कि दो वर्ष में तुम्हारी दीक्षा होगी। ठीक दो वर्ष में मैने निर्ग्रन्थ अवस्था धारण कर ली। ऐसे ऋषिराज का वरदहस्त जिस किसी साधक को प्राप्त हो जाए, उसका आत्मकल्याण-मार्ग सहज ही प्रशस्त हो जाता है।

गुरुवर्य के चरणो में

❑ *मुनिश्री उदयसागर*

परमपूज्य आचार्यशिरोमणि श्री विमलसागरजी महाराज भारत के सर्वाधिक प्रसिद्ध सन्त है। आपका प्रथम दर्शन मैंने औरंगाबाद में किया था। आप के वात्सल्य से प्रभावित हो, मैंने शीघ्र ही दो प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। इसके पश्चात् मै बीमार हो गया। आपकी महिमा सुन रखी थी, सो शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ के उद्देश्य से आया और मुझे स्वास्थ्य-लाभ हुआ।

तीर्थराज सम्मेदशिखर जिस प्रकार सबसे महान है, उसी प्रकार वर्तमान में ज्ञानवृद्ध, तपोवृद्ध आदि गुणों के कारण आप साधुओं में श्रेष्ठ एव महान आचार्य है। सामाजिक एव धार्मिक कार्यों में किसी प्रकार का विवाद होने पर उसके समाधान हेतु सभी आपके पास दौड़े आते है। तन-मन-धन से तत्पर रहते है।

हम चौका लगाते थे और आहार देते थे। हमें पर्वतराज की वन्दना के लिए तैयार हुए व गुरु महाराज के पास आशीर्वाद के लिए आये तो महाराज ने कहा- ''जाओ, किन्तु किसी प्रकार के आभूषण आदि पहनकर नही जाना।'' गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर हम सब कुछ छोड़ वन्दना को निकल पड़े। हम तो गुरु आशीर्वाद से बच गये किन्तु कुछ श्रावक हमारे पीछे और थे जिन्हे चोरों ने लूट लिया।

वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री का आशीर्वाद मुझे प्राप्त होता रहा। वे कहते है-जुग-जुग जिओ, डटकर धर्म प्रभावना करो। गुरु-चरणों में बारम्बार नमोऽस्तु।

गुरु-चरणों में प्रसूनाञ्जलि

❑ *मुनिश्री पुण्यसागर*

वर्तमान युग के श्रमण सस्कृति के सूत्रधार आद्य तीर्थंकर भगवान वृषभदेव है, जिन्होंने युग के प्रारम्भ मे श्रमण धर्म को अगीकार कर आत्मोद्धार किया और श्रमण सस्कृति के प्रचार-प्रसार का मार्ग प्रशस्त किया था। तब से आज तक श्रमण सस्कृति की वह अक्षुण्ण धारा इस वसुन्धरा पर सर्व कालो मे जन-जन के ससार-ताप को शीतल करती आ रही है।

इसके सतत प्रवाह तथा उन्नयन मे प पूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराज की शिष्य-परम्परा तथा परमपूज्य महावीरकीर्तिजी महाराज एव उनके प्रथम बाल ब्र शिष्य परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के योगदान का स्मरण एव गुणानुवाद रूपी कार्य ऐसा होगा जैसे सूर्य को दीपक दिखाना।

पूज्य आचार्य श्री परमतपस्वी, चारित्रशिरोमणि, आगम-मर्मज्ञ, वात्सल्यमूर्ति, सरलस्वभावी, शान्तपरिणामी, विश्ववदनीय, घोरोपसर्गविजयी, कष्टसहिष्णु एव निमित्त-ज्ञान-शिरोमणि हैं। सर्व प्रथम आचार्यश्री के दर्शन तब हुए जब वे ससघ चातुर्मास के लिए लोहारिया की ओर पर्दापण कर रहे थे। प पू दयासागर जी महाराज ससघ सलूम्बर मे विराजमान थे। उस समय मै ब्रह्मचारी था। सलूम्बर से ४ कि मी दूर आचार्यश्री को लेने के लिए गया था। वहाँ रास्ते मे किसी एक व्यक्ति ने कमण्डलु मागा। आचार्यश्री ने कहा कि यह कमण्डलु हमारे लिए बैलेन्स है। इसके बिना हम उसी प्रकार आगे नही बढ़ सकते जैसे बिना बैलेन्स की कार। मैंने सोचा, जीवन कितना स्वाधीन है। महाराज श्री हमेशा कहा करते है कि "भैया, कभी कैची का काम मत करो, सुई का काम करो। पर-शरण ही मरण है। यदि किसी से बचना हो तो पाप से बचो।" आचार्यश्री ने अपने जीवन में कई प्रकार के उपसर्गो को सहन किया। उपसर्ग परकृत होते है जबकि परीषह जैन साधुओ के जीवन का श्रृगार है। उपसर्ग और परीषह से युक्त जीवन ही अपनी वास्तविक निधि को प्राप्त करने मे सक्षम होता है। जैन सस्कृति के इतिहास को देखने पर ज्ञात होता है कि दिगम्बर साधुओ ने उपसर्ग-विजेता बनकर आत्मसूर्य की ज्ञान-किरणो से स्व-पर को प्रकाशित किया है। एक दिन महाराजश्री सामायिक के बाद विश्राम कर रहे थे कि एक सर्प उनके हाथ पर चढ़कर क्रीड़ा करने लगा। जब महाराजश्री का ध्यान सर्प की ओर गया तो उन्होंने उसे हटाने की चेष्टा नही की और ध्यानस्थ हो गये। सर्प आधा घटा तक हाथ पर क्रीडा करके ऐसे चल गया मानो गुरुवर के दर्शन के लिए ही आया था। आचार्यश्री वृषभ के समान भद्र, सागर के समान गम्भीर, मृग के समान सरल, मेरु के समान निश्चल और सिह के समान पराक्रमी है। आपकी वीतराग प्रवृत्ति भव्य जीवो को अपनी ओर चुम्बक के समान आकर्षित करती है। स्व-पर-कल्याण मे रत आप दीर्घ काल तक ज्ञान, ध्यान, तप एव सयम मे सलग्न रहे- इसी शुभ भावना के साथ आपके चरणाम्बुज में मै हार्दिक प्रसूनाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

आचार्यश्री का वह स्मरणीय स्पर्श

❑ *मुनिश्री निजानन्दसागर*

श्रवणबेलगोला मे भगवान बाहुबली जिनबिम्ब प्रतिष्ठा के सहस्राब्दी महोत्सव मे जब मै (ऐलक) अक्कन बसदि

(जिनमन्दिर) मे जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन कर बाहर आया ही था कि सन्मार्गदिवाकर, सद्धर्मप्रदर्शक, करुणामयी प्रशान्तमूर्ति आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज ने मेरी गेरुए रग की लगोट खीचते हुए मुझसे पूछा- "मुनि क्यो नही बनते हो? कब बनोगे?"

मैंने कहा- "अतिशीघ्र। योग मिलते ही बन जाऊँगा।"

आचार्यश्री ने कहा- "योग तो आ गया है।"

मैने कहा- "योग आ गया है तो यह आपका आशीर्वाद ही है।"

आचार्यश्री के आशीर्वाद और मेरी लगोटी के स्पर्श मात्र का चमत्कार, जिसके विषय में अभी इतना सोचा भी नही था, १६-२-८२ सोमवार को अनेक आचार्यों व त्यागी वृन्दो के बीच मुनिश्री अभिनदनसागर जी के मन्त्रोच्चारण व गुरुवर्य दयासागरजी द्वारा प्रदत्त पावन सस्कारो से मुनि-दीक्षा ग्रहण की।

सिद्धक्षेत्र श्री गिरनारजी से आचार्यश्री सघ सहित अहमदाबाद की ओर विहार कर रहे थे। सर्वत्र शीतलहर का प्रकोप था। तपोनिधि आचार्यश्री को भी इसने नही छोडा। उनका विहार अबाध रूप से गुजरात की राजधानी की ओर बढ रहा था। हम भी अहमदाबाद मे चातुर्मास सम्पन्न कर तीन क्षुल्लक सहित श्री गिरनारजी की तरफ विहार कर रहे थे।

'सायला' ग्राम मे आचार्यश्री के आगमन के समाचार सुनकर जैन समाज व ग्रामवासी अजैन भाईयो ने उनका भव्य स्वागत किया। आचार्यश्री की अगवानी करने के लिए हम भी वहाँ पहुँच गये।

आचार्यश्री के दर्शन पाते ही मन पुलकित हो गया। त्रिभक्तिपूर्वक वन्दना की। जुलूस आगे चल दिया। सायला स्कूल मे आचार्यश्री का विश्राम हुआ।

रात्रि मे बुखार और बढने से आचार्यश्री का शरीर बहुत गरम था। वातावरण मे जैसे-जैसे ठण्ड बढ रही थी आचार्यश्री के शरीर मे ताप बढता जा रहा था, और भी सघस्थ दो मुनिराज ज्वरग्रस्त थे।

जब मैं आचार्यश्री की वैयावृत्ति करने के लिए उनके पास गया तब मैने देखा कि आचार्यश्री स्थितप्रज्ञ रहकर बुखार से भी विचलित न होकर ध्यान कर रहे थे। ऐसा लग रहा था, मानो आचार्यश्री का शरीर ध्यान रूपी अग्नि से तप रहा हो।

हम वैयावृत्ति कर अपने स्थान पर लौट आये। उस रात्रि ऑखो मे नीद नही थी। वह भोली, तेजस्वी, मनमोहक, प्रशान्त, वीतराग छवि हमे बार-बार चुम्बक की तरह खीच रही थी।

दूसरे दिन दोपहर हरे-भरे वृक्ष के नीचे आचार्यश्री के चरणो मे जा बैठे। विहार सबधी कुशल वार्तालाप हुआ। जैसे पिता अपने पुत्र की कुशल-वार्ता पूछता है, वैसे आचार्यश्री ने अपनी वात्सल्यपूर्ण एव करुणा भरी वाणी मे हमारी कुशलता पूछी।

इसी बीच आचार्यश्री ने पूछा- "निजानन्द जी! कुछ पूछना है?" मैने कहा- "बस, आपका आशीर्वाद चाहिए।'

"निजानन्द से बढकर और कोई चीज दुनिया मे नही है।" क्षण भर मौन रहकर पुन बोले- "व्रतो मे दृढ
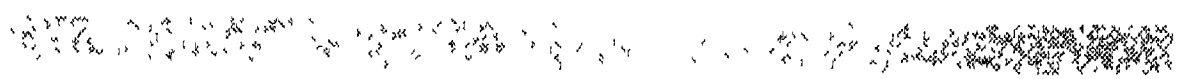
रहो, तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल है।'' उनके चरणो मे मेरा शत-शत नमन।

गुरु की छत्रछाया मे

❑ *मुनिश्री श्रवणसागर*

प पू आचार्यश्री के प्रथम दर्शन का कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि मै संघ मे ही रह गया। मुझे श्रुतपचमी के दिन ब्रह्मचारी दीक्षा दी गई। धीरे-धीरे सघ मे रहकर धर्म-ध्यान के द्वारा मोक्ष मार्ग पर आरूढ़ होने का अभ्यास चलता रहा। बम्बई मे आचार्यश्री द्वारा क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त हुई। तत्पश्चात् दिगम्बरत्व ही मोक्ष के लिए कार्यकारी है, ऐसा जानकर श्रवणबेलगोला मे मुनि दीक्षा ग्रहण की। आचार्यश्री के सान्निध्य मे धर्म की महती प्रभावना होती है। शिष्यो को भी वात्सल्यभाव से धार्मिक रुचि मे अभिवृद्धि के लिए प्रोत्साहित करते रहते है। मेरी भावना है कि आचार्य महाराज की छत्रछाया मे रहकर मोक्ष-पथ पर चलकर दृढ़ चारित्र का पालन करता रहूँ। महाराज सदैव मेरे हृदय मे विराजमान रहे। ''ते गुरु मेरे उर बसो तारण-तरण जिहाज।''

महान उपकारी

❑ *मुनिश्री रयणसागर*

दिगम्बर आचार्य परम्परा मे आचार्य महावीरकीर्ति का नाम स्वर्णाक्षरों मे लिखने योग्य है। वे मेधावी, भाषाविद्, ज्योतिर्विद्, आयुर्वेदविद्या, हस्त-विद्या, सामुद्रिक विद्या आदि विद्याक्षेत्रों मे पारगत विद्वान् व आचार्य थे।

''जैसा गुरु वैसा शिष्य'' -भारत की महान विभूति, वात्सल्यमूर्ति, सन्मार्ग दिवाकर, भक्ताब्जभास्कर, आचार्यश्री विमलसागर जी स्वकल्याण करते हुए जन-कल्याण एव मिथ्यामार्ग से भव्य जीवो को पराङ्मुख करते हुए, मोक्षमार्गोन्मुख करते हुए, रत्नत्रय धर्म की प्रभावना करते हुए, पावन भारतभूमि के कोने कोने मे पहुँचकर भव्य जनो का उद्धार कर रहे है। अनेकान्त सिद्धान्तमार्ग की प्रभावना करने वाले महान आचार्य विमलसागरजी महाराज आचार्यश्री महावीर कीर्ति के प्रथम शिष्य, आज गुरु के समान ही चमक रहे है। इनके अन्तेवासी परम गम्भीर, सौम्यता के शिखर, उपाध्यायरत्न श्री १०८ भरतसागर जी महाराज धर्मोद्योतन करने मे पूर्ण सहयोगी है। ऐसे महान तपोनिधि, लोकोद्धारक आचार्यश्री के परम पावन चरण कमलो मे त्रिकाल, त्रिबार प्रणमन करता हूँ और सद्भावना करता हूँ कि आप शतायु होते हुए विशाल सघ का पोषण करते रहे।

आचार्यरत्न श्री विमलसागर जी महाराज को कौन नही जानता। आपकी कीर्ति सम्पूर्ण विश्व मे छाई हुई है। आपका जीवन अत्यन्त निस्पृह एव गुणों का भडार है। आप मृदुभाषी, सरल स्वभावी, वात्सल्यमूर्ति एव निराकुल वृत्ति के सूरिराज है। आप निर्भिक वृत्ति से देश-देश मे जिनशासन की प्रभावना कर रहे है। आप स्व-परकल्याण मे सदैव निरत रहते है। आपका ऐसा अद्भुत व्यक्तित्व है कि बालक से बुजुर्ग तक आपके चरणो मे आकर शान्ति को प्राप्त करते है।

आइरिय णमोक्कार भावेण य जो करेदि पयडमदी।

सो सव्वदुक्खमोक्ख पावई अइरेण कालेण॥

अर्थात् जो भव्य प्रयत्नपूर्वक भाव सहित आचार्य परमेष्ठी को नमस्कार करता है वह शीघ्रातिशीघ्र समस्त दु:खो से मुक्त हो जाता है।

परमपूज्य वात्सल्यनिधि आचार्यश्री के परम पावन मगलमय आशीर्वाद की कामना सहित निर्दोष चारित्र-पालन हेतु उनके पूज्य चरणो मे विनयाञ्जलि समर्पित करते हुए नमन करता हूँ।

वात्सल्यमूर्ति एवं करुणानिधि

❑ *मुनिश्री सिद्धान्तसागर*

गुरुवर्य प पू आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का वर्तमान आचार्यो एव साधुसघो मे विशेष स्थान है। वे ज्ञान-ध्यान तपस्वी एव वयोवृद्ध आचार्य परमेष्ठी है। उनका छोटे-बडे, दीन-दु खी, स्त्री-पुरुष, बालक, बालिका इन सभी पर करुणा भाव व स्नेह वैसे ही है जैसे गाय का बछडे पर होता है। उससे भी अधिक उनका प्राणीमात्र से वात्सल्य प्रेम देखकर मन आनन्द से गद्गद् हो जाता है। धन्य है ऐसे महामुनि जो स्व-पर कल्याण मे लगे हुए है। निर्विकार सरल ह्रदय गगा के जल से भी पवित्र है। प्रभु से प्रार्थना है कि ऐसे सत्पथप्रदर्शक आचार्य गुरुदेव का जीवन निरोग स्वस्थ एव दीर्घजीवी हो।

हे गुरुदेव विमलसागर तव शतशत वन्दन।
करते है हम आपका बार-बार अभिनन्दन॥

आचार्यश्री चिरकाल तक भव्यो को सन्मार्ग मे लगाते हुए मोक्षपथ पर अग्रसर करते रहे, ऐसी जिनेन्द्रदेव से कामना करता हूँ।

सन्त सदा जयवन्त हो

❑ *मुनिश्री निरंजनसागर*

रत्नत्रय के आराधक, व्यवहारकुशल, वात्सल्यनिधि सन्त आचार्यश्री विमलसागर जी सदा जयवन्त हो, जिन्होंने हमे मोक्षमार्ग पर आरूढ़ किया।

शतशः नमन

❑ *मुनिश्री मधुसागर*

जिसने आचार्यरत्नश्री विमलसागर जी महाराज का दर्शन एव सान्निध्य प्राप्त किया वह धन्य हो गया। मैंने भी आचार्यश्री के दर्शन कर जीवन सार्थक किया। आचार्यश्री शतायु हो तथा भावी पीढ़ी भी उनके दर्शनो का लाभ प्राप्त करती रहे, यही कामना करते हुए मै आचार्यश्री को नमन करता हूँ।

श्रमण संस्कृति की प्रतिमूर्ति

❑ *मुनिश्री अमितसागर*

श्रमण सस्कृति एव वैदिक सस्कृति के रूप मे भारतीय संस्कृति की दो अजस्र धाराएँ चिरकाल से प्रवाहित हो रही है। श्रमण सस्कृति ने भारतीय जन-जीवन को अत्याधिक प्रभावित किया है। इसी परम्परा मे आचार्य विमलसागर जी महाराज ने जैन धर्म के प्रचार-प्रसार मे अपना पूर्ण योगदान दिया है। पू आचार्यश्री ने अपनी कल्याणकारी वाणी से जन-मानस को आत्म-कल्याण के पथ पर अग्रसर किया। मैं आचार्यश्री की वदना करता हूँ।

गुरुकृपा

❑ *मुनिश्री देवसागर*

आचार्यश्री, उपाध्याय भरतसागर जी एव सघ ने मेरी जन्मभूमि पर चातुर्मास किया था। उस समय मुझे पाँच प्रतिमा के व्रत थे। पूज्य गुरुदेव के असीम वात्सल्य व उपाध्यायजी के तेजस्वी प्रवचनो ने मेरी पर्याय ही बदल डाली तथा मैंने लोहारिया मे ही क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षा के पूर्व आचार्यश्री तथा महाराज जी के आशीर्वाद से वासुपूज्य भगवान की एक सुन्दर भव्य प्रतिमा का पचकल्याणक महोत्सव कराने का अवसर भी मुझे प्राप्त हुआ। ऐसे सन्तशिरोमणि की शरण मे पहुँचकर हर एक भक्त एव साधक अपने जीवन को धन्य मानता है।

गुरुदेव का सान्निध्य जन-जन को दीर्घकाल तक मिलता रहे। आपके ही समान सफल मुनिचर्या का पालन कर सकूँ, यही आपसे आशीर्वाद चाहता हूँ। नमोऽस्तु।

तरणतारण गुरुदेव

❑ *मुनिश्री प्रमाणसागर*

परमपूज्य तपोनिधि, धर्म-दिवाकर, विश्ववन्दनीय, बालब्रह्मचारी आचार्यश्री विमलसागर महाराज के चरणो मे सिद्ध भक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति सहित त्रिकाल नमोऽस्तु! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!

आप सूर्य के समान तेजस्वी, चन्द्रमा के समान शीतल, समुद्र के समान गम्भीर, सिंह के समान पराक्रमी, हितमित प्रियभाषी और वात्सल्य की मूर्ति है।

मै वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आपकी सत्प्रेरणा पाकर मुझ सरीखे अबोध प्राणी को जब तक शाश्वत सुख प्राप्त न हो जाय तब तक आपके चरण कमल मेरे हृदय मे विराजमान रहे। आपकी कीर्ति-ध्वजा युग-युग तक फहराती रहे, यही मेरी भावना है।

प्रभावक आचार्य

❑ *मुनिश्री विष्णुसागर*

स्याद्वादमय धर्म का, मारग दिया बताय।
ऐसे वीर जिनेश को, वन्दूँ मन वच काय॥

भारतवर्ष धर्मप्रधान देश है। यहाँ अनेक धर्म व अनेक जातियॉ है। जैन धर्म धारक लोगो मे चौरासी जातियाँ प्रसिद्ध है। चतुर्थ काल मे जिनधर्म का बोलबाला था, प्रत्येक प्राणी जिनधर्म का धारक था। जिसने भी जिनधर्म की शरण ली, वह मानव महान बन गया। पशु-पक्षी भी जिनधर्म की आराधना कर स्वर्गलक्ष्मी को प्राप्त हुए।

जैनाचार्यो ने मुक्ति लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए सर्वप्रथम सम्यक्त्व की प्रधानता बतायी। सम्यक्त्व की प्राप्ति के लिए सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्रो मे अटल श्रद्धान होना आवश्यक है। सम्यक्त्व के बिना स्वतत्त्व-परतत्त्व का ज्ञान तथा हेयोपादेय बुद्धि नही होती है।

तत्त्वज्ञान की प्राप्ति गुरु उपदेश व जिनवाणी के माध्यम से होती है, कारण वर्तमान मे जिनदेव नही है। उनकी वाणी ही हमारे लिए मोक्षमार्ग का सच्चा उपदेश दे रही है। जिन-वाक्यो के आधार से जाना जाता है कि जिन दीक्षा और मोक्षप्राप्ति के लिए देश, कुल व जाति शुद्ध हो। आचार्यभक्ति मे लिखा है-''देसकुलजाइसुद्धा।'' जाति शुद्ध होने से ही पिण्डशुद्धि रहती है और वह ही सप्त परम स्थानो को प्राप्त कर सकता है। श्री परमपूज्य आचार्य जिनसेनजी ने लिखा है-

सज्जाति सद्गार्हस्थ्य, पारिव्राज्य सुरेन्द्रता।
साम्राज्य परमार्हन्त्य परिनिर्वाणमित्यपि॥

इससे स्पष्ट होता है प्रथम सज्जातित्व होना आवश्यक है क्योंकि सज्जातित्व होने पर ही सद्गृहस्थपना सम्भव है। इसी परम्परा को अक्षुण्ण रखने मे पद्मावती पुरवाल जाति मे उत्पन्न प्रभावक जैनाचार्यो का सक्षिप्त उल्लेख इस लेख के माध्यम से कर रहा हूँ।

विश्ववद्य, प्रात स्मरणीय, अनेक ग्रन्थो के टीकाकार, जिनधर्म के उद्योतक, परमपूज्य पूज्यपाद आचार्य, पद्मावती पुरवाल जाति के अनुपम नक्षत्र थे। आचार्यश्री ने सर्वप्रथम तत्त्वार्थसूत्र की सर्वार्थसिद्धि नामक टीका लिखी। आपकी जिनभक्ति जैन साहित्य मे प्रसिद्ध है। कथन पाया जाता है कि पूज्यपाद स्वामी ध्यान-अध्ययन मे निरन्तर तल्लीन रहते थे। एक बार सूर्य की ओर मुख करके आप ध्यान कर रहे थे कि गर्मी के प्रकोप से उनकी ऑखों की ज्योति अचानक चली गयी। आपने जिनभक्ति का आश्रय लिया। शान्तिभक्ति की रचना की। शान्तिभक्ति स्तोत्र पढ़ते ही आपकी नेत्रज्योती पुन लौट आयी। आपने सस्कृत भाषा मे सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति आदि दसभक्तियो का मधुर सृजन किया।

इसी प्रकार समाधितन्त्र, इष्टोपदेश जैसे रसिक अध्यात्मग्रन्थ जैन साहित्याकाश मे आपकी अपूर्व देन है। आपकी तपस्या महान थी। आगम मे कथानक मिलता है कि आपकी एक गृहस्थावस्था की बहिन थी। उसे माता-पिता ने सम्पन्न परिवार मे ब्याहा था। दैवयोग से वह निर्धनता से घिर गयी। एक बार दिगम्बराचार्य का सघ विहार करते
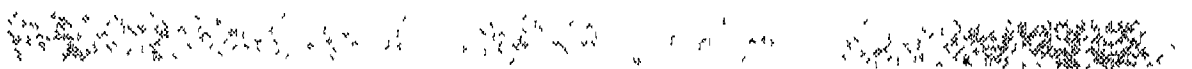
हुए इसी नगर मे आ गया। निर्धन बहिन ने विचार किया कि मै भी भाई (आचार्यश्री) को आहारदान दूँ, परन्तु मेरे पास तो कुछ है नही। फिर भी भक्तिभाव से श्रद्धालु बहिन ने आचार्यश्री का पड़गाहन कर, नवधा भक्तिपूर्वक आहार दिया। आचार्यश्री के हाथो के नीचे उसने लोहपात्र रखा था। विधिवत् आहारचर्या पूर्णकर आचार्यश्री तो वन को चले गये। इधर बहिन श्री ने उसी लोहपात्र की ओर दृष्टि डाली तो क्या देखा कि वह पात्र पूर्ण स्वर्णमयी बन गया है।

आचार्य पूज्यपाद स्वामी आजीवन दिगम्बर रहे। उन्होने अपने शरीर पर कभी वस्त्र धारण नही किया। सिर्फ ग्यारह वर्ष की उम्र मे वे दिगम्बर साधु बन गये थे। ऐसे महाऋषिराज के लिए कोटि-कोटि नमन।

प्राचीन आचार्यो मे द्वितीय प्रभावक आचार्य (इसी जाति मे) हुए 'प्रभाचन्द्राचार्य'। आप अद्भुत तत्त्वज्ञ, मर्मज्ञ, अनेक ग्रन्थराज जैसे रत्नकरण्डश्रावकाचार, इष्टोपदेश, समाधितन्त्र, स्वरूपसम्बोधन आदि के सस्कृत टीकाकार थे। आपने जैन साहित्य का महोपकार किया है।

आरातीय आचार्यो में इस युग मे उत्तर प्रान्त की जनता के विशेष उपकारक हुए स्व आचार्य सुधर्मसागरजी। वह मॉ धन्य है जिसने सरस्वतीपुत्रो-नन्दलालजी, मक्खनलालजी, लालारामजी, श्रीलालजी को जन्म दिया। नन्दलालजी ने न्याय, सिद्धान्त साहित्य व व्याकरण का गूढ अध्ययन कर तत्त्व के तल को स्पर्श किया था। हिन्दी, सस्कृत, गुजराती, अग्रेजी, उर्दू, प्राकृत आदि भाषाओ पर आपका पूर्ण अधिकार था। आपने शास्त्री और आयुर्वेदाचार्य की शिक्षा भी प्राप्त की थी।

क्रमश सयमपथ मे बढते हुए सप्तम प्रतिमा, क्षुल्लक व्रत दीक्षा प्राप्तकर पडितजी, मुनिश्री १०८ सुधर्मसागरजी बन गये। मुनिश्री सुधर्मसागरजी ने मुनि वीरसागरजी, कुन्थुसागरजी, चन्द्रसागरजी आदि सघस्थ मुनियो को तत्त्व का मर्मज्ञ बनाया था। आपकी ज्ञान की प्रखरता से सघ सुशोभित था।

आपको असातावेदनीय के तीव्र उदय से क्षयरोग से कफ प्राय बना रहता था, फिर भी आपकी तपस्या और कठोर आत्म-साधना लोगो को आश्चर्यान्वित करती थी। आपने अपने जीवन मे प्रतिदिन नवीन श्लोक सृजन करने का सकल्प लिया। आपकी निद्रा बहुत कम थी। अर्द्धरात्रि मे जागकर आप प्रतिदिन नवीन-नवीन श्लोकों का सृजन किया करते थे। आपकी मूल कृतियाँ-सुधर्म-धर्म-ध्यान प्रदीप, सुधर्म श्रावकाचार आदि है। आचार्यश्री शातिसागरजी महाराज के सघ का सचालन आपके निर्देशन मे सुचारु रूप से चलता था। आचार्यश्री के कुशल शिष्य ने वीर समाधि-मरण करके सद्‌शिक्षा का अमूल्य पाठ जन-जन को दिया था। जैन समाज व साधुवर्ग आपके उपकार से कभी भी उऋण नही हो सकेगा।

इसी श्रृखला मे फिरोजाबाद शहर की भूमि को पावन करने वाले बूदा माता के लाड़ले आचार्यश्री आदिसागरजी महाराज के परम शिष्य परमपूज्य, परम तपस्वी, उपसर्ग विजेता, अनेकभाषाविद् आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी प्रसिद्ध व जिनशासक प्रभावक, महा साधुरत्न हुए। पचमकाल मे वर्तमान युग मे आपकी ध्यान-साधना, अध्ययन-प्रखरता अपूर्व रही। आप मौनप्रिय साधक, मन्त्र-तन्त्र-यन्त्रविद्, सन्मार्गोपदेशक, आगमनिष्ठ, दृढ चारित्रवान्, प्रखर निडर सिंहवृत्तिधारक साधु थे। सन् १९५६ मे आचार्यश्री का चातुर्मास फिरोजाबाद मे हुआ। आपके सहपाठी छदामीलाल, आपके अनन्य भक्त थे। उन्होने आपको आहारदान देने की इच्छा व्यक्त की। पर मित्र का मोह छोड़, आगम की

रक्षार्थ आचार्यश्री ने कहा—आपने जिस पुत्र का विजातीय विवाह किया है उससे सबध छोड़ोगे तभी आहारदान की पात्रता प्राप्त कर सकते हो। मित्र ने बहुत प्रयत्न किया पर आचार्यश्री को नही डिगा सके। 'मित्र से पहले जिनागम'' की रक्षा।

आचार्यश्री विमलसागरजी इसी श्रृखला में आचार्यश्री महावीरकीर्ति महाराज के परम व प्रथम शिष्य वर्तमान काल मे एक विशिष्ट, मनोज्ञ व सन्मार्ग दिवाकर, जिनमार्ग प्रभावक आचार्य है। उनको मेरा शतश नमन।

हमारे साधन-पथ

❑ *मुनिश्री समतासागर*

वर्तमान युग मे तृष्णा रूपी अग्नि मनुष्य के मन और शरीर को जला रही है लेकिन-मनुष्य उसे सन्तोष रूपी जल से बुझाने का प्रयास ही नही करता। मनुष्य अपनी आय बढ़ाना चाहता है पर आमदानी पूर्व कर्म (भाग्य) के अनुसार ही होती है, चाहे वह ईमानदारी से कमाये अथवा बेईमानी से। जब कभी वह छोटा कारोबार छोडकर बड़ा कारोबार करने के लिए प्रवृत्त होता है परन्तु भाग्यहीन होने के कारण बड़ा व्यापार चल नही पाता। बड़ा व्यापार उसके लिए एक स्वप्न के समान अनिश्चित है ही, व्यापार मे हानि होने के कारण निश्चित छोटा व्यापार भी छूट जाता है। इसलिए निश्चित और अनिश्चित दोनो कार्य छूट जाते है। इसीलिए तृष्णा रूपी अग्नि को सन्तोष रूपी जल से शान्त करना ही हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। कहा भी है-

गोधन गजधन बाजिधन और रतनधन खान।
आवे जब सन्तोष धन सब धन धूरि समान॥

इस युग मे तृष्णा का पूर्णत त्याग दिगम्बर साधु ही कर पाते है। सन्मार्गदिवाकर आचार्यश्री विमलसागर जी तृष्णा रहित निस्पृह रहकर अपनी साधना मे निरन्तर लीन रहते है। ऐसे आचार्यश्री के पदचिह्नो पर चलकर हम भी अपने जीवन को साधनापथ की ओर बढावे इसी भावना से उनके श्रीचरणो मे भाव-पुष्पाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

हमारा तो उद्धार हो गया

❑ *ग. आ श्री सुपार्श्वमती*

गुरुदेव आचार्यश्री विमलसागर सचमुच विमल (निर्मलता) के सागर है। वे अपने मे परिपूर्ण है। उनका एक-एक शब्द आत्म-हितकारी है। आज से चालीस वर्ष पूर्व (सम्भवत स २००६ मे) जब आप सप्तम प्रतिमाधारी ब्रह्मचारी थे, वीरसागर महाराज के दर्शनार्थ नागौर आये थे। उस समय आपने जो शिक्षा मुझे दी थी वह अभी तक मेरे हृदय मे अकित है।

आपने कहा था- ''हमेशा प्रसन्नचित्त रहो, क्योंकि प्रसन्नता आसन्न भव्य मे होती है। छिद्रान्वेषी नही, गुण-ग्राही बनो। प्रतिकूल पर कभी बरसो नही, अनुकूल पर कभी हरषो नही और ख्याति-पूजा लाभ के लिए कभी तरसो नही।'' पू गुरुदेव की यह शिक्षा हृदय मे आज भी अकित है।
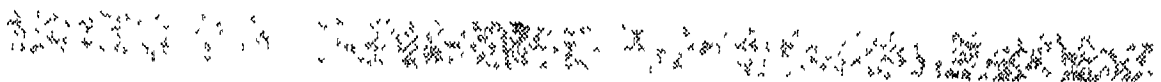
मुझे आपकी दिगम्बर दीक्षा देखने का सुअवसर भी मिला। स्मरण आता है सोनागिर का वह दृश्य- भक्तजनो की अपार भीड़, ४० साधुओ का समागम, गगा-यमुना के समान दो आचार्यो (महावीरकीर्ति और वीरसागर) का मिलन नयनो मे नाचने लगता है। आपके साथ की हुई नयनागिरि, द्रोणगिरि, अहार जी, पपौराजी की यात्रा भी अनूठी रही, जो अतीत की यादे बनकर रह गयी। आपका वात्सल्य भाव- 'बेटा' शब्द तो हरदम कर्णकुहरो मे टकराता रहता है।

निसर्ग से ही सृज् धातु के समान भिन्न-भिन्न उपसर्गों को सहन कर आपने स्वय को निसर्ग किया। इसलिए सृजनशील जीवन को वर्गातीत अपवर्ग के मार्ग में लगाया है।

आपकी गुरु-भक्ति तो अनोखी है। शिष्यो के ग्रहण, पोषण और शिक्षण के साथ ही दीक्षा देने का क्रम भी चल रहा है।

आपका वरदहस्त और आशीर्वाद मिलता रहे यही कामना करती हूँ।

भक्तों का मान रखनेवाले निमित्तज्ञानी गुरुवर

❑ *ग आ श्री विजयमती*

सम्भवत सवत् २०१० की घटना है। शायद पौष मास होगा। सुहावनी शरद ऋतु थी। बालाश्रम आरा की अमराइयो मे प्रकृति का सौन्दर्य फूट रहा था। श्री १००८ बाहुबली स्वामी के विशाल बिम्ब की छवि का क्या कहना। एक ओर पठन-पाठन की गूँज और दूसरे ओर अभिषेक, घण्टानाद एव पूजन, मधुर स्वर गूँजता रहता था। शास्त्र का जमघट ही क्यो, गुरु भी तो होने चाहिए? मानो इसी पूर्ति हेतु परमपूज्य तपोनिधि विमलसागर जी का आज मगल आगमन हुआ। सुनने की जिज्ञासा, तत्त्वचर्चा की अभिलाषा अधिकाधिक वृद्धिगत हो रही थी। न जाने कितने भावदीप सँजोये, स्वय ही कहना कठिन है। किन्तु इतना सुनिश्चित है कि आपके परोक्ष गुणगान भरा अन्त करण शीघ्रातिशीघ्र प्रत्यक्ष रूप मे चरणो मे मस्तक टेक चरणरज से रंजित करने को तरस रहा था। व्यग्रता बढती जा रही थी।

महाराजश्री सवत् २००९ मे दीक्षित हो प्रथम चातुर्मास गुनौर मे यापन कर पावन निर्वाणक्षेत्र श्री सम्मेदाचल के वदनार्थ विहार करते हुए पधारे थे। हम सब आश्रम निवासिनी बालाएँ भव्य स्वागत तैयारी मे पलक पावड़े बिछाये थी। पर पुण्यहीन को ऐसे अवसर कहाँ? मेरे अरमान अन्दर ही अन्दर झुलस कर रह गये। फिर भी आशा तो थी ही दर्शन की। पर क्या हुआ? महाराजश्री का विचार तो दूसरे ही दिन विहार का बन गया। मैंने सुना तो पग तले की भूमि फिसल गयी, आँखे छलछला उठी। मस्तक मानो घूमने लगा। अपनी निकटवर्ती कई बहनो से कहा, "आज विहार न करे" यह मेरी प्रार्थना महाराज श्री तक पहुँचा दो। किन्तु आश्रम के नियमानुसार किसी का भी साहस नही हुआ। क्या करना है, यही एकमात्र प्रश्न मस्तिष्क मे घूमता रहा। 'जहाँ चाह वहाँ राह' के अनुसार, लिखित रूप में मैंने अपना अभिप्राय पहुँचा ही दिया। महाराजश्री ने विचार किया और आदेश दिया कि विहार नही होगा। एक भक्त अपनी भक्ति का प्रसाद पाकर कितना हर्षित होता है, यह वह भक्त ही जान सकता है। गुरु-भक्ति अनुपम रसायन है, जो न केवल भौतिक जीवन को स्वस्थ बनाती है अपितु आध्यात्मिक जीवन

को भी परिपुष्ट बना देती है।

पल-पल कर रात्रि व्यतीत हुई। मै सोचती रही कि कितना धर्मानुराग है इन महर्षि का। वात्सल्य का कितना विशाल, महान सरोवर लहराता है इनके पावन हृदय मे। सद्गुरु की अपार महिमा है। परम वीतरागी का यही तो चिह्न है। बाह्याभ्यन्तर सग (परिग्रह) त्यागी ही यथार्थ मे परोपकारी-आत्महितकारी गुरु हो सकता है। नाना विचार तरगो मे तैरती मै स्नानादि क्रियाओ से निवृत्त हुई। गुरुदेव तो ध्यानारूढ़ थे। क्षण-क्षण भारी हो रहा था। मेरी मानसिक व्यथा और गुरु-भक्ति से प्रभावित भास्करदेव ने अपनी सुनहली रश्मियो का वितान तान दिया। शनै शनै यह प्रभामण्डल रजत रूप मे परिणत होने लगा। गुरुवर्य का ध्यान विसर्जित हुआ और विश्रान्तिभवन का द्वार खुला। अब आप बाहर मे आसीन हुए। मै अपार भक्ति और श्रद्धा से जा पहुँची, कर जोडे, मस्तक झुकाए, चरणो म नत हुई। मस्तक झुका ही था कि अमृतकण बरसने लगे, "क्या तुम्ही ने हमे रोकने की प्रार्थना की थी? बेटी, तेरी भक्ति से हमे रुकना पड़ा। सघ वाले तो विहार की जल्दी मे थे। तुम्हारी परीक्षा हो गई? सबका उत्तर मै "जी" इतना ही दे सकी। हर्षाश्रुओ से नयन तो छलक ही रहे थे, हृदय भी गद्गद् हो गया, वाणी मानो मूक हो गई। फिर भी इसमे हानि ही क्या थी? परमज्ञानी, निमित्तशास्त्रवेत्ता स्वय ही कहे जा रहे थे- "तुम्हारी परीक्षा तो ठीक हो गई, सभी पेपर अच्छे हुए है, परन्तु एक पेपर खराब हो गया। फर्स्ट नही आ सकती, सेकेण्ड डिवीजन आयेगी।" मै सुनती जा रही थी, अवाक् थी इन्हे किस प्रकार विदित हो गया? मै मध्यमा (सस्कृत-न्याय) की परीक्षा देकर आयी थी। कलकत्ता मे सेन्टर था। आपकी वाणी अक्षरश सत्य थी। मैने पूछा, "महाराजश्री। मेरे पेपर खराब होने का क्या कारण रहा?" तुरन्त उत्तर मिला, "तुम्हारे पिताजी का स्वर्गवास। तुम उस दिन कुछ चिन्तित हो गई थी। इसी से एक उत्तर (एक प्रश्न) खराब हो गया।" बात यथार्थ थी। "क्यो यही हुआ न?" "जी हाँ" मै बोल उठी। "महाराज श्री। आपको कैसे ज्ञात हुआ?" "मै नही जानता बेटा, तुम्हारा चेहरा देखते ही तुम्हारे सम्बन्ध की सभी बाते मेरे सामने चलचित्र की भाँति आ रही है, जो-जो आ रहा है, मै कह रहा हूँ।" मै ही नही, सभी आश्चर्य चकित थे। इनका शरीर जितना सुन्दर, सुगठित, तेजोमय है उतना ही उज्ज्वल मन और वैसा ही दर्पण-सा निर्मल ज्ञान। हमारे सामने अतीतकाल के अवधिज्ञानी, ऋद्धिधारी मुनीश्वरो की घटनाएँ साकार होने लगी। धन्य है यह योगिराज। इनका त्याग महान है, धैर्य और ध्यान अद्भुत है। आत्मा का सार मानो साकार हो गया। इनमे अहिसा, ममता और वात्सल्य साकार हो बस गया है। आप आबालवृद्ध सभी के पूज्य, श्रद्धेय और आराध्य है।

आप परम आगमनिष्ठ, कठोर चर्या के धारी है। आजन्म शूद्रजल का त्याग करने वालो से ही आहार लेते है। अत विद्यार्थिनी होने और ब्र माँ चन्दाबाई जी की आज्ञा न होने से मै आहार-दान देने मे असमर्थ रही परन्तु त्याग-भाव का बीजारोपण अवश्य हो गया।

ईसरी और पावापुर मे क्रमश चातुर्मास हुए। इन दिनो कई बार दर्शनो का लाभ हुआ। आप परम निद्रा-विजयी है। सायकाल सामायिक के उपरान्त मात्र २ घण्टे शयन करते है, तत्पश्चात् रात्रि ९-९॥ बजे उठ जाते है, रातभर अध्ययन-मनन और लेखन कार्य मे रत रहते, दिन मे भक्तो की भीड सुरभित पद्म पर भ्रमरो की भाँति छायी रहती। इसका कारण यह है कि आपकी भविष्य वाणी अक्षरश सत्य होती है। किसी के भी मन के विषाद और हर्ष से अवगत होना, आपके ज्ञान का विषय है। आपकी पीछी भी जादूगर की छडी ही है, जिस पर फिर

जाती है, उसकी आधि-व्याधि, रोग-शोक, सताप, आपत्ति टल ही जाती है।

परीषहजयी

आप से उपसर्ग, परिषह भय खाते हैं। परम पुनीत निर्वाणभूमि पावापुर जी मे अजेय डास, मच्छर और मक्खियों का भयकर आतंक था। रात्रि की बात क्या, दिन मे भी इनका दशन-व्यापार चलता रहता। आप ध्यान में तल्लीन हो जाते। हजारो शिकारी (मच्छर) चारो ओर से शरीर से आ चिपटते। हम लोग आरती उतारने जाते तो पाते कि सारे शरीर पर बडे-बडे चकत्ते उभर आये है परन्तु आपकी प्रसन्न मुद्रा मे कोई अन्तर नही आता। दीपावली के दिन जलमन्दिर मे आप सायकाल लगभग ६ बजे ध्यानस्थ हुए और प्रात ६ बजे तक उसी खड्गासन मुद्रा मे लीन रहे। ब्र चन्दाबाई जी ने कहा, "देखो, कैसी नग्न मुद्रा, कितनी शीत फिर भी यह ध्यान। धन्य है यह मुनिराज।" मैने कहा, "यहाँ मच्छर और डास का भी तो पार नही है। कैसे सहन करते है, चेहरे पर तनिक भी म्लानता नही है। इस काल मे भी ऐसे दुर्द्धर परिषह-विजेता साधु विद्यमान है।" जन-जन पूजित चरणारविन्द मे मैने मस्तक जा टेका। उस समय आप आचार्य पदालकृत नही थे। स्वय अकेले थे। तो भी आगम-प्रवाह, आर्षमार्ग आपका पथ प्रदर्शक था। पावापुर से आपके सघ की अभिवृद्धि हुई और आज यह कितना विशाल है, यह सभी जानते है।

वह अविस्मरणीय निर्वाण-दिवस

मेरठ मे आपका चातुर्मास था। दशहरे की छुट्टियो मे आरा से आपके दर्शनार्थ आयी। कारणवश दीपावली तक रुकना पड़ा। कारण क्या, मात्र गुरु का आदेश। मुझसे मिलने मेरे सम्बन्धी लोग आये। दीपावली की प्रभाती, श्री जिनदेव का अभिषेक कर पूजा की। निर्वाण लाडू चढाया। सभी साधुजन उपस्थित थे। मैने अपने भाई-बन्धुओ से कहा, "आप लोग लाडू लेकर यहाँ के मन्दिरो को चलिए, मै महाराजश्री के साथ आ रही हूँ।" उन्होंने वैसा ही किया। वे चल पडे। गुरुदेव का ध्यान विसर्जित हुआ। सरल मुस्कान के साथ बोले- "क्या विचार है बाई, भगवान तो सिद्धालय मे गए।" मानो मेरी तन्द्री टूटी, मुझे लगा अदृश्य शक्ति कह रही है, "अवसर मत चूको, गया वक्त फिर नही आता, दीर्घसूत्री का कल्याण नही होता, कर ले सो काम, भज ले सो भगवान। मनुष्य पर्याय का सार निकाल लो," सुनते ही अधीर हो उठी। दूसरी प्रेरणा, "क्या सोचती हो, कर लो जो करना है, और मेरे हाथ राख की कटोरी पर पहुँचे और केश-लोंच शुरू हो गया। कुछ हँसे, कुछ आश्चर्य से मुँह बाये खडे रह गए। जो हो, मेरा जीवन बदला और कुछ ही क्षणो मे मै ब्रह्मचारिणी के रूप मे बदल गयी। यह है आपकी वाणी का चमत्कार। ऐसे गुरुवर के चरणो मे मेरा नमस्कार।

सन्मार्ग-दिवाकर

❑ *ग. आ. श्री ज्ञानमती*

सन्मार्ग-दिवाकर तीर्थोद्धारक आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज द्वारा आज नगर-नगर गाँव-गाँव मे महती धर्म-प्रभावना हो रही है। आपके प्रयास से महान तीर्थक्षेत्र सम्मेदशिखर पर विशाल समवसरण की रचना बनी है। राजगृही मे आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी के स्मारक रूप मे भव्य सरस्वती भवन बना है और अभी सोनागिर तीर्थक्षेत्र पर भी अनेक जिनमूर्तियों को विराजमान कराकर तीर्थक्षेत्र की महिमा को चतुर्गुणी कर रहे हैं।

आप चिरकाल तक धर्म प्रभावना करते हुए इस पृथिवी पर विचरण करते रहे- इसी मगल कामना के साथ आपको मेरा शत-शत नमन है।

शत-शत नमोऽस्तु

❑ *आर्यिका श्री पार्श्वमती*

सगत कीजे साधु की, हरे और की व्याधि।
ओछी सगत नीच की, आठो पहर उपाधि॥

साधु-सगति सदा ही सुखकारी होती है। और उस पर भी यदि ज्ञानवृद्ध, तपोवृद्ध बड़े गुरु मिल जाये तो बडे ही भाग्य की बात है। इसे पूर्व सचित पुण्य का ही फल समझना चाहिए। मै पढ़ना नही जानती थी, आचार्यश्री और उपाध्याय महाराजश्री के पास रहकर पढना सीख गयी। दीक्षा के पूर्व मै बीमार भी रहती थी। महाराज जी ने जाप करने को कहा जिससे आज मै स्वस्थ हूँ। ऐसे उपकारी गुरु सबको प्राप्त हो जिससे सबका कल्याण हो। आचार्यश्री के चरणो मे श्रद्धा सहित शत-शत नमन करती हूँ।

उपमान और उपमेय आप ही हो

❑ *आर्यिका श्री जिनमती*

"नाके नाकौकसा सौख्य नाके नाकौकसामिव"

अर्थात् स्वर्गसुख की उपमा स्वर्गसुख से ही दी जा सकती है। आचार्यश्री उपमान और उपमेय दोनो ही है। ऐसे महान आचार्य के प्रति मै अपनी हार्दिक विनयाञ्जलि अर्पित करती हुई, श्री वीर प्रभु से प्रार्थना करती हूँ कि आचार्यश्री शतायु हो, "जीवेत् शरदा शतम्।"

महान् गुरु

❑ *आर्यिका श्री पारसमती*

प्रात स्मरणीय, धर्मदिवाकर आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज इस पचम काल मे अद्भुत सिद्धि के धनी तथा
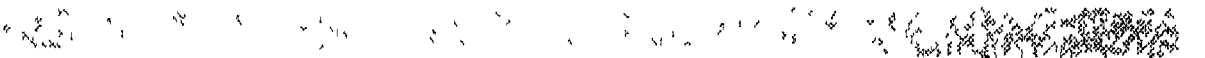
निमित्तज्ञानी गुरु है। आप णमोकार मत्र द्वारा ही दु खियो के दु खो को दूर करते है। उनके सारे सकल्प-विकल्प समाप्त होकर उनका मार्ग प्रशस्त मार्ग हो जाता है। ऐसे महान गुरु को मेरा बारम्बार नमोऽस्तु।

वात्सल्य-मूर्ति

❑ ***आर्यिका श्री आदिमती***

आज के भोगप्रधान युग मे मानव आत्म-साधना, त्याग सयम से विमुख होता जा रहा है। ऐसे समय मे भी आत्म-साधना को जीवन का लक्ष्य समझकर साधनारत साधको के पद-विहार से यह धरा आज भी सुशोभित है। यह सत-साधना प्राचीन परम्परा की ओर सकेत कर रही है कि जिन्होने उससे कर्ममुक्ति प्राप्त की थी, उन्ही के पदचिह्नो पर चलने वाले इस बीसवी सदी मे चरित्रचक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर जी महाराज जैसे महान सत हुए। उन्ही की परम्परा मे सन्मार्गदिवाकर वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज भव्यजनो को सच्चे मार्ग का दिग्दर्शन कराते हुए साधना-पथ पर अग्रसर है।

आचार्यश्री के प्रथम दर्शन से ऐसा प्रतीत हुआ, मानो वर्षो का परिचय हो। यह उनके आतरिक वात्सल्य का प्रभाव था। इन महान् हितोपदेशी के दर्शन पाकर अपार आनन्द हुआ। तत्पश्चात् मै मोरेना महाविद्यालय मे परीक्षा देने गई थी। आचार्यश्री सोनागिर से विहार करते हुए मोरेना पधारे। मुझे उनके सान्निध्य मे रहने का अवसर प्राप्त हुआ तथा सोनिया-अतिशय क्षेत्र के दर्शनार्थ सघ मे रहने का लाभ प्राप्त हुआ।

दीक्षा के अनन्तर आर्यिका ज्ञानमती माताजी के साथ सम्मेदशिखर जी की यात्रा के लिए जा रहे थे, तब आरा मे आचार्यश्री का भी पदार्पण हुआ था। कुछ दिन सघ के साथ रहे। इस बीच एक प्रसग आया-ज्ञानमती माताजी के भाई प्रकाश यात्रा मे साथ थे। उनके घर से तार आया 'पिताजी का स्वास्थ्य बहुत ज्यादा खराब है। तुम शीघ्र ही आ जाओ।'

ज्ञानमती माताजी ने आचार्यश्री से कहा कि प्रकाश को बुलाने के लिए तार आया है। आचार्यश्री ने कहा- "जाकर देख लो, दुकान पर बैठे है। बीमार नही है, बुलाने के लिए ऐसे ही तार दे दिया है।" कुछ दिनो के अनन्तर समाचार मिला कि उनकी तबीयत वास्तव मे ठीक थी। इस प्रकार की अनेक घटनाएँ प्रत्यक्ष देखी। किसी भी आगतुक व्यक्ति को देखते ही बतला देते है कि तुम इसलिए आये हो। इनके मतिज्ञान के विशिष्ट क्षयोपशम व निमित्तज्ञान का प्रभाव देखने को मिला। आप रात्रि के प्रथम भाग मे अल्प निद्रा लेकर पूरी रात्रि आत्मध्यान करते है।

आचार्यश्री के सान्निध्य मे रहने का अवसर कई बार मिला है। सभी साध्वियो के प्रति उनका कितना प्रेम वात्सल्य है, यह तो उस समय देखने को मिलता है, जब साधु सघो का मिलन होता है। आपने कई बार उत्तर-दक्षिण की यात्रा की है और अपने धर्मोपदेश से जन-जन को लाभान्वित किया है। ऐसे महोपकारी सत के प्रति विनम्र विनयाजलि अर्पित करते हुए यह भावना करती हूँ कि आचार्यश्री शतायु होकर सन्मार्ग-दर्शक बने रहे।

सच्चे गुरु

❑ *आर्यिका श्री अभयमती*

'गुरु' शब्द बड़ा मार्मिक एव गौरवशाली है। माता-पिता सर्वप्रथम गुरु है। शिक्षा देने वाले दूसरे गुरु है। जो उत्तम सुख के मार्ग की ओर लगाये अर्थात् मोक्षमार्ग मे प्रवृत्त करे ऐसे सन्त सर्वश्रेष्ठ गुरु है। पुत्र की उन्नति देखकर माता-पिता बड़े प्रसन्न होते है। विद्यार्थी की उन्नति देखकर गुरु बहुत प्रसन्न होते है। इसी प्रकार शिष्य की उन्नति देखकर आप अत्यधिक आनन्दित होते है।

फूलो की सुगन्ध स्वय फैलती है। गुणवान् पुरुष अपनी कीर्ति की प्रशसा स्वय कभी नही करते। ऐसे विरले ही सन्त है जो दूसरो को ऊँचा उठाकर अपने समान बना लेते है।

वे जगपति शिरोमणि, आश्चर्य क्या इसमे।
जो आपकी स्तुति करे, वह आप सम बने।।
क्या है प्रयोजन स्वामी से जो भी शरण पडे।
उसको न निज सम कर सके तो व्यर्थ गुण भरे।।

इसमे अतिशयोक्ति नही कि आचार्यश्री विमलसागर सच्चे गुरु है जो गुणो से परिपूर्ण पयोनिधि है। ऐसे गुरुवर की मै हृदय से शत-शत वन्दना करती हूँ।

परम कृपालु

❑ *आर्यिका श्री विमलमती*

गुरुदेव आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ने मुझ जैसे अल्पबोध को सुजानगढ मे दीक्षा देकर कृतार्थ किया। महाराज जी की यह सहज प्रकृति है कि जो भी उनके पास जिस भावना से आता है, उसकी उस भावना को वे अवश्य पूर्ण करते है। गुरुदेव तो बहुत कोमल हृदय वाले है, उनकी सब शिष्यो पर कृपा दृष्टि रहती है। मै उनके चरणो मे अपने विशुद्ध भावरूप कुसुम अर्पित करती हूँ।

सन्तप्रवर

❑ *आर्यिका श्री आदिमती*

वात्सल्यमूर्ति, परमतपस्वी, सन्तप्रवर के प्रति मेरा शत-शत वन्दन, नमोऽस्तु। मै चिरकाल तक उनके वात्सल्य की कामना करती हुई उनके दीर्घायुष्य की भावना भाती हूँ।

येन जातेन धर्मो याति समुन्नतिम्

❑ *आर्यिका श्री शुभमती*

ऐसे पुरुष विरले है जो स्व-कल्याण के साथ भव्य आत्माओं का भी कल्याण करते है। जिनके द्वारा इस शताब्दी मे धर्म का महान उद्योत हुआ है, हो रहा है वे स्व-पर कल्याण मे सतत निरत है। मैने इनके सर्वप्रथम दर्शन पद्मपुरी मे किये थे। आचार्यश्री ने अनेक बार सभी तीर्थो की वन्दना की है। उनकी महानता का कथन कौन कर सकता है। मै तो भक्ति के पुष्प उनके चरणो मे अर्पित करती हूँ तथा देवाधिदेव आदि प्रभु से प्रार्थना करती हूँ कि आचार्यदेव चिरकाल तक जिनशासन की प्रभावना करते रहें।

किसने सोचा था

❑ *आर्यिका श्री स्याद्वादमती*

आचार्यश्री का सघ इन्दौर पधारा, तब मै बहुत छोटी थी। मेरी उम्र १० वर्ष की होगी। सघ ने विहार किया तब मार्ग मे मैने आचार्यश्री से प्याज नही खाने का नियम लिया। जब आचार्यश्री ने कहा- "आलू भी छोड़ दो।" मैने कहा- "अभी नही।"

एक वर्ष बीता, माता सुपार्श्वमती जी इन्दौर पधारी। मैने आलू खाने का त्यागव्रत ले लिया। पूज्य माताजी का आशीर्वाद व स्नेह उसी समय से मुझे आज तक निरन्तर प्राप्त हो रहा है।

जीवन वैराग्य की ओर बढा। सप्तम प्रतिमा व्रत लिये। मुझे घर में १० वर्ष बीत गये। माता-पिता की आज्ञा पाकर अध्ययन व दीक्षा की भावना से मै माताजी के पास चम्पापुर पहुँची।

कुल दो माह ही माताजी का सान्निध्य मिला था कि एक घटना घटी। अचानक ब्र सुधर्मा बहन चम्पापुर पधारी। उन्होंने बताया- "हम दीक्षा का नारियल चढ़ाकर यात्रा के लिए निकले है। हम आचार्यश्री विमलसागर जी से दीक्षा लेने वाले है।" हममे आचार्यश्री की पुरानी स्मृति विस्मृत-सी हो गयी थी। सुधर्मा के उत्साह को देख मेरे मन मे भी आया- एक बार आचार्यश्री के दर्शन अवश्य करना चाहिए। फिर यदि माताजी के पास दीक्षा हो गयी तो जीवन मे आचार्यश्री के दर्शन दुर्लभ हो जायेगे।

इसी भावना के वशीभूत माताजी से गुरुदेव के दर्शन की भावना व्यक्त की और कहा कि एक बार दर्शन करके हम पुन आपके पास शीघ्र आयेंगे। बस, प्रार्थना स्वीकृत हो गयी।

चम्पापुर से सीधे सोनागिर सिद्धक्षेत्र हम लोग आए। उस समय आचार्यश्री व उपाध्यायश्री का केशलोच चल रहा था। मन मे अपार हर्ष हुआ। केशलोच के बाद आचार्यश्री ने कहा- "ऐरावती, देखो तुम्हारी मित्र सुधर्मा ने दीक्षा का नारियल चढ़ा दिया है। तुम भी चढ़ा दो।"

मैने कहा- "महाराजजी! अभी मेरा दीक्षा का कोई विचार ही नही है। अभी तो मुझे सुपार्श्वमती माताजी के पास रहकर अध्ययन करना है।"

आचार्यश्री ने कहा- "तुम गलत कहती हो।"

मैंने कहा- "महाराज जी, मै सत्य कहती हूँ कि अभी पाँच वर्षो तक मुझे दीक्षा नही लेनी है।"

आचार्यश्री ने कहा- "सब गलत बोल रही हो।"

मैंने कहा- "कैसे?"

आचार्यश्री ने कहा- "मै कहता हूँ सुधर्मा के भी पहले तुम्हारी दीक्षा हो जायेगी, विश्वास न हो तो लिख लो।" उस समय भी मेरे मे विश्वास नही जमा। यही सोचा-जब मेरी भावना नही तो दीक्षा कैसे होगी?

हम लोग सोनागिर २२ दिन रहे। आहार-दान देते रहे। पर मन मे एक अश भी परिवर्तन नही हुआ।

सोनागिर जी से घर पहुँचे। दो दिन ही बीते थे कि मन मे परिवर्तन आया, कैसे क्या हुआ, मै आज तक भी समझ नही सकी- "वैराग्य होने पर काल का इन्तजार नही रहता।" मन मे एक वैराग्य का भूत सवार हो गया, बस, अब शीघ्र दीक्षा लेनी है।

माता-पिता से बहुत अनुनय-विनय की, उनकी स्वीकृति मिलने मे अनेक विघ्न आये। पर काल-लब्धि कहिए या हमारे उपादान की जागृति, सारा वातावरण अनुकूल बन गया।

दीक्षा का शुभ मुहूर्त आते ही योग्य समय पर सभी कार्य हुए। सुधर्माजी व हम दोनो सपरिवार सोनागिर जा पहुँचे। दोनो ही की दीक्षा के लिए एक दिन और एक ही समय निश्चित हुआ था। आचार्यश्री के सत्य वचन- "मै कहता हूँ पहले दीक्षा तुम्हारी होगी," सत्य सिद्ध हुआ। दीक्षा समय प्रात सात बजे सुधर्मा का इन्तजार हो रहा था पर गुरु-वचन असत्य कैसे होता, वे दीक्षा-स्थान पर पहुँच भी नही पायी और ऐरावती की दीक्षा सुधर्मा से चार दिन पूर्व ही निर्विघ्न सम्पन्न हुई।

तभी से आज तक धर्मध्यान मे रहते हुए १३ वर्ष हो गये है। आचार्यश्री का अनुपम वात्सल्य, त्याग, तपस्या देख-देख कर मन गुरुचरणो मे मुग्ध-सा रहता है। आप जैसी उदारता, वत्सलता अन्य कही खोजने पर भी नही मिलती। चन्द्रप्रभ भगवान के पावन चरणारविन्द मे सतत प्रार्थना है कि आचार्यश्री दीर्घायु हो तथा उनकी छत्रछाया मे हम सबका जीवन मगलमय बने।

दीक्षागुरु

❑ *आर्यिका श्री धवलमती*

परम पू आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के, वी नि स २४९९ मे सम्मेदशिखरजी मधुबन में, पहली बार दर्शन किये व आहार-दान का लाभ भी प्राप्त हुआ।

आचार्यश्री के उपदेश का प्रभाव हृदयगत हो गया, जिसके कारण मैने पॉचवी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। इस प्रकार मै प्रतिवर्ष जहॉ भी चातुर्मास होता, चौका लेकर २-३ माह लिए गुरु-चरणो मे रहने का अवसर प्राप्त करती रही।

भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव पर हम सम्मेदशिखर जी गये। आहार के पश्चात् पर्वतराज की वन्दना के लिए रवाना हो गये। अनन्तानन्त सिद्ध प्रभु को नमस्कार करके हम वापस नीचे आने लगे तो हमें शाम हो गयी। विचार हुआ रात यही बितायें, प्रात चले जायेंगे। श्वेताम्बर मन्दिर की धर्मशाला पर हम गये। वहाँ के मैनेजर ने मना कर दिया। मैं गहनों से लदी थी। जल्दी घर पहुँचने के भाव हुए, कैसे भी जल्दी पहुँचा जावे अन्यथा परेशानी होगी। थोड़ी ही देर में गंधर्व नाला के पास हथियारों से लैस कुछ लोगों ने हमें रोका और धमकी देकर सोने और चाँदी के आभूषण उतरवा लिये। हम चारो लोग रात्रि धर्मशाला में आ गए। महाराज मौन थे। इशारे से आचार्यश्री ने मुझे सान्त्वना दी। दूसरे दिन करुणामूर्ति गुरु महाराज बोले- "देखो बेटा! दुख नहीं करना, शान्ति रखो। तुम्हारी और तुम्हारे धर्म की रक्षा हुई है। अर्थात् तुम्हारा शीलव्रत तो किसी ने नहीं लूटा, यही मूल्यवान् निधि तुम्हारे पास रह गयी। यही भाग्य की बात है।" उसी समय मैंने आचार्यश्री के पास यह नियम कर लिया- जब भी आप लोहारिया आयेंगे मै दीक्षा ग्रहण करूँगी। गिरनार चातुर्मास के पश्चात् आचार्यश्री का चातुर्मास लोहारिया हुआ और मैने अपने दिये गए वचनों को गुरुचरणों मे पूर्ण किया।

गुरुवर आचार्यश्री का सानिध्य सदैव मुझे प्राप्त होता रहता है। गुरु-चरणो में अपनी समस्त श्रद्धा-भक्ति समर्पित करती हूँ।

महान सन्त

❑ *क्षुल्लक श्री स्याद्वादसागर*

आचार्यश्री एक महान सन्त हैं। आपके दर्शन करने मात्र से हमे आत्म-कल्याण की प्रेरणा मिलती है। अनेक जीवो ने आचार्यश्री के बताये हुए मार्ग पर चलकर अपने व्रतों का निरतिचार पालन करते हुए अपना कल्याण किया है। आपके वात्सल्य के कारण अनेक दु खो से दु खी लोग आपके चरणों में आते है। धर्मानुरागी प्राणियो की आत्मा को शान्ति पहुँचाना आपका ध्येय है। आपमं प्राणीमात्र के कल्याण की भावना बनी रहती है।

हमारा कई भवो का पुण्य है कि ऐसे महान आचार्य से क्षु दीक्षा लेकर उनके चरणो में रहकर धर्मसाधना करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके चरणो मे मै अपनी विनयाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

मैं धन्य हो गया

❑ *क्षुल्लक श्री अकम्पनसागर*

आचार्यश्री सन्तों मे भी एक महान सन्त है। आपके दर्शन मात्र से आत्म-कल्याण की प्रेरणा मिलती है। आचार्यश्री के दर्शन कर मेरे मन मे भाव हुए कि ऐसे सन्त का सान्निध्य पाकर भी यदि मै आत्मकल्याण नहीं कर पाया तो मुझ जैसा अभागा और कौन होगा?

आचार्य संघ का सन् १९८६ का चातुर्मास हमारे नगर फिरोजाबाद में हुआ। प्रतिदिन आचार्यश्री व संघस्थ त्यागियो के उपदेश से प्रभावित हो, मेरे भाव क्षुल्लक दीक्षा धारण के योग्य हुए। उस समय सघ मे कुल २६

पिच्छिधारी थे। चतुर्थकाल का दृश्य लगता था। मैने दीक्षा की प्रार्थना करते हुए आचार्यश्री को नारियल चढ़ाया। तारण-तरण गुरुदेव के कर-कमलों से श्रावण सुदी पूर्णिमा (रक्षाबन्धन) दि १९-९-१९८६ को प्रात· शुभ मुहूर्त में मेरी क्षुल्लक दीक्षा हुई। मेरा नाम अकम्पनसागर रखकर गुरुदेव ने ससार के कम्पन से मुझे छुड़ा लिया।

मेरा अति सौभाग्य है कि ऐसे महान साधुराज के चरणो मे रहकर धर्म-साधना करने का अवसर प्राप्त हुआ है। ऐसे महान दया के सागर आचार्यश्री के चरणो मे नतमस्तक होकर विनयाञ्जली अर्पित करता हूँ।

दयानिधि

❑ *क्षुल्लक श्री करुणासागर*

परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज दया की मूर्ति है। प्राणीमात्र को मिथ्यारूपी कीचड़ से निकालने के भाव आपके बने रहते है। आपके चरणकमल जहाँ भी पड जाते है वही सुगन्ध बिखर जाती है। लोहारिया चातुर्मास के लिए वहाँ का समाज युगो-युगो तक आपका ऋणी रहेगा। मन्दिर मे एक कुआँ था, जिसमे पानी बिल्कुल नही था। आपने कुएँ को देखा, उसकी खुदाई की गयी। आज कुएँ मे अथाह पानी है। आपके वात्सल्य से मै अत्यन्त प्रभावित हुआ। फलस्वरूप गुरु के समाधिस्थ हो जाने पर मैने आपके चरणो मे अपना जीवन अर्पित कर दिया। गुरु चरणो मे शत-शत वन्दन।

मेरे दीक्षा-गुरु

❑ *क्षुल्लक श्री मोतीसागर*

परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर का जैसा नाम है, वैसे ही उनके गुण है। दीक्षा के पूर्व ही आचार्यश्री ने भव्य प्राणियो को मोक्षमार्ग का उपदेश देना आरम्भ कर दिया था। आपमे सरलता बाल्यावस्था से ही थी। जिन नगरो मे आपने शिक्षण प्रदान किया वहाँ के नर-नारी अब भी आपके द्वारा दी गयी शिक्षा का स्मरण करते है, आपका उपकार मानते है।

आचार्यश्री ने अपने दीक्षा-काल से सदैव एक ही लक्ष्य- स्व-पर-कल्याण, त्याग-तपश्चर्या को प्रमुखता प्रदान की। अपने जीवन मे कितने उपवास किये, उनकी गणना करना कठिन है। आहार मे रस-परित्याग तो आपके लिए साधारणसी बात है। अब तक तो केवल शास्त्रो मे ही पढते थे कि त्याग-तपश्चर्या से केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाती है किन्तु हम आचार्यश्री को साक्षात् देख रहे है कि त्याग और सयम के प्रभाव से उन्हे सहज रूप मे निमित्तज्ञान की प्राप्ति हो गई। अनेक नर-नारियो ने उनके इस ज्ञान का प्रत्यक्ष अनुभव किया है।

आचार्यश्री के प्रथम दर्शन मुझे लगभग ३० वर्ष पूर्व यात्रा के माध्यम से हुए। तभी उनका आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ था। उसके बाद आचार्यश्री के गुरुवर्य परम आचार्यो के दर्शन व आशीर्वाद प्राप्त हुए थे।

इसके बाद तो कई बार आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। मेरे दीक्षा लेने के एक वर्ष पूर्व तक मुझे यह किंचित् भी अनुमान नही था कि मुझे आचार्यश्री से दीक्षा लेने का स्वर्ण अवसर प्राप्त होगा। सन् १९८६

में आचार्यश्री इंदौर में विराजमान थे। जब उनसे हस्तिनापुर पधारने के लिए निवेदन किया गया तो आचार्य महाराज ने स्पष्ट कहा- 'फिरोजाबाद चातुर्मास के बाद ही हस्तिनापुर आयेंगे।''

मै सन् १९८६ में दशहरा के दिन फिरोजाबाद में दीक्षा के लिए नारियल चढ़ाने गया। आचार्यश्री ने उसी समय चातुर्मास के पश्चात् हस्तिनापुर आने की घोषणा की। १ मार्च १९८७ को अपने विशाल सघ के साथ आपका हस्तिनापुर में मगल पदार्पण हुआ। ८ मार्च को पचकल्याणक के शुभ अवसर पर उपस्थित जन-समुदाय के समक्ष अपने कर-कमलो से संस्कार करके मुझे क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की।

आचार्यश्री की अर्हद्‌भक्ति भी अनुकरणीय है। यह आपको वास्तव मे अपने गुरु से धरोहर के रूप में मिली है। जिन मन्दिरो, तीर्थों पर जहाँ जितनी वेदियाँ है, वहाँ उन सबको अलग-अलग परोक्ष नमस्कार करते हैं। यह कार्य एक दिन का नही, प्रतिदिन का है। यह भक्ति ही उन्हे आत्मिक शक्ति प्रदान करती है। बहुधा लोग तो तीर्थों के विकास की ही बात करते है। किन्तु आचार्यश्री ने तो सम्मेदशिखर, राजगृही, सोनागिर आदि अनेक तीर्थों का बहुत सुन्दर ढग से नवीनीकरण किया और अभी भी करवा रहे है। आप अनगिनत प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा के प्रेरणा-स्रोत है। आचार्यश्रीने पूर्व से पश्चिम तक एव उत्तर से दक्षिण तक कई बार यात्रा में हजारों कि मी विहार करके जिनधर्म का जितना प्रचार-प्रसार किया है, वह किसी से छिपा नही है। जहाँ भी आचार्यश्री पहुँचते है वहाँ मेला लग जाता है।

पर-कल्याण मे सलग्न रहते हुए भी आचार्यश्री आत्मसिद्धि मे सदैव तत्पर रहते हैं। आचार्यश्री शतायु होकर भव्य जीवो को धर्म-मार्ग पर लगाते रहे, यही मगल भावना है।

वह गुण मुझमे आ जाये

❑ *क्षुल्लक श्री चैत्यसागर*

आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के गुणो का वर्णन करना मुझ जैसे सामान्य जन के लिए अत्यन्त कठिन है। आप सन्मार्गदिवाकर, चारित्रचक्रवर्ती, निमित्तज्ञानी, ज्योतिषाचार्य, सद्‌गुण-भण्डारी, सिद्धान्तज्ञ, मन्त्रसुज्ञाता, तपोनिधि, करुणामयी, परोपकारी आदि अभीष्ट गुणो से सयुक्त है।

परम पूज्य आचार्य विमलसागर जी दीर्घायु हो जिससे वे अनेक पतित आत्माओ को दीर्घकाल तक पवित्र बनाते रहें। जो गुण आप मे हैं वह सब गुण मुझ मे आ जाये- इसी भावना के साथ उनके चरणो में मेरा वन्दन।

वात्सल्य-मूर्ति

❑ *क्षुल्लक श्री चित्तसागर*

पूज्य आ विमलसागर जी मेरे गुरु हैं। ईडर मे मैने शूद्रजल का त्याग किया था। बाद मे सम्मेदशिखर जी मे पाँच प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। आपकी दयादृष्टि प्राणी मात्र के कल्याण पर ही रहती है क्योंकि आपमें वात्सल्य का समुद्र हिलोरें ले रहा है।

परम पूज्य आचार्यश्री का चातुर्मास टिकैतनगर में था। मै दर्शनार्थ वहाँ गया था। सुबह का समय था। पूज्य आचार्यश्री अन्य साधुओं के साथ जगल की तरफ गये हुए थे। मै अपना सामान लेकर उनकी राह देखता मंदिर के आँगन में खड़ा था। उन्होंने मुझे दूर से ही देख लिया। मुख पर मृदु मुस्कराहट के साथ वे मेरे नजदीक आये। मै चरणो मे झुक गया तो उन्होंने मुझे दोनों हाथो का स्पर्श देकर उठा लिया और आशीर्वाद दिया। कहाँ उनका व्यक्तित्व और कहाँ मुझ जैसा छोटा भक्त। उनके पुनीत मन म कभी भी अन्तर नही है। वे तो सर्वत्र सद्व्यवहार से सभी को अपना विनम्रभक्त बना लेते है।

प्रेम ही परमेश्वर है। प्रेम से ही परमेश्वर की प्रार्थना हो सकती है। हमेशा आपने सभी को इस प्रेम का सदेश दिया है और देते रहते है। कोई भी प्राणी दु ख-दर्द से पीडित न रहे, यह आपकी मनोकामना है। और इसे पूर्ण करते हुए भी आप अपनी चर्या मे कभी कोई कमी नही आने देते। ऐसे गुरु को हमारा शत-शत वन्दन।

करुणाकर

❑ *क्षुल्लिका श्री राजमती*

दिगम्बर जैन समाज का सौभाग्य है कि उसे प्राणीमात्र के प्रति समभाव का अलख जगाने वाले, मैत्री-प्रमोद-करुणा का सदेश देने वाले आचार्य विमलसागर जी महाराज का नेतृत्व प्राप्त है।

ऐसे करुणाकर सन्त के चरणो मे मेरा बारम्बार नमन।

प्यासे को पानी मिला

❑ *क्षुल्लिका श्री श्रीमती*

उन गुरुवर के चरणो मे, नमन अनन्ते बार।
मुक्ति पथ दर्शाय कर, भव से करते पार॥

परमपूज्य सन्मार्गदिवाकर आचार्यश्री विमलसागर महाराज का चातुर्मास सोलापूर मे १९६६ मे हुआ था। उन्ही दिनों प पू आर्यिकारत्न ज्ञानमती माताजी का सघ भी श्राविका आश्रम सोलापुर मे था। मै वही ब्र सुमति बाई के आश्रम मे पढती थी। एक दिन आचार्यरत्नश्री गुरुवर्य के दर्शन करने गई। उन्होंने आशीर्वाद दिया और अपनी मधुर वाणी से 'कौन-सी कक्षा मे पढती हो, कहाँ की रहने वाली हो और क्या नाम है?' पूछा।

मैने कहा- "महाराज जी! मै आठवी कक्षा मे पढती हूँ।" मुस्कराकर गुरुजी बोले- "जीवन का क्या भरोसा? अपनी आत्मा का कल्याण करो। किसी के साथ कोई जाने वाला नही है। यह ससार असार है। आपके साथ जाने वाला मात्र एक धर्म ही है।" उपदेश सुनकर मन प्रफुल्लित हो उठा।

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपकी गोविंद दियो बताय॥

शुभ कर्म के उदय से अच्छे भाव ही उत्पन्न होते है। मैने पूर्व जन्म मे पुण्य अवश्य किया होगा। मेरे मुख से निकला- "जी महाराजजी।"

इतना कहकर मै आश्रम चली आई। महाराज केवल उसी से आहार ग्रहण करते थे, जिसका आजीवन शुद्ध जल का त्याग हो। तत्काल मैने आजीवन शूद्र जल का त्याग कर दिया। दूसरे दिन मै आहार देने को मन्दिर जा पहुँची। आहार-दान कर मन खुशी से नाच उठा। मेरा जीवन सार्थक हो गया। हाथ भी पवित्र हो गये। पहले आ गुरुदेव के सघ का विहार हुआ। फिर ब्र सुमतिबाई को लेकर आर्यिका रत्न ज्ञानमती माताजी ने भी विहार किया। मैं अगले गाँव आ रत्न गुरुजी के पास पहुँच गयी।

वहाँ आचार्यश्री ने अनुकम्पा कर मुझे पचम प्रतिमा के लिए व्रत दिए। फाल्गुन सुदी सप्तमी से फाल्गुन सुदी अमावस्या तक राजगृही सिद्धक्षेत्र पर बडी प्रभावना के साथ श्री सिद्धचक्रमंडल विधान हुआ था। ता १८-३-७२ चैत सुदी तीज, अश्विनी नक्षत्र मे मुझे क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान की। मेरे शिक्षा-दीक्षा गुरु आचार्य श्री विमलसागर जी है।

> शात मुद्रा छवि मनोहर, शुभ्र पावन अग।
> निर्विकार निरावरण, जो क्लेश-मुक्त असग।
> द्विविध लौकिक पारलौकिक कर रहे कल्याण।
> हृदय मन मंदिर मे रमे श्री विमल सिंधु महान।

जब से आचार्यश्री के संघ मे हूँ, तब से श्री सम्मेदशिखर जी से कर्नाटक श्रवणबेलगोल पर्यन्त पूरी यात्रा करने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ। यह सब सच्चे गुरु का ही आशीर्वाद है। कहा भी गया है-

> धन्य जीवन है उन्ही का, जन्म ले ससार मे।
> मन लगाते है सदा जो, ज्ञान के प्रसार मे॥

आचार्यश्री सघ सहित खडगिरि-उदयगिरि को जा रहे थे। रास्ते मे एक मेला लगा हुआ था। श्रावक जनो ने महाराज से विनती की- "आप गाँव के रास्ते से न जायँ, उपसर्ग होने की सभावना है। आपका दूसरे रास्ते से जाना श्रेष्ठ रहेगा।" गुरुजी बोले- "हमको कुछ उपसर्ग नही होगा। आराम से हम जायेगे। आपको डर लगता है तो घर पर आराम करना, हमको लेने के लिए मत आना।" श्रावक जन डर के मारे नही आये। महाराज जी अपने सघ सहित रास्ते मे आराम से जा रहे थे। किसी प्रकार का उपसर्ग नही हुआ। मेला के पास पहुँचे तो देखा कि लोगो के पास लम्बे डडे है। उनको देखकर हम तो डर गये मगर पूज्य आचार्यवर्य को देखते ही सब लोग एकदम जय-जय बोलने लगे। "नगे बाबा की जय! हमारे भाग्य खुल गये। भगवान मिल गये, भगवान मिल गये।" सब ने साष्टाग नमस्कार किया, छोटे-बड़े, जवान-बूढ़े सब अपनी-अपनी लाठी लेकर महाराज जी को गाँव तक पहुँचाने गये। आगे-आगे गुरुवर्य, पीछे-पीछे अन्य लोग जयकार बोलते जा रहे थे। गाँव के जैनी लोग भीड़ देखकर चकित हो गये। देखो! सच्चे गुरु की महिमा से अजैन अपने को धन्य मान रहे है, और इधर हम है कि घर में बैठे रहे। गुरु की महिमा देखकर लोगों मे श्रद्धा उत्पन्न हो गयी।

ऐसे महान परोपकारी निर्भीकमन गुरुवर्य आचार्यश्री विमलसागर जी के चरणो मे मेरा बारम्बार नमन।

गुणो के सागर

❑ *क्षुल्लिका श्री भारतमती*

जिस प्रकार रत्नाकर अमूल्य रत्नो का अक्षय भडार होता है, उसी तरह आचार्यप्रवर विमलसागर महाराज भी अनन्त गुणो के सागर है। आचार्यश्री को त्रिभक्तिपूर्वक नमन।

उपकारी गुरुदेव

❑ *क्षुल्लिका श्री सिद्धान्तमती*

परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का चातुर्मास औरगाबाद महाराष्ट्र मे हुआ। मै उनके दर्शनार्थ गई थी। मेरे साथ दो पुरुष तथा कुछ महिलाएँ भी थी।

कुछ दिनो पश्चात् मै अतिशय क्षेत्र कचनेर गयी। बहुत सुन्दर तीर्थस्थान है। यहॉ पर पार्श्वनाथ भगवान की मनोज्ञ प्रतिमा है। यही पर हमने आचार्यश्री के दर्शन किये। आचार्यश्री ने आशीर्वाद देकर कहा- "अपनी आत्मा का कल्याण करो।" सन् ८८ के चातुर्मास मे नाँदगॉव की कु मीना की दीक्षा के अवसर पर महाराज के दर्शन के लिए गयी थी। दस लक्षण व सोलह कारण के दिनो मे कही भी बाहर जाकर धर्माचरण करने की आदत थी सो मै वही रुक गयी। इसके पश्चात् मेरे घर जाने के भाव नही हुए। घर वालो को पत्र द्वारा सूचित किया कि मेरे दीक्षा लेने के भाव हो रहे है, अत मै घर नही आ पाऊँगी। पुत्र डॉ सतोष, उनके मामा-मामी आदि सभी मुझे घर ले जाने को आये। सभी ने दीक्षा न लेने को कहा। मोह के कारण लड़के ने दो दिन तक अन्न ग्रहण नही किया किन्तु मेरा दीक्षा लेने का सकल्प दृढ था। उसके पश्चात् बड़ा पुत्र भी आया। किन्तु मेरी तो तब जीवन दृष्टि ही बदल चुकी थी।

शरद् पूर्णिमा के दिन गुरु विमलसागर जी महाराज ने मुझे क्षुल्लिका की दीक्षा दे दी। आचार्य महाराज दीर्घायु हो। उनका सान्निध्य एव आशीर्वाद सदैव प्राप्त होता रहे, यही भावना सदैव भाती हूँ।

ऐलक अवस्था में भी चमत्कार दिखाये

❑ *क्षुल्लिका शीतलमती*

मै जब ८ वर्ष की थी, तब आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज इन्दौर पधारे थे। उनके साथ ख्यातिप्राप्त प ब्र नेमीचन्दजी थे। पडितजी ने इन्दौर के पास धर्मपुरी मे आचार्यश्री से क्षुल्लक दीक्षा ली और बड़वानी मे ऐलक दीक्षा ले ली। उस समय इन्दौर रामाशाह जी मन्दिर से चाँदी की प्रतिमा चोरी चली गयी थी। सबने विचार किया- कहाँ जाये? किससे पूछे। अन्त मे सोच-विचार कर आचार्यश्री से विचार-विमर्श का निर्णय लिया गया। समाज के कुछ प्रमुख व्यक्तियों के साथ मै भी अपने पिताजी के साथ बडवानी पहुँची।

बड़वानी मे गुरु के दर्शन कर मन प्रसन्न हुआ। ऐलकजी (वर्तमान मे आ विमलसागर जी) सेठ धीर जी

मोती से बोले- "प्रतिमा जी चोरी चली गयी है, इसलिए आये हो।" हम लोग सब आश्चर्य मे पड़ गये कि इन्होंने कैसे जाना।

दोपहर में हम सब पुन ऐलकजी के पास पहुँचे। ऐलक महाराज ने मेरे अँगूठे के नाखून पर काली वस्तु लगवायी और कहा- "देखो कुछ दिखाई देता है?"

अगूठे के नाखून मे मन्दिर से प्रतिमाजी ले जाते हुए मुझे एक आदमी स्पष्ट दिखाई दिया। महाराज जी ने सभी को दिखाया। सेठ जी ने उस व्यक्ति को भी पहचान लिया। इन्दौर आकर सेठजी उसके घर पहुँचे। प्रतिमा सही स्थिति मे आसानी से मिल गयी।

पश्चात् बड़वानी पहुँचकर इन्दौर समाज ने आचार्यश्री से इन्दौर चातुर्मास की प्रार्थना की। इन्दौर में अपूर्व प्रभावना के साथ आचार्यश्री का चातुर्मास हुआ।

ऐलक अवस्था में भी आचार्यश्री की साधना प्रशसनीय एवं अनुकरणीय थी। मै आचार्यश्री के चरण-कमलों मे त्रिकाल वन्दना करते हुए अपने लिए सम्यक्त्व का आशीर्वाद चाहती हूँ। पूज्य आचार्य श्री शतायु हो।

शुभ कामना

❑ *क्षुल्लिका श्री अनेकांतमती*

परमपुज्य गुरुवर सन्मार्ग दिवाकर बाल ब्र आचार्य रत्न विमल सागरजी जो मन से तन से व नाम से विमल है उनके चरणो मे हमे रहने का अवसर प्राप्त हुआ ऐसे आचार्य श्री चिरायु हो।

जिन्होंने भूले भटको को अपनाया, सयम भाव से मेरी झोली भर दी, शिवपथ योग्य बनाया उनके उपकार से मै ऋणी हूँ और यही प्रार्थना करती हूँ कि उनके चरण रज अपने मस्तक पर चढा कर उनका आर्शीवाद निज हृदय में लू और सदा उनके चरणो का सानिध्य प्राप्त हो वे चिरायु होकर विशुद्ध चारित्र के अनुगामी बनने मे मोक्ष पथ के प्रदर्शक बनकर हमारा कल्याण करे।

उनकी दीर्घायु की कामना करती हुई उनके चरणो मे शत शत नमन करती हूँ आचार्य श्री शतायु हो यही शुभ कामना है।

गुरु की शरण

❑ *क्षुल्लिका श्री विवेकमती*

मैं तो आय गई रे गुरु की शरण मे
राग नहीं द्वेष नही क्रोध नही रे गुरुजी के मन मे।

आचार्यरत्न श्री विमलसागर जी महाराज की महिमा को शब्दो मे बाँधना मुझ जैसी अल्पज्ञ के लिए कठिन है। मुझे ६ साल से चातुर्मास मे सघ में रहने का सौभाग्य मिल रहा था। हमेशा सघ मे आकर चौका लगाती

व आहार देती। सासारिक झझटो के कारण मै दीक्षा के भावो को दबाये रखती थी। आखिर वह शुभ दिन भी आया।

जैनधर्म एवं संस्कृति के अग्रदूत

❑ स्वस्तिश्री भट्टारक चारुकीर्ति स्वामी

परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज की आत्मसाधना, ज्ञानदान, धर्म-देशना आदि के फलस्वरूप आज धर्म-प्रभावना मे उनका बहुमूल्य योगदान देश-समाज को प्राप्त है। इसी प्रकार सुयोग्य, सच्चरित्र एव सुसंस्कृत नागरिकों के निर्माण के लिए महाराजश्री ने जिनमदिर जीर्णोद्धार, गुरुकुल, पाठशालाएँ आदि अनेक शैक्षणिक केन्द्रों की स्थापना मे प्रेरणा दी है। मत्रशास्त्र में विशेष अनुभव प्राप्त कर ससार से सत्रस्त एव दुखी जनो का जैनमार्ग मे स्थिरीकरण किया है, कर रहे है, और करेगे। आज भी उनके दर्शन करने एव उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए सैकड़ो लोग प्रतिदिन आते है। इस कारण से उनको जैनाचार्यों में श्रेष्ठ स्थान मिला है।

सन् १९८१ मे श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला मे सम्पन्न विश्वव्यापी सहस्राब्दी महोत्सव महामस्तकाभिषेक के सन्दर्भ मे अपने साथ विशाल सघ सहित पधारकर मार्गदर्शन किया। अनेक साधकों को साधुदीक्षा प्रदान कर समाज मे पुनश्चेतना का अपूर्व कार्य किया है।

प पू सन्मार्गदिवाकर आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का जैन धर्मदर्शन के प्रति जो दिव्यावदान है, वह जैन सस्कृति के इतिहास मे सदा अविस्मरणीय रहे, ऐसी हम शुभ-कामना प्रकट करते है। उन्हे मेरा त्रिकाल अभिवन्दन।

निमित्त-ज्ञानयोगी

❑ भट्टारकश्री ललितकीर्ति

आचार्यश्री बड़े पहुँचे हुए तपस्वी है। कई विद्वान मुनियो के निर्माता है। जैन सम्प्रदाय की अटूट धारा आप जैसे महान त्यागियों के परिश्रम तथा सत्प्रयत्न से ही आज तक अबाधित होकर बहती आ रही है। इस पुण्यतीर्थ मे डुबकियाँ खाते हुए सैकड़ो भव्यात्माओं का आत्म-कल्याण हो गया, हो रहा है और होगा। हम अपने मन-वचन-काय द्वारा आपके चरण-कमलो मे अपना हार्दिक अभिवादन करते है।

प्रणमामि नित्यं

❑ भट्टारकश्री लक्ष्मीसेन

सन्मार्गदिवाकर परमपूज्य आचार्यश्री पचास वर्षो से लगातार अपने पास आए हुए भक्तों का वात्सल्य एव करुणा भाव से उद्धार एव उत्थान का कार्य कर रहे है। आपके द्वारा विशेष विहार, प्रवचन आदि से भारतवर्ष में जैन धर्म की महती प्रभावना हो रही है। ऐसे साधु त्रिलोक मे वन्दनीय है। इनको हमारा शत-शत वन्दन, इति

भद्रं भूयात्। वर्धतां जिनशासनम्।

Naman

❑ ***Bhattarak Sh. Devendrakirti***

We are happy to know that a souvenir will be published in honour of Most Rev. Acharya Shree Vimal Sagarjee Maharaj.

Most Rev. Acharya Shree Shree Shree 108 Vimal Sagarjee has been one of the greatest 'Tapasvis' of this 20th century His human services to the humanity as-well-as to the field of Jain Dharma, Philosophy and Culture will be remembered for ever by one and all, particularly by the Jains He is a standing example by his sacred life for most of our other Digambar Monks Today he himself is an institution His great 'Tapasya' and 'Vatsalya' (pure love for others) are worth to be accepted by every person who love to live as Munis

We pray the Lord Supreme Bhagwan Shree Parshwanatha Swamy and Divine Mother Shree Padmavati Devi for long, healthy and peaceful life of Rev Acharya Shreejee.

May the proposed souvinier be published in a grand Style

समतामूर्ति

❑ ***ब्र. चित्राबाई***

मै हिन्दी बोल और समझ सकती हूँ। यह देख बड़े महाराज विमलसागर जी ने गाँव वालों को कहा कि इस बाई को चौका करने के लिए संघ के साथ एक महीने के लिए भेज दो। कोल्हापूर के गाँववासियों ने भी कह दिया—"महाराज! यह आदमी के बराबर काम करने वाली औरत है। आप इसको ले जाओ।" तब तीस दिन के लिए महाराज के साथ आई पर आज तीस बरस से भी अधिक समय हो गया है, इस संघ के साथ। इतने बरसो में बहुत से नगरों, गाँवों मे विहार किया, रुके व चातुर्मास भी किये। कभी-कभी चलते-चलते शाम हो जाती, जंगल मे ही रुक जाते, कही लुटेरों की बस्ती, कही अन्य समाज के लोग इस प्रकार मिलते हैं। जहाँ जंगलों में रुकते। वहाँ से ४-५ किलोमीटर की दूरी पर भी यदि गाँव वालो को मालूम पड़ता, तो वे आवभगत के लिए आते। रात्रि में महाराज के साथ रहते, कोई वस्तु की जरूरत पड़ जाती तो देते भी है। अगर अजैन बस्ती भी होती तो वहाँ के पटवारी, सरपच हमारा सब बन्दोबस्त करते और चौका व रहने के लिए अपने मकान खाली कर देते। कोई शराब, मांसाहार का त्याग करता, कोई बीड़ी का। इस प्रकार के नियम भी लेते हैं वे लोग। कई लोग आज भी बड़े महाराज के दर्शन करने आते हैं और कहते हैं—"भगवन्! आपकी कृपा से हम सुखी

है, सम्पन्न हो गये है।'' इतने बरस तक रहने से मुझे बहुत कुछ जानने को मिला, समझने को मिला। बहुत-सी ऐसी भी घटनाएँ हुई जो गुरु के सम्यक् दर्शन गुण को बताने वाली है। ऐसी ही एक-दो घटनाएँ मै आपको बताती हूँ।

समता मूर्ति गुरु

सघ सम्मेदशिखरजी से खण्डगिरि की ओर विहार कर रहा था, उस समय रास्ते मे एक ताँगे-वाले ने दिगम्बरत्व को देख मन मे उन्हे पागल समझा व ग्लानि का भाव किया। रास्ते मे चलते हुए आचार्यश्री को चाबुक दे मारा। आचार्यश्री कुछ न बोले। आगे बढ गये, फिर चाबुक मारा, परन्तु समतामूर्ति साधु मौन रहे। कोडे तो उनके शरीर पर पड़ रहे थे और वे भेद-विज्ञान मे लीन सोचने लगे-मुझे मारा, मेरी आत्मा को नहीं मारा। साथ मे आर्यिका सिद्धमती माताजी थी व एक क्षुल्लकजी भी। थोड़ी दूर जाने पर ताँगे का घोड़ा मूर्छित होकर गिर पड़ा। ताँगेवाले को अपने किये का विचार आया। वह दौड़ा-दौड़ा आचार्यश्री के पास आया व उनके चरणो मे गिरकर रोने लगा, पश्चात्ताप करने लगा। समतामूर्ति महाराज ने उसको हिम्मत बँधाई और कहा—''घबराओ नही, सब ठीक हो जायेगा।''

करनी का फल

खण्डगिरि उदयगिरि जाते समय एक और घटना घटी थी जो यह शिक्षा देती है कि आदमी को अपनी करनी का फल अपने आप ही मिल जाता है। विहार करके आचार्यश्री रात्रि विश्राम के लिए एक ग्राम मे रुके। शाम को पहुँचते ही आचार्य महाराज ने सभी से कहा कि सभी मौन रहे, कोई भी बोले नही। साथ मे चलने वाले श्रावको को भी यही बात कही। एक आदमी गॉव के दो आदमी को लाता और हँसी-ठट्टा करता चला जाता। रात्रि १२ बजे तक नये-नये व्यक्तियो को लाकर वह साधुओं को तग करता रहा। सॉप को कितना दूध पिलाओ, सब जहर हो जाता है। उसी प्रकार गॉव के दुष्ट लोगो ने उस मुद्रा को देख सबक तो नही सीखा, उल्टा थोडी-थोड़ी देर मे आकर साधुओ को सताया। सबेरा होते ही, साधु सघ आगे को विहार कर गया। रास्ते मे वह आदमी जिसने सभी को सताने के लिए उकसाया दौडा-दौड़ा महाराज के चरणो मे आया। गिरकर माँफी मॉगने लगा। महाराज ने उसे उठाया व दु खी होने का कारण पूछा। उसने बताया—''मेरी इकलौती पुत्री झूले से गिर गई जिसके सिर पर भयकर चोट आ गई है। स्वामी! आपको सताया, उसकी सजा मुझे मिल गई।'' महाराज बोले—''कोई बात नही, अनजाने मे हो गया। जाओ! तुम्हारी बच्ची ठीक हो जाएगी। शाति रखो।'' इतना कहकर आचार्यश्री अपने रास्ते की ओर बढ़ गए। ऐसे समतामूर्ति को मेरा शत-शत प्रणाम।

दिग्दर्शक

❑ *ब्र. कमलाबाई*

यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि परम पू आचार्य विमलसागर जी महाराज का उच्च स्तर पर अभिवन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है। आचार्यश्री अपूर्व त्याग, सरलता, सौम्य, करुणा आदि सद्गुणों के भडार हैं। ऐसे महापुरुषों के कीर्तन, गुण-स्मरणादि कल्याणकारक व पापहारक होते है। मै आचार्यश्री की वदना करती हुई

भगवान से प्रार्थना करती हूँ कि आचार्यश्री युगो-युगो तक ससारी प्राणियो को समीचीन मार्ग का दिग्दर्शन कराते रहें।

विनयांजलि

❑ *ब्र. सूरजमल*

भारत देश धर्म प्रधान देश है। यह तीर्थंकर एव सन्तों की खान है। ऐसे सन्त जो निस्पृह वृत्ति को धारण कर स्व-पर का कल्याण करते है, ऐसे सुष्ठु कार्य करते हुए जो संयमाराधना करते हैं ऐसे ही सन्त पुरुष हैं आचार्यश्री विमलसागरजी, जो स्व-कल्याण के साथ-साथ, परोपकार मे लगे है, जो हमे मिथ्यात्व के अंधेरे से हटाकर सम्यक्त्व रूपी उजाले को दिखाते हुए उसे अगीकार करा देते है। जिनके रोम-रोम मे वात्सल्य रस भरा हुआ है, प्राणी मात्र के हृदय मे जो बसे हुए है, ऐसे वात्सल्यमूर्ति, करुणासागर, सन्तराज न कभी हुए हैं, न है, न ही होगे। पूज्य सन्तशिरोमणि के चरणों मे शत-शत वन्दन।

वात्सल्य एवं स्थितिकरण के अपूर्व उदाहरण

❑ *संहितासूरि पं. नाथूलाल जैन शास्त्री*

जगत् के प्राणियों को दु खी देखकर उनके कल्याण की कामना अपायधर्म्यध्यान कहलाता है। यह सम्यग्दृष्टि गृहस्थ एव मुनि को होता है, जो शुभोपयोग के अन्तर्गत पुण्य परिणाम है।

श्री परम पूज्य आचार्य विमलसागरजी महाराज के समीप प्रतिदिन सैकड़ो दु खी व्यक्ति आते है और उन्हे वे पचपरमेष्ठी के नाम का स्मरण करते रहने का उपाय बताते है। यद्यपि यह नाम प्रत्येक उपदेशदाता बता सकता है, परन्तु आचार्यश्री तपस्वी है। उनकी वाणी मे जो अतिशय है उसी के प्रभाव से भक्तजनो को लाभ होता है। उनमे यह विशेषता है कि वे भक्त को बिना सकेत प्राप्त हुए उसके घर के वातावरण और उसकी पीड़ा या उसकी समस्या को जानकर उसकी चिकित्सा भी बता देते है।

अनेक वर्षो से उक्त क्रम चला आ रहा है, जिसके कारण हजारों लोग आचार्यश्री के ऋणी और कृतज्ञ बने हुए है। आश्चर्य यह है कि उनके दर्शनार्थ एव अपनी मनोकामना (दु खदर्द निवारण इच्छा) पूर्ण करने को प्रतिदिन नम्बर आने पर भी हर व्यक्ति प्रथम पहुँचने का प्रयत्न करता है। कभी कभी वातावरण क्षुब्ध भी हो जाता है, परन्तु ऐसी किसी भी परिस्थिति मे आचार्यश्री को कभी रचमात्र भी अशान्त होते हुए नही देखा गया। सदैव वे शान्त और प्रसन्न ही दिखलाई दिये है।

'मा कश्चिद्दुखभाग्भवेत्' कोई दु खी न रहे इस दृष्टि से आचार्यश्री दूर दूर से अपने समीप आने वाले बन्धुओ का, जिनका अन्यत्र समाधान नही हो पाता, समाधान करते है।

लोकमान्य आचार्यश्री के प्रति जनसामान्य कृतज्ञ है। इसीलिए उनकी हीरक जयन्ती पर और उसके पूर्व से ही दानशील लोग साहित्य प्रकाशन हेतु पर्याप्त अर्थ देते हैं। वर्तमान मे ७५ ग्रन्थ प्रकाशन की योजना कार्यान्वित

हो रही है।

आचार्यश्री द्वारा वात्सल्य भाव के साथ स्थितिकरण हेतु अपने सघ के अविचलित मे योग देना भी उल्लेखनीय है। यदि सघ के किसी भी विरक्त को सहानुभूति एव मार्गदर्शन न मिले तो उसका विचलित हो जाना स्वभाविक हो जाता है।

'आदहिद कादव्व ज सक्कइ परहिद च कादव्व' आत्महित करना चाहिए और जितनी शक्ति हो परहित भी करना चाहिए। इस वाक्य का आचार्यश्री पालन करते है और अपने आत्मकल्याण की ओर अग्रसर रहते हैं।

मै हीरक जयन्ती के पुनीत अवसर पर उनको मन वचन काय से नमन-अभिवन्दन नमोऽस्तु करता हूँ।

सिद्धिप्रदाता

❑ ब्र. धर्मचंद्र शास्त्री

युगप्रमुख, चारित्रशिरोमणि, वात्सल्यरत्नाकर, निमित्तज्ञानी, आचार्यप्रवर, सन्मार्गदिवाकर श्री विमलसागरजी महाराज के व्यक्तित्व का दर्शन करते समय मन मे अनेक प्रकार की भावनाएँ उभरती है। जब-जब ज्ञान की आँखों मे श्रद्धा की ज्योति जगती है तो आचार्यश्री के स्वच्छ, सौम्य, धवल निर्ग्रन्थ देह के भीतर एक दिव्य व्यक्तित्व की प्रतिमा का दर्शन होता है। उनका व्यक्तित्व कितने रमणीय रगो मे रँगा है, कह पाना कठिन है, समझ पाना भी कठिन है, सिर्फ अनुभूति होती है। उनके विविध सुरम्य रूपो को देखकर कभी लगता है आचार्यश्री सरलता की साकार मूर्ति है, विनम्रता के पुज है। कभी-कभी उनकी दिव्य ज्ञान-साधना की छवि के दर्शन होते है तो लगता है, ज्ञान का सागर हिलोरें मार रहा है। उनसे बात करते समय लगता है कि वाणी मिश्री से भी मीठी है, प्रकृति से अत्यन्त सरल एव नम्र। आचार्यश्री का जीवन साधनामय है। ७५ वर्ष की आयु होने पर भी ज्ञान, ध्यान, जप, तप, स्वाध्याय, धर्मोपदेश, जिनवदना, तीर्थदर्शन, आत्मचिन्तन आदि मे निरन्तर तल्लीन रहते है। आचार्यप्रवर इस युग के सर्वप्रिय लोकोपकारक महापुरुष है। आपकी आत्मा-अपाय-विचय नामक धर्मध्यान मे सदा लीन रहती है। आत्म-चिन्तन के पश्चात् जो भी समय मिलता है वह लोक-कल्याण की पवित्र भावना के अनुसार संसारी प्राणियों को देते रहतेँ है तथा हजारो ससारी प्राणी आपके दर्शन एव वाणी से आत्मकल्याण कर रहे है। आचार्य महाराज के प्रथम दर्शन का सौभाग्य शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर जी मे सन् १९७२ मे प्राप्त हुआ। तदनन्तर पू. महाराज के दर्शन राजगृही, अजमेर, श्रवणबेलगोला, जयपुर, नीरा, गिरनार, बम्बई आदि स्थानो पर तो होते ही रहे किन्तु अब तो आपके चरण सान्निध्य मे रहने का पुण्य अवसर प्राप्त हो रहा है। आपका वात्सल्य सदा मिला है। ऐसे महान कर्मयोगी के प्रति मैं अपनी पूर्ण आस्था रखता हूँ तथा वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आचार्यश्री का वरद हस्त युगो-युगो तक मिलता रहे। ऐसे परम पूज्य तपोधन आचार्यश्री के पादमूल में अपनी भावपूर्ण शब्दावलि अर्पित करता हूँ। आचार्यश्री की विमल छत्र-छाया ससारी प्राणियो को मिलती रहे ताकि सभी प्राणी शान्ति प्राप्त कर सके। यही मगल कामना है।

वात्सल्यमूर्ति

❑ ब्र. रवीन्द्र कुमार शास्त्री

मेरा अपना सौभाग्य है कि विगत अनेक वर्षों से वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री के दर्शनों का लाभ लेता हुआ अपना जीवन सार्थक कर रहा हूँ। जब भी दर्शन के लिए जाता हूँ-प्रसन्नता से जी भर जाता है और प्राप्त होता है मगल आशीर्वाद एव मार्गदर्शन।

पिछले चार वर्ष पूर्व जम्बूद्वीप स्थल पर कुछ दिन आचार्यश्री को ससंघ लाने का भी शुभ अवसर प्राप्त हुआ था। कई साल के परिश्रम के बाद यह योग मिला था, जब आचार्यश्री १ मार्च १९८७ से १७ मार्च १९८७ तक जम्बूद्वीप स्थल पर रहे और पावन मूर्ति के सान्निध्य मे यहाँ पचकल्याणक महोत्सव तथा दीक्षा समारोह सम्पन्न हुआ। यह प्रथम अवसर था एक साथ १७ दिन तक आचार्यश्री का सान्निध्य मेरे लिए प्राप्त करने का। सभी जीवो में किस प्रकार समता की दृष्टि रखकर वात्सल्य देते है, यह प्रत्यक्ष में यहाँ अनुभव किया था। किसी के प्रति राग एव किसी के प्रति उपेक्षा करके सघ का सचालन संभव नही है इसलिए आचार्यश्री अपने सभी शिष्यों के प्रति एव ससार के समस्त प्राणियो के प्रति विशेष प्रीति-अप्रीति न करके सबको समान रूप से आशीर्वाद प्रदान कर स्वकल्याण के साथ परकल्याण द्वारा जन-जन के प्रिय एव श्रद्धा के पात्र बन गये है। ऐसे वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के चरणो मे, उन जैसे कुछ गुणो के आविर्भाव हेतु स्वकल्याण की मगल भावना के साथ नमन करते हुए उनके दीर्घ जीवन की कामना करता हुआ, श्रद्धा सुमन समर्पित कर रहा हूँ। तथा यही भावना करता हूँ कि इसी प्रकार ससारी प्राणियो को आपका आशीर्वाद व वरदहस्त चिरकाल तक प्राप्त होता रहे।

ये सर्वर्द्धिसमृद्धा योगीशास्तानहं वन्दे

❑ सुमतिचन्द्र शास्त्री

अभी तक केवल पुराणों, कथाओ आदि में ही पढ़ा-सुना जाता था कि ऋद्धिधारी मुनि होते है। सिद्धि प्राप्त साधु हुआ करते थे प्राचीन युग मे। किन्तु इस युग में तो एक दीर्घसमय से यह सब कुछ एक सपना ही था।

दि. जैन समाज का सौभाग्य है कि वह सपना साकार किया सन्मार्ग दिवाकर, करुणामूर्ति, आत्म कल्याण के साथ-साथ लोककल्याण मे भी निरतर अग्रसर, सरल हृदय, सौम्यमूर्ति आचार्यश्री विमलसागर महाराज ने। अपनी दीर्घकालीन तपस्या, ध्यान, अध्ययन और पुरुषार्थ से आचार्यश्री का निमित्तज्ञान अच्छे-अच्छे तार्किक और मनोवैज्ञानिको को भी अभिभूत करता है।

आचार्यश्री की यह गरिमा उनके असाधारण ज्ञान से ही उन्हें प्राप्त हुई है। हमने स्वय उन्हे अनेक बार देखा कि वे केवल रात्रि ९ से रात्रि ११ बजे तक साधारण नींद लेते है और शेष रात्रि असाधारण ध्यानयोग में वे निमग्न रहते है।

ध्यानयोग की शुरुआत आचार्यश्री को सन्तो के सान्निध्य से छात्र जीवन मे हो गई थी। मुनियो का कमण्डलु लेकर कई मील से मुरैना तक लाने और पूरे समय उन्हीं की सेवा में रहकर वैयावृत्ति करते हुए उन्हे फिर मीलों

तक विहार कराने में उन्हे तब बहुत आनन्द और सतोष मिलता था।

आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राय सभी को फलित होता है और इसीलिए आचार्यश्री के पास दोपहर १ से ३ तक सकटग्रस्तो की एक लम्बी क्यू लगी रहती है (आचार्यश्री मात्र २ घटे ही इस हेतु रखते हैं)। जब कही किसी को किसी सकट या समस्या के समाधान की झलक नहीं मिलती तब मिथ्या मार्ग को तोड़कर लोग सन्मार्गदिवाकर की शरण मे आते है-णमोकार महामत्र की शरण मे आते है। हजारो बधुओ ने सन्मार्गदिवाकर के सान्निध्य मे सम्यक्त्व की शरण ली है और भयमुक्त हुए है।

यह नि सदेह कहा जा सकता है कि आचार्यश्री विमलसागर महाराज इस समय सभी तरह के मिथ्या भावो, क्रियाओ और मिथ्यात्वियो की पूजा-अर्चनाओ से जैनो को ही नही अपितु अजैनो को भी हटाने मे सलग्न हैं और सफल हुए है। यही वजह है कि उनकी जन्म-जयन्ती पर हजारो लाखो लोग उनके चरणो मे नतमस्तक होते है और भावभीनी पुष्पाजलि समर्पित करते है।

आचार्यश्री के उत्तराधिकारी सत-प्रवर एव सद्ज्ञान के अनुपम भडार पू उपाध्याय भरतसागर महाराज भी प्रशस्त प्रवचनो से श्रावको को सन्मार्ग पर लगा रहे है।

हमे भी आचार्यश्री के असीम स्नेह और प्रेरणा का प्रसाद मिला है। अतिसक्षेप मे हम इतना ही कहना चाहते है कि आचार्यश्री विमलसागर महाराज एक युग-पुरुष है-योगी है। हम उनके चरणो मे उनकी ७५ वी वर्षग्रन्थि पर शत-शत वन्दन करते हुए उनके दीर्घायु की कामना करते है।

मैंने पूछा

❑ *ब्र. मुरारीलाल*

मैंने आचार्य गुरुवर्य श्री विमलसागरजी से एक दिन पूछा—''गुरुदेव, आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी मे क्या विशेषता थी जो आपने अन्य आचार्यों को छोडकर इनसे दीक्षा ली?''

आचार्य म ने मुस्कराकर उत्तर दिया—''प्रथम बात तो यह कि आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज ने हमे आचार्य महावीरकीर्तिजी के पास दीक्षा लेने की सलाह दी थी।

द्वितीय यह कि आचार्य महाराज अपने व्रतो का निर्दोष रीति से पालन करते थे। वे सिंहवृत्ति, आगमनिष्ठ, निर्भीक, शुद्ध आहार पद्धति को स्वीकार करने वाले अनेक गुणो के स्वामी थे।''

आचार्यश्री विमलसागरजी अपनी गुरुपरम्परा पर चल रहे है। आपका जैसा नाम है वैसे ही गुण आपमे मौजूद है। वस्तुत आपअति सरल परिणामी हैं तथा आपके हृदय मे प्राणी मात्र के उद्धार की भावना है। आपने स्व आचार्य श्री सुधर्मसागरजी से एक ऐसी विद्या का अध्ययन किया है जिसके द्वारा आप प्राणी मात्र के दुखो को दूर करने मे सक्षम है। वह है मत्र-तत्र-यंत्र विद्या। आप जीवो के चेहरे मात्र को देखकर उसकी पीड़ाओं का ज्ञान लेते है। आपका निमित्तज्ञान ऊँचे दर्जे का है।

पंडित अवस्था में

गृहस्थावस्था के समय की घटना (फिरोजाबाद की) मुझे स्मरण आती है-पं. नेमिचन्द जी (आचार्यश्री) हमारे घर पर प्रात ५ बजे अचानक पधारे। मैंने कहा-''पधारिये मित्र!'' (मैं व नेमिचन्द एक ही साथ पढ़ते थे)। प ब्रह्मचारीजी ने कहा—''मैं चन्द्रप्रभ मंदिर जा रहा हूँ, वहीं पूजन करूँगा।'' मैंने प्रात. के भोजन की प्रार्थना की।

ब्रह्मचारीजी ने कहा—''मदिर जी मे पहला निमत्रण जिसका आयेगा, उसी को मैं स्वीकार करूँगा, अभी कुछ नही कहता।'' मदिरजी मं मुझसे पहले प यतीन्द्रकुमार जी भी ब्रह्मचारीजी को निमत्रण देने के लिए पहुँच चुके थे परन्तु वे बाहर ही बातो मे लग गये और मेरा निमत्रण स्वीकृत हो गया।

ब्रह्मचारी घर पर पधारे। सहसा हमारी बहिन को देख उन्होंने कहा—''तुम्हारे दुपट्टा का कोना किसी ने काट लिया है।'' बहिन ने स्वीकार किया। तभी वे बोले—''तुम्हारे एक बालक की मृत्यु हो चुकी है।'' बहिन ने यह भी स्वीकार किया।

उसी समय एक महिला ने मकान मे प्रवेश किया। ब्रह्मचारी जी ने मुझे इंगित किया कि यही वह महिला है जिसने पल्ला काटा है। आपके निमित्तज्ञान की प्रखरता ने सबको आश्चर्य मे डाल दिया था।

शिक्षा-गुरु के साथ

एक बार आचार्यश्री विमलसागरजी पडित अवस्था मे स्व आचार्य सुधर्मसागरजी के साथ विहार कर रहे थे। झाबुआ मार्ग मे कुछ दुष्ट लाठी-डडे आदि लेकर, आचार्यश्री के नगर प्रवेश के विरोध मे उपसर्ग करने आये। आचार्यश्री ने पडित नेमिचन्दजी (आ वि सा) को कहा—''पडितजी हमारे कमण्डलु की टोटी आगे करके जल की धारा छोडते हुए, णमोकार मत्रोच्चारण करते हुए चलते चलो, ध्यान रखना कि जल की धारा अखड चलती रहे''। जैसे ही दुष्ट लोग आचार्य सघ के सामने आये आचार्यश्री ने अपनी पीछी को घुमाया और आगे बढ़ गये।

इधर आचार्यश्री पर उपसर्ग करने वाले ही आपस मे लड़ पड़े और आचार्यश्री सघ सहित निर्बाध रूप से गन्तव्य स्थल पहुँच गये। ऐसे थे आपके शिक्षा-गुरु।

दीक्षा-गुरु के साथ

आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज के साथ आप क्षुल्लकावस्था मे निडर हो विहार कर रहे थे कि बड़वाह का भयानक जगल आया। रात्रि निकट थी। गुरु महाराज के आदेश से भयानक जगल मे सर्व सघ ने पड़ाव डाला। श्रावको ने बहुत इन्कार किया पर वीर-धीर आचार्यश्री न माने।

सामायिक को बैठते समय आचार्यश्री ने दिशाबन्धन किया तथा एक रेखा खीची, सभी त्यागियो को आदेश हुआ कि पूर्ण रात्रि इस रेखा के बाहर कोई नही जायेगा।

प्रात. चार बजे पास में स्थित जलाशय पर पानी पीने के लिए एक बड़ा शेर दहाड़ता हुआ आया और आचार्यश्री को नमन कर शांत भाव से चला गया। कुछ समय पश्चात् एक चीता, भघर्रा और बच्चो सहित एक रीछनी भी क्रम से आई। सभी जलाशय पर पानी पी-पीकर शान्त भाव से चले गये, किसी ने आचार्यश्री या सघ पर उपसर्ग नहीं किया।

ऐसी थी आचार्य गुरुदेव के दीक्षागुरु आचार्य महावीरकीर्ति जी की महिमा।

दुष्ट सब शान्त हो गये

फिरोजाबाद मे मेला लगने वाला था, परन्तु मेला-स्थल पर तेल मिल मालिक ने कब्जा कर लिया था। जैन समाज मे तहलका मच गया। आन्दोलन शुरू हो गया। १४४ धारा लागू हो गयी। आंदोलन समाप्त होते ही मेले का आयोजन हुआ। इस अवसर पर आचार्यश्री विमलसागर जी को लाने की योजना जैन समाज ने बनायी। बाहुबली दि जैन नयी बस्ती के मन्दिर के शिखर पर कलशारोहण का निश्चय भी नयी बस्ती की पञ्चायत ने किया।

मै और महेन्द्रकुमार आचार्यश्री का आशीर्वाद लेने पहुँचे। आचार्यश्री के दर्शन अलिगढ़ के रास्ते पर हुए। हमने कहा—''गुरुदेव! रोकड निल है, काम बड़ा है और समय भी कम है, आपके आशीर्वाद के इच्छुक है।''

आचार्यश्री ने आशीर्वाद दिया—''चिन्ता न करो, सब ठीक हो जायगा।''

आचार्यश्री ने इस अवसर पर पधारने की हमे सहर्ष स्वीकृति दी। फिरोजाबाद में आनन्द की लहर छा गई।

इधर आचार्यश्री हाथरस होते हुए जलेसर को कच्चे मार्ग से आ रहे थे। रास्ते में वेरगाँव पर आहार की व्यवस्था की थी। वहाँ के ब्राह्मणों ने सघ पर उपसर्ग करने के लिए गाँव के चारो तरफ से बदमाशों को बुलाया। आहारोपरान्त ब्राह्मण लोग आचार्यश्री से शास्त्रार्थ करने आये। चर्चाएँ चलती रही पर गुरु महाराज के सामने सबको चुप रहना पड़ा। बदमाशो ने उपसर्ग आरभ किया।

तभी एक दुष्ट व्यक्ति को उग्रसेनजी राजपुर वालो ने पास बुलाया और पूछा ''तू यहाँ क्यो आया है?'' (वह व्यक्ति आचार्यश्री के गाँव के पास का ही था) उसने सारी बात बतायी। उग्रसेन जी ने कहा—''तुम नही जानते, ये हमारे समाज वाले बाबा है।'' वह फौरन सभी को लेकर चला गया।

पश्चात् बदमाशो की टोली ने गाँव से आगे आकर दोनो दिशाओ से सघ को घेर लिया तथा भड वचन कहने लगे।

तभी आचार्यश्री ने बदमाशो के सरदार का नाम लेकर बुलाया। सरदार अपना नाम सुनते ही हक्का बक्का रह गया, ये मुझे कैसे जानते है। वह शीघ्र आया और आचार्यश्री के चरणो मे क्षमाप्रार्थना कर, नतमस्तक हो गया।

उपसर्ग करने वालो ने अपना सिर झुकाया और अपने दु:खो से छूटने का उपाय आचार्य महाराज से पूछा। सबने अपनी शक्त्यनुसार त्याग लिया, मद्य, मास, मधु को छोड़ा तथा आगे कभी भी दिगम्बर साधुओं पर उपसर्ग नही करने का नियम लिया।

उसके बाद आचार्यश्री फिरोजाबाद पधारे। आपके सान्निध्य मे मेला और कलशारोहण का कार्य सानन्द सम्पन्न हुआ। कलशारोहण का जुलूम इतना शानदार निकला कि जैसा आज तक मैंने नहीं देखा।

इस प्रकार ऐसी अनेक घटनाएँ आपके जीवन मे आज भी हो रही हैं। आपके गुणो को लिखने में बृहस्पति

भी समर्थ नही है।

पानी मीठा हुआ

अभी विहार करते हुए आचार्यश्री सघ सहित सिहोनिया अतिशय क्षेत्र पर पधारे। वहाँ दो गाँवो के कुएँ का खारा पानी आपके द्वारा दिये गये गधोदक को डालने से मीठा हो गया।

ऐसे परमपूज्य आचार्य शिरोमणि के श्रीचरणों मे शत-शत वन्दन करते हुए दीर्घायु की कामना करता हूँ।

स्याद्वाद-दिवाकर मेरे गुरुवर

❑ *ब्र. स्मिता शहा*

मेरे ह्रदयकमल पर आप प्रत्यक्ष विराजमान है तो परोक्ष स्मृति को वहाँ जगह कहाँ? हाँ, इस ह्रदयकमल की तरह एक पॉखुड़ी आपके चरण सन्निधि से पवित्र होकर गुणगान करती है।

हे दर्शनाचार सम्पन्न महामुनीश्वर! मेरी पाँच वर्ष की बाल्यावस्था का आपका प्रथम दर्शन स्मरण है। सन् १९६६ मे आपका विहार सोलापुर की तरफ हो रहा था। बीच में बारामती मे विराम था। नित्यक्रम से सुबह भगवान की वन्दना के लिए आप चैत्यालय पधारे। यह पॉच वर्ष की बच्ची आपके दर्शन से इतनी प्रमुदित हो उठी कि आपके चरणो से हटने के लिए तैयार नही। बार-बार आपको नमोऽस्तु करने लगी। जैसे वह आपसे कह रही थी- हे करुणानिधान! मुझे शिष्य स्वरूप स्वीकार कर मेरे तारणहार बन जाओ! आप तो अपूर्व निमित्तज्ञानी ठहरे बच्ची के मस्तक पर पीछी रखते हुए बोले, "बेटे, तुम आर्यिका बनोगी।" आपका विहार तो आगे हो गया लेकिन इस पावन मत्र से पुनीत यह बेटी बड़ी होने लगी।

८ वर्ष की उम्र मे प पू आर्यिकाश्री इन्दुमती, सुपार्श्वमती, सुप्रभामती और विद्यामती-चातुर्मास मे इनका सान्निध्य प्राप्त हुआ। माताजी के पास इतनी छोटी उम्र मे चार माह के काल मे श्री सहस्रनाम, भक्तामरजी, तत्त्वार्थसूत्र, द्रव्यसग्रह का सार्थ अध्ययन हुआ, आपकी ही देशना के सस्कार जागृत हो उठे थे। उन दिनो आचार्य महाराजजी की साधना निकट से समझने का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ था। महाराजजी रात मे सिर्फ दो-तीन घटे लेटते थे, वे भी एक आसन मे। इधर से उधर करवट नही। पूरी रात सिद्धान्त ग्रन्थो का अध्ययन और ध्यान-धारणा मे गुजरती थी। मेरे मन मे अब तक एक बात पूरी तरह जम बैठी थी, "लोग सासारिक प्रश्न पूछकर इस महान साधक को वृथा तकलीफ न दे।" हो सके उतना लोगो को परावृत कर रही थी, लेकिन एक दिन विकल्प आया चलो स्वय समझ लूँ। आचार्य देव कैसे लोगो के प्रश्न सुलझाते है। प्रश्न पूछने वाली बाईजी के साथ मै अन्दर घुस गयी। आचार्यश्री हँस पडे। बड़े करुणाभरे स्वर मे बोलो—"बेटी, यह तो सीधा निमित्तज्ञान है। इसमें कोई विशेषता नहीं है। विशेषता है धर्मध्यान मे, विशेषता है आत्मज्ञान मे। भरपूर पढ़ो, रत्नत्रय की ओर बढ़ो।"

उसी दिन मैने नियमित स्वाध्याय का व्रत लिया। नित्य ज्ञान की आराधना करने वाले ने ज्ञानाञ्जन शलाका से मेरे चक्षु उन्मीलित कर दिये-मै धन्य हो गई।

आप तो रत्नत्रय से विशुद्ध, महान विभूति, दर्शन ज्ञान से सम्पन्न, पचेन्द्रिय विषयो से पूर्ण विरत, आत्म-

ध्यान मे रत, चारित्राचार का उत्कृष्ट पालन करते है। आपसे चारित्र की प्रेरणा मिलना अनिवार्य था। मन मे इच्छा होती थी, आप फिर कहे--''बेटी, तुम आर्यिका होगी'' लेकिन करुणा बुद्धि से हरएक व्यक्ति को सयम की ओर प्रेरित करने वाले आचार्य देव, मेरे लिए बिल्कुल मौन थे। केवल एक वनमाली जैसे फूल का खिलना आनन्द से, साक्षीभाव से निहारता है, उसी तरह आचार्य देव मुझे निहारते थे। जानते होगे फूल की पँखुड़ियाँ गिरेंगी जरूर किन्तु वैराग्य फलधारणा के लिए। कमलिनी तो दूरी से सूरज के प्रताप से खिल उठती है, मेरे दिवाकर बिल्कुल पास थे। अतर्याम मे विशुद्धि का प्रवाह बढ रहा था, लेकिन अमृतमयी वाणी झरने वाला आपका मुखचन्द्र तो बिल्कुल नजदीक था। ''अवाग् विसर्ग वपुषा निरूपयन्ती'' ऐसी आपकी मूर्ति से वैराग्य भावना आप ही आप जागृत हो उठी। मन्दिरजी मे जाकर भगवान के सामने प्रतिज्ञा करके बाहर आयी तो सामने प्रेरणा-स्त्रोत खड़े थे। तब पहला प्रश्न--''क्या चाहती हो बेटी? तेरी भावना अडिग रहेगी और सफल होगी।'' अब तो एक माह भी लबा लगने लगा। चन्द्रमा निकट होने के कारण हृदयसागर की बढ़ती को रोकने वाला अब कौन हो सकता है? प पू उपाध्यायश्री के मगल आशीर्वाद प्राप्त हुए एव प पू क्षु अनगमती माताजी (वर्तमान मे आ स्याद्वादमतीजी) ने सम्भावित आपत्तियो की मालिका को सादर धीर दिया लेकिन वह तो अब फूलमाला दिखाई दे रही थी। आचार्यश्री की उपदेश शलाका ने दृष्टि इतनी साफ कर दी थी कि सभी ओर मगल दिखाई दे रहा था।

उत्तम ब्रह्मचर्य का दिन, प्रथम बाल भगवान वासुपूज्य निर्वाण दिन अर्थात् अनन्त चतुर्दशी। उसी दिन दोपहर के शास्त्र समय महाराजजी से व्रतानुग्रह करने की विनती की। उपस्थित महानुभावो ने कहा-घरवालो की अनुमति चाहिए। मै सभ्रमित होकर महाराजजी की ओर देखने लगी, महाराजश्री बिल्कुल निश्चल थे। इसी मूर्ति से आत्मबल जागृत हो गया। परीषह विजयी, आत्मवीर्य के साधक महान वीर मेरा आत्मबल जागृत कर गये। मै दृढ़ता पूर्वक बोली--''महाराज जी, जो भी हो मै व्रत ले रही हूँ।'' महाराजजी हँस पड़े मानो कह रहे हो मै तो जानता ही था। अष्टाग निमित्त के ज्ञानी आप तो आगे का भी सब कुछ जानते थे। आशीर्वाद देते हुए बोले--''बेटी, कितनी भी बाधाएँ आये, तुम अडिग रहोगी।'' मै बोली--''आपके होते हुए बाधा काहे की?''

आप गभीर थे। गभीरता ही आगे का अलगाव सूचित कर रही थी। गुरुदेव का सान्निध्य तो दूर, दर्शन भी मुश्किल हो गया। मुझे लग रहा था, कैसे भयकर जगल मे फँस रही हूँ मै। कहाँ गया वह सघरूपी उद्यान, कहाँ गये वनमाली। लेकिन वनमाली के द्वारा बोया हुआ बीज जीवत था। ज्ञानदर्शन की साधना हो रही थी एक जगली फूल की तरह या दूरस्थ कमलिनी की तरह। सूरज-तो दूर ही था लेकिन सूरज का प्रकाश भी मुझसे छीन लेने का प्रयास हो रहा था। उस सूरज से प्रज्वलित अतरग की ज्ञान लौ कौन छीन सकता था? आप मेरे द्रोण बन गये, मै एकलव्य की तरह साधना कर रही थी, केवल यह दृष्टान्त भी अधूरा है। प्रत्यक्ष मिल जाने पर द्रोण ने एकलव्य को तिरस्कृत कर दिया, आप दूर रहकर भी मेरे लिए साक्षात् मार्गदर्शक थे। मैने चातक की चोच से वे स्वाति बिन्दु प्राप्त कर लिये थे। अब चाहे कितनी भी धूप हो, सतप्त होने का अवकाश ही नही था।

बार-बार स्वप्न मे आकर दृष्टान्त देते रहे। मेरे हर जन्म-दिन पर आपका स्वप्न मे दृष्टान्त होता था और परिस्थिति वश अन्य समय भी। एक बार इतनी सभ्रमित थी कि कैसे व्रतो मे सुस्थिर रहूँ। ऐसी परिस्थिति मे स्वप्न मे आकर आपने स्वय ही ध्यानस्थ धवलवर्ण की मूर्ति दी और कहा-जब भी सकट मे हो इसका ध्यान करना। दूसरे दिन परिस्थिति आप ही पलट गयी। एक दिन ऐसा ही हुआ, बोले--''कल चाचाजी के साथ सोलापुर चले

जाना।'' मालूम भी नही था कि सघ का सोलापुर की तरफ विहार होने वाला है। दूसरे दिन चाचाजी आए और कहने लगे—''बेटी, चलो विघ्नेश्वर पार्श्वनाथ के दर्शन करने जाना है।'' हम सोलापुर पहुँच गये। तब भी हमे पता नही था कि आचार्यश्री का सघ सोलापुर मे विराजमान है। दूसरे दिन प्रात ७ बजे सघ, जहाँ हम लोग ठहरे थे वहाँ, भगवान की वन्दना के लिए पधारा।

क्या कहूँ उस समय की मेरी भावना। बन्धन से अटकी चन्दना भी मुनि महावीर के दर्शन से इतनी भाव-विभोर नही हुई होगी। मैं तो बिल्कुल मौन हो गयी। गुरु-चरण मे सब विकल्प मिट गए। परिस्थिति की पूरी कल्पना थी आपको, इसलिए मार्गदर्शन के सिर्फ दो वाक्य—''सोलापुर मे ही रहोगी ना। दोनो समय भरपेट खाना बेटी।'' आगे के विकास के लिए सोलापुर रहना आवश्यक है। यह सूचित हो गया और साथ मे ही साधना के लिए शरीर से काम लेना आवश्यक है, यह आदेश रूप सूचना।

उस समय सोलापुर रहने का प्रयत्न तो असफल हो गया। व्रत की अन्तिम परीक्षा हो रही थी। प्रतिकूल परिस्थिति है, यह जानकर पुरुषार्थ थोड़ा सुप्त ही हो रहा था तो स्वप्न मे आचार्यश्री का दृष्टान्त—''जागो बेटी, तेरे लिए अनुकूल समय आ गया, पुरुषार्थ करो।'

सचमुच ज्ञान और दर्शन की बाधक बेड़ियाँ दूर हो गई। सोलापुर मे ज्ञान साधना के लिए जाना सुलभ हो गया। दो साल ज्ञानाराधना मे बीत गए, लेकिन चारित्र की ओर कदम नही बढ़ा तो आचार्यदेव ने फिर स्वप्न मे आकर डॉटा-'बेटी, दुनिया तेरे ज्ञान-दर्शन की प्रशसा करे लेकिन बिना चारित्र उसकी कीमत नही है।' मैने कहा-जैसी गुरु आज्ञा। स्वय अपने हाथ से बाल उपटने लगे। मै एकाएक जाग उठी। मतलब स्पष्ट था, इतने मे ही दीक्षा का भाग्य नही, लेकिन व्रती बनना तो सहज है। तब से बिल्कुल प्रतिमा जैसे आचरण शुरू हो गये, लेकिन मन निराधार हो गया। अब स्वप्न-दर्शन बस हुए। अब बिना गुरु-दर्शन नही रहूँगी। इसके लिए घी का त्याग कर दिया, दूसरे ही दिन पू आचार्य, उपाध्यायश्री का आशीर्वाद प्रदान करने वाला पू आर्यिका स्याद्वादमतीजी माताजी का आशीर्वादमय पत्र प्राप्त हुआ। मत्र के जाप्य प्रतिदिन शुरू से ही थे लेकिन विधि कम थी। विधिवत् शुरू कर दिये तो दूसरे दिन शिखरजी यात्रा का कार्यक्रम निश्चित हो गया। चातुर्मास समाप्ति के बाद ही सोनागिर जाने का भाग्य जागृत हो गया। पहाड़ की परिक्रमा के लिए हम गुरुदेव के साथ निकले। हम लोग पगडडियो से जा रहे थे। आचार्यश्री बार-बार कह रहे थे—''बेटे, कॉटे-वॅटे चुभ जायेंगे, सीधे मार्ग से चलना।'' गुरुदेव यह मोक्ष मार्ग भी कॉटो से भरा हुआ है। आप जैसे सन्मार्गदिवाकर के प्रकाश से और पदचिह्नो के आधार से ही यह पथ सुलभ हो गया है।

अब शीघ्र ही भविष्य जागृत हो उठे और तपाचार सपन्न आचार्य भगवान मेरे अन्तरात्मा को प्रज्वलित करें। मैं तपोमार्ग पर आगे बढ़ जाऊँ और मुझे पूरा विश्वास है कि आचार्यदेव के कृपा-प्रसाद से यह होना ही है।

न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवान्तवैरे

❑ ब्र. माधुरी शास्त्री

आचार्यश्री समन्तभद्र स्वामी की यह पक्ति आचार्यरत्न श्री विमलसागरजी महाराज के जीवन पर पूर्णतया चरितार्थ

होती है। मैंने न जाने कितने ऐसे व्यक्तियों को देखा है जो परोक्ष में आचार्यश्री के प्रति निन्दा के वचन कहते हैं किन्तु वे ही महानुभाव किंचित् मात्र सकट आने पर यत्र-मत्र लेने हेतु उस भोले-भाले बाबा के पास पहुँच जाते है।

ये निर्ग्रन्थ दिगम्बर गुरु स्वभाव से ही इतने उदार होते है कि निन्दक-प्रशसक दोनों के प्रति उनका सदैव समभाव रहता है। बाह्य निन्दा या प्रशसा उनकी वीतरागता मे कोई बाधा नही डाल पाती। आचार्यश्री वात्सल्य की साक्षात् मूर्ति है। उनके सामीप्य को प्राप्त करके प्रत्येक प्राणी को एक विशेष अपनत्व की अनुभूति होती है।

मार्च १९८७ मे आचार्यश्री का विशाल सघ जम्बूद्वीप मे पधारा और साक्षात् जम्बूद्वीप रचना के दर्शन करके वे अत्याधिक प्रसन्न हुए। पू आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के प्रति उनका असीम वात्सल्य और अनुराग देखकर किसी कवि की ये पक्तियाँ झकृत हो जाती है-

जहाँ पडे गुरु चरण वहाँ की रज चदन बन जाती है।
मरुथल मे भी कलकल करती कालिन्दि बन जाती है।
पावन पग दो धरने से भू पुष्पभूमि बन जाती है।
निर्गम मे भी पहचानी-सी पगडडी बन जाती है।।

आचार्यश्री ने यह बात कही थी-मेरे ध्यान की रील मे यह जम्बूद्वीप का टेप भर गया है। अब मै इसका प्रतिदिन ध्यान करूँगा। यह उनकी अपनी महानता है।

उस महान विभूति के आदर्शों से हमारा जीवन भी उज्ज्वल बने इसी भावना के साथ आचार्यश्री के चरणो मे विनयाञ्जलि समर्पित करती हूँ।

शतायु हों

❑ *ब्र. रेखा जैन*

शान्तचित्त, करुणामूर्ति आचार्यश्री मेरे जीवन के शाति प्रदाता है। हम पामर जीवो को भव-सिन्धु से पार लगावें। 'आप तिरे औरो को तारे' इसी भावना से शत-शत वन्दन करती हुई उनकी शतायु की कामना करती हूँ।

नमन

❑ *ब्र. शान्ता जैन*

प्राणीमात्र के हितैषी, वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज की विमलमुद्रा के दर्शन मात्र से हृदय कमल प्रफुल्लित हो जाता है। ऐसे आचार्यवर को मै अपनी विनयाजलि अर्पित करती हुई नमोस्तु करती हूँ।

मार्गदर्शक

□ ब्र. मैनाबाई

आचार्यश्री विमलसागर जी सौम्य प्रकृति, सरल स्वभावी, मधुरभाषी है। छल-कपट तो आपके हृदय का स्पर्श भी नही कर पाता है। आपके माध्यम से मैंने अपने जीवन को नयी दिशा देकर व्रतो की ओर मोड़ दिया है।

मै प्रशान्तमूर्ति आचार्यश्री के चरणों मे त्रिकाल त्रिधा नमोस्तु करती हूँ तथा यत्किंचित् श्रद्धासुमनो को अर्पित करती हुई यह भावना करती हूँ कि गुरुदेव शतायु होकर हमे मार्गदर्शन देते रहे।

श्रमणत्व-प्रशंसा

□ ब्र. कलावती

न च राजभय न च चौरभय, इहलोकसुखं परलोकहितम्।
वरकीर्तिकर नरदेवनुत, श्रमणत्वमिद रमणीयतरम्॥

न च राजभयम्

श्रमण को राजादि का भय नही होता, क्योकि राजा अप्रसन्न होकर धन-सम्पत्ति छीन लेता या शारीरिक दण्ड देता है किन्तु श्रमण के पास तो तिल-तुष मात्र भी परिग्रह नही जिसे कि राजा छीन सके। शरीर से भी वे निस्पृही होते है अत शारीरिक दण्ड से भी वे घबराते नही।

आगम द्वारा हम जानते ही है कि पूर्व कालीन मुनियों ने किस प्रकार कैसे-कैसे उपसर्ग सहन किये है किन्तु अपनी दृढता से विचलित नही हुए।

न च चौरभयम्

उन श्रमणो को चोरो से भी भय नही होता क्योंकि चोरो से भयभीत धनिक मनुष्य होते है किन्तु श्रमण के पास तो रुपया पैसा चाँदी सोनादि कुछ भी नही होता जिसे चोर लूट सके। वे तो सयम-शौच और ज्ञान के उपकरण पीछी कमण्डलु-शास्त्रादि के अतिरिक्त कुछ भी परिग्रह नही रखते। अत चोरो का भय भी उन्हे नही होता है।

इहलोकसुखम्

वे अपने दुर्लभ मनुष्य जन्म को प्राप्त कर आशा तृष्णा से रहित होते हुए सासारिक विभुति का त्याग कर सयमपथ पर स्थित है इस लिए इसलोक मे भी सुखी है। क्योंकि सुख वही हो सकता है जहाँ तृष्णा नहीं है। धनादिक के द्वारा तृष्णा का शमन नही होता किन्तु अग्नि मे घृत डालने पर अधिकाधिक प्रज्वलित होने के समान तृष्णा की वृद्धि होती जाती है। ससार मे निर्धन तो धन न पाकर दु खी रहता है और धनिक सन्तोष न होने पर दु:खी रहता है। तृष्णा का त्याग कर अनवरत सन्तोषावस्था में मग्न रहने वाले मुनिराज ही वास्तविक सुखी होते है।

परलोकहितम्

जो अपने इस मनुष्य-जीवन को प्राप्त कर धार्मिक वृत्ति से परे है तथा सयम रहित होकर पचेन्द्रिय के विषय-भोगो की पूर्ति मे ही अपना जीवन व्यतीत कर देते है, वे इस लोक मे भी अपना अहित कर परलोक में भी अहित करते हुए ससार मे परिभ्रमण करते रहते है। साधुओ का जीवन तो धार्मिक तथा सयमित होता है अत इस लोक मे हित करते हुए उनका परलोक भी कल्याणकारी हो जाता है।

वरकीर्तिकरम्

ससार म उन्ही को यश प्राप्त होता है जिनका जीवन पवित्र तथा कलकरहित होता है। ऐसा पवित्र जीवन उन साधुओ-महर्षियो का ही होता है। नरेश्वरो से (चक्रवर्तियो से) भी अधिक कीर्तिमान् ये साधु-ऋषीश्वर होते है।

नरदेवनुतम्

त्याग और तपस्या का माहात्म्य अद्भुत है, अचिन्त्य है। महामुनिराज तप और त्याग की मूर्ति होते है अत देव-इन्द्रादिक जिनके चरण-कमलो मे नत-मस्तक होते है, ऐसे वे मुनि इन्द्र-चक्रवर्त्यादिको द्वारा वन्दनीय होते है।

श्रमणत्वमिदम् रमणीयतरम्

इस प्रकार यह श्रमणत्व जीवन अत्यन्त रमणीक होता है।

ऐसे महान् गुणो से सम्पन्न आचार्य विमलसागरजी महाराजश्री के चरणो मे अभिवन्दना करती हुई मै उनकी शतायु की कामना करती हूँ। उनका मार्गदर्शन सतत् मिलता रहे यही हार्दिक भावना है।

मैने सगाई तोड़ दी

❑ ब्र कु. उर्मिला नायक (संघस्थ)

आचार्यश्री जब सघ सहित लोहारिया आये थे तब मैने उनके दर्शन किये। दर्शन करते ही मेरा रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठा और साथ में ही मैने ब्रह्मचर्यव्रत को अगीकार किया जबकि मेरी मगनी (सगाई) राजस्थानी प्रथा के अनुसार हो चुकी थी। साथ मे शीघ्र ही विवाह होना था। परन्तु आचार्यश्री के दर्शन कर इनके असीम प्रेमवात्सल्यता और आगम की दृढ़ता को देखा तो मेरा मन प्रशस्त हो गया और मुझे घरद्वार नश्वर सा लगने लगा। अचानक मैंने आचार्यश्री से ब्रह्मचर्यव्रत ले लिया और आज इनके शुभाशीर्वाद स मै निरन्तर धर्मध्यान मे लगी हूँ। मेरे आचार्यश्री को देखकर मेरे मन में एक ही भाव उठते है कि आचार्यश्री चिरायु हो और हमको अपनी वात्सल्यता व करुणारस का एवम् धर्मरूपी गगा का पान कराते रहे और मिथ्यामल रहित कर दे। साथ में मेरी यही मनोकामना है कि ऐसे महान गुरुवर की छत्रछाया में निरन्तर बढती रहूँ और नई स्फूर्ति, साहस एवम् मार्गदर्शन मिलता रहे और उनकी कृति अमर रहे। साथ में शीघ्र ही आर्यिका व्रत ग्रहणकर इस स्त्रीलिग का छेद करूँ ऐसी शक्ति प्रदान करे यही भावना भाती हूँ।

परोपकारी

❑ *पद्मश्री पं. सुमतिबाई शहा*

पावनानि हि जायन्ते, स्थानान्यपि सदाश्रयात्।' नीतिकार वादीभसिंह सूरि की यह नीति यहाँ चरितार्थ हो रही है। सतजनो के आश्रय से सामान्य स्थल भी तीर्थस्थल हो जाते है।

सन्मार्गदिवाकर, रत्नत्रय विभूषित, धर्म के प्रभावक गुरुराज अपने विशाल सघ सहित सोलापुर नगरी में १९६६ और १९८२ मे पधारे थे। वैसे तो कई बार पूज्य आचार्यश्री का जहाँ चातुर्मास होता, वहाँ मुझे सत्सग एव आहारदानादि लाभ प्राप्त होता रहा। किन्तु सोलापुर चातुर्मास से मेरे ऊपर ही नहीं, सस्था पर विशेष अनुग्रह हुआ है। पितृवत् उनका वात्सल्य हमने पाया है। पूज्य आर्यिकारत्न ज्ञानमती माता जी भी ७ आर्यिकाओ सहित श्राविकाश्रम मे १९६६ मे विराजमान थी। शहर के मन्दिर मे पूज्य आचार्यश्री का विशाल सघ था, सोलापुर में त्यागीजनों द्वारा उपदेशामृत की वर्षा हर रोज होती थी।

आचार्यश्री ने मोरेना जैन विद्यालय मे बचपन मे विद्वानो की तरह स्वय अध्ययन किया है अत वे व्यवहार एव निश्चयदृष्टि से ग्रन्थो का मर्म जानकर निरन्तर सघस्थ साधुओ के रत्नत्रय की रक्षा एव वृद्धि के लिए सजग है। उनकी तपस्या और निर्मल परिणामो का महात्म्य है। उन्हे सिद्धि प्राप्त है इसीलिए उनके स्पर्श के लिए जन-जन आकृष्ट होता है। उनमे लोकेषणा जैसी वृत्ति बिल्कुल नही है। सर्वप्रथम लोगो को राग-द्वेष मोह से वैराग्य की ओर ले जाने की उनकी चेष्टा होती है। करुणापूर्ण वाणी से दु ख-मोचन के उपाय ही सोचते है। अन्य मिथ्या मार्ग का अवलबन न हो इसलिए उन्हे णमोकार मत्र का महात्म्य बतलाकर ससारी भोग-विषयो के प्रति अरुचि हो और व्रताचरण ज्ञानाध्ययन मे अभिरुचि हो, ऐसी उनकी भविष्यवाणी का सकेत करने की कुशल उपदेश पद्धति है।

पचम विषमकाल मे निमित्तज्ञानी, वात्सल्यभाव से सघ के प्रतिपालक, अनुभवी, सन्मार्गदिवाकर, आचार्यश्री का समागम जैन-धर्म की प्रभावना के लिए अद्भुत सयोग है। आचार्यश्री के चरणो मे बार-बार प्रार्थना है कि—

'दु खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो,
समाहिमरण च मम भवतु भवे-भवे।'

थोड़ा-सा चूना

❑ *मंजूदेवी जैन*

सीतापुर मिल में आचार्य सघ का पदार्पण हुआ। गुरुभक्ति मे सारा वातावरण भाव-विभोर हो झूम रहा था। सिद्धचक्र विधान की तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही थी।

विधान की पूजा प्रारम्भ हुई। प्रथम दिन की पूजा निर्विघ्न सम्पन्न हुई। अर्द्धरात्रि बीती थी कि अचानक मै निद्रा पूर्ण कर उठी। जागते ही आँखे खोलकर प्रभु दर्शनार्थ तरस उठी। पर क्या हुआ कि मेरी आँखो से दिखना यकायक बन्द हो गया। सभी परेशान हो गए। आचार्यश्री के पास पहुँचे। आपने आशीर्वाद दिया और कहा—''घबराओ

नही, थोड़ासा चूना लेकर आँखो के बाहर बाजू मे लगा लो, बस कुछ घटो मे आँखो से दिखने लगेगा।''

मैंने चूना यथास्थान लगाया। आश्चर्य की बात, कुल दो घटे भी नही बीते, मेरी आँखो मे पुन प्रकाश जाग उठा, गुरुदर्शन कर मै धन्य हो उठी।

गुरु आशीर्वाद जीवन की रोशनी है। ऐसे गुरुराज चमत्कारी सत के चरणो मे त्रिधा नमोस्तु कर, आपके दीर्घायु की कामना करती हूँ।

विनयाञ्जलि

❑ *सुलोचना जैन*

'श्री ऋषिवन्दन हर लेता है, सारी भवभय पीर'। जीवन की कठोरतम साधना से जो तपाये हुए स्वर्ण के समान देदीप्यमान है, वे कर्मयोगी, श्रेष्ठ तपस्वी, आदर्श मुनि परम्परा के वन्दनीय आ श्री विमलसागरजी महाराज उज्ज्वल जीवन के जीवन्त क्षणो का रसास्वाद ले रहे है। स्व और पर का कल्याण कर मानव-मन को उत्थान की ओर अग्रसर कर रहे है।

ऐसे सन्तशिरोमणि आचार्यवर्य के चरणो मे मै अपनी विनयाञ्जलि समर्पित करती हुई प्रभुसे उनकी दीर्घायु की कामना करती हूँ।

वात्सल्य-मूर्ति

❑ *गुणमाला जवेरी*

परम पू सन्मार्ग दिवाकर आचार्यप्रवर श्री १०८ विमलसागरजी महाराज वात्सल्य की साक्षात् मूर्ति है। गुरुदेव। आपकी वत्सलता के कारण ही हजारो जैन-अजैन भक्त आपके पावन चरणकमलो मे शरणागति प्राप्त करके पवित्र दर्शन पाकर अपने को धन्य समझते है। साथ ही साथ शक्त्यनुसार व्रत-नियम-सयम धारण करके अपने जीवन को धन्य बना लेते है। गुरुदेव का सान्निध्य प्राणी मात्र को पवित्र बनाता है। आपका घोर विरोधी भी उद्दडतापूर्वक आपका विरोध करने के लिए दहाड़ता हुआ कदाचित् आता है तो वह भी आपकी सौम्य छवि, मुस्कराती सूरत तथा अद्वितीय वात्सल्य को देखकर दूर से ही शान्त हो जाता है। प्रश्नोत्तर तो दूर की बात।

मै त्रिलोकीनाथ भगवान से प्रार्थना करती हूँ कि ऐसे परम पूज्य सन्मार्गोपदेशी आचार्यप्रवर श्री विमलसागरजी महाराज इस भूतल पर चिरायु रहकर हम सरीखे पामर, असयमी जीवो को अपने पावन उपदेशामृत से मोक्षमार्ग मे लगाते रहे।
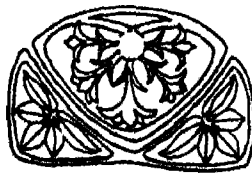
अविस्मरणीय प्रसंग

❑ *शशिप्रभा जैन 'शशांक'*

चन्दन शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमा।
चन्द्र-चन्द्रनयोर्मध्ये शीतला साधुसंगति:॥
साधूना दर्शन पुण्य तीर्थभूता हि साधव।
कालेन फलति तीर्थ, सद्य साधु समागम॥

सन् १९६३, माह मई को मेरे सद्गुरुदेव, आत्मानुभव आत्मसाक्षात्कार एवं आत्मदर्शन के सतत साधक दिव्य तेजोमय शक्ति के प्रखर दिवाकर, निमित्तज्ञान दर्शक, भव्य जीवों को तारने वाले परम पूज्य श्री १०८ आचार्यप्रवर विमलसागरजी महाराज का जैन बालाश्रम मे शुभागमन हुआ। मै चातक पक्षी रूपी सस्थावासिनी उस महान अमृत तुल्य स्वाति की बूँद रूपी दिव्य ज्योति को पाकर निहाल हो गई। गुरु-चरणो मे झुकी रही जब तक सद्साधनामय पुनीत करो मे सुशोभित पीछी का श्रेष्ठतम आशीर्वाद नही मिला। जिनकी ममतामयी मृदु वाणी आज भी श्रवणो मे तरंगित होती रहती है, ससारी प्राणियो की मगलमयी कामनाओ की पूर्ति हेतु जो 'सद्धर्मवृद्धिरस्तु' का सतत आशीर्वाद दे रहे है, पावन रत्नत्रय की उस परम विभूति के साथ व्यतीत क्षणो का स्मरण उनको नित प्रति प्रणाम करता है।

पहले नम्बर पास होगी

मैने तब मैट्रिक की परीक्षा दी थी पर परीक्षाफल नही निकला था।परम अग्रज भाई श्री प्रकाशचद्रजी सम्पादक 'युगवीर' आचार्यश्री के दर्शनार्थ आये थे। मैने देखा, अन्य भक्तजन महाराजश्री के इर्दगिर्द बैठकर, कुछ-कुछ पूछ रहे है और गुरुश्री बड़ी सौम्यता, सहजता से सबको प्रश्न का उत्तर दे रहे है। सोचा कि मै भी आचार्यश्री से कुछ पूछूँ। मैने प्रकाशभाई से अनुरोध किया। उन्होंने कहा-''हाँ शशिबहिन! निसकोच पूछो। महाराजश्री तो निमित्तज्ञानी है, भविष्य की बाते बता देते है, जो सत्य निकलती है। क्या पूछना चाहती हो?'' मैने कहा-''अब आपको क्या बताऊँ? मुझे श्रद्धेय मॉ श्री चन्दाबाईजी का अपार ममतामयी मातृत्व स्नेह मिला था, उन्होंने परीक्षा के पूर्व ही हिदायत दे रखी थी कि ''मैट्रिक प्रथम श्रेणी से पास करोगी तो आगे पढ़ायेगे, वरना '' मै सहमी सहमी थी। आगे पढ़ाई की तीव्रेच्छा थी। मैने गुरुदेव के निकट पहुँचकर विनम्र नमन करके पूछने का साहस किया। महाराजश्री ने मेरी मन स्थिति को समझा और प्यार से कहा-''क्या बात है बेटी?'' मैने कहा, महाराजश्री, क्या मै मैट्रिक परीक्षा मे पास हो जाऊँगी।'' उन्होंने तपाक से कहा—''अरे तू तो First Number (Scholarship) भी प्राप्त करेगी।'' मैने आत्मीय खुशी बटोरकर कहा-''सच महाराज!'' उन्होंने कहा-''सच, लिखकर दे दूँ क्या?'' मै खुशी से उनके चरणो मे नत हो गयी, आँखे सजल होकर उनके पावन चरण कमल पर बूँद रूप मे टपक पड़ी। रिजल्ट आया। महाराजश्री के वचनामृत ने शतप्रतिशत सफलता देकर मेरा मान बढ़ाया तभी दूसरे दिन महाराजश्री ने अपने प्रवचनो के मध्य ब्रह्मचर्य के महत्त्व पर हृदयग्राही बातो से मुझे ऐसा प्रभावित किया कि मैने सभी के बीच ब्रह्मचर्य व्रत लेने की प्रतिज्ञा की। सबने आश्चर्य किया। कुछ एक मोही जनो ने बाधा भी डाली। किसी ने कहा-''जब तक आश्रम मे रहोगी तब तक का व्रत ले लो।'' मैने सबकी सुनी, अपनी गुनी और आजीवन ब्रह्मचर्य

व्रत ले लिया। तुलसीदास ने कहा भी है-

> साधु चरित शुभ सरिस कपासू। निरस विशद गुणमय फल जासू॥
> जो सहि दु ख परछिद्र दुरावा। वन्दनीय जेहि जग जस पाया॥
> शठ सुधरहि सतसगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई॥
> विधि हरिहर कवि कोविद वानी। कहत साधु महिमा सकुचानी॥

दुष्ट से दुष्ट अधर्मी भी क्यो न हो, वह भी सत् साधु-सतो की सगति को पाकर साधु ही हो जाता है। पारस को छू छूकर लोहा स्वर्ण बन जाता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कवि, पण्डित स्वय सरस्वती भी उनकी अनुपम महिमा का वर्णन करने मे सकुचा जाते है।

जैन दिगम्बर ऋषि-सन्तो की परम्परा मे, समाज-देश-धर्म की भलाई तुम्हारे बाद ये देवियॉ करेगी। माँ श्री ने हाथ जोड लिये।

विरोधी भी नत मस्तक हो गये

महात्माओ की वाणी सदैव सत्यरूप का मार्गदर्शन कराती है क्योंकि वह दृष्टा के रूप मे होती है। आचार्य गुरूवर कही तो नारियल के समान कठोर तो कही फूल की तरह अत्यन्त मृदुल। बच्चो के मध्य बच्चे, युवको मे युवक और वृध्दो मे वृद्ध बनकर उन्ही श्रेणी के अनुकूल जैसे कुम्हार भीतर-बाहर हाथ देकर बर्तन की पिटाई कर, ठोक-ठोककर उसे समान सुन्दर रूप देता है वैसे ही गुरुवर भव्यजनों, शिष्यगणो के दोषो, पापमयी वृती के वमन कराने के लिए सदैव धर्मघुटी पिलाकर अनुशासन रखने मे सक्षम है। जैन-अजैन सबके प्रति वे समदर्शी है। आपकी साधना तप-आराधना मे उपसर्ग भी आये। दिगम्बरत्व पर विरोधी जनों ने कटाक्ष भी किये, पर वाह री धन्य दिगम्बर मूर्ति! आपने अपने आध्यात्मिक प्रखर तेज से शत्रुदल को भी अपने समक्ष झुका दिया।

कुएँ लबालब भर गये

जैन दिगम्बर मुनियों की परम्परा मे उनके जीवन मे उपसर्ग का अतीव महत्त्व बताया है। निश्चय स्वरूप के वन्दनीय सम्यक्दृष्टि मुनीश्वर विकाररहित भावो से जब उपसर्गो पर विजय पाते है तो स्वत वहॉ अतिशय होता है और वह स्थान पुण्यमयी तरण-तारण रूप होकर अभिवन्दनीय बन जाता है। आचार्य गुरुवर के मुनिजीवन से महती अतिशयात्मक क्रियाएँ हुई है। खारे पानी के कुएँ मीठे पानी मे परिवर्तित हो गये। महाप्रभु आदीश्वर नाथ की मूर्ति के प्रक्षालन जल को गुरुदेव के हाथों कुएँ मे डाले जाने से शुष्क कुएँ भी जल से लबालब भर गए। सिह, व्याघ्र, सर्प, भेड़िये जैसे जानवरो ने आप के समक्ष क्रीडाएँ की और दर्शन करके आपसे अपनी भाषा मे गरजकर फुफकार कर चले गये-ममता-समता की प्रतिमूर्ति के साथ हँस-खेलकर। कोई बाधा नही। उन तिर्यंच प्राणियो का भी उद्धार हो गया उन महामना निर्ग्रन्थ का सान्निध्य पाकर। आपके स्वानुशासन और परानुशासन की पराकाष्ठा चकित कर देती है। पढ़ने-पढाने, सुनने-सुनाने, जिनवाणी की रक्षा, तीर्थरक्षा, मानवधर्म की रक्षा मे आप सदैव जागृत है। आपके इतने विशाल सघ की महिमा स्मरणीय है, अनुकरणीय है।

विनयाञ्जलि

❑ *निर्मलकुमार जैन 'सेठी'*

परम पूज्य १०८ आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज इस शताब्दी के महानतम सन्त हैं जिन्होंने न केवल अपने मनुष्य भव को बल्कि अपने सहृदय वात्सल्य के द्वारा अनेकानेक भव्य प्राणियो के जीवन को सफलीभूत किया व मोक्षमार्ग की ओर लगाया। जिनधर्म मे जैन-जैनेतर लोगो की आस्था को टिकाने का महान कार्य किया। उत्तर भारत के जैनियो के घरो मे दक्षिण वालो की तरह प्रतिमा विराजमान नही है। अस्तु, महाराज जी ने प्रेरणा देकर हजारों घरो को सिद्ध यत्र, ऋषिमडल यत्र आदि से युक्त किया और श्रावको ने अपने घरों मे विराजमान किया जिससे जिनधर्म की बड़ी प्रभावना हुई।

इस उम्र मे जो स्फूर्ति आचार्यश्री मे है, शायद ही कही देखने को मिले। एक बार मै महाराजश्री के साथ सोनागिर जी मे पर्वत पर मदिरो के दर्शन करने गया। मै बीच मे थक कर बैठ गया, और महाराजश्री पूरे क्षेत्र के दर्शन कर आए। चाहते हुए भी मै उनका पूरा साथ न दे सका।

इस तरह की ही घटना मुक्तागिर जी सिद्धक्षेत्र मे हुई।

विश्व के लोग, विशेषकर दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी, इस महान त्याग-तप व करुणा की मूर्ति को पहिचाने और उनके सान्निध्य मे रहकर अपना जीवन सफल करे, यही जिनेन्द्र देव से कामना करता हूँ।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा को महाराजश्री का सदैव आशीर्वाद रहा और उनके शब्द जो उन्होंने जयपुर मे सन् १९८७ की जन्म जयन्ती समारोह के समय कहे थे, मुझे और सारे महासभा के पदाधिकारियो व कार्यकर्त्ताओ को याद रहेंगे—"मेरी जन्म जयन्ती कुछ भी नही है। तुम लोग महासभा के ९ नम्बर नियम का पालन करते रहो, यही मेरी जयन्ती है और यही आशीर्वाद है।"

मेरे पूज्य पिताश्री महाराजश्री के अनन्य भक्त थे। मै और मेरा परिवार महाराजश्री को विनयाजलि अर्पित करते हुए जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करते है कि महाराजश्री दीर्घायु हो। जिससे उनकी प्रेरणा पाकर हम सब अपने जीवन को मोक्षमार्ग की ओर अग्रसर कर सके।

मेरे सहाध्यायी

❑ *पं श्यामसुन्दरलाल शास्त्री*

चैत बदी ६ सन् १९३० हमारे नगर फिरोजाबाद के धार्मिक इतिहास मे एक स्वर्णिम दिवस के रूप मे अकित है। इस दिन परम पूज्य चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य शान्तिसागर जी महाराज ससघ कटनी चातुर्मासिक वर्षायोग समाप्त कर विहार करते हुए यहाँ पधारे थे। सयोगवश यहाँ का ऐतिहासिक दिगम्बर जैन मेला भी, इन्ही दिवसो मे आयोजित किया गया था। इस मेले की अनेकानेक विशेषताये देखकर पूरा सघ विस्मयान्वित था, स्थानीय और आजूबाजू के ही नही, सुदूर स्थानो से इस अनायास सगम के दर्शनार्थ भारी जैनाजैन बन्धुओ की भीड़ उमड़ पडी थी। अजैनो को छोड़िये, दिगम्बर जैन बन्धु भी जो अब तक जयमालाओ, विनतियां एव भजनो मे ही सुनते-

पढ़ते-गाते और गुनगुनाते रहते थे "वे मुनि कब मिलि है उपकारी", उन्होंने भी जब प्रथम बार उस निर्ग्रन्थ मुद्रा का अतृप्त नयनो से अवलोकन किया तो अपने को धन्य माना। अनेक ने आहारदान दिया, व्रत लिये, प्रतिज्ञाएँ ली और धारण किया परम पवित्र रत्नत्रय के प्रतीक, द्विजन्मा के प्रमाण चिह्न यज्ञोपवीत सूत्र (जनेऊ) को। सघ मे एक क्षुल्लक जी (श्री १०५ अजितसागर जी) का एक मात्र कार्य अधिक से अधिक श्रावको को विधि-विधान समझाकर जनेऊधारी बनाना था। इस प्रान्त मे जैनी और जनेऊ की अनदेखी सुनी को देखकर जैन लोग आश्चर्यचकित थे। अधेड़ और वृद्ध लोग तो उक्त क्षुल्लक जी के पास जाते थे और अल्प सख्या में जनेऊ धारण कर भी लेते थे, किन्तु नवयुवक लोग जनेऊ बाबा के पास जाकर इस आफत को डालने मे घबराते थे। उक्त क्षुल्लक जी 'जनेऊ बाबा' के नाम से प्रसिद्ध हो गए।

इसी अन्तराल मे एक १४-१५ वर्ष का बालक साहस कर पूज्य आचार्यश्री के समक्ष आया और सविनय चरण स्पर्श कर जनेऊ देने की प्रार्थना करने लगा। आचार्यश्री ने पच उदबर, तीन मकार का त्याग, प्रतिदिन देवदर्शन, जल छानकर पीना एव रात्रिभोजन त्याग की प्रतिज्ञा लेने को कहा, बालक ने सहज भाव से कहा—"महाराज। ये नियम तो मेरे पहले से ही है।" आचार्यश्री ने जनेऊ बाबा से जनेऊ देने को कहा। बालक ने आचार्यश्री के करकमलो द्वारा ही जनेऊ लेने का आग्रह किया और इस प्रकार उस बालक का यज्ञोपवित सस्कार आचार्यश्री शातिसागरजी महाराज के पुनीत करकमलो द्वारा सम्पन्न हुआ। वह बालक था कोसमा (जलेसर) निवासी परम संतोषी श्रावक श्री बिहारी लाल का पुत्र नेमीचन्द।

कुछ अतराल बाद उक्त बालक का परिचय इन पक्तियो के लेखक के साथ उस समय हुआ जब दोनो ने श्री गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त विद्यालय मोरेना मे एक साथ प्रवेशिका प्रथमखण्ड मे प्रवेश लिया। लगातार ९ वर्ष तक मुरैना विद्यालय के छात्रावास मे भारी गरिमा को अपने अक मे समेटे हुए इस समवयस्क के साथ मुझे रहने एव अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवधि मे इस सहाध्यायी से सम्बन्धित कुछ-एक घटनाएँ, जिनका महत्त्व उस समय नही ऑका गया, आज स्मृति-पटल पर आकर अपना मूल्याकन करा रही है।

विद्यालय भवन से लगभग दो फर्लांग की दूरी पर विद्यालय का अपना विशाल बगीचा एव क्रीड़ास्थल था। सायकालीन भोजनोपरान्त सभी छात्र वहाँ जाते थे और अपनी रुचि अनुसार कबड्डी, फुटबाल खेलते थे। नेमीचन्द प्राय कबड्डी पसद करते थे और प्रथम बार ही आऊट हो जाने पर अपने कपड़े पहनकर छात्रावास वापस आ जाते थे और हम सब लोग वापस आने पर देखते-नेमीचन्द जिनालय के बाहर चबूतरे पर सामायिक मे झूम रहे है। प्राय सभी कहते-इसे कल से हम अपनी पाली मे नही लेगे।

कमरा नम्बर ३ मे, जिसे अपेक्षाकृत बडा होने से किला कहा जाता था, १८ विद्यार्थी रहते थे। उसके पीछे धर्मशाला की विशाल छत थी जिस पर कमरे की पिछली खिड़कियो से कूदकर आसानी से पहुँचा जा सकता था। उसके एक कोने पर बहुत बड़ा पुराना पीपल का वृक्ष था। छात्रावास के पुराने भृत्य एव नीचे बाजार वाले कहा करते थे- इस पीपल पर बहुत बड़ा भूत रहता है। एक दिन मेरे इस सहाध्यायी ने मुझसे कहा—"इस भूत से एक दिन साक्षात्कार करना चाहिए।" मैने कहा—"तो फिर आज रात को ही यह शुभ कार्य हो जाना चाहिए।" जब रात को दस-साढ़े दस बजे सब छात्र सो गये, हम दोनो खिडकियो से कूदकर पीपल के ऊपर चढ़ गये

और बहुत देर बीतने पर भी भूत नही आया तो क्रम बनाया कि एक व्यक्ति २ घटे नीचे बैठेगा और दूसरा पीपल पर बहुत ऊँचे बैठेगा। पूरी रात बीत गई जब प्रात' कालीन प्रार्थना की घटी बजी, हम दोनों उतरकर प्रार्थना मे शामिल होगये। यह क्रम २-४ दिन के अन्तराल से महीनो चला। हम दोनों ने निश्चय किया-हम दोनो नही डरे, भूत ही डर गया।

मुरैना रेल्वे स्टेशन के ठीक पीछे खाकीबाबा की बगिया थी। बहुत सुन्दर रग-बिरगे महकदार फूल एव् अति लम्बे पेड़ थे। शिवालय भी था। इसमे भूत रहता है, ऐसा पूरा मुरैना कहता था। रात को इस बगिया के सुनसान स्थान मे किसी के जाने की हिम्मत नहीं होती थी। नेमीचन्द जी भूत की तलाश मे वहाँ भी रात को कभी-कभी घूम आया करते थे और आकर सब कुछ हमे बताते थे।

इसी कमरे मे विद्यार्थी पन्नालालजी भिण्ड, राजेन्द्रकुमारजी कोटलावाले भी रहते थे। शयन और अध्ययन के अतिरिक्त समय मे प्राय मुनियो के सम्बन्ध मे चर्चा चलती रहती थी। हमारे सहाध्यायी को यह चर्चा विशेष रुचिकर लगती थी। कभी-कभी साधुओ की आलोचनात्मक टिप्पणी पर वह ठकुराई रूप धारण कर लेते थे। इसलिए इनका नाम मैने नेमा ठाकुर प्रसिद्ध कर दिया था। हमारे शिक्षा गुरु स्व प मक्खनलालजी बडी आत्मीयता से इन्हे नेमा ठाकुर के नाम से सम्बोधित करते थे। कालान्तर मे यह त्रिमूर्ति श्री नेमीचन्द जी (परमपूज्य वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी), पन्नालालजी (परमपूज्य स्व श्री १०८ मुनिराज मुनिसुव्रतसागरजी) एव राजेन्द्रकुमारजी (स्व आचार्यश्री १०८ पार्श्वसागरजी) बने। यह अपने मे एक सुखद आश्चर्य है और स्व प मक्खनलालजी ने छात्रो को सुशिक्षित ही नही किया, उनके सस्कार भी उच्च कोटि के डाले, इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

इसी क्रम से छात्रो मे आगमोक्त विधि-विधान से पूजा-पाठ करने के सस्कार भी उन्ही पंडितजी की एक महान देन है। प्राय १०-१५ दिन के अन्तराल से सरस्वती भवन के ऊपर बड़े कमरे मे पचामृताभिषेक पूर्वक किसी विधान का आयोजन किया जाता था। उसकी सजावट चँदोवा, ध्वजा, तोरण, वेदी की सज्जा आदि काम मेरे जिम्मे रहता था। मै ३-४ अन्य छात्रो की सहायता से कमरे को अत्यन्त सुहावना बना देता था। अपने सहयोगियों मे नेमीचन्द को रख लेता था। लेकिन वे कुबेर के कार्य के समय गायब रहते थे, जैसे ही अभिषेक की बेला आती थी, पीले वस्त्र पहने इन्द्र बने, हाथ मे कलश लिये आ टपकते थे। मै सुखद क्रोध मे कहता था—"आ गया सौधर्मेन्द्र का बच्चा।"

एक बार स्व आचार्यश्री १०८ सूर्यसागरजी महाराज का सघ मोरेना पधारा। विद्यालय भवन के सामने ही विशाल जिनालय और उसकी कोठरियों मे सघ ठहरा, बडा आनन्द रहा। हम लोगो को सघ की वैयावृत्ति करने का अच्छा अवसर मिला। शीतकालीन समय था। कड़ाके की सर्दी थी। हम सब ऊनी कोट या रूई के कपड़े पहनते थे जिनमे आइवरी के बटन लगे होते थे। आचार्य महाराज इन बटनों के वस्त्रो को धारण करने वालो को पास नही फटकने देते थे। हमारे नेमीचन्द २-३ अन्य छात्रो के साथ अकेली बनियान पहने ही रात्रि सायकाल ३-४ घटे साधु-सेवा मे लीन रहते थे। थोड़ा सोकर प्रात शीघ्र ही ठिठुरते-ठिठुरते फिर सेवारत हो जाते थे। एक दिन नेमीचन्द को आहारदान करने की सूझी। ४-५ सहयोगी छात्र भी चुन लिये। रातभर एक कमरे की सफाई की गई, चाँदनी लगाई गई। हाथ का आटा, मर्यादित घी एव अन्य वस्तुएँ जुटा ली गई। भारी परिश्रम किया।

नेमीचन्द ने रोटी आदि स्वय तैयार की। सहयोगियो ने भरपूर श्रम किया। पडगाहन की वेला मे यथास्थान सब खड़े हुए किन्तु एक-एक कर सभी साधु चले गये। मालूम हुआ कि किसी के शूद्रजल के त्याग का नियम नही था। मध्याह्न उपदेश के समय नेमीचन्दजी इस नियम को लेने को भी तैयार हो गये। पडितजी एव हम लोगो ने समझाया-भाई छात्रावास मे किस तरह इस नियम का पालन होगा, आगे की शिक्षा नही हो सकेगी, तब कही जाकर आहार देने की तीव्र आकाक्षा बाहर से शान्त हो गई, अतरग से नही।

छात्रावास के अन्तिम कमरे मे दशम प्रतिमा धारी बाबा ठाकुरदासजी वर्णी निवास करते थे। अत्यन्त निष्परिग्रही, सात्विक जीवन, ध्यानाध्ययन मग्न उनकी सेवा मे नेमीचन्द जी सदैव अग्रणी रहते थे।

मुझ सहित प्राय बहुत से छात्र जहाँ उपद्रव, हँसी-व्यग, खेल-तमाशा आदि देखना पसन्द करते थे, वहाँ हमारे नेमीचन्दजी पूजापाठ, भक्ति, सामायिक मे लीन रहते थे।

प मक्खनलालजी छात्रो को न केवल अध्यापन करते-कराते थे, बल्कि उनकी जीवन-चर्या, रहन-सहन का भी भरपूर ध्यान रखते थे। फैशनपरस्ती से उन्हें भारी चिढ थी। प्राय हर १-२ माह बाद आकस्मिक रूप से घटी बजवाकर छात्रो को सरस्वती भवन मे एकत्रित कर, उपस्थिति लेकर, प्रत्येक छात्र का जनेऊ और बालो की कटिंग देखते थे। जिस किसी पर जनेऊ नही होता था अथवा बालो की कटिग अग्रेजी होती थी, उसे डाँट-फटकार, शारीरिक व आर्थिक दड भी देते थे। प्राय सभी छात्र वर्ष मे एक दो बार इस लपेट मे आ जाते थे। किन्तु नेमीचन्दजी अपवाद थे। उन्हे कभी भी इस कृत्य मे डॉट-फटकार भी नही सुननी पडी। ये उच्च विचार, सादा जीवन, कठोर परिश्रम की मूर्ति थे।

वात्सल्यपूर्ण व्यक्तित्व

❑ *डॉ. दरबारीलाल कोठिया*

आचार्यश्री ने अपने विहार द्वारा अनेक स्थानो पर अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन सनातन आत्मोपकारी तत्वो का निरन्तर उपदेश दिया है। कितने ही स्थानो पर उनके उपदेशो का दूरगामी प्रभाव पडा है और लोगों ने हिसा आदि पॉच पापो का त्याग कर उन्हे अपनाया है। यह उनकी महत्त्वपूर्ण देन है।

आचार्यश्री की दूसरी देन है उनकी तपस्या। उन्होंने अनशन उपवासो आदि द्वारा स्वयं आत्मा को उज्जवल बनाया है और उनसे श्रावको को भी प्रेरणा मिली है। वास्तव मे आ समन्तभद्र के शब्दो मे वे 'ज्ञानध्यानतपोरक्त·' तपस्वी है।

इसी प्रकार जन-सामान्य के भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक कष्टो के निवारण मे भी पूरी दयालुता के साथ उनकी अनवरत प्रवृत्ति रही और आज भी बनी हुई है। यह समाज के लिए उनकी कम उपलब्धि नही है।

इस अवसर पर मेरी हार्दिक मगल कामनाये है कि वे दीर्घकाल तक इसी प्रकार की प्रवृत्तियो मे रत बने रहें। उन्हे मेरा त्रिबार नमोस्तु निवेदन करे।

विनयाञ्जलि

❑ *पं. दीपचन्द छाबड़ा*

परमपूज्य आचार्यरत्न, चारित्रचक्रवर्ती श्री १०८ श्री विमलसागर जी महाराज ने अपने तपोमय पावन जीवन से अनेक भव्य जीवो का कल्याण किया है। आपकी मृदुवाणी एव प्रसन्न-मुद्रा भव्य जीवों को अत्याधिक आनन्द प्रदान करती है। सम्यक्त्व का वात्सल्य आप में प्रतिपल देखा जाता है। आपके ७५ वे जन्म-जयन्ती-महोत्सव पर मैं श्री वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आप शतायु हो।

अविस्मरणीय संस्मरण

❑ *पं. छोटेलाल बरैया*

भगवान बाहुबली मस्तकाभिषेक के प्रसग को लेकर वे उत्तराचल से दक्षिण की ओर विहार अविरल गति से करते हुए उज्जैन मे माधव नगर के श्री पार्श्वनाथ दि जैन मन्दिर मे शाम को विशाल सघ सहित पधारे। उज्जैन जैन समाज ने उनको अपने पलक-पॉवड़े बिछाकर ९ मील दूरी पर जाकर स्वागत किया। रात्रि को सघ का निवास मन्दिर मे ही हुआ। सुबह मगल प्रवचन सुनने उज्जैन का जैन समाज उमड़ पड़ा और अन्त मे आचार्यश्री ने बिना किसी सकोच के घोषणा कर दी कि सामायिक के बाद सघ का विहार होगा। जनता इस घोषणा से अवाक् रह गई। एक बजने को था, मौसम सर्दी का था, यकायक आसमान मे घनघोर काले बादल छा गये जो बरसने वाले ही थे। जनता मन्दिरजी मे उन्हे रोकने के लिए आकुलित थी। जनता की भावना परख मैंने आचार्यश्री से निवेदन किया--"महाराज, आपका इस कुसमय मे विहार करना उचित नही है। सघ मे कुछ अत्यन्त वयोवृद्ध साधु व माताजी है। उन पर दया कीजिए, आसमान में घनघोर घटा छाई हुई है और बरसने वाली है। यदि रास्ते में बारिश होना शुरू हो जायगी तो ये वयोवृद्ध साधुगण सब दुखी हो जायेगे। उन्हे बलपूर्वक शीत परीषह मे न ढकेलिए, ऐसी मेरी नही, सभी की विनती है। यहाँ उपस्थित जैन समाज की ओर से मै आपके पादमूल मे यह निवेदन करता हूँ।" क्योंकि मेरी आचार्यश्री से वर्षो पूर्व से ही निकटता थी इसलिए मैंने प्रार्थना की।

"चिन्ता न कीजिए, हम और हमारा सघ आगे-आगे चलेगा और हमारे पीछे-पीछे कुछ दूरी पर ही वर्षा होगी इसलिए सघ सुरक्षित रहेगा।" इतना कह आचार्यश्री उठ खड़े हुए और कमण्डलु उठा विहार कर दिया। कोई आधा फर्लांग चले होगे कि बारिश मूसलाधार होने लगी। सघ ज्यों-ज्यो आगे बढता गया और बारिश पीछे-पीछे बरसती रही। महाराज ने जैसा कहा था, वही होता देख कर सब चकित रह गये। सघ निराबाध रूप से पन्थ पिपलई, जहाँ ठहरने का पहले ही निश्चित प्रबध था, पहुँच गया।

इस घटना के कारण सबने आचार्यश्री के निमित्तज्ञान की भूरि-भूरि प्रशसा की। मै ऐसे निमित्तज्ञानी साधु के चरणों मे बार-बार नमोस्तु करता हूँ।

अद्‌भुत तपस्वी

❑ पं. धर्मचन्द्र जैन

लगभग सात दशक पूर्व दिगम्बर जैन मुनियो के दर्शन दुर्लभ थे। यो कह सकते है कि निर्ग्रन्थ परम्परा अपने मूर्त रूप मे लुप्त होती जा रही थी। इसी समय दक्षिण मे १०८ स्व पूज्य आदिसागरजी महाराज का दिगम्बर रूप मे उदय हुआ। पश्चात् १०८ चारित्रचक्रवर्ती परम पूज्य स्व आचार्य शान्तिसागर महाराज हुए, जिन्होने सारे भारत मे विहार कर पुन मुनि परपरा को पल्लवित-पोषित और परिवर्द्धित किया। इसी का शुभ परिणाम है कि पूरे देश मे आज लगभग २०० दि जैन मुनि है, जिनके दर्शन और उपदेश से सब पुण्य-लाभ लेते है।

इन मुनिया मे आचार्य, उपाध्याय व सामान्य मुनि है। जहाँ यह साधुवर्ग अनेक मुनिसघो के रूप मे रहता है, वही अनेक साधु एकल विहार करते है और छोटे-छोटे उपसघो के रूप मे रहते है। इस समय चार बड़े प्रमुख सघ है—(१) पूज्य आचार्य अजितसागर जी का सघ, (२) पूज्य आचार्य विमलसागरजी का सघ, (३) पूज्य आचार्य विद्यासागरजी का सघ और (४) पूज्य आचार्य सन्मतिसागरजी का सघ। चारो ही सघ वयोवृद्ध दुर्धर तपस्वी आचार्यो के अधिनायकत्व मे स्व-पर-कल्याण कर रहे है। मुझे प्राय सभी सघो के दर्शन का स्वर्णावसर मिला है। आचार्य विमलसागर जी के सघ की तो अनेक बार चिकित्सा व वैयावृत्ति का पुण्यावसर मिला है। पूज्य आचार्य विमलसागरजी असख्य लोगो की भौतिक चिकित्सा (आधि-व्याधियो) का निराकरण अपनी घोर तपश्चर्या, मन्त्रसिध्दि और अतिशय से करते है, यह सर्व विदित है। इस प्रकार चिरकाल से आप ससारी जनो के आध्यात्मिक और शारीरिक दु खो का प्रतिकार कर लौकिक अलौकिक उभय सुख शाति प्रदान कर रहे है।

यह अतिशय पूज्य आचार्य महाराज की दीर्घकालीन तपश्चर्या का परिणाम है, जो सभवत अन्य मुनियो, आचार्यों मे नही पाया जाता। महाराज जी की उस विशेषता या अतिशय को लौकिक कार्य के बहाने नुक्ताचीनी या समालोचना का विषय बनाना मानसिक क्षुद्रता और अज्ञानता का सूचक है, क्योंकि शास्त्रो मे जो ६४ ऋद्धियो का वर्णन है, वे साधुओं के ही तो होती है। वे भी हर किसी सामान्य मुनियो को नही। फिर ससार मे सभी वीतरागी या बाबा तो नही है। गृहस्थी के भार से दबा हुआ श्रावक (गृहस्थ) अन्य विधर्मियो का सहारा लेने की अपेक्षा जिन-मुनियो की शरण में आता है, तो इसमे दोष क्या है। सामाजिक सार्वदेशिक आपत्ति के समय जैन साधुओं की तपश्चर्या से ऐसे सकट एव विपदाओ के निराकरण होने का इतिहास जैन शास्त्रो मे मिलता है। सम्यक्त्व मे न लगने अथवा मिथ्यात्व के आरोप की बात केवल परोपदेश या कपटमात्र है। इस युग के तथाकथित दृढ़सम्यक्त्वी और वाचनिक वीतरागी अत समय मे भ्रष्ट होते देखे है। फिर ऐसे बड़े-बड़े वीतरागी सम्यक्त्वी सकट काल मे महाराज की ही शरण मे आते देखे जाते है। महत्त्व की बात यह है कि पूज्य आचार्य महाराज स्वय उन्हे नही बुलाते, न प्रेरणा करते है।

इतने बड़े सघ का आचार्य व सभालना, कठोर अनुशासन रखना, मीलो तक जैन श्रावको के अभाव मे सघ के आहारादि की व्यवस्था करना सामान्य बात नही। चतुर्विध सघ को निराकुलता पूर्वक अपनी तपश्चर्या, कल्याण-मार्ग मे स्थापित रखना बड़ा कठिन कार्य है। पूज्य आचार्य विमलसागरजी महाराज अनुशासनहीनता कतई बर्दाश्त नही करते। अनुशासनहीन किसी भी पद के व्रती को वे सघ से पृथक् करने से नही हिचकिचाते, ऐसे उदाहरण

मौजूद हैं। किसी की समालोचना दुनिया का सर्वाधिक सरल व सस्ता (बिना पूँजी का) धधा है। किन्तु स्वय ऐसी समालोचना, उपालंभों के कार्य न करना, बेदाग रहना दुष्कर कार्य है। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का प्रभाव सार्वकालिक, सार्वत्रिक, सार्वदेशिक सर्ववर्गीय होता है। उससे सभी प्रभावित होते है, किसी को छूट नही दी जा सकती। इस पतनोन्मुखी, वैज्ञानिक भौतिकवादी युग में दिगम्बर जैन साधुओं का अस्तित्व जहाँ आश्चर्य का विषय है, वही हम सभी जैन धर्मावलम्बियों का तीव्र पुण्योदय है।

अन्त में घोर तपस्वी, सन्मार्ग दिवाकर, परम शान्त, सर्वसाधारण के श्रद्धास्पद आचार्यवर श्री विमलसागरजी के प्रति अपनी कोटिश विनयाञ्जलि प्रगट करता हूँ और भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि वे ससारी जीवो का कल्याण करने के लिए हमारे बीच चिरकाल तक रहें।

हे अद्भुत तपस्वी! तुम्हे कोटिश नमन।

मेरे उपकारी

❑ *पं. सागरमल जैन*

शासकीय सेवा मे स्थानान्तरण होने पर रीवॉ मे जुलाई १९५९ तक रहा। वहाँ के मदिरजी मे मै सुबह और रात्रि मे शास्त्र-प्रवचन भी करता था। ८ फरवरी ५९ को समाचार आया कि मुनीश्वर विमलसागरजी महाराज सघ सहित कल पधार रहे है। ९ फरवरी को प्रात ९ बजे हमने चिएला गाँव मे महाराजश्री के दर्शन किये। मेरे जीवन मे महाराजश्री के प्रथम दर्शन थे। महाराज जी की एक गहरी दृष्टि मुझ पर पड़ी। सहसा कर्णों मे मधुर ध्वनि पड़ी—

"पडितजी! शास्त्र-प्रवचन आप करते है?"

मैंने कहा—"जी हाँ, गुरुदेव!"

आचार्यश्री—"आपका नाम?"

मैंने कहा—"मुझे सागरमल कहते है।"

आचार्यश्री—"सागरमल जी! आप शास्त्र-प्रवचन करते है पर अभी तक जैनी भी नही बन पाये?"

मैं आश्चर्य मे था, यह कैसे? मैंने कहा—"गुरुदेव, मै जैन कुल मे उत्पन्न हुआ हूँ, मेरा धर्म जैन है।"

आचार्यश्री—"जैनी के लक्षण क्या है-रात्रि भोजन नहीं करना, जल छानकर पीना और प्रतिदिन देव-दर्शन करना।"

आचार्यश्री—"तुम जैनी हो? रात्रि-भोजन करते हो। क्या कहे तुम्हे—

पडिताई माथे पड़ी, पूर्व जन्म का पाप।
औरन को उपदेश दे, कोरे रह गये आप॥

मैंने कहा—"मजबूरी है महाराजजी, मेरा ऑफिस घर से तीन मील दूर है, दौरे पर जाना पड़ता है।" (मै आश्चर्य मे था कि महाराज ने कैसे जान लिया?)

आचार्यश्री—"तुम्हे रात्रि-भोजन छोड देना चाहिए।"

मैने कहा—"दूसरा नियम दे दीजिए, मै मजबूर हूँ।"

सभा मे सन्नाटा छा गया था-पडितजी बडे-बडे उपदेश देते है और स्वय रात्रि-भोजन करते हैं। मेरी स्थिति एक कैदी की तरह थी। आचार्यश्री ने पुन कहा—"तीन बजे तक सोच लो, आगे देव-मनुष्य बनना है या तिर्यञ्च-नारकी? तुम बड़े होनहार हो, विद्वान् बनोगे, योग तो दीक्षा का है, चाहे जैसा जीवन का उपयोग करो-कुएँ में गिर पडो या घर मे बैठे रहो।"

मैने मायाचारी से आहार-दान दिया था अत आचार्यश्री ने करुणामयी फटकार देते हुए कहा—"तीन मिनट बचे है, पडितजी! आपने मुझे धोखा देकर आहार-दान दिया है। अत रात्रि-भोजन का त्याग तो करना ही होगा।" मैने १० फरवरी ५९ को मगलवार के दिन, दोपहर ठीक ३ बजे रात्रि-भोजन का त्याग कर दिया। यह मेरे जीवन का प्रथम सयम था। आज मुझे लगता है, वह दिन धन्य था।

महाराजश्री को जलेसर मे आचार्य पद दिया गया। तब मुझे भी दो शब्द बोलने का अवसर मिला। मेरा जोशीला भाषण हुआ। पश्चात् आचार्यश्री बोले—"सागरमल! एक बात ध्यान रखना, भाषा मे सयम रखना, सत्य तो बोलना पर कडवा नही।" यह आचार्यश्री का मुझे प्रथम आदेश था।

स्मृति के धनी

बुधवार २० अक्टूबर १९७१ को मै सम्मेदाचल की यात्रा कर लौट रहा था कि राजगृही मे आचार्यश्री के पुनर्दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आचार्यश्री की दृष्टि हम पर पहुँची। तुरन्त पुकार लगी—"सागरमल, १२ वर्ष पूर्व एक नियम लिया था, अब भी कुछ ले लो।"

मैने कहा—"गुरुदेव, आज्ञा कीजिये।"

आचार्यश्री—"मै जानता हूँ तुममे सप्त व्यसन नही होंगे, क्यो व्यर्थ का बोझा ढो रहे हो? यदि नियम नही है तो भी आस्रव तो होता ही रहता है।" मै सप्त-व्यसन का त्याग करके अति प्रसन्न हुआ। सत्य के प्रभाव से आज मै जीवन मे अति सुख-शान्ति का अनुभव करता हूँ।

जीवन को सन्मार्ग पर लगाने वाले ऐसे महापुरुष के प्रति किसी भी व्यक्ति का सिर विनय से स्वय झुक जाता है। आचार्यश्री को मेरा शत-शत वन्दन।

विनयाञ्जलि

❑ *मिश्रीलाल शास्त्री*

सूरीश्वर आचार्य विमलसागरजी महाराज इस भारत वसुन्धरा की एक जितेन्द्रिय परम शान्त ज्योति है। आपने अपने जीवनकाल मे अनेक भ्रमितजनो को मार्गदर्शन देते हुए त्यागमय आदर्शजीवन की ओर मोडा है। आज इतने बड़े विशाल सघ का सचालन आप अपने प्रभाव, चातुर्य और अनुभवशीलता से करते रहे हैं, यह सब आपकी

अलौकिक महान शक्ति एव तपोतेज का प्रभाव है। वास्तव मे आप लोकोपयोगी चामत्कारिक सौम्यमूर्ति, यशस्वी और निर्ग्रन्थ स्वात्मानुभवी सन्त है।

निमित्त ज्ञान आपका बहुत ऊँचा है। जो भी वचन निकलते है, वे सत्योक्ति से जुड़े रहते है। यही कारण कि भक्तजनो से आप हर समय घिरे रहते है। आपके सघ मे श्री १०८ भरतसागरजी महाराज बडे ही विशिष्ट और प्रभावी वक्ता है। प्रवचन शैली प्रभावनी एव परम आकर्षक है जिससे जन-मानस मे एक प्रकार से सघ के सूत्र की लहर बनी रहती है। आप अच्छे लेखक भी है। पुस्तको में निबद्ध आपकी ज्ञानवर्द्धक सामग्री से पाठक परम अनुरंजित होते है।

श्री १०५ आर्यिका स्याद्वादमतीजी भी विशिष्ट विदुषी एव जिनवाणी की ज्ञाता है। आपकी लेखमाला पाठको के हृदय को छूती है। सज्जाति के पोषण मे आपने आगम सरणि मे जो लेखनी चलाई वह भ्रमितजनो के लिए परम आदर्श की वस्तु बनी है। आज के युग मे माताजी का उपदेश भव्यजीवो के लिए अनुपम निधि स्वरूप रहता है।

मै परम श्रद्धा के साथ आचार्यश्री को व चतुर्विध सघ को नमोस्तु करता हूँ।

मै तो धन्य हो गया

❑ *बसन्तकुमार जैन*

राजस्थान के प्रसिद्ध अतिशय तीर्थ क्षेत्र तिजारा (देहरा) पर आचार्यश्री का ससघ पदार्पण हुआ। सारा क्षेत्र तपो-भूमि बन गया। इस समय मै तिजारा में ही शिक्षक, उपदेशक, प्रतिष्ठाचार्य पद पर नियुक्त था। मेरा सौभाग्य कि मुझे भी आचार्यश्री का सान्निध्य मिला। बहुत कुछ देखा, बहुत कुछ सीखा और मनन किया।

आज के इस कलियुग मे जहाँ विवाद ज्यादा और सुलझाव कम है, ऐसे चारित्रशिरोमणि ऋद्धि-सिद्धिप्राप्त दिगम्बराचार्य का मिलना कहाँ सम्भव है। मैने अपने जीवन का अवलोकन किया और मैने पाया कि मै तो बहुत पीछे हूँ। तभी विचार हुआ कि क्यो न आचार्यश्री से कुछ नियम ले लूँ। श्रुतपचमी तिथि के दिन विशाल जनसमूह के मध्य मैने आचार्यश्री से पत्नी सहित निवेदन किया, "महाराज, हमे आजीवन ब्रह्मचर्य से रहने का नियम दे दीजिये।" हमने श्रीफल चरणो मे चढ़ाया और महाराजश्री ने हँसमुख मुद्रा से हमें आशीर्वाद दिया। मै तो धन्य हो गया। आज मैने अपना जीवन सफल माना है। इस वक्त उपाध्यायश्री भरतसागर जी महाराज से अनेक चर्चाएँ भी हुई। जब तिजारा से सघ ने विहार किया तो मै तो खड़ा-खड़ा देखता ही रह गया।

दिगम्बर मुनियो के प्रति विवाद तो कोई भी खड़ा कर सकता है किन्तु ऐसा तप और त्याग अपनाने को कितने तैयार है यह विचारणीय है। आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज ससघ विचरण करते हुए, निरन्तर मानव को सजग करते रहे, यही भावना है।

शतशः प्रणाम

❑ पं. रतनलाल जैन

भगवान महावीर की परम्परा मे होने वाले अनेकानेक दिगम्बर आचार्यो मे श्री १०८ आचार्यवर्य वात्सल्यमूर्ति, करुणासागर, तपोनिधि, चतुर्विध सघ का सम्यक् प्रकार से सवर्धन करने मे कुशल, अनेकानेक भव्यों को सन्मार्ग पर अग्रसर करने वाले, स्वपरोपकाररत, ध्यानाध्ययन मे तत्पर, दुखियो को हस्तावलम्बन देने वाले, पृथ्वी के समान क्षमा भावो से अलकृत, दिगम्बर चर्या मे सिंहवृत्ति वाले, समुद्र के समान गम्भीर, पर्वत के समान साधुचर्या मे अटल-अचल, चन्द्रमा के समान सभी को आनन्ददायक, अग्नि के समान अन्तरग के विकारों को भस्म करने वाले, चारो अनुयोगो के मर्मज्ञ, भारत वसुन्धरा को अपने विहार से पवित्र करने वाले, धर्म प्रभावना मे सबसे उत्तम, रत्नत्रय से विभूषित श्री १०८, आचार्यरत्न, द्रय प्रकार की विमलता से अलकृत विमलसागर जी के पवित्र चरण-कमलो मे निज के अन्तरग की पवित्रता हेतु शतश वन्दन, नमोस्तु।

वन्दनीय

❑ पं. बालमुकुन्द शास्त्री

दिगम्बर जैन साधु परम्परा मे परमपूज्य चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का गौरवपूर्ण स्थान है। गुरु-परम्परा का पूर्णरूपेण साक्षात्कार कराते हुए समस्त जैन-अजैन मानव समाज के दैहिक, दैविक, भौतिक तापो को उदार हृदय से दूर करने वाले, ब्रह्मचारी, निरन्तर ज्ञानाभ्यासी, अनगार, चारित्ररथारूढ आचार्य महाराज अपनी विद्याभूमि श्री गोपाल दि जैन सिद्धान्त महाविद्यालय मुरैना की समस्त भारतवर्ष मे प्रसिद्धि फैलाने वाले श्रद्धास्पद वन्दनीय आचार्य परमेष्ठी है।

भारतवर्ष के मुनिसघो में आचार्य महाराज का मुनिसघ अद्वितीय है। सघ मे अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, ध्यानी, सतत मनन-चिन्तनरत, साधु एव आर्यिका मातायें है। द्रव्य रहस्य एव तत्त्व रहस्य तथा आत्मसाधना के सरल उपायो की खोज करने वाले त्यागियो का समुदाय सदैव पूजनीय व वन्दनीय है।

आचार्यश्री का सच्चा अभिवन्दन उनके बताये हुए मार्ग पर चलकर त्याग, शील, सयम व्रत धारण करके करना चाहिए। उनके समान साधु बनने वाले ही उनका सच्चा अभिवन्दन कर सकते हैं। हम सब विद्यालय परिवार के शिक्षक व विद्यार्थीगण आचार्य श्री के चरणो मे शत-शत वन्दन करते हुए आशीर्वाद माँगते है कि हम भी सयममार्ग पर चलकर मनुष्य-जन्म को सफल बनाएँ।

महान पुरुष

❑ पं. धर्मप्रकाश शास्त्री

इस भारत वसुन्धरा पर सदा ऐसे महान पुरुष अवतरित हुए है जिन्होंने मनुष्य जन्म को स्व-पर-कल्याण में लगाकर अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने की राह ग्रहण की है। ऐसी ही दिव्य आत्मा ने उत्तर प्रदेश के छोटे

से ग्राम .कोसमाँ में जन्म लिया। बाल्यकाल से ही विलक्षणबुद्धि इस बालक की महानता सिद्ध होने लगी। अनेकानेक शास्त्रो एव विद्याओ के ज्ञाता हो गये।

बचपन से ही ह्रदय में बैठी स्व-पर-कल्याण की लगन तथा संसार देह-भोगो से उदासीनता उभरकर सामने आने लगी। ससार में भटकाने वाले सभी धर्मों को छोड़कर आत्म-कल्याण में सहायक अद्‌भुत धर्म की छत्रछाया को स्वीकार किया। नीतिकार ने कहा है—

> अनन्तशास्त्राणि बहुलाश्च विद्या अल्पश्च कालो बहु विघ्नता च॥
> यत्सारभूत तदुपासनीय हसो यथा क्षीर नीरस्य मध्ये॥

चारित्रनायक ने सिद्धक्षेत्र पर सर्वस्व छोड़ दिगम्बरत्व को धारण किया। विमलसागर नाम से जगत् में प्रसिद्ध हुए। अनेक शिष्यो के मध्य सन्मार्ग दिवाकर दीर्घकाल तक हमारे बीच विराजमान रहें और स्व-पर-कल्याण करते हुए हमे सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहे, यही हार्दिक भावना भाता हुआ उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।

श्रद्धासुमन

❑ *पं. चन्दनलाल जैन*

लगभग डेढ दशक पूर्व आचार्यश्री के प्रथम दर्शन अतिशय क्षेत्र केशरियाजी मे प्राप्त कर मन-मयूर पुलकित हुआ था। पहुँचते ही आचार्यश्री ने कहा—"पडितजी। कैसे हो, क्या स्वाध्याय करते हो?"

आचार्यश्री के वात्सल्य और निमित्तज्ञान से जैन- जैनेतर प्रभावित थे। वही गाँव के एक अजैन बन्धु ने आचार्यश्री से णमोकार का पाठ सीखा। उसे मत्र पर इतनी श्रद्धा हो गई कि वह मन्त्र को पढ़कर लोगो के बुखार, चेचक, विष आदि उतारने लगा। वह आचार्यश्री का अनन्य भक्त बन गया।

ऐसे महान सत के एक बार जो दर्शन कर लेता है, वह बार-बार दर्शन की इच्छा रखता है तथा अपने आप को भूल जाता है। सन्तशिरोमणि के चरण-कमलो में श्रद्धा-सुमन बिखेरता हुआ, सदैव उनके चरण-सान्निध्य की प्राप्ति की प्रार्थना करता हूँ।

करुणा की प्रतिमूर्ति

❑ *डॉ. कस्तूरचन्द जैन*

आचार्य विमलसागर जी महाराज का नाम एव यश बहुत दिनो से सुन रहा था लेकिन उनके दर्शन करने का सौभाग्य नही मिल रहा था। एक बार मुझे लश्कर जाने का अवसर मिला। वहाँ से लौटते समय सोनागिर भी दर्शनार्थ आया। उस समय आचार्यश्री वहीं विराजमान थे। मन मे उनके दर्शन करने की इच्छा हुई। पहाड़ की वंदना करने के पश्चात् मैं उनके दर्शन करने को चला गया। उस समय अधिक लोगों की भीड़ नही थी। मै उनकी

वंदना करके वही बैठ गया। न महाराज जी ने कुछ पूछा और न मैने अपना परिचय दिया। कुछ ही समय के पश्चात् वहाँ किसी-न-किसी दु ख से दुखी भक्त आने लगे। वे महाराज से अपना दुख-दर्द कहने लगे और आचार्यश्री भी सभी को कुछ न कुछ देने लगे। मै कुछ देर तक आचार्यश्री की सारी क्रियाओ को देखता रहा और बिना कुछ बोले चुपचाप वहाँ से चला आया। मेरी यह धारणा प्रबल हो गई कि महाराजश्री मत्रशास्त्र के ज्ञाता हैं और अपनी विद्या से प्रत्येक दुखी व्यक्ति को कुछ न कुछ देते ही रहते है।

उसके पश्चात् आचार्यश्री के दर्शन बम्बई म एक सेमिनार मे किये। आचार्यश्री अपने पूरे सघ के साथ तीनमूर्ति बोरीवली मे विराजमान थे और उनके दर्शनो के लिए वहाँ अपार भीड लगी रहती थी। सेमिनार मे आचार्यश्री विराजते और अन्त मे सभी विद्वानो को अपना आशीर्वाद भी देते। उसी अवसर पर उनका जन्म-दिन भी था। सोहनलाल जी सेठी की ओर से विशाल भोज का आयोजन था। जन्म-दिवस पर आयोजित विशाल सभा मे सभी ने आचार्यश्री के जीवन पर प्रकाश डाला और उनके साधु स्वभाव एव करुणापूर्ण रूप की प्रशसा की। श्री सोहनलाल जी सेठी ने बताया कि जब से आचार्यश्री का उनको आशीर्वाद मिला है तभी से वे सुख-समृद्धि की ओर बढ रहे है। इस बार आचार्यश्री एव उपाध्यायश्री भरतसागर जी महाराज के प्रति मन मे विशेष श्रद्धा के भाव जागृत हुए।

आचार्यश्री का जब जयपुर मे चातुर्मास हुआ तो उनके विशेष सम्पर्क मे आने का अवसर मिला। सर्वप्रथम बॉदी कुई जाकर उनके दर्शन किये और फिर जयपुर मे श्री त्रिलोकचन्द जी कोठारी, महामत्री अ भा दि जैन महासभा द्वारा किये गये विधान मे मुझे भी बैठने का अवसर मिला। सारा विधान आचार्यश्री ने स्वय कराया था। प्रतिदिन उनका सहृदय आशीर्वाद मिलता। तभी मैंने अपनी एक कृति 'माटी हो गई सोना' की प्रथम प्रति आचार्यश्री को भेट की थी। इसमे श्री कोठारी जी के जीवन का मूल्याकन किया गया है। आचार्यश्री ने पुस्तक को बहुत पसन्द किया और मुझे भी खूब आशीर्वाद दिया।

आचार्यश्री करुणा की प्रतिमूर्ति है। वे हर क्षण अपने भक्तो का दुख दूर करने को तत्पर रहते है। उनके पास कोई भी अपना दुख-दर्द प्रकट कर सकता है और उनको दूर करने के उपाय भी पूछ सकता है। विद्वानो को उनका सहज आशीर्वाद मिलता है। वे किसी के साथ उलझते नही। वर्तमान मे उनकी कीर्ति आसमान को छू रही है। ऐसे महान सन्तो से हम सब गौरवान्वित है। आचार्यश्री दीर्घकाल तक इसी तरह समाज का पथ-प्रदर्शन करते रहे, यही हमारी हार्दिक कामना है।

निमित्तज्ञानी गुरु

❑ *पं हेमचन्द शास्त्री*

कोसमॉ ग्राम मे जन्म, मौरेना मे अध्ययनरत और कुचामन मे अध्यापनरत प नेमीचन्दजी के सबध मे उनके सहपाठी डॉ लालबहादुरजी शास्त्री, देहली और सेठ श्रीपतजी अजमेर वालो के मुख से चर्चा सुना करता था कि समाधिसम्राट आ श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के उत्कृष्ट तपो के प्रभाव से श्री प नेमीचन्दजी की भावना विरक्ति की ओर वृद्धिगत हो रही है। चर्चा ही नही, यह भावना सत्य रूप लेकर सामने आई हमारे वर्तमान आचार्य विमलसागरजी के रूप मे। हमारे आराध्य गुरु आचार्यश्री विमलसागरजी का जगत् को पुण्यकारक दर्शन-लाभ हुआ।

इनकी यशोगाथा, सरलवृत्ति, सघवत्सलता, निमित्तज्ञान,तपोनिष्ठा से सारा जैन जगत् परिचित है। आचार्यप्रवर का प्रथम दर्शन मुझे टुण्डला में हुआ। यही पर आपको आचार्यपद पर सुशोभित कर जन-मानस ने अपने आपको गौरवान्वित किया। इसके बाद आचार्य सघ के दर्शन तीर्थराज सम्मेदशिखर, केकड़ी, सुजानगढ़, अजमेर, जयपुर आदि धर्मनिष्ठ नगरो में हुए। आपकी सरलता, भव्यता, कल्याणी वाणी मुझे सदा ही प्रेरणा देती रही।

आपके चामत्कारिक जीवन की एक घटना का मुझे आज भी स्मरण हो रहा है। आचार्यश्री का सघ केकड़ी से विहार करता हुआ अजमेर की ओर आ रहा था। हम अजमेर निवासी आपसे अजमेर के लिए मगल पदार्पण का निवेदन करने के लिए गये थे। झडवासा ग्राम मे एक दिन का पड़ाव था। वहाँ आपकी हल्दी-सुपारी के चमत्कार की धूम हो रही थी। हजारो ग्रामीण, जैन-अजैन बन्धु आपके दर्शनार्थ आ रहे थे। सबके मुँह से आपकी महिमा सुनकर मै गद्गद् हो रहा था क्योंकि उन भक्तो को विपत्ति से मुक्ति सुलभ हो रही थी।

सघ विहार करता हुआ अजमेर आया। यहाँ १९ वर्षीय छोटेलालजी का दीक्षा सस्कार जैसा सम्पन्न हुआ, वह अजमेर के जैन इतिहास की महान उपलब्धि रही। लगभग २० हजार जनता के बीच इनकी क्षुल्लक दीक्षा हुई थी। यह धर्मोद्योत का दृश्य अब भी आँखो मे झूम रहा है।

अजमेर से मगल विहार कर सघ रात्रि को विश्राम के लिए यवन बहुल ग्राम नागेलाव मे रुका था। रात्रि सानन्द व्यतीत हुई। प्रात ५ बजे सभी सयमीगण पीसागन को रवाना हो गये। अजमेर वाले जीप लेकर सबसे पीछे ग्राम के स्कूल मे सघ को न पाकर आगे बढने ही वाले थे कि स्कूल की चार दीवारी के पीछे कमण्डलु और चादर को रखी देखकर बड़े असमजस मे पड़ गये-आखिर ये यहाँ क्यो रखे हुए है?

जीप पीसागन की ओर बढ़ी। सभी त्यागियो को सम्हाला। पता चला कि नवदीक्षित क्षुल्लक म उनमे नही है। जनता मे बड़ा क्षोभ हुआ और सारा वातावरण सतापमय बन गया। अब तक सघ पीसागन पहुँच गया था। बात फैलते दैर न लगी। जीप, स्कूटर, कार, साईकिल जो भी साधन जिसके पास था, दौड़-धूप चल पड़ी, परन्तु क्षुल्लक जी का कोई पता नही लग रहा था। गर्मी के कारण सभी सयमी विवर्ण हो रहे थे। चर्या का समय आगे सरक रहा था।

इधर जनता ने मार्गस्थित सभी झोपड़ियाँ, कुएँ, बावड़ियाँ छान डाली, पर कोई सुराग नही मिल रहा था। मैने इस भयकर स्थिति मे आचार्यश्री से प्रार्थना की—''गुरुदेव! आपका निमित्तज्ञान इस समय क्या कहता है?'' आचार्यश्री ने बड़े विश्वास के साथ कहा कि क्षुल्लकजी जलमग्न स्थान पर सुरक्षित है परन्तु मिलने मे समय लगेगा।

कुछ ही घटों के उपरान्त जैन और जैनेतर लोगों का जयनाद हुआ। क्षुल्लकजी कुएँ से बाहर निकाल लिये गये थे। श्वेताम्बर भाइयो ने कुएँ से बाहर निकालकर क्षुल्लकजी को, निराकुल हो, उपाश्रय मे बैठा दिया था। जनता उधर गई और जयनाद पूर्वक पीसागन ले आयी। साढ़े तीन बजे उनका आहार हुआ।

वास्तविकता यह थी कि कुछ अर्थलोलुपी व्यक्तियो ने अधकार में इनका अपहरण किया था और जब उन्हें इस व्यक्ति से कुछ नही मिला तो इनको कुएँ मे डाल दिया। धैर्यधारी क्षुल्लकजी ने उपसर्ग को बड़ी शान्ति से सहन किया। आज वे उपाध्याय पद पर आसीन पूज्य श्री भरतसागरजी महाराज के नाम से प्रख्यात है। उन्हे मेरा शतशः प्रणाम।

श्री आचार्यश्री अनेक गुणो के पुञ्ज होते हुए आर्षमार्ग के प्रबल पोषक है। जहाँ ये निर्ग्रन्थ सन्त है, वहाँ प्राणी मात्र के उपकारी भी है। आपका पुण्यदर्शन मेरी आत्मा को पुण्यशाली बनाए, इसी भावना से आपके चरणों मे मेरा शतश सहस्रश नमन।

समभाव चित्त

❑ पं. पवनकुमार शास्त्री

जे सत्तु-मित्त समभाव चित्त, ते मुणिवर वंदिउ दिढ चरित्त।
चउवीसह गथह जे विरत्त, ते मुणिवर वंदिउ जग पवित्त॥

जिनका चित्त शत्रु और मित्र मे समभाव रहता है, चारित्र मे दृढ़ उन मुनियो को मै नमस्कार करता हूँ। जो २४ प्रकार के परिग्रह से विरक्त है, जग मे पवित्र उन मुनियो की मैं वन्दना करता हूँ।

उपर्युक्त वर्णित स्वरूप प्रत्यक्ष मे पू आचार्य में विद्यमान है। सन् १९८८ मे सोनागिरजी मे वर्षायोग के अवसर पर जब भी पूज्यश्री के दर्शन किये कदापि विकथा आदि की चर्चा करते उन्हे नही पाया। कभी स्वाध्याय मे मग्न, कभी शास्त्रों के सग और कभी जिनभक्ति के रग मे रँगा पाया। वास्तविकता तो यह है कि आचार्य परमेष्ठी के ३६ मूलगुणो की परिपक्वता आप मे है। ऐसे स्व-पर-कल्याण की भावना से ओतप्रोत आचार्यश्री के दीर्घायु होने की मगल कामना करता हूँ और अन्त मे—

जे गुरु चरण जहाँ धरे, जग मे तीरथ होय।
सो रज मम मस्तक चढ़े, भूधर माँगे सोय॥

सादर अभिवन्दन

❑ प्रो. टीकमचन्द जैन

इस भोगप्रधान युग मे जबकि मानव आत्मसाधना, त्याग व सयम से विमुख होता जा रहा है तथा कभी न तृप्त होने वाली इच्छाओ के पोषण मे ही लगा है, ऐसे निकृष्ट समय मे भी इच्छा निरोध की पराकाष्ठा पर पहुँचे तपस्वीसम्राट्, युगप्रमुख, चारित्रशिरोमणि, सन्मार्गदिवाकर, ज्योतिर्विज्ञ, निमित्तज्ञानी, वात्सल्यमूर्ति परम पूज्य १०८ आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज सर्वत्र धर्म प्रभावना कर दुखी एव अशान्त मानव को शाश्वत सुख शान्ति का मार्ग प्रशस्त कर रहे है। चारित्रिक पतन के कारण उत्पन्न देश समाज की विविध समस्याओ का आप सम्यक् समाधान कर रहे है। अपने विशिष्ट एव अपूर्व निमित्त ज्ञान के प्रयोग से व्यक्तिगत समस्याओ एव पीड़ाओ के समाधान व उपचार हेतु जो धर्माचरण व महामत्र आपके द्वारा निर्देशित किया गया, उसकी क्रियान्विति के सुफल से जन-जन मे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा दृढ़ हुई तथा आपके द्वारा प्रदत्त धार्मिक ज्ञान के कारण शुद्धाचरण मे प्रवृत्ति बढ़ी। आप स्वय तो चल तीर्थ है, किन्तु महान अचल तीर्थोद्धारक हैं।

जनवद्य ऐसे महान सन्त के प्रत्यक्ष दर्शनो का प्रथम सुअवसर मुझे तब मिला जब पूज्य आचार्यश्री ने ससघ

नवीन शाहदरा, दिल्ली में मगल पदार्पण किया। उनके दर्शन व वचनामृत के पान से मै इतना अभिभूत हुआ कि फिर तो नित्य प्रति ही उनके परोक्ष दर्शन (अन्तर्मन मे ध्यान) करने लगा। उसी के परिणामस्वरूप उनकी दीक्षा नगरी सिद्धक्षेत्र सोनगिर जी में उनकी ७४ वी जन्म जयन्ती तथा हीरक जयन्ती वर्ष के शुभारम्भ पर एकत्र अपार श्रद्धालु जनसमूह के समक्ष पूज्य आचार्यश्री के पुनीत कर कमलो मे अभिनन्दन पत्र भेट करने का परम सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ।

ऐसे महामना ऋषिराज के व्यक्तित्व एव कर्तृत्व के विभिन्न आयामो तथा जैन दर्शन के अनेक पक्षो को अभिवन्दन ग्रन्थ के माध्यम से इतिहास के पृष्ठो मे अकित करने तथा जन सामान्य तक पहुँचाने का प्रयत्न ही विश्व के इस महान उद्धारक के प्रति श्रद्धाभिव्यक्ति एव कृतज्ञता ज्ञापित करना है।

इस अभिवन्दन ग्रन्थ समर्पण के पावन प्रसग पर मै परम पूज्य आचार्यश्री के चरणो मे शत-शत नमन करता हूँ तथा मगल कामना करता हूँ कि दीर्घ काल तक इसी प्रकार आप विश्व मे धर्म-ध्वजा फहराते रहे तथा विविध प्रकार की विपन्नता से सत्रस्त हम लोगो को आध्यात्मिक उन्नयन द्वारा सम्पन्न होने का मगल आशीर्वाद प्रदान करे।

विश्व-सन्त

❑ ***पं. वृद्धिचन्द जैन***

स्वार्थ साधना के इस युग मे परमार्थ और आत्माराधन मे लीन परम तपस्वी, सन्मार्गदिवाकर निमित्तज्ञान-शिरोमणि पूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज विश्व की अनुपम विभूति है। कतिपय सीमाओ के कारण धर्म, जो मात्र श्रद्धा की वस्तु रहा है, उसके सुफल को भी आप साक्षात् सिद्ध कर देते है। फलस्वरूप इस निकृष्ट काल में भी सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा बढ़ती जा रही है। आप स्वय चलतीर्थ है, साथ ही महान अचल तीर्थोद्धारक है। जैन सिद्धान्तो के व्यापक प्रचार-प्रसार द्वारा आपने जन-जन मे सयमाचरण द्वारा शुद्धाचरण को बढ़ावा देकर विनाश के कगार पर खड़ी मानवता को शाश्वत सुख शान्ति का मार्ग दर्शाया है। इसीलिए मात्र जैन ही नहीं, वरन् सभी धर्मनेता, राजनेता, सामाजिक नेता आदि विश्व-सन्त के रूप मे आपसे आशीर्वाद पाकर अपने को धन्य मानते है।

अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशन के इस पुनीत अवसर पर मै आचार्यश्री के चरणो मे विनम्र नमन करता हुआ मगल कामना करता हूँ कि वे दीर्घकाल तक ऐसे ही हम सबको सुख शान्ति का आशीर्वाद प्रदान करते रहे।

इस शताब्दी के प्रभावक आचार्य

❑ ***पं. प्रदीपकुमार***

"गुरु की महिमा वरणी न जाय, गुरु नाम जपो मन-वचन-काय।"

आचार्यश्री से मेरा बचपन से सपर्क रहा। आचार्यश्री का विहार सन् १९८० में गोमटेश्वर बाहुबली के

महामस्तकाभिषेकार्थ दक्षिण की ओर हुआ। तभी प्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। आपके दर्शनमात्र से धर्म में विशेष अभिरुचि पैदा हुई। लौकिक अध्ययन से विरक्ति व धार्मिक शास्त्राध्ययन की भावना जागृत हुई। उन्हीं के आशीर्वाद से आज कल्याणकारी पथ पर हूँ। आचार्यश्री से मैंने पॉच वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत लेकर शास्त्राध्ययन किया और जिनवाणी के रहस्य को समझा।

आचार्यश्री अपनी करुणादृष्टि, वात्सल्यभाव, धीरता, गभीरता, साहस, धैर्य, आत्मविश्वास के कारण जन-जन के हृदय में विराजमान है। इस २० वी सदी मे आचार्यश्री शातिसागरजी, आचार्य वीरसागरजी, आ महावीरकीर्तिजी, आ देशभूषणजी, आ शिवसागरजी, आ धर्मसागरजी आदि-आदि महान आचार्य हो चुके। उनमे आचार्य महाराज एक महान विभूति है, आपका नाम केन्द्र-बिन्दु में आता है। आपने इस महान पद पर आरूढ़ होकर, ऐसे-ऐसे प्रभावना के कार्य किये है, कर रहे है जो इस शताब्दी मे शायद कोई भी नही कर पाया और करना भी असभव है।

(१) आचार्य श्री ने करीब १०० से भी अधिक दीक्षाएँ प्रदान कर जिनमार्ग की प्रभावना की तथा एक से दस प्रतिमाधारी व्रती तो हजारो की सख्या मे बनाये और शूद्र जल त्यागी, रात्रि-भोजन व सप्त-व्यसनो के त्यागी तो लाखो लोगो को बनाकर जिनधर्म मे लगाया है।

(२) भारतवर्ष मे वर्तमान मे जितने त्यागीवर्ग है उनमे प्राय अधिकाश ने आचार्यश्री से कुछ-न-कुछ नियम अवश्य लिया है।

(३) आचार्यश्री आगम-मार्ग के प्रबल पोषक है।

(४) आचार्यश्री ने भारतवर्ष के प्राय सभी तीर्थक्षेत्रो की वन्दना चतुर्विध सघ सहित पैदल यात्रा द्वारा की। वर्तमान में शायद ही ऐसा कोई त्यागी होगा जिसने इतनी बार यात्रा की हो।

(५) आचार्यश्री ने सिद्धक्षेत्र, अतिशयक्षेत्रो की वन्दना ही नही की अपितु तीर्थो पर नव-निर्माण और जीर्णोद्धार करवाकर तीर्थों के प्रति नयी उमग जन-जन मे पैदा की है।

(६) आपके आशीर्वाद से इस देश मे अनेक जिनमदिर, धर्मशालाएँ, औषधालय, पाठशालाएँ, शास्त्रभवन, स्कूल आदि का निर्माण हुआ है।

(७) आचार्यश्री ने यथासमय महासभा, सस्थान, मडल, पत्र-पत्रिकाओ के लिए आशीर्वाद देकर उन्हे उचित मार्गदर्शन दिया है।

(८) आचार्यश्री के उपदेश से अनेक प्राचीन ग्रन्थो का प्रकाशन व उनके कर-कमलो से ग्रन्थो का विमोचन भी हुआ है।

(९) आचार्यश्री के सान्निध्य में अनेक पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठाएँ, महायज्ञ (विधान), महोत्सव आदि धार्मिक कार्य सम्पन्न हुए जिससे महान अतिशय प्रकट हुए।

(१०) आचार्यश्री के समीप प्रतिदिन तनरोगी, मनरोगी व धनरोगी जन आते है जिन्हे उचित दिशा-दान देकर आप सतुष्ट करते है, इसलिए आप एक चमत्कारिक वैद्य भी है।

(११) आचार्यश्री अपनी मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र विद्या के माध्यम से भारतवर्ष के करोड़ों लोगो को गृहीतमिथ्यात्व से बचाने वाले महान मन्त्रवादी है।

(१२) आपने अनेक दु खीजनो के दु खो को अपने निमित्तज्ञान से जानकर योगयन्त्र आदि देकर सुखी बनाया, इसीलिए आप निमित्तज्ञान-शिरोमणि कहलाते है।

(१३) आपश्री ज्योतिषशास्त्र के प्रकाण्ड ज्ञाता हैं, आपके द्वारा बताया गया मुहूर्त कभी भी दोषपूर्ण साबित नहीं हुआ, इसलिए आप महान ज्योतिषाचार्यों द्वारा माने गये ज्योतिषज्ञ है।

(१४) आचार्यश्री का सघ विशाल है, सभी साधुओ के रत्नत्रय का ध्यान रखते हुए आप उनकी चर्या कराते हैं। केवल सघ का ही सचालन नही करते अपितु अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज के दु खों का निवारण करते हुए समाज का भी सचालन करते है।

(१५) आचार्यश्री एकान्तवाद के विरोधक एव उत्कृष्ट आर्षमार्ग के रक्षक है। आप आर्षमार्ग के उद्धारक, प्रचारक और नायक भी है।

ऐसे-ऐसे अनेकविध गुणभडार आचार्यश्री को कलिकाल सर्वज्ञ कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आप २० वी सदी के अग्रदूत है। कहा है-''परोपकाराय सता विभूतय '' ''परोपकार के लिए सतजनों की विभूति।'' मराठी मे कहावत हे– ''जगाच्या कल्याणा सताच्या विभूती''। क्षत्रचूड़ामणि मे आचार्य लिखते है-

''गर्भाधानक्रियामात्रन्यूनो हि पितरौ गुरु ''

विना गर्भाधानक्रिया के आप भव्य जगत् के सच्चे मातृरूप है तथा शिष्यवर्ग का पालन-पोषण करनेवाले सच्चे पिता है। ऐसे-

''जगदुपकर्ता सुकृती सरल कोटिषु-कोटिषु विरल ''

ऐसे जगत् उपकारी, सरल स्वभावी, आचार्यश्री कोटि-कोटि जनो मे विरले ही हैं।

कुशल संघ-संचालक

❑ *भरतकुमार काला*

मुस्कराहट भरा चेहरा, उन्नत भाल, चमकता हुआ मुखमडल, अहिंसक दिनचर्या, करुणामय वात्सल्ययुक्त दृष्टि स्याद्वादयुक्त वाणी, कुशल सघ नियत्रक आचार्य विमलसागर सदा जयवत रहे।

हम बम्बईवासियो का यह परम सौभाग्य था कि सन्मार्ग दिवाकर पू आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज ने चातुर्मास सहित १० माह तक का समय हमें दिया। हमें उन्हें नजदीक से देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उनके इस बम्बई चातुर्मास की कई उपलब्धियाँ रहीं जो आज भी उनकी स्मृति को ताजा कर देती हैं। त्रिमूर्ति भगवान जो कि बम्बई की आध्यात्मिक शान व बान हैं, पोदनपुर मे स्थित हैं, का महामस्तकाभिषेक, जन्मजयंती समारोह, इन्द्रध्वज मडल विधान, (श्री कोठारी जी द्वारा) बम्बई के महान सर्वोदयतीर्थ सर्वोदय में पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

आदि आयोजन उनके सान्निध्य मे अपार सफलता के साथ सम्पन्न हुए। पूरे महानगर मे सघ घूमा। अपार धर्म-प्रभावना करते हुए दिगम्बरत्व का दिग्दर्शन हुआ जो हमेशा के लिए गौरव की बात बन गई। इतने बड़े सघ को एक साथ लेकर चलना, सभी तरफ चौकन्ना दृष्टि रखना बहुत ही कठिन होता है लेकिन आज भी इस वृद्धावस्था में आपकी तत्परता देखकर आश्चर्य होता है। पू उपाध्याय भरतसागरजी महाराज, आर्यिका स्याद्वादमतीजी आदि आपके उपजाये रत्न है जो सघ के अनुशासन व गौरव को कायम रखने मे सक्रिय रहते है।

अभी हम पू महाराजश्री की ७३ वी जन्म जयती पर सिद्धक्षेत्र, साढ़े पॉच करोड मुनियो की साधक भूमि, निर्वाणस्थली सोनागिर गये थे। महाराज जी की जन्म-जयन्ती का समारोह था। राजनीतिक तथा सामाजिक नेता मच पर सघ सहित शोभित थे, अपार जनसमूह भी था। वर्षा ने अपना रग जमाना शुरू किया। जैसा कि उनके प्रत्येक जन्मदिन पर मेघ वर्षा करते है उसी प्रकार उस दिन भी वर्षा प्रारम्भ हो गई। लेकिन जरा भी भगदड़ नही मची, कितने ही लोग अपनी जगह बैठकर णमोकार मत्र पढते रहे, मच से भी पू माताजी ने णमोकार मत्र बोलना शुरू किया। सभी भक्त लोग णमोकार महामत्र का निरन्तर जप करते रहे, कुछ समय बाद वर्षा शात हुई। वैसे ही लोग अपनी-अपनी जगह पर शाति से बैठे समारोह का आनन्द लेने लगे। हमारे केन्द्रीय मत्री राज्य मत्री महोदय देखते ही रह गये लोगो की भक्ति को।

ऐसे महान सत का महान प्रभाव है यह। हमे उनके दर्शनो का सौभाग्य निरन्तर मिलता रहे, यही विमल भावना भाते हुए हम पूज्य आचार्य व सघ को त्रिबार नमोस्तु करते है।

भक्ति-भावाञ्जलि

❑ *पं. कोमलचन्द शास्त्री*

ज्ञानवृद्ध, तपोवृद्ध, करुणानिधान, प्रतिक्षण स्व-पर कल्याण की भावना रखने वाले, येन-केन-प्रकारेण मिथ्यामार्ग से भव्यजीवों को हटाकर सम्यक् मार्ग की ओर प्रशस्त करने वाले, सासारिक एषणाओ के कारण दुखित प्राणियो को सतोषामृत पिलाने वाले, मुक्तिमार्ग की ओर लगाने वाले, ऐसे निमित्तज्ञानी सन्त श्री १०८ आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के चरण-कमलो मे शत-शत वन्दन, नमन करता हुआ उनके चिरायु होने की मगल कामना करता हूँ।

तप:पूत

❑ *डॉ. निजामउद्दीन*

आचार्य विमलसागर जी एक सन्तात्मा है, पूर्णत वीतरागी। उन्होंने अपने धर्मादेशो से, प्रवचनो से जनमानस को अभिप्रेरित किया और बहुवर्ग को सन्मार्ग दिखाया। बड़ी सख्या मे लोगो को जैनधर्म की विधि-अनुसार साधु-दीक्षा दी। ४२ चातुर्मास वह अब तक कर चुके है और ३६ व्यक्तियो को मुनि-धर्म मे दीक्षित भी कर चुके है। २० महिलाओं को आर्यिका दीक्षा दी है। ४० से अधिक को क्षुल्लक/क्षुल्लिका दीक्षा दी है। यह सब इसलिए कहा जा रहा है कि उन्होने लोगो मे धर्म की सम्यक् भावना उत्पन्न की, उन्हे प्रबोधित किया। जब हम उनके

तपस्वी-उपवासी जीवन पर एक दृष्टि डालते है तो आश्चर्यान्वित हो जाते है। उपवासो की लम्बी श्रृखला वहाँ मिलती है और मिलता है परम सयमी व्यक्तित्व, पूर्णत निरासक्त, निष्परिग्रही और इन्द्रियजयी।

'गीता' में योगीश्वर कृष्ण ने तीन प्रकार के तपो का उल्लेख किया है—

(१) शारीरिक (२) वाचिक (३) मानसिक। 'शारीरिक तप' द्वारा व्यक्ति आचरण को शुद्ध, पवित्र बनाता है। उपवास या व्रत द्वारा शरीर स्वस्थ एवं निरोगी हो जाता है। 'वाचिक तप' द्वारा मधुर, शान्तिमय और हितप्रद वचन बोले जाते है जिनसे उद्विग्नता समाप्त होती है। 'मानसिक तप' से मन की शुद्धि-साधना की जाती है, मौन धारण किया जाता है और मन को प्रसन्न रखा जाता है। जब व्यक्ति तप या उपवास की साधना करता है तो वह तन, मन, वचन सब प्रकार से शुद्ध पवित्र हो जाता है। आचार्य विमलसागरजी ने तप और उपवास कर अपने को तप पूत बनाया है। 'रामचरितमानस' मे तुलसीदास ने पार्वती के तप-उपवास का वर्णन किया है—

नित नव चरह उपज अनुरागा।
बिसरी देह तपहिं मनु लागा।।
सबत हसस मूल फल खाए।
सागु खाइ सब बरष गवाए।।
कुछ दिन भोजनु बारि बतासा।
किए कठिन कछु दिन उपवासा।।
बेल पाती महि परइ सुखाई।
तीनि सहस सबत सोइ साई।।
पुनि परिहरि सुखानेउ परना।
उमहि नामु तब भयउ अपरना।। (बालकाण्ड)

यह है घोर तप-उपवास। सूखे पत्ते खाने भी छोड़ दिए तब कही जाकर पार्वती का 'अपर्णा' हुआ। श्री विमलसागरजी महाराज ने अपने उपवासित जीवन मे छ वर्षो तक अन्न नही लिया। और अब घी, तेल, नमक, दही को भी परित्यक्त कर दिया। उन्होंने और भी कठिन उपवास किए जैसे—

१ चारित्रशुद्धिव्रत के १२३४ उपवास

२ तीस-चौबीसी के ७२० उपवास

उनकी यह उपवास-साधना और स्वादिष्ट वस्तुओ का पूर्णत त्याग करना साधारण साधुवृत्ति के व्यक्ति का काम नही है। दही, घी आदि का त्याग करना 'रस-परित्याग तप' कहा गया है—

खीरदहि सप्पिमाइ पणीय पाणभोयण।
परिवज्जण रसाण तु, भणिय रसविवज्जण।।

वस्तुत इन्द्रियो का उपशमन 'उपवास' कहलाता है और जो साधु जितेन्द्रिय होते है वे भोजन करते हुए भी उपवासी होते है—

उवसमणो अक्खाण उववाससो वण्णिदो समासेण।
तम्हा भुजता वि य, जिदिंदिया होंति उपवासा।।

जो साधु या व्यक्ति स्वाध्याय या शास्त्राभ्यास के लिए अल्प-आहार करते है वे आगमानुसार 'तपस्वी' माने जाते है। आचार्यश्री का जीवन तपोज्ज्वल है, उन्होने अपनी वृत्तियो का परिष्कार किया है और तप के बाह्य तथा आभ्यन्तर (१२ प्रकार के) तप की साधना की है। ऐसे तप पूत व्यक्तित्व को बार-बार नमन।

अभयदानी

❑ *प्रकाशचन्द छाबड़ा*

परम पू प्रात स्मरणीय आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के दर्शन का लाभ एव सान्निध्य सभी प्राणियो को प्राप्त है। जो भी इनके दर्शन को आता है स्वय अपने अन्तरग मे विशेष शान्ति का अनुभव करता है। जो भी मन मे सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विवाद हो या भय हो, इनके चरणो मे आते ही समाप्त हो जाता है। उसे अपनी विपत्ति तथा सकटो मे निवारण के लिए मार्ग-दर्शक के रूप मे परमोपकारी गुरु की छत्र-छाया प्राप्त हो जाती है। उसे अपनी विपत्ति तथा सकटो मे निवारण के लिए मार्ग-दर्शक के रूप मे परमोपकारी गुरु की छत्र-छाया प्राप्त हो जाती है जिससे जीवनदान मिलता है, अभयदान प्राप्त होता है।

आचार्यश्री अनन्त गुणो के भडारी एव करुणा के सागर है। किसी भी प्राणी के दुखो को दूर करना उनका परम ध्येय है। मिथ्यात्व से सम्यक्त्व आचरण की ओर लगाना यह उनकी सम्यक्त्व गुण अनुकम्पा का ही फल है। ऐसे सन्तशिरोमणि के प्रति यही भावना करता हूँ कि वे शताधिक वर्ष तक हमे मार्ग प्रदर्शित करे। गुरु-चरणो मे मेरा शत-शत वन्दन।

अद्भुत स्थितिकर

❑ *जयकुमार जैन*

आचार्यश्री अनूठे है। इस जगत् मे वर्तमान काल मे आचार्यश्री साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविका चतुर्विध सघ को गुमराह होने पर धर्म की ओर विशेष प्रेरित कर उनका स्थितिकरण करने का विशेष कार्य करते है, किया है, जो सदा सर्वदा इतिहास के पन्नो मे स्वर्णाक्षरो मे अकित रहेगा। असाता कर्म से आकुलित होकर व्यक्ति असहायसा महाराजश्री के चरणो मे जब आता है तो अपने आप ही सहज शान्ति का अनुभव करने लगता है। अपने दुख को भूल जाता है। इतनी अधिक शान्ति का अनुभव करता है कि जो कुछ गुरुजी से पूछना है, शका-समाधान करना होता है, गुरुदर्शन मे भाव-विभोर हो भूल जाता है।

सम्यक्त्व के समस्त गुणो से परिपूर्ण 'सागर' के प्रति शत-शत वन्दन।
जयवन्त हो जगत पूज्य ऋषिराज आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज।

शुभ अवसर

❑ माणिकचन्द्र जैन

मार्च १९८५ में परम पूज्य १०८ ऐलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज के सान्निध्य में इन्दौर में नवतीर्थ श्री गोम्मटगिरि के पचकल्याणक महोत्सव को सुसम्पन्न कराने की योजना चल रही थी। गोम्मटगिरि पर बार-बार कई तरह की विघ्नबाधाएँ एव अवरोध आदि उत्पन्न होते रहते है। अत. पंचकल्याणक महोत्सव पर १०८ आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के बगैर पचकल्याणक का कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न होना कठिन था। अत महाराजश्री का सदेश लेकर श्री बाबूलालजी पाटोदी के साथ हम २५-३० व्यक्ति लुहारिया (उपा मुनि भरतसागरजी की जन्मभूमि) गये जहाँ आचार्यश्री का चातुर्मास था। पू गुरुदेव को सारी परिस्थितियो से अवगत कराया और इन्दौर पधारने का आग्रह किया।

इन्दौर तक विहार करते हुए आने का जो मार्ग निश्चित हुआ था वह करीब ६०० किलोमीटर था। अत २५ से ३० किलोमीटर प्रतिदिन विहार किया जाये तो ही पचकल्याणक के पहिले महाराजश्री इन्दौर पधार सकेंगे। इस समय सघ मे ११ मुनि व २० आर्यिका, क्षुल्लक व क्षुल्लिका आदि कुल ३१ पीछी का संघ था। संघ में अधिकाश बहुत बुजुर्ग थे। कुछ का स्वास्थ्य अत्यन्त खराब था, कुछ को चलने मे ही बड़ी कठिनाई होती थी। ऐसी स्थिति मे २५-३० किलोमीटर प्रतिदिन पदयात्रा करना असम्भव-सा लगता था, किन्तु १०८ उपाध्याय मुनिश्री भरतसागरजी महाराज एव आर्यिका माताजी स्याद्वादमतीजी आदि का इन्दौर पधारने का पुरजोर आग्रह था। पाटोदी जी ने महाराजश्री से इन्दौर पधारने की स्वीकृति प्राप्त कर ली। निरन्तर दो माह तक आचार्यश्री व मुनिसघ के सान्निध्य मे सेवा करने का महान शुभ अवसर मुझे प्राप्त हुआ। इस कार्य मे इन्दौर के श्री कमलकुमार डोसी एव समाज के गणमान्य महानुभावो ने पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

प्रसिद्ध अतिशय क्षेत्र अन्देश्वर पार्श्वनाथ (लुहारिया से ६० कि मी) पर हम पहुँचे। आचार्य सघ को इन्दौर की ओर ले जाने के लिए उस समय असीम आनन्द की अनुभूति हुई।

एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक मुनि सघ को लाने, ले जाने वालो का तॉंता बना रहता था। जय-जयकार से, भजन-कीर्तनो से गगन गुजायमान होता रहता था। जगह-जगह विशाल धार्मिक सभाओ का आयोजन होता एव कहीं-कही पर विहार मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा देखने का आनन्द भी प्राप्त होता था।

पू महाराजश्री के पास मत्रादि का भडार है तथा अधिकाशत प्रत्येक कार्य के लिए णमोकार मन्त्र के जाप्य विधिवत् करने के लिए प्रेरित करते है।

इन्दौर मे श्री गोम्मटगिरि मे पचकल्याणक के लिए तैयारियाँ हो चुकी थी। हम महाराजश्री के विहार के साथ-साथ चल रहे थे। इन्दौर से करीब ४०-५० किलोमीटर की दूरी पर सघ ठहरा था। आचार्य महाराज ने एकाएक कहा कि भयकर आँधी-तूफान आने वाला है। २ घंटे पश्चात् इन्दौर से समाचार आया कि गोम्मटगिरि पर आँधी-तूफान-वर्षा से कई डेरे तम्बू उखड़ गये हैं, लाइटिंग आदि की व्यवस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गयी है। यह सुनकर हम सब स्तब्ध रह गये किन्तु इन्दौर पहुँचने पर पचकल्याणक के समय महाराज जी ने मंत्र आदि के द्वारा कार्य प्रणाली से जो व्यवस्थाएँ की व आदेश दिये, उनके अनुसार हमने कार्य किया जिससे पचकल्याणक महोत्सव के

वक्त किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नही हुई। सारा कार्य सफलतापूर्ण सम्पन्न हुआ।

यह बात सुनिश्चित है कि आचार्यश्री के दर्शनमात्र से कई तरह की बाधाएँ स्वय ही दूर हो जाती है और परम शान्ति का अनुभव होता है।

मुनि विहार मे एक अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है। चौबीस घटे धर्मध्यान एव बहुत ही शात वातावरण बना रहता है। जीवन मे ऐसे शुभसयोग बहुत ही पुण्य कर्मो के उदय से ही प्राप्त होते है।

आचार्य गुरुवर्य के पुनीत चरणो मे बारम्बार नमन करता हूँ।

जनता उमड़ पड़ी

❑ *मीठनलाल*

प्रात· स्मरणीय आचार्यश्री का मगल चातुर्मास सन् १९८४ मे सघ सहित गिरनारजी सिद्धक्षेत्र पर हुआ। गुरुदेव के सान्निध्य मे रहने का अपूर्व अवसर मुझे वहाँ प्राप्त हुआ।

आचार्य सघ के विराजमान होने से तीर्थभूमि पर मानो चार चाँद लग गये थे। दर्शनार्थियो की सख्या बेशुमार थी। मेरे जीवन में उतने यात्री क्षेत्र पर कभी नही आये जितने कि आचार्यश्री के चातुर्मास मे पधारे।

आचार्यश्री की जयती का समय था। हमने सोचा यहॉ कोई घर जैनियो के है नही, जयन्ती मे आनन्द कैसे आयेगा। बाहर से यात्री आयेगे पर कितने? पर उपाध्याय भरतसागरजी महाराज सदैव कहते रहे-सभी धर्मशालाएँ रिजर्व करा लो। यहाँ जयती पर पैर रखने को जगह नही मिलेगी। मुझे कुछ आश्चर्य-सा लगता रहा, यह सब असभव है। फिर भी उपाध्यायजी की आज्ञा से श्वेताम्बर, वैष्णव सभी धर्मशालाएँ रिजर्व करा ली गई।

जयन्ती का समय आ गया। जनता उमड़ रही थी। सभी धर्मशालाएँ ठसाठस भर चुकी। पैर रखने को स्थान नही। कैसा आश्चर्य! पर इतनी कठिनाई मे भी लोगो के चेहरो पर मुस्कुराहट थी। किसी का एक पैसे का नुकसान नही हुआ। अधिक क्या लिखूँ, वे दिन याद आते ही आज भी आनन्दाश्रु छलछला उठते है। मदिरो के नौकर-चाकर भी यह कहते रहे—"बाबा के पुण्य से हम निहाल हो गये।"

आचार्यश्री दीर्घायु हो। आपके विहार से भारतभूमि का चप्पा-चप्पा हरा-भरा बना रहे, यही मगल कामना है।

संयोग

❑ *महावीर डोसी*

यह सर्वविदित है कि भारत की कुल जनसख्या मे दिगम्बर जैन धर्म के अनुयायियो की सख्या एक प्रतिशत से भी कम है। दि जैन कहलाने वाले ऐसे अल्प लोगो मे भी कुछ हजार लोग ऐसे है जो कि वास्तव मे श्रावक धर्म का पालन करते है। इन श्रावकों मे भी कुछ ही व्यक्ति ऐसे होते है जो कि वास्तव मे ससार से विरक्त होकर ब्रह्मचर्य, क्षुल्लक, ऐलक, मुनि दीक्षा लेकर आत्म-कल्याण के मार्ग पर चलते है। आचार्य से विधिवत् मुनि

दीक्षा ग्रहण करके अनेक परीषह सहते हुए भी आत्म-कल्याण मे रत रहते है।

यह भी स्पष्ट है कि ऐसे महान आचार्यगण मे भी कुछ ही आचार्य ऐसे होते है जो आत्म-कल्याण के साथ-साथ प्राणी मात्र का कल्याण भी करते है, जिनकी शरण मे स्वजनो से ठुकराये हुए अथवा जिन्हें विपत्तियों ने घेर लिया है, ऐसे जीव भी सुरक्षा एव शान्ति प्राप्त करते है। ऐसे महान आचार्यगण की श्रेणी मे आते है सन्मार्गदिवाकर, वात्सल्यमूर्ति, चरित्रसाधक, निमित्तज्ञानी, अतिशय योगी, प्रात स्मरणीय, परमपूज्य आचार्यरत्न श्री विमलसागर जी महाराज।

आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज से मै २४ वर्षों से परिचित हूँ। उस समय आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज और आप ससघ सिद्धक्षेत्र बावनगजाजी (बड़वानी) मे चातुर्मासरत थे। संयोगवश मैं अपनी माँ के साथ वहाँ गया था। उन दिनों हमारी आर्थिक स्थिति ठीक नही थी। तब मेरी धार्मिक वृत्ति से प्रसन्न होकर दोनों बार अपनी छोटी-सी उम्र मे दोनो आचार्यश्री एव सघस्थ साधुवृन्द को आहार दिया था।

फरवरी-मार्च १९८६ मे इन्दौर में गोम्मटगिरि पर भगवान बाहुबली स्वामी पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मे समिति के विशेष आग्रह पर अस्वस्थता की स्थिति में अन्देश्वर पार्श्वनाथजी से कुशलगढ़ व बावनगजाजी होकर समय पर इन्दौर ससघ पहुँचकर जिनधर्मकी रक्षा का जो दायित्व आचार्यश्री ने निभाया है वह कभी भी नही भुलाया जा सकता है।

इन्दौर मे आयोजित गोम्मटगिरि पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की चर्चा हेतु महोत्सव के अध्यक्ष बाबूलालजी पाटोदी, राजबहादुरसिहजी एव अन्य कई समाज के गणमान्य श्रेष्ठी वर्ग नवम्बर १९८५ मे आचार्यश्री के पास ग्राम लोहारिया (राज) गये। प्रसगवश पाटोदी जी ने आचार्यश्री से कहा—''महाराजजी, मै दिन मे एक बार भोजन करता हूँ, होटल का तो प्रश्न ही नही, किन्तु सौगन्ध नही लिए है।''

आचार्यश्री—''आप रात्रि भोजन नही करते, यह अति उत्तम बात है (कुछ समय पश्चात् आचार्यश्री ने कहा कि) पाटोदीजी, आपके गोम्मटगिरि पर बहुत से मजदूर काम कर रहे हैं।''

पाटोदीजी—''जी महाराज।''

आचार्यश्री—''किन्तु वहाँ मजदूरो मे एक मजदूर काम तो रोज करता है किन्तु उसे मजदूरी नही मिलती है।''

पाटोदीजी— आश्चर्य से ''ऐसे कैसे हो सकता है। फिर भी देखूँगा।''

आचार्यश्री—''ऐसा ही है क्योंकि भैया, उसका नाम आपकी लिस्ट मे है ही नही।''

पाटोदीजी—''गुरुदेव! जब उसका नाम ही नही है तो उसे मजदूरी मिलने का सवाल ही नही उठता।''

आचार्यश्री—''अरे! पाटोदीजी, मैं आपके सन्दर्भ मे कह रहा हूँ कि आपने नियम (सौगंध) नही लिये है, आपका लिस्ट में नाम नही तब आपको इसका फल किस प्रकार से मिलेगा?''

पाटोदीजी निरुत्तर हो गये। आचार्यश्री से क्या कहे। इसी प्रकार से कई बार बातो-बातों मे आचार्यश्री ने अपनी वाणी से साधारण दृष्टान्त देकर जैन धर्म के सिद्धान्तों पर हम जैसे अल्पज्ञो को सम्बोधित किया।

इसी प्रकार से एक बार एक महाशय ने आचार्यश्री के पास आकर कहा--"महाराजजी, मैं कुछ समय के लिए जनेऊ लेना चाहता हूँ।"

आचार्यश्री--"क्यो?"

महाशय--"क्योंकि मै आहार देना चाहता हूँ।" (कुछ देर बाद)

आचार्यश्री--"आपकी शादी हो गई?"

महाशय--"जी महाराज, मेरे तो चार बच्चे भी है।" (आश्चर्य से सोचने लगा)

आचार्यश्री--"(मन्द-मन्द हँसते हुए) आपने शादी कितने दिन के लिए की?"

महाशय असमजस मे पड़ गये, बोले--"महाराजजी, शादी तो जीवन में एक ही बार सदैव के लिए होती है।"

आचार्यश्री--"अरे! आपने शादी कुछ दिन के लिए क्यो नही की?"

इतना सुनते ही उस व्यक्ति को अपनी गलती महसूस हुई व अत्यधिक शर्मिंदा भी हुआ।

इस प्रकार गुरुदेव अपनी मनोहर वाणी द्वारा व्यक्ति के दिल मे जैन धर्म के नियमो को भर देते है। ऐसे महान सन्त दीर्घकाल तक हम सबको मार्गदर्शन देते रहे, यही हमारी भावाञ्जली है।

मेरे सुधारक

❑ *अनिलकुमार जैन*

मेरा नाम अनिल कुमार जैन है। मै मेरठ का रहने वाला हूँ। मै एक बिगड़ा हुआ आवारा किस्म का इन्सान था, जिसके कारण मेरे परिवार के सभी सदस्य मुझसे काफी परेशान रहते थे। शराब पीना, सिगरेट पीना तथा तम्बाकू खाना मेरी आदत बन चुकी थी।

आज से पाँच वर्ष पूर्व आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज का ससघ आगमन हुआ। मुझे उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके सयम और त्याग का मुझ पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि मै उनके साथ रहने के लिए व्याकुल हो गया।

उनके सान्निध्य मे रहने के कारण मैने शराब, सिगरेट एव तम्बाकू तथा रात्रि-भोजन तथा समस्त जमीकन्द का आजीवन त्याग कर दिया और उनकी मधुर वाणी सुनकर मेरा मन कमल की तरह खिल उठा।

मेरा जीवन उनके सान्निध्य मे तीन साल बीता। परम पूज्य आचार्य महाराज एव समस्त मुनि संघ के चरणों मे मेरा बारम्बार नमन, शत-शत वन्दन।

पथ-प्रदर्शक

❑ *श्रीपाल जैन*

आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज मेरे जीवन के उपकारक, सत्-पथ प्रदर्शक हैं। आपकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।

विनयांजलि

❑ *सुमेरकुमार जैन*

दिगम्बर जैन मुनि अपरिग्रह एव त्याग की साक्षात् मूर्ति होते है। निर्ग्रन्थ तीर्थंकर परम्परा में मोक्षमार्ग के साधक दिगम्बर मुनिराजो के दर्शन इस भौतिक युग मे होना एक सुखद आश्चर्य ही कहा जा सकता है। मुनिचर्या इस युग मे अत्यन्त ही दुष्कर है। सन्तो का जीवन जनकल्याणकारी होने के साथ-साथ स्व-कल्याण के लिए होता है। स्वान्त सुखाय के साथ बहुजनहिताय की भावना ही मुनियो की रहती है और परम पूज्य आचार्यशिरोमणि १०८ श्री विमलसागरजी महाराज इसकी साक्षात् मूर्ति है। आचार्यश्री ने समय-समय पर धार्मिक अनुष्ठान, विधान, उत्सव आदि कार्यक्रम श्रावको द्वारा करा कर जैन धर्म का प्रसारण करने के साथ-साथ ही युवा वर्ग को धर्म की ओर प्रेरित किया है। ऐसे महान आचार्यवर का अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशन का निर्णय जैन धर्म के मूल सिद्धान्त सत्य, अहिसा, अपरिग्रह, तप, ब्रह्मचर्य आदि का प्रसारण इस युग में करने मे सहायक होगा। इस ग्रन्थ का अध्ययन युवा वर्ग को धर्म की ओर प्रेरित कर जन-मानस को आत्मशान्ति देने में समर्थ होगा। मै श्री विमलसागर जी महाराज के चरणो में अपनी विनयाजलि समर्पित करते हुए जिनेन्द्र भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आचार्यश्री दीर्घायु हों और वर्षों तक सासारिक प्राणियो को धर्म मार्ग-दर्शन करते रहे।

जो मेरे पास है वही विमल के पास भी

❑ *चिन्तामणि बज*

सन् १९६६-६७ की घटना है। मेरे हाथ की अँगुलियाँ हीरे मे लाल दाग साफ करने के तेजाब से जल गई थी जिसका इलाज डॉक्टरो के पास नही के बराबर था। लेकिन मरता क्या नही करता। जैसा भी था, इलाज कराया लेकिन लाभ कुछ नही मिला।

भाग्योदय से मामा आजाद जी (आ महावीरकीर्ति के परम भक्त) के कानों में यह चर्चा पहुँची। उन्होंने आचार्यश्री का स्मरण करते हुए प्रतिदिन गधोदक लगाया। डॉक्टरो का कहना था अँगुलियाँ काटनी होगी। अन्यथा सारे शरीर मे जहर फैलने की आशंका है। पर गुरु-भक्ति के प्रसाद से मात्र णमोकार मत्रोच्चारण पूर्वक लगाये गधोदक से ही अँगुलियाँ ठीक हो गई। सभी डॉक्टर आश्चर्य में पड़ गये।

मामाजी ने बताया—"यह सब गुरु आशीर्वाद से हुआ है।" मुझमे भी आचार्य महावीरकीर्ति जी म के दर्शनो की ललक जाग उठी। मैंने बार-बार जाकर आचार्यश्री के दर्शनों से अपना जीवन कृतार्थ किया।

एक दिन जूनागढ मे आचार्य महाराज से कुछ चर्चा चल रही थी कि यकायक गुरुदेव ने सिर पर हाथ फेरा व बोले—"बेटा चिन्तामणि! मेरे बाद तुझे कोई भी जरूरत पडे तो विमल के पास चले जाना। उसके पास वह सब कुछ है जो मेरे पास है।" उस समय मै कुछ समझ नही पाया।

कुछ महीने बीते, आचार्यश्री की मेहसाना मे समाधि के समाचार सुनकर एकदम हक्का-बक्का-सा रह गया, इतनी जल्दी? यह सब क्या?

काफी समय बीत चुका, मै अपने मित्र के साथ सुजानगढ़ पहुँचा। वहाँ एक ओसवाल परिवार के घर रुका। उन्होंने बताया—"आपके गुरु महाराज दिगम्बर सत सघ सहित यहाँ विराजमान है। आप पहले दर्शन कर आइये, फिर भोजन करिए।"

मै मदिर जी पहुँचा, यहाँ आचार्य सघ विराजमान था। कमरे मे आचार्यश्री के पास भीड की भरमार थी। सोचा-दूर से दर्शन हो गये, अब चल दे। निकल ही रहा था कि नेत्रो से अविरल अश्रुधारा बह निकली, क्यों? सामने दीवार पर गुरुवर्य आ महावीरकीर्ति महाराज सा का चित्र लगा था।

जूनागढ़ मे हुई अन्तिम वार्ता दिमाग मे घिर आई, मन को धीरज दिया, सोचा-ये ही वे विमलसागर होना चाहिए जिनके पास वे सारी निधियाँ है जो इनके गुरु के पास थी।

श्रावको से जानकारी की। आचार्यश्री का नाम, गुरु का नाम। सारा परिचय पूछने पर हमारा अदाज सही निकला। फिर तो निकट से दर्शन की भावना जाग उठी। घटो इतजार के बाद भीड दूर हुई। गुरुदेव के प्रथम व परम शिष्य आ विमलसागर जी महाराज के चरण-स्पर्श का प्रथम आशीर्वाद प्राप्त किया।

आचार्यश्री की वात्सल्यमयी मूर्ति ह्रदय मे विराजमान कर घर पहुँचा। पिताजी, माताजी व भाई कमलजी से सारी चर्चा की। सभी बहुत खुश हुए। मुझे ज्ञात हुआ कि भाई जी तो विद्यार्थी अवस्था से अपने मित्र को साथ लेकर प्रति आठ दिन मे आचार्यश्री के दर्शनार्थ जाते रहे है।

कई वर्ष बीते सुजानगढ़ के बाद फिर मुझे दर्शनो का लाभ लम्बे समय तक नही मिला। करीब १० वर्षों के बाद मैने बम्बई चातुर्मास मे आचार्यश्री के दर्शन किये। उसके बाद तो आचार्यश्री से ऐसी निकटता हो गई है कि ऐसा लगता है—आचार्यश्री तो हमारे ही है। बस अब तो वर्ष मे ३-४ बार दर्शन नही होते तो मन अशात हो जाता है।

मुझे व्यापार मे हानि हुई थी। विचित्र स्थिति थी। मै आचार्यश्री के पास इन्दौर पहुँचा। गुरुदेव से कहना ही चाहता था कि वे स्वय बोले—"घबराओ नही, तुम पर बड़ी भारी तकलीफ आ पड़ी है। हिम्मत से कार्य करना। सत्य से मत डिगना। णमोकार मत्र के ३ लाख जाप करो, सारी विपत्ति किनारा कर जावेगी।"

गुरु आशीर्वाद का फल यह हुआ कि सारी मुश्किले आसान होती गयी और मै निश्चिन्त हुआ। विहार करते समय मै जगह-जगह जाता रहा और महाराजश्री के इतने करीब (निकट) हो गया कि खाते-पीते-सोते, ऑफिस मे व्यापार की बात करते समय एक ही चित्र सामने रहता ।

मेरी अपनी एक तमन्ना थी कि आ महावीरकीर्ति गुरु महाराज का सघ सहित जयपुर मे चातुर्मास कराऊँगा।

पर जब तक वे थे, मै इतना सम्पन्न नही था और न ही महाराज का जयपुर की ओर चातुर्मास के लिए ध्यान ही था, मैं मन की भावनाओ को समेट कर रह गया।

एकाएक मन मे शुभ विचार आया, गुरुदेव नही तो शिष्य का ही चातुर्मास कराकर अपने को कृतार्थ करूँगा। ३-४ वर्षों तक मै आचार्यश्री से चातुर्मास की प्रार्थना करता पर स्वीकृति नही मिली। पर मन मे एक ही तमन्ना विह्वल कर रही थी। मैंने पिताजी व भाई कमलजी तथा उनके मित्र प्रकाशजी गोधा से कहा—"आप लोग बहुत समय से आचार्यश्री के निकटस्थ रहे। आप ही आचार्यश्री से चातुर्मास की स्वीकृति लीजिये।" पिताजी व भाई जी ने धैर्य बँधाया।

एक दिन की घटना है। महाराज जी के पास मै अकेला बैठा था। आँखों मे आँसू थे, मै महाराज सा से अर्ज कर रहा था, "गुरु महाराज। जयपुर चातुर्मास के लिए स्वीकृति दीजिए।"

गुरु महाराज ने कहा—"बेटा। इतनी हठ क्यो कर रहे हो?" मैने कहा—"गुरुदेव, मेरी तमन्ना थी, मैं गुरु महाराज (आ महावीरकीर्ति जी) का चातुर्मास जयपुर कराता पर मै सफल नही हो पाया। अब आप जब जयपुर की ओर विहार कर रहे थे तभी से मैने पक्का निश्चय कर लिया है कि लुहारिया के बाद आपका चातुर्मास जयपुर ही कराऊँगा।" पिताजी ने बताया, चातुर्मास तो फिरोजाबाद हो रहा है, तत्पश्चात् जयपुर १५-२० दिन दर्शन कर आचार्यश्री आगे बढ़ जायेगे।

सकट का पहाड़ ही मानो मुझ पर गिर पड़ा। हिम्मत नही हारा। फिरोजाबाद मे पुन आधी रात को आचार्यश्री के चरण-कमल पकड़कर बैठ गया।

मैंने कहा—"गुरु महाराज, अब तो चातुर्मास की स्वीकृति दीजिए।"

प्रात आचार्यश्री ने बताया—"बेटा। तुम अभी बहुत घाटे मे चल रहे हो, अत जिद न करो।"

मैंने कहा—"गुरु महाराज, यदि आपने स्वीकृति दी तो मै समझूँगा मेरा कुछ पैसा तो उत्तम कार्य मे लगा। बस, एक बार कृपा कीजिए। आपके आशीर्वाद से घाटा पूर्ति अवश्य होगी।"

भगवान भी भक्त का साथ देते है। आचार्यश्री ने सहसा मुस्कुराते हुए स्वीकृति दे दी। मेरी आँखो मे खुशी के आँसू भर आये। खुशी का ठिकाना न था। उस दिन से ऐसा लगा मानो सच्चा खजाना ही मिल गया है, वर्षों की तमन्ना पूरी हुई।

मेरे हृदय मे तो शायद ही ऐसा कोई पल होगा जब आप न हो। खाते, पीते, सोते, चलते, फिरते आचार्यश्री सदैव मेरे हृदय मे रहते है। जो भी इन महात्मा को दिल मे बसायेगा, वह सदा सुखी होगा।

गुरु महाराज दीर्घायु हो। उन्हे शत-शत नमन।
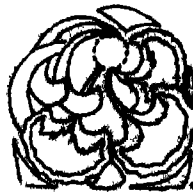
करुणा के सागर

❑ *आनन्दकुमार जैन*

एक आचार्य मे जितने गुण होने चाहिए वे सब गुण एकत्र होकर परमपूज्य प्रात स्मरणीय, सन्मार्गदिवाकर करुणानिधि, निमित्तज्ञानशिरोमणि आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज मे विद्यमान है। महान विद्वान् होने के साथ ही कुशल संघ प्रशासक, शिष्यो एव प्रशिष्यो के प्रति धर्मानुराग, परम वात्सल्यकर्ता, महान तपस्वी एव प्रखर तथा निर्भीक आर्षमार्गानुगामी, समग्र जीवों के प्रति महान कारुणिक एव अदम्य साहस के धनी है वे।

श्री आचार्य महाराज वैद्यक, ज्योतिष शास्त्र के पारगत विद्वान् है। साथ ही, तत्र-मत्र विद्या पर भी अपना आधिपत्य ही नहीं रखते बल्कि कभी-कभी उनका प्रयोग करके सकटग्रस्त, रोगग्रस्त, सघस्थ साधुवर्ग एव गृहस्थ वर्ग का भी बड़ा भारी उपकार दयापूर्वक कर दिया करते है।

मैने सर्व प्रथम महाराजजी के दर्शन सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर, जब नव श्री महाराज की मुनि दीक्षा हुई थी, किये थे। तभी से मेरे ऊपर आपका इतना प्रभाव पड़ा कि मै हमेशा प्रत्यक्ष मे एव अप्रत्यक्ष मे आपके दर्शन करता रहता हूँ।

यह बड़ा सौभाग्य है कि आचार्य महाराज के अभिवन्दनार्थ ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। मै उनके चरणो मे शत-शत वदन करता हुआ विनयाजलि अर्पित करता हूँ।

महान गुरुवर्य

❑ *चैनरूप बाकलीवाल*

यह सत्य है कि जिस पुष्प मे सुगन्ध होगी वहाँ भ्रमर स्वत आकर गुजारव करने लगेगा। आचार्यप्रवर का जीवन ही पुष्प के सदृश है, सयम की सुरभि से सुगन्धित है, ब्रह्मचर्य के ओज-तेज से अनुपूरित है। यही कारण है कि श्रद्धालुजन भ्रमर की तरह स्वत ही आकृष्ट हो जाते है। विशुद्धता के भाव से किए गये महापुरुषो के दर्शन अनन्त-अनन्त भवो की परम्परा के उच्छेद करने वाले होते है। महापुरुषो के दर्शन जीवन मे आत्म-शान्ति देने वाले होते है।

आचार्यप्रवर का सान्निध्य हमे सन् १९५४ से प्राप्त हुआ तथा उनके मगल आशीर्वाद से हमारे जीवन को नित नई दिशा प्राप्त हुई।

मंगल आशीर्वाद

सन् १९५४ मे आचार्यश्री का चातुर्मास ईशरी मे हो रहा था तब आचार्यश्री एव सघ की सेवा, वैयावृत्ति एवं आहार दान आदि देने का सौभाग्य हमारे पिताश्री भँवरलाल जी एव माताजी को होता रहा है। मुझे असाध्य बीमारी हो गई तथा अनेक डॉक्टरो एव वैद्य-हकीमो से इस रोग का उपचार कराया फिर भी ठीक नही हुआ। एक दिन आचार्यश्री का आहार मेरे घर पर हुआ। आहार होने के पश्चात् आचार्यश्री की आरती की तब आचार्यश्री की दृष्टि मेरे शरीर पर पड़ी तथा कहा कि चैनरूप, आज से णमोकार मत्र की २ जाप्य करो। १५ दिन में आपका

रोग दूर हो जायेगा। मैंने जैसे ही महाराज के चरणों में नमस्कार किया कि जो पिस्ती वर्षो से लगी, वह देखते-देखते ही क्षण भर मे समाप्त हो गई तथा वह रोग आज तक पुन. कभी भी नही हुआ। यही है आचार्यश्री का मगल आशीर्वाद कि आज हम आचार्यश्री के चरणो में नतमस्तक है।

निमित्तज्ञान

सन् १९६२ मे पुन पिताश्री के साथ आचार्यश्री के दर्शनों को आया। आचार्यश्री ने कहा कि तुमने जो पहाड़ खरीदा है तथा तुम्हारी जो भावना है, वह तुम्हारे रहते कभी पूरी नही होगी। फिर देखा कि पिताश्री को जो शब्द आचार्यश्री ने बिना पूछे ही कहे थे, वह आज भी स्मरण मे आते हैं। आचार्यश्री वास्तव मे निमित्त-ज्ञान के धनी हैं जो मन की बात भी स्पष्ट रूप से बता देते है।

संयम का प्रभाव

हमारे पिता श्री भँवरलाल जी आचार्यश्री के अनन्य भक्त थे। प्रति वर्ष भाद्रपद मे आचार्यश्री के पादमूल मे आकर धर्म-साधना करते थे। तथा प्रति वर्ष १० उपवास भी करते थे। पिताश्री का वृद्धापन आया तथा साथ ही शरीर में कैंसर जैसे रोग ने पिताश्री पर आक्रमण कर दिया। असाध्य बीमारी मे पिताश्री ने अपने उपवास नहीं छोडे तथा आचार्य श्री के आशीर्वाद से १० उपवास पूर्ण रूप से किए। यही है सयमी के निकट रहने का प्रभाव।

मार्गदर्शक

पिताजी को जब असाध्य रोग ने जकड लिया, स्वास्थ्य प्रतिदिन गिर रहा था, परिवार के सभी व्यक्ति चिन्तित थे। ईडर के डॉक्टरो ने जवाब दे दिया। डॉक्टरो ने कहा कि अब इनको बम्बई ले जाओ। जैसे ही बम्बई जाने का प्रोग्राम बनाया तथा आचार्यश्री से आशीर्वाद लेने गया, जाते ही आचार्यश्री ने कहा—"आप पिताजी को लेकर बम्बई जाओ, आपको किसी भी प्रकार की परेशानी नही होगी, पर इनका समाधिमरण अच्छा एवं पूरे परिवार के बीच मे होगा। यही हुआ। जब बम्बई से हम सुजानगढ पहुँचे वहाँ पर पूरे परिवार के बीच में णमोकार मत्र का जाप्य करते हुए पिताजीने स्वर्ग की ओर प्रयाण किया।

अक्षय भंडार

सन् १९६६ में पू आचार्यश्री का चातुर्मास सुजानगढ़ मे हुआ था। इस चातुर्मास मे आचार्यश्री की जन्मजयन्ती का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर बाहर से आने वाले अतिथियो के भोजन की व्यवस्था हमारी ओर से थी। विशाल जनसमुदाय को देखकर मन मे चिन्ता हो रही थी। कही भोजन कम न हो जाये, इसी चिन्ता से मन व्याकुल था। आचार्यश्री ने मेरे मन की स्थिति को जाना, और कहा कि चिन्ता नही करो सब ठीक हो जायेगा और हुआ भी यही कि ५ हजार अतिथियो की भोजन सामग्री मे २० हजार से अधिक बन्धुओ ने भोजन किया फिर भी इतनी सामग्री बची रही कि कई दिनो तक पूरे ग्रामवासियो को वह भोजन सामग्री बाँटी गई। यह है आचार्यश्री की पीछी का चमत्कार।

दिव्य दृष्टि

मै तथा मेरे श्वसुर सा रायबहादुर श्री चाँदमल जी पाण्ड्या गोहाटी वाले शिखरजी मे आचार्यश्री के दर्शनार्थ

पहुँचे। आचार्यश्री के दर्शन करने के पश्चात् पाण्ड्या जी ने आचार्य महाराज से अनुरोध किया, "महाराज श्री, भगवान महावीर स्वामी का २५ सौवाँ निर्वाण दिवस प्रभावना के साथ मनाने का है।" आचार्यश्री ने कहा कि आप महासभा के अध्यक्ष हो, यह बात सही है। आप को समाज सुधार के बहुत काम करने है किन्तु आप सब काम बन्द कर आत्म-सुधार करो, जीवन थोड़ा है, तथा आप जिस लक्ष्य को लेकर चल रहे हो, निर्वाण महोत्सव का आयोजन देख नही सकते। हुआ यही कि राय सा. गोहाटी पहुँचे कि अचानक उनका स्वर्गवास हो गया। यह है आचार्यश्री की दूर दृष्टि। आचार्य विमलसागर जी का सम्पर्क ३५ वर्षो से बराबर मिल रहा है। आपकी वचनसिद्धि तो ऐसी है जैसे कि पत्थर की लकीर।

इन गुणो के सागर, निमित्तज्ञानी, वचन सिद्धि साधना के केन्द्र आचार्य विमलसागर जी के चरणो में शत-शत नमन।

प्रज्ञापुरुष

❑ *गुलशनराय जैन*

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि सन्मार्ग दिवाकर आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य अन्तिम चरण मे है। मुझे आचार्यश्री के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनमे वैदुष्य के साथ ही जो सौम्यता, सहृदयता एव सरलता है, वह साधुजनोचित तथा अनुकरणीय है। प्रज्ञापुरुष इन मुनिराज के व्यक्तित्व मे एक अनुपम आकर्षण तथा आध्यात्मिक विकास का अतुलनीय उत्कर्षण है। पूज्य मुनिवर विश्व के शीर्षस्थ तपस्वियो में से एक है। मै मुनिराज के चरणकमलो मे सादर नमोस्तु करता हूँ तथा अभिवन्दन ग्रन्थ-समिति को धन्यवाद देता हूँ, जिसने उनके तप सौरभ को दिग्दिगन्त तक बिखेरने का दृढ सकल्प किया है।

ममता की मूर्ति

❑ *सुशीलादेवी जैन*

माँ की ममता जगत् प्रसिद्ध है किन्तु माँ की ममता प्राय अपनी सन्तान के प्रति ही केन्द्रित होती है। परम पूज्य करुणामूर्ति आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज की ममता व दया के पात्र विश्व के सभी प्राणी हैं। निर्बाध रत्नत्रयाराधना के साथ-साथ वे प्राणी मात्र के कष्ट दूर करने मे सतत रत रहते है। ऐसी अनुपम विभूति के चरणो मे कोटिश नमन करती हुई मगल भावना करती हूँ कि आचार्यश्री दीर्घकाल तक इसी प्रकार स्व-पर-कल्याण मे रत रहकर विश्वशान्ति का मार्ग प्रशस्त करते रहे।

प्रकाश-स्तंभ

❑ अविनाश जैन

आचार्यश्री का व्यक्तित्व महान है, आप सदैव आत्मोत्थान हेतु तत्पर तो रहते ही है किंतु आपके आशीर्वचनो व सदुपदेशों को अपना कर व्यक्ति अपना भी चरित्र निर्माण कर आत्म-विकास कर सकता है। आचार्यश्री ने सघ सहित नगर-नगर, गाँव-गाँव विहार कर, परिभ्रमण कर जो धर्म-प्रभावना की है, वह अद्वितीय है। भगवान महावीर की दिगम्बर परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए प्रेरणा के रूप मे आप प्रकाश-स्तभ है।

श्रमण संस्कृति के संरक्षक

❑ चक्रेशकुमार

अब तक महाराजजी लगभग डेढ लाख से अधिक लोगों को मास भक्षण आदि का त्याग करा चुके है।

ऐसे परोपकारी सद्गुरु इस वर्तमान काल मे बहुत कम मिल पाते है जो स्वय चारित्रिक भूमिका पर आरूढ होकर गिरो को उठाने मे और उठे हुओ को धर्म का मार्ग दिखाने मे हमेशा विरत रहते है। धर्म की आधारशिला इन्ही पूज्य सन्तो से टिकी है और अपने मे जीवन्त है।

श्रमण सस्कृति मे साधु का विशिष्ट स्थान है। ये ससार सागर मे डूबते जीवो के उसी प्रकार सहारे होते है जैसे भटके हुए निशा-यात्री के लिए आकाशदीप। आचार्यश्री उन दुर्लभ महापुरुषो मे है जिन्हे वीरप्रसूता भारत जननी युगो बाद जन्म देती है।

जैन साधुओ के जीवन मे उपसर्ग-सहन का बहुत ही महत्त्व है। यही वह महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है जो जैन मुनियो को आत्मोन्मुख कर मोक्ष पथ की ओर अग्रसर करती है। निश्चयनय के धारक सम्यक्दृष्टि साधु जब निर्विकारभाव से उपसर्गो को सहन करते है तो अतिशय का प्रकट होना स्वाभाविक है। आचार्यश्री का जीवन घोर उपसर्गों और अतिशयो से युक्त है। यही कारण है कि हर साधु, त्यागी, व्रती एव श्रावक हृदय आपके श्रीचरणो मे स्थान पाने को सदैव लालायित रहता है। जिन्हे आपके चरणो मे स्थान मिल जाता है उन्हे नवनिधि एव समस्त सिद्धियाँ स्वयमेव प्राप्त हो जाती है।

धर्मप्रभावक एवं निर्द्वन्द साधुराज

❑ जम्बूकुमार जैन

परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज को कौन नही जानता। आपने आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी के पदचिह्नो पर चलकर भव्यात्माओ को अपने कठोर तप के माध्यम से एक दिव्य दृष्टि प्रदान की है एवं आत्म-विकास का मार्ग प्रशस्त किया है। ऐसे महात्माओं का अभिवन्दन हमारी अपनी श्रद्धाभिव्यक्ति का एक आधार व निमित्त बनता है। आचार्यश्री का जीवन एक जागृत चेतना का प्रतिबिम्ब है। जैन श्रमण सस्कृति के सजग प्रहरी, परम वीतरागी,

निस्पृही, जैन समाज की अनुपम विभूति के पाद-पद्म मे हृदय की अगाध भक्ति के साथ शत-शत वन्दन करता हूँ। मैं भगवान जिनेन्द्र से प्रार्थना करता हूँ कि आप दीर्घायु हो तथा हम लोग आपकी सन्निधि मे आत्म-कल्याण करने की ओर अग्रसर हो।

शिष्यानुग्रह-कुशल

❑ *प्रेमचन्द्र जैन*

परमपूज्य प्रात स्मरणीय, ज्योतिर्विद, चारित्रचक्रवर्ती, आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज, जिनके श्री आगमन की सूचना मात्र से ही प्राणियो के हृदय-कमल खिल उठते हो, जिनके नगर-प्रवेश के समय से ही समस्त भक्त जीवो के हृदय मे धर्म की अजस्र धारा बहने लगती हो, जिन्होने कितने ही भव्य जीवो का कल्याण किया हो, जिनके समक्ष राजा-रक, अमीर-गरीब, शत्रु-मित्र का भेद-भाव न हो, जो सब पर सदा-सर्वदा वात्सल्य दृष्टि रखते हो, ऐसी महान आत्मा की यशोगाथा लिखना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। वर्तमान मे आप समाज के सबसे वरिष्ठ आचार्य है। मेरा व मेरे परिवार का इनसे सन् १९६० से परिचय है।

आपका निमित्तज्ञान भी अति निर्मल है। मनुष्य के मुख को देखकर ही उसके अन्त करण मे घुमड़ती भावनाओ का आप सहज ही अनुमान लगा लेते है और तत्सम्बन्धी आपके कथन सत्य होते है। अपने इस गुण से आपने हजारो नर-नारियो को असीम कष्टों से मुक्ति प्रदान की है। यही कारण है कि आपके चहुँ ओर सदैव एक मेला-सा लगा रहता है।

'शिष्यानुग्रहकुशल' गुण से युक्त आचार्यश्री के कोमल स्वभाव एव करुणार्द्र हृदय मे शिष्यो के सवर्धन एव सरक्षण करने की अभूतपूर्व क्षमता है। आपने अनेक व्रतीगणो को ब्रह्मचारी, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ऐलक, आर्यिका एव मुनि दीक्षा प्रदान की है। आप अपने समस्त शिष्यो को ज्ञान-ध्यान तथा तप मे लीन रखते हैं।

परोपकार आपका विशेष गुण है। आपने अब तक हजारो व्यक्तियो को शुद्धजल के नियम दिलाये हैं। अनेक मासाहारियो को आप व्रती-सयमी देखना चाहते है। छोटे-छोटे व्रतो द्वारा भी प्राणी मात्र के कल्याण की भावना आपके हृदय मे कूट-कूट कर भरी है। आपकी वाणी मे मिश्री-सा माधुर्य, दृष्टि मे आकर्षण शक्ति तथा व्यवहार मे अनोखा जादू भरा है।

७५ वर्ष की अवस्था होने पर भी आप मे रचमात्र प्रमाद नही है। आप रात्रि मे मात्र तीन घण्टे की नीद लेते है तथा वह भी ध्यानस्थ मुद्रा मे। अपने दैनिक षट् आवश्यक कार्यों मे जरा भी शिथिलता नही बरतते। आपने चारित्र शुद्धिव्रत तथा अन्य कई व्रतो को पूर्णता दी है। आप प्रत्येक चातुर्मास अवधि मे एक दिन आहार तथा एक दिन उपवास अर्थात् ४८ घण्टे बाद आहार लेते है। वह भी बिना किसी अन्तराय के सम्पन्न हो तब। इन उपवासो के अतिरिक्त अन्न का त्याग तो आप अनेक बार काफी लम्बी अवधि के लिए कर चुके है। अपनी अभूतपूर्व त्याग एव सयम की क्षमता से आचार्यश्री एक इतने बड़े सघ को सगठन देकर देश और समाज का कल्याण कर रहे है।

अनेक धार्मिक सस्थाएँ, चैत्यालय, मन्दिर, स्वाध्यायशाला, औषधालय एव धर्मशालाएँ आपके उपदेश एव प्रेरणा से अनेक स्थानो पर स्थापित की गई है, जिनके माध्यम से वर्तमान मे अनेक भव्य प्राणी पुण्योपार्जन कर रहे है। गुनौर मे जैन पाठशाला, टूडला में औषधालय, श्री सम्मेदशिखरजी पर भव्य समवसरण और राजगृही मे आचार्य महावीरकीर्ति सरस्वती भवन आज भी आपकी यशोकीर्ति गा रहे है। आपने कई पचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ कराई है जिनका वर्णन लेखनी से बाहर है। आपके सोनागिर चातुर्मास अवधि मे आपकी प्रेरणा से क्षेत्र मे एक विद्यालय की स्थापना की गई है तथा पर्वत पर चन्द्रप्रभ भगवान के मन्दिर के बाह्य प्रागण मे बाहुबली स्वामी की मूर्ति के दोनों ओर नग एव अनगकुमार मुनियो की मूर्तियाँ स्थापित की गई है एव कमेटी के पास एक विशाल सरस्वती भवन तथा सभा-भवन का निर्माण हुआ है। यही कारण है कि आचार्यश्री को जैन समाज की आध्यात्मिक सम्पत्ति कहा जाता है।

आपके माध्यम से समाज और राष्ट्र का बहुत कल्याण हो रहा है। आपने जन-जन मे व्याप्त भ्रान्तियों को बड़ी ही सहृदयता से दूर कर अनेकानेक प्राणियो को आत्म-कल्याण के सन्मार्ग में लगाया है। ऐसे विद्वान् तपस्वी आचार्यरत्नश्री चिरायु हो, यही मगल कामना है।

महान विभूति

❑ *पदमप्रसाद जैन*

यह भारत भूमि रत्नगर्भा, रत्नप्रसूता अनेकानेक महान विभूतियो, महात्माओ, महापुरुषो की जन्म-स्थली है। यहाँ की सुख-समृद्धि परम-पवित्र महापुरुषों की सुगन्ध से तथा उनके द्वारा सस्पर्शित पावन-पवन से ही फलती फूलती रही है।

प्रात स्मरणीय आचार्य श्री विमलसागर जी की हीरक जयन्ती पर उनके द्वारा कृत पुण्यश्लोक कार्यो के प्रति श्रद्धावन्त उनके मगलमय आशीर्वाद की कामना से उनका भावात्मक अभिनन्दन करता हूँ।

भावना है, सहस्रो धर्मनिष्ठ श्रावको को उनका मगल आशीर्वाद प्राप्त होता रहे।

अभिवन्दना

❑ *त्रिलोकचन्द कोठारी*

सन्मार्गदिवाकर आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के हीरक जयन्ती महोत्सव के परम पवित्र अवसर पर अभिवन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन के सबध मे सूचना प्राप्त कर अति प्रसन्नता हुई।

आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ज्ञान, त्याग, सरलता, तप, समता, क्षमा, श्रेष्ठ चारित्र की प्रतिमूर्ति हैं। आचार्यश्री के प्रवचन हर आत्मा मे अमिट प्रभाव अकित कर देते है। आपकी कीर्ति सम्पूर्ण भारत मे समायी हुई है। आपने समस्त भारत का भ्रमण कर घर-घर मे ज्ञान की ज्योति जगायी है।

पिछले २५-३० वर्षों से मुझे व कोठारी परिवार को उनके सान्निध्य मे अनेक स्थानो पर बड़े-बड़े विधान

व अन्य कई कार्यक्रमो के क्रियान्वयन का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। सघ के साथ पदयात्राओं मे भी हमारा परिवार भाग लेता रहा, यहाँ तक की विदेश-यात्रा मे भी (उनके द्वारा प्रदत्त शातिनाथ भगवान की मूर्ति के साथ) हमारे संघ को धर्म-प्रचार व शान्तिपूर्वक यात्रा सम्पन्न कराने का उनका हमे मगल आशीर्वाद मिला है।

महासभा के लिए पिछले ८-९ वर्षो मे जो मार्गदर्शन व मगल आशीर्वाद आचार्यश्री ने समय-समय पर प्रदान किये है, उनसे महासभा गौरवान्वित हुई है। अनेक कठिन व दुर्गम कार्य उनके सरल सौम्य व सहज भाव से बताये हुए रास्ते पर चलकर सफल होते रहे है।

सघ-सचालन का व भक्तो की शका-समाधान का जो मधुर व्यवहार उनके द्वारा हो रहा है, उसके प्रभाव से ही पूरे भारत मे उनके जन्म-जयन्ती महोत्सव पर अपार जन समुदाय उनके मगल आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए, जहाँ भी उनका चातुर्मास होता है, कितने उत्साह से आता है, यह दृश्य अन्य कही देखने को नही मिलता।

आचार्यश्री के हीरक जयन्ती महोत्सव पर मेरी शुभ कामनाएँ समर्पित है। वे दीर्घायु हों और युग-युगान्तरो तक उनका नाम अमर रहे, यही वीर प्रभु से प्रार्थना है।

श्रद्धा-भक्ति-सुमन

❑ *जयकुमार जैन छाबड़ा*

परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज परम तपस्वी, शान्तिमूर्ति, जैन सिद्धान्तो के प्रतिपालक एव इस कलिकाल में जैनधर्म की प्रभावना के पुज है। उनका पठन-पाठन मे समय व्यतीत होता है व सघ के साधु-साध्वियो पर कडा नियत्रण तथा आत्म-कल्याण के साथ-साथ जैन धर्म के प्रचार व प्रभावना का लक्ष्य रखते है। ऐसे आचार्यश्री को शत-शत वन्दन।

जयपुर जिले मे पदमपुरा अतिशय क्षेत्र मे सम्पन्न होने वाले प्रथम पचकल्याणक के समय प्रथम बार गुरुदेव के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। जब पदमपुरा के तत्कालीन मत्री श्री भँवरलाल जी न्यायतीर्थ, स्व श्री चौथमल जी नाँवावाले के साथ आचार्यश्री को पदमपुरा पधारने हेतु निमत्रण देने गया था तब वह जयपुर, अजमेर रोड पर स्थित ग्राम दूदू मे विराजते थे। पूज्य आचार्यश्री को पचकल्याणक मे पधार कर उसे सम्पन्न कराने हेतु निवेदन किया। उस समय उत्सव के प्रारम्भ होने मे ७-८ दिन का समय ही रह गया था। आचार्यश्री ने स्पष्ट मना कर दिया कि इतने से समय मे सघ का इतनी दूर पहुँचना सम्भव नही है, आप लोगो को समय रहते आना चाहिए था।

आचार्यश्री से निवेदन किया कि पचकल्याणक महोत्सव मनाने का निर्णय थोड़े समय पूर्व ही हुआ है अतएव निश्चय ही आपके समक्ष उपस्थित होने मे विलम्ब हुआ है। अन्य व्यवस्थाओं में भी व्यस्त रहे। आचार्यश्री ने स्वीकृति नही दी।

मुझे स्मरण है, मैने निवेदन किया कि यदि आचार्यश्री इस अवसर पर नही पधारते है तो हम उत्सव को ही स्थगित कर देगे और जब भी आचार्यश्री पधारेगे तब ही करेगे। उत्सव स्थगित करने के पर्चे आज ही वितरित

कर देगे।

आचार्यश्री ने ४-५ मिनट मौन रखकर विचार किया। तत्पश्चात बोले—"शुभ कार्य को टालना नही चाहिए। एक बार स्थगित करने के पश्चात् दुबारा प्रारम्भ करने मे कई विघ्न-बाधाएँ आती है। आप लोग साहस रखकर इस कार्यक्रम को करो, सब ठीक होगा। मै भी समय पर पहुँचने का प्रयास करूँगा।" गुरु महाराज ने बताया- "काम में विघ्न-बाधाएँ आयेगी। परन्तु डरने की बात नही। सब दूर हो जायेगी। डेरे मे आग भी लग सकती है, ध्यान रखना।"

मैंने निवेदन किया—"गुरु महाराज की उपस्थिति मे किसी प्रकार के विघ्न आ ही नही सकते और यदि आते हैं तो शान्त हो जायेंगे। हमारी दृढ़ धारणा व विश्वास है।"

अत्यन्त हर्ष हुआ, समारोह के गर्भकल्याणक के प्रथम दिन प्रात आचार्यश्री का ससंघ आगमन हुआ। उन्हें शिवदासपुरे की सड़क से ४ किलोमीटर बाजे-गाजे सहित लेकर आये। भारी सख्या में स्त्री-पुरुष थे। उनके जयकारो से आसमान गूँज रहा था। आचार्यश्री ने कहा—अब तो आप लोग खुश है। चरणो मे पड़कर सभी ने निवेदन किया—"आचार्यश्री, हमारा जीवन सफल हो गया, हमारी सब चिन्ताएँ मिट गई।"

आचार्यश्री के दर्शन के पश्चात् उन्होने नव मन्दिर एव उत्सव कार्यक्रम की व्यवस्था गौर से देखी। कुछ परिवर्तन भी किया मगर उन्हे सन्तोष नही था। उन्होंने उत्सव के निमित्त रखी गई मूर्ति के चारों ओर अपनी ओर से मन्त्रादि के उच्चारण के साथ ही व्यवस्था दी।

महोत्सव बड़ी शान से सम्पन्न हुआ। कुछ विघ्न भी आए परन्तु दूर हो गए। महाराजश्री के बताए अनुसार डेरे मे अग्नि लगी। दो तम्बू के कुछ भाग जले और समय रहते उन पर काबू पा लिया गया। भारत का माना हुआ आज यह पदमपुरा क्षेत्र है। मंदिर भवन विशाल है। चौबीस छत्री इतनी भव्य बनी हैं कि देखते ही बनता है।

ऐसे गुरु को शत-शत वन्दन। वह चिरायु रहे एव अपने कल्याण के साथ-साथ समाज का उद्धार करते रहे।

विनयाञ्जलि

❑ *मणिलाल जैन*

प्रात स्मरणीय, सन्मार्गदिवाकर, चारित्रचक्रवर्ती, वात्सल्यमूर्ति, तपोनिधि, आचार्यश्री विमलसागरजी दीर्घायु हो इस मगल कामना के साथ उनके पावन चरणो मे शत-शत नमन करता हूँ।

सिहवत् तपस्वी आचार्य

❑ *डॉ. सत्यप्रकाश जैन*

परम ओजस्वी, तेजस्वी, तपस्वी, यशस्वी, वाग्मी, सिहवत् निर्भयाचरण के धारक आचार्यश्री के मगलमय आशीष

की कामना करता हुआ, शतश अभिवन्दन करता हूँ तथा उनके सुदीर्घ सान्निध्य का अभिलाषी हूँ।

चमत्कारी बाबा

❑ *पत्रकार खादीसा.*

भारत वर्ष मे अनेक सत है और अपनी-अपनी योग्यतानुसार हर सत पूजनीय है। ऐसे महान संतों को मेरा नमस्कार है। किन्तु वात्सल्यनिधि, परोपकारी, हजारो नरनारी दुखियो का कष्ट निवारण करने वाले, अमीर-गरीब सबको समानता से देखने वाले, अपने स्थान पर ही विराजते हुए सैकडो हजारो मील दूरी के मन्दिर मे क्या खामी है, यह बताने वाले, सघ के अदर अपने हर शिष्य को पुत्र-पुत्री समान समझकर पिता के समान प्यार करने वाले, यत्र-मत्र-तत्र के महान ज्ञाता, वर्तमान मे दु खी जनो का दु ख दूर करने वाले परम पूजनीय आचार्य विमलसागरजी महाराज के समान चमत्कारी बाबा एव वात्सल्य, स्नेह, प्यार, प्रेम देने वाला सत मैंने नही पाया। यह मै ही नही, हजारो भक्तगण कहते है जिन्होने महाराजश्री के दर्शन किये है। मै उन्हें प्रणाम करता हूँ।

अपूर्व धर्मप्रभावना

❑ *मिलापचन्द पाटनी*

भारतवर्ष सन्तपरम्परा से सुशोभित ऋषि-मुनियो का एक अनुपम देश है। ये ऋषि मुनि नि स्वार्थ भाव से स्वपरकल्याण हेतु जीवो को अपनी अमृतवाणी धर्मदेशना द्वारा कुमार्ग से हटाकर सुमार्ग पर लगाते रहते है। जैन धर्म के महान सन्त आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज की परम्परा मे आचार्यश्री विमलसागरजी भी एक रत्न है। गृहस्थावस्था मे ही आपने अनेको पचकल्याणक प्रतिष्ठादि महोत्सव कराकर पडित पद को सुशोभित किया। बाल्यावस्था से ही धर्मानुराग के फलस्वरूप आप बालब्रह्मचारी रहे।

परम तपस्वी, घोरोपसर्ग विजयी, धीर, वीर, शास्त्रवेत्ता, परमदयालु, परोपकारी, ज्ञानी-ध्यानी, धर्म-प्रचारक, सरलस्वभावी आचार्यश्री के चरण जहाँ पड़ते है वह भूमि तीर्थरूप हो जाती है।

आचार्यश्री के चरण-कमलो मे नमोस्तु करता हुआ, आपकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।

विनयाञ्जलि

❑ *नाथूलाल सेठी*

अदम्य उत्साह, अटूट निष्ठा, आत्मविश्वास एव दृढ़ सकल्प शक्ति के कारण ही आचार्यश्री विमलसागरजी सन्मार्गदिवाकर, धर्मदिवाकर, चारित्रचक्रवर्ती, निमित्तज्ञानी, वात्सल्यमूर्ति के रूप मे प्रसिद्धि को प्राप्त हुए हैं।

ऐसे ऋषिराज दीर्घायु होकर धर्मध्वजा फहराते रहे, इसी मगल कामना के साथ उन्हे शत-शत नमन।

जगती के श्रृंगार

❑ *छोटेलाल जैन*

कहा जाता है कि दिव्य पुरुष विशिष्ट लक्षणों से युक्त होते है। ऐसे ही हमारे आचार्यश्री भी अद्भुत लक्षणों के धारी है।

> आचार्यश्री समता के सागर, करुणा के भडार है।
> सत्य, अहिंसा, दया, प्रेम से जगती के श्रृगार है॥
> मै आचार्यश्री के चरणो मे कोटि कोटि नमन करता हूँ।

विनयाञ्जलि

❑ *डॉ. विनोदप्रकाश जैन*

वात्सल्यमूर्ति, परम तपस्वी, निमित्तज्ञानी १०८ आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के सान्निध्य मे पिछले बीस वर्षो से हूँ। जब आर्यिका नन्दामती माताजी की दीक्षा फिरोजाबाद मे हुई तब एक विशेष आकर्षण मैंने अनुभव किया। आज जो कुछ भी आत्मिक उपलब्धि है उनकी चरण-सेवा का ही महात्म्य है। मेरा उनको बारम्बार प्रणाम।

स्वजेता ही नहीं, विश्वविजेता

❑ *चम्पालाल ठोलिया*

गुरुदेव सघनायक ही नही, विश्वनायक है, स्वजेता ही नही, विश्वविजेता है। उनके पावन-चरणों में शत-शत वन्दन कर उनकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।

महान उपकारी

❑ *सुमतिप्रसाद जैन*

सन्मार्गदिवाकर आचार्यरत्न श्री विमलसागरजी महाराज के उपकारों का शब्दो मे वर्णन नही किया जा सकता। उनके पावन चरणों मे त्रिकाल नमोऽस्तु करता हूँ।

मंगल कामना

❑ *सेवालाल मोतीलाल*

> सूर्य सम तमनाशक उपकारी, गुरुवर के गुण गाऊँ।
> करुणामूर्ति गुरु-चरणो में, नित प्रति शीश नवाऊँ॥

चरण-कमल की 'सेवा' करने, श्रद्धा सुमन किये है अर्पण।
ऐसे गुरु आचार्य विमल के चरणो में है शत शत वन्दन।।

श्रमण संस्कृति के प्रभावक आचार्य

❑ *ताराचंद बगड़ा*

श्रमण सस्कृति के प्रभावक, वीतरागता के पोषक आचार्यश्री दीर्घकाल तक मगल उपदेश देकर भव्यों को सन्मार्ग पर लगाएँ। शतायु हो। शत-शत वन्दन।

वात्सल्य की प्रतिमूर्ति

❑ *अशोक जैन*

मुनि भी अनेक, आचार्य भी अनेक, पर आचार्यश्री विमलसागर जैसे तो विरले ही होते है। वात्सल्य की साक्षात् प्रतिमूर्ति। एक दो, सौ-दो सौ, हजार दो हजार नही, लाखो ऐसे मिल जायेगे जिन्होंने इस वात्सल्य सागर के चरणो मे अमृत-सा प्रसाद पाकर अपने को तृप्त/परितृप्त किया है। जीवन की विषमताओ को मिटाकर आशाओ के स्वर्णिम आकाश की ओर कदम बढाए है। इन महान लोकोपकारी सत-रत्न के चरणो मे सादर सविधि वन्दन। उनका वरद हस्त बना रहे।

प्राणी मात्र के गुरु

❑ *गड़बड़दास बंजीसा*

तपोमूर्ति आचार्यश्री वर्तमान मे महान विभूति है। आपकी धवलकीर्ति करीब ३०-३५ वर्षो से भारतवर्ष मे फैल रही है।

आचार्यश्री से मेरा लगभग ३५ वर्षो से घनिष्ठ सबध रहा है। आप तीर्थभक्त है। आपने अपने जीवन में भारतवर्ष के तीर्थक्षेत्रो की पॉच-पॉच बार चतुर्विध सघ सहित वन्दना की है।

करीब तीस वर्ष पुरानी घटना है। आचार्यश्री विहार करते हुए कुसुम्बा पधारे। उस समय एक हरिजन भाई (नाम- भूता महार) आचार्य श्री के दर्शनार्थ आया।

आचार्यश्री से उसने कहा—''बाबा! कृपा करो। दुखी का उद्धार करो।'' आचार्यश्री ने कहा—''इतवार के दिन नमक नही खाना। चिन्ता नही करो, गॉव के पुढारी (नेता) बनोगे।'' हरिजन ने विचार किया-मै इस गाँव का भिखारी हरिजन, गॉव के अन्दर भी नही रह सकता, गाँव के बाहर झोपडी बनाकर रहता हूँ, रोटी माँगकर खाने वाला. और अब यह पुढारी? आश्चर्य मे पड़ गया।

वह एक बार पुन दर्शनार्थ आया, आचार्यश्री ने पुन कहा—''शका नही करना, तुम्हारे द्वारा बड़ा कार्य होगा।''

हरिजन ने भक्तिपूर्वक मस्तक झुकाया और मद्य, मांस, मधु का त्यागकर बाबा की आज्ञा शिरोधार्य कर, रविवार को नमक का त्याग कर दिया।

समय का प्रभाव देखिये-एक वर्ष ही हुआ होगा। वह हरिजन, गाँव का सरपच चुन लिया गया। जितनी सेवा उसके द्वारा हुई कोई नही कर पाया। हरिजन ने भक्ति व श्रद्धा से आचार्यश्री को स्मरण करते हुए गाँव की सेवा की। आज भी जैन-जैनेतर समाज आचार्यश्री को हर पल याद करता है।

विचित्रता यह है कि पाँच वर्ष की सत्ता के बाद भी वह हरिजन झोपडी में ही रहता है, मकान नहीं बना सका। मर्यादा से रहता है। लिये हुए व्रतो का धैर्यपूर्वक निर्वाह करता है। बाहर से जैन मन्दिर के दर्शन कर भोजन करता है। आचार्यश्री को स्मरण कर प्रतिदिन नमस्कार करता है।

आपके निमित्तज्ञान की जिनती महिमा गाये, थोड़ी ही है। ऐसे परम उपकारी, विश्व कल्याणकर्ता, दु:खहर्ता, नि:स्वार्थी, आत्मध्यानी, महामुनि के चरण-कमलो मे त्रियोगपूर्वक नमोस्तु करता हुआ दीर्घायु की कामना करता हूँ। युग-युग तक आपका धर्मोपदेश जन-जन का कल्याण करे।

परम दयालु

❑ *अतुल कासलीवाल*

परमपूज्य, सन्मार्गदिवाकर, आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज परम दयालु है। प्राणीमात्र के प्रति दयालुता उनके ह्रदय का प्रतीक है। एक आचार्य परमेष्ठी मे ३६ गुण होने चाहिए, वे सभी पूर्ण रूपेण आपमे विद्यमान हैं।

मुझे सोनागिर मे प्रथम बार आचार्य महाराज के सान्निध्य मे रहने का अवसर प्राप्त हुआ। मै प्रतिदिन साय आरती के पश्चात् आचार्यश्री के पास बैठ जाता था। वे मुझे एक माला जाप्य हेतु देते थे। मै जाप करके उन्हें वह लौटा देता था। अचानक एक दिन माला जाप्य करते-करते टूट गई, मै घबराया, अब क्या करूँ, कैसे कहूँ। इस क्षेत्र मे कोई सुधारने वाला भी तो नही है। अत मैने सोचा-महाराज तो करुणा के सागर है। टूटी माला ही दे देता हूँ। महाराज ने इशारे से पूछा-उदास कैसे हो? मैने महाराज को माला देते हुए कहा, "महाराज, माला के मोती बिखर गये, अब क्या करूँ? गुरुवर, मुझे क्षमा कीजियेगा।" महाराज ने तुरन्त इशारे से कहा—"कोई बात नही, जाओ।"

मुझे सही आत्मशान्ति किस रूप में मिल सकती है ऐसे करुणामूर्ति गुरु के व्यवहार ने सिखाया जिससे मेरी आस्था उनके प्रति व धर्म के प्रति और अधिक बढ़ गई।

ऐसे गुरुवर, परम दयालु के चरणो मे, मै अपने मे आत्मज्योति जागृति के लिए प्रतिक्षण नमन करता हूँ, वन्दन करता हूँ। आप युगो-युगो तक हमारे उपकारी रहे।

विनयाञ्जलि

❑ *दिनेशकुमार जैन*

आचार्य श्री करुणासागर है। आप चारो अनुयोग और अनेक भाषाओं के पूर्ण अधिकारी है। आप सदैव ज्ञान-ध्यान में लीन रहते है। आपके इस महान तप के प्रभाव से आपको अनेक ऋद्धियाँ प्राप्त हैं। आपके धर्मोपदेश व धर्म-प्रचार से अनेक जीवो का कल्याण हुआ है और हो रहा है। उपसर्गो को आपने अपनी नियमित साधना के द्वारा दूर कर दिया है। यह आपके ध्यान और तप का ही प्रभाव है। हम वीर प्रभु से मगलकामना करते है कि आप की इस ज्ञानगगा के अमृतजल को हम चिरकाल तक पान करते रहे।

A GUIDE TO THE RIGHT PATH

❑ ***RAVI CHHABRA***

People have given Him the title of Sanmarg Divakar This means the top most person who shows the 'Right Path'

He is the person who will guide you to the Right Direction may it be 'earthly' i e Pudgal or 'spiritual' i e Atm-kalyan It is up to you which guidance you require

It has been my experience that people come for earthly direction and a very few for spiritual guidance But thinking deeply I feel that it should be the other way round

For the success of any task one should have the definite Faith, Belief and Conduct If one is not able to follow it, it is his own fault Even after receiving the Right Direction, it is entirely upto you to follow it or not Wise men follow it and benefit for themselves

It is my appeal to the people to choose the Right Path and get the Right Direction and benefit for themselves from "HIM"

Seeking Your blessings towards the attainment of the Right Path and Right Direction

Shri Sanmarg-Divakaraya Namah

❑ ***Meenu Jain***

There are many hurdles and troubles in the path of 'Moksha' but hardness gives up its hardness in the feed of the saint like Acharya Vimal Sagar Ji Maharaj He is like a sun that shines in the sky with its full warm rays to remove all the darkness of ignorance Every man of world is defeated by 'Moh' but Acharya Shree has so power to defeat such
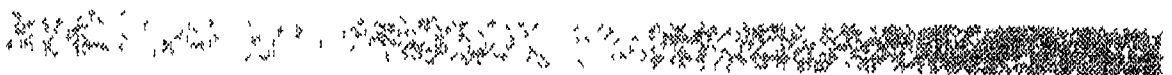
type of moh. Just as a ocean contains many type of pearls in its lap, similarly Acharya Shree contains many acquisitions as-Sanmarg Divaker, Nimitta Jnani, Vatsalya Murti etc.. I have kept desire to achieve such qualities to make my life pure. He may be 'torch Jeep' for me and always shine in the sky like an Immortal Sun

एक सफल साधक

❑ *श्रीपती जैन*

परमपूज्य सन्मार्गदिवाकर धवल कीर्तिधारक, दिगम्बर जैनाचार्य, ऋषिवर श्री विमलसागरजी महाराज वर्तमान की दिव्य विभूति है। उन्होने इस कलिकाल मे दिगम्बरत्व का व्यापक प्रचार कर धर्म गगा को सतत प्रवहमान किया है।

मुझे गर्व है, बल्कि मै भाग्यशाली हूँ कि पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य मुझे उस समय से मिला है जब वे स्वय श्री गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय मुरैना मे प्रखर अध्येता थे। वे मुझसे ज्येष्ठ अध्येता थे और इसीलिए उनका ज्येष्ठवत् अनुराग तब भी मिला, और गुरुरूप मे उनका मृदुल आशीष मुझे आज भी सहज सुलभ है।

मेरे वन्दनीय गुरुदेव पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ने मुरैना मे शास्त्री तक अध्ययन किया और मैने केवल मध्यमा तक। उस समय मैने देखा कि आपकी अध्ययन के साथ राष्ट्रीय खेल कबड्डी मे गहरी पैठ थी और पकड़ अद्वितीय थी। यह एक सुखद सयोग ही है कि छात्र-जीवन मे कबड्डी की अद्वितीय पकड़ के साधक आज मोक्षलक्ष्मी की अटूट पकड़ करने मे सिद्धहस्त साबित हुए है। वे मोक्षमार्ग के सफल साधक बने और मै अभाग्यवश ससार मे लिप्त हूँ।

पूज्यवर मुनिश्रेष्ठ ने अपने अथाह ज्ञान से असख्यात भव्य प्राणियो का कल्याण किया है। वे मोक्षमार्ग के अद्वितीय जीवन्त साधक है, वात्सल्यमूर्ति है, गरिमामडित ज्ञानी तथा उत्कृष्ट तपस्वी है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि वे भवान्तर मे निश्चय से मोक्षगामी होगे। उनकी निर्मल साधना असख्यात भव्य प्राणियो को उन्ही के सदृश बनाये, यही प्रभु से अनुनय है, भावना है, अभिलाषा है।

पूज्यप्रवर सन्मार्गदिवाकर के अभिवन्दन ग्रथ की सयोजना निस्सदेह आज की सबसे बड़ी आवश्यकता की पूर्ति है। यह प्रयास पूर्णत सफल हो, और पूज्य श्री की यशस्वी निर्मल गाथा का दिव्यालोक अज्ञानाधकार दूर करें यही भावना है।

समाज मे आज भी कुछ बातें प्राय प्रश्नवाचक के रूप मे अनुत्तरित लगती है, लेकिन मैं आस्थापूर्वक कह सकता हूँ कि पूज्य प्रवर की जीवन शैली उन सभी प्रश्नो का समाधान है।

नितान्त भौतिकवाद के जजाल में जकड़ा मानव उन घोर विषमताओ के लिए स्वय जिम्मेदार है, जिनके समाधान की उसे कही और से अपेक्षा है। जो दिगम्बर साधक स्वय मर्यादा पुरुष है उसकी मर्यादाओं का आकलन यह

अमर्यादित मन करे जो लोकेषणाओ की विभीषिकाओं मे जल रहा हो, एक विडम्बना ही है। यह ग्रन्थ ऐसे भटके मनों की ज्वालाओ को भी शीतलता देगा, ऐसा विश्वास है।

पूज्यवर, तपस्वीश्रेष्ठ, अध्यात्मयोगी, आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के चरणो मे शतश नमोस्तु, सविनय वन्दन।

शूद्र-जलत्याग बनाम डॉक्टरी इलाज से मुक्ति

❑ *मिलापचन्द अजमेरा*

आचार्य महाराज करुणा के सागर है। पात्रता देखते ही उसे सयम मार्ग मे लगाना इनकी उदारता का प्रतीक है। मैने सन् १९७८ मे सोनागिरजी सिद्धक्षेत्र पर आपके प्रथम दर्शन कर जीवन को धन्य किया था।

चातुर्मास के दौरान एक घटना घटी, आचार्यश्री ने सहसा मेरी ओर इंगित किया,—इधर आओ भले आदमी। हाथ की शोभा किससे होती है?

मैने कहा- दान से।

आचार्यश्री ने कहा- कहते ही हो या करते भी हो?

मैने कहा- गुरुदेव। आपको आहार देना बड़ा कठिन काम है।

आचार्यश्री- कैसे?

मैने कहा- आचार्यश्री। शूद्र जल का आजीवन त्याग कठिन है। मै शरीर से अस्वस्थ रहता हूँ। मानसिक स्थिति भी ठीक नही रहती है। डॉक्टर की दवा लेनी पड़ती है।

आचार्यश्री- बेटा। शुद्ध भोजन करने से मन व शरीर दोनो स्वस्थ रहते है। त्याग से शान्ति मिलती है।

आचार्यश्री का बेटा शब्द बहुत मधुर एव कर्णप्रिय लगा। 'बेटा' शब्द ने मेरे हृदय को पलट दिया। मुझे साहस मिला। मैने तत्काल ही सहर्ष शूद्रजल का त्याग किया। त्याग का ही फल है कि मुझे आज शारीरिक रोग निवारणार्थ डॉक्टर के पास नही जाना पड़ता है और मानसिक शान्ति इतनी मिलती है कि मन धर्मध्यान मे लगा रहता है। आचार्यश्री के चरणो मे मेरा कोटिश अभिवन्दन।

भोले बाबा का आशीर्वाद

❑ *नेमिचन्द लुहाड़िया*

आचार्यश्री के प्रथम दर्शन सन् १९६३ मे ग्वालियर मे मैने प्राप्त किये। गुरुदेव के साथ मन्दिरों के दर्शन का लाभ प्राप्त हुआ। एक दिन सायकाल चम्पाबाग मदिर मे मै आचार्यश्री के चरणो मे जा पहुँचा। सहसा घबराते हुए मैने करबद्ध हो प्रार्थना की—"गुरुदेव! पत्नी बहुत बीमार है, आप रक्षा कीजिये।" गुरुदेव ने तत्काल दवा बताई और कहा, "घबराओ नही, तुम्हारी पत्नी शीघ्र ही अच्छी हो जायेगी।"

कुछ ही दिनो मे पत्नी ने स्वास्थ्य लाभ लिया। आचार्यदेव की कृपा से उसके बाद से कभी भी डाक्टर के पास नही जाना पड़ा। गुरुदेव अकारण वैद्य हैं। तभी से मेरी अटूट श्रद्धा आप पर बनी हुई है।

गुरुदेव के सबंध मे जितना लिखा जाये कम है। वात्सल्यमूर्ति, करुणा सागर, भोले बाबा के आशीर्वाद से ही हमारी जिन्दगी मे शान्ति है, समस्त परिवार सुख शान्ति से रह रहा है। ऐसे बाबा का आशीर्वाद जन-जन को मिलता रहे, यही भावना है।

श्रद्धा-सुमन

❑ *मोतीकुमार गंगवाल*

परमपूज्य निमित्तज्ञानी, चारित्रचूड़ामणि आचार्यवर्य विमलसागरजी महाराज, जिनका सम्पूर्ण जीवन जनसाधारण के हितार्थ बीत रहा है, ऐसे सन्त का अभिवन्दन करने का पुण्य अवसर हमे प्राप्त हो रहा है। पूज्य महाराज का श्री दिगम्बर जैन कुंथुविजय ग्रथमाला समिति को आशीर्वाद प्राप्त है। यहाँ से १५ पुष्प प्रकाशित हुए उसमे से ५ ग्रथो का विमोचन कराने का शुभावसर मुझे प्राप्त हुआ।

आप सौम्य व शान्त मुद्रा के साथ मधुर-मधुर मुस्कान बिखरते रहते है, जिसके कारण दर्शन करने वाले दर्शनार्थी, अपना आधा दुख उसी समय दूर हो गया ऐसा अनुभव करते हैं।

सन् १९८७ मे आपका चातुर्मास जयपुर नगर मे हुआ था। आपके कर-कमलो से हमारे घर पर भगवान धर्मनाथजी की प्रतिमा विराजमान कराने का अवसर प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण सघ सहित आचार्यश्री के मगल आगमन से हमारे घर की रज-रज पवित्र हो गई। हम लोग उसी दिन से देव, शास्त्र एव गुरु की भक्ति मे अपना कुछ समय व्यतीत करने का लाभ प्राप्त कर रहे है।

पूज्य आचार्य महाराज के चरण-कमलो मे श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ तथा वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि उनके आरोग्य रहते हुए दीर्घ जीवन तक उनका सान्निध्य भारत वसुधरा के जैनाजैन प्राणियों को मिलता रहे, जैन शासन की प्रभावना होती रहे।

विनयांजलि

❑ *सुमेरचन्द जैन*

परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज एक महान् तपस्वी, करुणा के निधि, आगम के ज्ञाता और जैन तीर्थों की रक्षा के लिए हमेशा श्रावको को प्रेरणा देने वाले राष्ट्रसन्त हैं। वे वर्तमान समाज के सन्मार्ग दिवाकर और सारे विश्व के चाहने वाले है। ऐसे महाराजश्री को मैं अपनी तरफ से तथा अपने परिवार की तरफ से एवं महासभा परिवार की तरफ से, कार्यकर्ताओ एव सदस्यों की तरफ से श्रद्धापूर्वक विनयांजलि अर्पित करते हुए शत-शत वन्दन करता हूँ और भगवान जिनेन्द्र देव से उनके दीर्घायु होने की मंगल कामना करता हूँ।

मेरे जीवन के सूत्रधार

❑ डॉ. सोहनलाल देवोत

जीव कहाँ से आता है? वह यहाँ विभिन्न स्वरूपो मे क्यो दिखाई देता है? इन विभिन्न स्वरूपो की क्या कोई नियामक शक्ति भी है? इन स्वरूपो मे क्या परिवर्तन के अवसर भी हो सकते है? शान्ति का अर्थ क्या है? इसका उद्गम स्थान कहाँ है? उसे सहज रूप मे कैसे प्राप्त किया जा सकता है? आदि कुछ ऐसे प्रश्न थे जिनके समाधान हेतु मै मुल्ला-मौलवी, साधु-सन्त आदि जो भी मुझे मिले उनके पास अनेक बार गया। इस निराशा मे आशा की एक किरण उस समय अकुरित हुई जब सुना कि वर्तमान समय मे दीन-दुखियों के उद्धारक, वीतराग, सिद्धपुरुष, दिगम्बराचार्य श्री विमलसागरजी ऋषिराज ईडर (गुजरात प्रान्त) मे अपना चातुर्मास कर रहे है। हठात् मै दि ६-८-६७ रविवार दोपहर १ बजे मन मे इष्ट प्रश्नो के समाधान की आशा सजोये उनके श्री चरणो में पहुँच ही गया। उस समय इन महात्मा ने ध्यानावस्थासे अपनी पलक खोली ही थी कि उनकी दृष्टि ने मेरी आँखो मे कुछ पढ़ा और गम्भीर मुद्रा मे बहुत ही शान्त स्वर से कहने लगे, ''अच्छा, तुम मास्टर हो, राजस्थान के रहने वाले हो, शान्ति की खोज मे हो, तुम्हे गुस्सा बहुत आता है, इस पर, विजय प्राप्त करो, एक दिन सही मार्ग पर आ जाओगे।'' इतना कह मन्द-मन्द मुस्कराने लगे।

उनके ओजपूर्ण गम्भीर चेहरे तथा शान्त वाणी से निकले उपर्युक्त वाक्यो ने मेरे मन की परतो पर अकित प्रश्नों की तह को छू लिया था। अब मुझे विश्वास हो चला था कि मेरे प्रश्नो का समाधान यही सिद्ध पुरुष कर सकते है। अस्तु, मै विनम्र शब्दो मे अपने मन मे सजोये एक-एक प्रश्न को उनके सन्मुख रखता गया तथा प्रत्येक प्रश्न का समाधान उसी गम्भीर तथा शान्त वाणी मे मुझे मिलता गया। प्रश्नो के समाधान तो मुझे मिल गये पर मेरे अन्तर मे और अनेक नवीन जिज्ञासापूर्ण प्रश्न पैदा होते गये। प्रश्नो के समाधान तो अर्जित ज्ञान द्वारा सहज ही दिये जा सकते है, लेकिन व्यक्ति के अन्तर मे छिपे रहस्यो को तथा वस्तु व प्रदेश आदि के बारे मे सही-सही जानकारी देना अर्थात् 'मास्टर हो, राजस्थान के रहने वाले हो,, शान्ति की खोज मे हो तथा तुम्हे गुस्सा बहुत आता है' आदि की जानकारी देना एक व्यक्ति के लिए कैसे सम्भव है? क्या इनके पास कोई दैवीय शक्ति है? यदि शक्ति है तो उसे इन्होने किससे तथा कैसे प्राप्त की है? उस शक्ति को क्या मै नही प्राप्त कर सकता हूँ? आदि उठे प्रश्न एक नवीन दिशा-बोध की अपेक्षा रखने लगे। अस्तु, प्रथमत उसी शक्तिसम्पन्न सिद्ध व्यक्ति के सम्मुख समर्पण करना ही युक्तियुक्त समझकर निवेदन किया—''प्रभु! मै आज से आजीवन बीड़ी, सिगरेट का त्याग करता हूँ। गुरुदेव! मै आपका शिष्यत्व प्राप्त करना चाहता हूँ।'' गुरुराज बोले—''अभी भाव रूप समर्पण की ओर ही बढ़ना होगा।'' ऐसी गम्भीर उद्घोषणा के अनन्तर उन्होंने मेरा यज्ञोपवीत सस्कार कर वीरशासन की सेवा हेतु आशीर्वाद प्रदान किया।

गुरु सान्निध्य के सात दिन की अवधि मे, अनेक प्रश्नो का समाधान प्राप्त करने के सौभाग्य ने मेरी जीवन शैली मे परिवर्तन तो किया ही, साथ ही शान्ति तथा शक्ति प्राप्ति की खोजी जिज्ञासु वृत्ति को नये आधार की तृप्ति हुई, जिस पर भविष्य की ठोस आधार जीवन-शैली का महल चीना जाना था। ईडर से निकलते हुए आशीर्वाद स्वरूप गुरुदेव बोले—''बेटा! स्वाध्याय अनवरत करते रहना, यही तुम्हे सही मार्गदर्शन देगा।''

घर लौटने पर विभिन्न ग्रन्थो के माध्यम के फलस्वरूप शान्ति व शक्ति रूप अभेद्य किले का प्रथम द्वार खोलने के दो सूत्र हाथ लगे। अर्थात वयस्क मनुष्य के शरीर मे बिना हड्डी की दो इन्द्रियाँ (रसना इन्द्रिय व लिंग इन्द्रिय) ऐसी हैं जिन पर संयम नर को नारायण बना देता है। अस्तु। गुरुदेव के सम्मुख रसना इन्द्रिय पर सयम हेतु, ५ फरवरी १९६८ से एक बार अन्नाहार तथा रसराज नमक का आजीवन त्याग कर स्वाध्याय में रत रहने लगा।

आचार्यश्री ने मुझे मन्त्रज्ञान से दीक्षित ही नही किया अपितु मन्त्रो के प्रायोगिक पक्ष अर्थात् शक्ति-प्राप्ति हेतु अनेक साधनाओ मे आशीर्वाद के साथ-साथ मार्गदर्शन भी वे अबाध गति से देते है। गुरुदेव के दिशानिर्देश एव आशीर्वाद का ही परिणाम है कि आज मैं सुखाडिया विश्वविद्यालय से 'जैन मन्त्रविद्या एक अध्ययन' विषयपर पी-एच डी हूँ।

इस प्रकार गुरुदेव के सामने भावरूप समर्पण से ही जो कुछ हैं वही अवर्णनीय है तो फिर जो व्यक्ति समरूप समर्पण कर देता है उसे समस्त प्रकार की शान्ति ही क्या महाशान्ति रूप मोक्ष की प्राप्ति होना सहज है। ऐसे मेरे जीवन सूत्रधार गुरु चारित्र-दिवाकर, ऋषिराज विमलसागरजी शतायु होकर धर्म फहराते रहे, इसी मगल कामना के साथ ॐ शान्ति-शान्ति-शान्ति।

हमारे दिशा-सूचक

❑ *मीठालाल दाड़मचन्द जैन*

जब-जब इस धर्म निरपेक्ष भारत मे धर्म की प्रभावना मद हुई है, तब-तब महान पुरुषो ने जन्म लेकर भटके हुए एव मन्द बुध्दि समाज को दिशा दिखाई है। आचार्य विमलसागरजी महाराज एक महान सन्त है जिन्होंने अनेक भव्यो को दिशासूचक यत्र का कार्य कर, धर्ममार्ग, कल्याणमार्ग पर लगाया और लगा रहे है। ऐसे सन्त सदा-सदा जयवन्त रहे।

महान अचल तीर्थ पर चलतीर्थ का निर्माण

❑ *मिश्रीलाल पाटनी*

मुनि सकल व्रती बड़भागी, भव भोगन तै वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिन्तो अनुप्रेक्षा भाई।।

श्री १०८ सन्मार्ग दिवाकर आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ने आज से ३८ वर्ष पूर्व, नंगानग राजकुमारों सहित साढ़े पाँच करोड़ मुनिराज जिस क्षेत्र से मोक्ष पधारे, उसी सोनागिरजी भूमि से स्वय को पवित्र किया। अपने लक्ष्य की शुरुआत की। श्री चन्द्रप्रभ भगवान का समवसरण इस क्षेत्र पर कई बार आया।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान के समवसरण में उनकी दिव्य देशना को ग्रहण करने अनेकानेक राजा, महाराजा, राजकुमार व श्रावक-श्राविक आये, जिन्होनें संसार से विरक्त हो दैगम्बरी दीक्षा ग्रहण कर स्वर्ग व मोक्ष सुख को प्राप्त किया।

इसी स्थल पर ध्यानारूढ़ मुनियो की परीक्षा हेतु देवो ने पत्थर की विशाल शिलाये बरसा कर अनेक उपसर्ग कर, उन्हें डिगाना चाहा किन्तु महान तपस्वी नग व अनग कुमार अपने ध्यान से किंचित् भी विचलित नही हुए। वर्तमान में शिलास्थल पर वह शिला (१० फीट लम्बी, ४ फीट चौडी, २।। फीट मोटी) रखी हुई है। यह बाजनी शिला के नाम से जानी जाती है। शिला बजाने पर ध्वनि देती है। इसके अतिरिक्त अन्य शिलाये भी पड़ी है। आचार्यों व उनके शिष्यो के बैठकर उपदेश देने व ग्रहण करने के प्राचीन स्थल बने है व अनेक ध्यानाध्ययन करने की तैसी हालत मे स्थित हैं। हजारो वर्षो से चल रही तेज झझावात, धूप की लपटें लगने पर भी उनकी दीवारे जैसी की तैसी बनी हुई है। वर्तमान मे ग्रामीण जन अर्द्ध रात्रि मे चन्द्रप्रभ की जयकार की ध्वनि में वाद्य, नाच-गान की ध्वनि सुनते हैं। हजारों वर्ष प्राचीन क्षेत्र ग्रामीण अद्भुत कलामय है और निर्विघ्न रूप से जैसा का तैसा खड़ा भव्यों को आव्हान कर रहा है।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान आठवे तीर्थंकर हुए है। उनके समवसरण मे नग-अनग आदि साढ़े पाँच करोड़ मुनियो ने दीक्षा धारण कर, ध्यान कर, महान उपसर्गों को सहन करते हुए, शुक्लध्यान रूपी अग्नि से कर्मों को भस्मीभूत कर, मुक्ति को प्राप्त किया। इस महान क्षेत्र की महिमा के कारण यह भारत वर्ष मे तीसरा सिद्धक्षेत्र कहलाता है।

पहला सिद्धक्षेत्र कैलाश पर्वत है जहाँ से आदिनाथजी मोक्ष सिधारे। दूसरा सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखरजी है जहाँ से तीर्थंकर मोक्ष पधारे। तीसरा सिद्धक्षेत्र यही है जहाँ से चन्द्रप्रभ भगवान के काल मे मोक्ष पधारे साढ़े पाँच करोड़ मुनि राज।

ऐसे अचल तीर्थ पर आचार्य विमलसागरजी का चलतीर्थरूप निर्माण होना एक अद्भुत सयोग ही कहा जायेगा आचार्यश्री के दीक्षागुरु श्री महावीरकीर्तिजी उग्र तपस्वी तथा ज्योतिष विद्या के विशेष जानकार थे। उन्ही के चरणो में आचार्यश्री विमलसागरजी ने अपने जीवन को अर्पण कर, सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर मुनि दीक्षा ग्रहण की। जब आचार्य श्री की दीक्षा हुई उस समय मै क्षेत्र कमेटी का सदस्य व समारोह का सयोजक था। ठीक ३८ वर्ष पूर्व यह कार्य यहाँ सवत् २००७ मे हुआ था। दीक्षा के पूर्व समय मे भयकर गर्मी हो रही थी। जैसे ही लगोट फेकी, नग्नत्व स्वीकार किया, मन्द-मन्द वायु बहने लगी, बादल झूमने लगे और मेघकुमार देवो ने दीक्षा समारोह मे अपना कर्त्तव्य खूब निभाया। यह दीक्षा दृश्य आज भी नेत्रो के सामने आकर वैराग्य के क्षणो की याद तरोताजा कर देता है।

आपका विहार जहाँ कही भी होता है उस क्षेत्र या स्थान मे या आयतन मे यदि किसी प्रकार की त्रुटी रह गई हो या जिसके कारण क्षेत्र प्रसिद्ध हुआ उन कारणो का अभाव होने पर उनकी पूर्ति करवाना आपका प्रमुख लक्ष्य रहा है।

सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर नग-अनग कुमार मुनि के चरण तो थे किन्तु उनकी प्रतिमाजी नही थी। यह कमी सभी को खलती थी जिसकी पूर्ति सन् १९७९ के चातुर्मास मे आपने विशाल नगानग स्वामी की मूर्ति के पचकल्याणक करवा कर की। इससे क्षेत्र की शोभा बढ़ी है। वर्ष १९८८-८९ के चातुर्मास मे श्री कुन्दकुन्द स्वामी के दो हजार वर्ष पूर्ण हुए। उसके उपलक्ष्य में श्री कुन्दकुन्दाचार्य श्रुतस्तम्भ का निर्माण एव वर्तमानं २४ तीर्थंकरों की शास्त्रोक्त

वर्णानुसार खड्गासन प्रतिमा पर्वत पर विराजमान कराने का कार्य चल रहा है।

जयपुर के सेठ श्री कैलाशजी रॉवका ने ५० जैन भाईयों के साथ पैदल विहार करते हुए, चन्द्रप्रभ भगवान का सुन्दर समवसरण आचार्य श्री के सान्निध्य में पर्वत पर विराजमान किया।

आचार्य श्री के सान्निध्य मे बीसपंथी कोठी का भी जीर्णोद्धार कार्य चल रहा है। पद्मावती पोरवाल, भट्टारक सस्था, मन्दिर आदि मे जीर्णोद्धार का कार्य हुआ है।

इस प्रकार इन सन्त पुरुष के नगर, ग्राम आदि क्षेत्रों में पदार्पण होने से जीर्णोद्धार तथा नव-निर्माण कार्य चलता रहता है, पाठशालाएँ मन्दिर आदि के कार्य सहज रूप से होते है।

ऐसे सन्त के प्रति कमेटी उनकी दीर्घायु की कामना करती है तथा उनके स्वस्थ जीवन की कामना करती हुई अपने आचार्यश्री के समान गुण प्राप्त हो ऐसी भावना करती है।

महान सन्त

❑ *नेमीचन्द्र काला*

प्रात स्मरणीय, सन्मार्ग दिवाकर आचार्यश्री १०८ विमलसागर जी महाराज तप एव त्याग की एक ऐसी महान विभूति है जो स्व के कल्याण के साथ-साथ भव्य प्राणियो के कल्याण की भावना से कार्य कर रहे है। उनके धर्मोपदेश से अनेक प्राणियो को जो लाभ पहुँचा है वह अपने आप मे अद्वितीय है। आचार्यश्री का नाम दिगम्बर जैन आचार्य होने के कारण ही नही, अपितु धर्म समन्वय, सद्भाव और सदाचार को समर्पित एक ऐसे दिव्य शिलालेख के लिए भी प्रसिद्ध है जो शब्दो मे नही, उनका, मौन उपदेश देता है। निश्चय ही यह एक ऐसे प्रकाश स्तम्भ है जो आलोक के दिव्य परमाणु क्षितिज के हर छोर पर बिखेर रहा है। आपका अभिवन्दन तो हर पल हुआ है। धर्म की श्रद्धा ही सम्यक् और समुचित अभिवन्दन है और श्रद्धा उन्हे हर पल प्राप्त हुई है।

अभिवन्दन के इन भावपूर्ण शब्दो द्वारा यही मगल कामना है कि वह दीप युगो-युगो तक समाज व शासन को धर्म का अनुपमेय पाथेय प्रदान करता हुआ सभी प्राणियो को आशीष देता रहे।

ऐसे महान ज्ञानी व तपस्वी सन्त को मेरा कोटिश नमन।

सिद्ध योगी

❑ *जयचन्दराव सरोजकुमार जैन*

भव्यो के उपकारक, षट्कर्मोपदेशक, भवसमुद्रतारक मनस्वी सिद्धयोगी परम पुरुष के चरणो मे त्रिकाल वन्दना करता हुआ, उनके युग-युग तक जीवन्त बने रहने की भावना करता हूँ।

अमृतवाणी

❑ *मोतीलाल मार्तण्ड*

आचार्य विमल के चरणो मे-

सन्मार्ग दिवाकर विमलसत की, गूँजी अमृतवाणी।
भारत के अचल-अचल मे, सुरभित हुई कल्याणी।।
सन्मार्ग दिखाया जन-जन को, अमृत बरसाया करणो में।
विनयाञ्जलि सुमनाञ्जलि अर्पित, आचार्य विमल के चरणो मे।।

चिरायु हो ऋषिराज

❑ *श्रीनिवास राजकुमार जैन*

युग प्रमुख आचार्यश्री वर्तमान समय के प्रमुख धर्मनेता है। आपके चरण सान्निध्य मे हजारो जीवो ने सत्यमार्ग को पाया है। हम आपके ऋणी त्रिधा-त्रिकाल आपकी अभिवन्दना कर, आपके चिरायु होने की मगल कामना करते है।

प्रक्षालित आत्मा

❑ *कल्याणचन्द पाटनी*

परम तपस्वी गुरुदेव ने अपने जीवन का अधिकाश समय उपवासो मे बिताया। चारित्र शुद्धि, सहस्रनाम, तीस चौबीसी आदि व्रतों को कर हजारो उपवासो की श्रृखला से पापकर्मों का प्रक्षालन किया है। आप जैसा तपस्वी इस युग मे दुर्लभ है। हम परम तपस्वी के शतायु होने की मगल कामना करते है। शत-शत वन्दन।

प्रशान्तमूर्ति

❑ *नेमीचन्द जैन*

परम विरागी, प्रशान्तमूर्ति, ध्यानस्वरूपी गुरुदेव इस युग के धर्मप्रभावक महासत है। आपके चरण-कमलो में शत-शत वन्दन कर आपकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।

मेरे निडर साथी

❑ *वैद्य हुकमचन्द*

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली सूक्ति आचार्यश्री के जीवन में पूर्णतया चरितार्थ होती है। श्री

गोपाल दिगम्बर जैन महाविद्यालय मौरेना मे जब आप अध्ययनरत थे उस समय भी आपकी परणति आत्म-कल्याण की रही। पूर्वजन्म की साधना, अवश्य ही मानव पर सस्कार लेकर आती है। विद्यार्थी जीवन में त्यागी व्रतियों की सेवा सुश्रूषा एव धर्मध्यान की तरफ आपका लक्ष्य रहता था तथा सदा ही न्यायसंगत बात आपको पसद थी। विद्यालय में जब आप अध्ययनरत थे उस समय उस कक्षा मे विद्यार्थियों की अच्छी संख्या थी। एक ही कक्षा में लगभग १५ विद्यार्थी पढ़ रहे थे। उस समय यह कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि इन विद्यार्थियों में से कौन-कौन आत्म-कल्याण कर सकेगा। सौभाग्य से नेमीचन्द (कोसमा) आज आचार्यशिरोमणि श्री विमलसागरजी महाराज हो गए। श्री पन्नालालजी भिन्ड मुनिसुव्रतसागर सार्थक नामधारी बने। श्री राजेन्द्र कुमारजी सुपार्श्वसागरजी बन गये। श्री श्यामसुन्दरलालजी फिरोजाबाद आज के मूर्धन्य विद्वानो की अग्रिम पक्ति मे स्थित हैं। इसके अलावा श्री मामचन्द, हुकमचन्द, हजारी लाल, सुनहरी लाल, राजकुमार, साहूकार भगवानस्वरूप, माणिकचन्द (इन्दौर), जगरूप सहाय आदि साथ-साथ ही विद्याध्ययन करते थे। उस समय विद्यालय की शिक्षण व्यवस्था बहुत सुन्दर थी। धर्म, न्याय, साहित्य, व्याकरण, अग्रेजी सभी को पढना पड़ती थी। बोर्डिंग हाऊस में ६०-७० छात्र रहते थे। दिनचर्या प्रात ४ ३० बजे से प्रारभ होकर रात्रि के ९ ३० बजे तक सुचारु रूप से पालन करनी पड़ती थी।

सप्ताह मे एक दिन सामूहिक पूजन होती थी। भोजन व्यायाम एवं खेलने का समुचित प्रबन्ध था। विद्यालय एव बोर्डिंग हाऊस का सारा प्रबन्ध विद्वतरत्न न्यायालकार विद्यावारिधि श्री मक्खन लाल जी शास्त्री के निर्देशन मे था। सिद्धान्त शास्त्री प नन्हेलालजी प्रधानाध्यापक पद पर आसीन थे। विशारद एव शास्त्री कक्षा का धर्म एव न्याय आप ही अध्यापन कराते थे। साहित्य एव व्याकरण का अध्यापन श्री नाथूलाल जी शास्त्री द्वारा होता था। यही कारण था कि उस समय मे विद्यार्थियो की उचित शिक्षा-दीक्षा हुई और योग्य विद्वान भी बने। आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का नाम विद्यार्थी जीवन मे नेमीचन्द था। आपका उपयोग विद्याध्ययन के साथ-साथ धर्मध्यान मे भी विशेष लगता था। अध्ययनकाल मे सचाई की तरफ विशेष ध्यान था। परीक्षाओ मे नकल कभी नही की। अन्य विद्यार्थियों को भी नकल न करने का परामर्श सदा देते रहते थे। सबसे यही कहते रहते थे कि परिश्रम करके पास होना चाहिए जिससे ज्ञान प्राप्त हो। साहस भी अद्भुत था।

एक समय की बात है कि आप कुछ साथियो के साथ साइकिल पर कुवारी नदी की तरफ जा रहे थे। कुवारी नदी पर साइकिल आपके हाथ से छूट गई और नदी के किनारे जहाँ डाकू बैठे थे गिर गई। साथी विद्यार्थी भयभीत हुए कि आज तो मुसीबत आ गई किन्तु आप निडर होकर डाकुओ के पास पहुँच गये। कहा कि हम विद्यार्थी है। गलती से साइकिल हाथ से छूटकर गिर गई है। आपमे किसी के कोई चोट तो नहीं आई? कृपया, हमारी साइकिल हमें दे दो। डाकू मुस्कराये और बोले-देखो तुमने बहुत बड़ी गलती की है लेकिन तुम्हारा साहस देखकर हम प्रसन्न हैं। आगे से ऐसी गलती नहीं करना। लो, अपनी साइकिल ले जाओ। सभी साथिओ को बड़ा कौतूहल हुआ और पूछने लगे कि डाकुओ ने तुमसे क्या कहा। आपने उत्तर दिया कि डाकू मेरी निडरता से प्रसन्न हुए और साइकिल दे दी। हम प्रसन्नतापूर्वक विद्यालय आ गये।

आपके इसी साहस, निडरता, कष्ट सहिष्णुता एव पूर्व जन्म के संस्कारो ने आपको आचार्य के उच्च पद पर आसीन किया है। आचार्यजी के दीर्घजीवी होने की मंगलकामना के साथ उन्हें मेरा कोटिश· नमन!

हमारे प्रेरणास्रोत

❑ *ताराचन्द वैद्य*

परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज वास्तव मे विमल ही है। उनकी सरलता, निर्भीकता, तपस्विता एवं विज्ञता आज दिगम्बर जैन समाज के लिए प्रेरणा के स्रोत है। आज के समय मे जब कि एकान्तवादी लोग दिगम्बरत्व के विध्वस के लिए नित नए पैतरे प्रयोग मे ला रहे है, पूज्य आचार्य एव उपाध्याय ने अपनी निर्भिक वाणी से जैन समाज मे ओज और उत्साह का सचार करके, दिगम्बरत्व की रक्षा और उसके प्रचार-प्रसार के लिए नई चेतना जागृत की है।

आचार्यश्री के गत (जयपुर मे हुए) वर्षायोग एव जन्म-जयन्ती के पावन अवसर पर हमे कुछ समाज सेवा का अवसर मिल सका था। आचार्यश्री के मगल आशीर्वाद से ही अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी की वन्दना हेतु पद-यात्रा करते हुए सिद्धक्षेत्र श्री सोनागिर जी की वन्दना हेतु पैदल गये। वहाँ भी भगवान चन्द्रप्रभ के समवसरण के साथ इस शताब्दी मे धर्म प्रभावना का यह महान् कार्य आप के मगल आशीर्वाद से ही निर्विघ्न पूर्ण हो सका। आपकी इस प्रेरणा को आगामी पीढ़ी युगो-युगो तक याद करती रहेगी। यही नही, अपितु इस प्रकार के मगल कार्यों के लिए उनका मार्ग भी प्रशस्त करेगी।

आचार्यश्री का हमे सदैव मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे और इस प्रकार की धार्मिक पद-यात्राओ मे तन-मन से जुट कर इस मानव-जीवन को सार्थक बना सकूँ यही मेरी कामना है।

मेरी स्वय तथा श्री महावीर दिगम्बर जैन पदयात्रा-सघ के सभी यात्रियो की ओर से वीर प्रभु से यही प्रार्थना है कि आचार्यश्री चिरायु हों और उनकी महती कृपा हम पर इसी प्रकार सदैव बनी रहे।

संघनायक

❑ *पवनकुमार जैन*

सघनायक, आचार्यश्री की हीरक जयती के अवसर पर शत-शत नमोस्तु करते हुए भगवान जिनेन्द्र देव से आपके शतायु होने की प्रार्थना करता हूँ। आपके द्वारा जिनधर्म सतत् प्रद्योतित होता रहे यही भावना है।

गुरुदेव की निकटता

❑ *सन्तोषकुमारी जैन*

विषयाशावशातीतो निरारम्भो परिग्रह ।
ज्ञान-ध्यान-तपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते।।

ससार मे सर्वत्र त्याग व सयम की महत्ता है। इसके परिपालन से जीवन मे सुख व शान्ति की प्राप्ति होती है।

आचार्यश्री रत्नत्रय से सुशोभित हैं। आत्महित के साथ परहित मे सलग्न आप जैसे दयालु संत इस युग में अन्यत्र दुर्लभ हैं।

आपकी निकटता से भक्त जन इन्सान बनने के साथ ही साथ भगवान बनने की कला सीख लेते हैं। मात्र सीख ही नही लेते बल्कि अपने को भगवान बनाने का प्रयास भी शुरू कर देते हैं। जैसे आपके परम शिष्य उपाध्याय श्री भरतसागरजी है जिनकी जिह्वा पर माँ जिनवाणी वास करती है जो जन-जन को प्रभावित करती है। इसी तरह आर्यिका स्याद्वादमती माताजी है जैसा नाम वैसे गुणो की साक्षात् मूर्ति, सघ मे है, जिनकी प्रवचन शैली अति मधुर व रोचक तथा प्रभावक है। यह सब आचार्यश्री की देन है। आचार्यश्री के विशाल सघ में सभी त्यागीगण अपने आत्मध्यान मे सलग्न है।

आचार्यश्री द्वारा लाखो जीवों का उपकार हुआ है। ऐसे दिगम्बर जैनाचार्यश्री विमलसागरजी का अभिवन्दन करना जैन समाज के लिए गौरव की बात है। अभिवन्दनग्रन्थ के माध्यम से दिगम्बर मुनियों की महिमा का जन-जन को परिचय प्राप्त होगा। इसी मगल कामना के साथ आपके दीर्घायु की कामना करती हूँ। आचार्यश्री के चरणो मे कोटिश नमोस्तु।

युग प्रमुख

❑ *अनिल जैन*

जन-जन के हृदय को जीतने वाले युगप्रमुख की मृदु वाणी हमारे कर्णों को निरन्तर पवित्र करती रहे-इसी शुभ भावना से अभिवन्दन करता हुआ आचार्य श्री की शतायु की मगल कामना करता हूँ।

अलौकिक सन्त

❑ *निर्वाणचन्द जैन*

सत्य अहिंसा के प्रतीक आचार्यश्री तीर्थोद्धारक पुण्यपुरुष है। आप जैसा अलौकिक सत इस कलियुग में दुर्लभ है। आपके शतायु की मगल कामना करता हुआ, आपके चरणो की पुन पुन अभिवन्दना करता हूँ।

श्रद्धा-सुमन

❑ *पं. कमलकुमार शास्त्री*

वर्षों पहले, सिद्धभूमि श्री सम्मेदशिखर जी मे पूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का ससघ चातुर्मास होने पर उनके पुण्य दर्शन का सौभाग्य मिला था।

श्रीमान् साहू शान्ति प्रसाद जी जैन (कलकत्ता) की अपरिहार्य कारणो से स्वीकृति नही मिलने के कारण मै उनका गृहपण्डित होने पर भी सघ की सेवा मे अध्यापनार्थ उपस्थित नही हो सका था जिसका मुझे खेद रहा।

फिर भी आचार्यश्री का असीम स्नेह तथा आशीर्वाद सदा मेरे साथ रहा है।

उनकी विद्वत्ता, प्रवचन शैली, तपस्या एव सघ व्यवस्था से मै अत्यत प्रभावित हूँ। अत उनके अभिवंदन ग्रथ के प्रकाशन के शुभ अवसर पर मै सादर कोटिश नमन कर उन्हे अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ।

श्रद्धा सुमनाञ्जलि

❑ *हीरालाल जैन पांडे 'हीरक'*

पूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के दर्शनो का पुण्योदय से अनेक बार लाभ एव आशीर्वाद मिला है। उनके द्वारा जैन दर्शन और धर्म की प्रभावना हो रही है। वे ज्योतिष तथा विद्यानुवाद के भी अद्वितीय आचार्य हैं। उनसे समाज के नर-नारियो का भी हित साधन हो रहा है।

मै उनके 'अभिवन्दन ग्रथ' के प्रकाशन के सामयिक समारोह पर शतायु होने की शत-कामनाएँ लिए कोटिश चरणवदना के साथ अपनी विनम्र सुमनाञ्जली अर्पित कर अपना जीवन धन्य मानता हूँ।

मंगल कामना

❑ *कैलाशचन्द जैन सर्राफ*

भारतवर्ष का इतिहास देखने से पता चलता है कि यहाँ की भूमि अनादि काल से महापुरुषो की जन्मस्थली रही है। महापुरुषों की पदरज से भारत का कण-कण पवित्र माना जाता है। आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ने भारत वर्ष मे विहार कर इस धरा को पवित्र किया है तथा आगे भी करते रहे, यही हमारी मगल कामना है।

मन्त्री हो या सन्त्री

❑ *धन्नालाल पाटनी*

वात्सल्य स्तम्भ-जिनमे प्राणी मात्र के लिए वात्सल्य भरा हुआ है, बाल हो या जवान, अथवा वृद्ध हो या नारी, गरीब हो या अमीर, मत्री हो या सत्री सबको समदृष्टि से देखने वाले है। दीन, गरीब दुखियो पर हमेशा करुणादृष्टि रखने वाले सत सब के शुभचिन्तक, दया की मूर्ति है, जिनका दरबार समवसरण के समान २४ घटे खुला रहता है।

किसी भी सघ का कोई भी साधु, व्रती, ब्रह्मचारी या भक्त आए सबके लिए हृदय मे जिनकी करुणा भरी है ऐसे ही सत सबका भला कर सकते है। जो रात-दिन परमार्थ मे ही जीवन बिताते है, अपनी पीड़ा का ध्यान नहीं रखते हुए दूसरों की पीड़ा का ध्यान रखते है व उसको मिटाने की चेष्टा करते है, मार्ग दर्शन देते है ऐसे ही गुरु वन्दनीय है।

मै अल्पज्ञ, गुरु-गुण का वर्णन नहीं कर सकता फिर भी विमल सिन्धु जैसा गुरु, दयावान्, समतावान्, वात्सल्य

वाला न हुआ और न होगा। श्री जिनेन्द्र देव से प्रार्थना है कि ऐसे गुरु दीर्घायु हों। जब तक सूर्य, चन्द्रमा आकाश में हैं तब तक इनका प्रकाश प्राणीमात्र को मिलता रहे यही मेरी विनयाञ्जलि है।

भारत-भूषण

❑ *राजकुमार सेठी*

परम पूज्य आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज भारत देश के भूषण है। विश्व में उनके गुण गाये जाते है। आचार्यश्री जैसे निरभिमानी, शत्रु-मित्र को समान दृष्टि से देखने वाले, मुनि होना तो और भी दुर्लभ है। ऐसे महान सन्त के प्रति मेरा रोम-रोम श्रद्धावनत है।

महान साधक

❑ *अभयकुमार जैन*

अध्यात्मयोगी श्री विमलसागर जी जैन साधु परम्परा की उन दिव्य विभूतियो मे से एक हैं जिन्होंने भगवान जिनेन्द्रदेव द्वारा उपदिष्ट पथ का अनुसरण करते हुए, आत्म-कल्याण के साथ-साथ पर-कल्याण को भी अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है। आचार्यश्री ने मानव-कल्याण को अपने जीवन मे प्रमुखता देकर परहित एव परोपकार का एक अद्भुत आदर्श हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया। मै अत्यन्त श्रद्धा के साथ उनके चरण युगल मे विनयाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

वन्दनाञ्जलि

❑ *सुरेन्द्रकुमार जैन*

धर्म मानव जीवन की सुख-शान्ति का कल्पवृक्ष है। मनुष्य की सेवा, संसार की भलाई और प्रत्येक जीव के प्रति करुणा, धर्म का मुख्य स्वरूप है। साधु सत धर्म के द्वारा जन-जीवन को सुखी एव शान्तिमय बनाने का प्रयत्न करते है। इसी श्रृखला मे पूज्य आचार्य विमलसागर जी महाराज का योगदान अभूतपूर्व है। मैं आचार्यश्री के चरणों में वन्दनांजलि समर्पित करता हूँ।

दिव्यात्मा को शतशः नमन

❑ *उम्मेदमल पाण्ड्या*

परमपूज्य वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज देश की उन महान विभूतियो मे से हैं, जिन्होंने आत्म-कल्याण हेतु त्यागमार्ग को अपना कर धर्म का एक आदर्श स्वरूप समाज के सामने प्रस्तुत किया है।

आप सम्यक् आचरण एव मुनिचर्या का पूर्णत निर्वाह करते हुए आत्मशुद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करने मे जिस सयम और साधनापूर्ण जीवन का निर्वाह कर रहे है वह सर्व विदित है और इसका जो समाज पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है उसे कभी विस्मृत नही किया जा सकता।

आचार्यश्री के दर्शन मात्र से मन आह्लादित हो उठता है और तृप्ति का आभास होता है। ऐसी महान दिव्यात्मा को शत-शत नमन करते हुए उनके चरणारविन्द मे श्रद्धा-सुमन सविनय समर्पित है।

प्रात:स्मरणीय

❑ *हरकचन्द सरावगी*

वर्तमान में महाव्रतियो के नायक, परमपूज्य १०८ आचार्य विमलसागर जी महाराज की ७५ वी जन्म जयन्ती के अवसर पर धर्म के साकार स्वरूप वात्सल्यमूर्ति महाराजश्री को शतश नमन करता हुआ, उनकी धर्मामृत रूपी स्नेह दृष्टि सतत् प्राप्त होती रहे, ऐसी वीर प्रभु से कामना करता हूँ।

आचार्यश्री के दृढ चारित्रिक गुणो से त्यागीवृद एव गृहस्थ जैन अपनी आत्मोन्नति की ओर अग्रसर हो और समाज तथा देश को आपका सदुपदेश मिलता रहे-यही वीर प्रभु से कामना करता हूँ।

शान्ति के सन्देशवाहक

❑ *लक्ष्मीचन्द 'सरोज'*

आचार्य-प्रवर विमलसागरजी महाराज सही अर्थो मे सन्मार्ग-दिवाकर है, यानी धर्म का श्रेष्ठ, श्रेष्ठतर, श्रेष्ठतम मार्ग बताने के लिए सूर्य सदृश सक्षम है। भव्य जीव रूपी कमलो को खिलाने के लिए आप दिनकर तुल्य है।

वे विवेक और वात्सल्य के ऐसे स्रोत है जो अहर्निश देश और समाज को विनम्रता और विमलता की ओर बढ़ने की प्रेरणा करते है। उनमे जगल को भी मगल बनाने की क्षमता है। जब कभी उनका वर्षायोग सम्मेदशिखर-गिरनार-सोनागिर सदृश तीर्थ क्षेत्र पर होता है, तब भक्त गण उनसे दुहरा लाभ सहज ही ले लेते है। तीर्थ-दर्शन और गुरु-उपासना कर अहोभाग्य समझते है। वे शान्ति के सन्देशवाहक है। धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रो मे शान्ति के इच्छुक है। वे लौकिक शान्ति की अपेक्षा अलौकिक शान्ति और शारीरिक शान्ति की अपेक्षा आत्मिक शान्ति के पक्षधर है।

जैसे तरुवर, सरिताये, बादल परोपकार प्रधान है वैसे ही आचार्यश्री भी सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रधान है और सभी के लिए मोक्ष-मार्ग सहज स्वभाव से प्रशस्त कर रहे है।

ऐसे संत के चरणो मे मेरा बारम्बार नमन।

जीवन्त प्रतिमा

❑ *पं. विजयकुमार शास्त्री*

वर्तमान समय में आचार्यश्री एक महान प्रभावक आचार्य हैं। आप परम तपस्वी एव शान्तमूर्ति हैं। मत्रवेत्ता और निमित्तज्ञानी के रूप मे आपने महती कीर्ति प्राप्त की है।

श्री मज्जिनेन्द्र महावीर प्रभु से मेरी अहर्निश कामना है कि पूज्य महाराजश्री इसी तरह युगो-युगो तक अहिंसामय वीतराग धर्म की ध्वजा फहराते रहे जिससे विश्व कल्याण पथ पर अग्रसर हो और हम सब मुनिधर्म की जीवन्त प्रतिमा के रूप में आपके दर्शन पाते रहकर सम्यक् चारित्र का पाठ सतत पढ़ते रहे। वस्तुत -

कलौ काले चले चित्ते, देहे चान्नादि कीटके।
एतच्चित्र यदद्यापि, जिनरूपधरा नरा'॥

मुनिमुद्रा

❑ *शिखरचन्द जैन*

श्री १०८ सन्मार्गदिवाकर, वात्सल्यमूर्ति, चारित्रशिरोमणि, करुणा के सागर, आचार्य विमलसागरजी महाराज आगमनिष्ठ परम तपस्वी सत है, जिनकी अतरग एव बहिरग दोनो प्रकार की चर्या महान है। मुनिमुद्रा धारण किये बिना आत्मा का उद्धार नही हो सकता। हमारे बहुत से जैनभाई अज्ञान के वशीभूत होकर मुनियो को नही मानते है, यह उनकी मिथ्या धारणा है। आगम के परिप्रेक्ष्य मे बात समझनी चाहिए। आ कुन्दकुन्द ने लिखा है-

अज्जवि तिरयणशुद्धा अप्पा झायेविसताहि इदत्त।
लोयतियदेवत्त तथचुआ णिबुदिजति॥

कुन्दकुन्द स्वामी ने उपरोक्त गाथा में स्पष्ट घोषणा की है कि आज भी इस कलिकाल मे, रत्नत्रय से शुद्धता को प्राप्त हुए दिगम्बर मुनिराज आत्मा का ध्यानकर, इन्द्रपद तथा लोकातिक देवों का पद प्राप्त करते है। पुन वहाँ से च्युत होकर निर्वाण अर्थात् मोक्षपद प्राप्त करते हैं। इसलिए पचमकाल मे भी मुनिमुद्रा सार्थक है। पूज्यश्री आचार्य विमलसागर जी रत्नत्रय पथ के पथिक है। आर्षमार्ग पर आपकी प्रगाढ़ निष्ठा है। ऐसे महान गुरुदेव के चरणो में श्रद्धापूर्वक शत शत वन्दन।

प्रशान्तमूर्ति

❑ *डॉ. श्रेयांसकुमार जैन*

परमपूज्य जनवंद्य आचार्यरत्न विमलसागर महाराज ने श्रमण शब्दों को यथार्थ में सार्थक सिद्ध किया है, क्योंकि जो शत्रु और बन्धुवर्ग में समताबुद्धि रखता है, सुख-दुख प्रशंसा-निन्दा मे समान है, पत्थर के ढेले और सुवर्ण में जिसकी समान बुद्धि है, जीवन और मरण में जो समता भाव का धारक है, वही श्रमण होता है। "

आचार्यश्री सतत साम्य-भाव पूर्वक जीव मात्र के कल्याण मे तत्पर रहते है। अपने शरीर की चिन्ता न करके करुणावृत्ति से जीव मात्र का उपकार कर रहे है। आप वात्सल्य रस के साक्षात् घट हैं जो प्रत्येक प्राणी को उनसे प्राप्त होता है। ऐसे परम तपस्वी, निर्ग्रन्थ वीतरागी, समतारसी सन्त के पावन चरणो मे विनय-प्रसून समर्पित करते हुए कामना करता हूँ कि शत वसन्तो के सुमनो से सुवासित उनका यशस्वी जीवन हम सबका कल्याणस्रोत बने।

मंगल कामना

❑ ओमप्रकाश जैन

जैन धर्म को जीवन्त रूप प्रदान करने मे आचार्यश्री की धर्म प्रभावनाओ की कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, इससे सभी परिचित है। जैन आचार्यो की परम्परा मे महाराजश्री का स्थान ऊँचा है। आचार्यश्री के दर्शनो का सौभाग्य कई बार प्राप्त कर चुका हूँ।

मुझे आशा है कि यह अभिवन्दन ग्रन्थ धर्म, दर्शन, साहित्य, कला एव सस्कृति के क्षेत्र मे एक सीमाचिह्न (मील का पत्थर) बन सकेगा।

परम पू आचार्यश्री के चरणो मे नमोस्तु अर्पित करता हूँ। आचार्यश्री का मगल आशीर्वाद सदैव बना रहे।

तपोनिधि आचार्य

❑ रमेश जैन सर्राफ

विश्व मे सन्तो की महिमा का अपूर्व यशोगान हुआ है। सन्तो के बिना ससार असार है। सन्तो की आम्नाय मे जैन धर्म का स्थान सर्वोच्च है। आपकी अलौकिक सिद्धियाँ प्रसिद्ध है। ऐसे चमत्कारी तपोनिधि आचार्य विमलसागर जी महाराज के चरणो मे शत-शत वन्दन।

अनमोल रत्न

❑ सोहनलाल सेठी

निर्भय, निडर, अजातशत्रु, रत्नगर्भा भारतभूमि के अनमोल रत्न परम पू गुरुवर्यश्री सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य विमलसागर जी के चरणो मे सादर नमन करता हुआ आपके दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ।

आदर्श सन्त

❑ सुरेश जैन गोटेवाले

परमपूज्य आचार्यश्री श्रमण सभ्यता एव सस्कृति के उन्नायक, जगतोद्धारक आदर्श सन्त है। भारत के विभिन्न

अचलों में धर्म, धर्मायतन, जिनालय, विद्यालय, पाठशाला, आश्रम, गुरुकुल, सरस्वती भवन आदि के सरक्षण तथा संवर्द्धन हेतु समाज एव प्रमुखो को आप से सदैव मार्गदर्शन, दिशाबोध, प्रेरणा तथा नैतिक सम्बल प्राप्त होता रहता है। पू आचार्यश्री गुणाकर, क्षमाशील उदार सन्त है। मेरी भावना है कि आचार्यश्री सुदीर्घकाल तक अपने पावन संदेशो से जनकल्याण करते हुए प्रेरणा व नूतन दिशाबोध देते रहे।

आचार्य परमेष्ठी

❑ *वकीलचन्द जैन*

पचपरमेष्ठी के प्रति श्रद्धावन्त होना स्वाभाविक है। स्वात्मखोजी तपस्वी साधुओ का समागम वास्तव में कठिन है। पचपरमेष्ठी के प्रतीक आचार्यश्री की दिव्यसाधना के प्रति मै नतमस्तक होकर अपनी हार्दिक श्रद्धा व्यक्त करता हूँ।

दिव्य पुरुष

❑ *सन्तलाल जैन*

आचार्यश्री के मगल विहार से लाखो व्यक्तियो ने लाभ उठाया है। उनका प्रत्येक चरण मगलमय रहा है। उनके ऐतिहासिक मगल विहार ने श्रमण-साधुओ की प्रतिष्ठा बढाई है। आचार्यश्री बड़े ही उदार विचार वाले सन्त है। आपका व्यक्तित्व प्रभावशाली है।

मै पूज्य तपोनिधि आचार्यरत्न के चरणो मे विनत हो अपनी भावाञ्जलि अर्पित करता हूँ। वह दिव्य पुरुष है और उनके अभिवन्दन मे समर्पित किया जाने वाला यह ग्रन्थ भी सग्रहणीय ज्ञानकोष बनेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

यथा नाम तथा गुण

❑ *सोहनलाल सेठी*

आचार्यश्री का जीवन महान है। आप हमारे देश की उच्चतम विभूतियो मे सर्वोपरि है। आपका विमल व्यक्तित्व और ऊर्ध्वमुखी विचारधारा का सुमधुर निर्झर आज भी जन-जीवन को अपनी निर्मलता एव शीतलता से आप्लावित करते हुए अपनी धर्मामृत वाणी से आत्मशान्ति का उपाय बता रहा है।

मै आचार्यश्री के चरणों मे अपनी विनम्र श्रद्धा प्रकट करके उनके प्रति कोटि-कोटि नमन करता हूँ।

पथ-प्रदर्शक

❑ *पन्नालाल सेठी*

श्रमण परपरा की महान विभूति, आर्ष मार्ग के पथिक, परमशान्त, वात्सल्यमूर्ति, आचार्यश्री १०८ विमलसागर जी महाराज के श्रीचरणो मे अपनी हार्दिक विनयाजलि समर्पित करते हुए यह भावना भाता हूँ कि आपकी दीर्घकालीन छत्रछाया मे श्रमण सघ एव श्रमण परपरा अक्षुण्ण बनी रहे तथा समाज का दिशा-निर्देश करती रहे।

भावश्रमण

❑ *जगाती लखमीचन्द*

आचार्य कुन्दकुद की एक गाथा मे लिखा है-
देहादि सग रहिओ माणक साएहिं सयल परिचत्तो।
अप्पा अप्पम्मि रओ स भावलिंगी हवे साहू॥

अर्थात् जो शरीरादि-परिग्रह से रहित है, मानकषाय से सब प्रकारसे मुक्त है और जिनकी आत्मा आत्मा मे रहती है वह साधु भावलिगी है। ऐसे भावलिगी आचार्यश्री वात्सल्यमूर्ति १०८ श्री विमलसागर जी महाराज दीर्घायु होकर विश्व को धर्मोपदेश देते रहे और आप के सान्निध्य को पाकर भव्यजन अपना आत्महित करते रहे, यही वीर प्रभु से कामना करता हूँ।

शंखनाद करते रहे

❑ *गणपतराय सरावगी*

इतिहास साक्षी है कि युग-युग मे द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के परिणमन के साथ-साथ ही महान विभूतियाँ इस भारत भूमि पर अवतरित होती रही है, तथा जन-कल्याण के उद्देश्य सहित स्व-पर-कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती रही है। इसी श्रृखला मे परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का महत्त्वपूर्ण स्थान है, वे दृढ़ चारित्रयुक्त महान आत्मा है।

मै श्रद्धेय पूज्य आचार्यश्री के चरणो मे नमन करता हूँ, और वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आप युग-युगान्तर तक जन-कल्याण हेतु भगवान महावीर के पचशील सिद्धान्तो का प्रतिपादन करते हुए विश्वशाति का शखनाद करते रहे।

व्रतप्रदाता गुरुवर

❑ *सरदारमल खंडाका*

मानव ही क्या, पचेन्द्रिय तिर्यंच भी जिन महापुरुषो के सान्निध्य मे व्रत धारण कर अपना जीवन पवित्र बना

लेते हैं, उनकी महानता का क्या वर्णन किया जावे।

परम पूज्य १०८ विमलसागरजी महाराज भी महान सद्गुरु हैं। उनकी वाणी में ओज और मुख पर ब्रह्मचर्य का तेज है जो सहसा ही व्यक्ति को आकर्षित करता है।

ऐसे गुरुदेव के श्रीचरणों मे नमन करते हुए अपनी विनयाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

परम श्रद्धेय गुरुदेव

❑ *उमरावमल*

भारत भूमि पर समय-समय पर अनेक तपस्वियों एव महापुरुषो ने जन्म लिया है जिसके कारण देश व धर्म उन्नत हुआ है। इसी श्रृखला मे परम श्रद्धेय वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री १०८ विमलसागर जी महाराज के क्रिया-कलाप के फलस्वरूप आज धर्मध्वजा लहरा उठी है।

वर्ष १९८७ मे जयपुर नगर (खानिया) मे आपके चातुर्मास के अवसर पर आपका सान्निध्य पाकर धर्म मार्ग की ओर अग्रसर होकर, आत्म लाभ लिया। वैसे तो सन्त सगति मुझे विरासत मे मिली है। ऐसे मागलिक अवसर पर भगवान जिनेन्द्र देव से प्रार्थना है कि आचार्यश्री चिरायु हो और हम जैसे प्राणियो का मार्ग-दर्शन करते रहे।

समर्पित हैं उन्हे अभिवन्दना के पुंज

❑ *सुरेश सरल*

वर्षो पूर्व वह नाम सुना था फिर प्राय हर वर्ष उनका नाम अखबारो के माध्यम से दृष्टिक्षेत्र में आने लगा, कभी-कभी तीर्थ से लौटे हुए श्रावको से उनकी चर्चा सुन लेता। कुल मिलाकर सुनने को यही मिलता कि आचार्य विमलसागर ने अमुक व्यक्ति को दीक्षा दी, अमुक श्रावक को आशीष दिया या अमुक स्थान पर उनके आशीष से सस्थान खोला गया, मदिर का जीर्णोद्धार किया गया, तीर्थ की स्थिति सुदृढ की गयी आदि-आदि।

उनका परिचय एक मशाल की तरह सामने आता है और हर बार एक नया प्रकाश छोड़ जाता है। जब मै आचार्यश्री विद्यासागर के सान्निध्य मे आया था और उनके विषय मे भिन्न-भिन्न प्रकार से लिखना शुरू किया था तब भी मैने कभी आचार्य विमलसागर के निमित्त दो शब्द नही लिखे, वह तो जब विद्वान प ब्रह्मचारी श्री धर्मचद शास्त्री का अनुरोधपूर्ण पत्र मिला तब जाकर प्रेरणा का सचार मानस मे हुआ और अभिवदन ग्रथ के लिए वे अक्षराकार श्रद्धापुष्प कागज पर छवि पा सके।

मेरी दृष्टि मे हीरक-जयती उस महामानव की मनाई जाती है जो अपने प्रकाशवान/परोपकारी/आत्मोपकारी जीवन के ७५ वर्ष पूर्ण कर लेता है। केवल उम्र के लिहाज से ७५ वर्ष की अवधि व्यतीत करने वाले की हीरक जयती मनाने का कोई औचित्य नही होता किंतु जब वह महामानव स्वत आचार्य विमलसागर हो, जिनका अतरग और बहिरग ज्ञान तप और त्याग से परिपूर्ण हो, उनकी हीरक जयती ही क्या, अमृत-महोत्सव मनाने का पुण्य भी प्रकृति

से प्राप्त होगा। अब जब उनके जन्म, शिक्षा, जीवन को लेकर अनेक महापुरुषों ने इसी ग्रंथ मे अपने विचार लिपिबद्ध किये है तो मै अपनी शक्ति उनके जीवन के अन्यक्षेत्र मे लगा रहा हूँ, यो उनका निष्पृह भाव अवश्य ही उल्लेखनीय है।

किन्तु उनका जो सर्वाधिक विवादग्रस्त पहलू है, वह है-झाड़फूँक का। देश भर मे दिगम्बर जैन समाज के विभिन्न दलो ने और दल-नायको ने यह धारणा फैला रखी है कि आचार्यश्री झाड़फूँक भी करते है जो कि एक दिगम्बर साधु के निर्मल स्वरूप के अनुकूल नही है। मै भी उनके तथाकथित झाड़फूँक पर भ्रम पाल बैठा था, फलत १९ अप्रैल १९८९ को श्री महावीर जी के कवि-सम्मेलन से लौटता हुआ, मैं सोनागिर मे रुका और अपना परिचय दिये बगैर उनसे मिला। वहाँ मेरे साथ जबलपुर निवासी मित्र, मुनिभक्त श्रीजयकुमार मोदी भी थे।

सोनागिर मे लगभग २० घटे व्यतीत कर मैने उनके तीन बार दर्शन किये, मदिर जाने का ढग देखा, आहार-चर्या देखी और श्रावकों से वार्ता का उपक्रम देखा। अनेक श्रावको के साथ उपस्थित रहकर उन्हे टटोला और एकात मे भी परखा। मैने उनसे निवेदन किया कि मुझे कुछ कष्ट है, आपका दिशा-बोध चाहिए। वे बोले-दिन मे एक बजे आइए।

जब मै एक बजे उनके कक्ष के समीप पहुँचा तो उनके दरवाजे के सामने जैन, पजाबी, मुसलमान, हिन्दू, ईसाई आदि अनेक धर्मो के अनुयायी एक पक्ति मे खडे थे-मिलने के लिए। मुझे लगा विभिन्न धार्मिक लोगो का सजातीय और विजातीय लोगो का, अवर्ण और सवर्ण लोगो का एक मौन समन्वय, वहाँ, उस पक्ति मे घुलमिल गया है। भले ही वह स्थिति सामायिक हो, क्षणिक हो पर वह भविष्य के समन्वय के सूत्रो की भाषा शिल्पित कर रही थी। वे एक बार म एक पुरुष अथवा एक महिला को बुलाते, उसकी समस्या सुनते और जवाब देते। मै अपने स्थान पर खडा-खडा सोच रहा था कि इन सीधे-सादे लोगो की क्या समस्या है और इन गुणी आचार्य का क्या उत्तर है। शनै शनै मेरा क्रम आ गया। मै कक्ष मे गया, उन्हे नमोस्तु किया और उनके सामने अपनी परीक्षोन्मुख समस्या रखी। उत्तर मे उन्होने एक आयुर्वेदिक दवाई का नाम बताया और सुबह-शाम णमोकार मत्र की जाप देने का परामर्श दिया। कुछ सेकेड मे मुझे वहाँ से हटना पडा और मेरे पीछे वाले ने मेरा स्थान ले लिया। मै दूसरो की तरह अन्य दरवाजे से बाहर निकल गया पर क्षण भर को वहाँ रुका और पुन आचार्यश्री की बाते सुनने लगा, उन्होने पीछे वाले को भी कुछ दिशा-ज्ञान देने के बाद णमोकार मत्र की जाप का परामर्श दिया। मैने बाहर अनेक लोगो से पूछा, सभी ने णमोकार मत्र का हवाला दिया बतलाया।

मै अब तक नि शक हो चुका था। उनके तथाकथित झाड़फूँक के दुष्प्रचार की रूपरेखा मेरी समझ मे आ गयी। वे वास्तव मे कोई अधविश्वास के अधीन झाड़फूँक नही करते, वे तो जिनवाणी, जिनदेव और सद्‌गुरु के विश्वास को पल-पल पुनर्स्थापित करते है और णमोकार-मत्र की महिमा से, बिना लबा भाषण दिये, परिचित कराते है।

मै उन विद्वानो की, उन व्यापारियो की, उन श्रावको की और उन पत्रिकाओं की निंदा करता हूँ जो यह प्रचारित करते है कि आचार्य विमलसागर झाड़फूँक के बादशाह है। वे मेरी दृष्टि मे अविश्वास रूपी ऊग आये झाड को फूँकने मे (जलाने मे) समर्थ है, यह अलग बात है। मगर श्रेष्ठ बात है कि वे णमोकार मत्र की नाव

का और सद्‌गुरु रूप पतवार का सच्चा प्रचार कर रहे हैं। मैंने आचार्य विद्यासागर जी को भी णमोकार मंत्र और सद्‌गुरु पतवार पर इसी तरह आस्था व्यक्त करते पाया है, अत मै आचार्य विमलसागर के उक्त उपक्रम की सार्वजनिक प्रशंसा भी करता हूँ। समर्पित है आचार्यश्री के प्रति मेरे अभिवन्दना के पुष्प।

धैर्य की क्या प्रशंसा

❑ *हेमचन्द कासलीवाल*

आचार्यश्री सघ सहित विहार करते हुए गिरनार जी से वापसी अहमदाबाद की ओर आ रहे थे। तब रास्ते मे फूलगाँव नामक ग्राम मे आचार्यश्री को १०४-१०५ डिग्री बुखार आने लगा और काफी शीत में जकड़ गए। रात-रात भर आचार्यश्री को नीद नही आती थी। काफी बेचैनी रहने के बावजूद विहार का क्रम बराबर चलता रहता था। इस प्रकार के धैर्य को देखकर मै काफी दग रह जाता था। मुझे आचार्यश्री के साथ रहने का उस वक्त २५ दिन का समय मिला।

मै भी श्री वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे भी इस प्रकार की सहनशक्ति प्राप्त हो और आचार्यश्री भी दीर्घायु प्राप्त कर, हमारा दिशाबोध करते रहे।

प्रथम दर्शन

❑ *देवेन्द्रकुमार*

परम पूज्य आचार्यश्री १०८ विमलसागर जी महाराज का मैंने सबसे प्रथम दर्शन तब किया जिस वक्त महाराज श्री की मुनि दीक्षा श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी मे हुई थी। उस प्रथम दर्शन का मेरे ऊपर इतना प्रभाव पडा कि मेरे अन्दर धार्मिक भावना जागृत हो गई और मुझे सासारिक कार्यो से विरक्तता होने लगी। जब दुबारा महाराज श्री का चार्तुमास श्री सोनागिर जी मे हुआ तब से सब व्यापार आदि कार्य की तरफ से विरक्तता धारण कर ली और तभी से चार्तुमास मे, महाराज के सान्निध्य मे रहने लगा। मुझे जब भी कोई आपत्ति आती है तो महाराजश्री का सहयोग प्राप्त हो जाता है। मै हमेशा महाराजश्री को प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष मे नमोस्तु करता रहता हूँ।

ऐसे हैं हमारे आचार्यश्री

❑ *प्रद्युम्नकुमार पाटनी*

सन् १९७८ मे सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर आचार्यश्री के प्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। सत्य है कि आचार्यश्री वात्सल्य की महान जीती जागती मूर्ति है। आपके पास आबालवृद्ध कोई भी पहुँचे, आपकी वात्सल्यभरी मुस्कान से तृप्त होकर शाति का अनुभव करता है। आपके दर्शन मात्र से दुखियो का दुःख दूर हो जाता है। व्यक्ति आपके पास पहुँचते ही यह भी भूल जाता है कि मुझे क्या पूछना है। तात्पर्य, जिस ओर आपकी दृष्टि

पड़ जाती है वहाँ पतझड़ दूर होकर वसन्त की बहार आ जाती है।

चमत्कार के सबध मे तो क्या लिखा जावे-५अगस्त सन् १९७९ को पूज्य आर्यिका स्याद्वाद मती माताजी की क्षुल्लिका दीक्षा के अवसर पर सोनागिर क्षेत्र के चन्द्रप्रभ प्रागण मे कड़ाके की धूप चमक उठी थी, मैंने प्रत्यक्ष देखा था कि आचार्यश्री ने एक दृष्टि ऊपर आकाश की ओर की। बादलो का साया आकाश में जमा हुआ, तो रिमझिम वर्षा होनी प्रारभ हुई कि कुछ क्षणो मे बादल पानी गिराकर रवाना हो गये। मैंने पूछा—"आचार्य देव! यह क्या चमत्कार किया आपने?" गुरुदेव ने कहा—"भाई, यह प्रश्न मत पूछो, जो करना था वह कर दिया," और अगली सस्कार क्रिया करने मे लग गये।

"परोपकाराय सता विभूतय " सज्जनो का जीवन परोपकार के लिए ही होता है। १९७९ मे मेरे एक नजदीकी रिश्तेदार के १३ वर्षीय बालक को व्यन्तर बाधा ने आ घेरा। हम लोगो ने डॉ को दिखाया। किसी ने टिटनस बताया, किसी ने अन्य बीमारी। हताश हो, हम लोगो ने आचार्यश्री की शरण ली।

आचार्यश्री के चरणो मे पहुँचते ही, आचार्य ने बच्चे को दूर से देखते ही उसके रोग का निदान बताया। आज की तारीख मे वह बच्चा पूर्ण स्वस्थ है।

इसी प्रकार १९८२ की घटना है-आचार्यश्री का चातुर्मास बोरीवली त्रिमूर्ति बम्बई मे हो रहा था। मै अपने बच्चे का नामकरण सस्कार आचार्यश्री के कर-कमलो से कराने की भावना से बम्बई पहुँचा। मै चाहता था कि बच्चे का नाम "V" (वि) अक्षर से रखा जाये पर आचार्यश्री के समक्ष अपनी भावना व्यक्त नही कर पाया।

आचार्यश्री से विशेष आग्रह करने पर उन्होंने बच्चे के कानो मे णमोकार मत्र देकर मस्तक पर सस्कार किये, पश्चात् बच्चे का नाम 'वृषभ' रख दिया। मेरा मन हर्ष से गद्गद् हो उठा कि मेरी मन की मुराद को आचार्यश्री ने बिना बोले पूरी कर दी। ऐसे है हमारे आचार्यश्री।

पूज्य श्री शतायु हो। आपके शुभाशीर्वाद को प्राप्त कर हम आपके चरण-चञ्चरीक जिनधर्म के मार्ग मे आगे बढ़ते रहे।

वात्सल्यमूर्ति

❑ *गिरिराजकुमार राणा*

प्रात स्मरणीय वात्सल्यमूर्ति सन्मतिदिवाकर आचार्य १०८ श्री विमलसागर जी महाराज का दि जैन मन्दिर मुरलीधर जी राणा की नसियाँ पुराना घाट, खानियाँ मे २८ जून १९८९ को ससघ मगल प्रवेश हुआ। सभी जैन धर्मावलम्बी पुरुषो व राणा परिवार के सदस्यो के चातुर्मास स्थापन हेतु आग्रह को पूज्य आचार्यश्री ने सभी धर्म प्रेमी लोगो की भावना का आदर करते हुए सहर्ष स्वीकार किया। जयपुर के इतिहास मे इतने धूम-धाम से बिना किसी विघ्न-बाधा के चातुर्मास पहली बार हुआ जिसमे लाखो दर्शनार्थियो व धर्म-प्रेमियो ने पुण्यलाभ प्राप्त किया। चातुर्मास व्यवस्था मे जयपुर के समस्त जैन समाज का सहयोग अद्वितीय था। श्री आर के जैन की ओर से इन्द्र ध्वज विधान मण्डल पूजा का चिरस्मरणीय आयोजन कराया गया। समस्त पूजा मे हजारो व्यक्तियो ने भाग

लिया। जयपुर मे इस प्रकार के विधान व पूजा का आयोजन अभूतपूर्व था। उपाध्यायश्री १०८ भरतसागर जी महाराज से हजारों लोगों ने ज्ञानार्जन किया। खानियाँ स्थित राणा जी की नसिया में पूर्व में भी आचार्य १०८ देशभूषण जी महाराज व आचार्यश्री १०८ वीरसागर जी महाराज आदि कई सघो के कई चातुर्मास हुये हैं। यह चातुर्मास ऐतिहासिक रहा।

राणा परिवार आचार्यश्री १०८ विमलसागर जी महाराज के ७५ वें जन्म दिवस पर श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए शत-शत नमन करता है और उनकी दीर्घायु की कामना करता है।

शत-शत वन्दन

❑ *कमल हाथी शाह*

परम पूज्य वात्सल्यमूर्ति, आचार्यश्री १०८ श्री विमलसागर जी महाराज के चरण-स्पर्श करते ही जिस आत्मिक सुख की प्राप्ति होती है उसकी अभिव्यक्ति नही की जा सकती है। ऐसे साधु का इस युग मे अवतार होने से यह युग एव देश धन्य हो गया है। उनकी हीरक जयंती पर प्रकाशित होने वाले अभिवन्दन अवसर पर मै उनके शतायु होने की कामना करता हूँ। उनके चरणो में शत-शत वन्दन।

विमल के सागर

❑ *पूनमचन्द गंगवाल*

महान पुरुषो के अनेक महान लक्षणो मे से एक सहज सुलभ लक्षण यह है कि उनके सान्निध्य मात्र से दूसरो को सुख-शाति एव प्रेरणा प्राप्त होती है। आचार्यश्री विमलसागरजी विमल के सागर है। आपकी साधना और समर्पण जैन धर्मावलम्बियो के लिए सदैव आदर्श, अनुकरणीय, एव प्रेरणास्पद रहेगे। आप चिरायु हो और लोक-कल्याण मे निरन्तर प्रवृत्त रहते हुए हमारा मार्ग-दर्शन करते रहे यही कामना है।

अनुपम रत्न

❑ *डॉ. सुशील जैन*

किसी भी मानव का महत्त्व न तो कागज के टुकड़ों से है न स्वर्ण-रजत के आभूषणों से और न गगनचुम्बी अट्टालिकाओ से। वास्तविक महत्त्व तो उन ज्ञानी, त्यागी, परोपकारी निर्ग्रन्थ साधुओ का होता है जिन की ज्ञानज्योति से चारो ओर आलोक व्यक्त हो जाता है। ऐसे है हमारे वर्तमान में आचार्य शिरोमणि १०८ विमलसागरजी महाराज।

आपने अपने विशाल सघ द्वारा भारत भूमि के सभी प्रान्तो मे विमल कल्याणी एव सरल स्वभावी शैली द्वारा अहिंसामय 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' इस परम वाक्य को अपनी जीवनी से सदैव चरितार्थ किया है। अहिंसा एक अमोघ सजीवनी शक्ति है। बिना अहिंसा के कोई भी राष्ट्र प्राणवान नही हो सकता। आपका ऐसा अमृत तुल्य

उपकार वचनातीत है। प्रसन्न मुद्रा एव कठोर अनुशासन के साथ मन को झकझोरने वाली स्पष्टवाणी आपकी अमूल्य निधि है।

आज के इस भौतिक युग मे रागद्वेष, जन्म-मरण रूपी रोग को दूर करने के लिए एवं विषय-भोग रूपी कुपथ को छोड़ने के लिए दिशा-सूचक यन्त्ररूपी मुनियो के पास जाना होगा, तभी हम सज्ज्ञान प्राप्त कर चित्तरूपी सर्प का निग्रह कर सकते है।

मै ऐसे परम पूज्य चारित्रचक्रवर्ती परम तपोनिधि आचार्यरत्न के चरण-कमलो मे कोटिश नमन करता हूँ।

पथिक मुक्तिपथ के

❑ *सरमनलाल जैन 'दिवाकर'*

परम पूज्य, वात्सल्यमूर्ति श्री विमलसागर जी महाराज के दर्शनो का सौभाग्य कई बार प्राप्त हुआ। जैन सस्कृति के अभ्युत्थान मे उनका अभूतपूर्व योगदान है। तीर्थवदना रथ के प्रवर्तन हेतु उनका सदैव शुभाशीर्वाद रहा। तीर्थो के उत्थान हेतु तथा जिनवाणी के प्रचार-प्रसार मे उनकी सदैव प्रेरणा रही। वह यथार्थ मे मुक्ति पथ के पथिक है। उनका अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशन कर समाज ने महान कर्म किया है। मै उनकी दीर्घायु की मगल कामना करते हुए यही भावना भाता हूँ कि उनका मार्गदर्शन समाज को दीर्घकाल तक प्राप्त होता रहे।

जैन संस्कृति के महान प्रचारक

❑ *डॉ. अशोककुमार जैन*

परम पूज्य वात्सल्यमूर्ति आचार्य विमलसागर जी महाराज का जैन सस्कृति के सरक्षण, सवर्द्धन एव प्रचार मे महनीय योगदान है। आपकी प्रेरणा से हजारो लोग सन्मार्ग की ओर अग्रसर हुए। आचार्य प्रणीत अनुपलब्ध ग्रन्थो के प्रकाशन की प्रेरणा देकर जिनवाणी की आपके द्वारा अपूर्व सेवा हुई है। प्राणिमात्र के कल्याण की भावना आपमे सदैव रहती है। धर्म का अलख जगाकर अनेक लोगो को तमसावृत पथ से हटाकर सद्दिशा प्रदान कर समाज का आपने परम उपकार किया है। 'न धर्मो धार्मिकै र्बिना' अर्थात् धार्मिक भव्य जीवो से ही धर्म सुरक्षित रहता है। आपका अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशन कर समाज ने आपके गुणो के प्रति आस्था का अर्घ्य समर्पित कर कृतज्ञता व्यक्त की है।

इस मगलमय प्रसग पर आपके चरणो मे शतश नमन करने हुए यही भावना करता हूँ कि आपके द्वारा जिनशासन की निरन्तर प्रभावना होती रहे।

वात्सल्यमूर्ति आचार्य

❑ *पं. हीरालाल जैन 'कौशल'*

परम पूज्य आचार्य विमलसागर जी महाराज इस युग के विशिष्ट आचार्य हैं। वे दीर्घ तपस्वी तथा अनुपम सिद्धि-सम्पन्न सन्त महापुरुष हैं। उनके समय मे धर्मप्रभावना, तीर्थोद्धार तथा साहित्य-प्रचार आदि के जो महान कार्य हुए है और हो रहे है, वे इतिहास मे सदा अविस्मरणीय रहेगे।

आचार्यश्री सरल स्वभावी है तथा उनके हृदय मे वात्सल्य का अथाह सागर लहराता है। उनमे दु:खी के दु:ख को दूर करने की प्रबल भावना है जिससे सभी आकर्षित और प्रभावित होते है। सब पर उनकी असीम कृपा रहती है तथा सभी लाभान्वित होते एव शान्ति प्राप्त करते है। मै उनके चरणो मे नत होकर उनके दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ। सभी उनके जीवन से लाभान्वित होते रहे तथा धर्म प्रभावना बढ़ती रहे।

विलक्षण संत

❑ *सुलतानसिंह जैन*

आधुनिक युग के आध्यात्मिक रसिक आचार्य विमलसागरजी ने जैनागम का जो चिन्तन मनन किया है, उसी के अनुसार उन्होंने अपने प्रवचनो मे जैन सिद्धान्तो एव जैन परम्पराओ को सम्मानित कर व्यक्त किया है।

आचार्यश्री विलक्षण व्यक्ति है तभी तो उनका जीवन लौकिक होते हुए भी अलौकिक गुणो को आभासित कर रहा है और जनसाधारण तक उनसे प्रभावित हो रहे है। ऐसे महान योगी के जो लोग दर्शन कर लेते है उनका जीवन सार्थक हो जाता है और जो लोग कुछ समय के लिए भी उनके सानिध्य मे रह लेते है, वे अपने को अत्यन्त सुखी व शान्त अनुभव करते है। मुझ पर भी उनका महान प्रभाव पड़ा है।

मै आचार्यजी के शतायु होने की हार्दिक कामना करता हूँ जिससे विश्व उनके जीवन से लाभान्वित हो सके। इन शब्दो के साथ मै आचार्यजी के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ।

आचार्य विमलसागरजी की महानता

❑ *मानिकचन्द गंगवाल*

आचार्यश्री एक परम तपस्वी निस्पृह साधु है जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन स्वात्मोन्नति के साथ जन-कल्याण में लगा दिया है। आपके द्वारा अनेक भव्य जीवो का उद्धार हुआ है। उन्हे सन्मार्ग दिखाकर धर्म मे आस्था पैदा की है। जिस क्षेत्र तथा तीर्थ मे आपका पदार्पण अथवा चातुर्मास हुआ, वहाँ आपके प्रभाव से अनेक धर्मोपयोगी कार्य सम्पन्न हुए जिसमे विशेष उल्लेखनीय है- सम्मेदशिखर पर अद्वितीय समवशरण का निर्माण, सोनागिर सिद्ध क्षेत्र पर नंग तथा अनग कुमार की विशाल मूर्तियो का निर्माण एव वर्तमान मे चौबीसी का निर्माण।

मुझे आचार्यश्री की पाच जयती सोनागिर मे मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिनमे उपाध्याय १०८ भरतसागर

जी के आदेशानुसार मुझे कार्यवाहक अध्यक्ष का कार्य सम्पादन करने का सुअवसर मिला। सोनागिर जी में महाराज जी की जयतियाँ समाज ने जिस उत्साह और लगन से मनायी, वह सर्वविदित है। उनमे उपस्थिति भी पचास हजार से कम नही रही। इस वर्ष की आचार्यश्री की जयती हीरक जयती के रूप मे विशाल आयोजन के साथ मनायी गयी है। आचार्यश्री का सोनागिर सिद्ध क्षेत्र मे विशेष अनुराग है। आपकी मुनि दीक्षा भी सोनागिरजी में हुई है।

आचार्यश्री के निमित्त ज्ञान की जितनी प्रशसा की जाये, थोड़ी होगी। उनके द्वारा जैन अजैन बन्धुओ को बताई गई बाते एव भविष्यवाणियॉ अक्षरश सत्य निकली है।

अन्त मे आचार्यश्री विमलसागरजी को शत-शत वन्दन करते हुए, अपनी सविनय विनयाजलि अर्पित करते हुए, उनके दीर्घ यशस्वी जीवन की कामना करता हूँ जिससे उनके द्वारा आत्म-कल्याण के साथ-साथ दु:खित प्राणियो का मार्गदर्शन व कल्याण होता रहे।

प्रेरणास्रोत

❑ *ललित जोदावत*

आचार्यश्री ने सम्पूर्ण भारतवर्ष का एव जैन तीर्थस्थानो का भ्रमण कर अनेक धर्मपिपासु आत्माओ को दीक्षा प्रदान कर तथा सिद्ध चक्रमण्डल विधान, पच कल्याणक महोत्सव, विश्व शान्ति यज्ञ, मन, वचन, कर्म से अहिंसा पालन की शिक्षाओ का प्रसार करके एव स्व-जीवन मे आचरण मे लाकर आदर्श उपस्थित किया है। स्याद्वाद की सारगर्भित व्याख्या एव विद्वत्तापूर्ण प्रवचनो द्वारा जैन समाज को जागृत, सगठित एव गौरवान्वित किया है। अनेक गृहस्थो को चारित्रिक व्यसनो, सामाजिक बुराइयो से मुक्त कराकर उनके जीवन मे वास्तविक प्रेरणाएँ प्रदान कर सुख शान्ति एव धर्म के प्रति झुकाव उत्पन्न किया है।

आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज की वाणी मे मिठास एव मधुरता और व्यवहार, करुणा वात्सल्य से ओतप्रोत है। जो भी व्यक्ति आचार्यश्री के एक बार भी सम्पर्क मे आता है, आपकी अनुकम्पा, उदारता, प्राणी मात्र के प्रति कल्याण की भावना, अपूर्व धैर्य, निरीह वृत्ति व सहृदयता आदि गुणो से अभिभूत हो जाता है। आप धर्म ध्यान के प्रमुख नेता है। सदैव आलस्य रहित दृष्टिगोचर होते है। आपकी छत्रछाया और वरदहस्त पाकर मुनि सघ एव श्रद्धालु श्रावक एव साधकगण निश्चिन्त एव निर्भय हो जाते है। आपकी शिक्षाएँ "पाप से घृणा करो, पापी से नही," 'कैची न बनो सुई बनो," "दूसरे का दुख अपना समझो" आदि जन-मानस को प्रभावित करती है।

शैशव काल से ही आपकी धर्म के प्रति प्रगाढ रुचि और श्रद्धा रही है। आचार्यश्री शान्तिसागर जी महाराज के बचपन मे ही दर्शन कर अभिभूत हुए और आग्रहपूर्वक उन्ही के करकमलो से यज्ञोपवीत धारण किया। आपने जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत का कठोर प्रण लिया। आपका दृढ निश्चय और आत्मशक्ति महान है।

सवत् २००७ मे श्री महावीरकीर्ति सागर जी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त कर श्री नेमीचन्द वृषभसागर जी पुकारे जाने लगे और मुनि सुधर्मसागर जी महाराज से ऐलक पद की दीक्षा प्राप्त की। फाल्गुन सुदी १ सवत् २००१ मे प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र सोनागिर मे श्री महावीरकीर्ति जी महाराज से पूर्ण अहिंसा व्रत धारण कर मुनि विमलसागर

जी नाम से प्रख्यात हुए। मिति मगसर वदि २ संवत् २०१८ सन् १९६१ ई. मे प्रसिद्ध नगर टूडला के विद्वत् जनसमुदाय ने आपके धर्म प्रभाव वात्सल्य गुण, उदारता, गभीरता आदि गुणो से प्रभावित होकर आचार्य पद स्वीकार करने का आग्रह किया। गुरु श्री महावीरकीर्ति जी की आज्ञा पाकर आचार्य पद स्वीकार किया और तभी से निरन्तर मुनि संघ के साथ धर्म-प्रभावना का कार्य कर रहे है। ललित जोदावत का आचार्यश्री के चरणों मे कोटिश नमन।

शतबार नमन

❑ *विजयकुमार शास्त्री*

आधुनिक दिगम्बर जैनाचार्यों मे आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज का एक अलग ही व्यक्तित्त्व है। वे बहुश्रुत आगमाभ्यासी विद्वान, करुणामूर्ति, चारित्र शिरोमणि, सातिशय योगी, निमित्तज्ञानी, ज्योतिपुञ्ज आचार्य है। अपने विशाल सघ सहित जहाँ की भूमि पर चरण धरते है, वही तीर्थ बन जाता है। आपकी तीर्थभक्ति अनुपम है। जिस तीर्थ पर भी आपके वर्षायोग हुए उसका कायाकल्प हो गया। आपमे शिष्यानुग्रहता का विशेष गुण है जिससे आपका सघ बड़ा विशाल है। पूज्य श्री उपाध्याय भरतसागर जी महाराज जैसे प्रवचन पटु साहित्योद्धारक शिष्य आपको प्राप्त है। इसी वर्ष सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी पर आपकी ७५ वर्ष की आयु पूर्ण होने के उपलक्ष्य मे हीरक जयन्ती महोत्सव विशाल स्तर पर मनाया गया। उक्त पुण्यवेला मे ७५ महान ग्रन्थो के प्रकाशन की योजना मे विलुप्त अनुपलब्ध जिनप्रवचन को नया रूप मिला। आप इस पञ्चम काल मे निर्ग्रन्थ धर्म की साक्षात् सचल प्रतिमा है।

मेरी हार्दिक भावना है कि पूज्य आचार्यश्री शताधिक आयु प्राप्त कर वीतराग धर्म का उद्घोष करते रहे। उनके चरणो मे मेरे और प्रत्येक जिनभक्त के कोटि-कोटि नमन।

सत्संगति का असर

❑ *विजेन्द्रकुमार जैन*

गुरु का असर शिष्य पर अवश्य पड़ता है। लगता है ऐसे ही पू आ श्री महावीरकीर्ति जी महाराज का असर पू श्री विमलसागर जी महाराज पर पडा है। पू श्री महावीरकीर्ति जी महाराज किसी भी अवस्था मे अपने सघ मे शिथिलता को बर्दास्त नहीं करते थे। उनके सघ में अनुशासन से रहना भी एक आवश्यक अग था। उनकी प्रवचन शैली ऐसी थी जो चलते हुए पथिक को भी मत्रमुग्ध कर देती थी। आज उन्ही की परम्परा मे उनके परम शिष्य प पू. वात्सल्यनिधि, सन्मार्ग दिवाकर, निमित्तज्ञानी आ श्री विमलसागर जी महाराज सम्पूर्ण भारतवर्ष मे धर्म की पताका फहराकर धर्म की प्रभावना कर रहे हैं। हर जगह ऐसे निस्पृही साधु के मधुर प्रवचनो को श्रवण करने हेतु एव उनके दर्शनों की अभिलाषा से श्रावकगण भँवरे की भाति उनके पीछे-पीछे हो लेते है। मुझे अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद (रजि) के अधिवेशन के माध्यम से एव और भी अनेक प्रसगो पर उनके चरणारविन्द में बैठकर उनके वचनामृत पान करने का अवसर प्राप्त हुआ। यह एक ऐसा अमृत है जिसे बार-बार पीने पर भी तृप्ति नही हो पाती, मन में सदैव यह बात रहती है कि इसके पश्चात् फिर कब आ श्री के दर्शन होगे।

उनके अपरिग्रही जीवन तथा उनकी आत्म-साधना को देखते हुए 'रत्नकरण्ड श्रावकाचार' का यह श्लोक तत्काल कण्ठ मे आ जाता है-

विषयाशा वशातीतो, निरारभोऽपरिग्रह ।
ज्ञान-ध्यान-तपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते॥

ऐसे पू आचार्यश्री भी इतने विशाल सघ का प्रतिनिधित्व करते हुए सम्पूर्ण आरम्भ और परिग्रह से रहित सघ के सभी साधुओं को आत्म-कल्याण का रास्ता बताते हुए अपने ज्ञान-ध्यान और तप के माध्यम से अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने मे लगे हुए है। उनके पास कोई भी श्रावक, चाहे वह जैन हो या अजैन, आता है उसे आ श्री के मुख पर मन्द मुस्कान को थिरकते हुए देखकर ही सुख एव गौरव की अनुभूति होने लगती है। वह चाहे कैसी भी शका लेकर आचार्य श्री के पास आये समाधान पाकर एव निश्चित होकर ही वहाँ से लौटता है। श्रावको का इतना श्रद्धान आ श्री पर है कि उनके कहने मात्र से ही श्रावक मद्य, मास, मधु और रात्रिभोजन के त्याग को अपने जीवन का एक नियम बना लेता है। धन्य है यह साधु जिन्होने इतने पथभ्रष्ट लोगो को धर्म की राह पर लगा दिया।

आज भगवान चन्द्रप्रभ जी के चरणो मे यही विनती करता हूँ कि ऐसे पू आ श्री विमलसागर जी महाराज का सान्निध्य हमे वर्षो तक प्राप्त होता रहे। हमे भी ऐसी सद्बुद्धि प्रदान करे कि हम भी उन्ही की भाति अपनी आत्मा का कल्याण कर सके और धर्म की पताका को सम्पूर्ण विश्व मे फहरा सके।

गुरोर्भक्ति र्गुरोर्भक्ति र्गुरोभक्ति सदास्तु मे।
चारित्रमेव ससारवारण मोक्षकारणम्॥

दिगम्बर साधु का महत्त्व

❑ *प्रकाशचन्द जैन*

भगवान तो मोक्ष चले गये परन्तु ससार मे धर्म प्रवाहित रखने के लिए साधुओ की स्थापना कर गये। जब तक साधु रहेगे तब तक धर्म रहेगा।

इस युग के अधिकाश व्यक्ति यह समझते है कि 'घर गृहस्थी छोडकर त्यागी हो जाना अकर्मण्यता है, अपने उत्तरदायित्व से भाग निकलना है।' परन्तु वास्तव मे ऐसी बात नही है। क्योंकि जिन्हे त्यागी जीवन की मर्यादा का ज्ञान-विवेक है वे न तो ऐसा कहेंगे और न समझेगे ही।

त्यागी होकर अकर्मण्यता नही धारण की जाती। सच्चा त्यागी प्रतिपल इतना कर्त्तव्यरत, साहसी और विवेकशील रहता है कि जिसके विषय मे अन्यथा कल्पना नही की जा सकती। त्यागी हुए बिना वास्तविक शान्ति का अनुभव नही हो सकता।

"जैसे चन्द्र चन्द्रिका से युक्त, ग्रह नक्षत्र एव तारो से परिवृत्त गगन-मडल में शोभायमान होता है, वैसे दिगम्बर जैन साधु समाज मे सुशोभित होते है, यथा सन्त श्री आचार्यरत्न विमलसागर जी महाराज।"

आचार्यजी को शत-शत अभिवन्दन।

आचार्यश्री के प्रति

❑ *प्रमोदकुमार बड़जात्या*

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र चूलगिरि बावनगजाजी सिद्धक्षेत्र पर जहाँ एशिया विख्यात अस्सी फीट ऊँची श्री आदिनाथ भगवान की मूर्ति स्थित है, फरवरी १९८६ में आचार्यश्री विमलसागरजी ससघ पधारे थे। वहाँ से श्रीगोम्मटगिरि पचकल्याणक इन्दौर हेतु निमाड़ क्षेत्र से विहार करते हुए हमारे कस्बे बीकानेर (धार) म प्र मे आगमन हुआ। स्थानीय दिगम्बर जैन समाज मन्दिर में दर्शन कर काफी प्रभावित हुए। मन्दिर मे एक विशाल पेटी देख जिज्ञासावश महाराजश्री ने उसके बारे में जानकारी चाही। नगरप्रमुख श्री त्रिलोकचन्द दोसी ने महाराजश्री को बतलाया कि स्थानीय जैन समाज ने भगवान श्री बाहुबली जी की भव्य ६ फीट ऊँची मूर्ति विराजमान करने हेतु बुलवाई जिसे प्रात स्मरणीय श्री पुष्पदत महाराज एव पार्श्वमती माताजी की प्रेरणा एव आशीर्वाद से श्री धन्नालालजी बड़जात्या एव दिनेश रावका द्वारा जयपुर जाकर लाई गई है।

महाराज श्री ने पेटी मे रखी मूर्ति का अवलोकन किया व निमित्त ज्ञान से प्रतिमाजी के पूजनीय होने का समय निकट जान समाज बन्धुओं से कहा कि आप इसे कब विराजमान करेंगे। तब समाज के बन्धुओ ने प्रतिमा को बावनगजाजी मे पचकल्याणक या इन्दौर मे हो रहे पचकल्याणक के समय प्रतिष्ठा कराने की बात कही। महाराज श्री नेत्र निमीलित कर क्षण भर मौन रहे और फिर बोले—आप चाहे तो यह काम आज ही हो सकता है

लेकिन स्थानीय कर्मठ जैन समाज स्तभ श्री धन्नालाल जी राजमल जी बड़जात्या की अस्वस्थता के कारण मूर्ति प्रतिष्ठित करने मे देरी की बात कही।

तब मुनिश्री ने श्री धन्नालाल जी को बुलवाया एव श्री णमोकार मत्रोच्चार द्वारा पीछी लगाई। पीछी लगाते ही जैसे चमत्कार हुआ तथा सेठ जी अपने आपको स्वस्थ महसूस करने लगे। तभी महाराज जी ने कहा—"अगर आप स्वस्थता का अनुभव कर रहे है, तो समाज के अनुरोध पर माता-पिता बनना स्वीकार करे।" तब धन्नालालजी एव उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मनफूलबाई ने अपना अहोभाग्य समझकर उक्त कार्य तत्काल करने की स्वीकृति दी। मुनिश्री ने प्रतिमा का लघु पचकल्याणक सात घण्टो मे पूर्ण कर, विधिविधान से उक्त कार्य सम्पन्न करवाया।

कम समय के बावजूद लघु पचकल्याणक मे भाग लेने सूचना मिलते ही मनावर, धरमपुरी, सिंघाना, टोकी, लोहारी, धामनोद तथा अनेक नगरों से हजारो समाज बधु आये। उनकी उपस्थिति मे मूर्ति विराजमान करते समय वह ५० समाज बन्धुओ से नही उठ पाई तो महाराजश्री ने मत्रोच्चार कर नारियल फुड़वाकर कहा कि अब उठाईये। तब मात्र १०-१५ व्यक्तियो ने बिना किसी परेशानी से यथास्थान विराजमान कर दी।

इन चमत्कारी कार्यो को हजारो लोगो ने देखा व सराहा। इन कार्यों में भी उपाध्याय भरतसागरजी एव सघ के मुनित्यागी गणिकाओ का सहयोग सराहनीय एव चिरस्मरणीय रहा।

महाराजश्री ने पचकल्याणक सम्पन्न कराकर जैन समाज की विशाल भावना का आदर्श निरूपित किया। ऐसे

महान् परोपकारी एव निमित्तज्ञानी सन्त के चरणो मे हमारी वन्दना।

शत-शत नमन

❑ ***कैलाशचन्द जैन***

आज के इस भौतिक युग मे परम पूज्य १०८ सन्मार्गदिवाकर आचार्य विमलसागर जी महाराज जैसे सरल-स्वभावी करुणामयी दिगम्बर साधु विरले ही होते है।

ऐसे महान आचार्यश्री को हमारा शत-शत नमन।

शत-शत प्रणाम

❑ ***पं. भँवरलाल जैन न्यायतीर्थ***

पूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी दिगम्बर जैन सन्त परम्परा के सर्वमान्य और वयोवृद्ध मुनि है। ७५ वर्ष की वृद्धावस्था मे भी पूर्णत सावधान आचार्यश्री अपने सम्पूर्ण परिकर को आत्मसाधना मे करके स्वय आत्म-साधना मे लीन रहते है।

उनके भक्तो ने अभिवन्दन ग्रन्थ प्रकाशित कराके मुनिश्री का अभिवन्दन करना चाहा है जो उत्तम है।

पूज्य १०८ विमलसागर जी तप पूत आचार्य है। उनकी उत्कृष्ट तपस्या ही उनका अभिवन्दन कर सद्गति प्राप्त करवाएगी।

प्रसिद्ध साधक एव निमित्तज्ञानी आचार्यश्री शतायु हो ऐसी पवित्र भावना के साथ उन वीतरागी सन्त के चरणो में शत-शत नमन।

सादराभिवन्दन

❑ ***जगदीशप्रसाद छत्रवाल***

अनित्य किवा क्षणभगुर जगत से प्राप्त सुख-ऐश्वर्य को मृगमरीचिका सलिल की भाँति असत्य समझते हुए, लोक कल्याणार्थ सुरदुर्लभ मानव-जीवन के योगक्षेम अभिवर्द्धन के हितार्थ, आत्म-सुख के अनुसधान मे आत्मविभोर, आध्यात्मिक पथ के पथिक, वात्सल्यमूर्ति, सत्य-अहिसा के प्रेरणास्रोत, परम तपोनिधि, सर्वभूतहितरत, सदाचारी, प्रात स्मरणीय, जितेन्द्रिय, तत्त्वविद्, आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के परम-पावन अभयप्रद पदपद्मो मे शत-सहस्र अभिवन्दन।

विश्व की महान विभूति

❑ *मदनलाल पाटनी*

परम धर्म प्रभावक, करुणा सागर, वात्सल्य रत्नाकर, सन्मार्ग दिवाकर, निमित्त-ज्ञानी, अतिशय योगी, सिद्धिधारी आचार्य प्रवर श्री विमलसागर जी महाराज ससार की महान विभूतियों में से एक हैं जिनका सम्पूर्ण जीवन स्व-पर-कल्याण हेतु समर्पित है। आप इस युग के महान आध्यात्मिक सन्त हैं। दिवारात्रि तप, स्वाध्याय, आत्मकल्याण मे संलग्न रहते हुए भी सासारिक दुखो मे, परिवर्तनशील ससार के चक्र मे फसे हुए मोही प्राणियो के कल्याण की भावना से ओतप्रोत रहते है। करुणा, अनुकम्पा, दया की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। कोई प्राणी किसी व्यथा से व्यथित आपके चरण में नतमस्तक होता है, उसके दु:ख निवारण के लिए सतत प्रयत्नशील रहते है। इस क्षण-भगुर जीवन के ७५ वर्ष की एक लम्बी यात्रा में धार्मिक क्षेत्रो मे नव निर्माण कार्यों को सम्पादित करते हुए सिद्धक्षेत्र, अतिशय क्षेत्रो की चतुर्मुखी सर्वांगीण उन्नति मे दत्तचित्त रहते है। आपके ही सदुपदेशों से प्रभावित होकर कितने लोग आत्म-कल्याण में तत्पर है यह आज साक्षात् देखा जा सकता है। आपकी वाणी से सरसता मधुरता टपकती है। एक बार भी जिसने इस महान विभूति का दर्शन कर लिया, उसकी इच्छा पुन पुन: आपके प्रति जाने की स्वत: हो आती है। आपमें एक चुम्बकीय शक्ति है। भगवान श्री महावीर से करबद्ध प्रार्थना है कि विश्व की वर्तमान यह महान विभूति दीर्घायु हो ताकि हम ससारी प्राणियो को उनका दिग्दर्शन बार-बार प्राप्त होता रहे। उनके चरणकमलो मे कोटिश नमोस्तु करता हुआ अपनी विनयाजलि अर्पित करता हूँ।

है विमलसिन्धु! शत शत नन्दन शत शत वन्दन।
हे जगतारनहार! शत शत वन्दन शत शत अभिवन्दन।

यशस्वी परम्परा के यशस्वी आचार्य

❑ *श्रेयांसकुमार जैन*

आचार्यश्री श्रमण परम्परा के जगमगाते नक्षत्र है, प्रकाश स्तम्भ है। वे श्रमण परम्परा के तेजस्वी प्रतिनिधि है। सयम और तप की साक्षात् मूर्ति है। सयम ही आत्म-नियत्रण और तप है। यही मुनिधर्म का सर्वोपरि लक्ष्य है।

वस्तुत मानवजीवन का प्रधान लक्ष्य बोधिलाभ और अपने स्वरूप को पहचानना, आत्म-साक्षात्कार है। एतदर्थ आप प्राण-पण से जुटे हुए है।

आपकी अद्भुत कर्म-कठोरता और सघ-संचालन-कुशलता अनुकरणीय एवं प्रशसनीय है।

आप अपने अनथक अभियान द्वारा भौतिकता मे भटक रहे मानव-मन में अध्यात्म की किरणे विकीर्ण कर रहे है। चारो दिशाओं की आपकी मगलमय पदयात्रा से धर्म का व्यापक वातावरण निर्मित हुआ है। आपकी नम्रता, सरलता, परहितैषिता एव कठोर जीवन साधना से समस्त जन-जीवन चमत्कृत है। यही कारण है कि आपके प्रति समाज की दृढ श्रद्धा एव परम भक्ति है। आप सदृश महान यशस्वी आचार्य स्वय संसार से तिरते हैं और दूसरो को भी तारते है। आप उच्च कोटि के निमित्तज्ञानी है।

ऐसे तरण-तारण पार तारन, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, परम तपस्वी, दिगम्बर सत जैनाचार्य परमपूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज की पवित्र दर्शना-अर्चना मुमुक्षु प्राणियो का मार्गदर्शन करती रहे।

उनके परम पावन चरणो मे भक्तिपूर्वक त्रिधा त्रिकाल सविनय शत शत नमन करता हुआ विनयाजलि अर्पित करता हूँ।

एक जीवन्त संस्था

❑ *जैनेन्द्रकुमार जैन*

धन्य है वे माता-पिता जिन्होंने आप जैसे सत शिरोमणि को जन्म देकर हम दिशाहीन, अज्ञानी जीवो को सन्मार्ग पर लाने के लिए एक अचूक सबल प्रदान किया है।

काफी अन्तराल के बाद निर्ग्रन्थ दिगम्बर चारित्रधारी मुनियो का एक नया युग दक्षिण प्रान्त से आचार्यश्री शान्तिसागर जी महाराज के द्वारा प्रारम्भ हुआ। इससे पूर्व निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु हमारे बीच देखने को नही मिलते थे। मात्र भट्टारक गण जैन धर्म के प्रचार-प्रसार मे अपना योग देते थे। आ शान्तिसागर महाराज के उत्तर भारत के फिरोजाबाद आगमन पर आठ वर्षीय बालक नेमीचन्द्र के भाव यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारण करने के हुए। क्या पता था यह होनहार बालक आगे चलकर विमलसागर के रूप मे हम अज्ञानियो का अज्ञान दूर करने मे सहायक बनेगा।

इस महान विभूति ने गर्भावस्था मे ही सम्मेदशिखर की यात्रा कर अच्छे सस्कारों का पोषण किया। माँ के वियोग के कारण पिता की नेक शिक्षाओ ने आपके हृदय मे और भी धार्मिकता के भाव जागृत कर दिए। मुरैना विद्यालय मे सस्कृत अध्ययन के लिए जाने पर प मक्खनलाल जी शास्त्री और नन्दलाल शास्त्री (जो आगे चलकर मुनि सुधर्मसागर नाम से जाने गये) जैसे विद्वानो के सन्सर्ग ने आपकी जीवनधारा को ही बदल दिया। शास्त्रीय परीक्षा पास करने के बाद आप कुछ समय के लिए अध्यापन मे लगे, किन्तु आपके भाव सासारिक बधन से हटकर वैराग्यमय होते गए। आचार्य चन्द्रसागर जी एव वीरसागर जी महाराज के सम्बोधन से आपने महाव्रत धारण करने के भाव बना लिये। एक बार आ वीरसागर महाराज ने अपने भाषण मे विद्वान वर्ग के प्रति कटाक्ष करते हुए कहा कि विद्वान अपनी योग्यता से दूसरे के चारित्र धारण मे सहायक तो बनते है किन्तु वे स्वय चारित्र धारण से वचित रहते हैं। आ श्री को यह बात चुभ गई। उन्होंने आ श्री से सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण कर इस सासारिक बधन से विरक्ति ले ली। आपने क्रमश क्षुल्लक एव ऐलक के व्रतो को धारण करके आ महावीरकीर्ति जी महाराज से निर्ग्रन्थ साधु बनने की प्रार्थना सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर की। आपने मुनि दीक्षा ग्रहण कर विमलसागर नाम पाया। आप यथानाम तथागुण के आधार पर एक परोपकारी, सरल स्वभावी, निष्ठावान योगी के रूप में उभरकर जन-जन के हृदय मे छा गये है। आप अपने गुरु से शिक्षा पाकर थोड़े से ही समय मे ज्योतिष, आयुर्वेद आदि विषयों के प्रकाण्ड ज्ञाता बन गए। आपने अपनी सेवा और निष्ठा से वे सभी विद्याएं अर्जित कर ली जो गुरु के पास भी उपलब्ध थी।

आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद आपने अनेक बार भारत के सभी प्रान्तों मे भ्रमण कर भारत की कई भाषाओं पर अपना अधिकार जमा लिया है। आप जहाँ भी पहुँचते हैं वह स्थान तीर्थस्थल के रूप मे परिवर्तित हो जाता है। आप जहाँ भी जाते है, आपके द्वारा कोई न कोई पारमार्थिक कार्य अवश्य किया जाता है, जैसे-पाठशालाएँ, औषधालय, सरस्वती भवन आदि-आदि। सम्मेदशिखर का समवसरण, राजगिर का सरस्वती भवन, श्रवणबेलगोला का स्वाध्याय भवन एव सोनागिर क्षेत्र पर किए गये निर्माण कार्य (चौबीसी टोंक) आगे आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरक बनेंगे।

वर्तमान युग में चारित्र धारण की जो प्रेरणा आचार्यश्री ने अपने चारित्र एव ममतामयी भावना से दी है वह सराहनीय है। आपने अपने सम्बोधन से ससार के अनेक भव्य जीवों का कल्याण कर उन्हे सन्मार्ग पर लगाया है। आपकी भावना ससार के सम्पूर्ण प्राणियों के संक्लेश हरने की होती है। आपका सान्निध्य प्रत्येक प्राणी के लिए अमोघ अस्त्र के समान है जो सासारिक बाधाओं से छुट्टी दिलाता है।

वीर प्रभु से कामना करता हूँ कि आप स्वस्थ एव नीरोग रहते हुए हम समस्त ससारी प्राणियो के लिए अपना सन्मार्ग दर्शन देते रहे, जिससे अपने को मोक्ष मार्ग मे स्थित बनाते हुए अपना कल्याण कर सकें। आपके ससर्ग मे आने वाला हर व्यक्ति आत्म-विभोर हो उठता है।

मै त्रिकाल वदन करता हुआ, शत-शत नमन आपके चरणो मे समर्पित करता हुआ, अपनी अभिवन्दना एव विनयाजली प्रस्तुत करता हूँ।

भाव-पुष्प

❑ *सन्तोषकुमार जैन*

परम पूज्य प्रकाण्ड विद्वान, जिन शासन प्रभावक, सन्मार्गदिवाकर, निमित्तज्ञानशिरोमणि, वात्सल्यमूर्ति, करुणासागर, आचार्यरत्न श्री विमलसागर जी महाराज जहाँ पर भी पर्दापण करते हैं वहाँ ही दर्शनार्थियो की भारी भीड़ जमा हो जाती है। लगता है कि धरती पर समवसरण की रचना हुई है, यह आचार्य देव के महान पुण्य की महिमा है। हम सब जनसमुदाय का महान सौभाग्य है जो ऐसे तपस्वी सन्तो के दर्शन हमें मिल रहे हैं।

आचार्यश्री रत्नत्रय तप से सुशोभित हैं, व परहित मे सदैव तत्पर है जो देश भर में घूम-घूम कर जैन धर्म का महान प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। अनेक भव्यजनों को दीक्षा प्रदान कर उन्हें वैराग्य मार्ग पर बढ़ाने में आपकी प्रेरणा ही मूल कारण रही है। आज ७५ वर्ष की आयु होने पर भी पूर्ण निर्दोष व्रताचरण के प्रति आ श्री सदैव जागरूक रहते हैं। आ श्री के जीवन मे अनेक बार उपसर्ग आये परन्तु आप किंचित् भी नही डिगे। त्याग-तपस्या में आ श्री सचमुच महान हैं।

सन्मार्ग दिवाकर—'सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे' समस्त प्राणी मात्र को समता भाव से आशीर्वाद देते हुए करुणा से प्राणी मात्र का कल्याण करने मे तत्पर हैं।

निमित्त ज्ञानी—मानव के चेहरे के भाव को परख कर गृहस्थ जीवन की यथार्थता हेतु, श्रावक को व्रती, सयमी

बनाकर धर्म की धारा मे जीवनप्रवाह को प्रवाहित रखने मे आचार्यश्री का मगलमय आशीर्वाद सदैव मिलता रहे।

मैं ऐसे महान आचार्यरत्न के चरणो में मन-वचन-काय से कोटि-कोटि-कोटि नमन करता हूँ।

विमल आत्मा

❑ *डॉ. दयाचंद जैन सिद्धान्तशास्त्री*

चारित्रचक्रवर्ती-जो दिगम्बर मुनि के २८ मूलगुणो ८४ लाख उत्तरगुणो और शील की १८ सहस्रधाराओ की साधना करने मे चक्रवर्ती के समान समर्थ है।

निमित्तज्ञानभूषण-जो तपस्वी विभिन्न निमित्तज्ञान को दर्शाने मे भूषण के सदृश विमल है।

सन्मार्गदिवाकर-जो यति सम्यक् मार्ग मोक्षमार्ग को आलोकित करने मे मार्तण्ड के समान है।

करुणानिधि-जो योगी सभी प्रकार के प्राणियो के कष्टो को बहिष्कृत करने के लिए दयासागर है।

वात्सल्यमूर्ति-जो सयमी नि स्वार्थ भाव से देशबन्धु, नगरबन्धु, सामाजिक बन्धुओं के प्रति कल्याणकारक विश्वबन्धुत्व की विमलमूर्ति है।

अतिशययोगी-जो साधु स्वकीय सिद्धमत्रवाद के द्वारा अतिशयो के प्रभावक है।

तीर्थोद्धारक-चूडामणि-जो तापस मन्दिर-प्रतिमा-स्वाध्याय शाला के जीर्णोद्धारक, निर्मापक होने से तीर्थचूडामणि पद से सुशोभित है।

विमलवाणी-विमलस्वान्त-जिन सयमी की वाणी सरस, सरल, आध्यात्मिक, निर्मल एव शान्तिप्रद है।

उपर्युक्त गुणो से सम्पन्न श्री १०८ विमलसागर जी महाराज के प्रशस्त, शान्तिपूर्ण, दीर्घजीवन की पूर्ति हेतु श्रद्धामाल्य समर्पित करते है।

इस युग के महान योगी

❑ *पं. राजकुमार शास्त्री*

जिनके मुख पर सदा प्रसन्नता, जिनका हृदय करुणा से ओतप्रोत, जिनकी वाणी से अमृत का मधुर रस सदैव झरता रहता है, जिनका पूरा जीवन ही विविध प्रकार के दुखो से पीड़ित प्राणियो का उपकार करता हुआ ही बीता है ऐसे पर दु खहर्ता महामानव किस के द्वारा वन्दनीय नही होगे अर्थात् ऐसी महान आत्मा को तो सारा विश्व ही नमन करेगा। ऐसी ही विश्व वन्दनीय, निमित्तज्ञानशिरोमणि, तपोपूत, विश्वविभूति, परमपूज्य भारतगौरव हमारे दिगम्बर जैनाचार्य श्री विमलसागर महाराज है। भारत का, आदिकाल से यह सौभाग्य ही रहा है कि इसे ऋषियों और सतो का समागम मिलता ही रहा है और उनके प्रवचनो का ही प्रभाव रहा है।

यह तो जैन समाज के कुछ अवशिष्ट पुण्य का प्रभाव ही माना जायेगा जो परम पूज्य धर्मदिवाकर प्रशममूर्ति

चारित्र-चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागर महाराज अपने परम पावन दिगम्बर जैम मुनि सघ के साथ उत्तर भारत में पधारे। वर्ना इधर तो श्रमणसस्कृति के आधार दिगम्बर जैन मुनिमार्ग का लोप सा ही हो गया था। जैनाचार्य श्री विमलसागर महाराज परम सौम्य और शान्त स्वभावी है। उग्र तपस्वी हैं। आपने जीवनपर्यन्त घी, नमक, तैल और दही छोड़ रखा है। इसी प्रकार की कठिन सयम साधना और उग्र तपस्या के प्रभाव से आप को इस प्रकार की वचन सिद्धि प्राप्त है, जिससे आपने अब तक अनेक अभावग्रसितो और पीड़ितो को स्वावलम्बी और निरोगी एव स्वस्थ बना दिया है।

उग्र तपस्वी जैन सत चिरकाल तक जीवत रहे और हम पर सदा छत्रछाया बनी रहे यही भगवान से प्रार्थना।

स्वपरकल्याण-रत आचार्यश्री

❑ ***पद्मभूषण श्री अक्षयकुमार जैन***

पूज्य आचार्य विमलसागरजी महाराज के प्रति विनयाञ्जलि प्रदर्शित कर मुझे आत्मगौरव का अनुभव हो रहा है। आचार्यजी के दर्शनो का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। उनके सरल, निरीह तथा वात्सल्य पूर्ण व्यक्तित्व का मुझ पर बड़ा प्रभाव है। ऐसे महान तपस्वी को शतश नमन।

प्रेरक व्यक्तित्व

❑ ***जस्टिस मिलापचन्द जैन***

मै अपने को परम सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे इस जीवन मे आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज के पावन दर्शनो का लाभ मिल सका, एक बार जयपुर मे व दूसरी बार सोनागिरजी मे। सोनागिरजी मे अति प्रात ही आचार्यश्री के साथ साथ पीछे पीछे पहाड़ पर स्थित सभी मन्दिरो के दर्शन इसी वर्ष किए थे। इस अवस्था मे आचार्यश्री का अदम्य उत्साह व स्फूर्ति देखकर मै आश्चर्य चकित हो गया था।

आचार्यश्री ने प्रारम्भ से ही ससार की असारता को जानकर आत्मकल्याण का रास्ता अपनाया। आपने इस मार्ग पर चलते हुए प्रतिमाव्रत, क्षुल्लक, ऐलक व मुनि दीक्षाऐ ली व आचार्य पद प्राप्त किया। आपने मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक, व क्षुल्लिका दीक्षाएँ दिलाई व सैकड़ो नर-नारियो को आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया।

आपने सर्वधर्म समभाव, सर्वजाति समभाव, सर्वजीव समभाव का उपदेश मानव जाति को दिया। वर्तमान परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य में जहाँ धर्म, जाति, सम्प्रदाय, भाषा व क्षेत्र के आधार पर कटुता, वैमनस्य, सघर्ष व हिंसा का बोलबाला है, समता, सद्भाव, सहिष्णुता, अहिसा की प्रासगिकता और भी बढ़ जाती है। आचार्यश्री ने अपनी दिव्यवाणी से इसका प्रचार-प्रसार किया व मानव मात्र को सन्मार्ग दिखाया।

आचार्यश्री की हीरक जयन्ती के पुनीत अवसर पर जैन समाज ने एक वृहत् अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पण करने की जो योजना बनाई है उसकी सफलता की मै कामना करता हूँ और आचार्यश्री को शत-शत वन्दन नमन करता हूँ।

सन्ति सन्ताः कियन्तः

❑ डॉ. सुरेशचन्द जैन

मन, वचन और काय की पवित्रता रूपी पीयूष से परिपूर्ण, अहर्निश स्व-परहित में लीन, पर-गुणानुशासी, स्वनामधन्य आचार्यश्री विमलसागर जैसे महापुरुष सन्त ससार मे कितने है।

मनसा वाचा कर्मणा स्वात्मकल्याण की भावना तथा मगल कामना से चिर आशीष का आकांक्षी हो, उनके चरणो मे शतश अभिवन्दन।

हृदय-परिवर्तन

पडित अवस्था मे आपने अनेक स्थानो पर निर्विघ्न पञ्चकल्याणक करवाये। एक घटना इसमे अपना विशेष महत्त्व रखती है। फिरोजाबाद के पास अतिशय क्षेत्र 'श्री राजमल' है। राजमल का पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव होना था। पडित श्री नेमिचन्द्जी प्रतिष्ठाचार्य थे। पडितजी 'राजमल' पहुँचे। नगर के सभी लोग भयभीत थे। "पडितजी, यहाँ साहबसिंह नामक डाकू है। यह बडा दुष्ट व्यक्ति है। वह हमारी प्रतिष्ठा में विघ्न उपस्थित करेगा।"

पडितजी की व्यवहार-कुशलता अपूर्व थी। प्रतिष्ठा के पूर्व ध्वजारोहण क्रिया होती है। पडितजी ने उस डाकू को बुलवाया और कहा—"देखो, इस धार्मिक कार्य का आरम्भ आपके हाथों से कराया जाएगा।" डाकू बहुत प्रसन्न हो गया। पडित जी ने ध्वजारोहण उस डाकू से करवाया तथा उससे कहा—"देखो। ध्वजारोहण करने वाले की बहुत जिम्मेदारियाँ होती है, अब इस नगर में किसी प्रकार का उत्पात नहीं होना चाहिए, हमारे इस महोत्सव मे किसी प्रकार की बाधा नही आनी चाहिए अन्यथा सारे पाप के भागीदार आप बनेगे।"

डाकू ने कहा—"पडितजी। आप समझते है यह कार्य आपका ही है? यह कार्य मेरा भी है। मै इस कार्य को अपना मानता हूँ। किसी प्रकार की बाधा आपके कार्य मे नही आयेगी।" पञ्चकल्याणक महोत्सव बहुत ही उत्साह व शान्तिपूर्ण तरीके से सम्पन्न हुआ। पडितजी की व्यवहार-कुशलता, सरलता, वात्सल्य से सभी प्रभावित हुए।

पडितजी ने डाकू से पाप का त्याग कराया और त्याग के प्रभाव से वह आगे चलकर एक आदर्श जनसेवी बना।

"जीवन भर झाड़ कर बैठे"

❑ युवारत्न शैलेश जैन

आचार्य विमलसागर के नाम से जैन धर्म के सूर्य की भाति ज्ञान का आलोक फैलाने वाले इस महान सत को अपनी पूर्वावस्था यानि गृहस्थावस्था मे जब इनका नाम नेमीचन्द था तब—

एक दिन यह अपने पिता के समीप आकर बैठ गया। जमीन गन्दी थी अत· पिता ने देखा पुत्र बिना देखे, सुने, झाड़े-पोंछे बैठे गया है अत व्यगात्मक शब्दो के बाणों से छेद दिया नेमीचन्द का हृदय·— कि कुत्ते भी पूँछ से झाड़ कर बैठते है तुम तो इसान हो"

बस नेमीचन्द के हृदय पर एक अमिट दाग बन गया और सकुप ले लिया कि मुझे जीवनभर झाड़कर बैठना है और एक दिन इस मनुष्य रत्न का सदुपयोग करने वे आचार्य महावीरकीर्तिजी के समीप आ गये और मुनि दीक्षा लेकर आचार्य विमलसागर हर हृदय के दुःख दर्द को निवारने वाले वात्सल्यसागर करुणानिधि बन बैठे।

ऐसे गुरुवर के चरणो में शत-शत नमन करते हुये मै जिनेन्द्र देव से यही कामना करता हूँ कि इन गुरुवर को मेरी उम्र दे दे और मुझे ऐसी सद्बुद्धि प्रदान करे कि मै भी एक दिन इनके पद चिन्हों पर चल सकने का साहस जुटा सकूँ।

युगाचार्य

❑ *सौ. शैलबाला काला*

वात्सल्य रत्नाकर, निमित्तज्ञानी, ध्यानी व ज्ञानी तथा तपस्वी आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज इस युग के महान आचार्य है। उनमे व्याप्त अलौकिक गुण निश्चय ही मोक्षमार्ग के सन्निकट भव्यात्मा के गुण है। स्व व पर हितकारी इन आचार्यश्री के गुणों का हम जितना गुण-गान करे, कम ही है। उनके चरणो की शरण व पीछी का आशीर्वाद पा हर प्राणी खुशी से फूला नहीं समाता है।

बम्बई चातुर्मास मे उनके जीवन दर्शन के लम्बे अवसर आये। सघ मे शोभायमान पूज्य मुनिराजों व आर्यिकाओ के सुबोध प्रवचन व आचार्यश्री के आर्शीवचन जन-जन के मन को आकर्षित कर रहे थे। आचार्यश्री की जन्म-जयती, पोदनपूर तीन मूर्ति का महा-मस्तकाभिषेक, इन्द्र ध्वज मडल विधान, सर्वोदय,घाटकोपर मे पचकल्याणक महोत्सव आदि आयोजनो से बम्बई समाज धन्य हो गया था। आचार्य श्री विमलसागर की विमल मुद्रा देख लोगो के मन भी विमल बन चुके थे। सारा नगर मानो विमलमय हो गया था।

ऐसे परम-पूज्य आचार्यश्री के दर्शन, सौभाग्य से मुझे होते आ रहे है और हमेशा दर्शन की लालसा बनी रहती है। पूज्य आचार्यश्री के पावन-विमल चरणो मे शतश नमन करती हुई यही भावना भाती हूँ कि उनका पवित्र आशीर्वाद दीर्घकाल तक प्राप्त हो हम सबको विमल बनाता रहे।

।विमलसागर महाराज की जय।।

शांति सुख के पथ दर्शक

❑ *अविनाश मेहता*

अक्टूबर १९७८ की बात है। मै अपने परिवार सहित हस्तिनापुरसे पूज्य आर्यिका ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में आयोजित प्रथम शिबीर में उपस्थित होकर रास्ते मे सोनागिरी सिध्दक्षेत्र पर विराजमान आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज के दर्शनार्थ गया था। साथ में समाजभूषण स्व प. तेजपालजी काला नादगाव और उनके सुपुत्र समाजसेवी वाणिभूषण श्री भरतकुमार काला भी थे। इन्ही के प्रेरणा व आग्रह से मै हस्तिनापुर गया था तथा इनके कहने पर सोनागिरी सिध्दक्षेत्र में पूज्य आचार्य श्री के दर्शनार्थ जानेका मेरा भाव बन आया था।

वह मेरे लिए प्रथम दर्शन था। प्रथम दर्शन मे ही मेरे जीवन में अमुलाग्र मोड आया और दिन प्रति दिन मेरी तथा परिवारकी धर्म और धर्माचरण व धर्मसेवा के प्रति रूचि बढने लगी। आचार्य श्री की मेरे पर महान कृपा व आशीर्वाद रहा जिससे मेरे जीवन में एकदम बदलाव आया। आचार्य श्री का सोनागिर सिध्दक्षेत्र में मैने मेरे कॅमेरेसे जो फोटो निकाला वह अत्यन्त प्रसिध्द और आकर्षक को प्राप्त हुवा। मुझे-मालुम भी नहीं था कि मै इतना अच्छा फोटो निकाल भी सकता हूँ? उस फोटो की सर्वत्र- माग होने लगी मेरी श्रध्दा बढती गयी और मेरा फोटोग्राफी और व्हीडीओ फिल्म का व्यवसाय भी बढता गया। यह आचार्य श्री के आशीर्वाद का ही चमत्कार था।

सन १९८२ नोव्हेम्बर में आचार्य श्री का सघसहित चातुर्मास बम्बई महानगर पोदनपूर में सम्पन्न हो रहा था। मुझे उनके चरणों में रहकर उनकी सेवा का महान भाग्य प्राप्त हुआ। बम्बई महानगर के स्थान-स्थान के मदिर व गृह चैत्यालय के दर्शन करते हुए जब वे मुलुड पधारे तो मेरे जैसे अत्यत छोटे व्यक्ति के मात्र निवेदन पर आचार्य श्री ने सघ सहित हमारे कॉलनी में एक दिनका विश्राम करनेका तय किया था। मेरा निवासस्थान व कॉलनी पवित्र किया। एक दिन के बजाय सघ चार दिन यहाँ पर ठहर गया था। मुझे आहार दान व वैय्यावृत्ती करनेका सुअवसर प्राप्त हुवा। मै धन्य हो गया।

तब से आचार्यश्री व सघ के चरणों में बारबार जानेका सौभाग्य मिलता रहा। और उनकी कृपा से मै भारत वर्ष मे अच्छा फोटोग्राफर्स के रूपमें समाजमें प्रसिध्दि को प्राप्त हो गया। और आज भी यह महान कृपा मेरे उपर बनी हुई है।

इनकी कृपा प्रसाद का ही यह सुफल है कि सुप्रसिध्द मुनिभक्त परमसेवा भावी उदार चेता श्री आर के जैन द्वारा आजसे दो वर्ष पूर्व सारे भारत वर्ष के तीर्थ और मुनियों, आर्यिकाओ का चित्राकन कर एव जीवनचरित्र का भव्य सग्रह बना देनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुवा। इस तीर्थ यात्रा में स्थान स्थानपर मुझे आचार्यश्री के सबधमें अनेको भक्तोने, महानुभावोंने अपने अनेको चमत्कारिक व गौरवशाली घटनाएँ सुनाई। वर्तमान युग परम भाग्यशाली है, जिसे ऐसा महान परोपकारी दयालु व करूणा का महानसागर सत का समागम प्राप्त हुवा है।

मेरा भी यह सौभाग्य है कि मुझे ऐसे सघ के चरणों में अनेको बार रहने का केवल गौरव ही नही बल्कि उनकी कृपा प्रसादका अनन्य अधिकारी बनने का गौरव भी प्राप्त हुवा है।

ऐसे परम उपकारी सत के चरणों में मेरा व मेरे परिवार का त्रिवार त्रिवार नमोस्तु।

समन्वयी आचार्यश्री

❑ *ताराचंद एम्. शाह*

परम वदनीय आचार्यश्री का सघसहित १९८२ का चातुर्मास बम्बई पोदनपूर (तीनमूर्ति) मे सम्पन्न हो रहा था। घाटकोपर में श्वेताबर धर्म के महामना उदारवादी सेठ श्री कातीलालजी अपने सर्वोदय तीर्थस्थान जहॉपर भारतमे प्रचलित सभी धर्म के आयतन मदिर, गुरू को स्थापित किया है मे, भव्य दिगम्बर जैन मदिर मूर्ति स्थापित करना चाह रहे थे। उन्होने मुझसे कहा कि, 'यदि आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज का आशीर्वाद तथा सानिध्य

मिल गया तो यह काम गौरवको प्राप्त होगा। श्री कांतीलालजी तथा श्री भरतकुमार काला को साथ लेकर आचार्य श्री के सानिध्य में पोदनपूर पहुचा। आचार्यश्री के सामने सारी परीस्थिति रखी। श्री कांतीलालजी ने भी अपने मनोभाव आचार्यश्री के सामने जाहिर किये। आचार्यश्री ने तत्काल अपनी सम्मति प्रदान कर आशीर्वाद प्रदान किया कि आगे बढो। मै आकर प्रतिष्ठा सम्पन्न करा दूँगा। मेरे उत्साह का पारावार नहीं रहा। श्री कांतीलालजी हर्षविभार हो नाचने लगे। यह वार्ता सारे समाजमें फैल गयी। विविध प्रकार से इसकी चर्चा भी हुई। परतु आचार्यश्री ने इन सब पर मात कर दी। और सर्वोदय तीर्थस्थान दिगम्बर सस्कृतिसे भर आया। बडी भारी धर्म प्रभावना हुई। यह महोत्सव कल्पना से भी अधिक सफल हुआ। मेरे जीवनका एक बहुमोल कार्य बन आया। मेरा जीवन धन्य हो आया। यह मात्र आचार्यश्री की उदार अनुकम्पा का ही सुपाक था।

मेरा सौभाग्य है कि आचार्यश्री के चरणो मे मुझे २५ वर्षोसे अधिक समय से जाने का सौभाग्य मिलता रहा है। उनका आशीर्वाद भी मिलता रहा है। मेरे जीवन में शांती व उन्नतिका पथ दर्शन भी आचार्यश्री से प्राप्त होता रहा है।

ऐसे परम उपकारी समन्वयवादी आचार्यश्री युगो युगो तक इस भूतल को गौरवान्वित करते रहे।

परम उपकारी आचार्यश्री

❑ *शिखरचंद पहाडिया*

यूँ तो आचार्यश्री का हमारे परिवार से उनके पडित ब्रम्हचारी अवस्था से घनिष्ठ सबध रहा है। सौभाग्य से हमारी माँ ने धार्मिक शिक्षा आचार्यश्री से उनके पडित अवस्था में पाई थी। वह धार्मिक सस्कार इतने मजबूत और दृढ थे कि हमारे सारे परिवार मे भी इन सस्कारो का बीजारोपण हो आया था। हमे भी मुनियोंके सानिध्य में जाकर वैय्यावृत्ति करना, जिनेन्द्र दर्शन करने की रूचि लगी हुई थी। मैने आजसे करीब २५ वर्ष पूर्व आचार्यश्री के दर्शन किए थे। तब से बराबर जहाँ भी आचार्यश्री का चातुर्मास होता है मै परिवारके साथ उनके दर्शन को जाता हूँ। जीवन में अपूर्व शाति पाते है। सौभाग्यसे आचार्यश्री के सघ का सघपति बनकर सघ का चातुर्मास सम्पन्न करने का मेरा वर्षो से बना हुवा भाव गिरिराज सम्मेदशिखरजी पर सफल हो आया। शिखरजी जैसे महान तीर्थपर मेरे शिखर जैसे भावोंको शिखरपर चढा देनेका महान कार्य मात्र एक आचार्यश्री के अनुकम्पा सेही सभव बन आया है। शिखरचद के भावोको शिखर पर विराजमान कर देनेके लिए शिखरजी जैसा महान स्थान प्राप्त हुआ यह निश्चित महान सुयोग है। यह मात्र आचार्यश्री के कृपा का ही प्रसाद है। ऐसे गुरू के चरणोंमे परिवार सहित बारबार नमन।

गुणोंके सागर विमलसागर : वे गुरू मेरे मन बसो

❑ *श्रीमती जंबूवती शाह*

सोलापुर मे परम पूज्य वात्सल्यमूर्ति आचार्य श्री विमलसागर मुनिराजका चातुर्मास था। जब उस समय की याद आती है तब वात्सल्यमूर्ति की छवि मेरे दिल मे छा जाती है। मैं उस समय पूरा महिना वही थी। तब पूज्य

मुनिराज का विहार आहार उपदेश सभी देखकर मै आनदमय हो गई थी। वैसा समय फिर कब आयेगा, यही सोचती रहती थी। एक दिन मै पूज्य महाराजजी के सामने स्तुति कह रही थी कि स्वामी मोक्ष का मार्ग बताओ, मुझे अपने चरणों के दास बनाओ। महाराजजी आराम कर रहे थे। मेरी स्तुति सुनकर वे तुरत उठकर पींछी ले आये और मुझे देते हुये बोले। ले लो हाथ मे। यही मोक्षका मार्ग है। तब मुझे कुछ भान नहीं रहा। मुझे लगा मै तुरत पींछी लेके इसी रास्ते पर चल दूँ। उस समय इतनी आनद मग्न हो गई थी कि मै स्वयको भूल गई। ऐसा मौका फिर कब आयेगा यही सोच रही हूँ। ऐसे सद्गुरु के दर्शन मुझे कब मिलेंगे यही विचार मन में बार बार आता है। गिरीराज मे वात्सल्यमुर्ति आचार्य श्री विमलसागरजी का चातुर्मास था तब मै भी वही थी। तब महाराज जी की दिव्य ध्वनि मुझे सुनने मिली। पहाडी पर विमलसागरजी का समवशरण ही दिख रहा था। मैने महाराज जी से प्रार्थना की कि महाराजजी गिरीराज का दर्शन करके मेरी ऑखे पवित्र हुई और तीन लोक के नाथ भगवान वीतराग की स्तुति स्तोत्र कहने से मेरा मुँह भी पवित्र हुआ। आपकी वाणी सुनकर मेरे कान पवित्र हुए। अब सिर्फ मेरे हाथ रह गये है। महाराज जीने मेरी तरफ देखा और वीतराग मुनिराज को मैने आहार दिया। मेरा जन्म सफल बनाया। गुरू चरणों मे मेरा त्रिवार नमोस्तु।

'रहे सदा सत्संग उन्ही का'

❑ *धरमचंद गंगवाल*

सन् १९५९ का अप्रैल माह होगा। कॉलेज की प्रथम वर्ष की परीक्षा देकर मै मेरे माता-पिता के पास सगमनेर आया था। उस वक्त हमारे भाग्य से हमारे घर मे आचार्यश्री ससघ विराजमान थे।

सगमनेर गाव मे दिगबर जैन का हमारा ही घर होने से तथा घर मे चैत्यालय होने से नासिक-पूना मार्ग पर जब-जब मुनिसघ विहार करते है, हमे उनके दर्शन का लाभ और उनके चरण हमारे घर मे पड़ते है। गाव मे १५०-२०० श्वेताबर जैनो के घर है। वे सब दर्शनको आते थे तथा उनका मुनियो की वैय्यावृत्ती मे हमे पूर्ण सहयोग मिलता था।

आचार्यश्री के दर्शन करते वक्त उन्होंने बड़े आत्मीयतासे मेरे शिक्षा के बारे मे पूछताछ की। अतींद्रीय ज्ञान द्वारा मुझे मेरे इम्तीहान के बारे मे बताया जो बिलकुल सच था। करुणाभाव से मुझे आशीर्वाद देते हुए कहाँ कि रोज सुबह भक्तामर स्तोत्र का 'अल्पश्रुत श्रुतवता ' यह श्लोक का मनन करना। आपका यह कहना मेरे अतर्मन मे स्थापित हो गया और आज भी मेरे दिनचर्याकी शुरुवात इस मत्र के पठन से होती है। मेरे विद्यार्थी दशा मे उत्तम यश मिलने मे इस मत्रका बहुत योगदान रहा, इतनाही नही, तदनन्तर गृहस्थाश्रम मे भी इसका प्रभाव रहा है।

आचार्यश्री का उठना-बैठना-बोलना इन क्रियाओ मेसे धर्म प्रवाहित होता है और इसलिए उनका आदेश-उपदेश हमारे जीवन शैली को धर्मप्रवण करता है। उनके सत्सग मे हमे सहज सुख-शाती प्राप्त होती है और हमारा मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है।
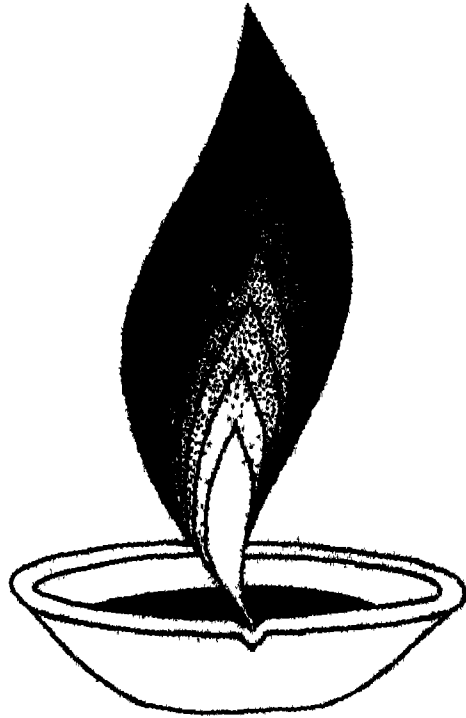
णमो आयरियाणम्।

भावोद्गार

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

विमल-स्तवन

❑ *मुनिश्री विरागसागर*

दोहा-परम दिवाकर हे गुरु, विमल सिन्धु महान।
करता हूँ, मै हृदय से, परम पवित्र गुणगान।।

तुभ्य नमोऽस्तु जिन नन्दन प्यारे,
तुभ्य नमोऽस्तु शिव मारग के सहारे।
तुभ्य नमोऽस्तु 'विमलसागर' बोधसार,
तुभ्य नमोऽस्तु तरण तारण कर्णधार।।१।।

तुभ्य नमोऽस्तु करुणानिधि विज्ञ प्यारे,
तुभ्य नमोऽस्तु गणनायक सन्त सारे।
तुभ्य नमोऽस्तु सुख सागर के ऋषीश,
तुभ्य नमोऽस्तु विमलसागर हे मुनीश।।२।।

तुभ्य नमोऽस्तु मुनिनाथ अहो श्रमण्य,
तुभ्य नमोऽस्तु गुरु सयम के करण्य।
तुभ्य नमोऽस्तु दु ख दारिद के शरण्य,
तुभ्य नमोऽस्तु तव पावन मूर्ति सौम्य।।३।।

तुभ्यं नमोऽस्तु गुण गरिमा है समाई,
तुभ्य नमोऽस्तु जग ने महिमा सु गाई।
तुभ्य नमोऽस्तु पद पकज पद्म प्यारे,
तुभ्यं नमोऽस्तु भव पार मुझे उतारें।।४।।

तुभ्य नमोऽस्तु प्रवर वत्सल के सुधाम,
तुभ्य नमोऽस्तु परम पावन मिष्ट नाम।
तुभ्य नमोऽस्तु गुरु नाम सुधा अकाम,
करता 'विराग' तव चरणो मे प्रणाम।।५।।

दोहा-विमल सागर हे गुरु, करुणानिधि मुनीश।
करुणाकर, करुणा करो, कर से दो आशीष।।

★★★

प्रणमामि नित्यं

❑ ग.आ. सुपार्श्वमती

कारुण्यपुण्यहृदय हृदि यो बिभर्ति,
यान्ति क्षणेन विपद क्षयमाशु तस्य।
भव्याग्नि-मानस-महार्णव पूर्णचन्द्र,
सस्तौम्यह विमलसागर-सूरिवर्यम्।।१।।

विश्वत्रयी-सकल-मगल-दान-दक्ष,
ससार-नीरनिधितारणयानपात्रम्।
कीर्तिप्रतापपरिवर्जित-पुष्पदन्त,
सस्तौम्यह विमलसागर-सूरिवर्यम्।।२।।

सन्ताप-पाप-भवनाशन-वैनतेय,
मिथ्यात्व-मन्मथ-तमोहरणोष्णभासम्।
सावद्य-योगविरत शुभध्यानलीन,
सस्तौम्यह विमलसागर सूरिवर्यम्।।३।।

रम्यस्वर सुगतिदर्शनदायिदेह,
श्रद्धानुबोध-चरणात्मक-योगशुद्धम्।
लोकत्रयैकतिलक निर्व्याजबन्धु,
सस्तौम्यह विमलसागर-सूरिवर्यम्।।४।।

हे मञ्जुलाशयगुरो भववार्धि सेतो,
वि[illegible]ना-विपुलमण्डप-शस्तदोष ।
विश्व [illegible] तव पादकज मुनीश,

संस्तौमि त विमलसागर-सूरिवर्यम्।।५।।

स्फूर्जिद्गुणावलि युतो जगति प्रतिष्ठं,
भव्यांगिनामिह कामि-कल्पवृक्षम्।
पचेषु वारण-निवारण पचवक्त्रं,
संस्तौमि त विमलसागर-सूरिवर्यम्।।६।।

दु खोपतप्त-जनशीतल-वारिधार,
शीताशुशुभ्रयशसा परिशोभमानम्।
वात्सल्य-पल्लवित-मानस-धारक त,
सस्तौम्यह विमलसागर-सूरिवर्यम्।।७।।

भक्त्या स्तवीमि तव पादयुग मुनीश,
नित्य स्मरामि मनसा गुणरत्नधाराम्।
श्रीवीरशासनविभासनबद्धकक्ष,
कायेन नौमि वर-भक्तियुत सुपार्श्वम्।।८।।

कल्याण वृत्ती वृततत्ति पयोद सूर्य
मिथ्यान्धकार-निकरक्षयतप्तवाहम्।
त्रायस्व मा विमलसागर सूरिवर्य,
स्वामिस्त्वदीय-चरण प्रणमामि नित्यम्।।९।।

❑❑❑

गुरुस्तवनम्

❑ *ग.आ. विजयमती*

लोके यस्य यशोराशि, तारकाधीशसमा मता।
कल्याणकारिका कथिता, तस्मै श्रीगुरवे नम ।।१।।

षड्त्रिंशत् गुणोपेत', धर्मध्यानपरायण ।
स्व-पर-कल्याणकर्ता च, तस्मै श्रीगुरवे नम ।।२।।

श्रुतजलधिपारग य , तत्त्वज्ञान-विलोचन ।
भव्याना भवतारकश्च, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।३।।

ससारताप-विनाशकश्च, कर्मकल्मषच्छेदक'।

चिन्मय-ज्योतिसयुक्त , तस्मै श्रीगुरवे नम ॥४॥

शिष्यानुग्रह-कुशल , दीक्षा-शिक्षा-सुदायक ।
ससार-सागर-पारग च, तस्मै श्रीगुरवे नम ॥५॥

राग-द्वेष-परित्यक्त समतारस-सुपानक ।
ज्ञानध्यानरत नित्य, तस्मै श्रीगुरवे नम ॥६॥

विमलसिन्धो विमलकीर्तिव्याप्तासि भूमण्डले।
'विजयमती' तस्य चरणाब्जे करोति शतवदनम्॥७॥

***

विमलाष्टक

□ *आर्यिका स्याद्वादमती*

तुभ्य नम सकल-साधु-गणाधिपाय,
तुभ्य नम सकल-शिष्य-सुबोधनाय।
तुभ्य नम सदुपदेश-विबोधनाय,
तुभ्य नम विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥१॥

तुभ्य नम त्रिजगदार्तिहराय नाथ,
तुभ्य नम सकलशान्तिकराय नाथ।
तुभ्य नम सकलदु खविशोषणाय,
तुभ्य नम विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥२॥

सूरि-प्रधान करुणामृतसागराय,
तुभ्य नम सकल-मगलपोषकाय।
तुभ्य नम सकल-दु खहराय नाथ,
तुभ्य नम विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥३॥

तुभ्य नम चरणचक्रधराय धीमन्,
तुभ्य नम परममार्ग-सुमोक्षगामिन्।
तुभ्य नम परम ध्यान-तपो विराजन्,
तुभ्य नम विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥४॥

तुभ्य नम परमशान्तिप्रदायकाय,

तुभ्यं नम निमित्त-वरबोधविशारदाय।
तुभ्य नम· जिनपभक्ति परायणाय,
तुभ्य नमः विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥५॥

तुभ्य नम सकलचित्तहराय नाथ,
तुभ्य नम प्रबलबुद्धि-विकासकाय।
तुभ्य नम· परमयोग-तपोधनाय,
तुभ्य नम विमलसिन्धु गुणार्णवाय॥६॥

तुभ्य नम· परमधर्मप्रभावकाय,
तुभ्य नम परमतीर्थसुवन्दकाय।
'स्याद्वाद' सूक्ति सरणिप्रतिबोधकाय,
तुभ्य नम विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥७॥

आचार्यवर्यमनघ सुरवृन्दवन्द्य,
वात्सल्यमूर्तिमतुल विनिवृत्तदोष।
आदित्यरश्मिसमकान्ति-वपु प्रदीप्त,
वन्दे गुरु विमलसिन्धु-गुणार्णवाय॥८॥

विमलसागर-सूर्यभिवन्दनम्

❑ डॉ. पन्नालाल जैन, साहित्याचार्य

द्रुत विलम्बित-वृत्तम्

समवलोक्य विपत्तिगत जन
भवति यस्य मन करुणाप्लुतम्।
हरति यश्च तदापदमागता
विमलसिन्धुमृषि विनमामि तम्॥१॥

जगति यस्य वच प्रसरेऽद्भुता
हितकरी क्षमता सुमता मता।
उपकृता मनुजाः प्रणमन्ति य
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥२॥

श्रमणसंघ सुरक्षण-तत्परो

विविधबोधकरं सुनृणां सताम्।
बुधवरा अपि यस्य पदानुगा
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥३॥

फलति भावि कथा कथने पटु-
र्दुरिततापविदारण-वारिद ।
इह च य प्रथितोऽस्तितरां क्षितौ
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥४॥

सुकृतपुष्टिकरी वचसा तति-
र्निखिलनृभ्य इहाति तरा प्रिया।
भवति यस्य सदा सुखदायिनी
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥५॥

विरति-पञ्चक-धारण-सरत
समिति-पञ्चक-पालन तत्परम्।
करण-पञ्चक-सजयनोद्यत
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥६॥

जिनवच प्रसर-प्रविसारण
प्रियतर भवभीति-विदारणम्।
जगति यस्य वच परिराजते
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥७॥

जयति साधु-समूह-सुवन्दितो
भवति य सुख-सन्ततिदायक ।
जनमनोरथपूर्तिकर पर
विमलसिन्धुमृषिं विनमामि तम्॥८॥

विमलसागर-सूर्यभिवन्दन
पठति यो मुदितेन हृदा सदा।
स लभते सुखसन्ततिमाग्रिमा-
मिति वदन्ति बुधा वदता वरा ॥९॥

****

नमोस्तु मम

❑ पं. अक्षयकुमार जैन

सप्तसिन्धु-प्रतिद्वदी विमलोऽष्टमार्णव ।
जम्बूद्वीपे भारताख्ये सोनागिरिक्षेत्रेस्थित ॥१॥

भवसागर-नौकासम भक्तेभ्यो मोक्षदायक ।
यशो-ज्ञान-कृपारत्न विचिन्वन्ति वशवदा ॥२॥

पच सप्तति वर्षेऽस्मिन् नेमिचन्द्रस्य चायुष ।
अभिवन्द्य कृतार्थोऽस्मि सेवको अक्षय-नामक ॥३॥

क्रातदर्शी पूर्णप्रज्ञा आचार्य-कुलभूषण ।
विमलपूर्वक सिन्धु भारते भात्यसंशय ॥४॥

बालसुलभ माधुर्य वार्धक्येऽपि तनोति य ।
विवेक-विनय-शील-भार वहति लीलया॥५॥

दम्भ-क्रोध-मनोद्वेग-लेश्याऽस्पृष्टस्तपोधन ।
पाप ताप च शोक च हरति मुनिपुगव ॥६॥

यस्य नाम स्मरणेनैव गलन्ति विघ्नराशय ।
कटोरीबाई-कुक्षिजो विमलो विमलसागर ॥७॥

हिस्त्र-ग्राह-झषाकुला सन्ति कति न सागरा ।
ब्रह्मचर्याऽहिसा-सत्यधारकोऽय विरलोदधि ॥८॥

त्रिरत्नधारी कि नाऽसौ मन्यते सागरोपम ।
ससार-ताप-दग्धाना देहिना शातिदायक ॥९॥

शीतलै स्वकृपापाङ्गै स्नेहार्द्रै मधुवर्षिभि ।
भविष्यद्रष्टा मोक्षस्त्रष्टा वीतरागो जितैषिण ॥१०॥

जिनधर्म-ध्वजादण्ड· पाखण्डमत-भजक।
निमित्तज्ञान-शिरोमणि महावीरकीर्तिकलश ॥११॥

जन्ममरणत्रस्तेन 'बिहारीलाल' लालेन।
बालेन दीक्षितो तपसा भवकर्माणि बन्धनम्॥१२॥

उत्तर्य दर्शयामास व्यन्तरो नारायण स्यात्।
मानव महामानवो भवति कर्मणा ध्रुवम्॥१३॥

एव महामन्त्र-साक्षात्कृतेभ्यो नमोस्तु मम।

दुस्साध्यमपि सुसाध्य कुर्याद्विमलसागर ॥१४॥

निमित्तज्ञान-शिरोमणि महावीरकीर्तिकलश ।
नमामि त्व त्रिकाल क्षमस्व मे परमेश्वरम्॥१५॥

तस्मै श्रीगुरवे नम:

❑ पं कमलकुमार जैन

विमलादिसागरात्र सम्यग्रत्नत्रयनिधे पात्रम्।
पुज्य दिगम्बराणां साधुरत्न प्रणमामि नित्यम्॥१॥

सघाधिपते। स्वामिन् तव चरणारविन्दयो सदा भक्ति ।
देयान्मे शिव सौख्य, शाश्वतसप्रार्थये भक्त्या॥२॥

तपसा पूजात्मान, पारमार्थिकसुदेशक नित्यम्।
स्वात्मस्वरूपनिष्ठ प्रणमामि सदा त्वदात्मानम्॥३॥

व्यवहार-निश्चयनयौ, मिथो मिलित्वा मुक्ति सद्दत ।
एष जिनागम कथित , ससारविनाशने हेतु ॥४॥

पचमहाव्रत-समिति-गुप्तित्रय च व्यवहार-चारित्रम्।
व्यवहार-मोक्षमार्गो, निश्चय-शिवमार्गस्य हेतु ॥५॥

अस्मिन् पचमकाले करालकाले कलिप्रधाने वै।
उभयलिग्ड -प्रधाना , शक्रा लोकान्तिकाश्च जायन्ते॥६॥

तत्र आगत्य नृलोके, तप्त्वा घ्नन्ति घोराणि कर्माणि।
गत्वा च हितकराय तिष्ठन्ननतकाल यावत्॥७॥

नास्ति कोऽपि सदेह , सम्यक्सर्वज्ञदेशिजे मार्गे।
उभयनय-सप्रयुक्ते, ससारिजीव-हितकराय॥८॥

आगमविहिते मार्गे, चलन्ति भव्यास्ते निश्चित यान्ति।
सिद्धपद खलु विमल, निरजन निर्विकार वै॥९॥

मोहो रागो द्वेषो, त्रयाणामेषा समूलविनाशाय।
येन धृत साधुत्व नमोऽस्तु तस्मै साधुत्वाय॥१०॥

स्वान्येषा च हिताय, त्यक्त सर्वेऽपि परिग्रहो येन।

तस्मै मुनिराजाय, नमोऽस्तु मे निस्पृहत्वांय॥११॥

ये मन्यन्ते देहमनादि-संसार-विषमवृक्षस्य।
मूल कार्मण सदा, विनाश्य सिद्धिं लभन्ते हि॥१२॥

बहिरभ्यन्तर-क्रिया, विरोधो हि भवविनाशने शक्त।
निश्चयो मोक्षमार्ग , निश्चित मोक्षपद दत्ते॥१३॥

गोइल्ल गोत्रजातेन, येन सिद्धान्त-शास्त्रिणा।
कमलादि-कुमारेण विनम्रेण मुमुक्षुणा॥१४॥

मोहध्वान्त विनाशाय, नमोऽस्तु विमलाब्धये।
यस्य भक्तिं समादाय, सिद्धभक्तिर्निरूपिता॥१५॥

आत्मस्वरूपनेयाय, ध्याननिष्ठाय साधवे।
ज्ञानार्जन-सुलग्नाय, पूज्यपाद महर्षये॥१६॥

दैवी-शक्तिप्रभावेण, जिज्ञासूना पिपासुनाम्।
पूरयते यदा कदा, तस्मै श्रीगुरवे नम॥१७॥

❑❑❑

श्रीविमलसागर-भक्तामरस्तोत्रम्

❑ *पं. श्यामसुन्दरलाल शास्त्री*

भक्तामराधिप-नरेश-खगेशवृन्दै
भव्यै सुदुस्तरभवाब्धितितीर्षुमुख्यै।
नित्यप्रबन्धपदपकजयुग्मधूलि
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य॥१॥

य सस्तुत विविधवाङ्मयभाषिलोकै
बङ्गागगुर्जरबिहारविदर्भजातै।
मध्योत्तराभ्रकटकोत्कलकेरलस्थै
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य॥२॥

बुद्धया विनाऽस्ति यदि कोऽपि जनोऽत्र सोऽयम्
स्वामिन्स्त्वदीयचरणाब्जनिराकरिष्णु।
निर्हेतुबन्धुरसि नाथ! यतोऽखिलस्य

जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३॥

वक्तु गुणान्स्तव मुनीन्द्र! महापवित्रान्
शक्त्याऽक्षमोऽपि शुभरागसमीरितोऽस्मि।
तद्रक्ष मा विषयदु खदवाग्निघातात्
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥४॥

सोऽह तथाकथितससृतिवर्धिमग्न
दीनाशयम्तव मुने पदपोतमीक्षे।
कारुण्यमूर्तिरपवर्गरमानुरागी
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥५॥

अल्पश्रुत जिनमुखोद्भवमास्थया ये
सञ्चिन्तयन्ति मनसा विबुधा भवन्ति।
श्रीमानुदाहरणमस्य गुणोत्तमोऽसि
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥६॥

त्वत्सस्तवे त्रिभवपुण्यपरीक्षितेऽस्मिन्
स्तोतु समग्रदुरितानि लय प्रयान्ति।
धूलिर्यथा पृथुवलाहकवर्षणेन
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥७॥

मत्वेति नाकिनरकिन्नरवन्द्यपाद!
त्वत्कीर्तने तनुमति सहसोद्यतोऽस्मि।
नाथ प्रसीद मम देहि करावलम्बम्
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥८॥

आस्ता तवाखिलगुणोद्भवगाढभक्ति
कुर्वन्ति ये जयकृति भवता समुच्चै ।
तेऽप्यैहिक सुखसमृद्धियशो लभन्ते
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥९॥

नात्यद्भुत यदि मुनीश महोपकारिन्!
सद्य प्रयान्ति तव भक्तिपरस्य विघ्ना ।
केका निशम्य मलयादुरगा यथा वा
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥१०॥

दृष्ट्वा भ[illegible]र्गानमसारतरा जिताक्ष
श्रीमानवाप जिनकल्पिमहोग्रदीक्षाम्।

स्वात्मावलोकनरत. सुसमाधिविज्ञ:,
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।११।।

यैः शान्तराशिभगणैस्तव जन्मलग्नम्
संसेवितं मुनिप! नान्यजनस्य चैवम्।
नान्यत्र यावदनुरूपतपस्विताऽस्ति
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्यः।।१२।।

वक्त्र क्व ते विविधघोरतप पवित्रं
तेजोऽन्वितसुरुचिर सुनिसर्गज च।
दग्ध कषायविषयै पुनरैहिकाना
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ।।१३।।

सम्पूर्णमन्दमतिलोकममन्दवाण्या
सम्बोधयन्प्रतिपुरं विहरन्ससघ ।
यस्सुर्यकालमुनिसत्तमतामुपैति
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ।।१४।।

चित्र किमस्ति कचलुञ्चनधीरताया
सर्वार्तिमूलवपुषि त्वमनास्थयाढ्य ।
घोरोपसर्गविजयी धृतशान्तमुद्र
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ।।१५।।

निर्धूमवर्त्म भवता शिवशर्मधाम्न·
रुग्णाक्षलोकमवदर्शितमात्मदृष्ट्या।
काष्ठाम्बर! श्रमणराज! सुजातरूप!
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ।।१६।।

नास्त कदापि तव याति विरक्तिरश्मि·
स्वप्नेऽपि दुस्सहपरीषहबाधितेऽपि।
हेम त्यजत्कपिशतान्नु शताभितप्तम्
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ।।१७।।

नित्योदय विजितलोकमरातिचक्रं
कर्माष्टकं प्रतिजन व्यथयन्त्यनभ्रम्
तत्कर्मकक्षदहनेऽनिशमुद्यतस्त्व
जीयाच्चिर विमल सागरसाधुवर्य.।।१८।।

किंशर्वरीषु दिवसेष्वथवा मुनीश।

नैक क्षणो यममृते भवता प्रयाति।
शश्वत्प्रजागरमतो विबुधा श्रयन्ति,
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥१९॥

ज्ञान यथा मुनिवरेण्य! सुलब्धिजात
स्वात्मावबोधनविधौ भवता प्रयुक्तम्।
नान्यैस्तथाऽमितभवैर्भुवि भारभूतै
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२०॥

मन्ये वर सहजशान्तिसुखप्रदायि
त्वत्पादपद्मयमल भवतापहारि।
नान्यान्कषायविषयातुरचित्तवृत्तीन्
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२१॥

स्त्रीणा शताधिकबल मनसि त्वदीये
कर्तु मनाग्विकृतिमद्भुतशौर्य!नालम्।
कि कम्पते सुरगिरिर्मरुति प्रचण्डे
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२२॥

त्वामामनन्त्यसुमतो भवभीतचित्ता
ससारवारिधिविलघनसेतुरूपम्।
गायन्ति ते शशिसमाच्छयश समुच्चै
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२३॥

त्वामव्ययानुपममुक्तिसुखाभिलाष
श्रित्वा बुधोऽनुभवति प्रनिजस्वरूपम्।
त्वद्वन्मुनीन्द्रपदमेत्य विभान्ति केवत्
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य

बुद्धस्त्वमेव निजबुद्धिमहोपयोगात्
योगीश्वर सततयोगनिरोधयोगात्।
त्व सिहवृत्तिधरणादतुलोऽसि शूर
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२५॥

तुभ्य नम स्वपरबोधविबोधकाय
तुभ्य नमो विजितराग-तपोधनाय।
तुभ्य नमोऽप्रतिमबालयतीश्वराय
तुभ्य नमोऽस्तु कलिकल्मषवर्जिताय॥२६॥

को विस्मयो मुनिपदोचितसद्गुणाढ्यं
निन्दन्तिधियोऽव्रतिनो मुने त्वाम्।
सन्धायतेऽहि विघ्नेऽपि किमत्र घूक.
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२७॥

उच्चैरशोभनवचोभिनरर्गल ये
सुस्वैरमार्षवचनानि कदर्थयन्ति।
तेऽपीह सन्तु भवदीय दयानुभाज·
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२८॥

सिंहासने गिरितले भवने श्मशाने
आक्रोशिते प्रमुदिते मिलिते वियोगे।
कक्षे पुरे नदतटे समचित्तवृत्त
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥२९॥

कुन्दावदातसुयशस्तव ये स्तुवन्ति
सम्पादयन्ति सुकृतान्यघपक्तिमन्ये।
वर्षासु हृष्यति वन बहु नाकपर्ण
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३०॥

छत्रत्रय दधसि नाथ! सुगुप्तिरूप
दुष्कर्मधर्मपरितापनिवारणाय।
सरक्षितो भवति तेन तवाश्रितेऽपि
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३१॥

गम्भीरता त्यजसि नैव दयानिधीश!
क्रोशत्यवाक्षिपति वक्ति मृषा विपक्ष ।
स्वीय क्वचिच्चरति मन्दधिया यथेष्ट
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३२॥

मन्दारसुस्तबकपूजितपादपद्म
मन्दस्मितास्यपरितोषितभव्यलोक ।
मन्दप्रयत्नजितकारिरिपुप्रपञ्च
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३३॥

शुम्भत्प्रभान्वितवपुस्तव सिद्धिसाध्य
साक्षादशब्दमपवर्गसृतिं व्यनक्ति।
नापेक्षते परिचये द्युमणिप्रबन्धम्

जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३४॥

स्वर्गापवर्गसुखवैभवलिप्सुरत्र
शश्वत्समाचरति जन्तुरहो विरुद्धम्।
नाथ त्वया भवभृता ददृशे सुवर्त्म
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३५॥

उन्निद्र! हे श्रमणसस्कृतिसत्प्रतीक!
चारित्रचक्रहतदुर्नियतिप्रपञ्च ।
आत्मात्मचर्चिजनलोचनवस्तुरूप
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३६॥

इत्थ यथा दुरितभूयसि दु षमेऽत्र
भव्यास्त्वया शिवपथि प्रसभ प्रवृत्ता ।
सार्थ जिनानुजपद विदधासि तेन
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३७॥

श्च्योतन्मदाष्टककषायशरानुविद्ध
शुक्ल स्वय त्वविरत परमुद्धरेत्किम्।
रत्नत्रयेश! तरणातुर! तारकस्त्व
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३८॥

भिन्नेभकुम्भमदलोलमधुव्रताल्य
सम्बन्धिनो मृतकवित्तविलोलुपाल्य ।
मत्त्वेति यान्ति शरण भविनो गुरूणा
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥३९॥

कल्पान्तकाव्यवचनाविषया गुरूणा
लोकोत्तराखिलगुणस्तवनप्रशसा।
स्वामिन्नमोऽस्तु शिरसा मनसा वचोभि
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥४०॥

रक्तेक्षण भृकुटिवक्ररदौष्ठकम्पा
क्रोधज्वरातुरजनस्य हि लक्षणानि।
कारुण्यसागर! दयार्द्र! सदा स्मितस्त्व
जीयाच्चिर विमलसागरसाधुवर्य ॥४१॥

वल्गत्तुरगकरिधेनुमहिष्यजाद्य
भार्यासहोदरसुतात्मजसेवकाद्यम्।

वित्तादिकं क्षणिकमीक्ष्य भवान् विरक्त
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४२।।

कुन्ताग्रभोजनयमी सुतपस्विसम्राट्
भीमोऽजनीह वृजिनाष्टसपत्नहन्ता।
ध्यायस्त्वदीयचरणाब्जयुगं स्ववृत्तौ
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४३।।

अम्भोनिधौ गतमहार्घ्य मणिर्न लभ्य
तद्वद्व्रताचरणसक्षममर्त्यकाय ।
ज्ञात्वा रहस्सपदि निर्विविदे मनीषी
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४४।।

उद्भूतभीभवभृतो भुवने भ्रमन्ति
भोगोपभोगभरणोद्भिदभगभुग्ना ।
त्वद्भक्तिभेषजभृता न भवेद्भवार्ति
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४५।।

आपादकं परिणतं यदशुद्धरूपं
कर्माष्टकावृतमनादिमदात्मतत्त्वम्।
मुक्तिर्न तस्य नियतेस्तपसा त्वमाख्य
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४६।।

मत्तद्विपो भ्रमति धावति निर्विवेक
शौण्डो मनोऽक्षविपिने रमते तथैव।
चेतोहृषीकविनियन्त्रणपण्डितस्त्वं
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्य ।।४७।।

स्तोत्रस्रजं विमलसिन्धुपदारविन्दे
मुक्तिश्रिये विनतिभावप्रतिनिर्वपामि।
श्रीमानतुंगमुनिनाथपदप्रसादात्
जीयाच्चिरं विमलसागरसाधुवर्यः।।४८।।

महावीरकीर्ते र्दार्ढ्यं, सुधर्माब्धेस्तपस्विता वीरसागरगाम्भीर्यं विमलाब्धे समन्वय ।
शान्तिसागरयोगीन्द्रपादयुग्माब्जषट्पद व्यरचद्भक्तिभावेन, शास्त्री श्रीश्यामसुन्दर ।।

विमल-स्तवन

❑ *आर्यिका-स्याद्वादमती*

आध्यात्मिक पद के अधिनेता,
चारित्र निधि के गुरु विजेता,
यतिवर विमल सिन्धु दुखहारी।
नित प्रति नमन त्रिकाल हमारी॥

श्रीश पद के भाने वाले,
एक रूप को ध्याने वाले,
कलह क्रोध हटाने वाले,
सोलह कारण भाने वाले,
आगम रूप बताने वाले,
ठारह दोष नशाने वाले।
यतिवर विमल सिन्धु ॥१॥

सत्पथ मार्ग दिखाने वाले,
मायाचार भगाने वाले,
रागद्वेष खपाने वाले,
गर्व परिणति हटाने वाले,
यतिवर विमल सिन्धु ॥२॥

दिनकर समकान्ति के धारक,
वाचा से सबके हो हारक,
कञ्चन सम देही के धारक,
रत्यारत्य विचार के हारक,
यतिवर विमल सिन्धु ॥३॥

विशुद्ध परिणति रमने वाले,
ममता धो समता को धारे,
लखकर निजगुण विमल कहाये,
यतिवर विमल सिन्धु ॥४॥

सागर सम शुचि निर्मल धन है,
गर्जन गो का जिनके मुख है,
रत्नत्रय के पूरित धन है,
जीवन सूर्य सदा विकसित है,

यतिवर विमल सिन्धु ॥५॥

◗◗◗

जीव और कर्म

❑ डॉ. लालबहादुर शास्त्री

महा विश्व मे सदा विचरते है जो दोनो मिलकर
और सृजन हैं अपनी दुनिया नयी चराचर,
है वे जीव तथा पुद्गल पर दोनो भिन्न परस्पर
वर्ण गन्ध रस हीन जीव है पुद्गल है इनका घर।

रहकर भी यो पृथक् शक्ति वैभाविक का बल पाकर
निज स्वभाव को छोड परस्पर मिल जाते हैं सत्वर,
यो अनादि से कर्मबद्ध यह जीव चला आता है
इसीलिए पर्याय दृष्टि से मूर्त नाम पाता है।

निज कषाय भावों से योगो की सकम्पना पाकर
कर्म पुद्गलो को अपनाता है यह अपने अन्दर,
फिर उनके आधीन स्वय ही सुखदुख फल पाता है
द्रव्य भाव कर्मों का यो यह चक्र चला आता है।

त्याग मोह ममता को यदि यह अपने को पहचाने
पर परिणति से दूर अगर अविनाशी निज को माने,
कर्म भार से तब यह भी हलका होता जाता है
और सिद्ध सर्वज्ञ निरजन क्रमश बन जाता है।

कर्मों को अपनाना अथवा उनसे पिण्ड छुडाना
उनमे परिवर्तन करना या उनका समय बढ़ाना,
है सब यह आधीन जीव के कर्म न कुछ कर पाता
है अनन्त बल का यह स्वामी उसको देख न पाता।

कर्मों की यह सत्ता तिल की और पहाड़ समझता
कायरता है तेरी जो इनमें अविराम उलझता,
तेरी भूलो की दुनिया को तू उजाड़ सकता है
ईश्वर या शैतान सभी कुछ तू ही बन सकता है।

छोड़ भीरुता, मत विलम्ब कर, दे तू उन्हे चुनौती
बतला दे तू एक जीव मे प्रभुता कैसी होती,
हो करके भगवान भिखारी का पद क्यो अपनाता
एक तुम्हारी ही सत्ता है जिसका यश जग गाता।

❑❑❑

वंदना

❑ *अशोक जैन*

खिलते है फूल जहाँ गुरुवर का गमन हो।
दुर्भिक्ष भाग जाता, खुशहाल चमन हो।

चरण जहाँ पडते है, अमन ही अमन हो।
गुरुवर विमलसागर जी शत शत बार नमन हो।
सत शिरोमणि परम पूज्य आचार्य विमलसागर आये।
शत-शत वन्दन करू चरण मे, रोम रोम हरषाये।।

धन्य बिहारीलाल पिता ने, कितना पुण्य किया है।
धन्य कटोरी माँ प्रतिभाशाली, सुत जन्म दिया है।
धन्य कोसमा नगर जहाँ श्री नेमिचन्द जी आये।
शत-शत वन्दन करू चरण मे रोम-रोम हरषाये।।

वाणी है निर्मल मुखमण्डल चन्द्र सूर्य शरमाये।
बाल ब्रह्मचारी योगीश्वर, सच्चा पथ अपनाये।
दर्शन करते भव्य जीवगण सोये भाग्य जगाये।
शत-शत वन्दन करू चरण मे, रोम रोम हरषाये।।

धन्य गुरु महावीर कीर्ति, चारित्र चक्रवर्ती कहलाये।
विमल गुरु को शिक्षा दीक्षा, दे आचार्य बनाये।
सहन परीषह करते वह अपने मे ध्यान लगाये।
शत-शत वन्दन करू चरण मे, रोम रोम हरषाये।।

पड़ते जहाँ चरण पावन, एक मेला-सा लग जाता है।
जो दर्शन को आता है, वह मन वाछित फल पाता है।
मिलता जिन्हे आशीष तुम्हारा, सब दुख-दर्द मिटाये।

शत-शत वन्दन करू चरण मे, रोम रोम हरषाये॥

एक बार आहार विधी से, अन्तराय को पाले।
जीव नही मर जाय पाँव से, चलते ऐसी चाले।
है आशीष 'अशोक' शीश पर गीत गुरु के गाये।
शत-शत वन्दन करूँ भाव से रोम रोम हरषाये॥

▲▲▲

ऐसे पूज्य विमलसागर

❑ प्रो. प्रकाशचन्द्र जैन

त्याग तपस्या मे हिमगिरि सम, आत्म त्याग मे रत्नाकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥

लाल बिहारी गृह कुसुमापुर, प्रगटा कुसुम कटोरी मे।
जिसकी कीर्तिगन्ध आलोड़ित, दिशा दिशा चहुँ ओरी मे।
त्याग परिग्रह बने दिगम्बर, मानव तन को सफल बनाकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥१॥

विमल हृदय है विमल ज्ञान है, तुम सम्यग्दर्शन धारी।
विमल देव चारित्र तुम्हारा, तुम जन-जन के उपकारी।
विमल कीर्ति महावीर कीर्ति की धर्मध्वजा को फहराकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥२॥

परम दिगम्बर वेश महाव्रत पच आपने धारे।
क्रोध मान माया आदिक है, सब कषाय इनसे हारे।
क्षमा मूर्त्ति है कृपा सिन्धु है, ये करुणा के है सागर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥३॥

देते ज्ञान प्रकाश चन्द्र सम, मोह निशा को हरने।
प्रवचन मे कलकल स्वर करते, आत्मज्ञान के झरने।
मुक्ति मार्ग के स्वय पथिक तुम, मुक्ति सुपथ के दीपकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥४॥

जिनकी वाणी से जन-जन को, जिनवर का सन्देश मिले।
पच पाप से मुक्ति दिलाये, ऐसा प्रिय उपदेश मिले।

दर्शन पाप ताप क्षय कर दे, कलिमल मन का दूर भगाकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥५॥

जिस पर वरद हस्त हो इनका, दुख दरिद्रता हट जाये।
सचित पुण्य सभी जग जाये, अशुभ कर्म सब कट जाये।
धन्य हुए है सभी भक्त जन, ऐसे गुरुवर को पाकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥६॥

इनके चरण जहाँ पड जाये, वही तीर्थ शुचि बन जाये।
शुभाशीष ऐसी कल्याणक, पाने को शिर झुक जाये।
कोटि नमन है तव चरणो को, है ऋषिवर। हे करुणाकर।
ऐसे है गुरुदेव हमारे, श्रीवर पूज्य विमलसागर॥७॥

❀❀❀

ऋषिराज हो, मुनिराज हो

❑ *प्रभुदयाल जैन*

ऋषिराज हो, मुनिराज हो, आज बजने लगे है सुख साज हो।
ये समाज हो स्वागत काज हो, आई श्रद्धा सुमन लिये आज हो॥
खुशियां के दीपक हम है जलाते, हिल-मिल मगल-गान है गाते।
नैन कलश से चरण धुलाते, भक्ति भाव से पूजा रचाते
पूजा रचाते ऋषिराज हो, मुनिराज हो ॥१॥

विमल कीरति धारक मुनिवर, सूरि शिरोमणि विमल सागर।
शान्त है मुद्रा छवि है मनोहर, तेज अनुपम गुण रत्नाकर--
गुण रत्नाकर ऋषिराज हो ॥२॥

पिता बिहारी लाल के प्यारे, मात कटोरी बाई दुलारे।
ग्राम कोसमॉ है प्रगटाये, नेमि चन्दर आप कहाये--
आप कहाये ऋषिराज हो ॥३॥

बालपन से रहे ब्रह्मचारी, क्षुल्लक, ऐलक दीक्षाधारी।
सोनागिर गुरु महावीरकीर्ति, सन्मुख दीक्षा निर्ग्रन्थ धारी--
निर्ग्रन्थ धारी ऋषिराज हो ॥४॥

आठ वर्ष फिर अति तप कीना, जिनवाणी का मनन है कीना।

तदनन्तर निज सघ बनाया, टुण्डला में पद आचार्य पाया—
आचार्य पाया ऋषिराज हो . ।।५।।

धर्म प्रभावक भारी हैं गुरुवर, निज पर हित में रहते है तत्पर।
शिक्षा, दीक्षा दे के तपोवर, करते सुदृढ़ जन मुक्ति के पथ पर—
मुक्ति के पथ पर ऋषिराज हो. ।।६।।

सप्त ऋषि जिस सघ विराजे-क्षुल्लक, ऐलक आर्यिका राजे।
दर्श से जिनके सौभाग्य जागे, रोग मरी दु:ख, दुर्भिक्ष भाजे—
दुर्भिक्ष भाजे ऋषिराज हो ।।७।।

सघ गुरुवर आप पधारा, हो गया पावन नगर हमारा।
चमका हमारा भाग्य सितारा, ज्ञान का फेका इक उजियारा—
इक उजियारा ऋषिराज हो ।।८।।

मंत्र-शिरोमणि

❑ *मदनलाल गोधा*

मत्र-शिरोमणि वाणी-विनायक, निर्मल मन है, हे योगीश्वर।
पारसमणि सम तन है मौलिक, पा स्पर्श बने जन ईश्वर।।

त्यागी भी है उच्च कोटि के, आध्यात्मिक दार्शनिक, सैद्धान्तिक।
प्रखर बुद्धि के धनी है पडित, सरस स्वभावी शुद्धात्मिक।।
जीवन उसका होता तारण, जिस पर कृपा करे श्री मुनिवर।
मत्र-शिरोमणि वाणी-विनायक, निर्मल मन है हे योगीश्वर।।१।।

लाखो दु खित मन, त्रसित व्यक्ति हर, चरणों मे गुरुवर के आता।
श्रद्धा-पूर्वक सेवा करके, मनवाछित वह फल है पाता।।
रोता आता हँसता जाता, हर व्यक्ति के है प्राणेश्वर।
मत्रशिरोमणि ।।२।।

जहँ-जहँ चरण पड़े मुनिवर के, औषधि बन जाती वह माटी।
गुरु-चरणो की धूल लगाकर, मानव बन जाता हर पापी।।
रोग शोक भय सब मिट जाते, छूट जाते सब बुरे व्यसन।
मत्रशिरोमणि ।।३।।

चातुर्मास हो यदि गुरुवर का, जहाँ अकाल हो पड़ा हुआ।
चमत्कार ऐसा हो जाता, फसल उगे अरु भरे कुँआ।।
हरित दिशाएँ होती चारो, उगे बजर मे धान स्वय।
मत्रशिरोमणि ।।४।।

तीर्थंकर सम मुद्रा इनकी, महिमा इनकी अपरंपार।
एक बार जो दर्शन कर ले, हो जाता भव-भव से पार।।
ध्यान तपस्या एकान्त चित्त से, करे लगाकर पद्मासन।
मत्रशिरोमणि ।।५।।

मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी और त्यागी सारे।
इतना बड़ा सघ गुरुवर का, अन्य नही दिखता जग सारे।।
नाम 'विमल' है, कार्य विमल है, विमल स्वच्छ आत्मा निर्मल।
मत्रशिरोमणि ।।६।।

आओ सभी मिल सेवा करे, वैयावृत्य करे सब मिलकर।
भय, बाधा, सकट मिट जावे, सुख सपदा, पावे वैभव।।
स्वच्छ हृदय से शीश झुका लो, श्री विमलसागर गुरु चरणो मे।
मत्र-शिरोमणि वाणी-विनायक, निर्मल मन है, हे योगीश्वर।।७।।

***

विमल-विनयाञ्जलि

❑ ***धर्मप्रकाश जैन 'अचल'***

हे गुरु विमल, विमल हृदय, मुक्ति मार्ग प्रतिपाल,
जग को नश्वर जानिके तोड दिया भ्रमजाल।
पूज्य चर्तुविध सघ को, झुक जाता जग भाल,
जगत सिन्धु तारण तरण, जिओ हजारो साल।।

जीता महान मोह बिना खडग बिना ढाल,
हे लाल कटोरी के तूने कर दिया कमाल।टेक।।

पूरब को छोड़ कोसमों मे रवि उदय हुआ,
जिसने गृहस्थ धर्म को मन से नही छुआ।
इस जगत के जजाल को जजाल जान के,

जैनेश्वरी दीक्षा धरी मग मुक्ति मान के।

तू चल पडा विरक्त होके, तोड़ मोह जाल,
हे लाल कटोरी के तूने कर दिया कमाल॥१॥

तुमने अहिंसा धर्म को साकार दिखाया,
मानव को मानवीयता का पाठ पढ़ाया।
घर-घर मे महावीर का सिद्धान्त सुनाया,
ससार में भटकों को मुक्ति मार्ग बताया।

तू सरल शान्ति सौम्य है वात्सल्य गुण विशाल,
हे लाल कटोरी के तूने कर दिया कमाल॥२॥

है उपाध्याय भरत सिन्धु विमल सघ मे,
ससार को उपदेश देते सप्त भग में।
स्याद्वादमती आर्यिका नन्दामती महान,
इस चतुर्विध सघ का मै क्या करूँ बखान।

पचम नही, इस सघ से आया चतुर्थ काल,
हे लाल कटोरी के तूने कर दिया कमाल॥३॥

जो व्यक्ति गुरु-भक्ति में धन अपना लगाते,
पाते वे अतुल सम्पदा ये भक्त बताते।
मुनि सघ जितने देश मे मम नमस्कार है,
पर विमल सिंधु सघ मे कुछ चमत्कार है।

इस धर्म के प्रकाश से झुक जाता अचल भाल,
हे लाल कटोरी के तूने कर दिया कमाल॥४॥

***

चमत्कार को नमस्कार

❑ *छोटेलाल जैन*

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते है।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौड़े दौड़े आते हैं॥१॥

बाल्यकाल में करी पढ़ाई, यौवन इनको रास न आया।

महावीर कीर्ति गुरु गरिमा रक्खी, आचार्यश्री पद पाया।।
जिनके केवल दर्शन से ही, सब पाप शमन हो जाते है।

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते है।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौडे दौडे आते है।।२।।

करुणा दया प्रेम के द्वारा, हर जीव यहाँ मुसकाया है।
सन्मार्ग दिखाया है सबको, सापेक्ष तत्त्व बतलाया है।।
करुणानिधि की करुणा द्वारा, सब दु ख दूर हो जाते है।

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते है।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौडे दौड़े आते है।।३।।

स्याद्वाद ध्वजा फहरा करके, यह जैन धर्म चमकाया है।
हर प्राणी का दु ख दूर किया, 'वात्सल्य मूर्ति' पद पाया है।।
आचार्यश्री की वाणी से, सब मत्र-मुग्ध हो जाते है।

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते हैं।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौडे दौडे आते है।।४।।

आचार्यश्री का आशीर्वाद, मन वाछित फल का दाता है।
जो आता कृतकृत्य हो जाता, आशीष तुम्हारा पाता है।।
अभिनदन है, शत शत वदन, आचार्यश्री के गुण गाते है।

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते है।
है चमत्कार को नमम्कार, सब दौडे दौड़े आते है।।५।।

***

विमल-गुणगान

❑ *हुकमचंद वैद्य*

श्री विमलसागर गुण उजागर दीन बन्धु दयानिधे।
आचार्य पुगव मुनि शिरोमणि वन्दन त्रिशुद्धया गुणनिधे।
त्याग भव के राग को छोड घर परिवार को।
वन के तपस्वी चल पड़े करने भवोदधि पार को।।

तुम हो दयासागर गुणी व्रत शील के भडार हो।

त्यागी तथा ध्यानी बने कीना जगत उद्धार को।
जो भी शरण मे आ गया पावन उसे बना दिया।
भक्त तन मन से बना उद्धार उसका कर गया।।

राजेन्द्र पन्नालालजी साथी रहे थे पठन में।
उपदेश पाकर आपका वे महाव्रतधारी बने।
सुपार्श्व मुनिसुव्रत नाम मे सागर मिला दो साथ थे।
उद्धार उनका हो गया नर जन्म का फल पा गये।।

रोगी दरिद्री निर्धनी अरु कर्म नागो से डसे।
भैरव भवानी पूजते मिथ्यात्व चक्कर मे फँसे।
आकर शरण मे आप की जिनमत्र वे जपने लगे।
मिथ्यामतो को छोड़कर जिनधर्म प्रेमी बन गये।।

इनके अलावा सैकड़ो त्यागी व्रती बना लिये।
त्याग के फल से सदा नर देवगति मे जा लिये।
है सघ विस्तृत आपका सब धर्म साधन लीन है।
व्रत ज्ञान सयम शील मे सब भाँति से परवीन है।।

श्री अरहसागर भरतसागर आदि मुनिगण साथ है।
आर्यिका अरु क्षुल्लिका क्षुल्लक नमावत माथ है।
धन्य है जीवन उन्ही का आत्मशोधन जो करे।
वे मूढ है दुर्भाग है, जो विषय चक्कर मे घिरे।।

सौभाग्य से शुभ गति मिली यह मनुज की यह देह है।
कर लो निजातप उन्नति यदि बुद्धि तुम मे शेष है।
पाँच इन्द्रिय के विषय ठगते रहे इस जीव को।
चारो कषायो ने दबोचा बेसुध बनाया जीव को।।

मोह ने आकर के इसका निज स्वरूप भुला दिया।
भवकूप मे पड़कर चतुर्गति दु ख को सहता रहा।
दया सागर गुण उजागर, कृपा अब ऐसी करो।
दु खरूप इस ससार से, भव वास की बाधा हरो।।

तप पूत आत्म शरीर मे ज्योति अपूर्व समा रही।
शुद्धचिदातम रूप मे परिणति सदा ही जा रही।
सुख-शान्ति अमृत के धनी निजआत्मध्यानी गुणनिधे।
करता प्रणाम सदा तुम्हें आशीष दो हे दयानिधे।।

होओ शतायु आप ऋषिवर कल्याण भविजन का करो।
धरम जिनवर का सदा उनके हृदय मे नित भरो।
प्रभु पार्श्व से मम विनय है, दीप यह जलता रहे।
बनकर प्रकाशक धर्म का अज्ञान तम हरता रहे॥

मै भी तुम्हारा-सा बनूँ भववास की बाधा हरूँ।
निजचिदात्म ध्यायकर कर्म मल का क्षय करूँ।
जय जय सदा हो विमलसागर ज्योतिपुज प्रदीप की।
सौभाग्य नित बढता रहे स्तुति करे जो आपकी॥

***

वचनसिद्धि के सन्त

❑ *विमलकुमार सोरया*

पुण्य पुञ्ज के रूप आपने मानवता को किया उजागर,
परम पूज्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर।
पतित जनो को पथ दर्शाकर, दु खीजनो की विपदाएँ हर,
धर्म-ज्योति से हुआ धन्य नर, पावन चरणो की रज पाकर॥

है मुद्रा अर्हत आपकी, धर्म धरा के पुञ्ज दिवाकर,
कीर्ति पताका फहरायी है, जयकारो से गूँजा अम्बर।
तप साधना से उज्ज्वल तन, तत्त्व चितन से उज्ज्वल मन,
ज्ञान ध्यान से हुआ आपका, मगलमय यह मानव जीवन॥

श्रमण सस्कृति के प्रतीक बन, मानवता के जीवन दर्शन,
हे युग के निर्माता गुरुवर, शत-शत बार आपको वदन।
है तुमसे जीवन्त धरा पर, महावीर का जीवन दर्शन,
है तुमसे जीवन्त लोक मे, सयम का यह अद्भुत दर्पण॥

तुमसे है जीवन्त विश्व मे श्रमण सस्कृति का यह आनन,
तुम ही हो हे गुरुवर मेरे, शिवपथ दर्शक मानव जीवन।
जब तक इस धरती पर शाश्वत, महावीर का मगल शासन,
तब तक उनके साथ आपका, सदा रहेगा शाश्वत जीवन॥

विमल-सिन्धु

❑ आर्यिका अभयमती

श्री विमल सिन्धु गुरु है जग से निराले।
रक्षा करो लह सुबुद्धि सुविश्व प्यारे।।
जो ज्ञान दीप भूपर तुमने प्रकाशा।
अज्ञानी प्राणियो को दी सुख की दिलाशा।।१।।

संसार खार लख सर्व कुटुब छोड़ा।
दिगम्बर भेष धर आतम प्रीति जोड़ा।।
जो केशलोच कर जैन ऋषि कहावे।
निर्दोष शुद्ध तप को कर स्वर्ग जावे।।२।।

ज्यो सूर्य ताप लख व्याकुल जीव सारे।
सतापहारी जल चदन चन्द्र प्यारे।।
त्यो आप ज्ञान बल से तम को नसाया।
चदा समान करी शीतल विश्व-छाया।।३।।

सारे देश मे है आप विहार कीना।
प्रान्त-प्रान्त मे है उपदेश दीना।।
कल्याण मार्ग बतलाकर शुद्ध कीना।
चारित्र सयम बिना व्यर्थ जीना।।४।।

चारो ही योग पर शास्त्र सभा करी है।
जो स्याद्वादमय सूक्ति रचाय दी है।।
ऐसी अलौकिक छवि विधि ने प्रदान की है।
जिन ज्ञान ज्योति जग मे चमकाय दी है।।५।।

है लोक शासन अजेय गुरु तुम्हारा।
नेता बने पतित को भव से उबारा।।
महावीर सिन्धु गुरु शिष्य हुए प्रसिद्ध।
कीजे विशुद्ध अभयादिमति प्रबुद्ध।।६।।

❋❋❋

विमल-संघ

❑ *यशवंत इंगोले*

विमलसागर का सघ ये देखो अनोखा।
जिसमे सभी त्यागियो का प्रबन्ध है चोखा॥१॥

भरत सागरजी मुनि का प्रवचन सुनो तुम।
स्याद्वादमती को सुन पा लो मजिल तुम॥२॥

तुम-हम और हम-तुम जो करते जगत् मे।
इस ससार जजाल से कभी न निकलते॥३॥

सत् चारित्र का तुम पालन करो जैनियों।
जिन धर्म का डका बजाओ तुम श्रावकों॥४॥

चित्राबाई है ये सघ की चालिका।
साथ है ब्रह्मचारी और कई श्राविका॥५॥

सभी सघ को है यह वदन हमारा।
अकोला पधारे यह भाग्य था हमारा॥६॥

युवा सघ और समिति की थी कुशलता।
अब आशीष यशवत है तुमसे माँगता॥७॥

◆◆◆

बेड़ा पार भव-सागर से

❑ *ज्ञानचन्द्र जैन*

सोनागिर पर शोभ रहे, श्रीचन्द्रप्रभू भगवान।
नगानग आदि मुनि वृन्द ज्ञानचन्द्र उर आन।
यही पर विराज रहे है, ससघ सभी मुनिराज।
विमल सिन्धु अरु भरतसिधुजी है सबके सरताज॥

इन सबके चरणन नमू, ज्ञानचन्द्र हरषाय।
केशलोच सब देख लो, सोनागिर पर आय।
देखो आज का उत्सव गुरु केश लोच होता है।
हमारे लिए ये दिन मुबारिक आज होता है॥

जो इच्छा थी हृदयो मे दर्शनो के आपकी भारी।
हमारे शुभ कर्मोदय से दर्शस्वामी का होता है।
पाठ देश भक्ति कर स्तोत्र पढ़कर के पद्म आसन।
सोनागिर मे विमलसागर मुनि का केश लोच होता है।।

तजे ससार के झगड़े बताया शान्ति मूरति ने।
निरालीशान का जग मे अहिसा धर्म होता है।
चूटने से तनिक भी बाल कितना कष्ट होता है।
लोच सिर मूँछ दाढ़ी का गुरु का आज होता है।।

समझ लो जन सभी देखने छवि आये है मुनि की।
इसी वश राह मे आवागमन सब दूर होता है।
सिद्धक्षेत्र श्री सोनागिर पर लोच किया गुरु जी ने।
ज्ञान तेरा आज बेड़ा पार भवसागर से होता है।।

OOO

विमलसागर स्तवन

❑ *पं. कमलकुमार जैन*

जैनेन्द्री-दीक्षा बिना, लिये कौन कब कहाँ।
मोक्षमार्ग को पा सके, बिन आग धुआँ कहाँ।।१।।

मनोनग्नता के बिना, बाह्यनग्नता व्यर्थ।
पुण्य कर्म के बिना ज्यो, सब पुरुषारथ व्यर्थ।।२।।

अन्तर बाहिर नग्नता, यही मोक्ष का मार्ग।
दोनो तुम से बन रहे, स्वय मुक्ति के मार्ग।।३।।

साधुसघ के अधिपति, पालें पचाचार।
पलवाते है सघ से, जो सद्व्रत-आचार।।४।।

आर्या क्षुल्लक क्षुल्लिका, रहते हैं सब सघ।
आत्म साधनारत रहे, पर से नहीं सम्बध।।५।।

क्रियाकाण्ड सब है सही, आगम के अनुसार।
भीतर बाहिर एक सा निश्छल रहे विचार।।६।।

पचाचार पवित्र है, जैसे सत्सरपच।
आत्म साधना हेतु है, पर का नही प्रपच॥७॥

ऐसे निर्मल सघ को, बारंबार प्रणाम।
मन-वच-तन से मै सदा, करता 'कमल' अनाम॥८॥

यह आतम अविनश्वर, विनशनशील शरीर।
चेतनधर्मा है सभी, कहता सघ सुधीर॥९॥

परम ज्ञानमय जीव है, धीर वीर गभीर।
पर निमित्त से हो रहा, चचल और अधीर॥१०॥

है परमातम स्वातम, बनता नि सदेह।
पावन पतितो का सदा, क्यो करता सदेह॥११॥

भव का मूल शरीर है, उसको माने जीव।
यही भाव ससार है, जो है स्वत अजीव॥१२॥

ममतादिक परविभाव है, छोड़ धरो निजरूप।
हानि लाभ मे मत गहो, गहो आत्म चिद्रूप॥१३॥

राज काज तो क्षण नश्वर, इनसे क्या सबध।
जन्म जरा सतति पृथक्, पावो मुक्ति अबन्ध॥१४॥

OOO

वन्दन-अभिनन्दन

❑ *पं. बाबूलाल फणीश*

उत्तर प्रदेश एटा मण्डल मे, 'कोसमा' ग्राम अति उज्ज्वल।
पूज्य तात श्री बिहारीलालजी, मात कटोरी समुज्ज्वल।
आश्विन कृष्णा सप्तम का दिन, बालक 'नेमी' चमकाया।
सवत् उन्नीस सौ तिहत्तर मे, दीप्तिमान बन कर आया।
अनुपम सागर की लहरो सम, जीवन महका चन्द्र वदन।
'सन्मार्ग दिवाकर' ज्योति पुञ्ज, युग-युग तक चमको नभ मण्डन॥१॥

आचार्य शान्ति सागर समीप, जब दर्शन कर मन हर्षाया।
तेजस्वी नेमी बालक ने, गुरु चरणो मे मस्तक नाया।

षट् आवश्यक पाले व्रत, संयम से जीवन को महकाया।
आत्म-साधना का पथ ले, वीतराग धर्म को अपनाया।
कर्मठ वीर तपस्वी बनने, को पाया जीवन चन्दन।
'आचार्यरत्न' श्री विमल सागर जी को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन॥२॥

गुरु गोपाल विद्यालय मोरेना मे जब पढ़ने आया।
जैन सिद्धान्त शास्त्री शिक्षा ले नेमी विद्वद् बन आया।
विद्यालय मे शिक्षा ले, धर्म ज्योति से जीवन चमकाया।
अद्भुत ज्ञान विज्ञान कला से, अनुशासन से दमकाया।
बन प्रधान जब ज्ञान कला से, आर्य समाज किया खण्डन।
'वात्सल्यमूर्ति' विमल सागर को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन॥३॥

माया, मोह, परिग्रह का जब, ममता से मुख को मोड़ा।
ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर के, आतम से नाता जोड़ा।
श्री सुधर्म सागर मुनिवर से ब्रह्मचर्य व्रत है पाया।
सच्चे सुख के पाने को जब, अन्तर मन है हर्षाया।
आत्मशोध मे लगे निरन्तर, महका जीवन स्पन्दन।
'सन्मार्ग दिवाकर' विमल सिन्धु को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन॥४॥

परम पूज्य श्री महावीर कीर्ति से, क्षुल्लक पद जब दीक्षा ली।
धर्मपुरी मे धर्म जगाने, ऐलक दीक्षा ग्रहण कर ली।
वृषभ धर्म से तिरने का जब, सुधर्म सागर चमकाया।
जैन-मन्त्र श्री णमोकार से, शुद्धात्म स्वरूप मे दमकाया।
स्वर्ण गिरि पर महावीर कीर्ति, से पाया जीवन कुन्दन।
फाल्गुन सुदी तेरस दिन महका, हुए 'विमल' मुनिवर वन्दन॥५॥

अट्टाईस मूलगुण धारण कर, निर्ग्रन्थ मुनीश्वर विमल चरण।
छत्तीस मूलगुण पालन कर, आचार्य सुशोभित दिव्य चरण।
पग दण्डो से नाप-नाप कर, सघ सहित विहार किया।
श्री तीर्थराज सम्मेदशिखरजी, आदि क्षेत्र पयान किया।
सारा भारत तीर्थ धाम बन गया, हुआ कीर्ति गुञ्जन।
'आतमदर्शी' श्री विमल सिन्धु को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन॥६॥

पद्मचक्र और श्रीवत्स से, धर्म ध्वजा तुमने फहराई।
रत्नत्रय पावन गंगा से, भवोदधि पार हो जाई।
स्याद्वाद और अनेकान्त से, महावीर का धर्म बतलाया।

अपाय विचय और धर्म ध्यान से, सबको गले लगाया।
मोक्ष पथ के पथिक आपने, किया मुनि धर्म सचालन।
'धीर, वीर, गम्भीर गुरु' को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन।।७।।

'पचविशति' मुनि नायक बन उन्तीस आर्यिकाओ ने जीवन जगाया।
ऐलक, क्षुल्लक और क्षुल्लिकाओ ने वैराग्य सुपद को पाया।
जो भी शरण आपके आया, उसने शरणागत पाया।
और अनेको ब्रह्मचर्य से, जीवन को है सफल बनाया।
विशाल मुनि धर्म के नायक, किया आपने सचालन।
परम पूज्य श्री विमल सिन्धु को शत-शत वन्दन अभिनन्दन।।८।।

पगदण्डो से भारत भू के नगर तीर्थ विहार किया।
षट्त्रिंशति स्थानो मे जब, गुरु ने चातुर्मास किया।
धर्मदेशना जन-जन मे दे, वीतराग उपदेश दिया।
चलते फिरते तीर्थ आप, जग तिरने का उपदेश दिया।
श्रमणोत्तम श्री विमल सिन्धु को नित-नित करे 'फणीश' नमन।
'गुरु आचार्य' विमल सागर जी को शत-शत वन्दन-अभिनन्दन।।९।।

❖❖❖

वात्सल्यरत्नाकर

❑ *मुनिश्री अमितसागर*

हे सागर!
तू है रत्नाकर
तेरी गोद मे
भिन्न-भिन्न जाति के
रत्न ही नही
जलचर भी
विचरण करते है
तेरी छाती पर
बड़े-बड़े
जलपोत ही नही
बडवानल भी

गुजर जाते हैं
द्रुतगति से
छाती को चीरते।

फिर भी तू!
कितना गम्भीर
गहरा
विशाल हृदय
समता रस मे
पगा
न रत्नो से राग
न जलचरो से
जलपोतो से
बड़वानलो से द्वेष
वायु ने भी
उद्वेलित कर तुझे
बहाने की कोशिश की है
फिर भी तू शान्त है।

अहो! ऐसे ही
सागर होते है
मुनिजन।
सुना है इनके दर्शन
सदा-सदा के लिए
खुले रहते है
साथ ही,
वे किसी से बुरा
बोलते नही है
अमीर गरीब
तौलते नही है
निन्दा-स्तुति मे
डोलते नही है
परीषहो से
घबड़ाना भी

उनका स्वभाव
नही है।

बस यही इनकी
विशेषता नही, '
अनजानी राहो मे
चलकर भी
मजिल पर पहुँच जाते है
साथ मे चलते
साथी को
वात्सल्य का रस पिला
हृदय से लगा लेते है
तभी तो विमल सागर होते भी
वात्सल्य-रत्नाकर
कहलाते है।

विमल वाणी माहात्म्य

❑ *डॉ. इन्दुबाला पाटनी*

विमलसागर तेरी वाणी, मन को इतना लुभाये,
अब तारो या न तारो, हम तेरी शरणे आये।
कभी अमृत पान कराये, कभी सच्चा मार्ग दिखाये,
अब तारो या ना तारो, हम तेरी शरणे आये॥१॥

तेरी वाणी मे झरे, अमृत की धार रे,
दर्शन दिखाये कभी करे उद्धार रे।
वही मन भावन, वही चितचोर रे,
धर्मवृद्धि कह-कहके, ये जीवन सफल बनाये॥
अब तारो या ना तारो ॥२॥

सभी जीवो पे करती, समता प्रवाह ये,
तीर्थंकर वाणी का ये, करती प्रसार रे।

जो भी इसे पिये सुखी बन जाय रे,
अमृत रस का पान कराके सारे दोष भगाये।
अब तारो या ना तारो . ।।३।।

⊂⊃⊂⊃⊂⊃

विमल-भक्ति

❑ *कमालखान भोपाली*

विमल सागर, द्वार पे आये, भाग्य हमारे जागे रे।
सारे दुखो को भूल गये हम, सुख ही सुख अब लागे रे।।

अन्तरा

(१) आचार्य विमल सागर, हर दिल में है आप उजागर।
शाति आप के द्वार से पाई, आप तो सब से आगे रे।।

(२) आपके होते दुख नही कोई, नेकी जागी और बदी सोई।
आपके आ जाने से हमारे दुख सब डर कर भागे रे।।

(३) आपके हम सब भक्त महाराज, आप का हर हृदय मे राज।
आपके दिल के धागो से अब जुड़े है सबके धागे रे।।

***

विमल-भक्ति

❑ *सुरेशचन्द्र जैन 'पंचरत्न'*

मिलता है सच्चा सुख केवल, हे विमल गुरु तेरे चरणो में।
रहे निरन्तर ध्यान हमारा, हे विमल गुरु तेरे चरणो मे।।

अन्तरा

जीवन मे तेरी याद रहे, तेरी याद सुबह और शाम रहे।
बस काम ये आठों याम रहे, रहे ध्यान तुम्हारे चरणो में।।
चाहे शूलो पर ही चलना हो, चाहे ज्वाला मे ही जलना हो।

पर चित्त न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों मे॥
चाहे चारो ओर अधेरा हो, चाहे सकट ने ही घेरा हो।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणो मे॥
यह विनती है पलपल छिनछिन, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों मे।
रहे निरन्तर ध्यान हमारा, हे विमल गुरु तेरे चरणों मे॥

×××

वन्दनीय ज्ञानपुञ्ज

❑ *वीरेन्द्रकुमार जैन*

विमल यशस्वी परम तपस्वी, श्री आचार्य विमल सागर।
महाव्रती, निज-पर-उपकारी, सद्‌गुरु करुणा के सागर॥१॥

आध्यात्मिक-नैतिकता का, सबक सिखाने वाले गुरुवर।
है वात्सल्य मूर्ति शुभ चिन्तक, समदर्शी सज्ञानदिवाकर॥२॥

सघ सहित हो जहाँ वहाँ पर, बन जाता शुभ तीरथ धाम।
ऐसे श्री आचार्य विमल सागर को मेरा विनम्र प्रणाम॥३॥

वन्दनीय अभिनन्दनीय जो, उनको शत-शत बार नमन।
उनके अभिवन्दन मे अर्पित, काव्य-कुसुम अक्षत चन्दन॥४॥

श्री आचार्य दीर्घजीवी हो, सबको ज्ञानामृत बाँटे।
सवर और निर्जरा द्वारा, अष्ट कर्म बन्धन काटे॥५॥

××××

गुरु-वन्दना

❑ *क्षु. उद्धारमती*

आनद सागरा गुरु महाराजा, विमल-विमल गुरु सागरा महाराजा (टेक)
सम्यक् पथ पर वीतरागता परम धर्म बताया,
सम्यक् पथ पर कैसे चलते, चलना हमे सिखाया।

हमें चल के बताया,
आनद सागरा गुरु महाराजा. ॥१॥

नयन करुणा नित्य वसत है, समता की गुरु मूरत हो।
हमसे तुमने कुछ नही चाहा, समदर्शी मन भावन हो।
आनद सागरा गुरु महाराजा ॥२॥

शान्तिसागर का आशीष मिला, महावीर कीर्ति के प्यारे हो।
मोक्ष मार्ग के धर्म पथिक, हम तेरी सगत चाहे हो।
आनद सागरा गुरु महाराजा ॥३॥

क्षमा तुम्हारा आभूषण है, जीव दया उर धारे हो।
दश धर्मो का प्रतिपल जीवन, जीकर तुम जग-न्यारे हो।
आनद सागरा गुरु महाराजा ॥४॥

ऋणी रहेगे हम सब वासी, समदर्शी गुरु प्यारे हो।
वेश दिगम्बर धन्य तुम्हारा, तन मन तुम पर वारे हो।
हमको देना दान धर्म का, प्रतिपल तुम से चाहे हो।
साधु तुम्हारा चरण पुजारी, ओम् ध्वनि प्रकटाये हो
आनद सागरा गुरु महाराजा ॥५॥

XXX

विमलसिन्धु तुमको प्रणाम

❑ *डॉ. प्रमिला जैन*

अवतरित हुए इस जगती पर तुम जग उपकारक पुण्य धाम,
श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम।

मानापमान समान जिनके व्रतो में निश्चल मेरु सम,
लोकेषणा से परे रहत जो उपयोग निश्चल धेनु सम।
अनियत विहारी नियमित विचारी उपदेश दिया फिर धाम-धाम,
यथाजात यतिवर श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम॥१॥

क्रूर नहीं निर्भीक सिंह सम, चिन्मय मणि के हो अभिलाषी,
निद्रा जयी इन्द्रिय विजयी मिताहारी हितमितभाषी।
सूर्य प्रभा धारक ओजस्वी सहे परीषह अति दुख खान,

मोक्षमार्ग साधक यतिवर श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।।२।।

पदयात्री हो पाणिपात्री भविजन को हो तुम सुखदायी,
गगा सम निर्मल मन धारक रत्नत्रय निधि हो गुणग्राही।
धर भेष दिगम्बर परम पवित्र छोड़ा धन वैभव और काम,
तुम हो सच्चे साधक गुरुवर श्री विमल सिंधु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।।३।।

अपने प्रति कठोर वज्र सम, हो नवनीत मृदु पर के प्रति,
ध्यानाध्ययन मे लीन रहे नित है अटूट भक्ति गुरु के प्रति।
पावन व्यक्तित्व है आपका पावन है क्रिया सारी,
विमल सिधु के चरणो मे मन वच तन से है धोक हमारी,
करुणा के सागर गुरुवर तुम वात्सल्य भाव की हो मूर्ति।
तुमको पाकर हे दयानिधे मन नाच उठा हे सयम मूर्ति,
किस मुख से करूँ गुणगान तुम्हारा, हो अनन्त गुण धाम।
बद्धाजलि 'प्रमिला' करती हे विमल सिन्धु! तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।।४।।

★★★

समर्पण

❑ *ग.आ. विजयमती*

जीवन समर्पित है मेरा, गुरुदेव आपके हाथों मे।
बिगड़े, सुधरे, कुछ भी होवे, अधिकार आपके हाथों मे।।

तव दर्शन से जीवन बनता, वाणी से ज्ञानामृत झरता।
चरणो में शीश झुकाते ही, अज्ञान तिमिर का क्षय होता।
मम चिदानन्द की गागर यह, गुरुदेव तुम्हारे हाथो मे।
जीवन समर्पित है मेरा, गुरुदेव तुम्हारे चरणो मे।।१।।

अन्तर की ज्योति जलती है, विषयो की ज्वाला बुझती है।
धन यौवन की क्षण-भगुरता से वैराग्य भावना बढ़ती है।
आनन्द घन कैसा बरस रहा, गुरुदेव तुम्हारे चरणो में।
जीवन समर्पित है मेरा, गुरुदेव तुम्हारे चरणों मे।।२।।

अब आप समान बना लेना, भव-भव की व्यथा मिटा देना।
'विजया' की अरजी सुन लेना, बस ज्ञान सुधारस दे देना।

शिव पथ की राही बन जाऊँ, गुरुदेव तुम्हारे चरणों मे।
जीवन समर्पित है मेरा, गुरुदेव तुम्हारे चरणो में।।३।।

✿✿✿

वरदान दो

❑ डॉ. कुसुम शाह

धर्म की अनुवर्तिका को, मर्म का प्रतिदान दो।
भक्ति की शुभ चद्रिका को, ज्योति का अनुदान दो।
कुसुम लतिका पल्लवित हो, बस उसे श्रमदान दो।
भारती को भरत सागर, सा विमल वरदान दो।

***

पथिक बने शिवद्वार के

❑ विनयकुमार जैन 'पथिक'

श्री आचार्य विमलसागर जी समकित मम परिवार के।
उनको पार लगाने आए, जो डूबे मझधार में।

ससार देह से वैरागी का धन्य दिगम्बर वेश है।
खोज रहे अपनी मजिल जो दूर चिदानद देश है।
छोड़ दिए जग वैभव सारे, भरा लखा दुख क्लेश है।
नरवर ये ससार यहाँ सुख मिला नहीं लवलेश है।
रूप निहारा अपना सुपने बिला दिए है प्यार के।
उनको पार लगाने आए, जो डूबे मझधार के।।

जहाँ उठे दो पग पावन तव, जन-जन सागर लहराता है।
मुदित हुए वे नयन छवि जो, एक बार लख पाता है।
जिन शासन के जन-जन के मानस से तेरा नाता है।
तू सचमुच आराध्य बना जग तुमको शीश झुकाता है।
अरुण तरुण सी अरुणाई में आए संयम धार के।

उनको पार लगाने आए जो डूबे मझधार के॥

वाणी में ऐसा जादू, अमृत का झरना झरता है।
तत्त्वश्वासो के कण-कण से बस आतमज्ञान बिखरता है।
दारुण कायक्लेश सहकर भी परिणामों मे थिरता है।
कहाँ भला विचलित होगे जब भरी हृदय मे समता है।
हम भटके भव वन मे पर तुम पथिक बने शिवद्वार के।
उनको पार लगाने आये जो डूबे मझधार के॥

❖❖❖

हम तुमको शीश झुकाते हैं

❑ *मोहनलाल जैन*

विमलसागर मुनि हमारे, हम तुमको शीश झुकाते है।
करके दर्शन पूज्य मुनि के, अपना भाग्य सराहते है।टेक॥

वीतराग है छवि तुम्हारी, सबके मन को भाती है।
दर्शन करने से मुनिवर के, दूर विपद भग जाती है॥
सुनकर वाणी पूज्य मुनि की, धर्म मार्ग अपनाते है॥१॥

कोसमों जैसे श्रेष्ठ ग्राम मे, पूज्य मुनि ने जन्म लिया।
बन आचार्य मुनिवर तुमने, जैन धर्म प्रचार किया॥
बैठ तुम्हारे चरण कमल मे, सच्चा सुख हम पाते है॥२॥

सरल स्वभाव तुम्हारा मुनिवर, करते तप तुम भारी।
नही परिग्रह पास तुम्हारे, तुमको नमन हमारी॥
अमृतमयी वाणी है तुमरी, तुमरे गुण हम गाते है॥३॥

शुभ आशीष तुम्हारी मुनिवर, बुद्धि निर्मल कर देती।
पूज्य मुनि की शुभ आशीषे, बिगड़ा भाग्य बना देती॥
पाकर शुभ आशीष तुम्हारी, कष्टों से बच जाते हैं॥४॥

कितना पावन नाम तुम्हारा, दुख सारे हर लेता है।
जिस पथ को अपनाया तुमने, मोक्ष महल को जाता है॥
मोक्ष महल की लेकर इच्छा, पास तुम्हारे आते है॥५॥

धन्य भाग्य है हमरे मुनिवर, दर्शन तुमरा पाया है।
करके दर्शन तुमरे हमने, अतस अलख जगाया है॥
तुमरी महिमा लिखकर मोहन, फूले नही समाते है॥६॥

◆◆◆

वन्दन

❑ ललितकुमार जोदावन

जरा आन के वन्दन करिये, विमल सागर यहाँ मुनिराज है।
आचार्य बडे है महात्मा, सारे जैनों के सिरताज है।
भर यौवन मे दीक्षा धारी, छोड़ा ममत्व परिवार का।
ज्ञान-ध्यान तपलीन हमेशा, कार्य करे उपकार का।
सारे भारत मे ये विख्यात है, विद्वान परम ऋषिराज हैं।
निमित्तज्ञानी शिरोमणि अरु परोपकारी मुनिराज है।

सुनो रे भैया

❑ मुनिश्री विष्णुसागर

सुनो रे भैया! विमल सिन्धु का नाम, सुनो रे।टेक॥
ग्राम कोसमाँ ज़िला एटा है ये शुभ स्थान।
यहाँ पर बसते लालबिहारी मात कटोरी जान॥ . सुनो रे

नेमीचन्द शुभ नाम धराया, पडित बने महान।
गुरु मक्खन से शिक्षा पाकर कीना स्वकल्याण॥२॥

गृह मे उनका मन नहि लागा, जग को दिया बिसार।
जाकर देखा सुधर्म सिन्धु को, मन में किया विचार॥३॥

ज्योतिष विद्या मत्र शास्त्र के हैं ये अति ज्ञाता।
इनसे हम ज्ञान प्राप्त कर करिहै जन-साता॥४॥

आचार्य कीर्ति महावीर से, दिगम्बर दीक्षा धार।

हर प्राणी के मन को हरते, वे है विमल अपार।।५।।

जिसने मायाचारी कीनी उन पर भी समभाव।
लज्जावश सम्मुख नहिं आते, ऐसा धर्म प्रभाव।।६।।

उपगूहन का पालन करते, पर दोषो को ढकते।
इनके सग दगा जो करते, उन पर भी करुणा रखते।।७।।

इनसे आशिष लेने आते, दु खी दरिद्री लोग।
जो उनकी आज्ञा को माने, पावे सुख सतोष।।८।।

ध्यानाध्ययन मे लीन रहे, जो उपसर्ग सहे महान्।
चुम्बक जैसी यह मुद्रा है, करे स्व-पर-कल्याण।।९।।

विष्णुसागर अरदास करत है हमको पार उतार।
याही से है शरणा लीनी कर दो भवोदधि पार।। सुनो रे भैया

★★★

आचार्य विमलसागर

❑ *मूलचन्द गनोड़िया*

पचहत्तर वे सावन ने अभिषेका निर्मल जल की धार से।
दशो दिशाएँ गूँज रही, गुरु विमल सागर जयकार से।।टेक।।

स्नेह नयन मे, दया हृदय मे, वाणी मे अमृत बरसे,
निमित्त ज्ञान की गगा बहाये, जन-जन का मन हरषे।
पुष्प सुगन्ध गध-सी कीर्ति, फैली है इस द्वार से।
दशो दिशाएँ ।।१।।

गाँव-गाँव के श्री सघ, प्यासे चातन म तन्म रहे,
यहाँ चौमासा है बड़भागी हूँ सोनागिर आज कहे।
आराधना धरम मे हर कोई आशिष लिये भव पार से।
दशो दिशाएँ ।।२।।

आचार्यश्री के चरणो मे, तुतलाना काव्य समर्पित है,
जिसको इस भव के क्या, भव-भव का पुण्य समर्पित है।
युग दृष्टा है जो परिवर्तन लायेंगे सरल विचार से।

दशो दिशाएँ. ॥३॥

लोहारिया के सब नर-नारी, गुरु-दर्शन को तरस रहे,
चातुर्मास हो लोहारिया में, बागड़ प्रान्त का भाग्य जगे।
मुझ-सा पापी तुम-दर्शन से, हो जाता भव पार रे,
दशों दिशाएँ गूँज रही, गुरु विमल सागर जयकार से।॥४॥

✪✪✪

श्रद्धा

❑ *रतनचन्द्र जैन*

श्रद्धा नही मन में तो द्रव्य दान क्या करेगा।
श्रद्धा नहीं मन मे तो गगा स्नान क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे तो बड़ा विधान क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे तो फिर भगवान क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे तो व्रत-उपवास क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे तो गुरु का आशीर्वाद क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे तो तीर्थवन्दन क्या करेगा।
श्रद्धा नही मन मे रतन तो विमलाजन क्या करेगा।

★★★

दीक्षा की मन मे ठानी

❑ *क्षु. रतनसागर*

जब कभी इन्सानियत का गीत कोई गायेगा।
नाम पहिले विमल सागर जी जबाँ पर लायेगा॥
सुनो-सुनो आचार्य विमल सागर जी की है मधुर कहानी।
सांसारिक दु:खो को लखकर दीक्षा की मन में ठानी।टेक॥

एटा जिला ग्राम कोसमाँ आचार्यश्री का जन्म हुआ।
पिता बिहारी लाल कटोरी माता के यह लाल हुआ॥

गृहस्थाश्रम का नाम नेमचन्द, पद्मावती पुरवाल हुआ।
ब्रह्मचर्य का पालन करके आतम का कल्याण किया।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।१।।

छह महीने की उम्र रही तब मातृजीव तो स्वर्ग सिधारा।
माता जी का प्यार खो गया बालक को कुछ नही सहारा।।
पिता आपके ने सोचा अब शिशु-पालन कैसे होगा।
बुआ आपकी लगती थी जो, उनके द्वारा पालन होगा।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।२।।

बड़े यत्नो से तुमको पाला, पाल-पोस कर बड़ा किया।
विद्या भी कुछ मिलनी चहिए इस पर भी कुछ ध्यान दिया।।
मोरेना विद्यालय जाकर विद्या का अध्ययन किया।
ग्राम कुचामन मे जाकर के अध्यापन का कार्य किया।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।३।।

श्री आचार्य वीरसागर जी ग्राम कुचामन मे आये।
लीने व्रत दूजी प्रतिमा के ज्ञान-ध्यान मन मे लाये।।
सिद्ध क्षेत्र बडवानी जाकर क्षुल्लक की दीक्षा धारी।
वृषभ सागर नाम धराया त्याग किया अचरज कारी।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।४।।

धर्मपुरी मे ऐलक दीक्षा लेकर तुमने ज्ञान बढ़ाया।
ममतामोह का त्याग जु करके सुधर्म सागर नाम धराया।।
फाल्गुन शुक्ला तेरस के दिन सोनागिर मुनि दीक्षा लीनी।
पूज्य आचार्य महावीर कीर्ति ने तुमको यह दीक्षा दीनी।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।५।।

धरा नाम विमल सागर जी ग्राम-ग्राम उपदेश दिया।
सत्य अहिसा पर चलना सबको तुमने सन्देश दिया।।
आये नगर टूँडला म फिर आचार्यश्री पदवी धारी।
सुजानगढ़ मे चातुर्मास का उत्सव हुआ बड़ा भारी।।
सासारिक दु खो को लखकर ।।६।।

आये राम चरण दर्शन को सप्तम प्रतिमा है धारी।
पत्नी विद्यामती साथ में क्षुल्लक की दीक्षाधारी।।
सयम मती रतन सागर भी भये गुरु के आभारी।

माता पिता क्षुल्लक दीक्षा के चाँदमल भँवरीबाई।
सासारिक दु:खो को लखकर ॥७॥

रतन सागर शिष्य तुम्हारा बार-बार गुण गाता है।
मुझको गुरुवर ज्ञानदान दो चरणो शीश झुकाता है॥
सोनागिर के चातुर्मास मे सघ सहित गुरुवर आये।
आज गुरु का जन्म दिवस है इसीलिए उत्सव भाये॥
सासारिक दु खो को लखकर ..॥८॥

★★★

वन्दन

❑ क्षु. श्रीमती

जिन दर्शन जिन वन्दन का, दुनिया मे बजता डका।
गुण गाऊँ मै विमल सिंधु के, शत वदन मेरे गुरु का॥१॥

छत्तीस गुणों के है धारी, अरु नग्न दिगम्बर धारी।
अरु करुणा निधि के धारी, अति शान्ति स्वभावी गुरु का॥२॥

पक्षपात का भाव न किंचित, सब पर समदृष्टि रखते।
है चतुर्थ काल सम गुरुवर, दर्पणवत् निर्मल गुरु का॥३॥

द्वादश तप तपते मुनिवर श्री, दश धर्म को धारण करते।
षट् आवश्यक को करते, रत्नत्रय धारी गुरु का॥४॥

भव भोगो से मुखड़ा मोड़ा, शिव नारी से नाता जोड़ा।
अति परम उपेक्षा धारी, उदार भावी गुरु का॥५॥

अति शुद्ध स्वभावी आप हो, अति सरल स्वभावी गुरु हो।
हे महावीर कीर्ति जी के शिष्य, शत बार नमोस्तु गुरु का॥६॥

आप बाल ब्रह्मचारी हो, अति नि स्पृहधारी गुरु हो।
दो शिष्यो को आशिष है, वदन मेरे गुरु का॥७॥

सपूर्ण गुणों के धारी, उत्कृष्ट ज्ञान के धारी।
आप हो जग के उपकारी, हर घड़ी नमोस्तु गुरु का॥८॥

सुन लो भाई कान लगाय

❑ मुनिश्री विष्णुसागर

पहले सुमिरूँ महावीर को दूजे सुमिरूँ शारदा माय।
तीजे सुमिरूँ गुरु अपने को जिससे काम फतह हो जाय।।
        कहूँ कहानी विमल सिन्धु की सुन लो भाई कान लगाय।
        ग्राम कोसमाँ जिला एटा मे सुन्दर नगर बसो तहाँ भाय।।१।।

लाल 'बिहारी' वहाँ विराजे, मात 'कटोरी' है सुकुमाल।
जिनकी कुक्षी मे आकर के जन्मे 'नेमिचन्द्र' महाराज।।२।।

        विद्याभ्यास करन मोरेना विद्यालय मे किया निवास।
        मक्खनलाल को गुरु बनाया जिनका जग जाहिर है नाम।।३।।

यहाँ की बतियाँ यही लो रह गई अब आगे का सुनो हवाल।
मक्खन गुरु का नाम सुनत ही वेदाभ्यासी जाय डराय।।४।।

        करि शास्त्रार्थ अनेको जीते धर्म का डका दिया बजाय।
        उनहीं के ये शिष्य कहावें, जिनधरम का डका रहे बजाय।।५।।

वीर सिन्धु से ब्रह्मचर्य के व्रत धारण कीने हरषाय।
सोनागिर मे मुनि बन गये 'महावीर कीर्ति' गुरु लिये बनाय।।६।।

        आचार्य पद टूँडला पायो शिष्य अनेको लिये बनाय।
        उपसर्ग सहे अनेको भारी सिह सर्प अरु तस्कर भाय।।७।।

एक गाँव मे प्यासे मरते पानी का था बड़ा अभाव।
मन्त्रित कर अभिषेक गिराया, पानी मीठा हुआ अपार।।८।।

        खारे को मीठा कर दीना, गुरु के तप का है परभाव।
        और अनेको दु खिया आते उनके दु ख का करें निवार।।९।।

कहाँ तक कहूँ गुरु की महिमा, इन्द्र भी ना कर सके बखान।
ऐसे गुरु है विमल हमारे भरत सरीखे अति विद्वान।।१०।।

        माता आदिमती नन्दामति और आर्यिका क्षुल्लक जान।
        विमल सघ है यह अति भारी, है चालीस सुपिच्छि महान।।११।।

ऐसे गुरु के चरण कमल मे शत-शत वन्दन बारम्बार।
होय चिरायु गुरु हमारे मुक्तिमार्ग के सिरजनहार।।१२।।

        विमल सिन्धु महाराज विमलता दीजिये।

करे करम का क्षार अरज सुन लीजिये॥

काव्याञ्जलि

❑ *गिरीश जैन*

नमन करूँ मै नमन करूँ, नतमस्तक हो नमन करूँ।
मुनि विमल सागर महाराज को, नतमस्तक हो नमन करूँ॥

> मात कटोरी बाई जनमें घर में मगलाचार किया।
> पिता बिहारी लाल ने उत्सव कोसमाँ के दरम्यान किया॥
> दुलहिन जैसा सजा कोसमाँ दूल्हा छोटे लाला हो।
> सब कुछ अर्पण करते निवासी देखो नेमीलाला को॥
> नमन करूँ॥१॥

बाल ब्रह्मचारी हो गुरुवर माया जग की सब छोड़ी।
सोनागिर मे बने मुनीश्वर रत्नत्रयी चुनरिया तुम ओढ़ी॥
छत्तीस गुणो से हुए विभूषित टूँडला के स्थान मे।
आतम में परमातम भजते रहते सदा ध्यान में॥
नमन करूँ॥२॥

> गृह के त्यागी तुम वैरागी मन मे दीप जलाते हो।
> सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चरित तुम मोक्ष मार्ग बतलाते हो॥
> तपोनिधि तुम जन्म लिया क्या घर-घर अलख जगाने को।
> आओ मन से दर्शन कर ले ऐसे सन्त महान को॥
> नमन करूँ॥३॥

यत्र-तत्र की विद्या मे तुम परम जानकारी रखते।
रत्न दिवाकर करुणा सागर जन-जन के मन को हरते॥
ऐसी विद्या के तुम सागर 'गिरीश' नैया पार करो।
साधु संत सब चरण पखारे इस भव से उद्धार करो॥
नमन करूँ॥५॥

भाव-सुमन

❑ *उमेशचंद जैन*

ओ मुक्ति के अडिग बटोही
चुन न सकूँगा उन शब्दो को शब्दकोश से
जिन्हे समर्पण करूँ तुम्हारे श्री चरणो मे,
क्रोध, मान, माया मे डूबा
मै मायावी जीव, भला क्या
स्तुति रचना करूँ तुम्हारी?
तुम स्वय ही एक रचना हो गुरुवर।

तुम्हे देखकर लगता ऐसे
जैसे शाश्वत धर्म स्वय ही मूर्ति रूप हो
रूप तुम्हारा रखकर खुद ही
काल लब्धि की इस विपरीत दशा मे
हम सबको सन्मार्ग दिखाने,
सन्मुख आज उतर आया हो
या
शायद कोई पुण्य योग ही जुटा हमारा
उसके ही परिणाम रूप मे
सम्यक् निधि से भरा खजाना
अनायास ही हाथ हमारे लग आया हो।

ओ सन्मार्ग दिवाकर तुमने
कुन्दकुन्द की उस थाती को
जो सौपी थी हाथ तुम्हारे
उनकी वशावलियो के उन रत्नो ने
जो मुक्ति मार्ग पर बढ़े निरन्तर
नश्वर जग का मोह त्याग कर
शान्ति सिन्धु महावीर कीर्ति तक
जाने कितने नाम ज्ञान के महाकाश मे
सूरज चॉद बने अकित है
तुमने उनके मुक्ति मार्ग की उन राहो मे
इतने अनगिन पुष्प खिलाए

जिनकी महक धरा पर आने वाली पीढ़ी को
सदियो तक महकायेगी।

वृषभ देव से वीर प्रभु तक
जो परिपाटी चली काल के उन चक्रो मे
वह धरती पर प्रलय काल तक अमर रहेगी
शाश्वत ज्योति बुझी कब बोलो
काल वायु कब कैसे उसको डस पायेगी?
जो अकुर बो दिए धरा पर तुमने गुरुवर
कल वे ही वट वृक्ष बनेगे
ज्योतिपुज बन वह आलोक धरा को देंगे
नन्हे तारे कभी बनेगे ज्ञान दिवाकर
अज्ञान तिमिर को हरा करेंगे।

यह आशीष भला क्या कम है
आने वाले सौ वर्षों तक
अगर तुम्हारा वरद हस्त यह
रहे हमारे ऊपर हमको देव दान मे दे दे इतना
आज तुम्हारे जन्म-दिवस पर
यही कामना गुरुवर मेरी
भाव-सुमन अर्पण करता हूँ
महा तपोनिधि श्री चरणो मे
स्वीकारो नत श्रद्धा मेरी।

***

सन्मार्ग की पहचान दो

❑ *भावना जैन*

हे युगपुरुष तुम आज युग को
फिर उसी सन्मार्ग की पहचान दे दो।

आज हिंसा और कटुता ने पसारे
विश्व मे अपने चरण हैं,

स्वार्थ का अवरोध बनकर प्रगति मे
बाधक बना हर आचरण है।

रक्त रजित स्वप्न है सब
कौन दे इनको सहारा,
भेद की इस कालिमा से धुँधला
रहा हर चित्र दर्पण का विचारा।

सभ्यता ने आज जाने यह
विष बीज कैसे बो दिए है,
आस्था के अर्थ जैसे
आज हमने खो दिए है।

नाश का अज्ञान तम अब विश्व के
मानस-पटल पर छा रहा है,
विध्वस निर्भय क्रूरता के
गीत फिर से आज जैसे गा रहा है।

किन्तु जब-जब इस तरह के
क्षण यहाँ पर फूलने-फलने लगे है,
तब आँधियो में भी अनेको दीपक
अहिसा के यहाँ जलने लगे है।

तब किसी युग-पुरुष ने आ
मनुजता के भाल पर चन्दन लगाया,
वह पी गया हर विष स्वय
पर विश्व को अमृत लुटाया।

तब अयोध्या ने दिया कोई वृषभ
या कुण्डलपुर ने दे दिया महावीर हमको,
सत्य को भाषा मिली तब
राहत मिली हर दुखी मन को।

बन गये इतिहास वह खुद ही स्वय तब
सिद्धान्त उनके दैवत्व या पूजित हुए,
शान्ति ने पाया अभय तब आदमी की क्रूरता से
इस धरा के स्वप्न तब अमरत्व पा मुखरित हुए।

आज फिर उठने लगी है आँधियाँ

मेरे अहिंसा के चमन में,
अर्थ सब अभिशाप्त बन कर
रह गये हैं आदमी के चिंतवन में।

हे मनीषी आज युग का बोध
तुमसे राह अपनी माँगता है,
कलुषित व्यथाओं से भरा मन
शान्ति का श्रृंगार करना चाहता है।

हे युग पुरुष तुम आज युग को
फिर उसी सन्मार्ग की पहचान दे दो,
भावना को भक्ति का सबल मिले
सत्य का ऐसा अटल वरदान दे दो।

गूँजने फिर से लगे इस देश के
हर एक कण में वही पावन घोषणाएँ,
जिन्दगी फिर जिन्दगी के अर्थ समझे
और हम इन्सानियत के भाल पर चन्दन लगाएँ।

☆☆☆

चमत्कारी बाबा

❑ क्षु. रतनसागर

विमल गुरु के दर्शन करने सारा साथी अइज्यो रे॥
आओ तो भक्तों की टोली साथे लइज्यो रे॥
वेगाँ अइज्यों रे॥१॥

मिल गुरु की मूरति म्हाने प्यारी-प्यारी लागे रे॥
सेवा पूजा भक्ती रो थे लाभो लीज्यो रे॥
वेगाँ अइज्यो रे॥२॥

ज्ञान को गुलाबी रग समता रूपी पानी रे॥
भक्ती री पिचकारी भर-भर खूब न्हाइज्यो रे॥
वेगाँ अइज्यो रे॥३॥

विमल गुरु के दर्शन करने सारे लोगाँ आवेरे॥

भक्तों के जैकारे सुनसुन आनद पावे रे॥
बेगाँ अइज्यो रे॥४॥

चमत्कारी बाबा के आगे आम नारियल लावे रे॥
गुरु जी का परसाद पाकर मनवाछित फल पावे रे॥
बेगाँ अइज्यो रे॥५॥

बजे दुन्दुभि देव देवी नचे है
कोसमाँ यही स्वर्ग नाई हुई है।
रहो देख दृग सहस्र कर अपने
विनय सेती गर्दन झुकाई हुई है॥ बिहारी लाल के घर ॥

बिहारी लाल छोरा है अधिक गोरा
जनमते ही प्रभुता बढाई हुई है।
करो दर्श भाई कटे पाप सारे
नगर सारे आनन्द छाई हुई है॥ बिहारी लाल के घर बधाई हुई है॥

शत-शत प्रणाम

❑ *निलेशकुमार जैन*

हे परमशात हे वीतराग हे सौम्यमूर्ति हे तेजधाम।
हे बालब्रह्म अद्वितीय सत तव चरणो मे शत-शत प्रणाम॥

करुणा सिन्धु पुण्य रत्नाकर, आगम सम्मत हो ऋषिराज।
करूँ नमन तव भाव भक्ति से, गुरुवर कर दो भव से पार॥

रत्नत्रय निधि के स्वामी हो, उपसर्ग परीषह सहते आप।
क्षमामूर्ति। हे विश्ववद्य। निजात्म ध्यान का जपते-जाप॥

गुरु 'महावीर कीर्ति जी' के, अनुयायी तुम हो साकार।
धन्य धन्य हो सघ शिरोमणि, जैन धर्म के प्राणाधार॥

हो विमल सिधु जी मल रहित, धरती-सा धीरज धरते आप।
गगाजल सम पावन बनकर, ज्योत्स्ना सम सुख भरते आप॥

कल्याण मार्ग के परिचायक, आत्मिक निधियो के हो आगार।

भौतिक जग के प्रति उदासीन, जीवन सम रसता के उभार॥

तुम आत्मजयी हो शांति मूर्ति, तुम वीतराग तुम निर्विकार।
तुम उग्रतपस्वी कर्मजयी, जड़ चेतन का करते विचार॥

ओ पूज्य तपोनिधि। चरणों में श्रद्धा से शीश झुकाता हूँ।
तव सौम्यमूर्ति की आभा में, मैं अपनेपन को पाता हूँ॥

हे परम पूज्य। शत शत वंदन
हे विश्व वन्द्य। तव अभिवन्दन।

☆☆☆

जन्म-जयन्ती पर

❑ *केशरीमल काला*

आचार्य-प्रवर ये बड़े दयालु तथा कृपालु रहे सभी पर।
करे हृदय से अभिवन्दन हम, इनकी जन्म-जयन्ती पर॥

'आ'- गम के निर्देशो पर चल, धारा है जिनने यह बाना।
उनमे ही आतम को अपने सतत-प्रयासो से पहिचाना॥

'चा'- ह जहाँ हो वही रास्ता बना सके आगे बढ़ने को।
चुना इन्होंने भी पथ अपना, उठा सका ऊँचा जो इनको॥

'रि'- श्ता-नाता तोड़ कुटुम्ब से, जोड़ा रिश्ता ऋषभदेव से।
आशीर्वाद पा करके जिनका, रमे रहे 'निज' मे ये तब से॥

'प्र'- यत्न यथेष्ट-यथोचित करके, प्राप्त कर सके समता-धन।
ऐसे इन समता-धारी के, पाँव पड़ रहे है जन-जन॥

'व'- ज्र-लेप चढ़ा हो जिनके मन पर 'सम्यक् रत्नत्रय' का।
गिरने पाता असर नही तब उस आतम पर बाह्यजगत का॥

'र'- मना ही अपने मे जिनने बना रखा हो दृढ़-निश्चय से।
झड़ने लगते कर्म-कषायन बधे हुए जो इस आतम से॥

'ये'- अमल विमल-निर्मल दिलवाले, पूज्य विमल सागर मुनिवर।
इनके चरण कमल मे प्रेषित, भेट हृदय के भावो की भर॥

'व'- र्ष जयती पचहत्तरवीं पर अभिवन्दन हम करें तिहारा।

स्वीकार कीजिए, विमल मुनीश्वर! शत-शत बार प्रणाम हमारा।।

'डे'- रा डला इस वर्ष आपका, श्री सोनागिरजी-सिद्ध क्षेत्र पर।
नग-अनग की प्रतिमाओं का स्थापन करवाया था जहाँ पर।।

'द'- म्भ और पाखड भरी इस दुनिया की है टेढ़ी चाल।
जिसे समझ कर सही दिशा मे, कदम उठाये किया कमाल।।

'या'- त्रा मे जहाँ बिछे-मिले उस पथ मे काँटे-ककड़ कितने।
हटा सके ये किन्तु उन्हे तप-त्याग सयम के बल से अपने।।

'लु'- भा कर इन्हे डिगाने वाले, आये होगे कई प्रसग।
ज्ञान श्रद्धा के आगे लेकिन कर न सके तप-सयम भग।।

'त'- त्वज्ञ शिरोमणि, धर्म दिवाकर चारित्र चक्रवर्ती महाराज।
इस जन्म-जयती पर हम थारी, माँग रहे है ठोस-इलाज।।

'था'- ह नही कहाँ तक डूबेगे नगर गाँव कृषि भूमि वन।
नदी बाँध की बड़ी योजना लायेगी बर्बादी के क्षण।।

'कृ'- तात जहाँ हो, चाहेगा वह, कर देगा हम सब का अन्त।
लेकिन उसकी बदनीयत का हो जाय सफाया अब हे सन्त।।

'पा'- र लग सके इस विपदा से त्रस्त दु खी कितने ये जीव।
मिलते ही आशीष आपका हो उनको आनन्द अतीव।।

'लु'- ढ़क जायगी अन्य दिशा मे, बेबस हो उनकी तकदीर।
नही कही के रह पावेगे खोकर वे अपना बल धीर।।

'र'- हम-दया करुणा के सागर! आचार्यश्री महाराज हमारे।
अपनी जन्म जयन्ती पर वहाँ, हम सेवक को नहीं बिसारे।।

'हे'- र रहा है हृदय हमारा- आशीष भरा तव कृपा प्रसाद।
जिसे प्राप्त कर दिल को होगा सन्तोष भरा कितना आह्लाद।।

'स'- द् विवेक उपजायेगा आशीष भरा उपदेश तिहारा।
उन सब विपदाओ से हमको लगा सकेगा पार किनारा।।

'भी'- ड़ मिथ्या बातो की हट कर सोच सकेगी उनकी आतम।
तब होगा कल्याणकारी सब बाकी होगा मिथ्यातम।।

'प'- ल-पल पर आशीष तिहारा उभार सकेगा हम दुखियो को।
नही लगेगी देर वहाँ तब सत्य राह मिलने में हमको।।

'र'- ती भर भी समझ सके नही, 'जड़ चेतन' के भेद-ज्ञान को।
कैसे मिल पावे छुटकारा उन भौतिक कार्यों से जन को॥

'क'- रुणा निधान! आचार्यश्री मुनि विमलसागर के सघ मे।
उपाध्याय भरतसागरजी सदा लीन हैं निज आतम में॥

'रै'- ल पेल से दूर हमेशा, रखते हुए जहाँ अपने को।
तत्वचर्चा के सिवा व्यर्थ की बातों से दूर रखें अपने को॥

'हृ'- दय-स्पर्शी प्रवचन द्वारा पूज्य आर्यिका स्याद्वादमती।
श्रोतागण को कर लेती जो आकर्षित मुनि सघ प्रति॥

'द'- मखमता से करने वाली सघ व्यवस्था सार-सभार।
ब्रह्मचारिणी चित्राबाई, योग्य-चतुर है सभी प्रकार॥

'य'- था योग्य मुनि सघ व्यवस्था आचार्यश्री के तप-प्रताप से।
समयानुकूल चल रही व्यवस्थित, मर्यादा मे समुचित ढग से॥

'से'- व्य/सेवक के भाव रूप हम, आचार्यश्री के चरण कमल मे।
चढ़ा रहे श्रद्धा-सुमनो को भक्ति-भाव के काव्य विमल मे॥

'अ'- बोध अज्ञानी हम ससारी, भव-भव की खाते ठोकर।
चले जा रहे बिन सोचे ही, उसी राह को अपना कर॥

'भि'- न भिना रही है क्रोधादि-कषायन की मक्खियाँ, हम प्राणिन पर।
मार रही है डक हमारी ना-समझी से उस आतम पर॥

'न'- ग-अनग स्वामिन से करते आज प्रार्थना यही सभी हम।
उपाय सुझावे ऐसा जिससे हो उनका वह हमला कम॥

'द'- म सूख रहा है उन आघातो से, दवा दीजिए, हे स्वामी।
क्षमा कीजिए हमको मुनिवर, अनेक हैं हम मे जो स्वामी॥

'न'- ब्ज ज्ञान के ज्ञानी! तुझसे हाथ जोड़कर विनय हमारी।
रोगो की पहिचान सही कर लेने की तुझमे क्षमता भारी॥

'ह'- कीम और हाकिम भी हो तुम, शीघ्र करें उपचार हमारा।
आयु के दिन चद बचे हैं, खींच रहे है ध्यान तुम्हारा॥

'म'- र्ज पुराना होकर मन को, कर डाला है कितना जर्जर।
उन दु खों का शीघ्र अन्त हो, परम तपस्वी, हे मुनिवर॥

'इ'- च्छाओ का अन्त नही, वे उलझाती रहती दिन-रात।

खिलवाती रहती जीवन मे यहाँ-वहाँ कितनो की लात॥

'न'- ही उठने पाते है हम उनकी भारी-भरकमता से।
उपाय बताये छुड़ा सके जो अति शीघ्र ही, पिण्ड उन्हों से॥

'की'- कर के काँटो सम वे, चुभकर पहुँचाती दु ख भारी।
उन्हे कील कर बना दीजिए, जीवन हम सबका सुखकारी॥

'ज'- ड़ता की वह छाँव हमारे जीवन पर जो छाय रही है।
उसे मिटाने और हटाने की युक्ति का ज्ञान नही है॥

'न'- त मस्तक हो हाथ जोड़ कर करे प्रार्थना, हे मुनिवर।
'रामबाण-आशीष' आपका, असर डाल सकता उस पर॥

'म'- हाराज! आपकी ऋद्धि-सिद्धि की महक, उडा सकती सब रोग।
तत्काल भला होकर जो लौटे ऐसे कहते वे सब लोग॥

'ज'- मी बनी हो शैया जिनकी और ओढ़ना आसमान का।
भुजा बनी मुलायम तकिया, पवन बना पखा उनका॥

'य'- त्र-तत्र और नियत्रण जिनका, विषय वासनाओ पर पूरा।
सहते हुए बाईस परीषह, करते है कर्मन का चूरा॥

'ति'- सना तिरिया तथा तिजौडी पूर्ण रूप से त्याग जिन्होने।
नग्न दिगम्बर जैन-मुनि का बाना धारण किया उन्होंने॥

'प'- का मजा हो त्याग-सयम से, आचार्य मुनि-पद, यह जिनका।
हम पचहत्तरवे वर्ष जयती पर करते अभिवन्दन उनका॥

'र'- चा-पचा रग-रग मे जिनके, सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान।
ऐसे पहुँचे सन्त गणो का करती है दुनिया गुणगान॥

***

आचार्यश्री वंदना

❑ *संकलन मुनिश्री देवसागर*

छत्तीस गुण सजुथा जे करुण भाव सजुत्ता।
आइरिय विमल सागर तिक्काल वदि मोणिच्च॥१॥

मणु यणा इन्द वद णगथ चारिय चक्क वट्टीय।

आइरिय विमल सागर तिक्काल वंदि मोणिच्च॥२॥

रयणत्तय च पंच महव्वयाणि भवतरण हेदु।
आइरिय विमलसागर तिक्काल वदि मोणिच्च॥३॥

झाणज्झयण परायण समण रयण, मुक्ति भत्तार।
आइरिय विमल सागर तिक्काल वंदि मोणिच्च॥४॥

धम्म दिवायर झाणी काम-विजेता धम्म मुक्तिय।
आइरिय विमल सागर तिक्काल वदि मोणिच्च॥५॥

गुण गभीर धीर सील बल, तिण्णि गारव रहिया।
आईरिय विमल सागर तिक्कालं वदि मोणिच्च॥६॥

मुणि देव सागर शिष्य तिविण जोग वदामि।
आइरिय विमल सागर तिक्काल वदि मोणिच्च॥७॥

***

आद्यक्षरी स्तवन

❑ *पं कमलकुमार शास्त्री*

पूजक की भेदक रेखा मय गुण अनत अनुरागी।
जय प्रशान्त मुद्रा मुनिवर की सब के मन मे लागी॥१॥

नीर क्षीर की भेदक नीति हस-हस मे होती।
यह सिद्धो की मुद्रा उनकी सिद्ध स्वरूप जगाती॥२॥

गुण अनत है जिनवर मुद्रा परम पूज्य कहलाती।
रुचिवर शुचिमय शुद्ध-स्वभावी द्रव्यदृष्टि प्रकटाती॥३॥

वरता सब की एक सरीखी द्रव्य भाव से नेक।
रमता समता शुद्ध दृष्टि है जो है सब की एक॥४॥

सन्मतिधारी सत्पथगामी नग्न दिगम्बर मुद्रा।
मार्-दव व्रत के परम उपासक धारे मृदुता ऋजुता॥५॥

गत्यागति के वारणहेतु महाव्रतो के धारी।
दर्-शन से निज आतम का जो सत्यस्वरूप प्रचारी॥६॥

शक्तिधार पुरुषार्थ करे तो निश्चित सफल बनाता।
'कमल' अमल निज भावो के सग तव चरणो में आता॥७॥

विमल मूर्ति जीवित समाधि है, धार रही है समता।
ममता मोह रागद्वेषादिक भाग रही है विभुता॥८॥

लब्ध निमित्त ज्ञान के धारी, धारे तप की भूति।
साधुशिरोमणि धर्मदिवामणि आत्म-धर्म अनुभूति॥९॥

गरिमागुण की महिमार्मति की पूर्णदशा प्रकटाती।
रमते योगी जिनके चरणो नमते 'कमल' प्रभावी॥१०॥

जीव मात्र के परमहितैषी सत्पथ परम प्रदर्शी।
है ऐसे ऋषिराज हमारे चरणो धोक हमारी॥११॥

सयमसाधन पिच्छिका, शुचि का हेतु कमण्डलु।
ज्ञान का साधन शास्त्र, अरु सच्चे साधु दयालु॥१२॥

सन्मति दर्शक आप है, पापपुण्य से हीन।
रहते सदा स्वभाव से, शुद्ध भाव मे लीन॥१३॥

महिमा अपरपार है, निज पर के हित हेतु।
चेतनभाव जगे सदा, जो है शिव का सेतु॥१४॥

जीवन सम-जीवन रहे, शीतल भाव स्वरूप।
पर भावजता उष्णता, होवे नही विरूप॥१५॥

यथा नाम तथा वर्णित, यह कथनी चरितार्थ।
कथनी करनी एक हो, यही भाव सत्यार्थ॥१६॥

तिलतुषमात्र परिग्रह, रखे न अपने पास।
वे ही सच्चे साधु है, करते कर्म-विनाश॥१७॥

उक्त विशेषण आप मे, कूट-कूट भर पूर।
परभावो से जो सदा, रहते कोसो दूर॥१८॥

विमल सागर मुनिराज चरण कमल की साध।
मन वच तन से मै नमूँ, होवे ज्ञान अगाध॥१९॥

'कमल' अमल यह भावना, बनी रहे दिन रैन।
छिन-छिन पल पल सफल हो, मन पावे सुख चैन॥२०॥

***

नमन

❑ *मनोज नायक*

आचार्यश्री के चरणों मे, शत-शत वन्दन शत-शत वन्दन।
तुम्हरी महिमा से आलोकित, करते हैं बारम्बार नमन॥१॥

ग्राम कोसमाँ जन्म हुआ था, खुशियाँ खूब मनाई थी।
मात कटोरी के घर कोई, निधि अमूल्य जो आई थी॥२॥

पर प्रभु को स्वीकार न थे, दिन खुशियाँ अधिक मनाने के।
स्वर्ग सिधारी मात कटोरी, माह छह बस जाने पै॥३॥

वैराग्य उठा जब 'नेमी' को, जीवन सयम में लगा दिया।
छोड़ दिया तब मोह सभी का, सब दुखो को भगा दिया॥४॥

बड़वानी 'क्षुल्लक' दीक्षा ली, वृषभ सागर नाम लिया।
धर्मपुरी मे 'ऐलक' बनकर, खूब धर्म उपदेश किया॥५॥

सोनागिर मे छोड़ लँगोटी, वीतराग पद प्राप्त किया।
कर विहार कोने-कोने मे, मानव जीवन धन्य किया॥६॥

जैन धर्म का डका बजता, तव वाणी से गली-गली।
जैन-अजैन सभी करते हैं, तुमको वन्दन घड़ी-घड़ी॥७॥

भरत सिन्धु से शिष्य तुम्हारे, अति करुणा के धारी है।
ज्ञान पुज के भण्डारी वे, उपाध्याय पद 'भारी' है॥८॥

वात्सल्य की छवि अतिप्यारी, धर्मामृत बरसाती है।
धीर-वीर गम्भीर अति, अरु महाविचारक ज्ञानी है॥९॥

'नायक' बुद्धिहीन आपको, कर न सके कुछ भी अर्पण।
नतमस्तक 'मनोज' चरणों मे, करता बारबार नमन॥१०॥

****

सौ-सौ बार नमन है

❑ छोटेलाल जैन

आचार्यश्री के चरणो मे, मेरा सौ-सौ बार नमन है।
सघ सहित आचार्यश्री को, मेरा सौ-सौ बार नमन है।

जन्म कोसमों ग्राम, नाम नेमिचन्द्र पाया,
तात बिहारीलाल, मात कटोरी ने मगल गाया।
धर्म पढ़ाई हेतु, मुरैना किया गमन है,
आचार्यश्री के चरणो मे, मेरा सौ-सौ बार नमन है॥१॥

बने ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारी से क्षुल्लक पद पाया,
नेमिचन्द नाम छोड़ के, नाम वृषभसागर कहलाया।
मुनिदीक्षा लेने का, आगे किया मनन है,
आचार्यश्री के चरणो मे, मेरा सौ-सौ बार नमन है॥२॥

क्षुल्लक से ऐलक बने, नाम सुधर्मसागर कहलाया,
ऐलक से आगे चले तो, नाम विमल सागर मुनि पाया।
मुनि दीक्षा ले करके, तप कीना बहुत गहन है,
आचार्यश्री के चरणो मे, मेरा सौ-सौ बार नमन है॥३॥

जहाँ-जहाँ पग तुम धरे, वह तीर्थ क्षेत्र कहलाया,
आज सोनागिर क्षेत्र मे, हर जैन यहाँ हरषाया।
आचार्यश्री शतायु हो, मेरा केवल यही कथन है,
आचार्यश्री के चरणो मे, मेरा सौ-सौ बार नमन है॥४॥

मानव अनेक आवाज एक

❑ बा.ब्र. मनोरमा

१
हे जगती तल के
आभूषण
उदित सूर्य की भाँति
आपने

इस मानव पर्याय मे
जन्म लेकर जगत के
अन्धकार को
दूर कर
फैलाया जग में
सत् प्रकाश
मात्र इतना ही
क्यो? क्यो?

२
और भी
दिनो-दिन
तेज बढ़ा ज्ञान का
ध्यान का
तप का, चारित्र का
वह उदित सूर्य की भाँति ही क्यों
रहता?
पहुँच ही गया
मध्याह्न काल के
पूर्ण तेज पर
मिथ्यात्व और अज्ञान से
आच्छादित हो रहे थे
नेत्र जिनके
ऐसे भव्य जीवो को
ज्ञानरूपी अञ्जन
शलाकाओ
के द्वारा
उन्मीलित कर दिये है
नेत्र जिन्हो के।
सत् प्रकाश मे
अपना ही
चैतन्य पुज
भव्य जीवो को

दृष्टिगत
होने लगा
अपने मे।

३
तब
उस सत् प्रकाश को
देने वाले
गुरुवर की
चहुँ ओर से
जय घोष होने लगी।
कैसे?
सेठ साहूकारो को
गले लगाने से।
अपने कुटुम्ब को
अपनाने से।
विद्वानो के मुख से
प्रशसा सुनकर
उन्हे अपना बनाने से
राग के राही बनकर
सघ को बढाने से।
त्यागियो के द्वारा
गुणगान सुनकर
उसमे खो जाने से।

४
नही-नही
इन विचारो मे, कभी नही
पायेगे, सत्य का दर्शन।
अपनी-अपनी आँखो से
पक्षपात का
रगीन चश्मा हटाकर
यदि
वस्तु तत्त्व का

अवलोकन करेगे
तो पायेगे—
सत्य का प्रकाश।

५
जहाँ गरीब और अमीर का
छोटे और बड़ो का
विद्वान और अनपढ़ का
अपने और पराये का
निन्दा और स्तुति का
भेदभाव
नही पाया जाता
मोह और कषायो से
कोषो दूर रहकर।

६
जिन्होने सम्यक्त्व के
अष्ट अगो मे से
मोह और प्रेम के
अतरग का दिग्दर्शन
निज चर्याओ से
कराया।
उन्ही समता रस के
स्वादी आदी
श्री विमल सिन्धु सूरि के
चरणो मे
वन्दन करती हुई
प्रभु से सतत
प्रार्थना
करती हूँ कि
ऐसे गुरुवर
नभ मे
सूर्य-चन्द्र की भाँति
इस जगतीतल पर विचरण

करते हुए
हमे
सत्य के प्रकाश से
प्रकाशित करते रहे।

७
मुझे ही नहीं
मुझ जैसी अनेक आत्माओ को
मिला
उनके हृदय का वात्सल्य।
यही कारण है कि
'मानव अनेक' होते हुए भी
'आवाज एक' है
वात्सल्य की मूर्ति है साक्षात्
आचार्यप्रवर
श्री विमलसागर जी
महाराज।

***

हे विमलसिन्धु तुम चरणो मे वन्दन-अभिवन्दन

❑ *ग.आ विशुद्धमती*

हे विश्ववन्द्य हे विमल सिन्धु, चारित्र चक्रवर्ती मुनीन्दु।
विकसित कीने है भव्य कमल, अपनी शरणा का दे सम्बल।।

मन निर्विकार तुम बाल-यती, कर देते सबकी विमल मती।
लख कर तुमको होता आभास, जग मे सुख नहि है सुखाभास।।

सिंधू सम तुम हो अति गभीर, नहिं क्षुब्ध होत छल बल से वीर।
धुन आत्म रमण की सतत पास, करते निज का निज मे निवास।।

तुम हो कठोर तप मे महान्, तन का कुछ नहि रखते हो ध्यान।
मम कौन, कहाँ मेरा निवास, चिन्तवन करते चैतन्य पास।।

चर्या तुम्हारी आगमानुसार, चरणानुयोग का खुला द्वार।

रहते चतुसघ के आप बीच, नहीं मिलती कहीं है द्वेष कीच॥

णमोकार मन्त्र मुख पर बसन्त, हो परम यती अध्यात्म सन्त।
मेहमान तरह जग के मँझार, जाते हो शिव रमणी के द्वार॥

वन भी नन्दन वन के सामन, लगता सुखकारी है महान।
नहिं अशुभ राग नामोनिशान, परमेष्ठी का नित धरो ध्यान॥

दस गुणित तीन गुण पास जान, छह ऊपर मिल छत्तीस मान।
नहिं पर-निन्दा मुख पर रहात, मुख से जिन ध्वनि होता प्रभात॥

अन्तर विराग धारी मुनीश, जग जीव नमें नित नाय शीश।
भिक्षावृत्ति से आप दूर, नहिं कभी करो गुण का गरूर॥

नयनाभिराम गुण गण निधान, तुम्हरे चरणो का धरूँ ध्यान।
मै नमूँ चरण मन वचन काय, गलती मेरी कर दो रिहाय॥

दर्शन पाऊँ गुरु बार-बार, ससार उदधि से तार-तार।
नहि विस्मृत हो मम शुद्धमती, गुरुवर कर दो अब विशुद्धमती॥

***

संस्कृति के सूर्य

❑ *प्रभात जैन*

हे सस्कृति के सूर्य, ज्ञान के विमल, रश्मिरथ
दिव्य अवतरण हुआ आपका जगती के हित।

आत्मलीन, चिंतन, साधनारत हे, अविकारी,
सन्मति दे, सन्मार्ग दिखाया, युग अधिकारी।
तुमसे ही युगपुरुष धर्म है उन्नत-गर्वित,
भाव सुमन अर्पित चरणो मे छद, समर्पित।

महातिमिर से मुक्ति प्रदाता, मान सुमथक हे मनु मानव—
महा अवतरण हुआ अलौकिक, जगती के हित।

श्री चरणो की अनुचर निधियाँ, दास सिद्धियाँ, निष्पृहयोगी,
आशीषे केवल पा जाते, त्राण कर्म से तन-मन रोगी।
गोपन और अगोचर सारे तत्त्व ध्यान से खुल जाते हैं,

पूर्ण समर्पण जो कर देता, पाप उदय के धुल जाते है।

शात, सहज, वात्सल्य, प्रेरणा 'विमल' दिवाकर—
पुण्य अवतरण हुआ आपका जगती के हित।

मेरे शत-शत वन्दन, युग अभिवदन स्वीकार करो,
दुख से सतप्त धरा मे हे करुणाकर, प्यार भरो।
हम दीन, अकिंचन, याचक, तुम-'पारस' अनुगामी
श्रमण-सस्कृति, अनेकात के तुम हो पथगामी।

नमन तुम्हे है, वीतराग मुनि, 'विमल' ज्ञान के सिधु दिवाकर—
दिव्य अवतरण हुआ आपका जगती के हित।

***

श्रद्धा-सुमन

❑ ***बाबूलाल जैन 'जलज'***

धन्य-धन्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर।
अभिवदन-अभिषेक तुम्हारा, करते भाव सुमन मनहर॥
स्वागत मे विवेक ने बॉधी, श्रद्धा की वदनवारे।
करने लगी द्वार पर आकर, दसो दिशाएँ मनुहारे॥
जीवन तो साकार हो गया, चरणो की प्रिय रज पाकर।
धन्य-धन्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर॥

बना दिया सयम तप बल से, रागी मन को बैरागी।
मूर्च्छित-कुठित मन-प्राणो मे, आत्म-चेतना नव जागी॥
सत्य शीलता मे निमग्न है, तापस-सा जीवन सारा।
वाणी से जन-जन कल्याणी, झरती है अमृत धारा॥
जिनवाणी साकार हो गई, खुशहाली छाई घर-घर।
धन्य-धन्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर॥

आत्म-शाति सुख पाने तुमने, दमित किया इच्छाओ को।
शमित किया तप त्याग सलिल से, तृष्णा की ज्वालाओ को॥
भाग्य-रेख को पढ़ी न तुमने, पढ़ी कर्म की रेखाएँ।
निज विवेक से लॉघ गए तुम, कर्म-कांड की सीमाएँ॥

सच्चाई को किया उजागर, तुमने आत्म सिंधु मथकर।
धन्य-धन्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर॥

सयम पथ मे देश व्रती नव, बने हजारो नर-नारी।
शोषित पीड़ित जन मे भर दी, शाति भावना सुखकारी॥
करुणानिधि अक्षय योगी, तुम विषय कषायों के त्यागी।
सत्य अहिसा के व्रतधारी, दिव्य रत्नत्रय के अनुरागी॥
श्रद्धा सुमन समर्पित तुमको, धर्म धुरन्धर हे मुनिवर।
धन्य-धन्य सन्मार्ग दिवाकर, श्री आचार्य विमल सागर॥

***

विमल-स्तवन

❑ *मुनिश्री विरागसागर*

दोहा-परम दिवाकर हे गुरु, विमल सिन्धु महान।
करता हूँ, मै हृदय से, परम पवित्र गुणगान॥

तुभ्य नमोऽस्तु जिन नन्दन प्यारे,
तुभ्य नमोऽस्तु शिव मारग के सहारे।
तुभ्य नमोऽस्तु 'विमलसागर' बोधसार,
तुभ्य नमोऽस्तु तरण तारण कर्णधार॥१॥

तुभ्य नमोऽस्तु करुणानिधि विज्ञ प्यारे,
तुभ्य नमोऽस्तु गणनायक सन्त सारे।
तुभ्य नमोऽस्तु सुख सागर के ऋषीश,
तुभ्य नमोऽस्तु विमलसागर हे मुनीष॥२॥

तुभ्य नमोऽस्तु मुनिनाथ अहो श्रमण्य,
तुभ्य नमोऽस्तु गुरु सयम के करण्य।
तुभ्य नमोऽस्तु दु ख दारिद के शरण्य,
तुभ्य नमोऽस्तु तव पावन मूर्ति सौम्य॥३॥

तुभ्य नमोऽस्तु गुण गरिमा है समाई,
तुभ्य नमोऽस्तु जग ने महिमा सु गाई।
तुभ्य नमोऽस्तु पद पकज पद्म प्यारे,

तुभ्य नमोऽस्तु भव पार मुझे उतारे।।४।।

तुभ्य नमोऽस्तु प्रवर वत्सल के सुधाम,
तुभ्य नमोऽस्तु परम पावन मिष्ट नाम।
तुभ्य नमोऽस्तु गुरु नाम सुधा का काम,
करता 'विराग' तव चरणो मे प्रणाम।।५।।

दोहा-विमल सागर हे गुरु, करुणानिधि मुनीश।
करुणाकर करुणा करो, कर से दो आशीष।।

✣✣✣

मुक्तिमार्ग के लिए

❑ *डॉ. मगनलाल 'कमल'*

(१)

छोड़ दिया धराधाम, वैभव सब छोड़ दिया,
परिजन अरु पुरजन से अपना मुख मोड़ लिया,
यौवन की चौखट पर, सिन्दूरी धाम ढली,
शोकाकुल, सिसक-सिसक, अनब्याही शाम चली,
और, तुम निकल पड़े, गहन-तम से लड़ पड़े
ज्ञान-रश्मि के लिए

(२)

तुम चले तो सज गये, नगर-नगर, गाँव-गाँव,
तुम चले तो बज गये, शख, तूर्य ठाँव-ठाँव,
तुम चले तो बन गई, स्वर्ण रेख पाँव-पाँव,
तुम चले तो मिट गई, काषायिक धूप-छाँव,
लोक गुनगुना उठा, आत्म-गीत गा उठा,
ज्ञान-रश्मि के लिए

(३)

शीतऋतु आई तो, सरितातट बैठ गये,
ग्रीष्म की किरणों को, शृगार पर भेट गये,

पावस की जल-झड़ियाँ, तरुतल सी झेल गये,
ऋतुओ के दशो से, सहज-सहज खेल गये,
साधना मे खो गये, आत्मलीन हो गये,
ज्ञान रश्मि के लिए...

(४)

बोले तो सत्य-शिव-सुन्दर स्वर बोल उठे,
जन-जन के मानस में, अमृत-रस घोल उठे,
निर्जरा की निर्झरणी, फूट-फूट आयेगी,
भव-भव के बन्धन की, गाँठ छूट जायेगी,
चेतना के अति समीप, जल उठेगा ज्ञान-दीप,
मुक्ति-मार्ग के लिए.

***

विमल-पचासा

❑ *कैलाश कमल, एडवोकेट*

दोहा–विमल जयन्ती स्तुति, विमल भावना धार।
चरन 'कमल' बन्दहुँ विमल, जो भव तारनहार।

गीत

विमल मुनी, कुल विमल, विमल छवि, विमल ज्ञान आधार विमल।
विमल वचन, सरधान विमल मन, विमल मौन, अवतार विमल॥

जिन वाणी के उद्घोषक, जिन धर्म के पोषक, युग दृष्टा,
पचम काल में पंच महाव्रतधारी, पच षष्ठी स्रष्टा॥
विमल प्रबल पचेन्द्रिय विजयी, समिति पंच परकार विमल।
विमल मुनी, कुल विमल, विमल छवि, विमल ज्ञान, आधार विमल॥१॥

विमल प्रकाश द्रव्य षट् ज्ञाता, निज-पर भेद परम ज्ञानी।
विमल भावधर, राग द्वेष तज, विमल कही मुक्ती रानी॥
विमल अहिंसा, सत्य प्रचारक, विमल जपत नवकार विमल।
विमल मुनी, कुल विमल, विमल छवि, विमल ज्ञान, आधार विमल॥२॥

विमल संघ मुनि ऐलक क्षुल्लक, विमल आर्यिका ब्रह्मचारी।
विमल श्रमण जन, त्यागी विरती, विमल ही प्रासुक आहारी॥
विमल दिगम्बर भेष, विमल तप, विमल चरित व्यवहार विमल।
विमल मुनी, कुल विमल, विमल छवि, विमल ज्ञान, आधार विमल॥३॥

विमल सहे बाईस परीषह, त्याग परिग्रह, वन वासे।
विमल सभी जीवन पै दयालु, आतम हित भाषा भाषे॥
विमल भक्ति से 'कमल' चरन नित, सेवे विमल, विचार विमल।
विमल मुनी, कुल विमल, विमल छवि, विमल ज्ञान, आधार विमल॥४॥

+++

साधक

❑ ***चौ. कमलचन्द जैन 'मृदुल'***

बन्धु भाव को धारण करता, जीव धर्म का है भारी।
गुरु पद का अभिलाषी निश्चित, स्वामी विमल है अविकारी।
प्रीत और वात्सल्य भाव का, सबके प्रति सम व्यवहारी।
धर्म रीति निज रक्षा हेतु, जीव दया अरु उपकारी॥

दश विधि धर्म क्षमा जु जननी, स्वाभिमान रखता जारी।
माया अति से रति कम करके, आवश्यक जन प्रियकारी।
सत्य अहिंसा स्याद्वाद का, पठन हृदय से अनुचारी।
श्रेय मार्ग पर हो अग्रेसर, इच्छाओं पर अंकुश धारी॥

संयम तप अरु त्याग पथिक को, है अभीष्ट फल प्रियकारी।
मन अति सुन्दर स्वस्थ कामना, भोग व्यवस्थित हितकारी।
बल बुद्धि विवेक साथ है, जीवन पथ है सुखकारी।
राग द्वेष मोह का भंजन, जन-जन का है उपकारी॥

काव्याञ्जलि

❑ डॉ. विमलकुमार जैन

विमल विमल पद का कर वन्दन,
शान्ति' प्रदाता पाप मिटाता,
बारम्बार करूँ अभिवन्दन। विमल..

शान्त कान्तिमय रूप दिगम्बर,
पूर्ण मूलगुण धारी मुनिवर।
ज्ञानी ध्यानी श्रेष्ठ तपस्वी,
आतमलीन रहें श्री गुरुवर।
दर्शन मात्र दूर कर देता,
अगणित जीवन के दुख भजन।
विमल मिल पद का कर वदन॥

धर्मशास्त्र के गूढ़ विवेचक,
धर्म ध्वजा फहराई मुनिवर।
पथ भ्रष्टो के शान्त सचेतक,
ज्ञान सु ज्योति जलाई गुरुवर।
उलझन युक्त भक्त के पापो
का, कर देते गुरुवर मदन।
विमल विमल पद का कर वदन।

परोपकारी है अनगारी,
दया, क्षमा और करुणाधारी।
शिव पथ को दिखलाने वाले,
हे आचारज, तुम उपकारी।
श्रद्धा से मै शीश नवाता,
काटो मेरे भव-भव-बन्धन।
विमल विमल पद का कर वन्दन।

अनोखा सुप्रभात

❑ *आर्यिका स्याद्वादमती*

प्रात' का झुरमुट था
उषा का सिन्दूर था
गगन का अम्बर फटा
पृथ्वी ने पट खोला
युग के विधाता श्री नेमि का अवतार हुआ॥१॥

मॉं का लाडला
पिता का प्यारा
गगन का सितारा
युग के विधाता श्री नेमि का अवतार हुआ॥२॥

बालपन से वैरागी
ब्रह्मशील व्रतधारी
दूज का चॉंद खिला
पूनम का चॉंद हुआ
युग के विधाता श्री नेमि का अवतार हुआ॥३॥

महावीरकीर्ति का प्यारा बना
सरस्वती का दुलारा बना
वह तेज पुञ्ज अब
युग का विधाता भारत का भाल हुआ॥४॥

क्षमा का भूप यह, मार्दव स्तूप है
आर्जव का कूप यह शौचधर्म धूप है
सत्य का शिरोमणि, सयम का रूप है,
तप मे सुलीन यह, ज्ञानद्वीप ज्योति हुआ
युग के विधाता का विमलसागर नाम हुआ॥५॥

वात्सल्य का राजा
मुनिसघ का जहाजा
दीनो का दाता, अरु मुक्ति का प्रदाता,
भारत का लाल यह
युग का विधाता यह भारतरत्न सार हुआ॥६॥

हमें ऐसे गुरु मिले हैं...

❑ ब्र. कु. प्रभा पाटनी

हमे ऐसे गुरु मिले है सुनो सुनो .
दुखो से बचाते है ये आगम को सिखाते हैं ये।

ग्राम कोसमाँ जन्म लिया नगर हुआ है धन्य।
मात कटोरी के नन्दन को शत-शत है वन्दन।
हमे ऐसा फूल मिला है सुनो-सुनो .
सुगन्धि फैलाते है ये भोगो से बचाते है ये॥१॥

पच महाव्रत गुप्ति समिति पालन करते ये।
शीत उष्ण की बाधाओ को सहज सहते ये।
हमे ऐसा वृक्ष मिला है सुनो सुनो
जिन धर्म फलता है दुखो को निवारते ये॥२॥

अनेकान्त और स्याद्वाद का पाठ पढ़ाते ये।
शिक्षा दीक्षा दे शिष्यो को अनुग्रह करते ये।
हमे ऐसा धीर मिला है सुनो सुनो
सन्ताप हटाते हैं ये कषायों से बचाते हैं ये॥३॥

वत्सलमूर्ति करुणासागर कहलाते है ये।
निमित्तज्ञानी सघशिरोमणि शोभा पाते है ये।
इन्हे ऐसे शिष्य मिले है सुनो सुनो
जिन मार्ग दिखाते है, ससार छुटाते हैं ये॥४॥

प्रशान्तमूर्ति भरत सागर एक निराले हैं।
स्याद्वादमति शिष्या जिन मार्ग दिखाते हैं ये।
हमे ऐसे गुरु मिले है सुनो सुनो
सयम को जगाते है ये भोगो से बचाते है ये॥५॥

जन-जन कल्याण के कर्त्ता गुरुवर ये मेरे।
धन्य होगे शिष्य हम सब पाकर गुरु चरण तेरे।
हमें ऐसे विमल मिले है सुनो सुनो
कर्म मल हटाते है ये विमल बनाते हैं ये॥६॥

विनयाञ्जलि

❑ पं. हीरालाल जैन 'कौशल'

विमलसिन्धु साधक-सुमणि, सूरीश्वर-सिरताज।
सुधी सुधीर सुमेरु-सम, सद्गुरु-साधु-समाज।।

परम दिगम्बर आत्मरत, बाह्याडम्बर खण्ड।
मोहाज्ञान-तिमिर दलन, सुविदित सूर्य प्रचण्ड।।

चतुर्मास हित देहली, आये सब सघ साथ।
सादर सदर समाज सब, सबहिं नमावत माथ।।

पारससिन्धु विभावतन, भये सुदृष्टि प्रवीन।
अरहसिन्धु शुभ ध्यान धर, निज आतम रसलीन।।

सभवसागर तप रसिक, साधक शान्त उदार।
वीरसिन्धु श्री वीर सम, करने कर्म सहार।।

नेमिसिन्धु ज्ञानी तपी, तज ममता अम्लान।
छहो साधु निज व्रत निरत, करते आतम ध्यान।।

सिद्धिमती श्री आदिमती, सुमतिमती है साथ।
श्रेयमती श्री दयामती, सब हि नमावत माथ।।

सुमतिसिन्धु क्षुल्लक विनय, सिन्धु प्रमोद विख्यात।
शान्ति उदय श्री रतनजी, जम्बू सागर सात।।

पार्श्वमती श्री जिनमती, पद्मश्री तप लीन।
सयममती श्री विमलमती, जिनव्रत धर्म प्रवीन।।

गोरेलाल अरु दयाचन्द, व्रत शास्त्री भडार।
सघ ब्रह्मचारी सभी, निज सम तत्त्व विचार।।

वीतराग पथ के पथिक, जग से रहत सभीत।
श्रद्धा ज्ञान चरित्र से, जग को करत पुनीत।।

सदुपदेश सुन आपका, होगा आत्मोद्योत।
ऐसी लगन लगाइए, बहे धर्म का स्रोत।।

'कौशल' लखकर सघ को गद्‌गद् है सब लोग।
विमल-सुधा बरसाइए, कटे कर्म के रोग।।

❖❖❖

विमल-दर्शन

❑ पं. भगवत्स्वरूप जैन

कोसमाँ नगरी जिला एटा, जलेसर तहसील है।
श्री चारित्र नायक जन्मस्थान, सु महाशोभाशील है।।
लाल बिहारी लाल पितु, देवी कटोरी मात हैं।
तिन पुत्र नेमीचन्द्र बालसु, ब्रह्मचर्य विख्यात हैं।।

जय विमल सिन्धु आचार्य तुम गुण कथा।
जो पढे भाव सो नाशे भव की व्यथा।।
तुम तजे भोग जग के अथिर पायकैं।
हम नमे चर्ण धारे सु सिर नायकैं।।

तुम जनम से हुआ कोसमा ग्राम धन।
तुम जनम से हुए धन्य पितु-मात जन।।
तुम जनम से हुई जाति प्रख्याति है।
तुम जनम से सभी जीव हर्षात है।।

बालपन मे पढ़ी धर्म शिक्षा महा।
सद्‌गुरु योग से बोध सम्यक् लहा।।
कुछ दिनो की सु, अध्यापकी नाथ है।
ज्ञान अर्चन किया चारित्र के साथ है।।

पुनि करी नाथ सम्मेद गिरि वदना।
साइकिल से अकेले हृदय फन्दना।।
वन्दना करि प्रभु भाव उत्तम बने।
काम के पच भट, नाथ मन सो हने।।

कुछ दिनो बाद प्रभु मन उठी भावना।
तजू अम्बर दिगम्बर सु पद भावना।।
पूज्य आचार्य महावीर कीरति मिले।
गुरु हृदय भावना, कुज सारे खिले।।

शुभ घडी शुभ मुहूरत मुनी पद धरा।
मोह ममता औ माया, सकल मद हरा।।
हाथ पीछी कमण्डलु लिया धार है।
मुनि विमल सिन्धु पद को नमस्कार है।।

देते उपदेश कल्याणकारी महा।
सत्य शिव मग प्रकाशी सु गुरु है महा॥
शुद्ध चारित्रधारी गुरु हैं विमल।
विमल दर्शन विमल ज्ञान चारित्र विमल॥

सु-गुण छत्तीस धारक सु आचार्य है।
आपकी आज्ञा संघ शिरोधार्य है॥
दास भगवत् की शुभ प्रार्थना ध्यान कर।
दीर्घ जिन श्री बिम्ब की थापना मानकर॥

क्षेत्र अतिशय मरसलगज प्रख्यात है।
ऋषभ प्रभु दर्शकर मन सु हर्षात है॥
ऐसी प्रतिभा न भारत मे कहि पाइए।
भव्य जन दर्श इकबार कर जाइए॥

देखिए यह मनोहर महा थान है।
जहाँ ऋषभदास बाबा किया ध्यान है॥
निकट 'फरिहा' नगर के सु यह क्षेत्र है।
दरश करते, नही तृप्त हो नेत्र है॥

जयतु जै, जयतु जै, धीर ध्यानी यती।
जयतु जै, जयतु जै, जै गुरु दृढ व्रती॥
जयतु जै, जयतु जै, धर्म मूरति प्रभो।
जयतु जै, जयतु जै, ज्ञान की शुभ विभो॥

श्री विमलसागर स्तुति

❑ *पातीराम जैन शास्त्री*

जय जयकार सब बोलो, यहाँ विमलसागर विराजे है।
जगे है भाग्य हम सबके, यहाँ विमलसागर विराजे है।

पालते पाँच महाव्रत को, भावे भावना बारह।
चलते ईर्या समिति से, यहाँ विमलसागर विराजे है।

धारे धर्म दसविध जो, तपे जो बारहविध तप को।

रखते ध्यान निजपर का, यहाँ विमलसागर विराजे हैं।

रागद्वेष को छोड़ा, आतमहित में मन जोड़ा।
काटते दु:ख का फंदा, यहाँ विमलसागर विराजे हैं।

विषय कषाय के त्यागी, बने जो पक्के वैरागी।
देते उपदेश जो हितकर, यहाँ विमलसागर विराजे हैं।

जो ज्ञानी और ध्यानी हैं, जो शुद्धात्म बिहारी है।
बताते मोक्ष मार्ग को, यहाँ विमलसागर विराजे है।

केशलोच जो करते, परीषह से नही डरते।
हटाते मोह महातम को, यहाँ विमलसागर विराजे है।

जो शान्त स्वभावी है, बोलते वीतराग वाणी है।
हटाते भार कर्मों का, साथ भरतसागर विराजे हैं।

आचार्य विमलसागरजी है, सचमुच धर्म के सागर।
झुकाओ शीश चरणो मे, विमलसागर विराजे है।

विमल गुरु-स्तवन

❑ *चेतनकुमार जोदावत*

आचार्य विमल के सुमिरण से, मिटता मिथ्यात्व अंधेरा।
हो वन्दन गुरुवर मेरा।।टेक।।

तुमरे चरणो मे देश-देश के, भक्त निरन्तर आते।
तुमरी अमृतवाणी सुनकर, मन्त्र-मुग्ध हो जाते।।
हो सौम्य छवि चारित्र मूर्ति, मन को विषयो से फेरा।
हो वन्दन गुरुवर मेरा।।

हो स्याद्वाद की मूर्ति कभी, एकान्त पास न लाते।
अज्ञान तिमिर को हटा आप, संशय मत भेद मिटाते।
हो निर्विकार ना कुछ संग, निज मे ही डारा डेरा।
हो वन्दन गुरुवर मेरा।।

फहरा के ध्वजा धर्म की, तुम सोते से जगत जगाया।

यथाजात ले रूप स्वय को, पर को सुखी बनाया।
आत्म-निरीक्षण ध्यान लीन हो मोहरिपु को फेरा।
हो वन्दन गुरुवर मेरा॥

''सन्मति'' पाने को शान्ति सुधा, तुमरे चरणो शिर नाता।
आशीष पूर्ण दो गुरुवर जोडूं, निज आतम से नाता।
बस मात्र भावना एक यही, हो भेष दिगम्बर मेरा॥
हो वन्दन गुरुवर मेरा॥

❀❀❀

नमस्तुभ्यम्

❑ पवनकुमार जोदावत

शातिसूरि नमस्तुभ्य, शातो ध्यानी नमोस्तुते।
शातो ज्ञानी नमस्तुभ्य, शातो योगी नमो नम ॥

साधुनायक नमस्तुभ्य, साम्यभाव नमोस्तु ते।
साधुशाती नमस्तुभ्य, साधुधीरो नमो नम ॥

रत्नत्रय नमस्तुभ्य, साधुधीरो नमोनम ।
राष्ट्रगुरु नमस्तुभ्य, रत्नयुक्ति नमो नम ॥

आचार्यस्तु नमस्तुभ्य, आत्मरती नमोस्तुते।
आदर्शो नमस्तुभ्य, आत्मध्यानी नमो नम ॥

चारित्रचक्री नमस्तुभ्य, चरित्रचूडामणी नम ।
चारित्ररत्नो नमस्तुभ्य, चारित्रशाति नमोनम ॥

सूर्यसिन्धु नमस्तुभ्य, यतिराजो नमोस्तुते।
विजयसूरि जितामित्रो, चतुर्योगी नमो नम ॥

श्री विमलसागर महाप्रज्ञ, जगत्प्रसिद्ध सुनिर्मलम्।
निर्मल सागर वन्दे, यतिसघप्रवर्तकम्॥

मंगल प्रार्थना

❑ *आर्यिका अभयमती*

जिनवर के सत्य पथ पर हमको निभाना चल के,
जिन धर्म है हमारा धारेंगे वीर बनके।टेक।।

सब व्यसन पाप तजकर हम अणुव्रती बनेंगे,
बारह व्रतों को धरकर पालन सदा करेंगे।
श्री देव शास्त्र गुरु की भक्ति दिखाना डटके,
निज आत्मबल बढ़ाना कर्तव्यशील बनके।। जिनवर

उर साम्यभाव धरकर दुखियो का दुख हरेंगे,
अकलक सम हम धर्म पर हरदम डटे रहेंगे।
भारत विदेश वासी सबको बताना चलके,
निज सत्य अहिंसा को पालेगे धीर धरके।। जिनवर.

यह अनेकात प्यारा उर मे सदा लहेगे,
है आत्म धर्म न्यारा जिनभेष को धरेंगे।
मुक्तिरमा से वरने शिवपथ दिखाना चलके,
विज्ञान रस पिलाना अध्यात्म रसिक बनके।। जिनवर

सकल्प मूल तज कर निज भाव मे रहेगे,
पर भाव को हटाके चैतन्य गुण लखेगे।
गुरुवर की 'अभयवाणी' सबको बताना पढ़के।
ये वीर अमरवाणी शिवपुर दिखाना चलके।। जिनवर

***

श्री विमलसिंधु वन्दना

❑ *आर्यिका अभयमती*

तर्ज जहाँ डाल डाल पर
श्री विमलसिन्धु जी के सुमरन से मिटता भव-भव का फेरा।
है वन्दन तुमको मेरा।।

जहाँ धर्म ध्यान अरु विश्व शान्ति का निशदिन रहता डेरा।

है वन्दन तुमको मेरा॥

जिसके पद पकज मे झुकती है स्वर्ग लोक की बाला।
जिनकी वाणी से आत्म-कमल को मिलती ज्ञान की धारा।
जहाँ मुक्ति-मार्ग अरु ज्ञान लक्ष्मी का निशदिन शाम सवेरा।
है वन्दन तुमको मेरा॥

जिनकी महिमा को आसमान के तारे निशदिन गाते।
भाव भक्ति से देव इन्द्र नर नारी शरण मे आते॥
जिनके द्वारे पर सूर्य किरण का लगता रहता फेरा।
है वन्दन तुमको मेरा॥

जिनकी वाणी से भव-भव का मिथ्यात्व दूर भग जाता।
निज तत्त्व प्रकाशित हो करके सम्यक्त्व पास मे आता।
है अनेकान्त की 'निर्मल' गगा तट मे नर-हस बसेरा।
है वन्दन तुमको मेरा॥

***

श्रद्धा के दो पुष्प

❑ ***शशिप्रभा जैन, 'शशांक'***

वदन अर्चन विमल सिन्धु का, करके मन हर्षाता है।
दिव्य तेज की गरिमा लखकर, अक्षय सुख लहराता है॥
मोक्षमार्ग के पावन राही, निज स्वरूपता मे तल्लीन।
मुक्तिरमा के वरण हेतु ही जीवन करने नही मलीन॥

विमल श्री आचार्य गुरुवर, परम साधना की मूर्ति।
त्याग तपस्या जिनका साधन, दिव्य ज्ञान की ज्योति॥
शुभ्रकुन्द तम चमके आभा, जो जन देखे चकराये।
भक्ति गगा उमड़े मन मे, नाचे गाये बलि जाये॥

विमलश्री आचार्य गुरुवर, सत शिरोमणि तपधन के।
जिनवाणी के वरदपुत्र है, कष्ट निवारक जन जन के॥
परम साधना के आराधक, के वन्दन को सब आते।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई, भक्त इन्होंके है पाते॥

बाल किशोर श्री नेमिचन्द, प्रारम्भ से ही वैरागी।
किसी तरह भी मिले उन्हीको, आत्मिक शांति के रागी॥
साइकिल से सम्मेद शिखर की, वन्दन अर्चन की जिनने।
साहस कितना अनुपम शोभे, जग असार जाना उनने॥

झूठी आशा, मिथ्या बंधन, जीवन की अँधियारी है।
भौतिकता की चकाचौंध को, नश्वर रूप निहारी है॥
जग, वैभव से ममता त्यागी, तम की भटकन से बचने।
विरत हुए परिवारजनो से, बढ़े चरण मुनिपथ वरने॥

आत्मशोध कर लीना उनने, निज मे निजता को ढूढा।
भव-भव भ्रमण करन न चाहूँ, नही आत्मा बन कूड़ा॥
ज्ञान किरण अत मे जागी, तन मन शोभे जिनमुद्रा।
वीतरागता मुख मे झलकी, टूट चुकी मिथ्या निद्रा॥

सम्यक् दृष्टि जिनवर साधु, निर्विकार से बढ़ते जब।
पथ बाधाएँ बनी पुष्प है, अतिशय मण्डित होती तब॥
ज्ञान दिवाकर गुरु हमारे, कई उपसर्ग विजेता है।
सग साथ जो रहता इनके, ऋद्धि सिद्धि के जेता है॥

निमित्त ज्ञान के रूप विमल है, महामुनीश्वर शुभकर्णी।
मुखमण्डल को देख तुरत ही, अतर्भाव दिखा दर्शी॥
कैसी मन मे चाह उमड़ती, और चाहता क्या जन है।
सहज रूप मे दर्शाते है, धन्य धन्य कहता मन है॥

प्रखर तपोबल के आगे तो, पापी कामी नत होते।
दिव्य साधना बौद्धिकता से, मात्रिक शक्ति दिखलाते॥
यही भव्य कारण है इससे, भक्ति करने मे इनकी।
मेला लगता जहाँ चरण है, सदा सदा जय महिमा की॥

सिंह सर्प ने खेला तन से, भक्तिवश मे दर्शन कर।
शुभाशीष पाया था इनने, विमल श्री का वदन कर॥
श्री जिनेन्द्र दर्शन मुनि वदन, से नशती भव-भव की पीर।
भोगी रोगी मानव सीखे, सद्वाणी से होना वीर॥

सत्य रूप है शिव स्वरूप है, निर्विकार की सुन्दरता।
समता क्षमता कर्मवाद की, धर्मवाद की समरसता॥
शीत उष्ण के कठिन दुखों को, वर्षों से सहते।

परीषहो को जीता उनने, शूल फूलवत् ही बढते॥

विषम समय मे भी ऋषिवर को, विचलित होते न देखा।
क्रूर आपदाएँ नत होकर, स्वत पराजित तज शेखा॥
जहाँ जहाँ श्री चरण विराजे, धरती अम्बर झूम उठे।
नाचे गाये भाव भक्ति से, पातकता तब नही सटे॥

पावन जिनकी है क्रियाएँ, उज्ज्वल ऋषिवर का इतिहास।
नाज हमे आचार्यश्री पै, भारत वसुधा को भी नाज॥
विश्व शान्ति के उद्‌घोषक है, श्री आचार्य विमलसागर।
अनेकात और स्याद्वाद की, गरिमा महिमा के आगर॥

सत्य अहिसा मानव सेवा, जीव मात्र से करना नेह।
पत्र पुष्प तरुवर अपने है, ममता देना सुख का गेह॥
चमक रहे है दिनकर जैसे, विमल हमारे श्री मुनिराज।
रत्नत्रय से जगमग होते, शाश्वत मुक्ति-रमा के काज॥

धन्य धन्य है ऐसे तपसी, साधु सतो के बल ही।
टिकी हुई यह धरा हमारी, धर्मध्वजा पा सबल ही॥
आज हमारे द्वेषी रागी, पथी करते है उपहास।
स्वारथ से अधे बन बैठे, जीवन का न करे विकास॥

जिनवाणी की गरिमा खो के, कोरे बाचे ग्रन्थन को।
नही खोलते अत चक्षु, आर्त रौद्र ही चितन वो॥
त्यागी मुनि दिगम्बर कैसे, होना कैसा तप साधन।
परिभाषा न क्रिया न जाने, जाने उनको दुर्भावन॥

स्वय धवल वस्त्रो मे दिखते, बगुला भक्ति करते वे।
स्वय स्वय का दर्शन करते, तब निन्दक न बनते वे॥
ऋषि मुनि पै दाव चलाकर, नहि सम्पन्न बनोगे जी।
नरको का है वास मिलेगा, निश्चय उर मे लोगे जी॥

त्यागी होना बड़ा कठिन है, उस पर मुनि व्रत का सयम।
असिधारा है बडी कँटीली, विकट परीषह का सगम॥
इसीलिए ऐसे जन बाधव, से है मेरा ये कहना।
स्वय बने गर नही विरागी, फिर त्यागी बढ से बचना॥

सिर्फ बात से काम बने न, करके दिखलाना अच्छा।
निन्दक दुर्ध्यानी कहलाता, मिथ्या नारा न अच्छा॥

भूल जाओ बीती बातो को, भूल समझकर मिल आओ।
पूर्ण आस्था श्रद्धा से ही, मुनि दिगम्बर अर्थाओ॥

ऐक्य रूप मिलकर सब बोलें, जय जय मुनि दिगम्बर की।
शुभ कल्याणक जयकारों से, उतरे अम्बर नीचे भी॥
प्रेम भाव जग मे फैलायें, जैन धर्म है अतिशयवान।
ऋषि मुनि सतो की वाणी, कष्ट निवारे जग-जन जान॥

पावन रजकण शीश चढ़ाकर, गुरुआशीष सदा पाऊँ।
अधकार मे भटक न जाऊँ, सद्प्रकाश उनसे पाऊँ॥
ह्रदय निलय मे जिनवर भक्ति, गुरुदर्शन का सबल लूँ।
यही कामना आश भरोसे, विमल सिन्धु से वर बढ लूँ॥

जीवन जलनिधि नौका है, गुरु वरदानो की दरकार।
धारा गरल बही जीवन में, बन जायेगी अमृत धार॥
मम अभिलाष गुरु चरणो मे, वन्दन अभिवन्दन बेला।
पूर्ण करे आचार्य देव अब, अर्चन पूजन शुभ तेरा॥

अमित अगाध अनन्त है मेरा, विमल पदो मे नमन प्रणाम।
उर मदिर मे तेरा दर्शन, करती रहती सुबह शाम॥
श्रद्धा के दो पुष्प चरण मे, अर्पित करती विनयाञ्जलि।
पुन नमन कर मुनिपद वन्दन, स्वीकारे यह काव्याञ्जलि॥

✦✦✦

वन्दन-अभिनन्दन

❑ *विजयकुमार शास्त्री*

हे पुण्यधाम आचार्यप्रवर, श्री विमल सिन्धु शत अभिनन्दन।
हे धर्म-धुरन्धर, महाश्रमण! युग का तुमको नत सिर वन्दन॥

वात्सल्यमूर्ति हे परम शान्त, धर्मामृत से परिपूरित हो।
आत्माभिरमण की लक्ष्मी से, जगवन्द्य! सदा तुम भूषित हो॥

हे सत्य समीक्षक महागुरो! तुमने वह पथ अपनाया है।
चौबीस जिनेन्द्रों ने जिसपर, चलकर अपना पद पाया है॥

जग की नश्वर माया छोड़ी, ममता की कड़ी-कड़ी तोड़ी।
तुमने जग वैभव धूल समझ, निज रूप साधना रति जोड़ी॥

हे परम तपस्वी साधक तुम, सयम असिधारा पर चलते।
तुम नही किसी के बन बाधक, निज कर्म शत्रुओं को दलते॥

तुम अपने मे ही रमकर भी, परहित मे तत्पर रहते हो।
बाईस परीषह सह कर भी, मम सम से नही विचलते हो॥

हो गुरु तुम यद्यपि दयासिन्धु, पर महामोह से लड़ते हो।
अम्बर से परम दिगम्बर बन, तीनो ही रतन पकडते हो॥

तुम दिव्यधरा के कल्प वृक्ष, क्षीरोदधि के हो अमृत कलश।
आनन्द कन्द के नव प्ररोह, तुम आत्म-शान्ति में सतत अलस॥

तुम निर्झरणी के वह प्रवाह, जो जग को जीवन देता है।
दुर्गम पथ पर चल, अपनी धुनि मे रस लेता है॥

धरती का दुरित ध्वात हरते, रविसम आलोक बिखरते हो।
कारुण्यपूर तुम सतत अये, ईर्या समिती से चलते हो॥

तुम तपस्तप्त पर सम-शीतल, होकर विरक्त स्वात्मानुरक्त।
जर्जर काया लेकर के भी, इन्द्रिय जप मे हो अतिसशक्त॥

भव विधियाँ खोकर के भी तुम, निज निधियाँ सञ्चित करते हो।
हो विमल विमल गगा जल सम, आत्मिक मल धोते रहते हो॥

फूलो-सा हृदय लिये तुम हो, शूलो के पथ पर चलते हो।
रह करके भी नि सग सदा गुण-निधि से जीवन भरते हो॥

तुम कठिन तपस्या करके भी, मन से हो सम-शीतल चन्दन।
बस इसीलिए तो जग तेरा, करता है वन्दन, अभिनन्दन॥

◆◆◆
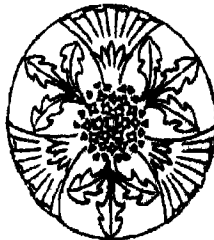
विमलसागर स्तवन

❑ *छोटेलाल जैन*

आज वदना करते हम सब, ऐसे संत महान की।
हर क्षण जो गाथा कहते है, वीतराग विज्ञान की।
जय आचार्य विमल, बोलो जय आचार्य विमल।

आचार्य विमल समता सागर है, रत्नत्रय के धारी हैं।
वात्सल्यमूर्ति करुणासागर है, जग जीवन हितकारी हैं।
उपसर्ग विजेता, शान्ति प्रणेता, बात कहे सन्मार्ग की।
आज वदना करते

मुनिवर से जिनवर बनने मे, सत प्रयत्न रत रहते है।
ऐसे विमल सिन्धु के दर्शन, सब पाप शमन कर देते है।
हर बात आपकी, जिनवाणी है, श्वास जीव कल्याण की।
आज वदना करते

स्वय तीर्थ है, तीर्थंकर के सचमुच रूप कहाते है।
सत्य, अहिंसा, शील, अपरिग्रह, सयम नियम बताते है।
क्षण-प्रतिक्षण जो बाते करते, जग जीवन कल्याण की।
आज वदना करते

मुझे मिले आशीष आपका, और मिले दर्शन है।
आचार्यश्री के चरणो मे, मम सौ-सौ बार नमन है।
युग युग विचरे बीच हमारे, पीड़ा हरे जहान की।
आज वदना करते हम सब, ऐसे सत महान की।

विमल-अभिवन्दना

❑ *पं. धरणेन्द्रकुमार शास्त्री*

हे विमल देव, निर्मल चरित्र, करुणा रस पूरित अति पवित्र।
जगती के गौरव परम देव, पावन पुनीत सम्यक् चरित्र॥

पचेन्द्रिय विषयों से विरक्त, है परम दिगम्बर शान्त रूप।

व्रत, समिति, गुप्ति के आराधक, परमात्म परम पावन अनूप।।

कचन कामिनि का मोह त्याग, आतम स्वरूप मे लीन आप।
पर-परिणति तज निज परिणति मे, निज की निजता मे लीन आप।।

हम मोही है प्रभु निर्मोही, हमसे न आपका कुछ नाता।
पर दया दृष्टि हम पर कीजे, इसमे न आपका कुछ जाता।।

हो रहा आपका अभिनन्दन, हम करते है शत-शत वदन।
भावो की माला गूँथ-गूँथ, चरणो मे अर्पित प्रभु वदन।।

***

विमल अष्टक स्तुति

❑ *अभयकुमार जैन*

सप्तमी क्वार वदी के शुभ दिन, जन्म कोसमा पाया।
पिता बिहारी मात कटोरी, नाम नेमीचन्द भाया।।
ऐसे चलते फिरते जिनवर के, मै सौ सौ मगल गाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

धार्मिक शिक्षा जैन धर्म की, मुरैना विद्यालय पाई।
अध्ययन मे वैराग्य बढा, अरु वीतरागता आई।।
ऐसे सत शिरोमणि की, मै शिक्षा मन मे लाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

सन् पचास बडवानी म क्षुल्लक, वृषभसागर कहलाए।
धर्मपुरी सन् ईकावन मे, ऐलक सुधर्म सागर पद पाए।।
ऐसे सन्त रत्न के गुणो का, वर्णन मै कैसे कर पाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

सोनागिर पर सन् बावन मे, मुनि विमल सागर कहलाए।
महावीरकीर्ति गुरुवर के मुनिवर, अच्छे शिष्य कहाए।।
ऐसे गृहत्यागी वैरागी के, मै शरण चरण मे जाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

अन्न दही घी के त्यागी, वे जिनवर को ध्याते हैं।

बारहों महीना सभी आपसे, शुभाषीश पाते हैं।।
ऐसे "करुणा सागर" के, मै सागर मे गोते खाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मैं बार बार सिर नाऊँ।।

वह जगह तीर्थ बन जाती है, जिस जगह आप जाते है।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौड़े-दौड़े आते है।।
ऐसे मुनिवर के दर्शन को, मैं हर क्षण चित्त में लाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।

चलते चलते सघ आपका, सन् साठ मे टूण्डला आया।
साधु समाज व जैन समाज से, आचार्यश्री पद पाया।।
ऐसे निमित्तज्ञानी के चरणो की, रज को माथ लगाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

आप स्वय ही महा-तीर्थ है, तीर्थंकर के रूप कहाते।
जितने भी आते है भविजन, मन वाँछित फल पाते।।
ऐसे निर्विकल्प प्रतिमायोगी का, आशीष हमेशा पाऊँ।
आचार्य विमल के चरणो मे, मै बार बार सिर नाऊँ।।

★★★

विमल सागर बड़े महान है

❑ *सौ. सुरेखा शाह*

धर्म की हो शान
तुम भी मनुकी सतान
इनका जीवन ही वितराग है
विमल सागर बड़े महान है
जय कहो विमलसागर बड़े महान है

नश्वर ससार और व्यवहार तूमने छोड़ दिया
वितराग ज्ञानको, आत्मासे तूने जोड दिया
अमर तेरा गान रहा जैन तत्त्वज्ञान
सारे आत्मा मे स्वय भगवान है वीर
विमल सागर बड़े महान है

जय कहो विमलसागर बडे महान है

मानव जातीके सारे तुमने अपना लिया
सम्यज्ञान ज्योती को तुमने फैला दिया
तेरा वितराग ज्ञान बने सबको वरदान
सम्यक भारित से जीवन बनाया महान
विमल सागर बड़े महान है।
जय कहो विमल सागर बड़े महान है

तुम्हारा सघ है महान
ज्ञानी गुरुओकी खाण
जीवन सभी का है
सत्य धर्म ज्ञान
अमर बने प्राण
जैसे सिद्ध भगवान
तुम्हारी अबर से ऊची
उडान है प्रभू
विमल सागर बड़े महान है
जय कहो विमल सागर बड़े महान है।

OOO

आशिष दो मुनिराज

❑ *सौ. सुरेखा शाह*

आशिष दो मुनिराज आज हम
चरण मे आइ हैऽऽऽऽऽऽ
आज के दिन महा ग्रथ विमोचन
खुशियॉ पाए हैऽऽऽऽऽ।।धृ।।

हृदय आपका अति निर्मल है
साथही पुण्यसे ज्ञान प्रबल है
निर्मल मनमे, ज्ञान की ज्योती
ज्ञान ही फैलाएऽऽऽऽ

आशिश दो मुनिराज आज हम

करुणा सागर आपको कहते
विमल सागरजी आपको कहते
करुणा सागर सबके रहते
साधु नियम मे दृढता रखकर
विश्वको अपनाएऽऽऽऽ
आशिष दो मुनिराज

ज्ञान भक्तीका साधन पाया
सत्य धर्म का बिगुल बजाया
जागो भाई बहनो जागो-धर्म को पालो रेऽऽऽऽ
आशिष दो मुनिराज आज हम चरण मे आए हैऽऽऽऽ

OOO

तुमको लाखो प्रणाम

❑ *श्रीमती जंबूवती शाह*

वन्दो दिगम्बर गुरू विमलसागर तरण तारण जान
जो भरम भारी रोग को है राज्यवैद्य महान

सोलहकारण भावनाकरे तिर्थंकर अवतार
मोहमहारिपु जीतकर छोड्यो सब संसार

वितरागी महाशात वात्सल्य मुर्ती तुम्हारी
प्रभु शत शत वदना लेलो हमारी

वात्सल्य मूर्ती मुनीराज तुमको मेरा प्रणाम
तुमको लाखो प्रणाम

मोक्ष मार्ग दशनिवाले तुमको मेरा प्रणाम
तुमको लाखो प्रणाम

सब जीवोकी दुर्गति छुड़ानेवाले तुमको मेरा प्रणाम
तुमको लाखो प्रणाम

वितराग बरसानेवाले तुमको मेरा प्रणाम

तुमको लाखो प्रणाम
सत्य अहिंसादि की राह बतानेवाले, तुमको मेरा प्रणाम
तुमको लाखो प्रणाम

OOO

भजन

रवीन्द्र जैन, गीतकार-संगीतकार

गुणसागर विद्यासागर आचार्य विमल सागर की जय
जय बोलो गुणसागर

सुखदायक जनगणनायक मगलमय धर्मेश्वर की जय२
जन्मस्थान कोसमा ग्राम नेमीचन्द बचपन का नाम
थी शिक्षा मे रूचि विशेष दीक्षा ली तज राग और द्वेष
महावीरकीर्ति के शिष्य, जिनधर्म गगन दिनकर की जय
जय बोलो गुणसागर विद्यासागर

वर्षो वर्ष मास प्रतिमास किए अनगिणत व्रत उपवास
जिन बिम्बो का हो निर्माण यही आपका लक्ष्य प्रधान-२
जिनवाणी के महाज्ञानी, गुरूगौतम सम गणधर की जय
जय बोलो गुणसागर विद्यासागर

केशलोच की विधी अनिवार्य पालन करते जैनाचार्य
हर्ष विषाद जिन्हें कछु नाहीं केवल जैन साधु जग माही
धीर वीर गम्भीर शान्त, गिरीसदृश आत्म निर्भर की जय
जय बोलो गुणसागर विद्यासागर

नेमी सागर के मन्दिर मँझार नेमीचन्दजी रहे पधार
देखे आप प्रत्यक्ष परोक्ष निश्चित ऐसे मुनि का मोक्ष
हम बोले मुनिवर की जय, मुनिवर बोले जिनवर की जय
जय बोलो गुणसागर विद्यासागर आचार्य विमलसागर की जय
सुखदायक जनगणनायक मगलमय धर्मेश्वर की जय

***
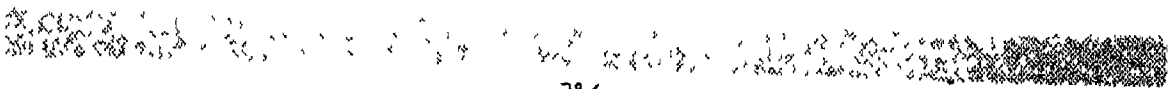
हीरक जयन्ती शुभम्

❑ रवीन्द्र जैन, गीतकार-संगीतकार

चलो मिलके, मनाये हम, यह हीरक जन्म जयन्ती
विमल सागर मुनिश्वर की यह हीरक जन्म जयन्ती
यही प्रार्थना शुभारम्भ में, आज पचहत्तर साल के
जितने घटे बढे दिन उतने मुनि की जीवन माल के
रहे युगों तक बीच हमारे दिया धर्म का बाल के
जितने घटे बढे दिन .

सबके सकट ओढ दया निधि, जन जन का उपकार करें
एक दिवस के अन्तराल से एक समय आहार करे
आहार करे फल रस का, यह काम न सबके बसका
सबको मन वाछित फल देते सबकी विपदा टाल के
यही प्रार्थना शुभारम्भ मे आज पचहत्तर साल के
जितने घटे बढे दिन

एक तो सागर उस पै विमल हो फिर उसका क्या कहना है
हमको तो अब जीवनभर इस सागर तट पर रहना है
इसमे वो ज्ञान के मोती जिनकी गिनती नहीं होती
सब के लिए कपाट खुले है गुरु के हृदय विशाल के
रहे युगों तक बीच हमारे दिया धरम का बाल के
जितने घटे बढे दिन

चलो मिलके मनाये हम विमल सागर
परमहस की दिव्य दृष्टि में एक सभी जीवात्मा है
सत्यधर्म का आदर करते यह वो सहज महात्मा है
यह सहज महात्मा ऐसे जिनवर का रूप हो जैसे
सब को कचन करने वाले पारसमणि इस काल के

यही प्रार्थना शुभारम्भ में आज पचहत्तर साल के
जितने घटे बढे दिन उतने मुनि की जीवन माल के
रहे युगो तक बीच हमारे
जितने घटे बढे दिन
चलो मिलकर मनाये हम

***

विमल आरति

❑ ***रवीन्द्र जैन, गीतकार-संगीतकार***

आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी, भव भव के दुख मेटन हारी
पहली आरति वैरागी की, भेष दिगम्बर सब त्यागी की
दूजी आरति सयम तप की, अविरल ध्यान निरन्तर जप की
मात कटोरी पिता बिहारी, आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी
भव भव के दुख

तीसरी आरति तेज प्रखर की, सौम्य मूर्ति गुण रत्नाकर की
चौथी आरति जिन चिन्तन की, क्षमाशील समदर्शी मन की
दर्शन करत मिले सुख भारी, आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी
भव भव के दुख

पाचवी आरति दृढ निश्चय की, अभय करन मुनिराज अभय की
छटवी आरति निमित्त ज्ञानकी, धर्म धुरधर गुरू प्रधान की
जिनवाणी के प्रमुख पुजारी, आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी
भव भव के दुख

सातवी आरति मधुर वचन की, राग द्वेष परिणाम दमन की
मुनिवर सब के काज सवारे, हम शत शत आरति उतारे
नहि तुमसा कोई पर उपकारी, आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी
भव भव के दुख मेटन हारी

आरती

कवि क्षु. १०५ सुज्ञानसागर महाराज (चिदानन्द)

भो! आचार्याः! श्री विमलसागरा ।
भक्ति त्रय सहितोऽहं।
आरती कुर्वेऽहं (नमोस्तुभ्यं)।
मुनिगण नायक दुरित विनाशक
भक्ति त्रय सहितोऽहं। आरती . ।।१।।

बाल ब्रह्मचारिण· सद्‌गुण भण्डरिण·।
भक्ति त्रय सहितोऽह... आरती।।२।।

धर्म प्रभावक मर्म प्रबोधक
भक्ति त्रय ।।३।।

निमित्तज्ञानी भो सम्यक्‌ज्ञानी
भक्ति त्रय सहितोऽह। आरती . ।।४।।

वात्सल्य सिन्धो, करूणा प्रसिन्धो
भक्ति त्रय सहितोऽह . आरती।।५।।

चारित्रवृद्ध, तपोभिवृद्ध
भक्ति त्रय सहितोऽह आरती।।६।।

भो महाचार्या·! भव्याचार्या
भक्तित्रय सहितोऽहं. . आरती।।७।।

विश्व प्रख्यात, अष्टाग ज्ञाता
भक्ति त्रय सहितोऽह. आरती।।८।।

स्वर्ण दीपकै, रजत पात्रकै
भक्ति त्रय सहितोऽह. . आरती।।९।।

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

मनोज्ञ व्यक्तित्व

।वात्सल्यरत्नाकर।

मनोज्ञव्यक्तित्व
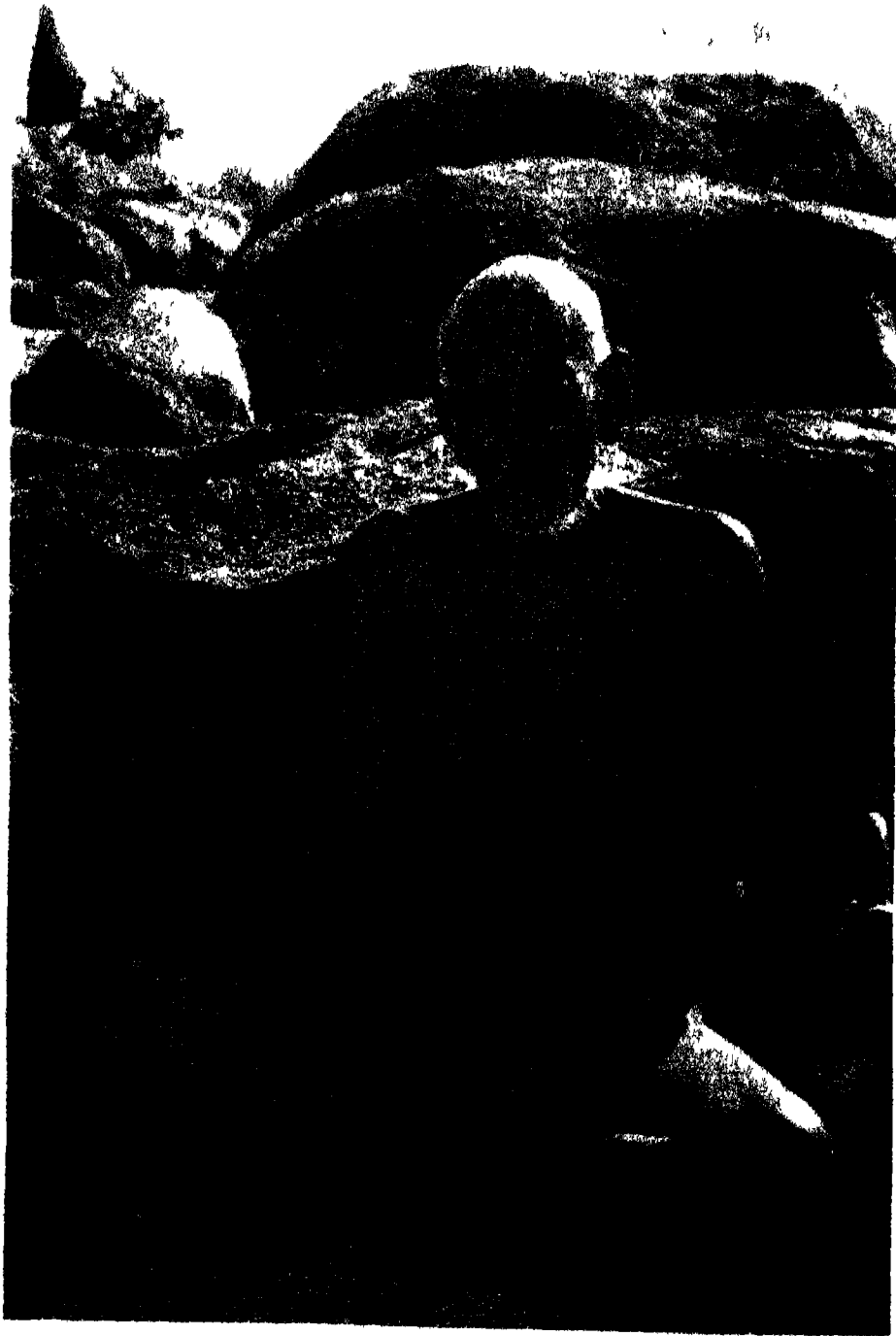
दिव्य-आलोक

❑ *आर्यिका स्याद्वादमती*

मध्यलोक अनेकानेक द्वीप व समुद्रो से घिरा है। मध्यलोक मे ढाई द्वीप से ऊर्ध्वलोक जाने का यानी सिद्धालय पहुँचने का सीधा रास्ता है। यह मध्यलोक की विशेषता कर्मबन्धन से मुक्त हो ऊपर उत्थान की ओर ले जाती है और यही से पतन हो तो सीधा पाताल भी नजर आता है। इसी मध्यलोक के बीचो-बीच विशाल जम्बूद्वीप है। यह जामुन के वृक्षो से शोभायमान है अत· इसे जम्बूद्वीप कहते है। जम्बूद्वीप के दक्षिण भाग मे भरतक्षेत्र नामक एक विशाल भूखड है। भरतक्षेत्र षट्खडो मे विभाजित है। पाच म्लेच्छ खड और एक आर्यखड है तथा आर्यखड मे सदैव सज्जन, सदाचारी, सरल मानव, धार्मिक श्रावक, श्रमणो का निवास रहता है। ऐसा यह भरतक्षेत्र एक सदाचार की मर्यादा से रक्षित अनुपम देश है।

इस विशाल भरतक्षेत्र के आर्यखड मे अनादिकाल से अनेक महापुरुषो ने जन्म लिया। उन महापुरुषो ने हमे सम्पत्ति के रूप मे अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह तथा स्याद्वाद—अनेकान्त रूप सिद्धान्त रत्न दिये। वे आगे आने वाली सतति के लिए सिद्धान्तरत्न रूप धरोहर छोड़कर गये है जिनको हृदय मे धारण कर आत्मा अन्तर्तमस् को बाहर फेक देता है।

भारत देश की मूल संस्कृति कुलकरों की सस्कृति है। यहाँ आरभ से ही शासको, राजा, प्रजा, साधुओं व सभी के लिए परिणामो को निर्मल रखने की बात कही गई है। अध्यात्मविद्या इस धर्म-प्रधान देश की मूल देन है। प्रारम्भ में, कल्पवृक्षों के आधार से जीवन-यापन होता था। नाभिराय-मरुदेवी के काल मे लोग कल्पवृक्षों के सहारे सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते थे। नाभिराय के पुत्र ऋषभदेव आदि तीर्थंकर थे।

कालक्रम से धीरे-धीरे जीवन-आधार कल्पवृक्ष समाप्त हो गये। प्रजा परेशान हो गई तब राजा ऋषभदेव ने प्रजा को असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प और कला इन षट्कर्मों की शिक्षा दी। इस कारण वे युग-विधाता कहलाये। प्रजा ने कृषि कर्म की शिक्षा प्राप्त कर शाकाहार को पुष्ट किया। 'कृषि करो या ऋषि बनो'' यह ऋषभदेव

की अमूल्य शिक्षा थी। काल का प्रवाह अपनी तेज रफ्तार से दौड़ रहा था। प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ से अन्तिम चौबीसवे तीर्थंकर महावीर भगवान का काल आ पहुँचा। अब तक भगवान महावीर को निर्वाण हुए २५१९ वर्ष हो चुके है। सच्ची दिशा का ज्ञान देने वाले सत्पथ मार्ग-निर्देशक तीर्थंकरो का वर्तमान मे अभाव हो गया है। आज मानव-मन कमजोरियो का दास बन गया है।

सूर्योदय

जैन सस्कृति के विकास तथा उन्नति के इतिहास पर दृष्टि डालने पर यह ज्ञात होता है कि कैवल्य सूर्य की रश्मियो से विश्व का मोहान्धकार दूर करने वाले तीर्थकरो ने अपने जन्म द्वारा उत्तर भारत की भूमि को पवित्र किया तथा निर्वाण द्वारा उसे तीर्थस्थल भी बनाया। किन्तु उनकी धर्ममयी देशना रूप अमृत का पान कर महत्त्वपूर्ण वीतराग रस भरे शास्त्रो का निर्माण करने वाले धर्मधुरन्धर आचार्यो ने अपने जन्म से दक्षिण भारत की भूमि को श्रुत-तीर्थ बनाया। परन्तु तीर्थंकरो के जन्म का अभाव होते ही, मानो भाविकाल मे तीर्थंकर रूप धारण करने की क्षमता रखनेवाले जिनधर्मप्रभावक आचार्यरत्नो ने पुन अपने पावन जन्म से उत्तर प्रान्त को पावन पवित्र तीर्थ बनाने का महान सकल्प लिया।

भारत देश की पावन अहिसामयी भूमि पर जब हिसा का ताडव नृत्य हो रहा था, जीवो की निर्मम बलि चढ़ाई जा रही थी, महावीर रूपी सूर्य उदित हुआ और जग से हिंसा तम रूपी काले भ्रमर सम छाई रात्रि को दूर कर अहिंसामयी प्रकाश से सुस्थित दिन का उदय किया। काल के प्रभाव से युगधर्म बदलता गया। वीर निर्वाण के करीब २५०० वर्ष बाद की स्थिति में मानव मानव का दुश्मन बन रहा है। हिसा, झूठ, अनैतिकता, दुराचार आदि से ग्रस्त जीवन पाप रूप अधकार की काली रात्रि से गुजर रहा है। ऐसे समय में सत्पथ-प्रदर्शक महापुरुषो ने न्यायनीति की शिक्षा देकर सच्चा मार्ग दिखाया है। इस सत्पथ प्रदर्शन धारा मे, उत्तर भारत के कौसमाँ नामक ग्राम जिला एटा मे एक सूर्य उदित हुआ जिसने उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम घूम-घूमकर जन-मानस के मन से अज्ञान अधकार, मिथ्यामार्ग का विध्वस कर उन्हे समीचीन मार्ग मे लगाया है।

देस-कुल-जाइ-सुद्धा

बालक का जन्म पद्मावती पुरवाल जाति मे हुआ। पिता श्री बिहारीलालजी धर्मनिष्ठ थे। माता कटोरी को ऐसे महापुरुष को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। सागर से कटोरी को भरते हुए तो ससार ने देखा है किन्तु *जग का आश्चर्य कि कटोरी से सागर को निकलते हुए अभी तक किसी ने नही देखा था।* जगत्सुखदायिनी माँ कटोरी देवी ने कटोरी से सागर रूप नेमिचन्द को प्रदान किया। सागर तो खारा होता है किन्तु इस कटोरी से निकला सागर इक्षु रस सम मिठास रूप वात्सल्य से युक्त है। यह सागर जल की मिठास से इतना पूरित है कि भव-भव सुख के प्यासे एव दुख से सतप्त जीवो की प्यास बुझाने मे ही अपनी साधना को लगाये हुए है।

जिस पद्मावती पुरवाल जाति में आपका जन्म हुआ है इसी जाति मे अनेक रत्नत्रयधारक दीक्षाधारी महापुरुषों का जन्म हुआ था। इस जाति मे बड़े-बड़े प्रभावशाली रत्नत्रयधारी तथा वीतराग शासन के प्रभावक नररत्न हुए

हैं, इतिहास साक्षी है। संवत् ३०८, वी नि सुदी ५ में सर्वार्थसिद्धि, समाधितन्त्र, इष्टोपदेश आदि महान ग्रन्थों के कर्ता पूज्य आचार्यश्री पूज्यपाद स्वामी इसी जाति मे उत्पन्न भारत देश, जैन संस्कृति के संरक्षक नररत्न थे। सवत् ८९० मे माघचन्द्र आचार्य तथा १०३३ मे अवतरित लक्ष्मीचन्द्राचार्य, संवत् १३१० में अवतरित प्रभाचन्द्राचार्य, व १३८५ मे अवतरित पद्मनन्दी आचार्य इसी पद्मावती पुरवाल जाति के नररत्न है। वर्तमान युग में कठोर तपस्वी, उपसर्ग विजेता, निर्भय सिंहसम विचरण करने वाले, अठारह भाषाओं के ज्ञाता गुरुदेव के दीक्षागुरु तपोनिधि परमपूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्ति महाराज का जन्म भी संवत् १९६७ में इसी जाति में हुआ तथा शिक्षा एव मन्त्र-तन्त्र विद्याप्रदायक आचार्य सुधर्मसागरजी महाराज (पूर्वावस्था में प्रसिद्ध प मक्खनलालजी के बड़े भाई) इसी जाति के रत्न है। साथ ही आचार्य सन्मतिसागरजी, स्व आचार्य पारससागरजी, वन्दनीय आचार्य अजितसागरजी महाराज आदि रत्नत्रयभूषित साधुवृन्द तथा अनेक सरस्वतीपुत्रों—प माणिकचन्दजी कोन्देय (श्लोकवार्तिक ग्रन्थ के हिन्दी टीकाकार) प. मक्खनलालजी, पं श्यामसुन्दरजी शास्त्री, प कुञ्जीलालजी, प नरेन्द्रप्रकाशजी आदि जैसे रत्नो की खान से पद्मावती-पुरवाल जाति धन्य हो उठी है। तथा इसी जाति में उत्पन्न अनेकानेक तथा इसी जाति में उत्पन्न त्यागी, व्रती, मुनि-आर्यिका क्षुल्लक-क्षुल्लिकाएं आज भी चतु सघ में शोभायमान है।

पद्मावती पुरवाल जाति का वशवृक्ष, जैसाकि सूचित करता है, इसी श्रृखला मे आप धर्मनिष्ठ परिवार के थे। आपके परिवार मे धर्म एव सस्कृति को गौरवान्वित करने वाले अनेकानेक कार्य हुए। आपके जनक व जननी, विशुद्ध वश के कारण आपको सप्त परम स्थानो में से प्रथम 'सज्जातित्व' समलकृत कहा जायेगा। आप सज्जातित्व, सद्गृहित्व, परिव्राजक पद, सुरेन्द्रपद, साम्राज्यपद, अर्हन्तपद तथा निर्वाणपद इन सप्त परम स्थानो—श्रेष्ठ पदो में से पदत्रय भूषित महापुरुष है। महापुराण में वर्णन मिलता है कि मनुष्य जन्म के प्राप्त होने पर मुनि दीक्षा धारण के योग्य पवित्र वश मे विशुद्ध जन्म धारण करना सज्जाति है। पिता के वश की शुद्धता को कुल कहते है। माता व पिता के वशो की शुद्धता को सज्जाति कहते है। इनके होने पर अयत्नप्राप्त गुणो के कारण रत्नत्रय की प्राप्ति सुलभ होती है।

परिवार

आपके पूर्वज कौसमा ग्राम से तीन किलोमीटर दूर तखावन के रहने वाले थे। दादी धर्मप्रिया शीलवती नारी थीं। दादी की धर्मनिष्ठा ने इनके घर मे प्रकाश रूप दीपक जलाया था। दादाजी ठाकुरदासजी दिवाकर के दो पुत्र बिहारीलालजी और तोताराम तथा एक पुत्री दुर्गाबाई थी। बिहारीलालजी के नेमिचद एकमात्र इकलौते पुत्र थे। मानो विधाता ने भविष्य के फल को साक्षात्कार कराने वाला चमत्कार पहले ही दिखा दिया हो। तीर्थंकर अपनी मा के इकलौते पुत्र होते है। शायद उसी लक्ष्य पर जिनके कदम बढ़ रहे है ऐसे प्राणी मात्र की कल्याण की भावना रखने वाले को भी धर्म ने इकलौता पैदा किया।

अहो कर्म वैचित्र्य

तद्भव मोक्षगामी, कामदेव राजपुत्र जीवन्धर का जन्म श्मशान भूमि मे हुआ। राजपुत्र का जन्म होते ही पिता

का वियोग हो गया। श्मशान भूमि में हर्ष के गीत गाने वाला कोई न था। विजया माँ की गोद से उत्पन्न प्रिय पुत्र का पालन-पोषण गन्धोत्कट सेठ के घर हुआ। माँ का प्यार नही, पिता का दर्शन नहीं—अहो कर्म विचित्रता। क्षत्रचूड़ामणि ग्रन्थ मे कथानक आया है।

राजपुत्र होते हुए भी जीवन्धर का श्मशान भूमि मे जन्म लेना, फिर एक साधारण व्यक्ति के यहाँ पालन-पोषण होना, काष्ठागार के द्वारा मृत्यु के सन्मुख कराये जाने पर भी उससे बचकर देश-देशान्तरों मे घूमते हुए आदर के साथ कई कन्यारत्नों का प्राप्त होना और अन्त मे राजपुरी आकर अपनी राजलक्ष्मी को पुनः प्राप्त करना इत्यादि सब कर्म विचित्रता का खेल है। कर्म से राजा भी रक हो जाता है। कोसमा नगरी में जन्म लेने वाले रत्न—कहाँ तो उत्तर प्रान्त की पावन प्राकृतिक छटा से भरपूर छोटे से झरने से बहती हुई सुरीली मन्द-मन्द मुस्कान रूप आवाज से गुञ्जित कोसमा ग्राम की गोदी मे, अपनी लालिमा युक्त किरणो से, सर्व ससार को लुभावना एक बालसूर्य आ चमका था पर मार्ग के पूर्ण विकास मे कर्मरूप केतु ने ग्रस लिया। माँ कटोरी का प्यार बालक से छूट गया। ६ माह भी नही हुए, बीमारी के प्रकोप से विह्वल माता ने णमोकार मन्त्र का उच्चारण करते हुए समाधि को प्राप्त किया। जगल मे विचरण करते हुए सिंह के पजों मे फँसा हिरण का बच्चा असहाय है, राजा के बिना प्रजा अनाथ है, मंत्री के बिना राजा असहाय है उसी प्रकार छ माह की अल्पायु मे माँ का बिछोह पाकर नन्हा-सा बालक मानो अनाथ हो गया। प्रिय माता बालक को छोड़कर चल बसी, पिता बिहारीलाल ने उसे प्रचण्ड प्रतापी सूर्य के रूप से तेजस्वी बनाया और दुर्गा भुवा तथा उनके पुत्र श्रीलालजी ने कोमल कली को सिञ्चित कर पुष्पित बनाया।

बालक नेमिचन्द दूज के चद की तरह बढता चला जा रहा था। भुवा के असीम स्नेह में माता का स्मरण धूमिल सा था। पिता की अपार छत्र-छाया मे बालक का प्रारम्भिक अध्ययन दो कक्षा तक गाँव में ही हुआ। पश्चात् पढ़ने के लिए जलेसर मे पहुँचाया गया। तीन-चार कक्षा की शिक्षा जलेसर में हुई।

मैने पूछा—"गुरुदेव! आपका लौकिक अध्ययन कितना हुआ?"

गुरुदेव—"बेटा! बस हम चार दर्जा पढ़े है।"

मैने पूछा—"आपने उर्दू भाषा को कब पढ़ा?"

गुरुदेव—"जब हम जलेसर पढते थे तभी ३-४ कक्षा मे थे। गुरुजी के घर जाना पड़ता था। वे मुसलमान थे। उसी उम्र मे कुरान शरीफ पढ़ लिया, उर्दू लिखना-पढ़ना तभी सीख लिया था।"

मैने पूछा—"गुरुदेव! धार्मिक अध्ययन?"

गुरुदेव—"बेटा! उस समय जैन धर्म को कौन पढ़ाता था गाँवो मे, बस, हम तो णमोकार मन्त्र के अलावा कुछ नही जानते थे। पर णमोकार मन्त्र पर हमे बहुत श्रद्धा थी। हम चलते-फिरते हर समय णमोकार मन्त्र जपा करते थे।"

दिगम्बरत्व के दर्शन की पिपासा

नेमिचन्द ने सुना व पढ़ा था कि जैनों के गुरु दिगम्बर होते है पर कभी देखे नहीं थे। एक दिवस नेमिचन्द
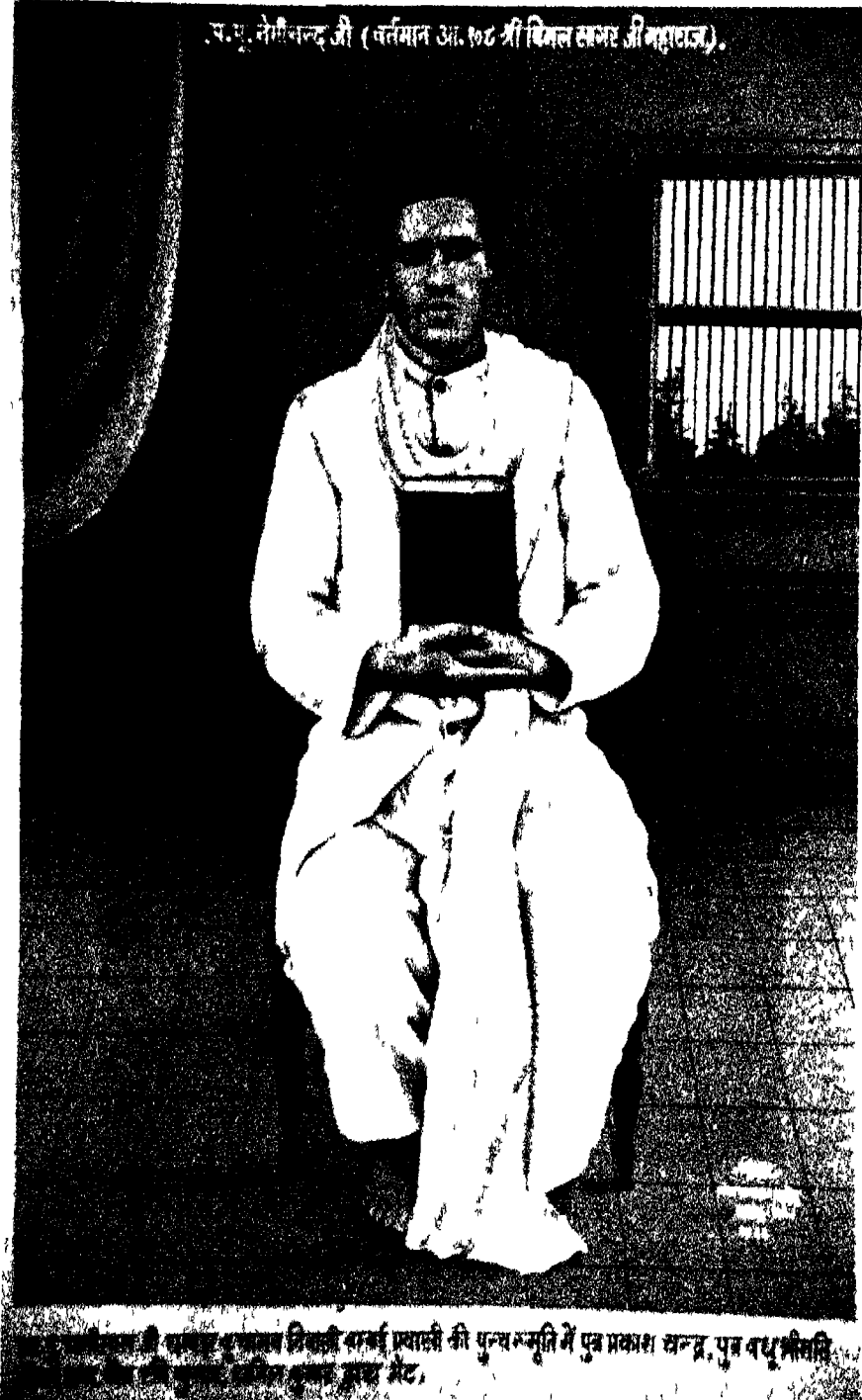
पडितजी श्री नेमीचदजी,
गृहस्थावस्थामे आचार्यश्री

श्री गोपाल दिगम्बर जैन-सिद्धात विद्यालय मोरेना का भवन (बिल्डिंग)।
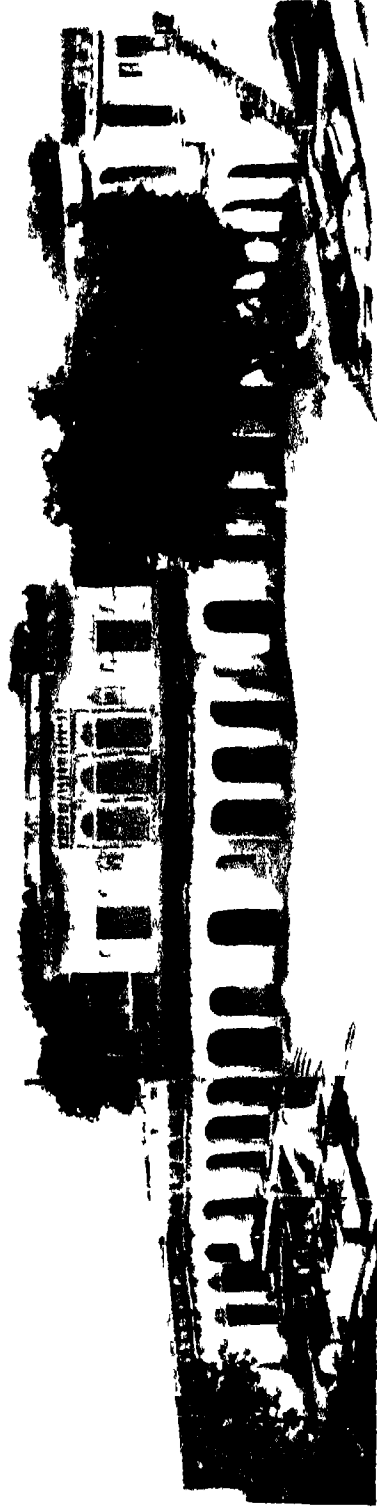
आचार्य १०८ श्री विमलसागरजी महाराज जिनने गृहस्थ अवस्था मे ब्र श्री नेमीचन्द के रूप मे यहाँ पर शिक्षा ग्रहण की व पडित अवस्था मे विद्याअध्ययन भी कराया
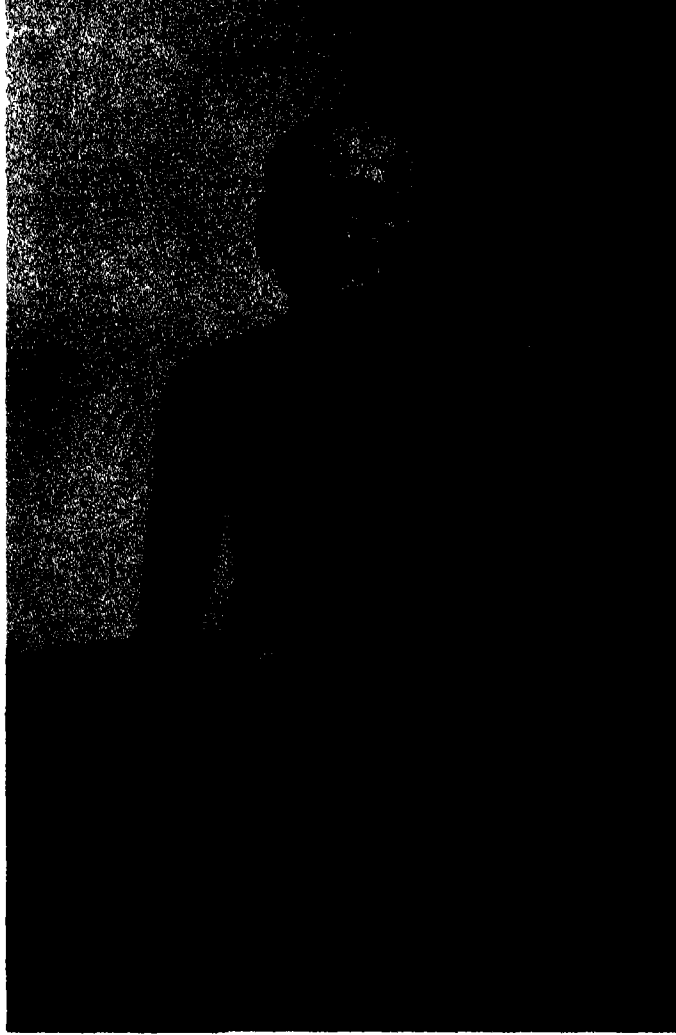
दिगम्बर जैन धर्म के २० वी शताब्दी के महान धर्म प्रभावक परम तपोनिधि चारित्र चक्रवर्ती
स्व आचार्य १०८ श्री शांतिसागरजी महाराज जिनसे आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ने यज्ञोपवीत संस्कार पाया।

स्व आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराजने इनसे अखड ब्रम्हचर्य व्रत ग्रहण किया

घोर तपस्वी मुनिराज श्री चन्द्रसागरजी महाराज
जिनसे आ. श्री विमलसागरजी महाराज ने सप्तम प्रतिमा ग्रहण की थी।
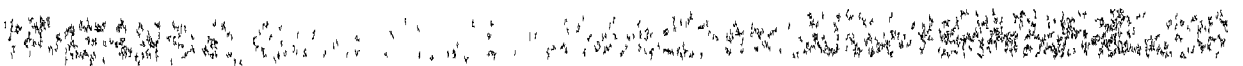
गुरुवर्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज जिनसे आचार्यश्री ने क्षुल्लक, ऐलक व मुनिदीक्षा ग्रहण की
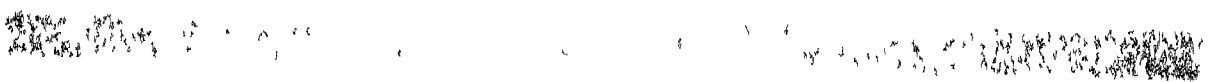
आचार्यश्री ध्यान साधनामे

स्व १०८ मुनिश्री सभवसागरजी महाराज जिन्हाने गृहस्थावस्थाम (श्रीलालजी) आचार्य श्री का बचपने मे लालन पालन किया था। सघमें बाबाजी कहकर आपको वदन किया जाता था। ८५ वर्ष की उम्र मे सन १९८६ म एत्मादपुर के पास कुबेरपुरा मे आचार्यश्री के आशीर्वाद मे आपकी समाधि हुई।

इन्दौर नगर मे दीक्षा गुरु स्व श्री १०८ आचार्य महावीर कीर्ति के साथ केशलोच की तैयारी मे विराजमान ऐलक अवस्था मे सुधर्मसागरजी (वर्तमान मे आचार्यश्री)

मुनि अवस्था मे आचार्यश्री
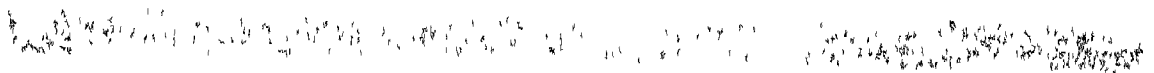
ने सुना—गांव मे चर्चा चल रही है, दिगम्बराचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज सघ सहित फिरोजाबाद पधार चुके हैं। दर्शन के लिए जन-समुदाय उमड़ रहा है। जैन साधुराज के दर्शन पहले कभी किये नही थे। धर्मभक्ति सम्पन्न बालक दर्शनार्थ मचल पड़ा। फिरोजाबाद कौसमाँ से लगभग २० किलो मी दूर है। परिवार के बन्धन ने रोकना चाहा किन्तु निकट भव्यात्मा को कौन रोक सकता था। भक्ति के बहते प्रवाह के सामने सभी के बन्धन ढीले हो गये। बालक ने ज्वार के फूले, चना, गुड़ व मूँगफली जेब में रखे व पैदल नंगे पैर गुरु दर्शनार्थ चल पड़ा। मार्ग मे चलते हुए मस्तिष्क में विचारों का प्रवाह बढ़ रहा था—गुरु कैसे होंगे? वे नग्न कैसे रहते होगे? क्या उन्हें ठडी-गर्मी नहीं लगती है? आदि-आदि। चलते-चलते फिरोजाबाद पहुँच गया।

रिक्तपाणिर्न पश्येत्

दर्शनार्थियों की उमड़ती भीड़। एक विशालकाय प्रशान्त तेजस्वी वीतराग दिगम्बर छवि को स्तम्भित हो किंकर्तव्यविमूढ़ बालक निर्निमेष पलको से निहारता रहा। मन-मयूर नाच उठा। मानो भविष्य मे अपने रूप को सजाने की कल्पना मे ही डूब गया हो। जन-मानस गुरु-चरणो मे भक्तिरूपी श्रद्धा-पुष्प लिये पुष्प-फल आदि चढ़ा रहे थे। बालक के पास समर्पण के लिए कुछ न था। उसने सहसा अपना मस्तक भक्तिवशात् गुरु-चरणो मे टेक दिया। झुकते ही जेब मे भरी खाने की वस्तुएँ खनखनाती हुई स्वाभाविक रूप से गुरुचरणो मे समर्पित हो गई। मानो वे पाठ सिखा रही थी—देव, गुरु, राजा, वैद्य, ज्योतिषि के पास खाली हाथ नही जाना चाहिए। सभी तो सामान्य वस्तुएँ चढ़ाकर भक्ति कर रहे थे पर ऐसा लगता था मानो नेमि की भक्ति-गगा अन्तर्हृदय से फूट पड़ी है और उसने सारा वैभव ही गुरु-चरणो मे समर्पित कर दिया।

पानी नही शर्बत मिला

बालक देख रहा है। साधुचरण मे ससारी जीव भक्तजन अपने अनुकूल व्रत, सयम, नियम आचार्यश्री से ले रहे है। किसी का यज्ञोपवीत सस्कार किया जा रहा तो किसी को व्रती बनाया गया है। बालक ने आचार्य श्री से सविनय प्रार्थना की—"गुरुदेव! मेरा भी यज्ञोपवीत सस्कार कर दीजिये।" आचार्यश्री दूरदर्शी, गुणगभीर, परीक्षाप्रधानी सघनायक थे। किसी को भी बिना विचारे छोटा-सा भी व्रत नही देते थे। छोटे बालक की भी दृढ़ता की परीक्षा किये बिना वे न रहे। नेमिचन्द को संघ मे सप्तर्षि दल के पास क्रम-क्रम से भेजा गया। जाओ वे तुम्हे जनेऊ देंगे, वे देगे । बालक का चेहरा उदास हो गया। किसी ने जनेऊ सस्कार नही किया। क्रोध की रेखा कही नजर नही आई पर 'व्रत क्यो नही देते है?' विचारकर उदासीनता अवश्य आई। पुन आचार्यश्री के समीप जाकर बोला—

"गुरुदेव! सबको तो समझाकर बुलाकर आप जनेऊ सस्कार जबरन कर रहे है। मुझे क्यों नही करते? (विनयपूर्वक—हाथ जोडकर) महाराज! मै सहर्ष जनेऊ लेना चाहता हूँ, मुझे सब धकेलते क्यो है?"

आचार्यश्री मुस्करा दिये। बोले—"बेटा! अब तुम कसौटी पर खरे उतर चुके। आओ, मै अभी सस्कार करता हूँ।" आचार्यश्री के पुनीत कर-कमलों द्वारा रत्नत्रय सूचक जनेऊ बालक नेमिचन्द के गले मे विधिवत् डाला गया। यज्ञोपवित धारण करने का मन्त्र—ॐ नम परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायार्हं रत्नत्रयस्वरूप यज्ञोपवीत दधामि

मम गात्र पवित्र भवतु अर्हं नम स्वाहा। ॐ नम सम्यग्दर्शज्ञानचारित्राय यज्ञोपवीतं धारयामि स्वाहा।

आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज—"बेटा! तुम्हारा नाम क्या है?"

नेमिचन्द—(हाथ जोड़कर) "जी, नेमिचन्द।"

आचार्यश्री—"नेमिनाथ भगवान के समान बनना। ससार असार है। बेटा! यह यज्ञोपवीत रत्नत्रय का सूचक है। इसके धारण किये बिना श्रावक देव-पूजा, गुरूपास्ति का अधिकारी नही होता। कुगुरु, कुदेव की उपासना कभी मत करना। रात्रि मे भोजन करते हो?"

नेमिचन्द—"जी, नही।"

आचार्य—"प्रतिदिन जिनेन्द्र भगवान का दर्शन करना। पानी छानकर पीना।"

नेमि—"महाराज जी, जनेऊ के बदलने आदि के क्या नियम है?"

आचार्यश्री—"पाक्षिक श्रावक को श्रावण सुदी पूर्णमासी के दिन होम मन्त्र क्रिया द्वारा विधिवत् जनेऊ बदलना चाहिए। इसके अलावा सूतक-पातक होने पर, अस्पर्श वस्तु आदि के स्पर्श होने पर, मुर्दा को जलाने पर, रोगादि पीड़ा के पश्चात् ठीक होने पर आदि समयो मे भी पुन यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए। गृहस्थ यज्ञोपवीत को मल-मूत्र-त्याग के समय वामकर्ण और दक्षिण कर्ण पर स्थापित करे। वमन करते समय गले मे, मैथुन के समय मस्तक पर तथा पूजा-दानादि के समय लम्बायमान धारण करे। क्षौर कराते समय यज्ञोपवीत को नाई से स्पर्श नही कराना चाहिए, इसलिए उस समय यज्ञोपवीत की रक्षा के लिए उसे कन्धे से नीचे पीठ आदि पर उतार ले अथवा कमर के उपरिम भाग मे बाध ले। श्रावक को कभी एक वस्त्र से दान-पूजा नही करना चाहिए।" दर्शन ही नही स्पर्श मिला। गुरु का आशीर्वाद मिला, जनेऊ प्राप्त हुवा।

सा विद्या या विमुक्तये

धार्मिक शिक्षा मानव-जीवन के उत्थान की आधारशिला है। प्राचीनकाल मे स्कूल कॉलेज नही थे। माता-पिता ही सच्चे शिक्षक का पद निर्वाह करते थे। पश्चात् धर्मगुरुओ या गुरुकुलो मे जाकर शिक्षण लेना यह भारतीय सस्कृति थी। गुरुकुलो मे सदाचार की शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थी का खान-पान, वेश-भूषा सभी सदाचार के द्योतक होते थे। आज वह पद्धति नही रही। सच्ची शिक्षा का अभाव होता जा रहा है। फलत मानव से सदाचार आदि गुण भी दूर होते चले जा रहे है। 'णाण पयासओ' भगवती आराधना ग्रन्थ मे शिवकोटि आचार्य ने लिखा है, "ज्ञान का प्रकाश करो।" प्राचीन काल मे विद्यार्थीगण को सच्ची विद्या कठिन परिश्रम से प्राप्त होती थी अत जीवन के सरक्षण का कार्य होता था। सच्चा विद्यार्थी विद्या-प्राप्ति के लिए आने वाले अनेकानेक कष्टो को आनन्द से झेलता था। विनययुक्त हो निष्प्रमादी होकर ज्ञानार्जन करता था। विद्या मात्र ख्याति, पूजा या प्रसिद्धि का अग नही थी अपितु रोम-रोम मे शालीनता सदाचार को भर देती थी। गुरुओ के पदचिह्नो पर विद्यार्थी चलते थे। पर आज मामला बहुत विचित्र है। आरामतलबी जीवन मे ज्ञान के प्रकाश को अवकाश ही कहाँ है? विद्यार्थी विद्यार्जनार्थ किञ्चित्भी कष्ट उठाना नही चाहता है। सुख-सुविधाए पहले देखी जाती है। आचार्य लिखते है—"सुख से प्राप्त

किया हुआ ज्ञान विपत्ति आने पर विस्मृत हो जाता है।''

मोरेना विद्यालय में धार्मिक शिक्षण

योग्य माता-पिता का कर्तव्य है सन्तान को सम्यक् ज्ञानी बनाना। फलत पिता बिहारीलालजी ने एक मात्र अध्ययनार्थ इकलौते लाड़ले अपने लाल को निष्ठुर बनकर मुरैना विद्यालय गुरुकुल मे भेज दिया। उम्र सिर्फ ११ वर्ष की थी। सत्य है कि सुखार्थी को विद्या नही मिलती और विद्यार्थी को सुख नही मिलता। सुखार्थी विद्या को छोड़ दे और विद्यार्थी सुख को छोड़ दे। धन्य है योग्य पिता की योग्य सन्तान। विद्यार्थी नेमिचन्द ने मोरेना विद्यालय मे प नन्हेलालजी, शिवमुखलालजी, नाथूलालजी कटारिया, हरदयालजी एव प मक्खनलालजी से धार्मिक शिक्षा प्रथम भाग से लेकर विशारद, शास्त्री तक की प्राप्त की। विद्यालय के एक साहसी, निर्भय, सदाचारी, सम्यक् श्रद्धानी विद्यार्थी के रूप मे आपकी सदैव प्रशसा की जाती थी। इस विद्यालय की विशेषता है कि अनेक विद्यार्थी धार्मिक शिक्षण पूरा कर अखड ब्रह्मचर्य का पालन कर रत्नत्रय की साधना मे लग गये और आज भी लग रहे है। आपके साथ ही अध्ययन करने वाले विद्यार्थी थे स्व मुनि सुव्रतसागरजी, स्व आचार्य पारससागरजी आदि तथा विद्वानो मे प्रसिद्ध सरस्वतीपुत्र प श्यामसुन्दरजी शास्त्री आदि

लंगोटिया यार के विचार

प श्यामसुन्दरजी आज भी प्रतिवर्ष आचार्यश्री की जयन्ती पर आते है। वर्ष मे २-३ बार दर्शन नही मिले गुरुदेव के तो उन्हे बड़ा ही असतोष रहता है। पडितजी जब भी आते है, विद्यार्थी जीवन की घटनाए बताते है। सुन-सुनकर आश्चर्य होता है। एक बार हमने पडितजी से पूछा—''पडितजी! महाराज जी की अध्ययन में रुचि कैसी रहती थी?''

पडितजी—''माताजी! इनका जीवन बडा विचित्र था। जिन-पूजा, भक्ति और माला जपना—ये इनके जीवन के अग बन गये थे। णमोकार मन्त्र का जाप अधिक करते थे। पढ़ाई मे मन कम लगता था। परीक्षा के समय सभी विद्यार्थी अध्ययन मे जुट जाते थे पर ये महात्मा पूजा-अभिषेक-माला में ही अधिक समय व्यतीत कर देते थे।''

मैंने पूछा—''फिर परीक्षा मे परिणाम क्या रहता था?''

पडितजी—''माताजी! ये तो प्रारम्भ से बाबा रहे है। पढ़ाई कम करने पर भी परीक्षा मे अन्य विद्यार्थियो से आगे रहते व अच्छे नम्बरो से पास होते थे।''

बन्धुओं! महापुरुषो का जीवन विविध उतार-चढ़ावो से भरा होता है। उन घटनाओ की जानकारी पूर्णत उपलब्ध हो जाना बड़ी टेढी खीर है। सन्त लोग अपने को सबसे छोटा समझते है। वे अपनी कथा स्वय नही कहते। बहुत प्रयत्न करने पर भी हमे आचार्य गुरुदेव का सच्चा आदर्श जीवन, उनकी सभी विशेष घटनाए उपलब्ध नही हो पाई है।

बड़े बड़ाई न करे, बड़े न बोलें बोल।

हीरा मुख से न कहे, लाख हमारो मोल॥

पडित श्यामसुन्दर जी ने बताया था कि ये बड़े साहसी निडर थे। एक बार की घटना है—विद्यालय मे एक बार हल्ला हो गया कि स्कूल के पीछे वृक्ष पर भूत रहता है। सब विद्यार्थी डर रहे थे। एक दिन दोनो मित्र श्यामसुन्दर और नेमिचन्द वहाँ पहुँचे। श्यामसुन्दर ने कहा—"नेमिचन्द, मुझे तो डर लगता है।" पर निडर नेमिचन्द ने कहा—"डरो नहीं, आज हम भूत को पकड़ेगे।" श्यामसुन्दर देखते खड़े रह गये पर नेमिचन्द वृक्ष की ठीक ऊपरी डाल पर जा बैठा, "देखता हूँ कौन भूत आता है?" रातभर वृक्ष पर णमोकार मन्त्र पढ़ते हुए बैठा रहा। भूत कही नजर नही आया। भूतादि व्यन्तर इनसे पहले भी डरते थे। आज भी डरते है, आज तो चरण-सेवक बनकर आगे-पीछे बने रहते है। विशेषता यह है कि हम दोनो की माँ का नाम कटोरी बाई था, दोनो का जन्म पद्मावती पुरवाल जाति मे हुआ है। हम दोनो बाल-ब्रह्मचारी है पर ये चरित्रनायक बन गये, मै पीछे रह गया। इनकी शक्ति देखकर मुझे आज भी आश्चर्य होता है।

पडित श्यामसुन्दरजी ने बताया कि ये जीवन के आरम्भ से ही करुणामूर्ति है। ये अहिंसामय जीवन के प्यासे हैं। किसी भी जीव की हिंसा, अत्याचार या बिना प्रयोजन किसी को पीड़ित करना आदि से ये विद्यार्थी जीवन में भी दूर रहते थे। दया तो इनके रग-रग मे भरी हुई है। एक बार विद्यालय के बाहर एक जटाधारी साधु ठहरे थे। उनकी जटाओ मे अनेक छोटी-छोटी मछलियाँ देख ये बडे दुखी हुए। साधु से बोले—

"बाबा! ये मछलियाँ जटाओं मे क्यो रखी है आपने? ये हिंसा का कार्य है, उचित नही है।"

बाबा क्रोध मे विशेष नाराजगी से बाला, "हे पागल उद्दण्ड बच्चे! तू कौन है मुझे शिक्षा देने वाला! बता, मेरे पास मछलियाँ कहाँ है?"

नेमिचन्द ने निर्भयता से जटाओ मे से मछलियाँ निकालकर दिखा दी। साधु ने लज्जित होकर आगे ऐसा नही करने की प्रतिज्ञा की।

एक बार स्व महाराज श्री सभवसागरजी (श्रीलालजी) से हमने पूछा था—"महाराजजी! आचार्यश्री बचपन मे किसी खेलादि मे रुचि रखते थे या नही?"

सभवसागरजी—"माताजी! जब तक घर पर रहे, गाँव मे पढते थे। घुड़सवारी करना, गिल्ली-डडा खेलना, लम्बा जम्प लगाना, दौड़ मे भागना आदि खेलो मे गाँवो मे इन्हे कोई भी जीत नही पाता था। ये सबसे आगे रहते थे। परन्तु मोरेना विद्यालय पहुँचने के बाद इनकी रुचि बदल गई थी।"

पडित श्यामसुन्दरजी शास्त्री ने बताया कि खेलादि मे इनका मन जरा भी नही लगता था। कभी-कभी जबरन कबड्डी खेलने के लिए हम लोग ले जाते थे तब नेमिचन्द (आचार्यश्री) जान-बूझकर छू जाते और कहते—मै छू गया, मै हार गया और सीधे मैदान से जाकर भगवान की पूजा-पाठ, स्तुति जाप्यादि मे लग जाते थे। सत्य ही है, आत्मा के सुन्दर नन्दनवन मे क्रीडा करने वालो को दैहिक ससार की वृद्धि करने वाले खेलो मे रुचि कैसे हो सकती थी? धन्य है, ऐसे थे नेमिचन्द।

प्रथमानुयोग शास्त्र के अध्ययन मे आपकी रुचि प्रारम्भ से रही। आप आज भी यही कहा करते है कि सब

अनुयोगो मे कही बादाम है, कही दूध, कहीं शक्कर है, कही इलायची, पर प्रथमानुयोग मे खीर है। प्रथमानुयोग से धैर्य, साहस, आत्मबल बढ़ता है।

गुरुभक्ति आप मे विद्यार्थी अवस्था से ही समायी हुई थी। पडित मक्खनलालजी जब भी आचार्यश्री के दर्शनार्थ आते थे, प्राय· कहा करते थे—"गुरुओ की सेवा करने वाले स्वय गुरु बन गये।" जो मुनिराज या त्यागी सघ मोरेना पहुँचता था, ये स्वय बहुत दूर लेने जाते थे। एक दिन आचार्यश्री बता रहे थे कि विद्यालय मे सूर्यसागरजी महाराज सघ सहित पधारे थे। हम सभी विद्यार्थी भोजनालय मे भोजन करते थे पर हमारे मन मे आहार-दान की भावना जागृत हुई। स्वय ने शुद्ध जल कुएँ से लाकर हाथ से आटा पीसकर तैयार किया और अपने हाथ से बनाया हुआ शुद्ध भोजन मुनिराज के लिए आहार दान मे दिया। सच्ची गुरुभक्ति फलदायिनी अवश्य होती है। आचार्यश्री कहते है—गुरुभक्ति मुक्तिप्रदायक अमृत रसायन है।

मोरेना विद्यालय मे अध्ययन कर प नेमिचन्द घर लौटे। पिता की दृष्टि पुत्र को पाकर आनन्दाश्रुओ से छलछला उठी। भुवा के प्यार का वर्णन कौन कर सकता है। पुत्र का स्नेह स्वभाव से ही होता है, फिर शिक्षित पुत्र के लिए पिता का स्नेह तो अवर्णनीय है। सदाचार, समय की पाबन्दी, शुद्ध भोजन व आसन व्यायाम आदि क्रियाओ के बल से शारीरिक शक्ति भरपूर थी। गठीला शरीर, प्रसन्नमुख, प्रशान्त चेहरा, नेमिचन्द सबके मन को मोह लेता। गॉव वाले सभी प्यार से नेमि कहकर पुकारते थे।

घर पर आकर व्यापार कार्य में लग गये। न्याय की कमाई करते थे। एक गॉव से दूसरे गॉव जाकर कपड़ा बेचना इनका व्यापार था। साईकिल पर मनो वजन लादकर दूसरे गॉव कपड़ा बेचने जाते थे।

प्रात प्राय निकल जाते थे फिर भी कभी पूजा-अभिषेक नही छोड़ते थे।

आचार्य महाराज से हमने पूछा था—"महाराज जी। इतनी अल्प निद्रा, और जल्दी उठ जाने की आदत आपकी कब से बन गई?"

आचार्यश्री—"बेटा। हम व्यापार के लिए गाँव-गॉव जाते थे। तब प्रात चार-पॉच बजे निकल जाते थे। ढाई बजे उठकर स्नान आदि कर, प्रात तक अभिषेक-पूजा-जाप्य आदि सभी क्रिया कर लेते थे। तभी से हमारी आदत बनी हुई है। निद्रा बहुत कम आती है।"

शारीरिक शक्ति इतनी गठित है कि यदि गाडी कभी पचर हो जाती तो गाड़ी और कपड़ा दोनो को पीठ पर लादकर आप पैदल चल देते थे। ऐसे थे वीर-धीर नेमिचन्द।

ब्रेक रहित गाड़ी

प नेमिचन्दजी के पास एक ब्रेक रहित साइकिल थी। ब्रेक रहित गाड़ी से यात्रा करते हुए लम्बा समय बीत गया पर कही धोखा नही हुआ। इनके पास ब्रेक रहित गाड़ी तो थी पर शरीर ब्रेक रहित नही था। मन पर संयम रूपी ब्रेक लगा हुआ था। भक्ति व श्रद्धा का ब्रेक जीवनरूपी नौका को आगे बढ़ाये जा रहा था। इसी बीच पडित जी की पावन स्मृति मे तीर्थराज सम्मेदशिखर की यात्रा का भाव जागृत हो उठा। बस, साहसी श्रद्धालु पडित जी

ब्रेक रहित साइकिल लेकर यात्रा को चल पड़े। जलेसर से शिखरजी तक सारा मार्ग निर्विघ्न पूर्ण कर शिखरजी पहुचे। विधिवत् शुद्ध श्वेत वस्त्रो को धारणकर, हाथ मे पूजन सामग्री लेकर अर्घ्यादि चढाते हुए नगे पैर तीर्थराज की वन्दना पूर्ण की। तीर्थराज सम्मेदशिखर की यात्रा भव्यात्माओ को ही होती है। अभव्य जीव वन्दना कभी नही कर सकता। आचार्यो ने सिद्धक्षेत्र वन्दना का अचिन्त्य फल कहा है। लोहाचार्य जी ने 'सम्मेदशिखर माहात्म्य' नामक ग्रन्थ मे इसका विस्तृत वर्णन किया है—

"एक बार वन्दे जो कोई ताहि नरक पशुगति नही होई।"

'सम्मेदशिखर महात्म्य' ग्रन्थ मे वर्णन आया है कि "एकेन्द्रिय जीव से लेकर पञ्चेन्द्रिय जीव पर्यन्त जो नाना प्रकार की आकृति को धारण कर नाना प्रकार के भव्यजीव इस क्षेत्र पर पैदा हो रहे है या होने वाले है, वे सब भव्य की गिनती मे ही आते है। इस क्षत्र पर अभव्य का जन्म ही नही होता। अभव्य जीव इस क्षेत्र की सीमा मे आ भी नही सकता।

एक दिन इसी साइकिल को लिये पडितजी घने जगल मे चले जा रहे थे। हाथ मे एक पम्प था। अचानक बीच जगल मे गाडी बिगड गई। णमोकार मत्र का स्मरण कर जाप्य करने बैठ गये। नेत्र खुलते ही क्या देखते है—सामने एक दाढी वाला बाबा खडा है तथा साइकिल सुधारने के यत्रो से सजी हुई छोटी-सी दुकान सामने के मार्ग पर ही है।

पडितजी—"बाबा! हमारी साइकिल सुधारेगे क्या?"

बाबा—"जी! अभी सुधार देता हूँ।" बाबा ने साइकिल सुधार दी। कुछ ही क्षणो मे पडितजी वहाँ से चल दिये। दो मील करीब आ पहुँचे। स्मृति-पटल पर पम्प का स्मरण हो आया। पुन लौटे उसी जगल की ओर। अद्भुत घटना थी। पम्प यथास्थान पर रखा था, पर न वहाँ कोई दुकान थी और न कोई दाढीवाला बाबा था।

सच, वह दाढीवाला बाबा कौन था?

परिणामो की निर्मलता एव णमोकार मत्र का चमत्कार था। जो सबका सार है, चतुर्दशपूर्वो का उद्धारक है, एसा णमोकार मन्त्र जिसके हृदय मे बस जाता है लोक की कोई विपत्ति उसका बिगाड नही कर सकती है। णमोकार मन्त्र अपराजित मन्त्र है। यह सर्वविघ्नो का नाशक है, तथा सर्वमगलो मे प्रथम मगल माना गया है। अपवित्र या पवित्र अवस्था मे, स्वस्थ वा रोगी अवस्था मे भी यह सारभूत, विष का हरने वाला, कर्म का नाशक, सिद्धि प्रदाता, शिवसुख का उत्पादक केवलज्ञान मन्त्र है। हे भव्यात्माओ! इस मन्त्र को जपो, यह निर्वाण मन्त्र है। यह मन्त्र १८४३२ तरह से बोला जा सकता है। जो विधिवत् श्वेतपुष्पो से लाख बार जाप्य करता है वह तीर्थंकर प्रकृति का बध करता है। यह मत्र ८४ लाख मन्त्रो का राजा है।

विद्या-दान

योग्य सतान को लेकर पिता की पलको मे दूर की उम्मीदे लगी हुई थी, पर सब उल्टा हो रहा था। विवाह के लिए पिताजी ने कितने स्वप्न सँजोये थे, भुवा नयी दुल्हन की आशा लगाये बैठी थी पर जिनेन्द्रदेव

नेमिनाथ के नाम को सार्थक बनाने वाले को संसार प्रिय कैसे लगता? बस, सबको उदास छोड़कर शकरोली राजामडी आदि गाँवों मे जाकर, धार्मिक शिक्षण देना आरम्भ कर दिया। विद्यादान की नौकरी कभी नही लेते थे। मात्र भोजन और कुछ भेट स्वेच्छा से जैन भाई देते थे।

पुरवालिया ग्राम में प्रधान अध्यापक के रूप मे, आपने कार्य किया। आपकी शिक्षण पद्धति निराली थी। विद्यार्थी-जीवन सुधर जाता था। एक बार स्कूल मे इन्सपेक्टर जाँच करने आने वाले थे। विद्यार्थियो के शिक्षण की जानकारी ली जायेगी। सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के भक्त पडितजीने सोचा—'इन्सपेक्टर के आगे सिर कैसे झुकाऊगा' अत 'शौच' का बहाना करके स्कूल से रवाना हो गये। विद्यार्थियों का अभ्यास देखकर इन्सपेक्टर आश्चर्य मे पड़ गया। "आपको पढ़ाने वाले शिक्षक कहाँ है?"

रिपोर्ट मे लिखा था—'पढ़ने वाले बच्चे इतने योग्य होशियार है तो इनके शिक्षक कितने योग्य होगे, हम उन्हे देखना चाहते थे पर हमे खेद है कि वे यहाँ उपस्थित नही है।'

शिक्षक की नैतिकता, व्यवहार-कुशलता, सदाचार आदि गुणो का प्रभाव बालको पर अवश्य पड़ता है। जो गुरु स्वय दुराचरण करते है, सिगरेट पीते है, सिनेमा आदि देखते है, मास, अडा, शराब आदि का सेवन करते है, वे शिष्यों को सत्य मार्ग कैसे बता सकते है। भारतीय सस्कृति की रक्षार्थ सच्चे सदाचारी सरस्वतीपुत्रो की आवश्यकता है।

आहारदान की पात्रता

पुरवालिया से आप सीधे जयपुर पहुँचे। जयपुर मे परमपूज्य चारित्रनिधि आचार्यश्री शान्तिसागरजी के शिष्य तपस्वी विद्वान् श्री १०८ आचार्यकल्प चन्द्रसागरजी महाराज विराजमान थे। महावीरकीर्तिजी महाराज ब्रह्मचारी अवस्था मे वही उनके पास रहते थे। चन्द्रसागरजी महाराज ने पडितजी से शूद्र जल का त्याग करने की प्रेरणा की। नेमिचन्द ने पूछा—"गुरुदेव शूद्र जल किसे कहते है?" पुन चन्द्रसागर जी महाराज ने उत्तर दिया—"विजाति, विधवा-विवाहोत्पन्न एव आचार-विचार से रहित लोगो के हाथो का भोजन-पानी।" पर अभी मोह ग्रन्थि छूट नही पाई थी। घर का मोह था। भुवा की स्मृति सताती थी। अत इन्कार करते रहे। एक दिन भागचन्दजी सोनी, नेमिचन्द जी नागौर, फतेहचन्द पहाड़्या आदि श्रीमन्तो को महाराज जी ने त्याग की प्रेरणा की। सबने एक ही बात कही—ये पडित जी यदि आज त्याग कर दे तो हम भी कर दे। पडित जी असमजस मे पड़ गये।

माता बच्चे को जबरदस्ती दवा खिलाती है। कभी-कभी हाथ-पाँव पकड़कर भी मुँह मे दूध डालती है। सच्चे गुरु करुणामूर्ति, महाराजश्री चन्द्रसागरजी धोती-कोट पहने, पगडी लगाये हुए, पैरो मे जूता पहने हुए, एक पुण्यात्मा निकट भव्य के सामने आकर आहार की मुद्रा मे खड़े हो गये। बस! फिर क्या था? दिगम्बर साधु की सिंहवृत्ति होती है। तीन परिक्रमा लगाकर विधिवत् नवधाभक्ति की। पडितजी के शरीर मे कम्पन था। हाथ-पैर थर्रा रहे थे। सहर्ष शूद्र जल का त्यागकर आहार दान दिया। मुनिराज दो उपवास कर एक आहार करते थे। उनकी तपस्या का तेज अनुपम था। निरन्तराय आहार हुआ। सभी श्रीमन्तों ने भी शूद्र जल का त्याग कर जीवन सफल बनाया।

आचार्य कहते है—आहार-दान एक महान दान है। चारों दानो में श्रेष्ठ दान है। जिसने त्यागियो को आहार

दान दिया है उसने चारो दानो का फल प्राप्त किया है। आहार देने पर ही पचाश्चर्य वृष्टि होती है। प्रथम आहार दान कर राजा श्रेयास, आदिनाथ प्रभु से पूर्व मुक्ति को प्राप्त हुए। दानतीर्थ राजा श्रेयास ने चलाया और धर्मतीर्थ आदिनाथ प्रभु ने। चौबीस घटो मे सिर्फ आहार का समय ही एक ऐसा है "जब दाता का हाथ ऊँचा और पात्रों (मुनि आर्यिकादि) का हाथ नीचा रहता है। चौबीस घटे ऊपर हाथ रखने वाले भी, दाता के घर जाकर हाथो को नीचा करते है। इस दान की महिमा ही निराली है। अपनी सम्पत्ति का उपयोग धार्मिक कार्यों मे करना हितकारी है—(१) जिनबिम्ब निर्माण (२) जिनमदिर निर्माण (३) जिन-यात्रा (४) जिनप्रतिष्ठा (५) चार प्रकार के दान (६) पूजा व (७) सिद्धान्तशास्त्रो का लेखन या प्रकाशन। इन सप्त क्षेत्रो मे धार्मिकजनो को अपनी सम्पत्ति का व्यय करना दुर्गती-नाशक व पाप का विनाशक है। जैसा कहा है—

जिनबिम्ब जिनागार जिनयात्रा महोत्सव ।
जिनतीर्थ जिनागम जिनायतनानि सप्तधा।। (दा शा ॥

पडित जी जयपुर से साबली (गुजरात) मे आ सुधर्मसागरजी महाराज के दर्शनार्थ पहुँचे। वहाँ ब्र. महेन्द्रकुमारजी (आ महावीरकीर्ति) सघ मे रहते थे। सुधर्मसागरजी महाराज का जैन सस्कृति के इतिहास मे बहुत बड़ा योगदान रहा है। आप प मक्खनलालजी के पूर्वावस्था के बडे भाई थे। एक बार गृहस्थावस्था मे आप आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज से उत्तर प्रान्त मे विहार की प्रार्थना करने के लिए पहुँचे। आचार्यश्री ने कहा—"भैया! उत्तर प्रान्त के लोग बाल की खाल निकालने मे पटु है। आप जैसे विद्वान् पडित हमारे साथ रहे तो उत्तर प्रान्त मे विहार हो सके। पडित जी, आप व्रती बन जाइये, साधुवर्ग को शिक्षण दीजिये, साथ मे रहिये, उत्तर प्रान्त मे विहार होगा।" पडित जी ने सारी बाते सहर्ष स्वीकार कर लीं। व्रतो को धारण कर दो प्रतिमाधारी श्रावक बन गये। आचार्यश्री का विहार उत्तर प्रान्त मे निर्बाध रूप से हुआ। पडित जी का शिक्षण कार्य विधिवत् चलता था। धीरे-धीरे पडित जी मुनि सुधर्मसागर जी बन गये।

गुरुभक्ति

सुधर्मसागरजी सस्कृत भाषा के उद्भट विद्वान् थे। न्याय-सिद्धान्त-व्याकरण एव मन्त्र-तत्र विद्या मे भी निपुण थे। प्रतिदिन १०० श्लोक बनाना उनका नियम था। इनके मौलिक ग्रन्थ सस्कृत भाषा मे उपलब्ध है—सुधर्म ध्यान प्रदीप, सुधर्म श्रावकाचार आदि। पडित नेमिचन्दजी गुरु-भक्ति मे लीन हुए। प्रतिदिन गुरुदेव को लेखनार्थ शुद्ध स्याही बनाकर देना, इनकी वैयावृत्ति करना आदि मे इनकी प्रवृत्ति बढती चली गई।

जिस दिन आप साबली पहुँचे उस दिन की घटना है—आपने जाकर उत्तम फल आम्र चढ़ाकर गुरु-चरणो मे साष्टाग्ड नमोस्तु किया। समाचार ज्ञात हुआ—गुरुदेव का शरीर ज्वर के कारण अत्यन्त जीर्ण हो गया है। सात दिन हो चुके है, आहार की विधि नही बन पायी। समाज चिन्तातुर।

पडित नेमिचन्द जी एक योग्य स्थान पर जाकर आहार की विधि जुटाने मे लग गये। पडित जी बोले—"बाई जी, आम सुधार लीजिये।" बाईजी बोली—"सात दिन हो गये आहार को। बुखार भी तेज हो रहा है। आपको महाराज को आम नही खिलाना चाहिए। साधु की स्थिति बिगड़ जायेगी।" बेचारे पडितजी चुप रहे। पड़गाहन के

समय आम लेकर खड़े हो गये। मुनिश्री ने विधि मिलते ही विधिवत् क्रिया के पश्चात् घर मे प्रवेश किया। नवधा भक्ति पूर्ण न हुई, थाली मे आकड़ी न मिलने से महाराज जी का पुन उपवास हो गया।

पंडित जी की आँखो से अविरल अश्रुधारा बह निकली। मन कह रहा था—गुरुदेव की थाली मे आम हो तथा आम को ही प्रथम लेने का नियम है। बाईजी ने मुझे आम सुधारने नही दिया। क्या करूँ? कैसे करूँ? बस! दूसरे दिन स्वतन्त्र आहार की व्यवस्था की। पड़गाहन मे आम। खाने मे प्रथम ग्रास में आम दिया, बस, निरन्तराय आहार हो गया। धन्य है, ऐसे निकट भव्यात्माओ को। ऐसी बुद्धि बिना विशुद्धता के नही होती। आम की बहार नही, फिर भी आम खाने की अटपटी और भव्यात्मा के द्वारा सारी क्रिया विधिवत् करना। ठीक ही कहा है—'बुद्धि कर्मानुसारिणी'।

आहार के बाद महाराज जी ने कहा—"पडित जी, आप को ६ माह तक सघ मे रहना है, ऐसी प्रतिज्ञा कीजिये।" पडित जी ने सहर्ष, गुरु आज्ञा शिरोधार्य कहकर मस्तक टेक दिया।

वाह रे मोह

अब तो ध्यान शक्ति बढ़ती गई। आत्मबल भी बढता गया। पर अभी चारित्र प्राप्त न हुआ।

महाराज ने कहा—"पडितजी! घर जाकर अब क्या करोगे? साधना की सिद्धि करो। ससार मे क्या सार है?"

पडितजी—"महाराज जी! जिनदीक्षा का मार्ग बहुत कठिन है। घर मे सभी का लाड़ला हूँ। सब मेरा इतजार करते होगे।"

महाराज—"सरल मार्ग को कठिन कहते हो?"

पडितजी—"गुरुदेव! कठोर साधना के बिना सिद्धि नही होती।"

छ माह पूर्ण हो चुके। अनेक प्रकार की साधनाओ मे निपुण मन्त्र-तन्त्र विद्या मे विशारद पडितजी ने गुरु आज्ञा मागी घर जाने की

आज कई महानुभाव मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र को गलत या मिथ्या बताकर जीवो को भ्रम मे डाल रहे है। विचारणीय प्रश्न है—यदि ये गलत है तो द्वादशाग जिनवाणी मे दसवाँ विद्यानुवाद (मत्र-तन्त्र का कथन जिसमे है) क्यो है? प्राचीन काल मे मन्त्र-तन्त्र विद्याओं के बल पर ही जिनशासन की रक्षा व प्रभावना होती रही है। स्वय कुन्दकुन्द आचार्य ने मन्त्र विद्या के बल से जैन तीर्थो की रक्षा व धर्म की प्रभावना की है। भगवती आराधना आदि ग्रन्थों मे शिवकोटि आदि आचार्य बारम्बार लिखते है—सल्लेखना धारण करने के पूर्व योग्य आचार्य से आयु का निर्णय कराकर शुभ योग, शुभ नक्षत्र, तिथि, वार मे सल्लेखना धारण करे। निर्यापकाचार्य इन सब विद्याओ में कुशल होता है।

भविष्य के वैरागी को बाह्य घर कैसे सुहाये। वे तो घर का रास्ता काटकर आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज के पास चोमू (राज) पहुँचे।

दर्शनेन जिनेन्द्राणा साधूना दर्शनेन च।
न चिर तिष्ठति पाप, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥

जिनेन्द्र देव व सच्चे साधुओ के दर्शन से पाप शीघ्र नष्ट हो जाता है। जैसे जल छिद्रहस्त मे नही टिकता वैसे साधु के दर्शन करने वालो के पास पाप नही टिकता। आचार्यश्री के दर्शन करते ही मन आनन्द से विभोर हो उठा।

गुरु-भक्ति का प्रसाद

गुरु का लक्षण बताते हुए क्षत्रचूडामणि मे आचार्यश्री कहते है—
रत्नत्रयविशुद्ध सन् पात्रस्नेही परार्थकृत्।
परिपालित धर्मो हि भवाब्धेस्तारको गुरु ॥३०॥

रत्नत्रय से परिपूर्ण, सज्जन, योग्य शिष्य पर प्रेम करने वाले, परोपकारी, धर्मपालक, ससार समुद्र से पार लगाने वाले ही उत्तम गुरु है। आचार्यश्री १०८ सुधर्मसागरजी महाराज की सारी चर्या उत्तम गुरु की थी। आप स्वय एक मर्मज्ञ विद्वान् पडित थे। प्रसगवश घटना स्मरण हो आई—

आचार्यश्री १०८ शातिसागर जी महाराज को उत्तर भारत मे लाकर धर्मनाद कराने के प्रथम सत्प्रेरणा-स्रोत आप है। आचार्यश्री सुधर्मसागरजी महाराज का समाधि-दिवस पिछले वर्ष सोनागिरजी मे मनाया जा रहा था। तभी श्री श्यामसुन्दरजी पधारे। अपने वक्तव्य मे उन्होने बताया—प नन्दलाल जी (सुधर्मसागरजी) स्वय घासीलाल दाढमचन्दजी सेठजी के घर बम्बई पहुँचे और उन्हे सघ को उत्तर भारत लाने की प्रेरणा की थी। सेठजी, पडित जी आदि सज्जन मिलकर आचार्यश्री शातिसागरजी महाराज के पास भोजग्राम पहुँचे।

आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज तो दूरदर्शी थे ही। जैसे ही सेठजी व पडितजी ने नारियल भेट कर उत्तर की ओर विहार की प्रार्थना की आचार्यश्री ने मार्मिक शब्दो मे कहा—"भैया। हम उत्तर भारत चलेगे पर आप साथ होगे क्या?"

"जी हा।" पडित जी ने शीघ्र स्वीकृति प्रदान कर दी।

आचार्यश्री—"व्रती बनकर सघस्थ मुनियो को पढाना होगा। स्वीकार है?"

पडितजी—"जी हॉ।"

उसी समय पडितजी ने बारह व्रत ग्रहण किये। गुरुदेव का निर्विघ्न विहार उत्तर भारत मे हुआ। पडितजी ने स्वय आचार्यश्री से मुनि दीक्षा धारण की और सुधर्मसागर के नाम से प्रख्यात हुए।

आचार्यश्री पात्रस्नेही थे। नेमिचन्द जैसे योग्य पात्र को देखकर उनसे बडा स्नेह रखते थे। शिष्य भी योग्य ही थे जैसा कि आचार्यो ने कहा है—

गुरुभक्तो भवाद्भीतो, विनीतो धार्मिक सुधी।

शान्तस्वान्तो ह्यतन्द्रालु·, शिष्ट शिष्योऽयमिष्यते।।३१।।

—जो गुरु का भक्त, ससार से भयभीत, विनयी, धर्मात्मा, कुशाग्रबुद्धि, शान्तपरिणामी, आलस्यरहित, सभ्य है वह उत्तम शिष्य कहलाता है।

आचार्य सुधर्मसागरजी न्याय सिद्धान्त, व्याकरण, संस्कृत, प्राकृत आदि तथा निमित्तज्ञान, स्वरज्ञान आदि विषयो के विशेष मर्मज्ञ थे। आचार्यश्री बताते है—उन्हे कफ की बीमारी हो गई थी। एक-एक कटोरा कफ प्रतिदिन निकलता था। फिर भी साधना मे तत्पर रहते थे। पूर्वरात्रि मे अल्प निद्रा लेकर उठ जाना और नवीन रचनाओ का सृजन करना उनकी विशेषता थी। पडित नेमिचन्द्र जी रात्रि मे स्याही आदि बनाकर रखने, आदि से आचार्यश्री की सेवा मे तत्पर रहते थे। कफ उठाना, लिखने मे सुविधा जुटाना, वैय्यावृत्ति करना इनकी शिष्योचित उत्तम क्रिया थी। शिष्य की इतनी योग्यता देख गुरु ने उन्हे अपनी विद्याएँ देना युक्त समझा। नेमिचन्द जी को—निमित्तज्ञान, स्वरज्ञान आदि की शिक्षा देकर पारगत कर दिया। सत्य है कि—

गुरुभक्ति सती मुक्त्यै, क्षुद्र कि वा न साधयेत्।
त्रिलोकीमूल्यरत्नेन, दुर्लभ कि तुषोत्कर ।।३२।। (क्ष चू)

उत्तम गुरुभक्ति मुक्ति प्राप्ति के लिए होती है तो क्षुद्र वस्तु को क्या सिद्ध नही करेगी? अर्थात् सर्व सिद्ध करेगी। तीन लोक ही है कीमत जिसकी ऐसे रत्न से भूसे का ढेर अप्राप्य हो सकता है क्या? अर्थात् नही।

किसी कवि ने कहा है—

देशपति जब रीझत है तब देत है ग्राम करत है निहाली।
ग्रामपति जब रीझत है तब देत है खेत या देत है बाड़ी।।
खेतपति जब रीझत है तब देत है धान पाली दो पाली।
श्री गुरुजी जब रीझत है तब देत है अपनी विभूति सारी।।

गुरुभक्ति सेवा का अपूर्व फल मूलाचार मे कुन्दकुन्दाचार्य बताते है—

आयरियपसाएण य विज्जा मता य सिज्झति।

आचार्य के प्रसाद से विद्या-मन्त्र सिद्ध हो जाते है। सत्य है, प नेमिचन्द जी के लिए आचार्य श्री ने अपनी रहस्य विद्याओ का दान दिया। पडितजी की साधना विकास की ओर बढ़ती जा रही थी। साधना-पथ के महापथिक श्मशान भूमि मे जाकर निडरता से ध्यान करने लगे। किसी शक्ति से इन्हे अब भय नही लगता था। मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र की विद्या के अभ्यास मे सतत प्रयत्नशील रहकर अल्प निद्रा लेते हुए साधना मे ही जागृत, सारी रात्रि व्यतीत करने लगे।

सघ विहार करते हुए बडवानी सिद्धक्षेत्र की ओर बढ़ रहा था। विहार मे गुरु-शिष्य की अपनी साधना मे किसी प्रकार प्रमाद नही दिखाई देता है। सघ बडवानी सिद्धक्षेत्र पहुँच गया। सभी ने निर्विघ्न तीर्थराज की वन्दना की। एक दिन अर्द्धरात्रि के समय आचार्यश्री की शास्त्र लेखनार्थ स्याही आदि की व्यवस्था करने के पश्चात् पडितजी को गहरी नीद आ गई। ये वृक्ष के नीचे नीद मे सो रहे थे। उधर से गुरुदेव आये। गुरुदेव ने देखा—एक बड़ा

काला सर्प फण फैलाए पॉच मिनट तक पडितजी के सिर पर छाया कर बैठा रहा। ये तो निद्रा मे थे। दूसरे दिन गुरुदेव ने पडितजी को सर्प की घटना बताते हुए कहा—''बेटा! तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल है। तुम आगे एक महापुरुष बनोगे।'' पडित जी ने गुरुभक्ति का प्रसाद पाया।

पूत के लक्षण पलने मे नही, कोख मे

ससार मे मानव जाति सस्कार योग्य है। देव, नारकी व तिर्यञ्चों मे सस्कार नही है, मात्र मानव ही इसका पात्र है। ऐसी तीन प्रकार की आत्माएँ इस पृथ्वीतल पर है—(१) बुरे, हीन सस्कार वाली (२) अच्छे सस्कार वाली और (३) जिन्हे सस्कारो मे ढाला जाता है।

माता-पिता के द्वारा प्रदत्त अशुभ सस्कार वाली आत्माएँ—एक बालक एक घर से चाकू चुराकर ले आया। माँ ने कहा—''शाबाश बेटा, बहुत अच्छे हो तुम!'' वह आगे जाकर एक बड़ा भारी डाकू बन गया।

दूसरा बालक ऐसा है—किसी के घर से चाकू ले आया। सस्कारित शिक्षित माता ने बेटे को फटकार लगा दी। ''दूसरे की चीज क्यो लाये? यह महापाप है। जहॉ से लाये वही देकर आओ अन्यथा घर मे प्रवेश नही मिलेगा।'' बस बालक भयभीत हो गया। जहॉ की चीज वही रखकर आ गया। तभी मॉ ने नियम कराया—''आगे कभी भी ऐसा कार्य नही करूँगा, ऐसी प्रतिज्ञा करो।'' समय पाकर वह बालक एक आदर्श महापुरुष बन गया। ये है उत्तम, अच्छे सस्कार वाली आत्मा।

तीसरी वह आत्मा है जिसे अभी सस्कारित करना है ऐसी गीली मिट्टी की तरह। गीली मिट्टी को जैसा आकार देना चाहोगे, वैसा ढाल सकोगे। उसी प्रकार नन्हे-मुन्ने बालकों को सस्कारित करने की आवश्यकता है। कलियों को फूल बनाने के लिए, सौरभमयी बनाने के लिए माता-पिता का उचित सस्कारो से सस्कारित होना आवश्यक है। माता-पिता स्वय सस्कारित होगे तो सन्तान भी सस्कारित होगी।

माताओ को शिक्षित होना अति आवश्यक है। एक योग्य शिक्षित माता सैकड़ो शिक्षको से आगे है।

जैसी सतान माता के गर्भ म आती है माता के वैसे ही परिणाम बनते है। दोहले अच्छे भी आते है और बुरे भी आते है। पुण्यात्मा पुरुष माता के गर्भ मे आते है तब माताओ को तीर्थवन्दना, गुरु-भक्ति आदि उत्तम कार्यो के दोहले आते है और पापी जीव के गर्भ मे आने पर माता को खोटे-खोटे दोहले आते है। कभी कोयला खाती है, कभी दुष्परिणाम करती है।

ससारोद्धारक महापुरुष जब माता के गर्भ म आते है, तब शुभ-शकुन कुटुम्बियो आदि को दिखते है। माता को भी मगल-स्वप्न आदि का दर्शन होता है। आचार्य वादीभ सिह विरचित क्षत्रचूडामणि मे वर्णन आया है—

''अस्वप्नपूर्वजीवाना न हि जातु शुभाशुभम्'' (९/२१) प्रत्येक शुभाशुभ कार्य के पूर्व मे मनुष्य को प्राय कोई स्वप्न अवश्य आया करता है। विजयारानी को भी शुभाशुभ सूचक तीन स्वप्न आये—

देवि दृष्टस्त्वया स्वप्ने, बालाशोक समौलिक ।
आवष्टे सोदय सूनुमष्टमालास्तु तद्वधू ॥९१२५॥

हे देवि! मुकुट सहित छोटा अशोक वृक्ष देखने से तुम्हारे एक भाग्यशाली पुत्र होगा और आठ मालाओ के देखने से वह आठ स्त्रियो का स्वामी होगा। तीसरा स्वप्न अशुभ का सूचक है। आचार्य महाराज सदृश वात्सल्यमूर्ति, करुणानिधि, रत्नत्रयधारक रूप महान विभूति का जन्म कोई असाधारण घटना नही है। इनके जन्म के पूर्व गर्भावस्था मे रहने पर कुछ न कुछ अपूर्व बात अवश्य हुई होगी, ऐसी चिन्तनधारा मेरे दिमाग मे कई दिनो से थी। जानने की बहुत उत्कंठा थी। महापुराण मे कहा है कि जब भरतेश्वर माता यशास्वती के गर्भ मे आए थे तब उस माता की इच्छा तलवाररूप दर्पण मे मुख की शोभा देखने की होती थी—"साऽपश्यत्स्वमुखच्छाया वीरसूरसिदर्पणे"। रहस्य की खोज किसके पास की जाय? उपाध्यायजी से चर्चा की थी पर उन्होंने उत्तर नही दिया।

भगवान चन्द्रप्रभ का अतिशय कहिये। सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर ही मैंने हिम्मत से कार्य लिया। आचार्यश्री के चरणो मे ठीक दोपहर एक बजे पहुँच गई। आज भक्तो की भीड़ बहुत कम थी। सोचा काम बन जायेगा।

गुरुदेव के चरणो मे सिद्ध-श्रुत-आचार्यभक्ति पुरस्सर नमोस्तु किया।

गुरुदेव—"कहो बेटा! अभी कैसे आयी?"

मैंने कहा—"महाराज जी! एक जरूरी बात पूछना चाहती हूँ।"

आचार्यश्री—"बोलो, बेटा! क्या बात है?"

मैंने पूछा—"महाराज जी! आपकी माताजी कैसी थी?"

आचार्यश्री—"मै नही जानता। मैंने देखा ही नही तो क्या बताऊँ?"

मैंने पूछा—"धार्मिक थी या नही? आपके घर में कभी पिताजी या भुवा चर्चा करते होगे।"

आचार्यश्री—"सो तो ठीक है वे बहुत धर्मात्मा थी। हमारी ताई व भुवा बताया करती थी कि तुम्हारी माँ बहुत सरल प्रकृति की व धर्मात्मा थी।"

मैंने पूछा—"फिर तो आपके गर्भ मे आने पर कोई घटना अवश्य घटी होगी?"

आचार्यश्री—"ऐसी बाते मै नही जानता।"

मैंने करबद्ध प्रार्थना की—"गुरुदेव! आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज गर्भ मे आये तब उनकी माताजी की शिखरजी सिद्धक्षेत्र के दर्शन की भावना हुई थी। माँ ने शिखरजी की वन्दना की। उनकी माता की भावना सिद्धक्षेत्र के दर्शन की ही विशेष बनी रही। ठीक इसी प्रकार आपकी मातेश्वरी के भी भाव कही तीर्थो की वन्दना आदि के बने थे?"

आचार्यश्री—"माताजी! भुवा बताती थी कि जिस समय हम गर्भ मे थे, हमारी माँ के सोनागिरजी सिद्धक्षेत्र की वन्दना की तीव्र भावना थी। हमारी गर्भावस्था मे तो वह गरीबो को दीन-दुखियो को विशेष दान दिया करती थी।"

पिताजी ने हमे बताया था कि जिस समय हम सोनागिरजी पहुँचे, शान्तिनाथ मदिर (भट्टारको के मदिर) में विराजमान भट्टारकजी ने माँ को देखकर कहा था-"माताजी! आप पुण्यशाली है, आपकी कोख से एक होनहार

पुत्र उत्पन्न होगा।'' पिताजी ने उसी समय भट्टारकजी के पास नियम लिया कि बाबा! यदि पुत्र होगा तो मै उसका पहला मुडन संस्कार यही आकर चन्द्रप्रभ भगवान के चरणो मे कराऊँगा।''

महापुरुषो के वचन खाली नही जाते। नवमास पूर्ण होते ही उत्तम पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। बालक का प्रथम मुण्डन सस्कार इसी पावन तीर्थराज पर आकर पिताजी ने करवाया। पाठकगण! स्मरण रहे, आचार्यश्री की दीक्षा का मुडन सस्कार भी इसी तीर्थराज पर हुआ है। कैसा अपूर्व सयोग है!

हम लोग कई बार विचार करते थे—आचार्यश्री का सोनागिरजी मे चन्द्रप्रभ भगवान से इतना अनुराग, विशेष लगाव क्यो है? आज रहस्य जानकर आनन्द की लहर दौड गई। गर्भावस्था से ही जिससे सबध जुड़ा हुआ है उससे विशेष आकर्षण या लगाव होना स्वाभाविक वृत्ति है। ''प्रथम मुडन सस्कार सोनागिरजी में, दीक्षा के मुडन सस्कार सोनागिरजी मे और अपूर्व घटना की चर्चा भी सोनागिरजी मे हुई।'' जिस क्षेत्र ने गर्भ की गदगी के बालो को उतराकर नेमि को पवित्र किया उसी क्षेत्र ने ससार की अपवित्रता से निकालकर, ससार के मल को निकालकर विमल बना दिया। पिछले दस वर्ष पूर्व इसी क्षेत्र पर आचार्यश्री ने दो चातुर्मास किये। क्षेत्र की विकास अवस्था मे चार चाँद लग गये। तीर्थराज से मुक्तिराज होने वाले बाल ब्रह्मचारी नगकुमार व अनगकुमार की मूर्तियो की स्थापना आपके ही करकमलो द्वारा सेठ चैनरूप बाकलीवाल और पन्नालाल सेठी ने करवाई। इस वर्ष १९८८ मे आचार्यसघ का चातुर्मास सेठ श्रीपाल राजेन्द्र कुमार बम्बई वालो ने पावन तीर्थराज सोनागिर पर ही कराया। चातुर्मास के लिए पदार्पण करते हुए प्रवेश के दिन चन्द्रप्रभ की वन्दना के बाद उतरते समय आचार्यश्री ने कहा—''यहाँ एक विशाल श्रुतस्कन्ध बनवाने की हमारी भावना है तथा चौबीसी भी।'' आपकी भावना कभी व्यर्थ नही जा सकती। कार्य चालू है। सुन्दर अक्षरो मे श्रुतस्कन्ध का निर्माण-कार्य चालू है तथा चौबीसी भी बन रही है। पञ्चकल्याणक-प्रतिष्ठा सम्पन्न होगी। पर्वत पर कार्य भी आपकी प्रेरणा से चालू है। सुपार्श्वनाथ जी के मदिर न ६० का जीर्णोद्धार हो चुका है, ककरीले मार्गों मे टाइल्स लग चुकी है।

चातुर्मास के दौरान दो बार वृहद् सिद्धचक्र विधान पूजा, तीस चौबीसी विधान और अनेक पूजा विधान हो गए और अभी भी क्रम चालू है। एक पुण्यात्मा के निमित्त से अनेकों की नाव तिर जाती है।

जिस समय आचार्यश्री का चातुर्मास गिरनार क्षेत्र पर हुआ, भक्तो की अपार भीड थी। जिनपूजा-विधान आदि के माध्यम से मदिर के माली को इतनी आवक हुई थी कि उसने हमसे कहा था—''बाबा की कृपा से हमारा कई वर्षो का कर्ज चुक गया है। बाबा ने हमारी सारी दरिद्रता दूर कर दी।'' यही स्थिति यहाँ अब भी है और जहाँ जाते वही यह स्थिति बन जाती है।

एक दिन मैने पूछा—''महाराजजी! आपके घर आपसे पहले भी कोई त्यागी व्रती रहे?''

आचार्यश्री—''नही।''

मैने पूछा—''फिर आपकी माता के नही होने पर भी आपके जीवन मे और आपके घर मे धर्म का वातावरण कैसे बना?''

दादी की दृढ़ प्रतिज्ञा

आचार्यश्री—''हमारी दादी वीर, धर्मात्मा थी। प्रतिज्ञानिष्ठ थी। हमारे पूर्वज पहले कौसमाँ के पास तखावन मे रहते थे। गाँव मे जिनमंदिर नही था। सभी जैन बन्धु भी बिना दर्शन किये भोजनादि कर लेते थे।'' पाठकगण। ध्यान दीजिये—आचार्यश्री ने बताया कि जिस समय उनकी दादी की शादी हुई थी, उनके गाव में मन्दिर नही था। उनकी दर्शन की प्रतिज्ञा अटल थी। नई दुल्हन को तीन दिन हो चुके भोजन नही किया। सारे गाव में ठाकुर लोगो में चर्चा का विषय बन गया। सेठ के घर दुल्हन तीन दिनो से भूखी है। सभी चिन्तित थे। क्या करें? दादी के पुण्य से अचानक एक व्यक्ति पार्श्वनाथजी की एक पद्मासन मूर्ति गाड़ी मे लेकर उधर आया। एक गरीब बाजार मे आवाज लगा रहा है—मूर्ति ले लो, ग्यारह रुपये मे। उस समय ग्यारह रुपये बडी मेहनत से मिलते थे।

किसी साहूकार ने ग्यारह रुपये निकाल कर नही दिये। आखिर दादी ने अपने पास से ग्यारह रुपये निकालकर दिये और जिनदेव की प्रतिमा तुरत खरीद ली, भक्तिभाव से पूजा आराधना करके तीन दिन के बाद पारणा किया। आज भी 'तखावन' ग्राम मे वह मूर्ति विराजमान है।

संस्कारित परिवार

दादी के पूर्ण सस्कार पिताजी मे भरे हुए थे। वे सदा शुद्ध भोजन करते थे। भोजन करने से पहले जो भी स्वय के लिए बनाते थे, पहले भगवान को नैवेद्य चढ़ाते थे। प्रतिदिन भक्ति-आराधना आदि शुभ क्रियाओं में समय गुजारते थे। वे हमे सदैव यही शिक्षा देते थे—सबके साथ प्रेम से रहो, किसी से झगड़ा अच्छा नही। वात्सल्य से मनुष्य कीर्ति को प्राप्त करता है।

सच्चा मरण

आचार्यश्री ने यह भी बताया कि पूर्वावस्था की ताई बताया करती थी कि हमारे कुल मे सभी की समाधिपूर्वक मृत्यु हुई। पिताजी ने अन्तिम समय चारो प्रकार के आहार का त्यागकर मात्र एक वस्त्र शरीर पर रखा था और सबसे कह दिया था कि अब मै जा रहा हूँ। णमोकार मन्त्र का उच्चारण करते हुए वे स्वर्गस्थ हो गये। पालने वाली भुवा भी सम्यक् प्रकार समाधि को प्राप्त हुई।

पाठकगण। स्मरण करे कि बालक नेमिचन्द के पालने वाले मुख्य दो व्यक्तियो मे भुवा दुर्गा बाई और उनके सुपुत्र श्रीलालजी थे।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

श्रीलालजी का इतिहास सुन्दर है—

श्रीलालजी संसार से विरत रहे। अखड ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर निर्दोष व्रत पालन किया। भाई 'नेमिचन्द'

जिसको मातृवत् स्नेह दिया था, आचार्य विमलसागर बन गये। तभी एक दिन श्रीलालजी आचार्यश्री के दर्शनार्थ पहुँचे। आचार्यश्री का कमण्डलु लेकर साथ चलने लगे। आचार्यश्री ने पूछा—"दीक्षा लेना है?"

श्रीलालजी ने कहा—"दे दीजिये।" बस, शुभ नक्षत्र शुभ योग मे क्षुल्लक दीक्षा व मुनि दीक्षा भी हो गई। नाम रखा गया सभवसागरजी। सभवसागरजी सरल साधु थे। प्रसन्नमुख थे। यह दृश्य ऐसा सुहाना लगता था मानो जिसे बचपन मे पाला था वे ही आज अपना कर्जा चुकाकर इन्हे पाल रहे है। सघ मे वृद्ध साधु होने से इन्हे 'बाबाजी' कहकर पुकारते थे। अपनी ८५ वर्ष की उम्र मे भी षट्कार्यो मे कभी हानि नही आने देते थे। भोला-सा मुखड़ा था। न किसी से राग, न किसी से द्वेष था। सन् १९८६ मे एतमातुर के पास कुबेरपुरा मे आपकी शान्ति समाधि हुई। धन्य है। कुल परम्परा के उत्तम सस्कारो की विशुद्धता ही उन्नति का मूल है।

"जो करेगा सेवा वह पावेगा मेवा" जिसने त्यागी व्रतियो की सेवा की है व उन्हे आदर से भोजन कराया है वह जीव अपूर्व पुण्य का सञ्चय करता है। एक बार अपने जीवन की घटना सुनाते हुए आचार्यश्री ने बताया था कि पडित अवस्था मे हम अपना भोजन अपने हाथ से बनाते थे। किसी की अधीनता या दीनता हमे शुरू से पसन्द नही थी। शुद्ध भोजन ही करते थे।

महाराज ने कहा—एक दिन हमने भोजन तैयार किया कि अचानक एक ब्रह्मचारी आ गये। हमने कहा—ब्रह्मचारीजी! भोजन करिये। ब्रह्मचारीजी ने सरलता से भोजन कर लिया। हमे बहुत आनन्द आया। भोजन समाप्त हो गया। फिर से भोजन तैयार किया। उसी समय दूसरे ब्रह्मचारीजी आ गये, उनको वह भोजन करा दिया। और फिर सोचा समय बहुत हो गया है। अत अपने खाने के लिए केवल चावल बना लिये। फिर एक ब्रह्मचारीजी आ गये। पडितजी! भोजन तैयार है? पडितजी ने कहा—ब्रह्मचारीजी! सिर्फ चावल बने है, यदि आप खाये तो मेरा अहोभाग्य होगा। भोजन तैयार है। पधारिये। सुनकर तुरन्त ब्रह्मचारीजी ने शुद्ध भोजन कर लिया। उस दिन पडितजी को २ बज गये। फिर क्या था, स्वय ने चना-गुड खाकर अपना पेट भर लिया। पर त्यागी के प्रति क्रोध या किसी प्रकार की प्रतिकूल भावना नही हुई।

आचार्यश्री ने बताया उस दिन आहार-दान से हमारे अन्दर इतना अधिक आनन्द आया था कि आनन्द का सागर ही उमड़ पडा था। पुण्यानुबधी प्रशस्त कर्म का सचय ऐसे ही होता है।

आचार्यश्री ने यह भी बताया कि आज लोग त्यागी-व्रतियो की अवहेलना करते है। यदि एक ब्रह्मचारी व्रती घर पर भोजन करने आ जाय तो लोग मुँह चुराते है। वास्तव मे भारतीय श्रमण सस्कृति मे अतिथि-सत्कार को महान व्रत माना गया है। जिस घर मे अतिथियो का सत्कार किया जाता है, त्यागी-व्रतियो को यथायोग्य आहार आदि दान दिया जाता है उस घर मे कभी भी दरिद्रता का वास नही होता है।

सत्य है, जिसने पूर्व मे दिया है वही पाता है। आज आचार्यश्री के चरणो मे चारो ओर से दुनिया दौड़-दौड़कर आती है—हमारी सेवा लीजिये, क्यो? जिसने त्यागीवृन्दो की सेवा की है, उसी की आगे दुनिया सेवा करती है। इतना ही नही, आपके जन्म-दिवस पर विभिन्न प्रान्तो से लोग अपनी वार्षिक दान राशि ले लेकर आते है। गुरुदेव! बताइये दान की राशि कहाँ लगाई जाये। वह दानराशि कहाँ से निकाली? यह भी रहस्य है—जब भी कोई आपके पास अपनी आर्थिक समस्या रखता है आप एक बात उसके सामने रखते है—भैय्या! कमाई का दसवाँ
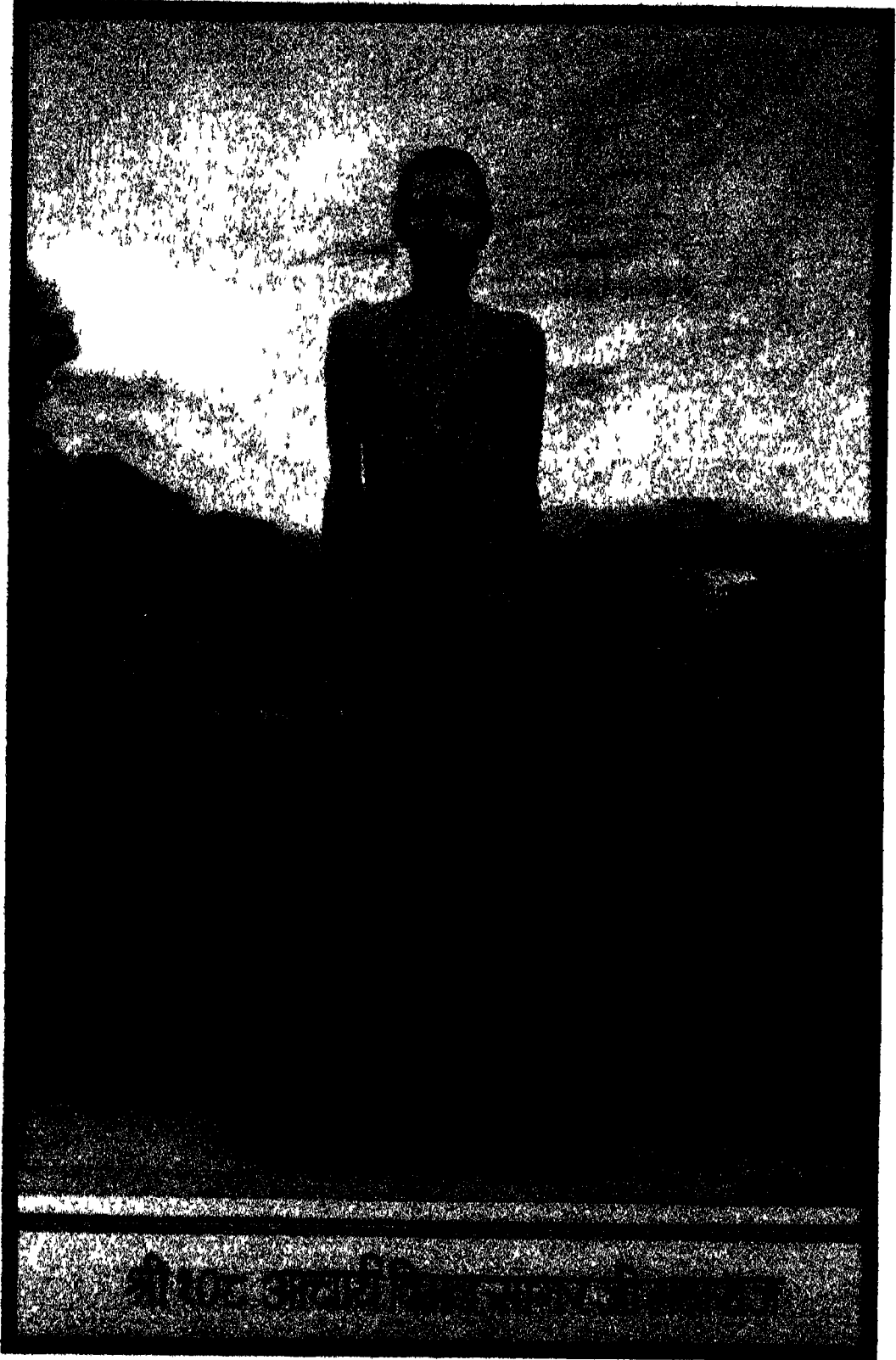
गुनौर (प्रथम चातुर्मास)
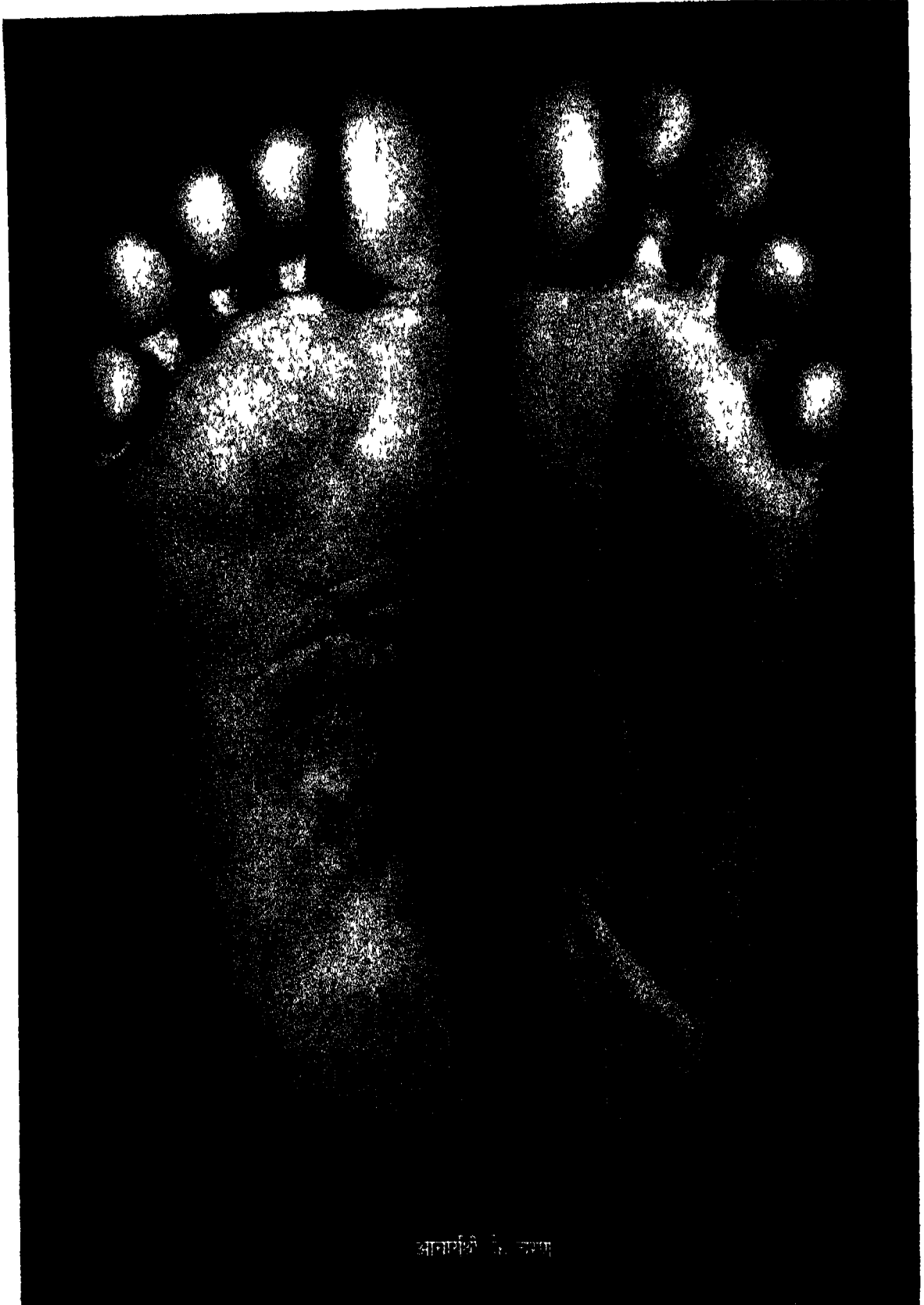
आचार्यश्री के चरण

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराजके हस्त कमल और पीछी कमडल

आचार्य श्री विमलसागरजी

जन्म कुंडली

जन्म दिनांक १८-९-१९१६

अगोज वदी ७ वि स १९७३

अध्ययन करते हुए आचार्यश्री।

आचार्यश्री ध्यान मुद्रामे

आचार्यश्री जाप मे रत (सम्मेदशिखरजी)
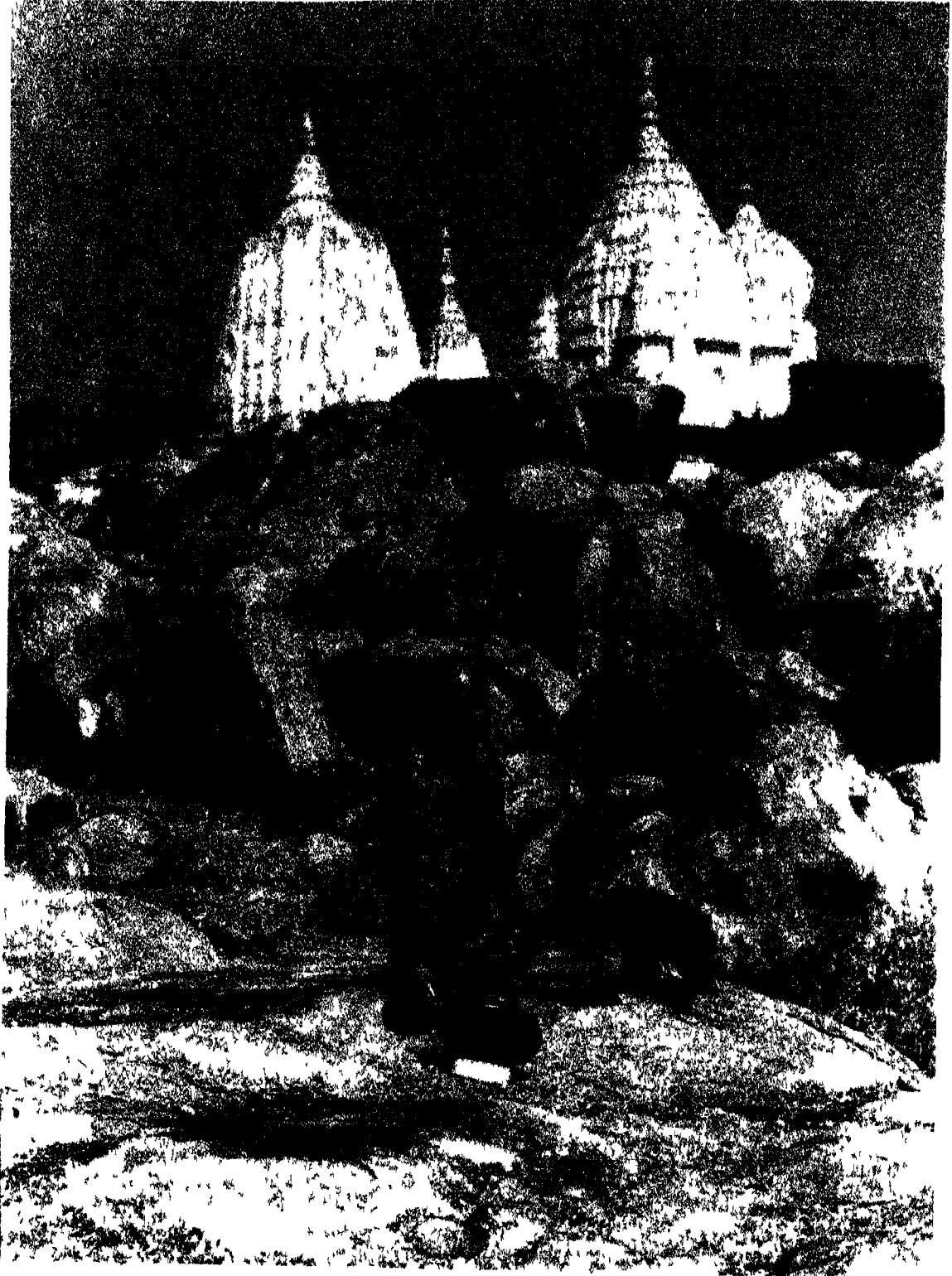
आचार्यश्री ध्यान, योग, साधना मे।

भाग दान दे दिया करो, जीवन मे कभी दरिद्रता नही आयेगी। बस, वही दसवाँ भाग दान राशि लेकर आने वाले भक्तो की भीड लगी रहती है। दसवाँ हिस्सा दान करने वाले आज बहुत सुखी भी नजर आ रहे है।

मुक्ति का प्रथम चरण ब्रह्मचर्य

> मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूरा·
> केचित् प्रचण्ड मृगराज वधेऽपि दक्ष।
> किन्तु ब्रवीमि बलिना पुरत प्रसह्य,
> कन्दर्पदर्पदलिने विरला मनुष्या:।।

प्रचंड कामदेव का दलन करने वाले मानव इस पृथ्वीतल पर विरले ही वीर है।

सुकरात एक महान दार्शनिक थे। उनसे पूछा गया कि मनुष्य को सभोग कितनी बार करना चाहिए? उन्होंने कहा—"जीवन मे एक बार।"

"यह संभव न हो तो?"

"वर्ष मे एक बार"

"यह भी सभव न हो तो?"

"महीने मे एक बार।"

"यह भी सभव न हो तो?"

"फिर कफन सिर पर रख लो और चाहे जैसे चलो।"

वर्तमान शासनाधीश भगवान महावीर के सामने माता-पिता ने शादी करने के लिए प्रस्ताव रखा। तभी अहिंसा के सजग प्रहरी ने कहा—"एक बार के सभोग मे ९ लाख जीवो का हनन होता है। ऐसी हिंसा के लिए मुझे बाध्य नही कीजिये।" प्रभु महावीर अखड ब्रह्मचारी थे।

ब्रह्मचर्य

अध्यात्म-मार्ग मे ब्रह्मचर्य को सर्वप्रधान माना जाता है, क्योंकि ब्रह्म मे रमणता ही वास्तविक ब्रह्मचर्य है। निश्चय से देखने पर क्रोधादि निग्रह का भी इसी मे अन्तर्भाव् हो जाने से इसके १८,००० भग हो जाते हैं। परन्तु स्त्री को त्यागरूप से भी ग्रहण किया जाता है। महाव्रत रूप से अब्रम्ह सेवन से चित्त भ्रमित हो जाता है। अनेक दोष उत्पन्न होते हैं—

> विषयासक्तचित्तानां गुण· को वा न नश्यति।
> न वैदुष्यं न मानुष्य नाभिजात्य न सत्यवाक्।। (क्ष चू.)
> विषयासक्त जीवो के सभी गुण नष्ट हो जाते है।

की ओर मोड़ दिया है वही मानव इस काल में उत्थान कर धर्म की प्रभावना कर पाया है।

मोक्षमार्ग में ब्रह्मचर्य व्रत की साधना उन्नति का प्रथम चरण हैं।

> अक्खाण रसणी, कम्माण मोहणी, गुत्तीए मणोगुत्ती।
> तह वयं च बंभचरियं चउरो दुक्खेण सिज्झन्ति॥

इन्द्रियों में रसना इन्द्रिय, कर्मों मे मोहनीय कर्म, गुप्तियो में मनोगुप्ति और व्रतों मे ब्रह्मचर्य—ये चारो कठिनाई से सिद्ध होते हैं। जिनधर्म प्रभावक प्रसिद्ध जैनाचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी, जिनसेनाचार्य, अकलंकाचार्य आदि बड़े-बड़े मोक्षमार्गी अखड ब्रह्मचारी थे। इतिहास के पृष्ठो मे ऐसे महापुरुषो का नाम स्वर्णाक्षरो मे अकित है।

इसी वक्रश्रृंखला मे आगे बढ़ते हुए चरण दृढ़तर हुए। वर्तमान युग के महान धर्म-प्रभावकों में प्रधान, सन्मार्ग दिवाकर की महानता जिन्हें पाने के लिए लालयित हो रही थी ऐसे पंडित नेमिचन्द मोक्षमार्ग की प्रथम कड़ी मे जुड़ने के प्रयास में आगे बढते गये।

आचार्य सघ नावाँ में पहुँचा। एक दिन पडितजी आहार देने की भावना से नावाँ पहुँचे। पूज्य वीरसागरजी महाराज को विधिवत् नवधा भक्ति सहित आहार दान देने के पश्चात् पिच्छिका देने का समय आया। महाराजश्री दूरदर्शी थे, जानते थे—यह परोपकारी महापुरुष बनेगा। इसका ससार मे फँसना उचित नही अत महाराजश्री का पडितजी को इशारा हुआ—"ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार करो तभी हम पिच्छिका लेंगे।" पंडितजी का उपादान तो मजबूत था ही। बिना निमित्त के कार्य होता नही। निमित्त मिलते ही उपादान जागृत हुआ। सहर्ष पडित नेमिचन्द, ब्र नेमिचन्द बन गये। चारो ओर आनन्द की लहर छा गई। सच है जिन धर्म, पञ्चमकाल के अन्त तक ऐसे वीरो के द्वारा ही चमकता रहेगा। ये है हमारे सच्चे धर्मस्तम्भ। प्रात:काल ब्रह्मचर्य व्रत लिया, दोपहर में दो प्रतिमा स्वीकार कर व्रती बन गये। वहा से संघ के साथ कुचामन सिटी की ओर विहार किया—कुचामन में ब्र व्रती नेमिचन्दजी ने सप्तम प्रतिमा का व्रत धारण किया। यह व्रत-धारण उत्सव वहाँ बहुत धूमधाम से मानाया गया।

मोह का भंजन

यहाँ से चल दिये नेमिचन्दजी घर की ओर। मोह की ग्रन्थि बड़ी विचित्र है। जिस पिता और भुवा के मोह मे ब्रह्मचारीजी घर लौटे थे, विधि का विधान विचित्र है, वे सब इनको छोड़कर स्वर्ग मे जा बसे थे। अहो कर्म वैचित्र्य! अब क्या था, भाई श्रीलालजी पुकारते रह गये .। ब्रह्मचारी शिखरजी सिद्धक्षेत्र की वन्दनार्थ चल दिये। शिखरजी वन्दना के पश्चात् खण्डगिरि-उदयगिरि की वन्दना। अब तक मोह का पर्दा फट चुका था। जिनेन्द्र साक्षी में प्रतिज्ञाबद्ध हुए, "मै छह माह के भीतर दीक्षा ग्रहण कर लूँगा।"

परिग्रह का खंडन

ब्रह्मचारीजी मोरेना पहुँचे। पं. मक्खनलालजी को (शिक्षा गुरु से) अपनी प्रतिज्ञा कह सुनाई। मक्खनलालजी ने कहा—"धन्य है हमारा विद्यालय। धन्य है हमारे विद्यार्थी। आपको दीक्षा के लिए परमपूज्य चारित्र-चक्रवर्ती आचार्य

"ब्रह्मचारित्रं पचव्रत समिति-त्रिगुप्त्यात्मकम् शान्तिपुष्टिहेतुत्वात्" (ध ११४, १।२१।९४।२)

ब्रह्म का अर्थ पाँच व्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति स्वरूप चारित्र है क्योंकि वह शान्ति के पोषण का हेतु है।

अत विवेकी जनों को सदा ही अपनी शक्ति अनुसार ब्रह्मचर्य से रहना चाहिए। दुराचारिणी व परस्त्री से तो सर्वथा बचना ही चाहिए, स्वस्त्री मे भी अति आसक्ति नही होना बुद्धिमत्ता है। इसी प्रकार स्त्री को भी पुरुषो से बचकर रहना चाहिए।

रावण की अपकीर्ति अब्रह्म से हुई। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कीर्ति ब्रह्मचर्य से हुई। जिस समय राम के पास रावण की बहन शूर्पणखा प्रणय-प्रस्ताव को लेकर पहुँची, राम ने कहा—"मैं शील व्रतधारी हूँ। मेरी पत्नी है। मैं आपके प्रस्ताव को स्वीकार नही कर सकता हूँ।" राम की मर्यादा को देख मन्दोदरी ने कहा था—

धन्या राम त्वया माता, धन्या राम त्वया पिता।
धन्या राम त्वया वशज, परदारा न पश्यति॥

हे राम! मैंने पतिदेव रावण को बहुत समझाया। पर वे नही माने और अपकीर्ति को प्राप्त हुए। हे राम! तुम्हे धन्य है। अहो! ब्रह्मचर्य की महिमा।

लक्ष्मण की विरागता देखिये। चौदह वर्ष भाई-भाभी की अखड सेवा मे अर्पण हुए, पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहे। जिस समय हनुमान ने सीता के गिरे हुए आभूषण वन मार्ग से लाकर रामचन्द्रजी को पहचानने के लिए दिये, रामचन्द्रजी ने लक्ष्मण से पूछा—"भाई, देखना ये जेवर सीता के है क्या?" तब लक्ष्मणजी ने कहा—

कुडले नैव जानामि, नैव जानामि ककणे।
नूपुरावेव जानामि, नित्य पादाभिवन्दनात्॥

लक्ष्मण—(आँखो मे आँसू भरके) "नाथ! मै कुडलो और ककणों को तो नहीं पहचानता (क्योंकि मैंने कभी दृष्टि उठाकर ऊपर को देखा ही नही) हॉ, पाँवो के बिछुओ को अवश्य जानता हूँ क्योंकि मैं माता के चरणो को नित्य नमस्कार करता था।"

यह है भारतीय श्रमण सस्कृति।

चाहे तीर्थ जाओ, चाहे एक पैर से खड़े रहो, चाहे जल मे निमग्न होओ और चाहे पर्वत के शिखर पर से गिरो तो भी शील रहित मनुष्य को परभव मे सिद्धि उसी तरह प्राप्त नही होती जिस तरह कि शिला पर बोये हुए बीज से धान्य की सिद्धि नही होती।

चन्द्रगुप्त को स्वप्न आये थे। उनमे एक स्वप्न था कि इस काल मे युवा वर्ग ही धर्मरथ को चलायेंगे। ठीक ही है भगवान नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर ने भर यौवन मे अखड शील धारण कर स्व-पर धर्म-प्रभावना की। वर्तमान मे भी आचार्य सघनायक श्री १०८ शातिसागर जी, वीरसागरजी, शिवसागरजी, महावीरकीर्तिजी, धर्मसागरजी सभी बाल ब्रह्मचारी थे तथा आज भी आ विमलसागरजी, अजितसागरजी, विद्यानन्दजी, विद्यासागरजी, कुन्थुसागरजी, बाहुबली सागरजी सभी सघनायको ने अखड ब्रह्मचर्य पालन किया है। जिसने प्रारम्भ से ही अपने आपको धर्म

श्री शान्तिसागरजी महाराज के पास जाना चाहिए।'' उचित परामर्श पाकर ब्रह्मचारीजी आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज के पास कुन्थलगिरि पहुँचे। सविनय नमस्कार करके दीक्षा की प्रार्थना की। आचार्यश्री ने समाधि के दो वर्ष पूर्व ही दीक्षा देना बन्द कर दिया था अत उन्होंने कहा—ब्रह्मचारीजी! आप दीक्षा के लिए आचार्य महावीरकीर्तिजी के पास जाइये। वे विद्वान् हैं, आप भी विद्वान् है अच्छा सयोग रहेगा। गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर ब्रह्मचारीजी आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के पास बड़वानी दीक्षार्थ पहुँचे। बडवानी सिद्धक्षेत्र पर आदिनाथ प्रभु की विशालकाय खड्गासन प्रतिमा के दर्शनमात्र से मन अमरशान्ति को प्राप्त हो जाता है। इस पावन क्षेत्र पर चूलगिरि से रावण के भाई कुंभकरण व इन्द्रजीत तथा मेघनाद सिद्धावस्था को प्राप्त हुए। आत्म-सिद्धी के लिए द्रव्य क्षेत्र काल भाव की शुद्धि निमित्त कारण होती है। मानव शरीर उत्तम कुल रूप श्रेष्ठ द्रव्य था, चूलगिरि जैसा सिद्धक्षेत्र, शुभ नक्षत्र, शुभ योग और दीक्षार्थी के परिणामो की निर्मलता से कार्य सिद्ध हुआ। आषाढ़ पञ्चमी स. २००७ मे ब्र नेमिचन्दजी की आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के कर-कमलो से क्षुल्लक दीक्षा सम्पन्न हुई। क्षुल्लक वृषभसागर नाम से सुशोभित हुए। जैसा नाम वैसा काम। वृषभधर्म के सागर। धर्म की गहराई को पहचानने वाले क्षुल्लकजी ध्यान-अध्ययन, साधना मे निरन्तर प्रयत्नशील हुए। गुरु सान्निध्य मे साधना का स्तर उत्थान की ओर बढ़ रहा था। बाधक तत्वो को त्यागने मे तत्पर क्षुल्लक वृषभसागरजी ने ऐलक दीक्षा के लिए आचार्यश्री से प्रार्थना की। सवत् २००७ को माघ सुदी १२ को धर्मपुर (इन्दौर) मे आचार्यश्री से क्षुल्लकजी ने ऐलक दीक्षा धारण की। अब ऐलक सुधर्मसागरजी धर्मध्यान की विशेषता मे निष्ठित हुए।

चाह लंगोटी की दुख भालै

ऐलक अवस्था में ही सुधर्मसागरजी की साधना की प्रसिद्धि हुई। ये सघ के मन्त्रसिद्ध निमित्तज्ञानी विशेष साधु गिने जाने लगे। अहिसाव्रत के प्रिय ऐलकजी को लगोटी भी शूल की तरह चुभ रही थी—

> भाले न समता सुख कभी नर, बिना मुनि मुद्रा धरै।
> धरि नगन पर तन-नगन ठाडै, सुर असुर पायनि परै।

ऐलकजी जब भी सामायिक मे बैठते तो अन्दर मे पूर्ण शान्ति का अनुभव नही पाते। चिन्तन की अजस्रधारा बहती रहती थी—क्या कारण है की मुझे शान्ति नही मिल रही है? लगोटी भी शान्ति मे बाधक रही। षष्ठम्-सप्तम गुणस्थान के झूले मे झूलने की लगन जिन्हे लगी है ऐसे ध्यानी की कीर्ति दशो दिशाओ मे फैलने लगी। दो विद्वान् योगियो का इन्दौर नगर मे चातुर्मास अपनी एक अनोखी छाप बिछा गया था। फूल निकल गये किन्तु हर दिल व दिमाग मे वह खुशबू आज भी है। गुरु शिष्य दोनो की प्रखर प्रतिभा से सारा नगर धर्म मार्ग की ओर बढ़ चुका था। उस समय बोया गया बीज आज भी फल प्रदान कर रहा है।

राग-विराग

शुद्धात्मा के रसास्वादन के लिए ऐलक श्री सुधर्मसागरजी ने नगानगकुमार की सिद्धस्थली व चन्द्रप्रभ जिनराज की समवसरणस्थली सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर फाल्गुन सुदी १३ सवत् २००९ मे परम-पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री

महावीरकीर्तिजी के कर-कमलों से दिगम्बर मुनि-दीक्षा ग्रहण की और विमलसागर नाम से प्रसिद्ध हुए। उस समय आपकी मुनि दीक्षा के माता-पिता बड़नगर निवासी श्री मिश्रीलालजी व उनकी धर्मपत्नि कमलाबाई टोंग्या बने थे।

धर्म-प्रभावना का प्रथम चरण

गुरु-आज्ञा से आपका स्वतन्त्र विहार प्रारम्भ हुआ। सघ में अन्य त्यागीगण भी थे।

मैंने पूछा—"गुरुदेव! पहली बार गुरु के बिना विहार मे आपको कैसा लगता था?"

महाराजश्री—"पहले-पहले गुरु के बिना विहार हमें भार जैसा लगता था। बच्चा अपने पिता के पास जब तक रहता है, निश्चिन्त रहता है, अलग होते ही चिन्ताएँ सताती हैं। वही अवस्था हमारी थी। हमे चिन्ताओ से जूझना पड़ा। विहार की चिन्ता, वचन की चिन्ता, शका-समाधान करना, अन्य त्यागियो की रक्षा आदि के भार से हमें परेशानी महसूस होती थी। गुरु की छत्रछाया में हम निश्चिन्त थे। अब क्या कर सकते थे? गुरु-आज्ञा शिरोधार्य।"

मैंने पूछा—"आप गुरुजी के पास ही रहते? आपने सघ छोड़ा क्यो?"

गुरुदेव—"गुरुदेव ने धर्मप्रभावनार्थ अलग विहार की आज्ञा स्वय दी थी, उसे इन्कार करने की शक्ति हममे नहीं थी।"

मैंने पूछा—"महाराज जी। प्रथम विहार या चतुर्मास में कोई विशेष घटना घटी हो तो बताइये।"

महाराजश्री—"बेटा माताजी। हमारा प्रथम चातुर्मास गुनौर मे हुआ। गुनौर में जैनियो के १५-२० घर है। सरल परिणामी भद्र जीव वहाँ रहते है। वहाँ प्रति वर्ष विजयादशमी के अवसर पर भैसो की बलि चढ़ाई जाती थी। हिंसा का बड़ा प्रभाव था। सभी जैन-अजैन को पैसे चन्दे में देने पड़ते थे। यह बात हमारी श्रुति मे भी आई। हमारा हृदय द्रवित हो उठा। विजयादशमी के दो दिन पूर्व ही गाँव की समाज को मैंने यह समाचार दे दिया था कि जब तक जीवो की बलि (भैंसों की बलि) चढाने का हिंसात्मक कार्य बन्द नहीं होगा, मुझे आहार-पानी का त्याग करना है। मै अपने रहते हुए यहाँ वह हिंसात्मक कार्य नही होने दूँगा।

बिजली की तरह खबर सारे गाँव मे फैल गई। अब सारी जनता मे हाहाकार मच गया। गाँव के सरपच आदि बड़े-बड़े लोग आये। सबने हमसे अन्न-पानी ग्रहण करने की प्रार्थना की। हमने एक बात न सुनी। वे नाना प्रकार के बहाने बताने लगे। दैवीय प्रकोप आदि होगा तो क्या करे? आदि आदि। हमने सारी जिम्मेदारी ले ली। आप हिंसा को हमेशा के लिए बन्द कर दो। किसी प्रकार का कोई देवी प्रकोप होगा तो हमारी जिम्मेदारी है।

फिर? फिर क्या महावीर भगवान की कृपा से गाँव के सरपच आदि सब बड़े-बड़े लोगो ने निर्णय किया कि आज से हम भैंसों या अन्य किसी भी जीव की बलि नहीं चढ़ायेंगे।"

हमने पूछा—"महाराज जी! बलि शब्द का प्रयोग पूजादि में भी आता है। बलि से प्रयोजन क्या है?"

महाराजश्री—"बलि का अर्थ है नैवेद्य चढ़ाना।"

गाँव के लोगों ने भी बलि का अर्थ समझा और तभी से आज तक वहाँ किसी प्रकार की हिंसा नही होती।

विजयादशमी आदि पर्वों पर वे गाँव के लोग आज भी देवी-देवताओं को नैवेद्य चढ़ाते है।

धन्य है, अहिंसात्मक जीवन की क्रान्ति! सच ही तो है, आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज दूरदर्शी थे। वे शिष्य की योग्यता को जानते थे तभी तो आपको अलग विहार की आज्ञा धर्मप्रभावनार्थ दी।

शिष्य से गुरु की ओर

अब शिष्यो को दीक्षा दे देकर वे गुरु बन गये। इस प्रकार मुनि अवस्था मे विविध प्रकारेण धर्म प्रभावना करते हुए, तीर्थों की वन्दना करते हुए जन-जन का कल्याण कर रहे थे। अनेकानेक भव्य जीवों को सदुपदेश देकर सत्यमार्ग का दिग्दर्शन किया। इस प्रकार की धर्मप्रभावना से, जन-मानस प्रभावित हो, मन्त्रमुग्ध हो रहा था। मुनि विमलसागरजी को आठ वर्ष हो गये थे, धर्म की अजस्र धारा बहाते हुए। इसी अवस्था मे, ८-१० भव्यात्माओ को मुनि-आर्यिका आदि श्रेष्ठ पदो की दीक्षा देकर उनका जीवन सफल किया।

गुरु से गुरुतर की ओर

मुनिश्री सघ सहित, ईशरी, मिर्जापुर, इन्दौर, फलटण आदि विहार करते हुए, सन् १९६१ में, टुण्डला (उत्तर प्रदेश) नगर पधारे। यह एक ऐतिहासिक पावन भूमि है। आपकी ध्यान-साधना एव पराक्रमता से जैन समाज व विद्वद्गण विशेष प्रभावित हुए। सभी ने मुनि विमलसागरजी से आचार्य पद स्वीकार करने की प्रार्थना की। निस्पृह वृत्ति मुनिराज पद के लोभी नही होते है।

मुनिश्री ने कहा—''भैया! हमे ससार के चक्कर मे क्यो फँसाते हो? ये उपाधियाँ साधु की साधना मे बाधक है। मुक्ति के लिए बाधक हैं। अन्त समय मे इन्हे भी छोडना पड़ता है।''

जैन बन्धुओ व विद्वानो ने बहुत प्रयत्न किया, पर असफल रहे। पडित लालाराम शास्त्री, माणकचन्दजी कोन्देय आदि विद्वानो के बीच विचार विमर्श चला। मुनिश्री ने कहा—''मै अपने गुरु के सामने आचार्य पद नही ले सकता हूँ।'' अति प्रार्थना के बावजूद भी जब सफलता नही मिली तो— समाज के मुख्य व्यक्ति, पडित लालारामजी व माणकचन्दजी कोन्देय, आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज के समक्ष प्रार्थना लेकर पहुँचे। शिष्य की योग्य साधना व योग्यता देखकर आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज ने स्वय मुनि विमलसागरजी को आचार्यपद से अलकृत करने की आज्ञा दी—''मुनि विमलसागरजी को हमारी आज्ञा से आचार्य पद स्वीकार करना चाहिए।''

क्योंकि—आचार्यश्री वादीभसिह क्षत्रचूडामणि ग्रन्थ मे लिखते है—

रत्नत्रयविशुद्ध सन्, पात्रस्नेही परार्थकृत्।
परिपालितधर्मो हि, भवाब्धेस्तारको गुरु ॥२।३०॥

जो रत्नत्रय का धारक, सज्जन पात्रो मे स्नेह करने वाला, परोपकारी, धर्मरक्षक और जगतारक होता है, वही यथार्थ गुरु होता है किन्तु जिसमे उक्त गुण नही होते है, वह यथार्थ गुरु कहलाने का अधिकारी नही होता।

गुरु आज्ञा को लेकर, सभी पुन मुनि विमलसागर के समीप पहुँचे और गुरु की आज्ञा को सबके समक्ष

कह सुनाया। अब तो क्या करते... क्षत्रचूड़ामणि ग्रन्थ में कथानक आता है कि काष्ठाङ्गार को मारने के लिए उद्यत हुए, जीवन्धर कुमार को गुरु ने समझाया—हे वत्स! एक वर्ष तक युद्ध न करो, यही गुरु-दक्षिणा है—"कोऽन्यो लंघयेद्गुरुम्" समझदार लोग गुरु की अवहेलना कभी नही करते, नीति अनुसार जीवन्धर ने गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर युद्ध करने का उद्यम त्याग दिया।

न हि प्राणवियोगेऽपि, प्राज्ञैर्लंघ्य गुरोर्वचः।

सुशील शिष्य प्राणनाश का प्रसंग आने पर भी गुरु-आज्ञा का उल्लघन नही करते है, फिर मुनि विमलसागरजी अपने गुरु के योग्य शिष्य, गुरु की आज्ञा का उल्लघन कैसे कर सकते थे? हजारों जन समुदाय, प लालारामजी शास्त्री व ग्रन्थराज श्लोकवार्तिक के हिन्दी टीकाकार प. माणकचन्दजी कोन्देय की उपस्थिति मे मुनि विमलसागर, आचार्य पद से सुसस्कारित किये गये। जन-जन के मन मे खुशी छा गई। जयघोष के नारो से आकाश गूँज उठा।

जो हो ज्ञानामृत से लबालब भरा, उसे ज्ञानसागर कहते हैं।

जो हो धर्मामृत से लबालब भरा, उसे धर्मसागर कहते हैं,

और जो **वात्सल्य व करुणामृत से लबालब भरा हो, उसे आचार्य विमलसागर** कहते हैं। आचार्य पद की अपनी वास्तविक गरिमा से शोभायमान, आचार्यश्री वात्सल्य गुण के धनी है। आपकी कीर्ति भारत के कोने-कोने में अपने वात्सल्य गुण की विशेषता से प्रसिद्ध है। "पाप से घृणा करो, पापी से नही, पापी पवित्र हो सकता है, पाप कभी नही।" यह आपके जीवन का मूल मत्र है। इसी सूत्र के आधार से बडे-बडे पापी भी आपके चरणो मे नतमस्तक होते है।

जो आचार्य परमेष्ठी सिद्धो के सम्यक्त्वादि गुणो की स्तुति करने मे सदा लवलीन है, क्रोधादि कषायो को जीतने में तत्पर, मन-वचन-काय गुप्ति के पालन मे तत्पर, मुक्ति लक्ष्मी से सबध रखने वाले, जिनके भाव सत्यवचन से भरपूर है, जो कभी भी किसी को ठगते नही—ऐसे आचार्य परमेष्ठी को मेरा शत्-शत् वन्दन।

सिह के समान पराक्रमी, हाथी के समान स्वाभिमानी, बैल के समान उन्नत, हिरण सम सरल, पवन सम निसग, गाय सम गोचरी, सर्पवत् पर-गृह मे निवास करने वाले, मेरु सम अचल, मणिवत् प्रकाशमान्, सूर्यवत् तेजस्वी, चन्द्रवत् शीतलदायक, आकाशवत् निर्मल, समुद्रवत् गम्भीर और पृथ्वीवत् क्षमावान् आचार्यश्री के प्रति सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्य-भक्ति पुरस्सर नमोस्तु।

काया में प्रभुत्व

आचार्य महाराज का निरन्तर मुस्कराता हुआ चेहरा, खिलता हुआ वदन उनकी अन्तरग विशुद्धता को साक्षात् बिखेरता रहता है। चेहरे पर उत्साह, बालकवत् नि शङ्क, निश्छल वृत्ति आपके रोम-रोम से टपकती है। क्षत्रचूडामणि में नीतिवाक्य आया है—"वक्त्रं वक्ति हि मानसम्" मुख की आकृति मन के भावों को प्रकट कर देती है। निरन्तर स्वात्मरस के स्वादी, भक्तिरस के रसिक साधुराज के मुख से वीतरागता का अजस्र स्रोत प्रवाहित होता रहता है।

पद्मचक्र

जिस समय तीर्थंकर प्रभु का जन्म होता है, उनके दस जन्मातिशय होते है। शरीर में १००८ लक्षण होते हैं, जो उनके महान जीवन के सूचक होते है। आचार्यश्री के शरीर में ऐसे ही अनेक चिह्न हैं जो उनकी महानता को प्रकट कर रहे हैं। आपके दाहिने पैर मे पद्मचक्र है। यह पद्मचक्र सूचित करता है कि ये महापुरुष निरन्तर भ्रमण करेंगे व आत्मसाधना द्वारा स्वपरोपकार करेगे।

पाठकगण! यह जानकर आपको अति आश्चर्य होगा कि सारे विश्व में आचार्यश्री विमलसागरजी एकमात्र ऐसे सन्त है जिन्होंने भारत की भूमि के कण-कण को कृतार्थ किया है। आपके चरण पदार्पण से सारी भूमि तीर्थवत् बनी है। उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम, आपका निर्बाध विहार चतु सघ सहित तीन-तीन बार हुआ। कहीं भी किसी भी प्रान्त की जनता मे किसी प्रकार का विद्रोह या उत्तेजना नही आई। इनके विहार से जन-जन को शान्ति मिली है। आपके विहार से धर्म की अपूर्व लहर प्रत्येक प्रान्त मे व्याप्त है। जिन भक्ति का मर्म जन-जन को आपने बताया है। इसी विशेषता का फल है कि आज भी आचार्यश्री के जन्म-दिवस पर भारत के कोने-कोने से भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ती है। आबाल-वृद्ध एक स्वर मे यही कहते है—"बाबा की हमारे ऊपर कृपा है।" जिनभक्ति का मार्ग उन्हीं की प्रेरणा से पाया है।

श्रीवत्स

तीर्थंकर प्रभु के शुभ लक्षणो मे वक्ष पर एक 'श्रीवत्स' चिह्न भी होता है। यह चिह्न उनकी धीरता-वीरता को प्रकट करता है। इसी प्रकार आचार्यश्री के वक्ष पर भी 'श्रीवत्स' का चिह्न है जो आचार्यश्री की अपूर्व साधना, धीरता एव वीरता को सूचित कर रहा है। वर्तमान के भीषण कलियुग मे, युवा-वृद्ध, शिक्षित-अशिक्षित सभी प्रकार के सघस्थ त्यागियो का सतानवत् पालन करना अपूर्व सहिष्णुता-धीरता का ही परिचायक है।

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्

इनका साहस वीर्य तो अपूर्व है। इतनी उम्र मे भी चेहरे पर कभी थकान मालूम नहीं पड़ती। कई बार आपकी साधना की विशेषता उपाध्यायश्री हमे बताते रहते है।

उपाध्यायश्री से हमने पूछा—"महाराज जी! आचार्यश्री की साधना कितनी प्रबल है कि इतनी ठडी मे भी वह अर्द्धरात्रि मे उठकर ध्यान मे लग जाते है।"

उपाध्यायजी ने कहा—"माताजी! गुरुदेव की साधना अतिकठोर है। जब हमारी दीक्षा हुई थी, हमने देखा था आचार्यश्री रात्रि ग्यारह बजे से उठ जाते थे और तभी से ठडी हो या गर्मी खड़े-खड़े जाप्य, स्वाध्याय और ध्यानादि किया करते थे। अपनी सारी क्रिया बिना किसी सहारे के खड़े-खड़े करते थे, आठ-आठ, दस-दस घटे खड़े रहकर ध्यानादि करना इनके लिए साधारण बात थी। इतना ही नही विहार करते हुए भी २-२ उपवास १ आहार करते थे। ६० या ७० मील पर जाकर एक आहार होता था, और वह भी अन्तराय हो गया, तो फिर २ दिन उपवास

के बाद आहार का नम्बर आता था। उस समय कड़ाके की ठडी मे भी चटाई आदि का उपयोग नही करते थे। मैंने देखा कि आचार्यश्री की कठोर साधना इतनी थी कि रात्रि ११ बजे के करीब ही कड़ी ठंडी में घास भी छोड़ देते थे। आज भी उनका जीवन विस्मयकारी है।''

''माताजी! अधिक क्या कहूँ—शारीरिक स्थिति कितनी भी अस्वस्थ हो जाये पर आचार्यश्री रात्रि में अपनी वही क्रिया सावधानीपूर्वक आज भी करते है। बुखार, सर्दी, खाँसी-फोड़ो की पीड़ा तो प्रायः चलती ही रहती है पर असातावेदनीय, इनसे डरकर भाग जाता है। इन्हे चलायमान नहीं कर पाता।

''मुझे स्मरण है, आचार्यश्री ने एक दिन बताया था और प्राय ठडी के दिनो मे अपनी घटना बता दिया करते है—एक दिन कड़ाके की ठड थी। हम लोग दो-तीन त्यागी थे। घास चटाई कुछ साधन नहीं था, बिल्कुल जगल। रात कैसे बिताई जाय? हम तो अग्नि धारणा, ध्यान में इतने मग्न हो गये कि शरीर मे गर्मी से पसीना छूटने लगा। यह है वीर पुरुषो की साधना। आज भी आचार्यश्री साधुवृन्दो को कहते है—ठडी से डरो नही, धारणा का अभ्यास करो। साधक की यह साधना जीवन को स्वावलम्बी बनाती है।''

आचार्यश्री की शक्ति सहनन धीरता का अन्दाज लगाना ही कठिन है। अपनी दीक्षा मे अधिक समय उपवास और फलाहार मे बीता है। चारित्रशुद्धि व्रत के १२३४ उपवास आपके हो चुके, पश्चात् जिन सहस्रनाम के १००० उपवास, पश्चात् तीस चौबीसी के ७२० उपवास, गणधरो के १४५३ उपवास, कनकावली, मुक्तावली, जिनगुणसम्पत्ति व्रत उपवास आदि तथा छोटे कई व्रत विधिवत् किये। प्रति चातुर्मास मे एक आहार एक उपवास का नियम दीक्षा के समय से आज तक चला आ रहा है। दशलक्षण पर्व व सोलहकारण व्रतो मे दीक्षा से आज तक फलाहार किया है। अब तो करीब तीन वर्षों से अन्न का बिल्कुल ही त्याग कर दिया है, आजीवन के लिए। फलाहार करते हुए भी चातुर्मास मे एक उपवास एक आहार, कभी दो उपवास एक आहार, यही इनकी उत्तम चर्या है।

एक दिन हमने पूछा—''महाराज जी! फलाहार से कमजोरी तो आती ही है फिर साधना मे बाधा नहीं आती?''

आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—''बेटा! फलाहार से शरीर में हल्कापन रहता है। प्रमाद नहीं सताता है। स्फूर्ति से मन तरोताजा रहता है। जिनभक्ति और ध्यान से क्रिया में विशेषता आती है।''

सत्य ही है। 'राजवार्तिक' मे शिष्य ने प्रश्न उठाया है—प्रभो! कवलाहार के बिना केवली का औदारिक शरीर ८ वर्ष कम एक कोटि पूर्व वर्ष तक कैसे बना रहता है?

आचार्य अकलंकदेव स्वामी ने समाधान किया—केवलज्ञानी भगवान का परमऔदारिक शरीर है। निरन्तर उस शरीर के योग्य आने वाली शुभ कार्माण वर्गणाओं से पूरण-गलन होता रहता है। शुद्ध परिणामों से शुभवर्गणाए आती हैं अत कवलाहार की आवश्यकता नहीं होती है। यही सिद्धान्त यहाँ देखने मे आता है। आचार्यश्री निरन्तर धर्मध्यान की विशुद्धि मे रहते है। अत निरन्तर शुभ पुद्गल वर्गणाएँ आती हैं और शरीर को पुष्ट बनाये रखती हैं। भोजन की आवश्यकता कम रहती है। यद्यपि प्रत्येक संसारी प्राणी के लिए ये पुद्गल वर्गणाएँ आती है पर संसारी प्राणी में आर्त-रौद्र ध्यान की अधिकता होने से अशुभ रूप हो जाती हैं और कार्य सिद्धि नहीं हो पाती। दिगम्बर मुनि-आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका त्यागीवृन्द एक समय भोजन करके भी शरीर से पुष्ट रहते हैं। बड़े-बड़े ऊँचे-ऊँचे पर्वतों पर जा तीर्थों की वन्दना, पैदल विहार आदि आसानी से कर लेते हैं, जबकि निरन्तर विषय-

वासनाओ से पीड़ित जीव, ताकत की अनेक दवाइयाँ लेते है, रात को १२ बजे भी दूध व दवाई का सेवन करते हैं फिर भी शरीर मे शक्ति नही रहती है। दिगम्बर सन्तो की चर्या सिखाती है कि मात्र खाने से शरीर का पोषण नही होता है, शरीर का पोषण सीमित, विशुद्ध परिणामो से शुद्ध भोजन करने से तथा पूज्य पुरुषों की भक्ति करने से भी होता है। नीतिकार कहते है—महापुरुष कौन है?

कम खाना, कम सोवना, कम दुनिया से प्रीत।
गम खाना, कम बोलना, यह बड़न की रीत॥

महापुरुष कम खाते है। नीद कम लेते है, स्व से प्रीति कर, पर से नाता तोड़ते है। छोटी-छोटी बातो मे चलायमान नही होते हैं तथा यथासभव मौन ही रहते है। प्रयोजनवशात् बोलना भी पड़े, तो एक शब्द से कार्य चलता है, दूसरा नही बोलते है।

अल्प-निद्रा नयनो की

आचार्यश्री आज वृद्धावस्था मे भी रात्रि के पहले प्रहर में, अल्पनिद्रा लेकर, दूसरे प्रहर मे उठ जाते है। बिना किसी सहारे के बैठे हुए, अपनी ध्यान-स्वाध्यायादि क्रिया रात भर करते है। उस समय कोई शक्ति उन्हे विचलित नही कर पाती है। साधु की यही सही चर्या है ।

(अल्प निद्रा नयनो मे होते हुए भी आत्मा मे हमेशा सचेत रहते है)

एक दिन मैने पूछा—"गुरुदेव आपकी इतनी जल्दी सोकर उठ जाने की अल्पनिद्रा की आदत कब से हो गई है?"

आचार्यश्री—"माताजी! हम जब व्यापार के लिए जाते थे, एक गॉव से दूसरे गॉव जाना पडता था। उस समय वाहनादि का साधन नही था। पैदल-पैदल या साइकिल पर ही जाते थे। सुबह ४ बजे निकलते थे। उस समय अपने नियम का निर्वाह उत्साह से करते थे।"

हमने पूछा—"कौन से नियम का?"

आचार्यश्री—"नित्य जाप करना, जिनेन्द्र देव की अभिषेक पूर्वक पूजा करना। अत हम प्राय २ ३० बजे उठकर प्रात काल तक नित्य क्रिया करते थे फिर व्यापार के लिए जाते थे। बिना अभिषेक-पूजा किये ससार कार्य मे लगना मै उचित नही समझता था। इसे बहुत अपराध मानता था। बस, तभी से आज तक हमे प्रथम प्रहर मे गहरी नीद आने के बाद, फिर नीद सताती ही नही है।"

सच है, आगम मे चार पुरुषार्थ बताये है—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। उसका क्रम है, अक्रमप्रवृत्ति करने पर जीवन दुखी बन जाता है। प्रथम धर्म पुरुषार्थ करो फिर धर्म सहित धनार्जन कर अर्थ पुरुषार्थ करो, धर्म सहित काम सेवन करो, धर्म सहित मुक्ति को प्राप्त करो। यहाँ धर्म सहित धनार्जन का मतलब है—न्यायपूर्वक धन का संचय करना—"न्यायोपात्तधनम्"।

अन्यायार्जित वित्त दशवर्षाणि तिष्ठति।

प्राप्ते त्वेकादशे वर्षे समूल च विनश्यति॥

अन्याय से अर्जित किया हुआ धन दस वर्ष तक अच्छी तरह टिकता है, पर ग्यारहवे वर्ष मे मूल से नाश कर देता है। अत धर्म सहित धन का अर्जन करना चाहिए। धर्म सहित ही काम सेवन क्यो?

धर्म सहित काम पुरुषार्थ की सिद्धि करने वाला गृहस्थ तीर्थंकर, मुनि, आर्यिका आदि महान रत्नों का जन्मदाता बनता है। तात्पर्य है सयमपूर्वक रहना। विषय-वासना मे अधिक-अधिक लिप्त न होकर सद्गृहस्थ प्रयोजनवशात् मात्र उत्तम संतान की प्राप्ति हेतु ही काम सेवन करे। उत्तम भावनाओ से रहें, दृष्टि को निर्मल बनायें। बडी को मा-बहन की तरह देखे, छोटी को पुत्री समझे।

विषयासक्त चित्ताना गुण को वा न नश्यति।
न वैदुष्य न मानुष्य नाभिजात्यं न सत्यवाक्॥

मुझे एक घटना स्मरण हो आयी—सन् १९८१ मे आचार्य सघ का चातुर्मास गोम्मटेश्वर बाहुबली मे हुआ। अन्य सघ भी वही विद्यमान थे। आचार्यश्री विद्यानन्द जी महाराज का चातुर्मास भी उस समय वही था। दिगम्बर सन्तो का अद्भुत सगम था। ज्ञान की गगा अजस्र बह रही थी। आचार्यश्री का मुस्कराता चेहरा व हर समय मन व मस्तिष्क की ताजगी देखकर मुनि विद्यानन्दजी ने एक दिन आचार्यश्री से कहा—''महाराज जी! आपका मुख सदैव प्रसन्न दिखाई देता है, प्रात भी नीद की झपकी का चेहरा नही लगता, ऐसा लगता है मानो आप कभी सोते ही नही है।''

आचार्यश्री मुस्करा दिये।

मन की परीक्षा व्रत-परिसंख्यान से

आत्मिक शक्ति परिणामो की विशुद्धता से बढ़ती चली जा रही थी। आचार्यश्री की साधना विशेष है। दिगम्बर साधु सिहवृत्ति के धारक होते है। वे किसी के सामने दीनता नही दिखाते है। श्रावक भक्तिपूर्वक, नवधाभक्ति से पडगाहन करता है, तो जाते है, अन्यथा भूखे रहना मजूर है पर याचना नही करते है। नीति है—

रानी तो काते नही जो काते सो राँड।
साधु तो माँगे नही जो माँगे सो भाँड॥

इन्दौर शहर की घटना है। आचार्यश्री आहार चर्या को निकले। व्रतपरिसख्यान बड़ा कठिन ले लिया—जहाँ तीन सुहागन स्त्रियाँ तीन-तीन कलश सिर पर रखकर पड़गाहन करेगी आज वही चर्या करूँगा। कही भी विधि नही मिली। एक दिन, दो दिन बीते, सात दिन, आठ दिन हो गये, कही विधि नही मिल पाई। सारे नगर मे हलचल मच गई। ७-८ दिन तक कड़ी प्रतिज्ञा लेकर इन्द्रियों को वश मे रखना वीरो का काम है। इसीलिए कहा गया है—''जैन धर्म क्षत्रियो का, वीरो का धर्म है कायरो का नही।'' ९ वे दिन जाकर पुण्यशाली गुरुभक्त सेठ श्री कँवरलालजी कासलीवाल के यहाँ आचार्यश्री का निरन्तराय आहार हुआ। कहा है—'चित्र जैनेश्वरी दीक्षा, स्वैराचार विरोधिनी'' जिनदीक्षा में स्वच्छन्दता को कही स्थान नही है।

गोचरी

दिगम्बर साधु शरीर का पोषण करने के लिए कभी भी आहार नही करते है। संयम की साधना, स्वाध्याय, वैयावृत्ति आदि कारणो से आहार करते है। वह भी कैसे? जैसे गाय चारा खाती है मुँह नीचे करके खाती है। घास डालने वाला दीन है या धनी, काला है या गोरा नही देखती है, वैसे ही मुनि की आहार चर्या है, वे नीचा मुँह करके आहार करते है, दाता धनी है या निर्धन, कुरूप है या सुन्दर नही देखते है इसे गोचरी कहते है। गो-आसन से मुनिराज नमस्कार करते है, गो या सरस्वती (जिनवाणी) माता की नित्य वन्दना स्वाध्याय करते है। जो धूलि वेला मे ध्यान करते है, गो के समान सरल प्रकृति के होते है। गाय जैसे बछड़े से प्यार करती है वैसे ही साधुजन साधर्मियो मे (गोवत्स सम) वात्सल्य से रहते है। गाय जिस प्रकार पानी पीते समय पानी को तट पर से पीती है, पानी मे घुसकर उसे गदला नही करती, उसी प्रकार सन्तजन, श्रावक के घर जाकर उतना भोजन कभी नही करते जिससे उनके परिणामो मे मलिनता आये, अर्थात् श्रावक को किसी भी प्रकार कष्ट नही पहुँचाते हुए, अल्प मात्रा में भोजन कर मौनपूर्वक लौट आते है। गाय भोजन करके जुगाली किया करती है वैसे ही, सन्तजन जिनवाणी रस का पान करके निरन्तर तत्त्व चिन्तन रूपी जुगाली से उसका पाचन करते है। धन्य है दिगम्बर सन्तों की अलौकिक चर्या।

गाय को जैसा रूखा-सूखा भोजन या चारा डाल दिया जाता है वह प्रसन्नचित्त हो खा लेती है वैसे ही ये साधुजन श्रावको के घर जाकर नीरस-सरस जैसा भी मिल जाये खाकर तृप्त रहते है। आचार्यश्री आजीवन घी, नमक, तेल व दही चार रसो के त्यागी है। भोजन का राजा नमक कहलाता है। नमक का त्यागी कितना बड़ा त्यागी है, पाठकगण स्वय कल्पना कर सकते है। दिगम्बर साधुओ की चर्या, विश्व के समस्त भिक्षुको से भिन्न व निराली है। यहाँ अभक्ष्य पदार्थो का कभी सेवन नही होता, शुद्ध प्रासुक निर्दोष आहार लेते है—

छियालीस दोष बिना, सकुल श्रावक तने घर असन को।
ले तप बढ़ावन हेतु, नही तन पोषते, तजि रसन को।

हृदय-परिवर्तन

एक दिवस हमने पूछा—"महाराज जी। आप अपने पिता के इकलौते पुत्र थे, सभी के प्यारे भी, वैराग्य का कारण बताइये। बिना कारण के कभी कार्य नही होता है।" आचार्यश्री ने कहा—"माताजी। तीन लोक की लक्ष्मी जिनके चरण चूमा करती है वे तीर्थंकर सभी अपनी माँ के इकलौते ही होते है। देवगण भी जिनकी स्तुति करते है वे भी ससार को छोड़ जगल मे जा बसे, फिर हमारी क्या बात है?"

मैने पुन पूछा—"महाराजजी। बिना कारण के कार्य नही होता, कोई कारण आपके लिए भी अवश्य बना होगा?"

आचार्यश्री—"वैसे हमे ससार के दुखो से प्रारम्भ से ही भय बना रहता था। दुखों से छूटने की चिन्ता हमें सदैव बनी रहती थी। फिर भी एक दिन निमित्त बन ही गया।"

मैने कहा—"कौन-सा?"

आचार्यश्री—"एक दिन मै पिताजी के पास पहुँचा। जमीन को साफ किये बिना ही वहाँ बैठ गया। पिताजी अहिंसा के पुजारी थे। तुरन्त पिताजी के मुख से शब्द फूट पड़े—'कुत्ते भी जमीन साफ करके बैठते हैं।' यद्यपि पिताजी के शब्द सम्बोधनार्थ थे परन्तु सच्चा सम्बोधन जीवन को तिरा गया। पिताजी के शब्दो ने गहरी चोट पहुँचाई—संसार से मुख मुड गया। मेरे द्वारा जीवो की हिंसा हो रही है। ईर्यासमिति का पालन नही हो रहा है, पूर्ण अहिंसा धर्म की खोज मे जीवन मुड़ गया। वैराग्य रस छलछला उठा। हे प्रभो! पूर्ण अहिंसाव्रत का पालक प्राणी मात्र का रक्षक मै कब बनूँगा? उदासीनता ने घर कर लिया। पिता के सच्चे सम्बोधन ने ससार से छुड़ा दिया।"

जन-जन के नेमिचंद

दया, करुणा, सत्य, शिक्षा, दान की लगन आप में प्रारम्भ से ही थी। सन् १९८६ में सघ विहार करते हुए जब जलेसर पहुँचा था, वहाँ की जनता चरणो मे लोट रही थी। एक वृद्ध बाबा ने वहाँ हमे बताया था—"माताजी! आचार्यश्री पूर्व मे कौसमों से जलेसर पढ़ाने आते थे। हमारे बच्चे पढ़ने नही जाते थे तो ये उन्हें अपने नाश्ते के लिए रखा हुआ गुड़ और चना बच्चो मे बाँट देते थे। बच्चे लालच से पढ़ने लगते थे, पर ये स्वय भूखे रह जाते थे। शिक्षा-दान की सच्ची लगन का फल है कि आज इस मानव की कीर्ति विश्व मे फैल रही है। अनेक बार ऐसा समय आता था कि भुवा भोजन का टिफन बनाकर देती, ये सबको बाँट देते। सायकाल को भोजन नही कर पाते। धन्य है! सचमुच महापुरुषो का जीवन परोपकार के लिए ही होता है। आज भी आचार्यश्री की वही स्थिति है। जगह-जगह पाठशालाएँ खुलवाना, श्रेष्ठी-वर्ग को बच्चो की शिक्षा सुविधार्थ दान राशि देने की प्रेरणा करना, सोनागिरि का छात्रावास आपकी ही कृपा का फल है। आप स्वय श्रेष्ठी-वर्ग से उनके भोजन की व्यवस्था कपड़े आदि की सुविधार्थ दान देने की प्रेरणा करते रहते है। आपने अनेक गाँवो व नगरो मे पाठशालाएँ खुलवाई है। अनेक सस्थाएँ आपकी कृपा की ऋणी है।

जन्मभूमि तीर्थस्थली बन गई

सन् १९८६ फिरोजाबाद के चातुर्मास के बाद, गुरुदेव के साथ संघ सहित, पावन भूमि (आ विमलसागर की जन्मभूमि) के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। गाँव मे गुरु महाराज व संघ का पदार्पण विशेष आदर स्वागत सहित हुआ। आश्चर्य तो यह था कि वर्तमान में उस भूमि पर जैन बन्धुओं का कोई घर नही है। फिर भी अजैन बन्धु, हजारों की सख्या में आचार्यश्री के दर्शनार्थ चारो ओर दौड़ रहे थे। उनके हर्ष का पारावार नहीं था। पुराने बन्धु लोग आचार्यश्री को पहचानते थे। 'बाबा! बाबा! हमारे बाबा' कहते हुए, सभी हर्षोल्लास से नाच रहे थे। दरवाजे बनाये गये। सारा नगर सजाया गया।

उस जन्मस्थान को देखने के लिए मन आतुर था, जहाँ इस महामना ने जन्म लिया था। गाँव के लोगों ने वह स्थान हमे बताया, वृद्धों की आँखो मे आनन्दाश्रु छलक रहे थे। जिस स्थान पर जन्म हुआ था उस कमरे

में गाँव के लोगों ने आचार्यश्री का इसी अवस्था (दिगम्बरत्व) का फोटो लगा रखा है। जानकारी करने से मालूम हुआ कि लोग आज भी उस फोटो के सामने प्रतिदिन सायकाल घी का दीपक जलाते है और बाबा को नमस्कार कर अपनी मनोकामनाएँ पूरी करते है। पास ही एक कुआँ है जहाँ से जल निकालकर जिनेन्द्र प्रभु नेमिनाथजी का अभिषेक किया जाता है। जिस स्थान पर बैठकर बाल्यावस्था मे गुरुदेव अध्ययन करते थे, वह ध्यान आदि की साधनास्थली, जिन मदिर के रूप मे, आज भी प्रतिष्ठित है। उस मकान का पिछला भाग खडहर रूप मे पड़ा हुआ है। वह जन्मस्थली तीर्थस्थली के रूप मे आस्था लिये हमारे हृदय मे बस गई।

पार्श्वनाथ के सिर पर सर्प नहीं, बकरे

महापुरुषो के महान जीवन की अनमोल व महत्त्वपूर्ण घटनाओ को आसानी से जान लेना अत्यन्त कठिन काम है। पूछते भी कभी-कभी डर-सा लगता था। यद्यपि परोपकारी महानात्मा स्व के गुण आसानी से कभी बताते नही। हमने प्रारम्भ मे कुछ जानकारी करनी चाही तो आचार्यश्री यही उत्तर देते—''बेटा! मेरे साथ क्या घटना घटेगी? मुझे कुछ याद नही।'' टालमटोल चलता रहा।

एक दिन सिद्धक्षेत्र सोनागिरिजी वन्दनार्थ जाते हुए हमने सविनय प्रार्थना की। हमने पूछा—''महाराज जी, गुनौर मे आपने हिसात्मक कार्य रुकवाया, ऐसे ही मुनि अवस्था मे और भी कोई घटना घटी होगी?''

आचार्यश्री ने कहा—''माताजी! हमे कुछ ध्यान नही। क्या घटना घटती?'' (हमने सोचा आज भी खाली हाथ रह जायेंगी) पर पुण्योदय कहिये या भगवान श्रीचन्द्रप्रभजी की कृपा कहिये—साथ मे गुरुजी के पीछे-पीछे राम के पीछे लक्ष्मण की तरह चलने वाले उपाध्याय भरतसागरजी महाराज ने कहा—''महाराज जी, आप कलुवा पहाड़ की घटना बताते है ना? वहाँ भी तो हिसा को रुकवाया था आपने?'' हमने कहा—''महाराज जी, बताईये क्या घटना है?''

''हाँ, हाँ, हम लोग विहार करते हुए शिखरजी की यात्रा को जा रहे थे कि मार्ग मे 'गया' शहर आया। गया से ४० किलोमीटर दूर बहुत ही रमणीक एक अतिशय क्षेत्र है। यहाँ पार्श्वनाथ प्रभु की अति मनोज्ञ प्रतिमा है। वैसे जमीन को जहाँ खोदो, वही मूर्तिया निकलेगी। कहा जाता है यह वास्तव मे सिद्धक्षेत्र होना चाहिए पर इसका अभी तक निर्णय नही हो पाया। हाँ, यह निश्चित है कि यहाँ पर करीब चौबीसो तीर्थंकरो का समवसरण आकर विराजमान हुआ था। यहाँ वीतराग प्रभुराज की दिव्य-देशना भी हुई थी।''

आगे आचार्यश्री ने बताया—''वहाँ प्रतिवर्ष रामनवमी (चैत्र सुदी नवमी) के दिन पार्श्वनाथजी की प्रतिमा के फण पर बकरो को रखकर काटा जाता था। हमे जब यह जानकारी हुई तुरन्त ही पचायत को बुलाकर यह हिंसात्मक कार्य रोकने के लिए कहा गया। वे कहने लगे—'महाराजजी! हमारे यहाँ लम्बे समय से यह क्रिया की जाती रही है, अब यदि बन्द करेगे और कोई दैवी आपत्ति आयेगी तो क्या करेगे?' हमने कहा—'इसकी जिम्मेदारी मै लेता हूँ। आप इस हिंसक कार्य को छोड दीजिये, आपके गाँव मे आनन्द होगा।' सबने तुरन्त स्वीकृति दी। उसके बाद आज तक वहाँ ऐसा कोई भी हिसात्मक कार्य नही हुआ। अब गाँव मे भी सभी लोग सम्पन्न हो गये है, आनन्द से रहते है।''

गुरु-चरणों में मछली का अर्पण

हमने पूछा—"महाराजजी, विहार मे ऐसे प्रसग तो अनेक बार आये होंगे?"

महाराजश्री—"माताजी! दिगम्बरत्व एक जिनमुद्रा है। वीतराग अवस्था में ऐसी घटनाएँ तो स्वाभाविक है।

इसी समय रास्ते से चलते हुए, परमपूज्य उपाध्यायश्री कहने लगे—"गुरुदेव! आप खण्डगिरि उदयगिरि की घटना भी कई बार शास्त्र के बीच बताते रहते है।" आचार्यश्री जी बोले—"वह तो माताजी भी जानती होगी?"

" नही, इनकी दीक्षा के पूर्व आपने हमे बताई थी।"

सरल स्वभावी गुरुदेव मुस्कराते हुए बोले—"हॉ, हॉ बिहार प्रान्त मे बड़ी दुर्दशा है। खण्डगिरि-उदयगिरि के रास्ते मे हिंसक लोग मछलियाँ हाथ मे लेकर घूमते है।"

उपाध्यायजी ने कहा—"माताजी! आचार्यश्री के मगल दर्शन से सैकड़ो लोगो ने मांस खाने का त्याग किया था। हमारे गुरुदेव ही आज ऐसे निर्बाध साधु है जिन्होंने तीन-तीन बार पैदल भारत-भ्रमण कर सर्व तीर्थो की वन्दना की है तथा जन-जन के हृदय मे धार्मिक चेतना जागृत की है।"

तभी आचार्यश्री ने कहा—"एक दिन तो एक बड़ी मछली हाथ मे लेकर एक महिला रास्ते चलते हुए दौड़कर हमारे पास आई और एकदम चरण छू लिये। मछली भी चरणो मे रख दी। गॉव के लोग बोलने लगे—बाबा! हमको चरण छूने नही देते है। यह तो मास खाती है, इसे चरण कैसे छूने दिये यद्यपि हमने दण्डस्नान किया था।" उन्हे कैसे समझाते! तुरन्त उस बूढ़ी अम्मा को हमने मास छोड़ने की बात कही। उसने मास खाने का तुरन्त त्याग किया। आज भी वहॉ सैकड़ो घर ऐसे है जो पूर्ण शाकाहारी है और मास त्याग से अपने को सुखी मानते है।

प्यासो को पानी

तभी उपाध्यायजी ने बताया—'माताजी! गुनौर की जनता आज भी आकर आचार्यश्री के उपकार को नही भूलती है। बँधा अतिशय क्षेत्र मे कुआँ सूख चुका था। पानी की समस्या थी। सभी लोग बड़े परेशान थे। सभी ने गुरुदेव से सविनय प्रार्थना की। गुरुदेव जल के अभाव मे जिनाभिषेक भी नही हो पाता है, आप हमारा उपकार कीजिये।"

गुरुदेव ने कहा—"घबराओ नही। णमोकार मन्त्र पढ़कर गन्धोदक कुएँ मे डाल दो, बस।" गुरु वचन प्रमाण कर, भव्यात्माओ ने वही किया। गुरुकृपा से कुऑ लबालब पानी से भर गया।

साधु-जीवन के दो शृंगार

एक स्वर्णकार विशाल जगल में खदान के बीच पहुँच गया। स्वर्णकार ने खदान से पाषाण निकाला। पाषाण मिट्टी से लिप्त था। खदान से निकलने के लिए छैनी टाँकी हथौड़ों की चोट सहनी पड़ी, शान की तीक्ष्ण रगड़ खानी पड़ी तब पाषाण निकल पाया। स्वर्णपाषाण लेकर स्वर्णकार बाजार में बेचने पहुँचा। पर किसी ने सही कीमत

नही लगाई। घर लौटकर आया। स्वर्ण को ताव दिया। चौदह ताव देने के बाद भी चौदह कैरेट के नाम से स्वर्ण की पूर्ण कीमत नही लगी। पुन. पूरे सोलह ताव लगाते ही झिलमिलाता स्वर्ण तुरन्त ही सही कीमत पर बिक गया। 'सोलह टच' सोना खरा उतरा। इसी प्रकार जीवात्मा अनन्त गुणो का स्वामी पूर्ण शान्ति का पुञ्ज है, यह भी कर्मकालिमा रूपी कीट्टिका युक्त है—

पयडीसील सहावो जीवगाण अणाइसबधो।
कणयोवले मल वा ताणत्थित सय सिद्ध

कनकोपल के समान जीव अनादिकाल से कर्मकालिमा से युक्त हो रहा है। उस गहन कर्ममल को दूर कर शुद्ध चैतन्य रत्न की प्राप्ति के लिए परीषह और उपसर्ग की सघन चोट जितना अधिक यह जीव खाता है उतना शीघ्र ही शुद्ध चैतन्य प्रभु बनकर निखार को प्राप्त होता है तथा मुक्त होता है।

उपसर्ग व परीषह जैन साधुओ के जीवन के श्रृगार है। ये आत्मा के आभूषण है। उपसर्ग परकृत होते है और परीषह स्वत सहज सहे जाते है। आचार्यों ने उपसर्ग चार प्रकार के बताये—(१) चेतन मनुष्यकृत, (२) तिर्यञ्चकृत, (३) देवकृत और (४) अचेतन कृत। और परीषह बाईस प्रकार के होते है—क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दशमशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शय्या आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल सत्कार-पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन। जैन सस्कृति का इतिहास बताता है कि जैन साधुओ ने उपसर्ग विजेता बनकर आत्मा मे स्थित केवलज्ञानरूपी सूर्य को प्रकाश मानकर स्व-पर का कल्याण किया है।

भगवान पार्श्वनाथ पर देवकृत उपसर्ग हुआ, वे अचल रहे व केवलज्ञान को प्राप्त किया। भगवान बाहुबली, पाँच पाडव, गजकुमार मुनि, सुकौशल, सुकुमाल आदि महान आत्माएँ उपसर्ग विजेता बनकर शाति मे लीन हो गई। इनका नाम लेते ही रोम-रोम पुलकित हो उठता है तथा अपूर्व शक्ति प्राप्त होती है।

इन परीषह और उपसर्ग विजेता साधुओ के दर्शन चतुर्थकाल मे ही नही थे, आज पञ्चमकाल मे भी हमे कदाचित् होते है। यह हमारा अहोभाग्य है। परमपूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज का पूरा जीवन उपसर्गो के बीच व्यतीत हुआ और उनके प्रथम व परम शिष्य आचार्यश्री विमलसागरजी भी उपसर्ग और परीषहो के विजेताओ मे अपना उच्च स्थान रखते हैं।

दो सिंहराजों का मिलन (मिर्जापुर के जंगल में)

मुनिदीक्षा के पश्चात् ही उपसर्गो ने अपना प्रभाव दिखाना प्रारम्भ कर दिया था। एक घटना स्मरण मे आ रही है—एक बार एक ऐलक के साथ आप मिर्जापुर से विहार कर एक जगल मे पहुँचे। रात्रि विश्राम का समय हो गया था, कारण सूर्य अस्ताचल को उन्मुख था। जगल मे ही साधुराज का विश्राम हो गया। एक भक्त श्रावक ने महाराज जी से प्रार्थना की कि इस जगल मे प्रतिदिन शेर आता है। आप कही आगे चलकर विश्राम कर लें तो अच्छा रहे। निर्भीक साधुराज ने कहा—अब तो हम एक कदम भी आगे नही चलेगे। महाराज ध्यान में लीन थे। अर्द्धरात्रि मे सिंह आया। शान्त मुद्रा देखकर सिंह ने नमस्कार किया और शान्त परिणामों से लौट गया। मुकाबला दो सिंहो का हुआ पर विजय तो आत्मार्थी सिंहराज की ही हुई।

श्री सम्मेदशिखर पर्वतराज पर यात्रा करते समय तो कई बार शेर चन्द्रप्रभजी की टोंक, जलमन्दिर, पार्श्वनाथजी की टोक पर मिला, पर ये सिंहराज कभी भी घबराये नही। सिंह सदैव वीतराग सिंहराज के चरणो में मस्तक झुकाकर चला जाता था। निर्ग्रन्थ मुनि की त्याग-तपस्या का अपूर्व प्रभाव होता है।

अजगर चला गया

एक बार मार्ग में चित्ती अजगर मुँह फाड़ते हुए सामने आया। साथ में चलने वाले भक्तगण घबरा गये। फुंकार लगाकर मानो वह डँसना ही चाहता था परन्तु योगीराज की आत्मा, साधनामय प्रखर ज्योति के सामने वह टिक न सका और चुपचाप अन्यत्र खिसक गया। हम आपके इस अपूर्व धैर्य की शत्-शत् वन्दना करते हैं।

सर्प तो मित्र है

आपकी गोद मे सर्प तो कई बार घटो क्रीड़ा करते रहे है, आप बेखबर हो स्वात्मचिन्तन मे लीन रहते है। अकबरपुर चौकी की घटना है। आचार्यश्री सामायिक के बाद कुछ विश्राम कर रहे थे कि सर्प आपके हाथ पर चढ़कर क्रीड़ा करने लगा। आप आत्म-चिन्तन में दत्तचित्त हो गये। सर्प को हटाने पर इसे कष्ट होगा, यह सोचकर उसे हटाने की चेष्टा भी नही की। सर्प आधा घटा तक क्रीड़ा करके मानो गुरुवर के दर्शन को आया था, चला गया।

मानवकृत उपसर्ग

प्रथम गिरनारजी की वन्दना करके आप पावागढ़ पहुँचे तो वहाँ पर भररिया गाँव के निवासी झुण्ड रूप मे आचार्यश्री को मारने आये, पर तपोबल के प्रभाव से नतमस्तक होकर चले गये।

रीछनी दर्शन कर चली गई

बड़वाह सिद्धवर कूट के रास्ते पर है। बड़वाह पहले घना प्रसिद्ध जगल था। जगल मे प्रात सामायिक के समय रीछनी अपने बच्चो के साथ डकारती हुई सामने आई, पर आपका कुछ बिगाड़ नही पायी। शान्तमुद्रा देखकर शान्ति से चली गई।

उनसे कहीं, हमारा दर्द अधिक नहीं है

मैंने पूछा—"महाराजजी। उपसर्गों को आप धैर्य से कैसे सहन करते हैं?"

आचार्यश्री—"सुकुमाल के शरीर को श्यालिनी ने खाया, सुकोशल के शरीर को व्याघ्री ने खाया, हमें तो किसी ने नहीं सताया। वे जगल मे रहते थे, हम यहाँ मकान में रहते हैं। साधुओ को उपसर्ग आने पर सदैव

सुकुमाल और सुकोमल जैसे मुनिराजों का ध्यान करना चाहिए—''

धन्य-धन्य सुकुमाल महामुनि कैसे धीरजधारी।
एक श्यालिनी जुग बच्चाजुत पाँव भख्यो अति भारी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दु ख है, मृत्यु महोत्सव भारी।

दिगम्बर साधुराज गजकुमार मुनि के सिर पर जलती हुई सिगडी रख दी गई। ससुर ने ही जँवाई पर उपसर्ग कर दिया फिर भी शान्तभाव से सहन किया। पाँचो पाडवो को गर्म-गर्म लोहे के कड़े पहनाये फिर भी ध्यान से च्युत नही हुए। वास्तव मे आज हम पर उपसर्ग है ही कहॉ? इसलिए आचार्यश्री बार-बार कहते है—यात्रा करनी है तो सम्मेदशिखरजी की करो और ध्यान करना है तो दिगम्बर साधुओं का करो। दिगम्बर साधुओ के भयावह उपसर्गो के चिन्तन से हमारे द्वारा उपसर्ग सहजता से सहन किए जा सकते है।

अनुभूत परीषह

आचार्यश्री को प्राय शरीर मे बडे बडे फोड़ो का रोग परीषह होता ही रहता है। एक-एक फोड़ा दो-दो महिने तक ठीक नही हो पाता। कठिन परीषह है। पिछले दिनो ग्वालियर मे, हाथ की अँगुली मे बड़ा भारी फोड़ा उठ गया। तीव्र वेदना थी पर चेहरे पर मुस्कराहट थी। फिर सोनागिरजी आते है, नाडी व्रण पीठ मे हो गया। नीबू से भी बड़ा वह व्रण था। देखने वालो की ऑखो मे ऑसू आ जाते थे पर आपके चेहरे पर जरा भी मायूसी नही थी। ऐसी अवस्था मे भी चन्द्रप्रभजी की वन्दना पर्वत पर जाकर करना नही छोड़ा। धन्य है। वास्तव मे, उपसर्ग विजेता का जीवन ही चमकता है।

मैने पूछा—''महाराजजी, फोडे की वेदना तो बहुत तीव्र होगी?''

आचार्यश्री—''हम जहाँ भी फोड़ा हो जाता है वही जिनमूर्ति को विराजमान कर ध्यान करते है। हमे वेदना का परिज्ञान नहीं हो पाता, आनन्द आता है।''

एक दिन रात्रि मे फोड़े के कारण तीव्र वेदना थी। सघस्थ त्यागीवर्ग व भक्तगण चारों ओर बैठे थे। वेदना देखना भी असह्य था। दूसरे दिन आचार्यश्री ने कहा—''माताजी। रात्रि मे वेदना तीव्र थी पर हमने भगवान महावीर स्वामीजी की मूर्ति को वहाँ फोड़े पर विराजमान कर जैसे ही ध्यान किया, वेदना जाती रही।'' जब फोड़ा ठीक हो गया, फिर एक दिन हमने पूछा—''महाराजजी। अब तो करीब-करीब ठीक हो गया है?''

आचार्य—''हाँ। दो माह से मै प्रतिदिन महावीर भगवान की मूर्ति वही विराजमान करके ध्यान करता हूँ। अब तो जायेगा ही।'' महापुरुषो की यही सच्ची औषधि है।

परीषह-विजेता

परीषहों को जीतने में आप निपुण है। अनेक व्रत-उपवास से क्षुधा परीषह, तृषा परीषह जीतते हैं। शीत-उष्ण

की बाधाओ को सहने के अभ्यासी है। जेठ की कड़ी दुपहरी मे भी विहार करते हुए कभी पीडा का अनुभव नही करते और कड़ी ठडी मे प्रात पहाड़ पर पर्वतराज की वन्दना करते खेदखिन्न नही होते है। बाल ब्रह्मचारी है, स्त्री-पुरुष मे समता दृष्टि रहती है। सत्कार-पुरस्कार या तिरस्कार से आपको कोई प्रयोजन नही। इतनी मजबूती आ चुकी है कि मार्ग चलते हुए यदि काँटा लग भी गया तो निकालने की परवाह नही रहती है या तो वह काँटा ही आपके चरणो से घिस जाता है या स्वय गलकर पिघल जाता है, आपका कुछ बिगाड़ नही करता है।

ऐसे दिगम्बर सन्तराज के दर्शन मिलने पर भी यदि कोई कहे, आज सच्चे साधु नही मिलते है तो उससे बड़ा कोई मिथ्यात्वी नहीं है। कलि काल है, चित्त चलायमान है, शरीर अन्न का कीड़ा बना हुआ है। ऐसे समय में जिनरूप के धारी दिगम्बर साधु आज भी पाये जाते है, यही आश्चर्य की बात है। दो रोटी के टुकड़े के लिए साधुओ की परीक्षा मत करो। वे साधु है या असाधु, तुम तो गृहस्थ धर्मानुसार दान देकर पुण्य कमा लो।

> काले कलौ चले चित्ते देह चान्नादिकीटके।
> एतच्चित्र तदद्यापि जिनरूपधरा नरा ॥१॥
> भुक्तिमात्रप्रदाने तु का परीक्षा तपस्विन ।
> ते सन्तोऽसन्तो वा गेही दानेन शुद्धयति॥२॥ (यशस्तिलक)

कोई कितना भी विरोध करे, पञ्चमकाल के अन्त तक उपसर्ग परीषह विजयी, सच्चे सन्त मिलेगे। यदि नहीं है तो एक समय के लिए भी कोई आकर नाग्न्य परीषह सहन कर चौराहे पर खडा हो जाये और अपनी सत्यता बताये—

> दमकता है सोना तपने के बाद,
> रग लाती है मेहदी घिसने के बाद,
> चमकता है हीरा तरशने के बाद,
> रग लाता है जीवन परीषह के बाद।

हर मर्ज के कुशल वैद्य

अपाय विचय धर्मध्यान के नेता आचार्यश्री की अलौकिक चर्या की चर्चा सारे भारत मे है। बहिरात्मा, ससारी जीव सबको अपने समान देखते है। लौकिक चर्या मे रत जीव अलौकिक चर्या क्या जाने? अलौकिक चर्या से अनभिज्ञ उसे चर्चा का विषय बनाकर स्वय ठगे जा रहे है। स्वय कुछ जानते नही, और दूसरे की मानते नहीं। एक छोटा सा कथानक है। एक राजा की सर्वगुणसम्पन्ना राजपुत्री थी। विवाह के योग्य होने पर उसने कहा—जो लड़का १०० गुणो मे सर्वसम्पन्न होगा, उसी से शादी करूँगी अन्यथा कुँआरी रहूँगी। राजा मत्री सभी चिन्तित हो गये। खोज चालू हुई। सर्व १०० गुण सम्पन्न वर कही नही मिला। खोजते-खोजते मत्री एक राजपुत्र के पास पहुँचा। उसने कहा मुझमे ९८ गुण मौजूद है १०० तो नहीं। मन्त्री ने सोचा, चलो दो गुण कम वाला भी मिल गया तो ठीक है, राजकुमारी को समझा देंगे। राजपुत्र को लेकर मन्त्री राजपुत्री के समीप आया। कहने लगा—राजकुमारीजी, १०० गुणों वाला कोई योग्य वर नहीं मिला है, यह ९८ गुणों से सम्पन्न है। राजकुमारी

ने कहा—ठीक है कोई बात नही, दो गुण ही तो कम है, परन्तु मै यह जानना चाहती हूँ कि राजपुत्र मे दो गुण कौन से कम है? राजपुत्र से पूछा गया, तब राजपुत्र ने कहा—वैसे तो ९८ गुणों से सम्पन्न मुझमे सिर्फ दो ही कमियाँ है—प्रथम तो मै कुछ जानता नही हूँ और दूसरी किसी की मानता नही हूँ। राजकुमारी ने कहा—ऐसे आप जैसे मूर्खों से तो मैं कुँआरी ही ठीक हूँ। यही दशा आज के जीवो की है। स्वय आगम का एक शब्द जानते नही है और दूसरे समझाये तो उसको मानते भी नही है।

बन्धुओ। जिस समय निकट भव्यात्मा जीव तीर्थंकर केवली या श्रुतकेवली के पावन चरणारविन्दो में सोलह कारण भावनाओ को भाता है तब उसके परिणामो मे इतनी कोमलता दयार्द्रता आती है कि रोम-रोम से करुणरस झरने लगता है। अपायविचय धर्म्यध्यान की प्रमुख भूमिका मे एक धारा बहती है—"हे प्रभो, संसार के जीव दुखो से पीड़ित है, भयभीत है, मै कौन-सा उपाय करूं कि इनका दुख दूर हो जाये" इस प्रकार पर का दुख स्वय का बन कर उमड़ पड़ता है। अनुकम्पा गुण की अजस्र धारा फूट पडती है। ऐसी दशा मे ही वह जीव तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करता है।

इसी प्रकार ससार के दु खो से भयभीत दुखी तनरोगी, मनरोगी, धनरोगी जीव पुन-पुन आचार्यश्री के चरणो मे अनुकम्पा की भीख माँगते हुए अपनी झोली फैलाये आश्रय मे आते है। जगल मे भीड़ जमा हो जाती है। ये महात्मा ही भारत के एकमात्र ऐसे सन्त है जिन्होंने दुखियो को सन्मार्ग बताकर दुखो से छुटकारा दिलाया है।

मूलाचार मे आचार्य कुन्दकुन्द लिखते है—ससारी जीव रोगी है। हमारे रोग का उपचार करने वाले सच्चे वैद्य आचार्य परमेष्ठी है, और रोग है—जन्म-मरण, राग-द्वेषादि। औषधि है—जिनभक्ति।

दिन मे एक बजे कतार खडी रहती है। तन रोगी, मन रोगी, धन रोगी सभी जीव उपचार की औषधि पूछते है। शाति का उपाय पूछते है। आप सोचेगे वैद्य है तो अस्पताल खोल लेते, ज्योतिषी है तो कुण्डलियाँ बनाकर, आजीविका करते, पर ये सब क्या है? आखिर आप क्या करते है? रोगी को अपना रोग बताना भी नही पड़ता, मुँह देखकर, चेहरा देखकर ही दुख का वर्णन कर देते है। न किसी का हाथ देखते है और न किसी की कुण्डली। परिणामो की निर्मलता से दूसरे के दुखो का ज्ञान कर लेते है, उसे अनुकूल औषधि देते है।

क्या कोई औषधि देते है? नही-नही। सम्यक् औषधि का पान कराते है, आइये कुछ नुस्खे आपको भी बता दे—

प्रथम मरीज—"आचार्य महाराज। नमोस्तु। मेरी परिस्थिति बहुत खराब है, धधा बिल्कुल नही चलता है, कोई उपाय बताइये?"

आचार्यश्री—"भैया। सबसे पहले तो तुम सप्त व्यसन का त्याग करो, और रात्रि भोजन करते हो ना?"

"नही, महाराज।" डरते-डरते वे बोले।

"झूठ बोलते हो?"

"हाँ, हाँ महाराज। कभी-कभी कर लिया करता हूँ। पर अब कभी नही करूँगा।"

"ठीक है। रात्रि मे भोजन नही करना। णमोकार मन्त्र के सवा लाख जाप्य लाल कपड़े पहनकर करना। सब

सकट दूर हो जायेगा। दसवाँ हिस्सा दान निकालते रहना।'' आचार्य की वाणी मे मृदुता, वात्सल्य तो है ही। बस, पहला मरीज सच्चा जैनी बन गया।

दूसरा मरीज—''महाराज जी। मन मे अशाति बहुत रहती है, हमेशा आर्तध्यान चलता रहता है।''

आचार्य—''चिन्ता न करो। रोज मन्दिर जाते हो?''

''नही, महाराज जी।''

''तो रोज मन्दिर जाने का नियम करो और पीले कपड़े पहनकर णमोकार मन्त्र के सवा लाख जाप्य करो। सारी चिन्ताएँ मिट जायेगी।'' भक्त ने गुरु आज्ञा शिरोधार्य की।

इस प्रकार अनेक दुखी जीव गुरु चरणो मे जाकर तृप्त होते है। विधिवत् क्रिया करने से जाप्यादि अनुष्ठान से असाता या पाप का उदय पुण्यरूप मे बदल जाता है। जीवो को शान्ति और सुख की प्राप्ति होती है।

एक व्यक्ति हमसे पूछने लगा—''आचार्यश्री दिन भर श्रावको से घिरे रहते है, अपना कार्य कब करते हैं?'' सम्यक्त्वकौमुदी मे वर्णन आया है—

> यस्य चित्त द्रवीभूत कृपया सर्वजन्तुषु।
> तस्य ज्ञान च मोक्षश्च कि जटाभस्मचीवरै ॥

जिसका चित्त दया से द्रवीभूत रहता है उसी के ज्ञान और मोक्ष प्राप्त होता है। ''परोपकाराय सता विभूतय '' सज्जनो की विभूति परोपकार के लिए है।

यथार्थत पहले आत्म-कल्याण करना चाहिए, फिर यदि शक्य है तो परहित अवश्य करना चाहिए। सामान्यत लोग सोचते है परहित करने वाले स्वहित से दूर रहता है, पर ऐसा नहीं है, जिसने स्वहित किया है वही परहित कर सकता है। बिना स्वहित के परहित की क्षमता कभी आती नही है। सम्यक्त्वकौमुदी ग्रन्थ मे आचार्य लिखते है—

> दुष्पूरोदर-पूरणाय पिबति स्रोत:पति वाडवो,
> जीमूतस्तु निदाघसभृत जगत्सतापविच्छित्तये।
> क्षुद्रा सन्ति सहस्रश स्वभरण-व्यापारमात्रोद्यमा ।
> स्वार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेक सतामग्रणी॥

मात्र अपना पेट भरने मे उद्यम करने वाले क्षुद्र मनुष्य हजारों है, परन्तु परोपकार करना ही जिसका स्वार्थ है ऐसा सज्जनो मे अग्रसर एक-विरला ही होता है। दुख से भरने योग्य उदर को पूर्ण करने के लिए वड़वानल समुद्र को पीता है परन्तु मेघ गर्मी से परिपूर्ण जगत् का सन्ताप दूर करने के लिए जल ग्रहण करता है।

आचार्यश्री की निरन्तर यही भावना रहती है कि ससार के सभी प्राणी सुखी हो, सभी नीरोग हो, सभी कल्याण को प्राप्त हो, किसी को भी किसी प्रकार का दुख नही प्राप्त हो। जो वह सोचते हैं—परचिन्तारत साधु स्व की सिद्धि कैसे करते है? देखिये, आचार्यश्री का स्वहित का समय कौन-सा है—

या निशा सर्वभूताना, तस्या जागर्ति सयमी।
यस्या जागर्ति भूतानि, सा निशा पश्यतो मुने ॥

जिस समय संसार सोता है, उस समय आचार्यश्री अध्यात्मरस का पान कर आत्मोत्थान मे क्रीड़ा करते हैं। समीप मे रहने वाला ही इनकी अलौकिक चर्या का अनुमान लगा सकता है। ७५ वर्ष की उम्र में भी प्रमाद की कणिका भी, इनको प्रभावित नही कर पायी है। सायकाल सामायिक के पश्चात् अल्पनिद्रा लेकर ही इनका सबेरा हो जाता है। अर्द्ध रात्रि की सामायिक के पश्चात् स्वाध्याय जाप्य आदि मे तन्मय हो जाते है। रात्रि भर बिना किसी सहारे के अपना सारा कार्य बिना किसा प्रमाद के उत्साहपूर्वक करते है। उस समय वहाँ कोई ढोल भी पीटे तो इन्हे कोई प्रयोजन नही रहता है। पदस्थ ध्यान की इनके जीवन मे अपनी विशेषता है। अनेकानेक मंत्रो का जाप्य करते हुए परिणामो की विशुद्धता को प्राप्त करते है। पश्चात् आपने एक ऐसी सुन्दर रील बनाकर मनरूपी टी.वी पर लगा रखी है कि एकाग्रता का बटन दबाते ही तीन लोक के कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयों के चित्र सामने स्पष्ट झलकते है। प्रतिदिन दो घटे तक सभी क्षेत्रो, तीर्थो के भावपूर्वक गुण-स्मरण तथा नमस्कार व स्तुति उच्चारणरूप द्रव्यपूर्वक, भाव-वन्दना करते है। पञ्चपरमेष्ठी की वन्दना, नवदेवताओ की वन्दना, स्तुति भक्ति करते हुए साधना सिद्धि को प्राप्त करते है। वन्दना पद्धति देखकर तो ऐसा लगता है मानो पहले आचार्यश्री ने क्षेत्रो की परिक्रमा दी थी अब ये सारे तीर्थक्षेत्र ही इनकी परिक्रमा दे रहे है। सत्य है "अलौकिक पुरुष की अलौकिक वृत्ति" होती है। 'रात्रिभर स्वहित और दिन मे परहित'।

आज मानव जीवन चारो ओर दुख से सतप्त दिखाई दे रहा है। दुखो की शान्ति के लिए चारो ओर दौड़ लगा रहा है। ऐसे समय मे, सत्यमार्ग को दिखाने वाले कोई सन्त है तो एकमात्र आचार्य विमलसागरजी। कई जीवो ने आपकी शरण मे आकर विश्राम किया है।

कई लोग भ्रान्त धारणाएँ लिये हुए है—दिगम्बर साधु को मन्त्र या दुनिया के प्रपञ्चो से क्या मतलब है? सत्य है आपका कहना भी। परतु साधु और श्रावक ये एक गाड़ी के दो पहिये है। साधु जब तक सदाचार का मार्ग दिखाता रहेगा, श्रावकाचार बना रहेगा। जब तक साधु है, श्रावक है तभी तक मोक्षमार्ग है। इन दोनो का सबंध सिन्धु और बिन्दु के समान है। समुद्र मे से एक बिन्दु निकलते ही सूर्य की किरण पाकर सूख जायेगी, पर समुद्र मे रहने पर सैकड़ो सूर्य भी इसे नही सुखा सकते है।

मन्त्र या तन्त्र कोई भी गलत नही है।

श्रीपालचरित्र मे कथानक आता है कि जिस समय रत्नमजूषा के पिता विवाह योग्य वर की खोज मे थे, मुनिराज से पूछा—"गुरुदेव! मेरी पुत्री का विवाह कब, किससे होगा?" गुरुदेव अवधिज्ञानी थे, उन्होंने कहा—"श्रेष्ठी! जो यह सहस्त्रकूट चैत्यालय बहुत समय से बन्द है, जिस महापुरुष के आगमन से इसके द्वार खुल जायेगे, वही तुम्हारी पुत्री का योग्य वर होगा।" प्रथमानुयोग भरा पड़ा है साधुओ के उपकारों से—मैनासुन्दरी को शान्ति का मार्ग, भयकर कुष्ट रोग-निवारण का मार्ग जगल मे किसने बताया? दिगम्बर साधु ने।

फिर आज आ विमलसागरजी के लिए हमे बाधा क्यों है? मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र द्वादशाग के अग है। जो इन्हे नही मानता वह जिनवाणी का सम्यक् प्रकार से परिशीलन नही कर सका है, ऐसा समझना चाहिए। अपायविचय

धर्म्यध्यान के महानेता के चरणों में जो भी आता है, उसका सकट दूर हो जाता है। सन्मार्गदिवाकर पद की शोभा इसी से है। हम लोग किसी भी ग्राम में विहार करते हुए पहुँचते है, आचार्यश्री ग्रामवासियों की स्थिति देखकर उन्हे बुलाकर कहते है—भैया! प्रतिदिन जिनाभिषेक किया करो। जिनपूजा के समान दूसरा पुण्य नही है। पास मे बुलाकर श्रावकों को सन्मार्ग मे लगाना सामान्य पुरुष के हाथ की बात नही है। पंडित मक्खनलालजी शास्त्री जीवन के अन्तिम समय मे गुरु-स्तुति लिखते-लिखते आचार्यश्री को 'सन्मार्ग-दिवाकर' की पदवी से विभूषित कर, स्वर्ग को प्रयाण कर गये। कविता व कलम वही पड़ी रह गई।

परमपूज्य आचार्यश्री करुणामूर्ति है। आचार्यश्री ने अपनी अनुकम्पा से असंख्य जीवों का उपचार कर उनका दु ख दूर किया है, उन्हे सन्मार्ग दिखाया है। आपने जैन-अजैन बन्धुओ में कृपा-प्रसाद लुटाया है तथा जैन तीर्थो का जीर्णोद्धार, जिनवाणी का प्रचार-प्रसार करवाकर जैन सस्कृति का जो उद्धार किया है इसके लिए जैन सस्कृति आपकी ऋणी रहेगी।

शुभाशुभ क्यों?

'पद्मनन्दीपञ्चविशतिका' ग्रन्थ मे श्री पद्मनन्दी आचार्य ने लिखा है—

> बिम्बादलोन्नतियवोन्नतिमेव भक्त्या,
> ये कारयन्ति जिनसद्म जिनाकृति वा।
> पुण्य तदीयमिह वागपि नैव शक्ता,
> स्तोतु परस्तु किमु कारयितुर्द्वयस्य॥२०॥

भव्यजीव इस ससार मे भक्तिपूर्वक यदि छोटे से छोटे बिम्बा-पत्ते के समान जिनमन्दिर तथा यव के समान जिन-प्रतिमा को भी बनवाये तो उस मनुष्य को भी इतने पुण्य की प्राप्ति होती है कि साक्षात् सरस्वती भी उसका वर्णन नही कर सकती किन्तु जो मनुष्य ऊँचे-ऊँचे जिन मन्दिर तथा जिन प्रतिमाओ का निर्माण कराने वाले है उनको तो फिर अगम्य पुण्य की प्राप्ति होती ही है।

मैंने पूछा—"महाराजजी! वर्तमान मे देखा जाता है, जिन भव्यात्माओ ने बड़े-बड़े विशाल मदिर बनवाये, उनके वश के वश नष्ट हो गये। दरिद्री बन गये अथवा गाँव-के-गाँव ही उजड़ गये। इनका क्या कारण है?"

आचार्यश्री—"माताजी! जिन-मन्दिरों और जिन-प्रतिमाओं का निर्माण वास्तुकला शास्त्र के आधार से होना चाहिए। यदि विधिवत् निर्माण नही होता है तो हानि होती है। सत्य तो है कि जिन-मदिर, जिन-प्रतिमा बनवाने वाला, पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा कराने वाला जीव महान पुण्यार्जन करता है, तथा उसका वंश खुशहाल रहता है। तथा निकट भव्यात्मा शीघ्र मुक्तात्मा बन जाता है। पर सारी शिल्पकला वास्तुविधान के अनुसार होना आवश्यक है।"

हम लोग आचार्यश्री, उपाध्यायश्री के साथ पर्वतराज की वन्दना को जा रहे थे, सहसा मन मे प्रश्न उठ गया। मैंने पूछा—"महाराज जी! पर्वत पर कई जिनबिम्ब वास्तुविधान के प्रतिकूल हैं, क्या उनके हानि नही है?"

महाराज—"जी हाँ। हानि तो है ही। पूजक व बनाने वाले दोनो को हानि होती है।"

मैने पूछा—"फिर आप-हम सभी वन्दना तो करते है?"

आचार्यश्री—"मूलनायक सही होने से, अन्य प्रतिमाओ का इतना प्रभाव नही पड़ता अत प्रतिष्ठित प्रतिमाओ की वीतराग छवि मे साक्षात् प्रभु की कल्पना कर पूजा-वन्दना करना चाहिए।"

मैने पूछा—"महाराज जी। प्रतिमा और मदिर की वास्तुकला मे विशेष बातें क्या देखी जाती हैं?"

आचार्यश्री—"प्रतिमा प्राचीन समय मे दस ताल की बनती थी। आजकल तो नौ ताल की बनती है। इससे विशेष हानि कुछ नही है। विशेष रूप मे प्रतिमा साङ्गोपाग होनी चाहिए। दृष्टि खुली व नासाग्र होनी चाहिए। नाभि ठीक बनी होनी चाहिए। तथा हृदय पर श्रीवत्स का चिह्न आवश्यक है।"

आगम में सर्वत्र वर्णन पाया जाता है—मूर्तियाँ बनाने वाले व बनवाने वाले को तथा प्रतिष्ठाचार्य को सर्वप्रथम आगम का अवलोकन अच्छी तरह से करना चाहिए। बिना आगम को देखे कोई भी कार्य करोगे तो हानि होगी। आगम में ध्वजा, शिखर, मदिर, वेदी, मूर्ति आदि के सारे नियम लिखे है। प्रतिष्ठापाठों को ध्यान से पढना चाहिए।

प्राचीन आचार्यों की प्रतिष्ठाविधि मे कॉट-छॉट करने का आज के विद्वानो को कोई अधिकार नही है अन्यथा सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर वर्ष का दर्शनमोहनीय का बध होगा। अनत ससार में परिभ्रमण करना पड़ेगा। बहुत सोच समझकर कार्य करना चाहिए। यह कोई गुड्डा-गुड्डी का खेल नही जो मनमानी करते रहो। सोचो-विचारो, चिन्तन करो—आगम के अनुसार चलना ही बुद्धिमानो के लिए उत्तम मार्ग है।

कभी-कभी लोग लकीर के फकीर बन जाते है। एक बार की घटना है। आचार्यश्री ने बताया—"मै छोटा था। धोती-कुर्ता पहने मंदिर-दर्शन को गया था। एक मूर्ति मदिर मे अचानक गिर गई। वहाँ कोई नही देख, मैने तुरन्त उठाकर सही जगह विराजमान कर दी। लोगो ने अचानक देख लिया। मुझे दूर तक मारने आये। क्यो? आपने बिना धुले कपड़े से मूर्ति को कैसे छू लिया? अरे उस समय कोई था नही, कपड़े देखता या मूर्ति, जिनदेव का अविनय देखता? शुद्धिप्रकरण मे लिखा है—ऐसी कोई अशुभ क्रिया या मूर्ति की अशुद्धि हो जाय तो ११ कलशो, २१ कलशों से जिनाभिषेक मत्रोच्चारण पूर्वक करने से मूर्ति शुद्ध हो जाती है। पर यदि उठाओ ही नही तो कितना गलत कार्य होगा।"

ऐसी ही एक घटना इन्दौर में हो गई। वहाँ किसी समय स्फटिकमणि की डेढ-डेढ़ फुट की चौबीस भगवान की मूर्तियाँ थीं। पापोदय से मदिरजी मे आग लग गई। भीषण प्रकोप था। मुसलमानो का उपद्रव था। फिर भी कई मुसलमानो ने कहा—आप कहो तो, आपकी मूर्तियाँ निकाल दे। अज्ञानतावश जैनियो ने कहा—आप मुसलमान हो, हमारी मूर्तियाँ नही छू सकते। तेईस मूर्तियाँ जल गई। भगवान चन्द्रप्रभ की एकमात्र मूर्ति बच रह गई जो आज भी शक्कर बाजार तेरापथी मदिर, इन्दौर मे विराजमान है। कैसी अज्ञानता है? समझ मे नही आता। कही तो क्रियाकाड मे ही लोग फँस गये है और कही क्रियाकाड का बिल्कुल लोप हो गया है। सत्य तो यह है—क्रिया सहित, धर्म और स्वय की रक्षा करना आवश्यक है। आचार्यश्री ने कहा—हमारे आचार्यों ने दो मार्ग बताए है—उत्सर्ग मार्ग और अपवाद मार्ग। उत्सर्ग मार्ग द्वारा स्व की व आयतनो की रक्षा करना ठीक है पर कभी-कभी ऐसा मौका आ जाए तो अपवाद मार्ग अपनाकर भी जिनायतनो की रक्षा करनी चाहिए। शुद्धिकरण विधि, प्रायश्चित विधान इसीलिए तो बताए गए है।

आचार्यश्री आशीर्वाद मुद्रा मे।

आचार्यश्री आहार लेते हुए, साथ में हैं संघ संचालिका ब्र चित्राबाई दिगे, कोल्हापुर।

आचार्य श्री विमलसागरजी अपने शिष्योंके साथ।

केशलोच का एक दृष्य, आचार्यश्री स्वय अपने
शिष्यो का केशलोच करते हुए।

आर्यिका १०५ श्री नन्दामती माताजी पूज्य आचार्यश्री की सुशिष्या

आर्यिका १०५ श्री आदिमती माताजी पूज्य आचार्यश्री की सुशिष्या

ब्र छोटेलालजी
(उपा श्री भरतसागरजी)
को क्षुल्लक दीक्षा देते
हुए आचार्यश्री

सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर क्षु दीक्षा की प्रार्थना करते हुए ब्र ऐरावती पाटनी, इन्दौर,
(वर्तमान मे आ स्याद्वादमती माताजी)

मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र पर ऐलक सिद्धान्त सागरजी को दीक्षा सस्कार करते हुए आचार्यश्री।

हस्तिनापुर मे क्षुल्लक श्री मोतीसागर को दीक्षा देते हुए आचार्यश्री।

प्रसन्न मुद्रा मे बैठे हुए आचार्यश्री।

आचार्यश्री मुनि श्री विष्णुसागरजी को मुनिदीक्षा के सस्कार करते हुए।

आचार्यश्री क्षुल्लक १०५ श्री चैत्यसागरजी को मुनिदीक्षा के सस्कार कराते हुए (सम्मेदशिखरजी १९९३)

संघ संचालिका ब्रह्मचारिणी चित्राबाई दिगे पूज्य आचार्यश्री का पड़गाहन तथा आहार देते हुए।

भगवानका नित्य पचामृत अभिषेक के दर्शन करते हुए आचार्यश्री अपने शिष्यो के साथ,
सघ सचालिका ब्र चित्राबाई दिगे अभिषेक करती हुई।

आहार लेते हुए आचार्यश्री

स्वाध्याय के पश्चात् श्रुत भक्ति करते हुए आचार्यश्री एव शिष्यगण।
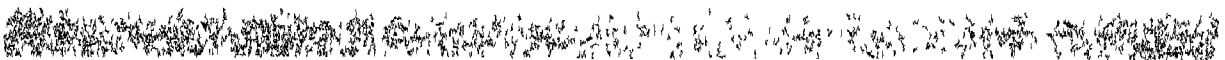
प्रतिक्रमण करते हुए आचार्यश्री, उपाध्यायश्री और संघ

आशीर्वाद की विभिन्न मुद्रा मे
आचार्यश्री।

आचार्यश्री विभिन्न मुद्राओ मे।

आचार्यश्री केशलोच करते हुए।
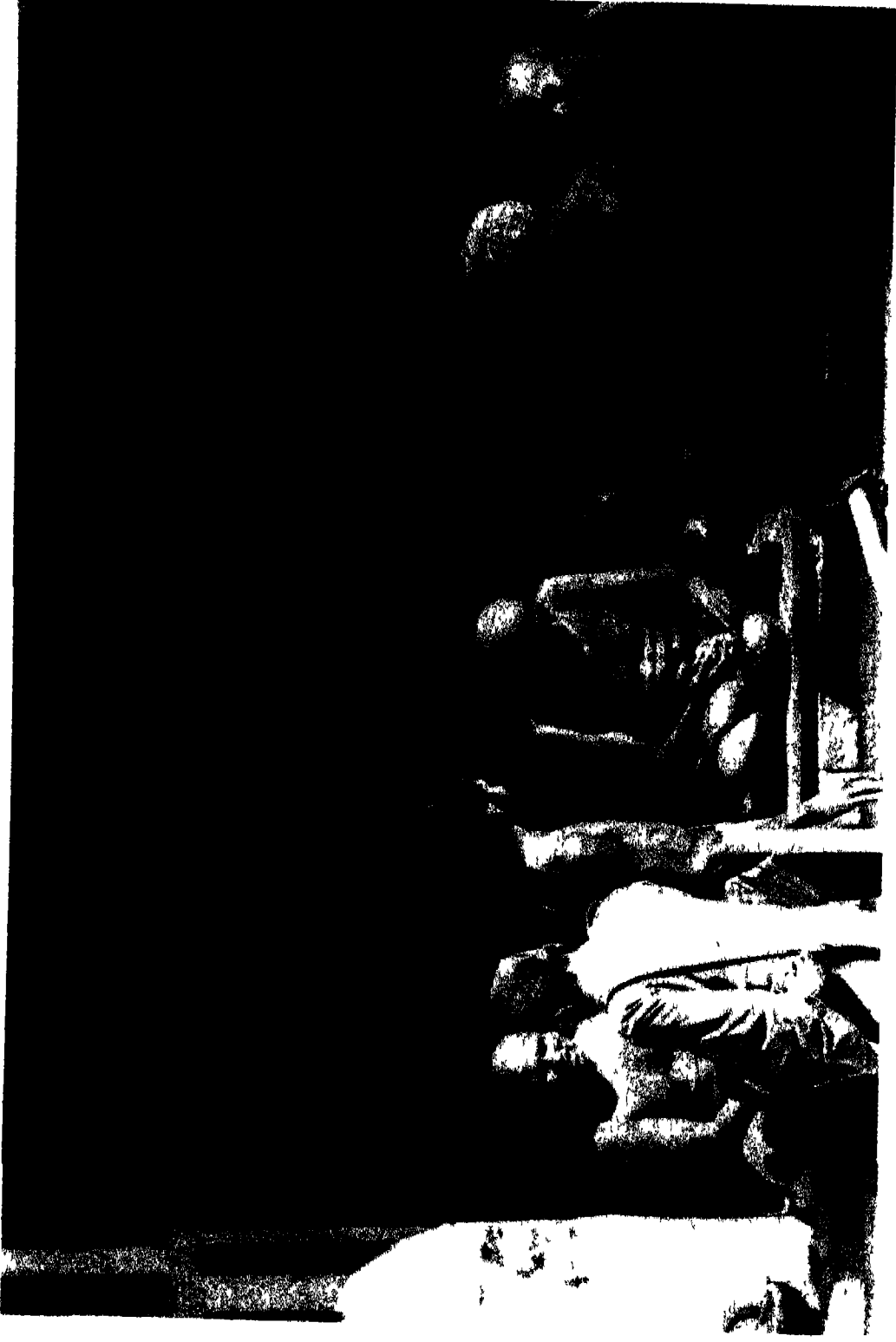
मुनिगणोको गधोदक देते हुए आचार्यश्री (श्रवणवेलगोला महामस्तकाभिषेक १९८१)

आचार्यश्री अपने विशाल संघ के साथ (जयपुर)
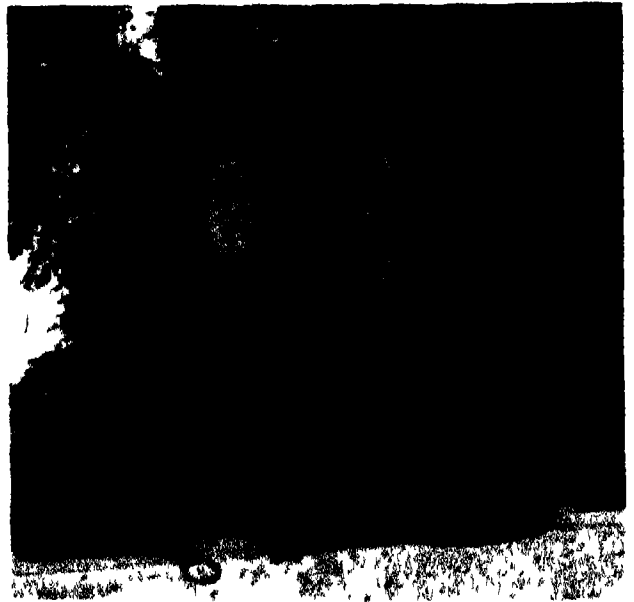
आशीर्वाद मुद्रा मे आचार्यश्री।

मैने पूछा—"महाराजजी। प्रतिमाजी विराजमान करते समय किस बात का ध्यान रखना चाहिए?"

आचार्यश्री—"प्रतिमाजी की दृष्टि बाहर दूर तक स्पष्ट व सीधी जानी चाहिए। दूसरी बात प्रतिमाजी का कोई भी अग दरवाजे से कटना नहीं चाहिए।"

मैने पूछा—"इससे हानि क्या है?"

आचार्यश्री—"प्रतिमाजी का जो अङ्ग दरवाजे से कट रहा है, विराजमान करने वालो के उसी अग मे पीड़ा होगी। जैसे—यदि दृष्टि कट रही है या मूर्ति अन्धी है तो विराजमान करने वाले के घर में दृष्टिदोष होगा, अन्धे होंगे, गाँव उजड़ जायेगा, मदिर मे लडाई-झगड़े विशेष होंगे। शान्ति नही रहेगी। यदि पैर कट रहे है तो विराजमान करने वालो के घर मे पैरो की पीडा, लँगड़ापन आदि होंगे।"

प्रश्न—"महाराजजी। आप कई तीर्थो और गाँवो मे कही वेदी नीची कराते है, कही मूर्ति मे पुन सूर्य मत्र देते है, कही दरवाजा बड़ा करवाते है, क्यो? अभी बीसपथी कोठी में अनतनाथजी की वेदी नीची कराई।"

उत्तर—"वास्तु विधान शास्त्र के प्रतिकूल वेदी आदि का निर्माण पूजक के लिए हानिकारक होता है। वेदी अधिक ऊँची और दरवाजा छोटा होने पर नियम से भगवान की दृष्टि कटती है, ऐसी स्थिति मे मदिर का उत्थान व पूजक का उत्थान नही हो पाता है।

कई स्थानो पर मूर्ति मे आँखे नही रहती है उससे गाँव के लोगो पर बुरा प्रभाव पड़ता है। वश में भी अन्धापन आता है अत ऐसी प्रतिमाओं मे ऑख बनवाकर पुन प्रतिष्ठित करके सूर्य मन्त्र दिया जाता है।

प्रश्न—"ऐसे कितने स्थान है जहाँ आपने सुधार करवाया?"

उत्तर—"माताजी। हमे तो ध्यान नही रहता है, इससे हमे क्या करना? कार्य सिद्ध होना चाहिए।"

इसी समय गुरु के पीछे-पीछे सदैव चलने वाले पूज्य श्री उपाध्यायजी ने बताया—ऐसे अनेक स्थान है जहाँ लोग दुखी होकर प्रार्थना करते थे और आचार्यश्री ने सब सुधार करवाया। जैसे—आरा में एक परिवार वालो ने विशाल मदिर बनवाया। प्रतिष्ठा के बाद वहाँ सभी बच्चे अन्धे होते गये। कई विराजमान करने वाले भी अन्धे हो गये थे। पुण्य योग से आचार्यश्री विहार करते हुए आरा पहुँचे। सेठजी ने अपनी करुण कहानी आचार्यश्री के सामने श्रद्धापूर्वक कही। आचार्यश्री ने तुरन्त उत्तर दिया—"तुम्हारे मन्दिर मे मूलनायक भगवान अधे है। उनकी आँख नही होने से सब हानि हो रही है।"

तुरन्त कारीगर बुलवाया गया। दोनों ऑखे बनवाई गई। चमत्कार देखिए, आचार्यश्री ने सूर्यमन्त्र दिया। दृष्टि खुलते ही वहाँ के दो व्यक्तियो को नेत्र-दृष्टि मिल गई। अब वश मे कोई सतान अन्धी नहीं होती।

इसी प्रकार शिखरजी मे, पार्श्वनाथ मूलनायक के चक्षु नही थे। दृष्टि खुलवायी गयी। प्रतापगढ़ के पास शान्तिनाथ अतिशयक्षेत्र मे, शान्तिनाथजी की प्रतिमा सांगोपाग व विशाल है, पर चक्षु नही थे। अत सारा परिवार दुखी हो गया। गाँव पूरा उजड़ गया था। आचार्यश्री के निर्देश से चक्षु बने और अब सब ठीक है। बीकानेर, महू, बड़नगर आदि कई स्थानों में इसी प्रकार का पवित्र कार्य कराके आचार्यश्री ने जैन समाज का बहुत बड़ा उपकार किया है। झालरापाटन में विशाल शातिनाथजी की प्रतिमाजी है। वहाँ देहरी अधिक ऊँची होने से प्रतिमाजी के पैर दृष्टिपथ

से कट रहे थे। गाँव मे पहुँचते ही लोगो ने कई दुखद घटनाएँ बताई, आचार्यश्री ने वहाँ भी सुधार करवाया।

प्रश्न—"महाराजजी! क्या एक बार प्रतिष्ठित हुई मूर्ति को पुन टाँची लगवाकर सूर्यमन्त्र देने में दोष नही लगता है?"

उत्तर—"यदि मूर्ति मे कमी है तो उस कमी को निकालने के लिए टाँची लगवाकर पुन प्रतिष्ठित करवाकर सूर्य-मन्त्र देने मे कोई दोष नही है। पर यह कार्य विशेष आचार्यो का ही है। सूर्यमत्र देने का अधिकार मुनियो का है पडित को सूर्यमत्र देने का अधिकार नही है। आचार्यश्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज बार-बार कहते थे—"पडितो ने सारा प्रतिष्ठापाठ बदल डाला। प्रतिष्ठाविधि आज के पडित जानते ही नही। सही कहो, तो मानते भी नही। क्रियाकाड को तो ढोग बताते है।"

प्रश्न—"महाराजजी! क्या पहले पडित दृष्टिदोष को नही जानते थे?"

उत्तर—"जानते थे, पर ध्यान नही रखते थे।"

प्रश्न—"प्राचीन काल मे मुसलमानो के आक्रमणो के भय से भी अनेक मदिरो मे दरवाजे छोटे-छोटे रखे गये होगे। जैसे बुन्देलखड मे अहार जी, पपौराजी, खजुराहो आदि मे दरवाजे छोटे ही है। सभी दरवाजो से जिनेन्द्रदेव की दृष्टि कटती नजर आती है।"

उत्तर—"भय से भी किया हो पर हानि तो है ही। सुरक्षा की दृष्टि उनकी थी। पर आप ही सोचिये, महाराष्ट्र मे नेमगिरि का विशाल मदिर है, सुन्दर मनोज्ञ मूर्तियाँ है, पर दृष्टि कट रही है अत आज ये दशा है कि वहाँ अभिषेक करने वाला भी नही रहा। जबकि भारी बस्ती थी। नगर के नगर उजड गये। अहारजी मे पहले बड़ी बस्ती थी अनेक साधु सघ आकर रहते थे। शुद्ध आहार हर समय उपलब्ध था। आज कोई बच्चा वहाँ नही दिखता है। इसी प्रकार पपौरा, झालरापाटन आदि अनेक गाँवो की स्थिति है। अजमेर के एक मदिर मे जिन सेठजी ने प्रतिमा विराजमान की वह इतनी नीची है कि सारा घर दरिद्र हो गया। सारे विधि-विधान आचार्यों ने लिखे है। पर क्या करे? आज तो लोग यह कह देते है कि वीतराग प्रतिमा, कही भी कैसे भी रखो कुछ नही होता। ऐसे लोगो से क्या कहे?"

उपाध्यायश्री ने बताया—"कई गाँवो मे ऐसे भी लोग है जिनसे आचार्यश्री स्वय कहते है, भैया! सुधार कर लो, उद्दण्ड लोग मानते ही नही। वे यह सब बाते व्यर्थ ही समझते है। निमित्त-नैमित्तिक सबध आचार्यों ने बताया है, उसे अवश्य स्वीकार करना चाहिए।"

आचार्य श्री—"माताजी! जो मदिर पर ध्वजा फहराता है उसकी कीर्ति जगत् मे फहराती है।"

प्रश्न—"गुरुदेव! ध्वजा का मानदण्ड क्या है?"

उत्तर—"ध्वजा शिखर से एक से डेढ हाथ ऊँची होनी चाहिए।"

प्रश्न—"शिखर से इससे कम हो तो क्या हानि है?"

उत्तर—"कम होने पर मानहानि, अपकीर्ति आदि प्राप्त होते है।"

मैंने पूछा—"महाराजजी, आपने अपने जीवन मे अनेकानेक विधान करवाये है। सिद्धचक्र बृहद् विधान जैसा आप करवाते है, वैसा सामान्यत दृष्टि-गोचर नही होता। ऐसे विधान कितनी बार करवाये हैं?"

आचार्यश्री—"हम तो विधान मे बैठकर गुणानुवाद करते हैं। श्रावक लोग अपना द्रव्य खर्चकर पुण्यार्जन करते है। जबसे हमने मुनि-दीक्षा ली है तभी से एक वर्ष मे दो बार तो सिद्धचक्र विधान होता ही है। यह सब महावीर भगवान की कृपा है।"

बन्धुओ! आचार्यश्री की भक्ति, शक्ति इतनी विलक्षण है कि वर्णन करना दुष्कर है। मैंने देखा है—अष्टाह्निका पर्व मे, अत्यल्प एक या दो घटे निद्रा लेते है, विशेष जाप्यादि करते है तथा दिन मे प्रतिदिन के मंत्र बोलते हुए भी नही थकते है। विधान हमेशा मूल सस्कृत वाला ही होता है। एक-एक द्रव्य आठ से हजार बार तक चढ़ता है। अन्तिम दिन हजारो मन्त्र की आहुतियाँ होती है। सभी मन्त्र आप बोलते है, थकते नही।

मैंने एक बार पूछा भी था—"गुरुदेव! इतना बोलते हुए थकान नही आती है?"

उत्तर मे आचार्यश्री ने कहा था—"माताजी! हम बोलते नही, मन्त्रो के द्वारा सिद्ध भगवान की आराधना करते है। आराधना से आत्मिक शक्ति प्राप्त होती है, थकने का काम ही क्या है?"

प्रतिवर्ष अनेक शान्तिविधान, सहस्रनामविधान तथा ऋषिमडल, पचपरमेष्ठी विधान, इन्द्रध्वज विधान आदि आपके चरण-सान्निध्य मे भक्तगण विधिवत् करवाते है तथा मन मे एक विशेष प्रकार की शान्ति का अनुभव करते है।

जयपुर मे आपके सान्निध्य मे एक विशाल इन्द्रध्वज विधान श्री सेठ श्रीपाल राजेन्द्रकुमार जी ने करवाया। विधान मे सभी नये पीतल के ४५८ मदिर, नवीन प्रतिष्ठित जिनबिम्ब, और उन पर ध्वजाएँ, बड़े-बड़े पचमेरु अतिशोभायमान हो रहे थे। भारत के कोने-कोने से आकर भक्तगण सराहना करते थे कि ऐसा इन्द्रध्वज विधान हमने इससे पहले कभी नही देखा।

धन्य हैं गुरुदेव। आपके महान उपकार, समदृष्टि, अनुपम जिनभक्ति महिमा हमारे जीवन का आदर्श बने।

फिर मैंने पूछा—"महाराजजी, अरहत भगवान की मूर्ति कैसी बननी चाहिए?"

आचार्यश्री—"अरहत भगवान की मूर्ति के लिए तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थ मे वर्णन आया है कि अरहंत प्रतिमा अष्टप्रातिहार्य सहित व यक्ष-यक्षिणी सहित होनी चाहिए। अकृत्रिम चैत्यालयो मे भी एक सौ आठ, एक सौ आठ मगल द्रव्य, धूपघट आदि सर्व परिकर सहित ही प्रतिमाएँ पाई जाती है।"

मैंने पूछा—"गुरुदेव! सिद्ध प्रतिमा का स्वरूप कैसा होना चाहिए?"

आचार्यश्री—"सिद्ध प्रतिमा आठ प्रातिहार्य व चिह्न आदि से रहित मानी गई है।"

प्रश्न—"यदि एक भी प्रातिहार्य हो तो?"

उत्तर—"तो वह अरहत की ही मानी जायेगी।"

प्रश्न—"आजकल सिद्ध प्रतिमा पोलाकर बनाई जाती है, यह ठीक है या नही?"

उत्तर—"ऐसी प्रतिमा बनाने का आगम मे कहीं भी वर्णन नही है। आजकल पडित लोग मनमानी करते है।

आगम को तोड़-मोड़कर रख दिया है। ये तो अभी-अभी सौ-डेढ सौ साल से ही चल गया है।"

प्रश्न—"सिद्धो की प्राचीन प्रतिमा कैसी पाई जाती है?"

उत्तर—"बड़वानी, दहीगाँव और गोम्मटेश्वर बाहुबली आदि कई स्थानो पर सैकड़ो वर्ष पुरानी सिद्ध प्रतिमाजी आज भी है। सभी मात्र आठ प्रातिहार्य रहित है पोलाकर नही।"

श्रीवत्स

आचार्य महाराज ने एक दिन हमें बताया था-हमारे गुरुदेव महावीरकीर्ति महाराज से हमारे सबध में कोई जाकर कहता तो वे सदैव कहते-विमलसागर को मैने ऐसे शुभ मुहूर्त में दीक्षा दी है कि वो इस युग में धर्म की महान प्रभावना करेगा।

उसका श्रीवत्स चिह्न उसकी महान निर्भयता का प्रतीक है। वह किसी से डरने वाला नही है, धैर्यशाली है, उसे किसी की चिन्ता नही है, वह धर्म के बडे-बडे कार्य करेगा।

बीज गुरुने बोया फल हमने खाया

एक दिवस सामूहिक स्वाध्याय के मध्य आचार्य महाराज ने बताया-पूज्य गुरुदेव महावीरकीर्तिजी महाराज जिस किसी गॉव में विहार कर रहे थे, नियम दे रहे थे, "सम्मेदशिखर की यात्रा जो करेगा उसी से आहार लूँगा।" हजारों लोगों ने गॉव-गॉव में यह नियम लिया और आचार्य महाराज को आहार दिया। गिरनारजी से शिखरजी की ओर आने की भावना उनकी थी पर काल ने हमारे गुरुदेव को हमसे छीन लिया।

आचार्यश्री गुरुदेव शिखरजी नही पहुँच पाये। भक्त प्रतिक्षा की घड़ियॉ गिन रहे थे, कब महाराजश्री वहाँ पहुँचे और हम यात्रा को जाये। पर सबका मन फीका पड गया। गुरुदेव बीच मे ही चले गये।

जिन-भव्यात्माओं नें महाराजश्री से सम्मेदशिखर जी की यात्रा के लिए नियम लिया था वे हजारों की सख्या में यात्रा (वन्दना) करने पहुँच रहे थे।

तीर्थंकर प्रकृति का बीज

आचार्य महाराज बता रहे थे- हमारे शिक्षा गुरुदेवश्री आ सुधर्मसागरजी महाराज सतत एक श्लोक का उच्चारण किया करते थे-

> प्रध्वस्तघातिकर्माण केवलज्ञानभास्करा ।
> कुर्वन्तु जगता शान्ति वृषभाद्या जिनेश्वरा ॥

तीर्थंकर प्रकृति का बीजभूत यह मत्र प्राणीमात्र के कल्याण की भावना से सरचित है। वे कहते थे- "हे भगवान। सर्वजगत् में शान्ति करो, (सिर्फ मुझे ही नही)।" यही विशाल भावना तीर्थंकर प्रकृति का बीज है।

स्वप्न में फलों का ढेर

आचार्यश्री ने एक दिन बताया था- जिस समय सोनागिरजी सिध्दक्षेत्र पर हमारी दिगम्बर दीक्षा होने वाली थी, रात्रि स्वप्न में फलों के ढेर ही ढेर मैंने अपने सामने लगे देखे और निद्रा खुल गई।

आचार्यश्री का यह स्वप्न आज तक सार्थक हो रहा है। आज भी आचार्यश्री जहाँ भी जाते है, आपके सामने ताजे फलों का ढेर लग जाता है।

स्वप्न में आधा फल ही मिला

एक दिन आचार्यश्री ने बताया- एक रात मैंने स्वप्न में देखा कि मै गुरु महावीरकीर्ति महाराज से फल माँग रहा हूँ, पर बहुत प्रयत्न करने पर भी आचार्यश्री मुझे पूरा फल नही दे रहे है। फल यह हुआ कि मैंने आचार्य गुरुदेव से साक्षात जाकर मुनि दीक्षा माँगी पर बहुत माँगने पर भी आचार्यश्री ने मुझे आधाफल, क्षुल्लक दीक्षा ही दी।

मैं श्रुतस्कध लेकर जा रहा हूँ, मार्ग में जाते हुए किसी ने मुझे रोक दिया, मै आगे नही जा पाया। मेरी निद्रा खुल गई।

स्वप्न का मैंने यह अनुमान लगाया-मुझे स्थान-स्थान पर श्रुतस्कन्ध बनवाने चाहिए। अब सब जगह नही तो इस पावन तीर्थराज पर तो बन ही जाये ऐसी भावना से मैंने यहाँ आते ही अपनी भावना व्यक्त की। कमेटी ने शीघ्र स्वीकृति दे दी।

स्वप्न में चाटा पड़ा

आचार्य महाराज ने अपनी एक पुरानी घटना बताई कि एक बार मक्खनलालजी आदि विद्वान लोग आये। सबने कहा- ''गुरु महाराज, काल विकराल है, समय को देखते हुए आपको अब शूद्र जल का त्याग कराकर आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा छोड़ देनी चाहिए। मात्र थोड़ा भर त्याग कराइये।''

मैंने स्वीकृति दे दी।

अब क्या हुआ? रात्रि में स्वप्न में किसी ने आकर मुझे डाँटते हुए कहा कि हमारे बड़े-बडे लोगों ने कितने परिश्रम से इतना सुधारा है और तुम बिगाड़ रहे हो। मुझे जोर से एक चाटा गाल पर मारा। मेरी निद्रा खुल गई।

मैंने निर्णय किया कि मैं बड़े आचार्यो के द्वारा निकाली गई त्याग परपरा को कभी भी नहीं बिगाड़ूँगा।

पंडित मक्खनलालजी को मैंने बात बताई। उन्होंने क्षमा माँगी।

स्वप्न मे वन्दना

आचार्यश्री ने बताया-स्वप्न में प्राय हम आकाश में उड़ते हुए बडी-बड़ी चट्टानों, पर्वतों को भेदते हुए, नदियों को पार करते हुए बिना किसी रोक-टोक के दूर तक चले जाते है और विशाल जिनमंदिरों के दर्शन करके लौट आते है।

आपने यह भी बताया कि स्वप्न में सम्मेदशिखरजी व मागी-तुगी तीर्थराज की वन्दना तो हम अनेक बार करते है। पार्श्वनाथ भगवान की टोंक पर आत्म-चिन्तन भी करते रहते है।

अशुभस्वप्न

हमने पूछा था- ''गुरुदेव। आप अहमदाबाद पहुँचने के पूर्व मार्ग में अत्याधिक बीमार हो गये थे, आपको इसकी पूर्व सूचना अवश्य स्वप्नादि के माध्यम से मिली होगी।''

आचार्य महाराज ने बताया- ''हमें बीमारी की सूचना प्राय किसी-न-किसी रूप में मिल ही जाती है। स्वप्न में कई बार मै तालाब, नदी या गहरे पानी में घुस जाता हूँ फिर निकल नही पाता हूँ-इससे निर्णय निकालता हूँ कि अभी रोगग्रस्त रहूँगा। पुन स्वप्न में तालाब-नदी या गहरे पानी में घुसकर फिर पानी से बाहर निकलता देखता हूँ-इससे अब शरीर को निरोगता होगी, ऐसा निर्णय निकालता हूँ।

अहमदाबाद पहुँचने से पहले-पहले फूलगॉव में रोग ने भयकर जकड़ा था। उसके तीन दिन पूर्व हमने एक भयानक स्वप्न देखा था, वह था-मै ऊँचे पहाड पर चढकर बैठा हूँ। यहॉ चार बन्दर मुझे खाने के लिए आये, चारों गुर्रा रहे थे। मैने उन्हें कहा-आओ, किसकी ताकत है, एक पीछी दिखाई, बस, वो चारों भाग गये।

इससे हमने निर्णय किया था, शरीर में मृत्यु को लाने वाली भयकर पीडा आयेगी पर जाप्यादि के करने से वह टल जाएगी।''

अन्तिम आशीर्वाद

आगे हमने पूछा- गुरुदेव। ''आचार्यवर श्रीमहावीरकीर्तिजी महाराज की समाधि हुई, उस समय भी आपको सूचना मिली होगी।''

आचार्य गुरुदेव ने बताया- ''माताजी। गुरु महाराज समाधि होने के पूर्वक्षणों में स्वप्न में हमारे पास आये थे, मुझे उन्होंने भरपूर आशीर्वाद दिया और कहा- ''विमलसागर। होशियार रहना, किसी से डरना नही। इतना कहकर वे आकाश मार्ग से चले गये।'' पश्चात् जब समाधि के समाचार मिले तब ज्ञात हुआ गुरुदेव मुझे अन्तिम आशीर्वाद देकर चले गये।''

आचार्य महाराज ने बताया- ''आज भी आचार्यश्री सुधर्मसागरजी महाराज व आचार्य गुरु महावीरकीर्ति महाराज मुझे स्वप्न में सचेत करते रहते है।''

स्वप्न में समवसरण

फिर हमने पूछा- "गुरु महाराज! समवसरण की भव्य रचना के पूर्व भी कुछ शुभ शकुन हुआ होगा।"

गुरुदेव ने बताया- "स्वप्न में हमने देखा था कि हम बड़े विशाल पर्वत पर बैठे हैं, पर्वत पर समवसरण लगा हुआ है। इससे हमने निर्णय निकाला था; पर्वत राज सम्मेदशिखर पर समवसरण की रचना होगी।"

आचार्यश्री ने आगे बताया- "संघ जब विहार करता हुआ श्री सम्मेदशिखरजी पहुँचा तो आर्यिका पार्श्वमतीजी इस कार्य में जुड़ी हुई थी। हमारे पहुँचते ही माताजी ने समवसरण की रचना का सारा भार हम पर डाल दिया। रचना बनकर तैयार हो गई। यह सारी कल्पना तो सच में माताजी की ही थी। बीज माताजी ने डाला, फल हमने पाया।"

बच्चों से प्यार

आचार्यश्री को छोटे बच्चों से बहुत प्यार है। जब भी कोई बालक आचार्य महाराज के दर्शनों के लिए आता है तभी आचार्यश्री उससे पूछते है- दीक्षा लोगे, मुनि बनोगे। यदि वह हाँ कर देता है तो आनन्द का ठिकाना नही रहता, उस बालक को पीछी से उसी समय बहुत-बहुत आशीर्वाद देते है।

एक दिन की बात है, एक छोटा बालक महावीरजी क्षेत्र पर आया। आचार्यश्री सघ सहित भगवान महावीर जी के मदिर में पहुँचे। महाराजजी ने परिक्रमा शुरू की।

वह बच्चा रूसकर बैठा हुआ था।

आचार्यश्री उससे बोले- "चलो उठो। क्या छोरी जैसे रोते हो। आओ मेरे साथ, चलो भगवान की परिक्रमा करे।" बच्चे ने तुरत आचार्य महाराज की अँगुली पकड़ी और तीन परिक्रमा पूरी की।

वह बच्चा जब तक महावीर जी में रहा, प्रतिदिन सुबह ५ ३० बजे आ जाता और आचार्य महाराज की अँगुली पकड़ कर परिक्रमा देता। आचार्य महाराज को बहुत आनन्द आता था।

सोनागिर वन्दना के समय भी हमने देखा, एक ६ वर्षीय बच्चा आचार्य श्री की अँगुली पकड़े चन्द्रप्रभ भगवान की वन्दना करने एक माह तक प्रतिदिन जाता रहा।

आचार्यश्री उससे कहते- "बोलो- ॐ ह्रीं।"

बच्चा बोलता- 'ॐ ह्रीं।'

फिर 'अनन्तानन्त परमसिध्देभ्यो नम? मन्त्र बच्चे को बुलवाते हुए आचार्यश्री की वन्दना पूरी हो गई।

दीक्षा देने वाला आहार भी देगा

एक दिन, एक भाई से महाराज ने कहा- "दीक्षा ले लो।" उस व्यक्ति ने कहा- 'सभी को दीक्षा दोगे तो आहार कौन देगा।'

आचार्यश्री ने कहा- "भैया। जिसने दीक्षा दी है वही आहार भी देगा।"

फिर एक दिन किसी ने आचार्यश्री से कहा- आप इतनी-इतनी दीक्षाएँ देते जा रहे हैं, इन सबको रोटी कौन देगा?

आचार्यश्री ने कहा- "भैया। जिस दीक्षा से मुक्ति मिलती है, उससे भुक्ति नही मिलेगी क्या? अवश्य मिलेगी।

"

स्मरणशक्ति

आचार्यश्री की स्मरणशक्ति कितनी प्रबल है, यह भी एक आश्चर्य है। कई भक्त आपके चरणों में निरन्तर आते रहते है। दूर-दूर से आने वाले भक्तो के बारे में तथा उनके परिवार आदि के विषय में सब कुछ बता देते है।

अपूर्व धैर्य

एक बजे से दो बजे तक तन-दुखी, मन-दुखी व धन-दुखी जीव आपके चरणों में दुख दूर करने की औषधि पूछने आते है। कई बार एक साथ हजारों व्यक्ति की कतार लगी रहती है पर सिर्फ एक घंटे में ही सबको उनके अनुकूल उत्तर देकर, मत्र-यत्र-तत्र देकर आप उन्हें सतुष्ट करते है।

हँसी-हँसी में त्याग का उपदेश

एक दिन एक व्यक्ति महाराज के पास बैठा था। गुरुदेव आचार्यश्री ने उससे कहा- "दीक्षा लोगे या ऐसे ही चले जाओगे?" शब्द सुनते ही वह व्यक्ति चरणो में पड गया और त्याग भावना से कुछ स्वल्प व्रत लेकर चला गया।

प्राय आचार्यश्री लोगों से कहा करते है- "सोच लो, दीक्षा ले लो, नही तो सिर में डडे खाने पड़ेगे। कैसे? घर में मरोगे तो, तुम्हारा बेटा खोपडी पर श्मशानभूमि में डडे मारेगा, दीक्षा ले लोगे तो किसी के डडे नही खाने पड़ेगे।"

गुरु-प्रसाद का वितरण

गुरु-प्रसाद से प्राप्त निमित्त रूपी विधि को आप अकेले नही पचाना चाहते। इस निमित्त विद्या को बाँटने के लिए भद्रबाहुसहिता नामक ग्रन्थ मे वर्णन आया है। इस महान ग्रन्थ मे आचार्यश्री ने अष्टाङ्ग निमित्तों का विस्तृत विवेचन किया। 'मूलाचार' मे भी आठ निमित्त इस प्रकार बतलाये है—

वजणमग च सर छिण्ण भूम च अतरिक्ख च।
लक्खण सुविण च तहा अट्ठविह होई णेमित्त॥४४९॥

(१) मशक, तिल आदि व्यञ्जन है, (२) शरीर के अवयव अग है, (३) शब्द को स्वर कहते है, (४) खड्ग आदि का प्रहार अथवा वस्त्रादि का छिन्न होना फट जाना यह सब छिन्न है, (५) भूमि विभाग को भूमि कहते हैं, (६) सूर्य ग्रह आदि के उदय-अस्त सम्बन्धी ज्ञान को अन्तरिक्ष कहते है, (७) नन्दिकावर्त, पद्मचक्र आदि लक्षण है और (८) सोते में हाथी, विमान, भैंसे पर आरोहण आदि देखना स्वप्न है।

इन अष्टाग निमित्त के द्वारा शुभाशुभ फलो का ज्ञान, आचार्यश्री विमलसागरजी ने परमपूज्य स्व आ सुधर्मसागरजी महाराज के आशीर्वाद से प्राप्त किया है। वर्तमान मे आप निमित्तज्ञान मे प्रसिद्ध, भारत देश के एक मात्र साधु है। प्रश्नकर्ता प्रश्न भी नहीं कर पाता है, आप उत्तर दे देते है। चिह्नो के आधार पर ही आप जीवो के शुभाशुभ आसानी से कह देते है। अपने स्थान पर बैठे-बैठे आप देश-विदेश की बातो को इसी ज्ञान के बल से जान लेते है।

एक बार एक व्यक्ति आया—''महाराजजी। हमारे गॉव मे मदिर बनवाया जा रहा है पर प्रतिदिन झगड़े हो रहे है, काम नही हो पाता।''

आचार्यश्री ने कहा—''भैया। तुम्हारा मदिर टेढ़ा बन रहा है, सही कराओ। दूर गॉव का दृश्य उनकी आँखो में प्रत्यक्ष झलक गया था।''

इसी प्रकार इन्दौर मे सेठ देवकुमारसिंह जी के घर चैत्यालय की मूर्तियाँ चोरी चली गई। दौडे-दौडे वे आचार्य श्री के पास गोम्मटेश्वर बाहुबली क्षेत्र के पास हासन मे आये।

प्रश्न—''महाराजजी। हमारी सारी मूर्तियाँ चोरी चली गई है। मिलेगी या नही?''

आचार्यश्री ने कहा—''भैया। चोर तो मिल जायेगा कोशिश करने पर, किन्तु आपको लाभ नही मिलेगा। चोर ने सारी मूर्तियाँ लेकर गला दी हैं।''

देवकुमारसिंह जी इन्दौर पहुँचे। कोशिश की। चोर का पता लग गया। मूर्तियाँ माँगने पर उसने वही उत्तर दिया। 'मैं जिस दिन ले गया था उसी दिन मैंने सारी मूर्तियाँ गला दी।'' सभी मूर्तियाँ चॉदी की थी।

शास्त्रो के माध्यम से हमने आज तक यह जाना था कि जैन साधुओ के तपोबल मे इतना अतिशय होता है कि उन्हे ऋद्धियाँ उत्पन्न हो जाती है। फिर उनकी वाणी से जो निकलता है वही सत्य होता है तथा उनका निर्मल ज्ञान प्रभावना का कारण बनता है। इस भारत वसुधरा का अहोभाग्य है कि ऐसे अशान्तिमय समय मे भी, दिगम्बर साधु को ही नही, अपितु परिणामो की विशेष निर्मलता से जिन्हे मानों विशेष सिद्धियाँ प्राप्त हुई है तथा जिनके चमत्कार को देखकर सारे भारत का जनमानस टकटकी लगाए हुए है, ऐसे आचार्यश्री के दर्शन हमे आज प्रत्यक्ष प्राप्त हो रहे है।

आपका बैद्धिक, मांत्रिक ज्ञान-चमत्कार बहुत उच्चकोटि का है। मन्त्रशास्त्रो पर आपका पूर्ण अधिकार है। स्वरज्ञान का आपको विशेष बोध है। आपके निमित्त-ज्ञान के सामने किसी का वश नही चल पाया है। मनुष्य के चेहरे को देखकर ही उसकी अन्त करण में उमड़ती भावना का आप सहज ही तुरन्त अनुमान कर लेते है। आपके तत्सम्बन्धी कथन प्राय सभी सत्य होते है।

सन् १९६१ मे आचार्यश्री श्रीसम्मेदशिखरजी से राजगृही की ओर विहार कर रहे थे कि आपकी दृष्टि अचानक आकाश की ओर गई। सहसा बिजली चमकी। बिजली चमकते ही आचार्यश्री ने निमित्तज्ञान से जाना और कहा "इस वर्ष ऐसी घोर बाढ आयेगी कि गाँव के गाँव बह जायेगे।" ठीक दो माह बाद पटना, आरा, खाना धानी आदि गाँवो मे इतनी भयकर बाढ आयी कि लोगो के घर उजड़ गये। बेघरबार लोगो को हवाई-जहाज के माध्यम से भोजन पहुँचाया गया। पन्द्रह दिन तक भयकर बाढ़ रही।

स्पष्ट भविष्यवक्ता

आचार्यश्री शिखरजी मे थे। एक बार आपके दर्शनार्थ राय साहब सेठ चाँदमल जी, गोहाटी वाले पधारे। आचार्यश्री ने उनसे कहा कि आप दो प्रतिमा के व्रत ले लीजिये। परन्तु सेठ जी ने कहा अभी नही ले सकूँगा। मै महावीर निर्वाणोत्सव पर दिल्ली मे व्रत लूँगा, जिससे अन्य जनता पर भी त्याग-धर्म का प्रभाव होगा। आचार्यश्री ने स्पष्ट रूप से कह दिया—व्रत तो जाने दो, तुम उस समय वहाँ नही पहुँच पाओगे। सेठजी को उस समय गहरी चोट लगी। वे बोले, "आप कैसे कह रहे है, मै तो २५०० वे निर्वाणोत्सव का अध्यक्ष हूँ, कैसे नही जाऊँगा?" आपने कहा—"आगे की बात मै कुछ नही कहूँगा, यदि अभी व्रत ग्रहण करना चाहते हो तो कर लो, अन्यथा अव्रती अवस्था मे ही तुम्हारी समाधि हो जायेगी।" पर सेठजी ने स्वीकृति नही दी। फलत २५०० वे निर्वाणोत्सव के ठीक एक माह पूर्व सेठ सा जयपुर म स्वर्गवासी हो गये।

करुणा के सागर

एक बार राजगृही मे एक बुढिया, महाराजश्री के चरणो में आई। वह अन्य-मतावलबी थी। बोली—"गुरुदेव मेरा इकलौता पुत्र गुम हो गया है, मिलेगा या नही? ह्रदय फट रहा है, मेरा आधार टूट रहा है।" महाराजश्री तो वात्सल्यमूर्ति है, करुणासागर है, दुखियो के दुख दूर करने मे सतत् प्रयत्नशील रहते है। परोपकार तो आपका विशेष महत्त्वपूर्ण गुण है ही। यही कारण है कि आपके चहुँ ओर सदैव एक मेला-सा लगा रहता है। आचार्यश्री कहने लगे—"माँ जी, तुम रविवार को नमक मत खाओ, पानी छानकर पियो तथा रात्रि-भोजन कभी नही करो। तुम्हारा पुत्र मेरे इस चातुर्मास मे ही वापिस आ जायेगा।" ठीक एक माह पश्चात् माँ जी का पुत्र सकुशल घर लौट आया। माँ-बेटा दोनो ने अणुव्रत ग्रहण किये। आज भी वह माँ जी आचार्यश्री के चरणो मे श्रद्धारूपी पुष्प अर्पण करने आती रहती है।

एक बार, एक सेठजी महाराजश्री के पास आये और पूछने लगे—"मुझे फलाँ व्यापार मे लाभ होगा या नही?" आचार्यश्री कहने लगे—"यदि तुझे लाभ होगा तो क्या तू सिद्धचक्र विधान करायेगा?"

सेठजी कहने लगे कि यदि मुझे एक लाख रुपये का लाभ हुआ तो मै अवश्य सिद्धचक्र विधान कराऊँगा। गुरुवाणी खिरी—"अरे! तू क्या कहता है, जा एक लाख रुपयो का लाभ तो तुझे कल ही हो जायेगा।" सेठजी घर पहुँचते है, बर्तनो के व्यापारी थे, बर्तनो के भाव बढ गये, उन बर्तनो मे सेठजी को तत्समय ही सवा लाख

रुपयों का लाभ हो गया। यह गुरु आशीर्वाद एव उनकी वाणी का फल प्राप्त कर सेठजी ने, जो कभी मन्दिर भी नहीं जाते थे, सिद्धचक्र महामडल विधान बहुत उत्साह एव ठाट-बाट से कराया। यह है आचार्यश्री की रहस्यमयी, अनुपम वात्सल्यमयी वाणी का प्रभावपूर्ण चमत्कार।

एक बार, सेठ रिखबचन्द जी नीरा वाले आकर महाराजश्री से कहने लगे—"मेरे पास पैसा आता तो है किन्तु टिकता नही है।" आचार्यश्री ने कहा—"घबराओ नही। मै तुम्हे एक यत्र देता हूँ जिससे तुम्हारे घर मे अटूट सम्पत्ति रहेगी। तुम उसे अपने गल्ले मे रखना। तुम्हारे द्वारा जैन धर्म की अतिशय प्रभावना होने वाली है। सेठजी ने घर जाकर यत्र को गल्ले मे रख दिया तथा अपने समस्त कीमती जेवर भी उसी मे रख दिये। एक दिन कर्मोदय से सेठजी के घर मे चोर घुस गये, उनकी सारी सम्पत्ति तो ले गये किन्तु उस गल्ले को चोरो ने हाथ भी नही लगाया। यह देखकर सेठजी दग रह गये। उन्होने सोचा, सारी महिमा आचार्यश्री के द्वारा प्रदत्त यत्र की है। उसी समय उन्होने प्रतिज्ञा की कि गल्ले मे जितना धन है वह सारा मै धार्मिक कार्य मे लगाऊँगा। तभी से इनकी सम्पत्ति अटूट बढ़ती जा रही है। ऐसा कोई क्षेत्र नही जहाँ पर इन्होंने अपनी सम्पत्ति का उपयोग नही किया।

निमित्त-ज्ञान ने एक निधि की रक्षा की

सन् १९६१ मे एक मासूम बालक ने १९ वर्ष की अल्पायु मे आचार्यश्री से क्षुल्लक व्रत की दीक्षा ली। नाम था शान्तिसागर। कर्म ने पलटा खाया। छोटे से बालक पर उपसर्ग का पहाड़ टूट पड़ा। क्या हुआ? सुनने, पढ़ने व मनन करने लायक घटना है।

क्षु शान्तिसागर की दीक्षा अजमेर मे हुई थी। बाल्यावस्था मे विविध प्रकार के आभूषणो से इनका यह उत्सव धर्मात्माओ ने मनाया था। तभी से कुछ लुटेरे डाकुओ की बुरी दृष्टि इन पर थी।

सघ का विहार हुआ। सभी साधुजन आगे निकल गये। सुबह का समय था। शान्तिसागरजी को शौच की बाधा हुई। अकेले थे। मौका देखकर डाकुओ ने इन पर हमला बोल दिया—तुम्हारे पास इतने सोने, मोती, हीरे के आभूषण है, दो। बेचारे क्षुल्लकजी ने बहुत समझाया—मेरे पास कुछ नही है। पर वे कहाँ मानने लगे। दीक्षा को अभी उन्नीस दिन भी नहीं बीते थे, विपत्ति ने घेर लिया। डाकुओ ने क्षुल्लकजी को कुएँ मे डाल दिया।

सघ अपने गतव्य पर पहुँचा—शान्तिसागरजी का इन्तजार होने लगा। कही पता नही चला।

इधर कुएँ मे ७ घटे हो चुके थे। मछलियाँ पैरो को खा रही थी। सर्प फुकार रहे थे। क्षुल्लक जी जैसा नाम था शाति के सागर बन एक मात्र णमोकार मन्त्र का पाठ करते हुए समाधिस्थ थे।

किसी ने कहा—अभी तक नहीं आया—कल का छोकरा है भाग गया होगा। कोई कहने लगा—छोटे-छोटे बच्चो को दीक्षा देनी ही नही चाहिए, आदि-आदि मनचाही चर्चा होने लगी।

चित्राबाई के नेत्रो से अविरल अश्रुधारा बह रही थी। महाराजजी चिंतित थे। तभी आचार्यश्री से पूछा। आचार्यश्री का एक ही उत्तर था—वह होनहार बालक है, कही नही गया है। किसी विपत्ति मे पड़ गया है। जमीन के किन्ही गड्ढों में, कुएँ, बावड़ी में खोजो। सभी लोग कुएँ, बावडियाँ खोजने चल दिये।

इधर कुएँ पर एक महिला पानी भरने आई। अन्दर मनुष्य की आवाज सुनकर घबरा गई। क्षुल्लकजी ने कहा—"मुझे निकाल लो, डरो नही।" महिला ने चरस डाल दी। इसमे बैठकर आ जाओ। क्षुल्लकजी ने विपत्ति मे भी धर्म व सदाचार को नहीं छोड़ा। कहा—"चमड़े के चरस मे मै नही बैठूँगा।" महिला ने लकड़ी का पाटा कुएँ मे डाला। तभी गाँव वाले आ गये और इन्हे बाहर निकाला। सात घटे पानी मे रहे क्षु शान्तिसागर जी।

खोजते-खोजते सभी वहा पहुँचे। महाराजजी का निमित्त ज्ञान बिल्कुल सत्य निकला। आचार्यश्री ने उस दिन कहा था—"वह एक महान नररत्न होगा, वह कभी अपने व्रतो से च्युत नही होगा।" वे रत्न है उपाध्याय मुनि भरतसागरजी, सघ के आदर्श, जैन समाज की एक निधि।

भक्ति का नमूना

सेठ श्रीपालजी दिल्ली वालो का धार्मिक परिवार आचार्यश्री की श्रद्धा का अनूठा नमूना है। पुत्र राजेन्द्र कुमार ने भी अपने जीवन मे आचार्यश्री की श्रद्धा का अनूठा फल प्राप्त किया है। आचार्यश्री का सघ सूरत से गिरनार जी यात्रा के लिए पहुँचा तब सघपति श्रीयुत् श्रीपाल जी के पुत्र राजेन्द्र कुमार जी ने अनन्य भक्ति और श्रद्धा के पुष्पो का समर्पण किया। सिद्ध क्षेत्र गिरनारजी मे श्री सिद्धचक्र-विधान कराया। इस विधान का अनुपम दृश्य अतिमनमोहक था। इस समय भक्ति रस की अविरल धारा जन-जन मे फूट पड़ी था। इस समय १०८ जोड़ो ने इस विधान में भाग लिया था। सबकी पूजा की व्यवस्था ही निराली थी। मानो सौधर्म इन्द्र ही परिवार सहित आकर मध्यलोक के अकृत्रिम चैत्यालयों मे पूजा वन्दना कर रहा था। यह सब एक मात्र आचार्यश्री के प्रति राजेन्द्रजी की असीम श्रद्धा का नमूना था। जयपुर से फिर सघपति राजेन्द्रकुमार (पुत्र श्रीपालजी) ने सघ को सोनागिरजी सिद्धक्षेत्र पहुँचाने का सकल्प किया। श्रीपालजी व इनकी पत्नी की श्रद्धा देखिए कि जयपुर से सोनागिरजी के बीच कितनी भी पारिवारिक उलझने आने पर भी कभी घर का नाम नही लिया। बस, ठडी-गर्मी के परीषहो को आनन्द से झेलते हुए सघ को जयपुर से सोनागिरजी ले आये।

तीन-चार वर्षो से अब तो आचार्यश्री की जन्म-जयन्ती मे भी चार व्यक्तिया ने भाग लेने का अनुनय-विनय कर लक्ष्मी के सदुपयोग करने का प्रण ले लिया। श्री पन्नालालजी सेठी डीमापुर, राजेन्द्रजी, सतीश जी जयपुर व अशोकजी इन्दौर। इन महानुभावो मे इस प्रकार की क्रान्ति, भक्ति, अटूट श्रद्धा आचार्यश्री के प्रति रग-रग मे अवर्णनीय भरी हुई है कि ये भक्ति व श्रद्धा के कारण सदा दानवीर के रूप मे अग्रणी रहते है।

इसके अलावा सच्ची श्रद्धा के और भी अनेक उदाहरण जैन-अजैन बन्धुओ मे पाये जाते है। इन्दौर शहर की घटना है। एक युवक जाति से कायस्थ था। उनकी पत्नी को भयकर शारीरिक वेदना थी। आचार्यश्री का इन्दौर पदार्पण हुआ। वह आपके दर्शन मात्र से इतना प्रभावित हुआ कि उसने आचार्यश्री का एक बड़ा फोटो खरीदा। हम लोगो से इतना मात्र पूछा—आचार्यश्री रात्रि मे कब जागते है? हमने बताया कि ११ बजे के बाद जगते ही रहते हैं। बस।

कुछ दिनो बाद वह पुन आया। उसने बताया—"मै रात्रि मे फोटो के सामने बाबा के पास बैठकर अपनी समस्याएँ रख देता हूँ। मेरा सब समाधान हो जाता है। मेरी पत्नी भी बाबा की कृपा से बिल्कुल ठीक हो गयी

है, जिसके बचने मे भी आशका थी। आज भी वह युवक, आचार्यश्री के प्रति अपूर्व श्रद्धा से मस्तक झुकाता है।

सच है, दिगम्बर गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धा से तीन लोक की विभूति प्राप्त होती है। फिर धन-वैभव, शारीरिक नीरोगता की प्राप्ति मे क्या विशेषता है? देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा भवतारिणी है।

श्रद्धा नहीं भजन मे, तो गीत गाने से क्या होगा?
श्रद्धा नही देव मे, मस्तक झुकाने से क्या होगा?
श्रद्धा नही गुरुदेव मे, नित देखने से क्या होगा?
श्रद्धा नही जिनवचन मे, वाचन का फल क्या होगा?

आज की परिस्थिति उल्टी हो गई है—सच्चे देव-शास्त्र-गुरु ही हमारे बदल गये है। आचार्यो ने कहा है—प्रात उठकर देव को नमस्कार करना चाहिए। सर्वप्रथम देव को नमस्कार करने वाले का पूरा दिन अच्छा बीतता है। पर हमारे सच्चे देवता आज 'चाय देवता बन गये।'' जब तक चाय देवी के दर्शन नही हो जाते, बिस्तर नही छूटता, प्याली मे लेकर सर्वप्रथम चाय देवता को सिर झुकायेगे, तब फिर उठते-उठते आठ ही बज जायेगे। सच्चे देवता जिनेन्द्रदेव को मन्दिर मे जाकर नमस्कार करने की फुर्सत ही नही है। क्या करे? नीद खुलती ही नही। क्या करे? मदिर दूर है। सिनेमा, नाटक, अस्पताल जाने के लिए तो मीलो दूर चले जाते है पर मन्दिर जाने के लिए समय नही है।

दूसरी बात देखिये। गुरु हमारे आज बन गये है—'डॉक्टर'। आचार्यों ने, गुरुओ ने बार-बार करुणाभरी वाणी मे कहा और आज भी कहते है—पानी छानकर पीओ, हल्का भोजन करो, बाजार की तली बनी आदि वस्तुएँ खुली रहने से विषाक्त हो जाती है अत मत खाओ, आदि आदि, पर गुरुजनो की वाणी सुनने की या तो फुर्सत नही है यदि सुन भी ली तो अरे! इनका ये काम है, ये छोड़ो, वो छोड़ो, इस प्रकार बकवास करते है। पर यदि बीमार होने पर डॉक्टर ने कहा—मूँग की दाल का पानी दिन मे एक बार व उबला हुआ पानी पीना पड़ेगा तभी स्वास्थ्य सुधरेगा। अब क्या है। देखिये, डॉक्टर के वचनो को डॉक्टर-श्रद्धालु जरा भी नही टाल सकते। लकीर के फकीर बन जायेगे पर गुरुजनो की कभी नही मान सकते।

तीसरे, आज के पेपर (समाचार पत्र) मानव के सच्चे शास्त्र बन गये है। विचार कीजिये, पूर्व आचार्यों के कथित आगम शास्त्रो को पढ़ने की फुर्सत नही है। पढ़ भी लिया तो श्रद्धा नही है। पेपर मे लिखा है वही सत्य हो गया है। आज जीवन की स्थिति बड़ी विचारणीय है। भूतपूर्व राष्ट्रपति जैलसिह ने अपने एक वक्तव्य मे कहा था—भारत देश की स्थिति बड़ी नाजुक हो गई है। भारत देश धर्मप्रधान देश है पर आज देश से धर्म की बात उठती चली जा रही है। इसका मूल हेतु आज के समाचार-पत्र है। प्राचीनकाल मे प्रातः उठते ही मनुष्य भगवान की पूजा-भक्ति करता था। किसी भी बुरे विचार को मन मे आने नही देता था। फलस्वरूप उसका पूरा दिन अच्छा बीतता था। आज सुबह उठते ही पेपर चाहिए। पेपर मे देश की, विश्व की स्थिति देखते ही आर्तध्यान करने लगता है—कितने मरे, कितने घायल हुए, कौन देश कौन-सा बम बना रहा है, कहा सेना युद्ध क्षेत्र में पहुँची है आदि-आदि प्रश्नों का जाल मानव-मस्तिष्क मे बन जाता है फलतः सुबह से शाम तक शान्ति नही मिलती

है। राष्ट्रपति ने यह भी कहा था—मेरे बन्धुओ। शान्ति की खोज मे प्रत्येक भारतीय नागरिक का कर्तव्य है प्रात ४ बजे से ९ बजे तक का समय धर्मध्यान, प्रभुभजन मे व्यतीत करे फिर पेपर पढ़े, तभी देश में, विश्व मे शान्ति की प्राप्ति हो सकेगी। शान्ति प्राप्त्यर्थ हमे प्राचीन भारतीय सस्कृति की ओर अवश्य ही देखना होगा। भक्ति के बिना मुक्ति भी नही मिलेगी।

पाठको को विदित हो कि आचार्यश्री के प्रति श्रद्धावनत सेठी परिवार या श्रीपाल जी सघपति का परिवार या चिन्तामणि बज जयपुर वालो का परिवार या अशोक जी, सतीशजी या पाण्डिचेरी के भक्तगणो का परिवार—इन परिवारो मे कही भी सप्त व्यसनो का सेवन नही होता है। परिवार का कोई भी सदस्य चाहे वकील हो या डॉक्टर या व्यापारी, कोई भी रात्रि मे भोजन नही करता। सभी प्रतिदिन श्रद्धा-भक्तिपूर्वक जिनमदिर जाते है। सच है, धर्म के साथ ही धन की रक्षा है।

नन्हा वीर एक कली जो पुष्प बनने के लिए आतुर है

एक तरोताजा उदाहरण आपको दिया जाता है—राजेन्द्रजी के सुपुत्र शरतकुमार है। आपकी भी आचार्यश्री के प्रति अगाढ श्रद्धा है। जिस समय सघपति महोदय श्रीपालजी जयपुर से सोनागिरजी चल रहे थे, साथ मे शरत भी गुरुओ की वैयावृत्ति मे तल्लीन थे। अभी उम्र सिर्फ १६ वर्ष की थी। अध्ययनार्थ अमेरिका जाने की तैयारी थी। पिताजी राजेन्द्रजी बड़े चिन्तित थे—वहाँ के वातावरण से पुत्र के सस्कार बिगड जायेगे तो क्या करूँगा? पिता पुत्र को आचार्यश्री के चरणो मे लाये—"महाराजजी। बेटा शरत अमेरिका जा रहा है। इसे कुछ शिक्षा दीजिये। मद्य-मास-मधु अण्डा आदि दुर्व्यसनो का त्याग करा दीजिये।" करोडपति पिता के इकलौते पुत्र शरतकुमार ने आचार्यश्री के चरणो मे नारियल चढाया और शपथ ग्रहण की—"मै अमेरिका जाकर धर्म के विरुद्ध कोई कार्य नही करूँगा। मद्य-मास-मधु-अण्डा का सेवन नही करूँगा"। आचार्यश्री का सघ जिस दिन सोनागिरजी पहुँचा, उसी दिन धार्मिक शरत माता-पिता के चरणो का स्पर्श कर अमेरिका के लिए रवाना हो गये। वहाँ अभी ५ वर्ष तक अध्ययन करेंगे।

उन्होंने वहाँ से एक शुभ समाचार आचार्यश्री के नाम पर लिखा है—"गुरुदेव। मै अपने व्रतों का अच्छी तरह पालन करता हूँ, रात्रि मे भोजन नही करता, प्रात उठकर णमोकार मन्त्र का स्मरण करता हूँ।"

सत्य है, ऐसे धार्मिक माता-पिता के उत्तम सस्कारो से ही पीढी-दर-पीढी धर्म की सतति चलती रहेगी। इन्ही नैतिकता धार्मिकता के रग मे रँगे हुए बालको से जैन सस्कृति अविच्छिन्न रूप से चलती रहेगी। सच्ची श्रद्धा ही सफलता की कुञ्जी है। यह सब आचार्यश्री के वात्सल्य, कारुण्य, उदार हृदय का आशीर्वाद है। सच है, आचार्यश्री एक अद्भुत चुम्बक है जिनकी आकर्षण-शक्ति सभी को अपनी ओर खीचती चली जा रही है। सैकड़ो नही, हजारो युवक-युवतियाँ आपके चरणो मे दुर्व्यसनो को त्यागकर सत्य मार्ग पर चलने की शपथ ले चुके है।

अटूट-श्रध्दा

आचार्यश्री के प्रति सच्ची श्रध्दा और भक्ति का फल अटूट है। जो भव्यात्मा सच्ची श्रध्दा से इनका नाम

जपता है, उसके सब सकट दूर हो जाते है। अपने घर बैठे-बैठे भी यदि कोई सच्ची भक्ति से इनके चरणो को नमस्कार करता है और सकट मे गुरु-चरणो का आश्रय लेता है वह निश्चित ही सारे सकटो से बचकर अपने जीवन को सुखद बना लेता है। सच्ची भक्ति का साक्षात् फल आपके सामने है–

डीमापुर (नागालैड) का एक गरीब परिवार। पुत्र जुआरी, माता-पिता आचार्यश्री के चरणों के परम-भक्त। सारा परिवार दु:खी हो रहा था। अचानक एक दिन पिता गुरुजी के चरणों में बैठे थे कि अविरल अश्रुधारा बह निकली। गुरुदेव तो परम कृपालु, करुणार्द्र है ही, बोले–"बेटा! क्यो रो रहे हो, क्या सकट है? घबराओ नही, सारे सकट टल जायेगे।"

पिता–"गुरुदेव! मेरा पुत्र. .। आप उसे समझाये। हमारा जीवन दु:खमय हो गया है।"

गुरुजी निस्पृह वृत्ति से बोले–"भैया, मैं क्या कर सकता हूँ? णमोकार मत्र का जाप्य करो, सब ठीक हो जायगा।"

पिता–"नही गुरुदेव, आप ही रक्षक है, हमारा सकट आपको दूर करना ही होगा।"

इसी समय आचार्यश्री के सामने वह लड़का भी आकर खडा हो गया।

आचार्यश्री–"बोलो बेटा! तुम जुआ क्यो खेलते हो?"

बच्चा–"गुरुजी, पैसा चाहिए।"

आचार्यश्री–"अच्छा, आज नियम करो–'आज से मै जुआ नही खेलूँगा'–तुम मालामाल हो जाओगे।"

लड़के ने बडी नम्रता कहा–"जो आज्ञा, महाराजजी! परन्तु भूल से कभी खेल लिया तो दोष व पाप लगेगा, इसलिए नियम नही लूँगा।"

आचार्यश्री बोले–"नियम तो ले लो, भूल हो जाये तो मेरे पास आ जाना।"

लड़का–"ठीक है गुरुदेव, आज्ञा शिरोधार्य है।"

अब उसके हृदय मे गुरुदेव के वात्सल्य से श्रध्दा और भक्तिरूपी अकुर फूट चुके थे। घर पहुँचते ही कुछ दिन तो नियम ठीक पला परन्तु ज्यो ही जुआरी की सगति मिली, बाबूजी ने जुआ खेलना फिर आरम्भ कर दिया। एक दिन महाराजश्री की याद आई। 'तू जुआ नही खेलेगा तो मालामाल हो जायेगा'। बस अब क्या था उसी समय घर से चल दिये और गुरु-चरणो मे आकर सही-सही बात कह सुनाई–"गुरुजी गलती हो गई।"

आचार्यश्री–"कोई बात नही बेटा, हम तुम्हे एक व्यापार बताते है, वह करो–णमोकार मन्त्र के सवा लाख जाप्य करो तथा सप्तव्यसन का त्याग करो। यही गलती का प्रायश्चित है। यही सच्चा व्यापार तुम्हारी उन्नति मे साधक होगा।"

बालक पुन: अपने घर लौट आया, सप्त-व्यसनो का त्यागी वह अब विधिवत् णमोकार मत्र का जाप्य करता हुआ महाराजश्री की आज्ञानुसार सारा कार्य करने लगा। जब भी सकट आता तभी आचार्यश्री का स्मरण कर लेता। दिन पर दिन उसका व्यापार बढ़ने लगा। गुरु-वचनो पर अटूट श्रध्दा हुई। बाद में उसने कभी जुआ खेलना आदि

बुरे कार्य नही किये।

देखते ही देखते वह लखपति बन गया। अब वह सोचने लगा--यह सब जो मैने एकत्रित किया है, महाराजश्री के आशीर्वाद का ही फल है। यदि वे सही मार्ग नही बताते तो मैं कैसे इस योग्य बनता। पुन गुरु के चरणो मे पहुँचता है--गुरुजी। यह सब सम्पत्ति आपके आशीर्वाद का फल है।

आज भी उसके हृदय मे गुरुभक्ति का स्रोत इस प्रकार बह रहा है कि प्रतिवर्ष आचार्यश्री की जन्म जयन्ती पर लाखों रुपये खर्च करता है। हजारों व्यक्तियो को इस अवसर पर वह प्रीतिभोज देता है। अपनी चंचला लक्ष्मी का सारा उपयोग धार्मिक कार्यों मे करता है। सोनागिर मे अनगकुमार की विशाल सात फुट ऊँची प्रतिमा इन्होंने ही विराजमान की है। आज यह स्थिति है कि हजारो रुपया धार्मिक कार्यों मे खर्च करना तो इनके लिए खेलसा बन गया है। ये आज गाँव की करोड़पति पार्टी के रूप मे हमारी समाज के सामने है। पन्नालाल सेठी के नाम से प्रख्यात है।

यह है आचार्यश्री के चरणो की भक्ति एव श्रध्दा विनय का सच्चा फल। एक ही नही, ऐसे अनेक उदाहरण हमारे सामने है जिन्होंने गुरुदेव के चरणो की शरण पाकर अपने जीवन को कृतकृत्य बनाया है।

सारा परिवार धर्मात्मा है। घर मे छोटे से बड़े तक सभी दिन मे भोजन करते है। कोई भी अभक्ष्य व मास-शराब-अडे आदि वस्तुओ का सेवन नही करते है। डॉक्टर हो या वकील, इनके सभी भाई जिनदर्शन के बिना भोजन नही करते है। छोटा-सा त्याग रूप बीज वट-वृक्ष की तरह फल रहा है। यह है आचार्यश्री की चुम्बकीय शक्ति।

नये इतिहास का निर्माण

इतिहास का निर्माण वर्तमान के कार्यो से होता है। ये जिनालय आदि इतिहास की पृष्ठभूमि का निर्माण करेगे।

सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दु खभाग् भवेत्।।

ससार के समस्त प्राणियो की निरोगता एव कल्याण भावना से ओत-प्रोत जिनका जीवन है, ऐसे सर्वोदय तीर्थ के नेता आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज जहाँ भी अपने चरणकमल रखते हैं, वही भूमि पावन आत्मा के जीवन की सुगन्ध से सुरभित हो जाती है और वह पिछड़ा हुआ स्थान उन्नत बन जाता है। जिस भूमि पर इनके चरण पड़े वही धन्य हो उठी। नयी दिशा, नया निर्माण, नयी चेतना से सारी भूमि पवित्र हो जाती है।

आचार्यश्री के उपदेशामृत से कई धार्मिक पाठशालाओ, भव्य चैत्यालयो, मन्दिरो, स्वाध्यायशालाओं, औषधालयों एव धर्मशालाओं का निर्माण हुआ। इनमे भी कई सस्थाएँ, भव्य रचनाएँ आपकी ऐसी अमर कृतियाँ हैं कि जिनके द्वारा जैन सस्कृति का इतिहास युगो तक चमकता रहेगा। इनमे विशेष उल्लेखनीय हैं--(१) टुडला औषधालय, (२) श्री सम्मेदशिखरजी पर भव्य समवसरण, (३) राजगृही मे आ महावीरकीर्ति सरस्वती भवन, (४) सोनागिरजी में नगानग कुमार मुनियों की सात फीट ऊँची मनोहर प्रतिमाओ की स्थापना, (५) नगानंग स्याद्वाद विद्यालय की

आचार्यश्री की प्रेरणा से निर्मित महावीरकीर्ति स्वाध्याय भवन, राजगृही (बिहार)
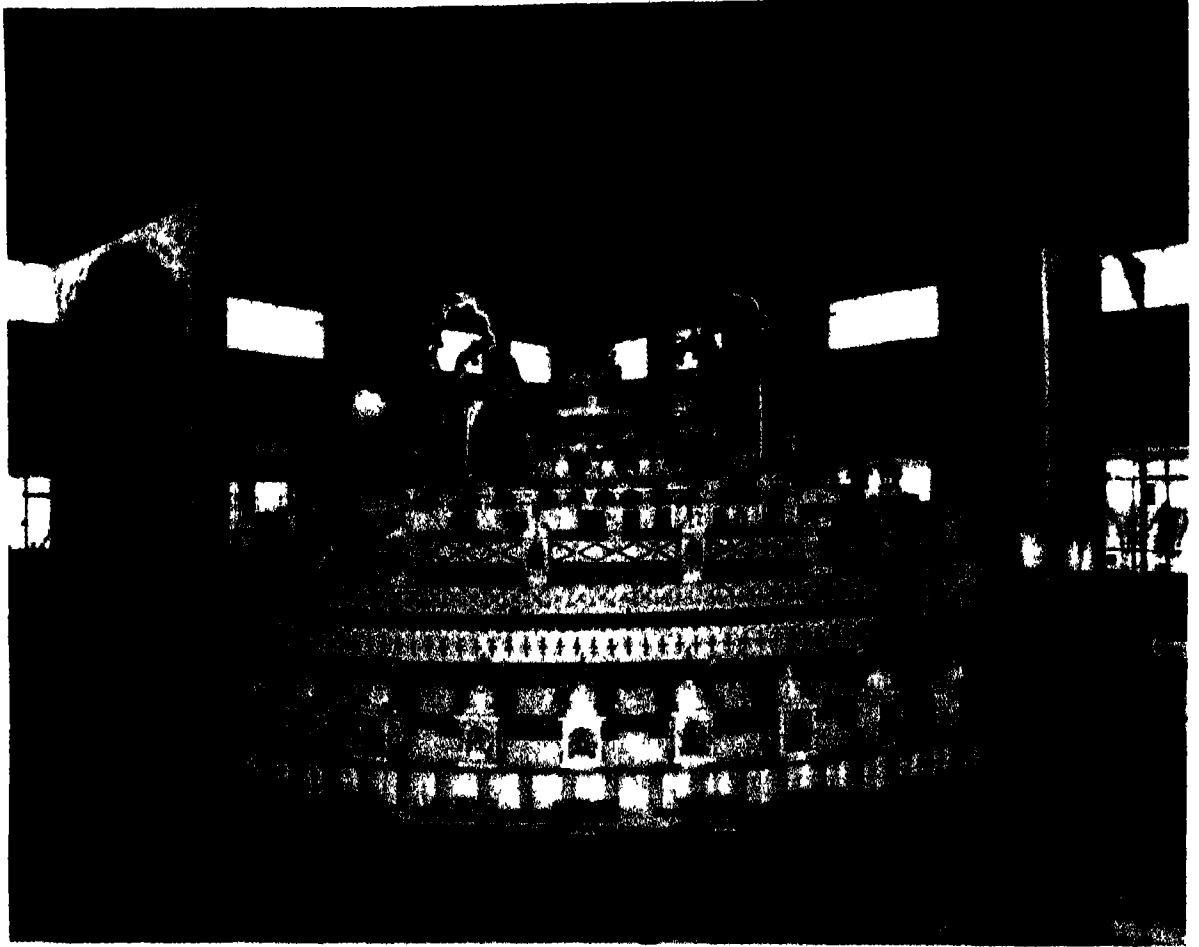
आचार्यश्री की प्रेरणासे निर्मित समवशरण सम्मेदशिखरजी।

आचार्यश्री सिद्धचक्र विधान का पाठ कराते हुए (सम्मेदशिखरजी)।

आचार्यश्री के सानिध्य में सिद्धचक्र विधान (सम्मेदशिखरजी १९९३)।
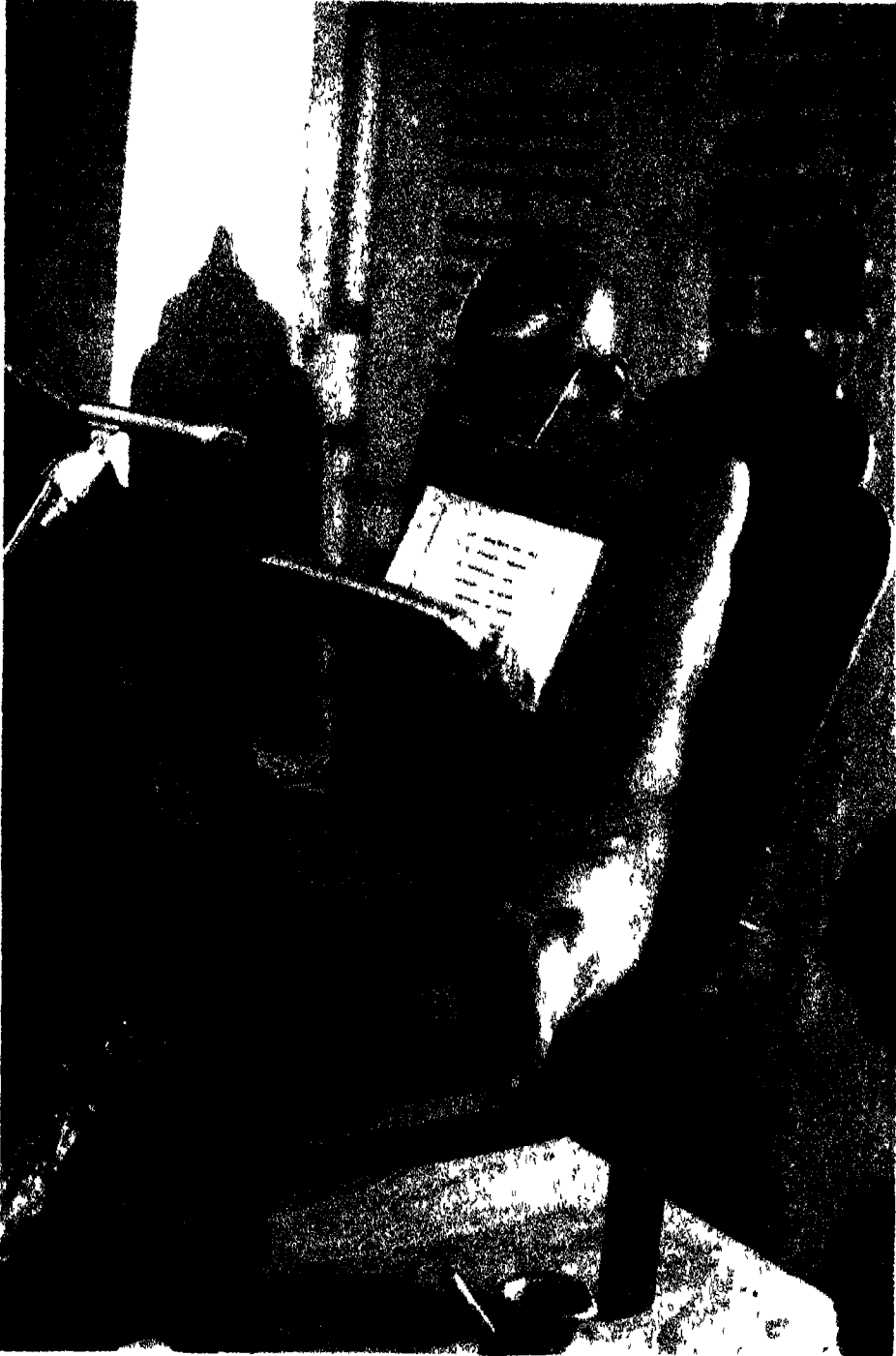
॥वात्सल्य रत्नाकर॥

आचार्यश्री स्वाध्याय मुद्रा मे।

भगवान पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव,
हस्तिनापुर दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान जम्बूद्वीप मे सूर्यमत्र देते हुए आचार्य श्री

पचकल्याणक मे भगवान के आहार सस्कार के बाद पोछी देते हुए व्रती एव भक्तगण
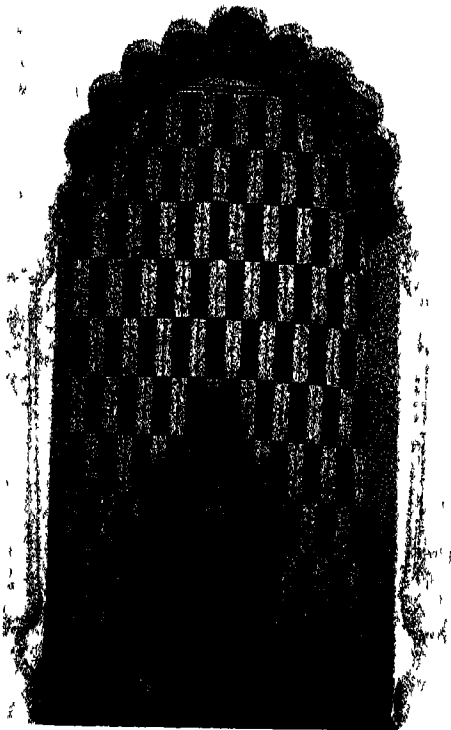
॥वात्सल्यरत्नाकर॥

वात्सल्यरत्नाकर केशलोच करते हुए

स्वाध्यायरत आचार्यश्री।

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
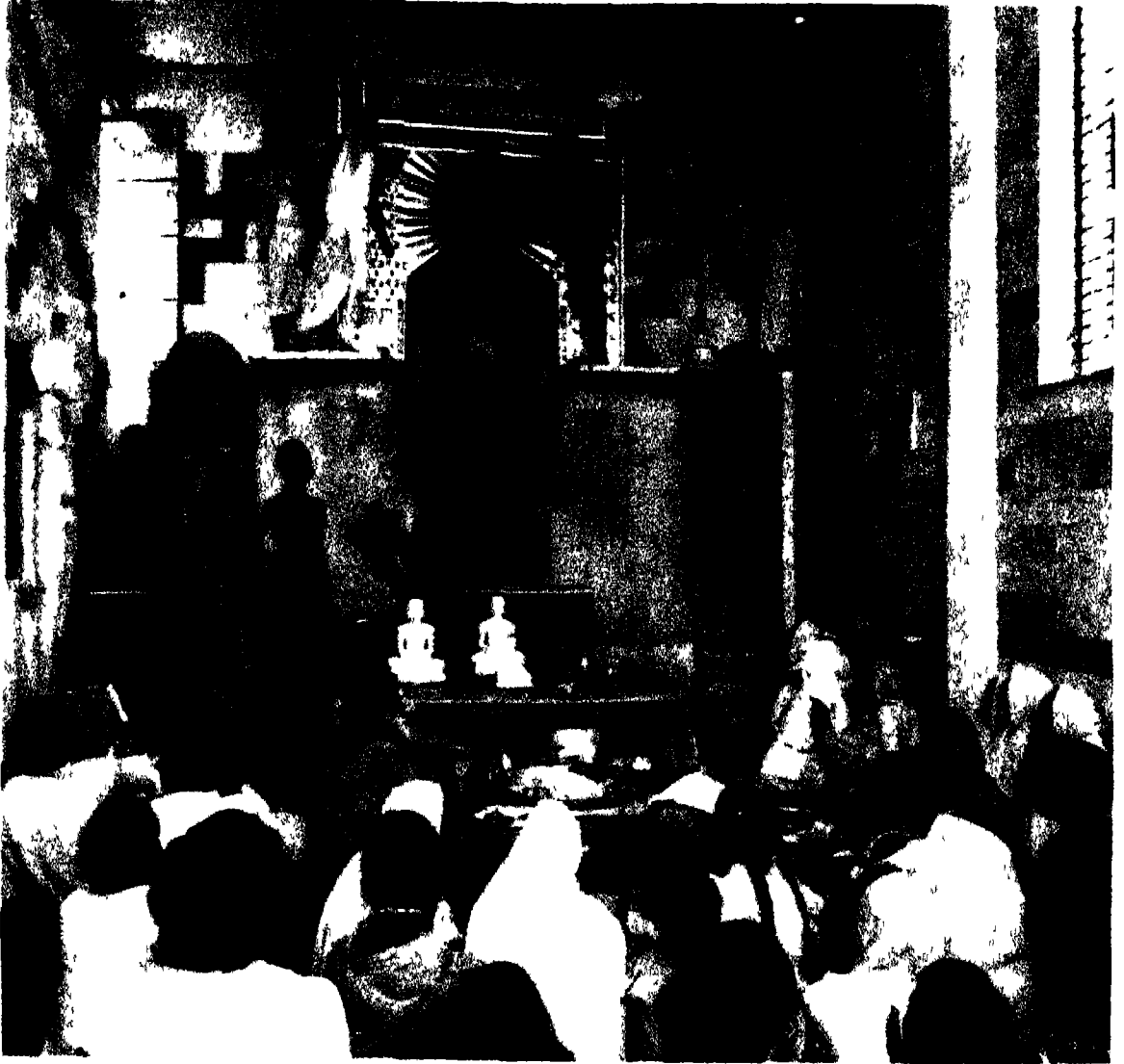
शान्तिनाथ भगवान का **अकन्यास** करते हुए आचार्यश्री एव सघ (सिद्धक्षेत्र सोनागिर)
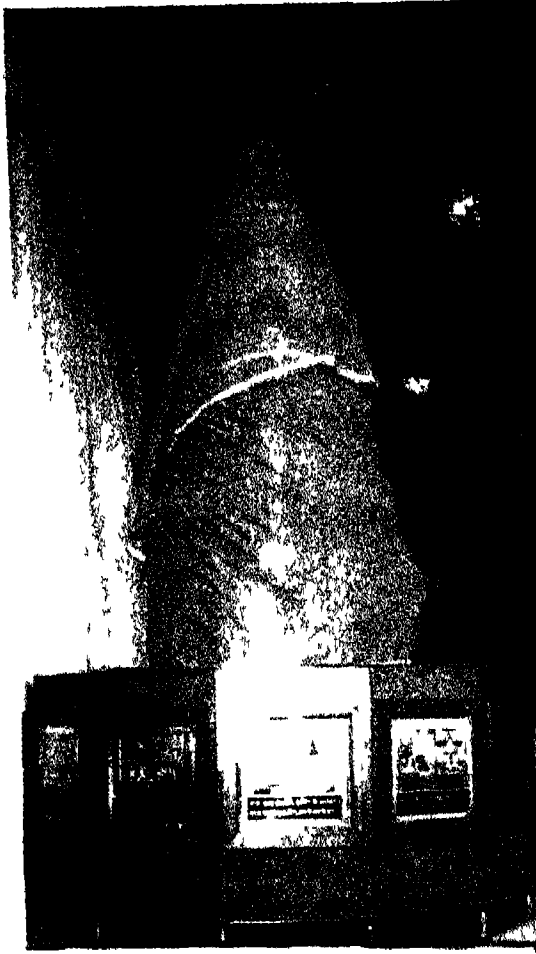
तीन चोविसी की रचना क्षुल्लक श्री चैत्यसागरजा (वर्तमानमे मुनि) की प्रेरणा से आचार्यश्री के जन्मजयती पर सोनागिर सिद्धक्षेत्र को भेट

सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर आचार्यश्री के आशीर्वाद मे निर्मित
तीनचौविसी की प्राणप्रतिष्ठा करते हुए आचार्यश्री।

बोकारो पचकल्याणक मे दीक्षा सस्कार करते हुए आचार्यश्री
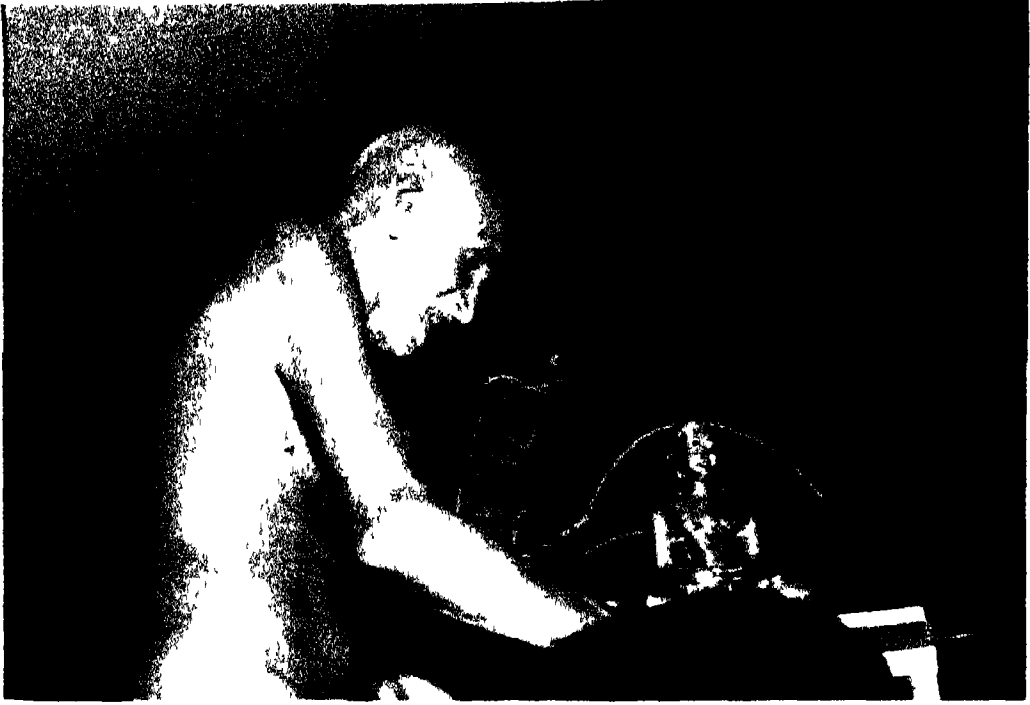
पचकल्याणक प्रतिष्ठा म प्रतिमा पर तपकल्याणक के सस्कार करते हुए आचार्यश्री

पचकल्याणक म प्रतिमा पर अकन्यास करते हुए आचार्यश्री
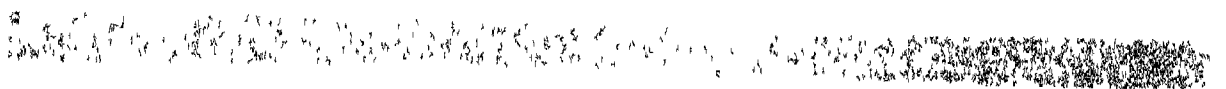
आचार्यश्री के आशीर्वाद से निर्मित चोपड़ा पहाड़ (सम्मेदशिखर) दिगबर जैन मदिर (१९९३)।

सर्वोदय मदिर, बम्बई मे प्रतिष्ठा योग्य मूर्तियो का निरीक्षण करते हुए आचार्यश्री

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा, महाराष्ट्र शाखा के अधिवेशनको आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री (औरगाबाद-महाराष्ट्र)

बम्बई (पोदनपुर) म आयोजित जैन विद्वत् सगोष्ठी में आचार्यश्री

सोनागिरजी मे स्थापना एव विमल सभाभवन, (६) श्री गोम्मटेश्वर बाहुबली मे सरस्वती भवन आदि। सोनागिरजी पर भव्य चौबीसी का निर्माण व श्रुतस्कन्ध की स्थापना आदि।

(१) टुडला औषधालय—यह आचार्यश्री के महान उदार चरित्र का प्रतीक है। 'उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्'' के अनुसार आपकी सदैव यही भावना रहती है कि समस्त प्राणी व्रतो का आचरण करे, शुध्द खान-पान रखे। शुध्द एव सही चारित्र के लिए शुध्द आहार आवश्यक है। जैसी भक्ष्याभक्ष्य् वस्तु पेट मे जाती है, उसी प्रकार के भाव बनते है। सभी प्राणियो की सामान्य से नीरोग अवस्था होती है। किन्तु यदि पूर्व कर्मोदय से शरीर रोगयुक्त हो जाये तो औषधि उसे जीवनदायिनी बन जाती है। अत औषधदान के प्रतीक, एक विशाल औषधालय का निर्माण आचार्यश्री की प्रेरणा से टुडला मे हुआ।

इस औषधालय मे शुध्द औषधि तैयार की जाती है जिससे आज भी हजारो त्यागी-व्रती एव भव्यात्माओ को शारीरिक रोगो से मुक्ति का पूर्ण लाभ प्राप्त हो रहा है।

(२) सम्मेदशिखरजी का भव्य समवसरण—अनन्तानत सिध्दात्माओ की सिध्दभूमि व महान उपसर्ग विजेता पार्श्वनाथ भगवान की मुक्तिस्थली शिखरजी की पवित्र भूमि का दर्शन करके सभी भव्यात्माओ का मन मयूर नाच उठता है। आचार्यश्री को एक कमी वहाँ खटकती रही कि इस पावन क्षेत्र पर किस प्रकार पार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ आदि तीर्थंकरो का समवसरण आया, किस प्रकार धर्म की गगा बहती रही और किस प्रकार उन्होने साधना के द्वारा मुक्ति लक्ष्मी का वरण किया—इन सभी के प्रतीकात्मक एक भव्य समवसरण की रचना का भी निर्माण यहाँ होना चाहिए।

आपके हृदय मे धर्म और सस्कृति की रक्षा के प्रति जब-जब भावना आई तब-तब आपने साहसिक कदम बढाये और भक्तो के हाथ आपके सामने स्वत सत्कार्यो के पूर्ण करने हेतु उठ गये। इसी प्रकार यहाँ भी आचार्यश्री ने निश्चय किया कि यहाँ 'पाश्र्वप्रभु' के समवसरण की रचना होना अति आवश्यक है। भक्तो को ज्यों ही आपके अन्त करण की भावना ज्ञात हुई उन्होने सहर्ष स्वीकृति देकर, लाखो रुपया इस शुभ कार्य मे लगाकर पुण्यार्जन किया।

यह अनुपम भव्य समवसरण, जैन सस्कृति की एक मनोज्ञ व चिरस्मरणीय रचना है। कुबेर रचितवत् विशाल एव अद्भुत है जिसके दर्शन मात्र से मन-मयूर नाच उठता है। सामने ही धर्म-ध्वज फहरा रहा है। विशाल मानस्तम्भ मिथ्यात्व का नाशक है। जिस प्रभु के दर्शन कर सम्यग्दृष्टि आत्मा साक्षात् समवसरण मे स्थितवत् अनुभूति को प्राप्त कर अपने आपको धन्य मानता है ऐसे प्रकृति की गोद मे सुशोभित, रम्य, उस समवसरण की शोभा-सौन्दर्य का वर्णन अवर्णनीय है।

जिस प्रकार चौथे काल मे प्रभु के समवसरण मे पहुँचकर भव्यात्मा का मिथ्यात्व गलित हो जाता था उसी प्रकार यहाँ भी प्राकृतिक छटा से युक्त समवसरण की बारह सभाओ के मध्य अपनी स्थिति की अनुभूति हम कर सकते है।

(३) आचार्य महावीरकीर्ति सरस्वती भवन—राजगृही क्षेत्र कैवल्य ज्योति का प्रतीक है। पावन सिध्दक्षेत्र पर, तीर्थंकरो के समवसरण आये। यह पच पहाडी क्षेत्र प्रखर ज्ञानज्योति का स्थान है। तीर्थंकरो की दिव्यध्वनि इस स्थान

पर खिरी थी। परन्तु यहाँ भी एक कमी थी।

तीर्थंकरों की दिव्यध्वनि किस प्रकार खिरी, गणधरों ने इसे किस प्रकार झेली तथा यह जिनेन्द्रवाणी कैसी है? इन सबका प्रतीक यहाँ आज तक कोई स्मरणीय स्थल नही था। जिनेन्द्रवाणी का रसपान कराने का या करने का सही या सच्चा माध्यम है 'स्वाध्याय'।

तो इस राजगृही की सुन्दर पहाड़ी पर आचार्यश्री ने स्वाध्याय भवन की कमी देखी। उसी समय निश्चय किया और यहाँ एक विशाल 'महावीरकीर्ति सरस्वती भवन' के निर्माण की प्रेरणा दी। आज इसी सरस्वती भवन में ज्ञान पिपासु आत्माएँ ज्ञानामृत का पान कर अपनी प्यास को बुझा रही है। धन्य है! केवलज्ञान-ज्योत की प्रतीक, सरस्वती भवन के निर्माण की प्रेरक आचार्यश्री की निर्मल ज्ञानज्योति।

(४) सोनागिरजी पर नगानग कुमार मुनियों की उत्तुंग मूर्तियो की स्थापना—सोनागिरजी सिध्दक्षेत्र प्राकृतिक रमणीयता से समस्त जनमानस के लिए मनोरम स्थल बना हुआ है। इस पावन स्थान से नगानग मुनि आदि साढ़े पाँच करोड़ मुनि मोक्ष पधारे है। नगानग कुमार मुनियो के चरण-कमल तो विराजमान थे किन्तु मुनियो की मूर्तियो का अभाव था।

आचार्यश्री ने जैसे ही, इस पावन भूमि पर पदार्पण किया, भूमि का भाग्य जाग उठा। आचार्यश्री के विचारो ने करवट ली। यहाँ राजकुमारो की त्यागमयी मूर्तियो की स्थापना अवश्य होनी चाहिए अन्यथा हमारी जैन सस्कृति मे किस प्रकार बड़े-बड़े राजपुत्रो ने त्याग किया इसका आगे आने वाली पीढी को ज्ञान नही हो पायेगा। भावना ने मूर्तरूप लिया और चन्द्रप्रभ मन्दिर के विशाल प्रागण मे सात-सात फीट ऊँची भव्य प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा आचार्यश्री के सानिध्य मे सम्पन्न हुई।

धन्य है! त्यागमूर्ति आचार्यश्री की जनमानस मे त्यागमयी भावना को जागृत करने की अपूर्व अन्तर्दृष्टि।

दोनो मूर्तियो के दर्शन करते ही रोमाच हो उठता है। उनकी त्यागमयी अवस्था का दर्शन पाकर हमे सच्चा पथ और सही दिशा की प्राप्ति होती है।

(५) नगानग सस्कृत महाविद्यालय एव विमल सभाभवन—पावन भूमि की और भी कमियाँ आचार्यश्री के दृष्टिपथ से ओझल न हो सकी। उन नंगानग आदि मुनियो ने सही ज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार की? कौन-सी वह ज्ञानगगा है जिसमे स्नान कर प्राणी अपनी अज्ञानता से मलिन नेत्रों को धोकर पवित्र और निर्मल बना सकता है? विचार आया कि स्याद्वाद वाणी के शिक्षण दान से ही उक्त लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है।

तभी एक विद्यालय की स्थापना की भावना जागृत हुई और आचार्यश्री के आशीर्वाद से श्री नगानग सस्कृत महाविद्यालय की स्थापना का कार्य सम्पन्न हुआ। आज इस विद्यालय में अनेक विद्यार्थी अध्ययन करते है।

(६) गोम्मटेश्वर मे सरस्वती भवन—यहाँ पर सरस्वती भवन के अभाव मे, श्रुत की रक्षा का होना कठिन था। समस्या को श्री ऐलाचार्य विद्यानन्दजी महाराज (वर्तमान मे आचार्य) एव भट्टारक चारुकीर्ति ने आचार्यश्री के समक्ष रखा। आचार्यश्री ने इस कार्य को करने के लिए सेठ रिखबलालजी एव पन्नालालजी सेठी को कहा। आचार्यश्री की प्रेरणा पाकर उन्होंने दिनाक २३-९-८१ बुधवार, आश्विन की चतुर्दशी को भूमि-शुद्धि हुई, भवन निर्माण का

कार्य आरम्भ करा दिया।

संस्कृति की रक्षार्थ नव निर्माण आवश्यक है, कई महानुभाव आचार्यश्री से कहते हैं, "महाराज जी, इतने मंदिर पुराने है उनकी रक्षा तो होती ही नही, आप नवीन-नवीन निर्माण करने जा रहे है। ऐसा क्यो?"

आचार्यश्री का अनुकूल समाधान होता है—"हमारे पूर्वजो ने करोड़ो मन्दिर बनवाये थे तब कही आज गिने चुने नजर आ रहे हैं। यदि हम पुन नवीन नही बनायेंगे तो भविष्य में संस्कृति का इतिहास सुरक्षित कैसे रहेगा?"

---

१ सज्जाति सद्गृहस्थं च पारिव्राज्यं सुरेन्द्रता।
साम्राज्य परमार्हन्त्यं परं निर्वाणमित्यपि।।-महापुराण, ६७, पर्व ३८।।

२ नृजन्म परिप्राप्तौ दीक्षायोग्ये सदन्वये।
विशुद्ध लभते जन्म सैषा जातिरिष्यते।।८३, पर्व ३८।।
पितुरन्वयशुद्धिर्या तत्कुलं परिभाष्यते।
मातुरन्वयशुद्धिर्या जातिरित्यभिधीयते।।८५, पर्व ३९।।
विशुद्धिरुभयस्यास्य सज्जातिरनुवर्णिता।
यत्प्राप्तौ सुलभा बोधिरयत्नोपनतैर्गुणै ।।८६, पर्व ३९।।

३ क्व पूज्यं राजपुत्रत्व, प्रेतावासे क्व वा जनि ।
क्व वा राज्यपुन प्राप्ति रहो कर्मविचित्रता।।४७।। (क्षत्रचूडामणि, दशम लम्ब)

४ रिक्तपाणिर्न पश्येद् राजानं देवतां गुरुम्।

५ पाक्षिकाचार सम्पन्ना श्रावका शुद्धदृष्टय:।
श्रावणशुक्लपक्षान्ते उपाकर्म समाचेरत्।।
यज्ञोपवीत विधिना क्रिया मन्त्रपुर सर।
प्रतिवर्षे स्वकण्ठे हि धारयति नव नवम्।।

६ एक वस्त्रो न भुञ्जीत न कुर्यात् देव पूजनम्।

७ एकोपञ्चाशज्जन्ममध्ये सोऽपि प्रभुचयते।
एकेन्द्रियेभ्य ससार आपञ्चेन्द्रियजन्तव ।।२६।।सम्ये मा ।।
ये तत्र भागादुत्पन्ना नानानामाकृतिप्लुता
गणितव्यं भवराशेश्चान्येषां तत्र नोदभव ।।२८।।

८ जो सव्वस्स सारो, चउदसपुव्वाण समुद्दारो।
जस्से मणे णमोक्कारो, संसारो तस्स किं कुणइ।

९ अपराजित मन्त्रोऽय सर्वविघ्नविनाशन ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मत ।।

१० अपवित्र पवित्रो वा सुस्थितो दुस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत पंचनमस्कारं सर्वपापै प्रमुच्यते।।

११ मन्त्रं संसारसारं, त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रं,
संसारोच्छेदमन्त्र विषमविषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रं।
मन्त्रं सिद्धिप्रदानं शिवसुखजननं केवलज्ञान मंत्रं।
मन्त्रं श्री जैनमन्त्रं जप-जप जपित जन्म-निर्वाणमंत्रम्।

१२ संघ सहित श्री कुन्दकुन्द गुरु वन्दन हेत गये गिरनार।

वाद परयो तह संशयमति सो साखी वदी अम्बिकाकार॥
सत्य पन्थ निरग्रन्थ दिगम्बर कही सूरि तहँ प्रकट पुकार।
सो गुरुदेव बसो उर मेरे विघनहरण मंगल करतार।गुर्वाष्टक॥

आचार्य महाद्रुमं वन्दे

आचार्यश्री द्वारा दीक्षित त्यागी-वृन्द

१. श्री १०८ मुनि सुवर्णसागरजी ...(मेरठ में समाधि)
२ श्री १०८ मुनि चन्द्रसागरजी .(पुरलिया में समाधि)
३ श्री १०८ मुनि पार्श्वसागरजी .
४ श्री १०८ मुनि अरहसागरजी
५ श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी (ईशरी में समाधि)
६ श्री १०८ मुनि सम्भवसागरजी (समाधि)
७ श्री १०८ मुनि सन्मतिसागरजी .(आचार्य पद)
८ श्री १०८ मुनि वीरसागरजी (श्री शिखरजी में समाधि)
९ श्री १०८ मुनि सुधर्मसागरजी (श्री गजपथा में समाधि)
१० श्री १०८ मुनि नेमीसागरजी
११ श्री १०८ मुनि अनन्तसागरजी .(श्री शिखरजी मे समाधि)
१२ श्री १०८ मुनि मुनिसुव्रतसागरजी
१३ श्री १०८ मुनि विनयसागरजी .
१४ श्री १०८ मुनि विजयसागरजी .
१५ श्री १०८ मुनि वासुपूज्यसागरजी ..(श्री शिखरजी में समाधि)
१६ श्री १०८ मुनि सकलकीर्तिजी .
१७ श्री १०८ मुनि बाहुबलीसागरजी ..(श्री सोनागिर में समाधि)
१८ श्री १०८ मुनि भरतसागरजी (उपाध्याय पद, सोनागिर में)
१९ श्री १०८ मुनि शीलसागरजी .
२० श्री १०८ मुनि आनन्दसागरजी (समाधि)
२१ श्री १०८ मुनि मतिसागरजी (समाधि)
२२ श्री १०८ मुनि पार्श्वकीर्तिजी . (समाधि)
२३. श्री १०८ मुनि भूतबलीजी ..
२४. श्री १०८ मुनि पुष्पदन्तजी

२५ श्री १०८ मुनि वर्धमानसागरजी (समाधि)
२६ श्री १०८ मुनि श्रवणसागरजी
२७ श्री १०८ मुनि विरागसागरजी
२८ श्री १०८ मुनि सिद्धान्तसागरजी
२९ श्री १०८ मुनि नेमीसागरजी
३० श्री १०८ मुनि निरजनसागरजी
३१ श्री १०८ मुनि अमरसागरजी
३२ श्री १०८ मुनि गोम्मटसागरजी (समाधि)
३३ श्री १०८ मुनि मधुसागरजी
३४ श्री १०८ मुनि देवसागरजी
३५ श्री १०८ मुनि सोमप्रभसागरजी (समाधि श्री सोनागिर में)
३६. श्री १०८ मुनि सुहागसागरजी (समाधि)
३७ श्री १०८ मुनि विष्णुसागरजी
३८ श्री १०८ मुनि चिदानन्दसागरजी

आर्यिकाएँ

१ श्री १०५ आर्यिका सिद्धमतीजी (श्री शिखरजी मे समाधि)
२. श्री १०५ आर्यिका विजयमतीजी
३ श्री १०५ आर्यिका आदिमतीजी
४ श्री १०५ आर्यिका श्रेयमतीजी (श्री शिखरजी मे समाधि)
५ श्री १०५ आर्यिका सूर्यमतीजी (जयपुर मे समाधि)
६ श्री १०५ आर्यिका पार्श्वमतीजी
७ श्री १०५ आर्यिका पार्श्वमतीजी (श्री शिखरजी मे समाधि)
८ श्री १०५ आर्यिका ब्राह्मीमतीजी
९ श्री १०५ आर्यिका पार्श्वमतीजी
१० श्री १०५ आर्यिका जिनमतीजी (श्री गोम्मटेश्वर मे समाधि)
११ श्री १०५ आर्यिका नन्दामतीजी

१२ श्री १०५ आर्यिका सुनन्दामतीजी
१३ श्री १०५ आर्यिका पद्मावतीजी (श्री शिखरजी मे समाधि)
१४ श्री १०५ आर्यिका विमलावतीजी
१५ श्री १०५ आर्यिका भरतमतीजी
१६ श्री १०५ आर्यिका नगमतीजी
१७ श्री १०५ आर्यिका गोम्मटमतीजी (श्री सोनागिर में समाधि)
१८ श्री १०५ आर्यिका स्याद्वादमतीजी
१९. श्री १०५ आर्यिका मनोवती माताजी (श्री सोनागिर मे समाधि)
२० श्री १०५ आर्यिका धवलमतीजी
२१ श्री १०५ आर्यिका मोक्षमतीजी
२२ श्री १०५ आर्यिका मुक्तिमतीजी

ऐलक

१ श्री १०५ ऐलक वैराग्यसागरजी (समाधि)

क्षुल्लक

१ श्री १०५ क्षुल्लक ज्ञानसागरजी
२ श्री १०५ क्षुल्लक उदयसागरजी (समाधि)
३ श्री १०५ क्षुल्लक रतनसागरजी
४ श्री १०५ क्षुल्लक श्रुतसागरजी
५ श्री १०५ क्षुल्लक जम्बूसागरजी
६. श्री १०५ क्षुल्लक वृषभसागरजी
७ श्री १०५ क्षुल्लक विपुलसागरजी
८ श्री १०५ क्षुल्लक उत्साहसागरजी
९ श्री १०५ क्षुल्लक तीर्थसागरजी
१० श्री १०५ क्षुल्लक धवलसागरजी
११. श्री १०५ क्षुल्लक चैत्यसागरजी

१२	श्री १०५ क्षुल्लक मुक्तिसागरजी	
१३	श्री १०५ क्षुल्लक स्याद्वादसागरजी	
१४.	श्री १०५ क्षुल्लक अकम्पनसागरजी	
१५	श्री १०५ क्षुल्लक जितेन्द्रसागरजी	
१६	श्री १०५ क्षुल्लक पवित्रसागरजी	
१७	श्री १०५ क्षुल्लक मोतीसागरजी	
१८	श्री १०५ क्षुल्लक नवीनसागरजी	(समाधि सोनागिर)
१९	श्री १०५ क्षुल्लक स्वयभूसागरजी	
२०	श्री १०५ क्षुल्लक अनेकान्तसागरजी	
२१	श्री १०५ क्षुल्लक स्वभावसागरजी	
२२	श्री १०५ क्षुल्लक सम्मेदशिखरसागरजी	

क्षुल्लिकाएँ

१	श्री १०५ क्षुल्लिका वैराग्यमतीजी	(समाधि)
२	श्री १०५ क्षुल्लिका सयममतीजी	(समाधि)
३	श्री १०५ क्षुल्लिका विमलमतीजी	
४	श्री १०५ क्षुल्लिका श्रीमतीजी	
५	श्री १०५ क्षुल्लिका जयश्रीजी	
६	श्री १०५ क्षुल्लिका चेलनामतीजी	
७	श्री १०५ क्षुल्लिका ज्ञानमतीजी	
८	श्री १०५ क्षुल्लिका कीर्तिमतीजी	
९	श्री १०५ क्षुल्लिका नियममतीजी	
१०	श्री १०५ क्षुल्लिका धैर्यमतीजी	
११	श्री १०५ क्षुल्लिका भारतमतीजी	समाधि (सम्मेदशिखरजी)
१२	श्री १०५ क्षुल्लिका सिद्धान्तमतीजी	
१३	श्री १०५ क्षुल्लिका उद्धारमतीजी	
१४	श्री १०५ क्षुल्लिका विवेकमतीजी	

१५ श्री १०५ क्षुल्लिका अनेकान्तमतीजी

१६ श्री १०५ क्षुल्लिका तीर्थमतीजी

१७ श्री १०५ क्षुल्लिका श्रेष्ठमतीजी

ते गुरु चरण जहां धरें, जग में तीरथ होय

परम पूज्य सन्मार्गदिवाकर, चारित्रचक्रवर्ती, श्रमणोत्तम, निमित्तज्ञानभूषण श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज के चातुर्मास—

क्र	स्थान	सन्	वि सवत्	तत्कालीन दीक्षापद व उपाधि
१	बडवानी	१९५०	२००७	क्षुल्लक
२	इन्दौर	१९५१	२००८	ऐलक
३	भोपाल	१९५२	२००९	ऐलक
४	गुनौर	१९५३	२०१०	मुनि
५	ईशरी	१९५४	२०११	मुनि
६	पावापुरी	१९५५	२०१२	मुनि
७	मिर्जापुर	१९५६	२०१३	मुनि
८	इन्दौर	१९५७	२०१४	मुनि
९	फलटण	१९५८	२०१५	मुनि
१०	पन्ना	१९५९	२०१६	मुनि
११	टुण्डला	१९६०	२०१७	आचार्य पद
१२	मेरठ	१९६१	२०१८	चारित्र चक्रवर्ती पद से विभूषित
१३	ईशरी	१९६२	२०१९	
१४	बाराबकी	१९६३	२०२०	
१५	बड़वानीजी	१९६४	२०२१	गुरुशिष्य का साथ मे चातुर्मास
१६	कोल्हापुर	१९६५	२०२२	
१७	सोलापुर	१९६६	२०२३	
१८	ईडर	१९६७	२०२४	
१९.	सुजानगढ़	१९६८	२०२५	
२०	दिल्ली (पहाड़ी धीरज)	१९६९	२०२६	
२१	सम्मेदशिखर	१९७०	२०२७	
२२	राजगृही	१९७१	२०२८	

२३	सम्मेदशिखर	१९७२	२०२९	
२४	सम्मेदशिखर	१९७३	२०३०	निमित्तज्ञानभूषण पद
२५	सम्मेदशिखर	१९७४	२०३१	युगल आचार्य चातुर्मास (गुरु-शिष्य)
२६	राजगृही	१९७५	२०३२	
२७	श्री सम्मेदशिखर	१९७६	२०३३	
२८	टिकैतनगर	१९७७	२०३४	
२९	सोनागिर	१९७८	२०३५	
३०	सोनागिर	१९७९	२०३६	सन्मार्गदिवाकर
३१	नीरा	१९८०	२०३७	
३२	श्रवणबेलगोला	१९८१	२०३८	आ कुन्थुसागरजी व एलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी आदि ५० त्यागी साथ थे
३३	बम्बई (पोदनपुर, बोरीवली)	१९८२	२०३९	
३४	औरगाबाद (सोनामगल कार्यालय)	१९८३	२०४०	करुणानिधि
३५	गिरनार	१९८४	२०४१	साथ थे आचार्यश्री निर्मलसागरजी
३६	लोहारिया	१९८५	२०४२	वात्सल्यमूर्ति
३७	फिरोजाबाद	१९८६	२०४३	
३८	जयपुर	१९८७	२०४४	खडविद्याधुरन्धर
३९	सोनागिर	१९८८	२०४५	
४०	सोनागिर	१९८९	२०४६	युगप्रमुख चारित्रशिरोमणि
४१	सोनागिर	१९९०	२०४७	
४२	सोनागिर	१९९१	२०४८	कलिकाल-सर्वज्ञ
४३	सम्मेदशिखर	१९९२	२०४९	
४४	सम्मेदशिखर	१९९३	२०५०	

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

बोधामृत

ॐ

।वात्सल्यरत्नाकर।

बोधामृत

''आचार्य श्री की डायरी से'' (स्वात्म संबोधन)

।।ओम् ह्रू णमो आईरियाण।।

गुरुभक्तिः सती-मुक्त्यै

माघ कृष्ण ६ सवत् २०३५ श्री १०८ गुरुवर आचार्य महावीर कीर्तिमहाराज का पुण्य दिवस।

ॐ ह्रौ णमो उवज्झायाण।

हे आत्मन्! भव्य प्राणियों को मोह-जाल से छुड़ाने के लिए गुरु की देशना ही कार्यकारी है। गुरु की थोड़ी भी देशना हितकारी ही नही, महाहितकारी होती है। गुरु के द्वारा प्रदत्त एक अक्षर भी महाशाति का देने वाला तथा जन्म-मरण का नाशक बन जाता है।

गुरु की देशना से सिंह, सर्प, हथिनी, सियाल, मेंढक, मृग आदि अनेक प्राणीगण ससारार्णव से पार हो गये। ''गुरुभक्ति· सती-मुक्त्यै''।

यह जीव जब तक अपनी त्रुटि नही निकालता, त्रुटि को नहिं मानता, मानकर भी नही निकालता तब तक हितोपाय नही होता और तब तक हर क्षण आर्त-रौद्र रूप ध्यान बना रहता है। उसे सत्य सुई के समान चुभता रहता है।

गुरुवर्य शिष्य के हित-चिंतक होते हैं। शिष्य की त्रुटियो को निकाल शुद्ध बनाने का प्रयत्न करते है—''गुरु की महिमा वरणी न जाय''।

गुरु शिष्य के अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, सुख, वीर्य की वृद्धि कराते हैं और शिष्य की त्रुटियाँ निकालकर विमल, निर्मल और स्वच्छ बना देते है। गुरु-चरणों मे महाशान्ति मिलती है।

हे विमल आत्मन्! हर क्षण महाउपकारी गुरुवर्य का ध्यान प्रतिदिन प्रतिपल करो जिससे अभिमानरूप कषाय का नाश हो और आत्मगौरव की प्राप्ति हो।

आत्मगौरव की प्राप्ति ही सच्चा आत्महित है। आत्महित की भावना ही सच्चा ध्यान है। वही सच्चा स्वाध्याय है। निश्चय से आत्मा का गुरु आत्मा ही है। वह परमानन्दी, सहजानन्दी, चिन्दानन्दी, चैतन्यमयी, प्रकाशपुञ्जमयी, ज्योतिस्वरूपी है। शुद्ध चैतन्य स्वरूप की भावना जन्म-मरण की नाशक है। उसी देशना को देने वाले तारण-तरण गुरुराज का ध्यान करना परम कर्तव्य है।

उपसर्ग विजयी-परम गुरवे नम। तारण-तरण गुरुदेवाय नम।
ज्ञानध्यानलीन-परमगुरवे नम। ज्ञानपुञ्ज-परमगुरवे नम।
समाधिसम्राट्-परमगुरवे नम। करुणामूर्ति-परमगुरवे नम।

परम पूज्य गुरुदेवाय चरणारविन्दे सिद्ध-श्रुत-आचार्यभक्तिपुरस्सर त्रिकाले प्रतिक्षण नमोस्तु। नमोस्तु। नमोस्तु।

●●●

॥ॐ ह्रा णमो अरहंताण॥

णिक्कम्मा को नमस्कार-निजात्म सम्बोधन

अगुरुलघुमव्वावाह अट्ठगुणा होंति सिद्धाण

यह जीव छोटे-छोटे कारणो से अनेक कर्मो का बन्ध कर लेता है और जब कर्म फल देते है तो नौ-नौ ऑसुओ से रोता है। प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादन और उपघात करने से ज्ञानावरणी कर्म-बन्ध होता है। किसी को पढ़ने मे बाधा देकर, अपने ज्ञान को छुपाकर, दूसरे के सच्चे ज्ञान को देख कर, उसे दूषित कहकर, जीव तीव्र बध कर लेता है फिर दूसरे भव मे मूर्ख, अज्ञानी, अनपढ़ होता है। ऐसे ज्ञानावरणकर्म का क्षय कर सिद्ध भगवान अनन्त केवलज्ञान से युक्त हो गये। दर्शनावरण का क्षय करने से अनन्त दर्शन की प्राप्ति हुई।

दुख-शोक-ताप, रोना-चिल्लाना, हाय! हाय! करके विलाप करने से तीव्र असातावेदनीय कर्म बधता है। सिद्ध भगवान ने वेदनीय कर्म का नाश करके अव्याबाध सुख को प्राप्त किया।

बहुत आरभ परिग्रह से नरक आयु बध होता है। मायाचार से तिर्यञ्च गति मिलती है। ऐसे आठ कर्मो के कारणभूत विभाव परिणामो का क्षय करके सिद्ध भगवान ने शातभूत, कर्मरहित, कृतकृत्य, निरञ्जन, नित्य, अविनाशी, परमानन्द पद की प्राप्ति की है। सिद्धात्मा, परमात्मा, नित्यात्मा के चिन्तन से अष्टकर्मों का नाश होता है।

दर्शनाचार, ज्ञानाचार, तपाचार आदि पञ्चाचार के पालक आचार्य परमेष्ठी ३६ मूलगुणो के धारी है। ये शिष्यो का अनुग्रह और निग्रह करते है। माता के समान शिष्यो की रक्षा करते है। आचार्य परमेष्ठी को हमारा वन्दन है।

ग्यारह अग, चौदह पूर्व इन पच्चीस मूलगुणो के धारक श्रुतज्ञान पारगत उपाध्याय परमेष्ठी है। स्वय अध्ययन करते है और श्रुत का अध्ययन शिष्यो को कराते है। ऐसे उपाध्याय परमेष्ठी को वन्दन करता हूँ।

॥वात्सल्य रत्नाकर॥
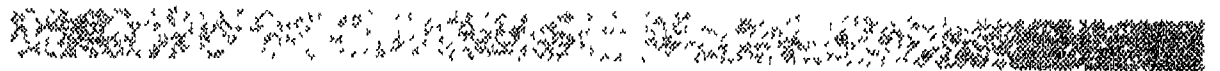
आचार्य श्री की हस्तलिखित डायरी के कुछ अंश

20 PAUSA 1892 SAKABDA

१० जनवरी १९७१	JANUARY 1971	১০ই জানুয়ারী ১৯৭১
पौष शुक्ल १४ रविवार	**10**	২৬শে পৌষ রবিবার
सं० २०२७		১৩৭৭ সাল
२० पौष १८९२ शकाब्द	SUNDAY	২০শে পৌষ ১৮৯২ শকাব্দ

हे आत्मन् संसारी प्राणी अपनी गलती निकालने के लिए जबतक प्राणी मात्र से क्षमायाचना नहीं करता तब तक अनादिकालीन मलिन ज्ञान नहीं निकला। अत: क्षमा तभी होती है जबतक गलती का प्रायश्चित दंड नहीं लेता, तभी मनोभावना प्रांजल महा शांत होजाती है तथा परिणाम निर्मल सरल स्वच्छ होजाते हैं तभी आनंद दायक ज्ञानज्योति परम शान्त विमल स्वच्छ ज्ञान अंधकार नाशक कैवल्य प्रगट होने पर ही जीवन्मुक्त आनंदघन स्वयं-भू निजानंद आत्मभू ऋषभध्वज सहजानंद दिव्यपुरुष शाश्वत ज्ञानानंद की पूर्ण सिद्धि होजाती है। और उस ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्राणीजन भक्ति पूर्ण भक्ति पूर्वक सरल निर्मल भावों द्वारा जिनेन्द्र देव में श्रद्धान करके आलोचना सामायिक स्तुति वंदन प्रतिक्रमण कायोत्सर्ग कर तेहुये अष्ट मूलगुण का पालन करते हुये स्वाध्याय ध्यान तप में मन को लगाते हुये शुद्ध आहार संगत कर व्रतसंयम धारण कर परम शांतमय वातावरण को करने के लिये द्वादशानुप्रेक्षाओं का चिंतन मनन करते हुए दृढ़तर पालन करते हैं। अत: हे चिन्मय तुम भी मनवचन काय के द्वारा स्वाध्याय ध्यान अर्चन अर्हन् आदि पंच परमेष्ठी की त्रिकाल भक्ति कर परम आनंददायक शान्त ज्ञानज्योति द्वारा ज्ञानावरणी दर्शनावरणी मोह अंतराय कर्म का नाश करके उस पूर्ण ज्ञान की सिद्धि होजाये जैसा सतत प्रयत्न करो जिससे जामन मरण की जो नश्वर भावनायें नष्ट होजावें और अपनी निधि की प्राप्ति होजावे।

21 PAUSA 1892 SAKABDA

११ जनवरी १९७१	JANUARY 1971	১১ই জানুয়ারী ১৯৭১
पौष शुक्ल १५ सोमवार	**11**	২৬শে পৌষ সোমবার
सं० २०२७		১৩৭৭ সাল
२१ पौष १८९२ शकाब्द	MONDAY	২১শে পৌষ ১৮৯২ শকাব্দ

हे आत्मन् संसारी प्राणी सम्यक्त्व की प्राप्ति के लिए
सत्संग तथा श्रद्धा षट् आवश्यक कर्म ध्यान स्वाध्याय
स्वाध्याय करना श्रेयस्कर श्रेयमार्ग है। तथा मौन पूर्वक अपने
भावों को निर्मल बनाने के लिए द्वादशानुप्रेक्षाओं का चिंतन मनन तथा
ध्यान पदस्थ, पिंडस्थ रूपस्थ रूपातीत इन चार ध्यान द्वारा
चपल चंचल मन के विकारों को रोकथाम करने से अनंत पाप
पुंजों का नाश होता है उससे पवित्र भावनाओं की महाशांति
की प्राप्ति होती है क्रमानुसार शुक्ल ध्यान की प्राप्ति के बाद जीवनमुक्त
अवस्था प्राप्त हो जाती है तथा प्राणी मात्र हितोपदेशक होजाता
है। तथा संपूर्ण पुण्य प्रकृतियों की वृद्धि तथा पाप प्रकृतियों
की हानि होती है तभी भव्य प्राणी उत्कृष्टात्मा की सिद्धि कर
अपने को भगवन अर्हन्त जिनेन्द्र जिन आदि नाम से पुकारे जाते हैं
और अनंत भवों के जन्म मरण मिट जाते हैं परम आनंद
रूप आह्लाद प्रगट होजाता है तथा निराकुलता प्राप्त होजाती
है अतः हे चिदात्मा तुम भी षट् आवश्यकों का आदि मित्र
इच्छा चिंतन मनन के द्वारा परशान्ति की जननी है।
जिससे परमोत्कृष्ट कर्म घाती नाश करता है अष्ट कर्म शीघ्र
नाश को प्राप्त होजाते हैं और ध्यान अध्ययन की परीक्षा
के द्वारा शुभ भावों की वृद्धि कर उत्कृष्टता प्राप्त होती है
उसी समय जीवन आनंद विभोर के साथ विकसित हो
और आत्मानुभूति प्रगट होजाती है। उसको प्राप्त
करो।

हे आत्मन् संसारी प्राणी जबतक अपनी गलती की शुद्धी नहीं करता
तब तक संसारार्णव में गोते खाता फिरता है जब वह अपनी
गलती को गलती मान लेता है और शांति की खोज का मार्ग मिल
जाता है वह शान्ती का मार्ग प्रायश्चित है। वह प्रायश्चित गुरु के
निकट मनका संताप निकालने का साहस होता है क्योंकि श्रद्धा विन-
य पूर्वक होता है जब भावना प्रायश्चित से शुद्ध बनजाती है
उस समय निर्विकल्प भावना श्रेष्ठतम बनजाती है और
संकल्प विकल्प स्वरूप रहित निर्विकल्प ध्यान की सिद्धि
पूर्ण शुक्ल ध्यान की सिद्धि करा देती है और जीवन मरण से
हमेशा के लिए बचा कर परमात्मा पद मिलाती है और
परमोत्कृष्ट महाशान्ति की प्राप्ती होजाती है उसी का नाम मोक्ष-
मुक्ति शिव नाम से पुकारते है। अतः हे निर्मलात्मनो
अपनी गलती प्रायश्चित द्वारा निकाल कर आत्मा को पूर्ण
निर्मल बना डालो और शाश्वत आनंद स्वयं निजानंद आन-
न्द घन की प्राप्ती हो जावे। उसके लिए नित्य प्रात स्वाध्याय
ध्यान मनन करो सर्व जीवो से क्षमा मांगना व
प्राणी मात्र से चार भावनाओ को प्रमुखी रखो उससे
शीघ्र महाशान्ति का शाश्वत सुख प्राप्त होने की
सिद्धी हो जायेगी।

हे आत्मन् संसारी प्राणी जबतक अपनी गलती की शुद्धी नहीं करता
तब तक संसारार्णव में गोते खाता फिरता है जब वह अपनी
गलती को गलती मान लेता है और शांति की खोज का मार्ग मिल
जाता है वह शान्ती का मार्ग प्रायश्चित है। वह प्रायश्चित शुद्ध के
निकट मनका संताप निकालने का साहस होता है अर्थात् श्रद्धा विन-
य पूर्वक होता है जब भावना प्रायश्चित से शुद्ध बनजाती है
उस समय निर्विकल्प भावना ओजतम बनजाती है और
संकल्प विकल्प स्वरूप रहित निर्विकल्प ध्यान की सिद्धि
पूर्ण शुक्ल ध्यान की सिद्धि करा देती है और शीघ्र कर्मों को
हमेशा के लिए नाश कर परमात्मा पद मिलजाती है और
परमोत्कृष्ट महाशान्ति की प्राप्ती होजाती है उसी का नाम मोक्ष
मुक्ति शिव नाम से पुकारते हैं। अतः हे विमला तुम भी
अपनी गलती प्रायश्चित द्वारा निकाल कर भावों को पूर्ण
निर्मल बना डालो और शाश्वत आनंद धाम निजानंद आनं-
द घन की प्राप्ती होजावे। उसके लिए नित्य प्रति स्वाध्याय
ध्यान मनन करो सर्व जीवों से क्षमा याचना करो
प्राणी मात्र से चार भावनाओं का अनुसारी रखो उससे
शीघ्र महाशान्ति का शाश्वत [illegible] की
सिद्धी हो जायेगी।

हे आत्मन् संसारी प्राणी स्पर्शन इन्द्रिय तथा रसना इन्द्रिय
इन दो कामेन्द्रिय के कारण अपनी अनुभूति को खो देता है।
तथा इनके कारण कामान्ध बन जाता है और रसनेन्द्रिय
बन जाता है। और वह आत्मावलोकन से भी असमर्थ
प्राप्त दुर्लभ द्वादशानुप्रेक्षा चिन्तन मनन करना भूल
जाता है और खान पान भी करना छोड़ बैठता है। तथा भी
१००८ श्री देवाधिदेव की भक्ति आराधना का भी विस्मरण करता
है और अपनी उन्नति रूप आत्म कल्याण स्वरूप आत्मोत्थान
को भी मिट्टी में मिला देता है। अहिनिश आत्म ज्ञायक ग्रन्थों
छोड़कर श्रृंगार प्रिय बन जाता है साता असाता पर अविश्वस्त
बनकर भी छोड़ बैठता है। और सुख दुख हो जाता है। अतः
हे विमल इन दो कामेन्द्रियों को वशीभूत करना दमन करने
के लिए श्री जिनेन्द्र देव ने बतलाया है कि अनशन आदि तपों
के द्वारा ही इनका दमन करो। जिन्होंने कामेन्द्रिय पर
[illegible] जिनने वश कर लिया वे ही संसार से पार उतर
गये और आनंद घन पद को पाकर शाश्वत सुख के भागी
के स्वामी हो गये अतः तुम भी पद को पाने के लिये कोशिश
करो।

हे आत्मन् संसारी भव्य प्राणी राग द्वेष को दूर करने के लिये परम पूज्य प्रात स्मरणीय मंगल स्वरूप पंच परमेष्ठी की भक्ति स्तुति वंदन ध्यान द्वारा आत्मावलोकन से करते हैं। संसारी जीवो को राग द्वेष में राग ही बड़ा भयानक है। जो संसारार्णव में रुलाता है। और महाभयानक दुखो का पोषक है। अतः हे चिदात्मन तुम राग का नाश करने के लिए वीतराग सर्वज्ञ वीर प्रभु की भक्ति करना परमावश्यक है। और राग दूर होने से समता रूप भावो की सिद्धि ही जन्म मरण के लिए राम बाण औषधी है। और आत्म अवलोकन में सहायक है। भक्ति ही जन्म मरण का नाशक है। और दुर्गति नाशक है और आत्मा अवलोकन में सहायक है। अतः उन वीतराग सर्वज्ञ हितोपदेशी जीवन्मुक्त परमात्मा, आनंदघन चिदानंद सहजानंद ज्ञानानंद परमानंद निजात्मा अविनाशी पद को देने में सहायक है। उस भक्ति की ही आवश्यकता है। और संसारी प्राणियो के लिए तो अमोघ बाण है। जो संसारार्णव से निकलने के लिए जहाज है। भक्ति से मुक्ति मिलती है। उस को अपनाना ही श्रेयो मार्ग है।

Saturday **3rd JANUARY** **1976**

Beng—18 pous 1382—dwitiya 7 44 p m —13 pausa 1897
18 puha 1382—1 muharram 1396—16 pus 1383—2 pous sudi 2032

Sunrise—6 22 a m (3-363) *Sunset—4 59 p m*

णमो अरिहंताणं

हे आत्मन् संसारी भव्य प्राणी रत्नत्रय (सम्यक् दर्शन, सम्यक ज्ञान
सम्यक् चारित्र) या (देव वीतराग सिद्धान्तशास्त्र, निर्ग्रन्थ गुरु) का श्रद्धान
ज्ञान (जानना) क्रियारूप विश्वास ही संसारार्णव से निकलने के लिए
जहाज के समान है। रत्नत्रय की पूर्णता ही मोक्ष है। जो
भव्यों का परम शान्त आनंद घन चिदानंद परमानंदस्वरूप
सहजानंद नित्यानंद की प्राप्ति का स्थान है वह सहज सुख
का प्रदाता है। और संसारार्णव के जन्म मरण से रहित
पूर्ण ज्ञानी (जीवन्मुक्त केवली अर्हंत जिनको ही प्राप्त होते
आते है। विमलात्मन् तुम मिथ्यात्व का पूर्ण त्याग करके ही
सम्यक्त्व की प्राप्ति कर ही वीतरागी देव सिद्धान्तशास्त्र
निर्ग्रन्थ गुरु की भक्ति कर सकोगे जो साक्षात जन्म मरण
के दुखों से छूट सकोगे और व्रत संयम आचरण कर परम
शान्ति ध्यान स्वाध्याय से ही आत्मन् मरण का क्षय करने के
सामर्थ्य हो सकोगे। और तात्पर्य यह राग द्वेष का त्याग
ही सुन्दर तम उत्तम क्षमादि दश धर्म का परिशीलन करने
वाला बनाता है। और सर्व दुखों से छुड़ाकर आत्मीक
धर्म ही पूर्ण छुड़ाकर परम शांति स्वरूप जो सुख
है। आत्म की प्राप्ति होगी। और परम सुखी निज
सुखी होना ही रत्नत्रय के पालने का फल है
उसको प्राप्त करना तुम्हारा परम कर्तव्य है।

ॐ णमो अरिहंताणं वीतरागायनमः

हे आत्मन् संसारी भव्य प्राणी संसारार्णव में कषाय वश अपने २ कर्म बंध कर वैर भाव धारण कर कर्मों का फल बड़े दुख से दुखी हो रहे है। उन को कषाय का त्याग ही आत्म ज्योति की वृद्धि में सहायक है और क्षमादि भावो की प्राप्ति ही संसारार्णव से निकालने मे समर्थ है। क्रोध आत्मा को अनेक प्रकार के पापो में कर आत्मा को महान दुखो से तिलमिला देता है। और दीर्घ संसारी बनाने में सहायक है। और मान आत्मा मदोन्मत्त बना देता है और नरक गति तिर्यंच गति के मानसिक शारीरिक दुखो का दाता है। तथा मायाचार से भी तिर्यंच गति मे भूख और अनेक बध बंधन के दुखो का सहन करना पड़ता है और लोभ सर्व पापों का कारण होकर हर क्षण दुख ही उठाता रहता है। और अनेक संकल्प विकल्पो का पैदा कर संसारार्णव में गिर कर महान दुख उठाता है। अतः इन कषायो का नाश करने मे परम शान्त स्वभावी आनन्द घन ज्ञानी महा पुरुष चार आराधनाओ को धारण कर जन्म जरा मृत्यु को नाश करता है। और परम वैराग्य भावना का बार २ चिंतवन कर भावो को शुभ शुद्ध बनाकर कषायो व इन्द्रिय विषयों का निग्रह करता है अतः हे चिदात्मन तुम इन चतुकषायो का निग्रह करने के लिए चार आराधनाओं द्वारा अपनी भावनाओ को शुद्ध बना कर द्वादशानुप्रेक्षाओ का चिंतवन करना परमावश्यक है जो संसारार्णव से निकल कर परम पद में स्थिति होती है उसे अपनाना ही परम कर्तव्य है।

Tuesday **2nd NOVEMBER** **1976**

Beng—16 kartick 1383—ekadoshi 8-45 p m—11 kartika 1898
16 kathi 1383—9 zilkada 1396—25 kartick 1384—11 kartick sudi 2033

Sunrise—5-45 a. m. (307-59) *Sunset—4-55 p. m.*

" ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं "

हे आत्मन संसारी भव्यात्मन संसारार्णव से पार होने के लिए
वीतरागी जीवन्मुक्त परमात्मा सिद्धात्मा की भक्ति स्तुति वंदना
चिंतन ध्यान द्वारा तथा रागद्वेष के सर्व संकल्प विकल्पों का क्षय
कर परम शान्ती दायक आवागमन मरण के नाशक अरहंत सिद्ध का
ध्यान पूजन ही सफल है। और भक्ति से मुक्ति के कारण कल्याण
की सिद्धि हो जाती है। और भावों मे विशुद्धी जाग्रत होती है।
और संसार शरीर भोगों से विरक्तता की वृद्धि होती है। उस से
परम वैराग्य जागृत होता है। और उस समय चिंतन मे
भावना होती है। कि मैं किसी का नहीं और मेरा कोई नहीं
वीतरागी बनने के लिए व्रत संयम धारण कर भेद विज्ञान द्वारा
अपने आत्मा को शरीर से पृथक समझ कर शरीर और इस से
भिन्न कर संसार मे रुलाने वाले घातिया कर्म (मोहनी कर्म
ज्ञानावरणी दर्शनावरणी अंतराय कर्म) का नाश कर वीतरागी
सर्वज्ञ हितोपदेशी बन जाते हैं बाद मे बाकी चार अघातिया कर्मों
(वेदनी आयु नाम गोत्र कर्म) का क्षय कर सिद्ध परमात्मा हो जाते हैं।
अतः हे भव्यात्मन् तुम भी परम वीतरागी बनने के लिए अरहंत
सिद्ध परमात्मा की भक्ति स्तुति वंदना पूजन कर उनकी भक्ति
द्वारा परम वैराग्यवान होकर करो जिससे आवागमन मरण का
नाश करो और हरक्षण उन परमात्मा का ध्यान करो
उनके चिंतन स्तुति करते हुए अपना समय लगाते हुए
समय व्यतीत करो यही तुम्हारा प्रयास श्रेष्ठ श्रेयो मार्ग है।

प्रशांत, धीर, वीर, गभीर, निस्पृह, निरीह वृत्ति के धारक साधु २८ मूलगुणों के धारक होते है। इस प्रकार ४६+८+३६+२५+२८=पचपरमेष्ठी के कुल १४३ मूलगुण होते है। इन गुणो का चिन्तवन कर यह जीव स्वय परमात्मा बनता है।

हे विमल आत्मन्! तुम स्वय शुद्ध निश्चय दृष्टि से अरहत हो, तुम ही कर्मों से रहित सिद्ध हो, तुम ही आचार्य हो, तुम ही पाठक हो और तुम ही साधु हो। पर्याय की अशुद्धि द्रव्य की शक्ति को व्यक्ति मे लाने नही दे रही है और पर्याय अशुद्ध है तो वर्तमान मे द्रव्य मे भी अशुद्धता है। कारण पर्याय से द्रव्य भिन्न नही है और द्रव्य से पर्याय भिन्न नही है, अत अपने शुद्ध चिदानन्द चैतन्य प्रभु को प्राप्त करने के लिए प्रयास करो। अर्हंत स्वरूपोऽहं। चिदानन्द स्वरूपोऽह, सिद्धस्वरूपोऽह। परमानन्दाय नम । जो कर्म रहित अर्थात् निष्कर्म है, उन्हे नमस्कार।

●●●

॥ओम् ह्री अरिहताण। ओम् णमो आयरियाण॥

स्वदोषशमन मुक्तिमार्ग

हे आत्मन्! भव्य प्राणी राग-द्वेष रूप भाव कर्म व ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि द्रव्यकर्मो के वशीभूत हो अपने स्वभाव को भूल गया है। अनुभूति के अभाव मे जन्म-जरा-मृत्यु रूप ताप-त्रय से सन्तप्त हो रहा है। इस ताप-त्रय के नाशार्थ रत्नत्रय के प्रतीक १००८ श्री शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ तीन पद तीर्थंकर-चक्रवर्ती व कामदेव के धारी महानात्माओ के चरण-कमलो मे श्रद्धान्वित होकर पूजन, भक्ति, अर्चन, जाप्य, ध्यान करो। त्रिकाल त्रिधा त्रिकरण शुद्धिपूर्वक गुणो का चिन्तन करो।

समन्तभद्र स्वामी ने शान्तिनाथ भगवान की स्तुति करते हुए लिखा—"स्वदोषशान्त्या विहितात्मशान्ति " हे प्रभो! आपने अपने दोषों की शान्ति से आत्म-शान्ति प्राप्त की। हे भगवन्! आपकी भक्ति या अर्चन-वन्दन का एक ही फल चाहिए। हम अपनी त्रुटियो को निकालकर शाश्वत सुख की प्राप्ति करे।

दूसरे के दोषो को देखकर अन्धे के समान बन जाएँ। दूसरे के दोषो को कहने मे मूकवत् हो जाएँ तथा परदोष श्रवण मे हमारी प्रवृत्ति बधिरवत् हो जाये, यही प्रार्थना इष्टसिद्धि की दायक है।

निन्दा करने वाले से निन्दा सुनने वाला ज्यादा पापी है।

हे भगवन्! उपगूहन व स्थितिकरण अग की प्राप्ति हो। मेरा सब कुछ चला जाय पर जब तक मुक्ति न हो, प्रभु! तब तक भक्ति-श्रद्धा और सम्यक्त्व कभी न छूटे।

हे आत्मन्! पर से भिन्न अपने शुद्ध चिदानन्द की प्राप्ति करो। पाँच इन्द्रिय व मन को जीतने से तुम स्वयं चक्रवर्ती हो, ससार मे एकत्व-विभक्त शुद्ध चैतन्य आत्मा ही सबसे सुन्दर है। उस सुन्दरता की प्राप्ति होने पर तुम स्वयं कामदेव हो, ससार सागर के तीर प्राप्त होने के कारण तुम स्वय तीर्थंकर हो, अपने केवलज्ञानस्वभावी

आत्मा की प्राप्ति का सच्चा श्रम ही सच्ची सिद्धि है।

●●●

॥ॐ हूँ णमो आइरियाण॥

मंगल

हे आत्मन्! मगलमय दिवस, रात्रि, अहोरात्रि, पक्ष, मास, वर्ष मे होने वाले गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, निर्वाण इन पचकल्याणक मे किया गया पूजन, जाप, गुणो का चिन्तन मगलमय है।

सम्यग्दृष्टि जीव का एक ही श्वास आने पर और एक श्वास जाने तक भी पचनमस्कार मत्र का चिन्तवन, उच्चारण करते रहने से सम्यग्दृष्टि जीव मगल है।

अर्हन्त केवली प्रणीत धर्म मगल है।

चारो पुरुषार्थ मे मोक्ष का मूल धर्म पुरुषार्थ मगल है।

ससार, शरीर, भोगो, से विरक्त होने के लिए द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन मगल है।

आत्मा की सिद्धि का हेतु होने से सयम मगल है।

घातिया कर्मो से रहित होने से अर्हन्त मगल है।

अघातिया कर्मो से रहित होने से सिद्ध मगल है।

दीक्षा और शिक्षा दान से व शिष्यानुग्रह निग्रह मे दत्त होने से पचाचार पालक आचार्य मगल है।

अध्ययन व शिक्षण दान मे तत्पर, धर्मोपदेश मे तत्पर, धर्म प्रभावक होने से उपाध्याय परमेष्ठी मगल है।

विषय आशाओ के होने से तथा बिना बोले ही मोक्ष मार्ग का सच्चा उपदेश देने से साधु परमेष्ठी मगल रूप है।

तीर्थंकर प्रकृति का कारण होने से सोलह कारण भावनाएँ मगल है।

पचव्रतो की रक्षिका होने से पॉच व्रतो की पॉच-पॉच भावनाएँ मगल है।

मोक्ष मार्ग की प्रथम सीढी होने से सम्यग् दर्शन मगलरूप है।

हेयोपदेय तत्त्वो का ज्ञायक होने से सम्यग्ज्ञान मगलरूप है।

मोक्ष का साक्षात् हेतु होने से सम्यक् चारित्र मगलरूप है।

भव्य जीवो के लिए विविध अनुष्ठान आदि क्रियाओ द्वारा विशुद्धि का हेतु होने से जिन-चैत्यालय मगलमय है।

अहिंसामयी होने से जिनधर्म मगलमय है।

भव्य जीवो के लिए सत्पथ-प्रदर्शिका होने से माता जिनवाणी मगलमय है।

हे विमल आत्मन्। निकल गया है मल जिसका ऐसे विमल आत्मा की प्राप्ति मे किया गया पुरुषार्थ मगल पुरुषार्थ है।

मंगलात्मने नम', चिदानन्दात्मने नम।

●●●

।।ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाण।।

त्रय-रूपात्मा

हे आत्मन्! चौथे गुणस्थान से लेकर बारहवे गुणस्थान तक वाले जीव अन्तरात्मा होते है। वे हीरा के समान है, जो स्वपर-प्रकाशक कहलाते है। तेरहवे गुणस्थान तथा चौदहवे गुणस्थान मे क्रमश अरहन्त व सिद्ध परमात्मा कहलाते है। शेष गुणस्थानो मे जीव बहिरात्मा कहलाते है।

अन्तरात्मा नियम से मोक्षगामी हो जीवन्मुक्त होकर सिद्ध बन जाते है।

बहिरात्मा शरीर को ही आत्मा मानते है। जिन भव्य बहिरात्माओ को वीतराग, सर्वज्ञ, हितोपदेशी, जीवन्मुक्त परमात्मा का सयोग मिलता है तथा जो द्वादशाग सिद्धान्त शास्त्र का श्रवण करता है अथवा जिसने निर्ग्रन्थ आचार्य, उपाध्याय व साधु का सत्सग किया है, वह भव्य बहिरात्मा भी अन्तरात्मा बनकर स्व-पर-प्रकाशक हो जाता है।

वास्तव मे बहिरात्मा ही संसारी है और अन्तरात्मा को परमात्मा बनने का सर्टिफिकेट प्राप्त हो गया है। अन्तरात्मा ही संसार-शरीर-भोगो से विरक्त होकर एक दिन अपनी खोई हुई अनुभूति को प्रकट कर परमात्मा बन जाता है। जो शाश्वत सुख मे हमेशा के लिए निमग्न होकर सिद्ध शिला मे तिष्ठता है वही परम वीतरागी कहलाता है।

हे विमल आत्मन्। तुम भी रागद्वेष को बढ़ाने वाली सगति और आर्त-रौद्र ध्यान का त्याग कर परमात्मा की सिद्धि करो।

हे आत्मन्। सप्त व्यसनो का त्याग व सप्त तत्त्वो का श्रद्धान करना ही सर्वोत्कृष्ट आनन्दघन, सहजानन्द स्वरूप परमानन्द बनाने वाला सम्यक्त्व होता है।

हे आत्मन्। आत्मधर्म के १० भेद उत्तम क्षमादि हैं। इनको मन, वचन, काय तथा नव कोटि से धारण करना श्रेयो-मार्ग है।

हे भव्यात्मन्! मोक्ष पुरुषार्थ की सिद्धि के लिए चार घातिया कर्म के नाशक जीवन-मुक्त परमात्मा की भक्ति परम छैनी है।

हे आत्मन्! प्रमादी जीव सदैव दुखी रहता है। पुरुषार्थी पूर्ण ज्ञानी बनकर यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति करता

है। शिवसुन्दरी के वरण करने वालो ने यही महापुरुषार्थ कर नित्यानन्दी, सहजानन्दी, परमानन्दी आत्मा की प्राप्ति की है।

●●●

॥ॐ ह्र णमो लोए सव्वसाहूण॥

मर्यादापुरुषोत्तम आत्माराम

हे आत्मन्! आत्मबली महाशान्त, भेदविज्ञानी, कर्म-शत्रु का नाश करने वाले परमहस, जीवन्मुक्त, आनन्दघन, निजानन्द, परमानन्द, सहजानन्द परमात्मा मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम की आज जन्म-जयन्ती है, जो भव्यो को आत्मशोधन का मार्ग बताने वाली है। नव देवता रूप परम शात अन्तरात्मा से परमात्मा भेद विज्ञान स्वरूप आनन्दोत्सव अपने मे मनाने वाले महापुरुषो की जन्म जीवन की तिथि जब सामने आती है तब परम शाति की लहर ह्रदय मे उठती है। उस क्षण सर्व पापो से रहित परम शान्त स्वरूप भानु का उदय होता है और परम शान्ति प्रकट होती है। उस क्षण कर्मो के नाशार्थ पचपरमेष्ठी के गुणो का बारबार चिन्तवन करने मे भावना जागृत होती है जो कि रागद्वेष की सर्वथा नाशक है।

हे भव्यात्मन्! भगवान राम ने मर्यादा की रक्षा की। जिनेन्द्र देव कथित वाणी का उल्लघन नही करना सच्ची मर्यादा है। चरणानुयोग की शुद्धि के अनुसार लिया गया शुद्ध आहार आत्म-सिद्धि का हेतु है। अपने व्रतो की मर्यादा मे रहना, पदानुसार कार्य करना, गुरुवचनो पर अडिग रहना, माँ जिनवाणी के अनुसार चलना सच्ची मर्यादा है।

सज्जातीयता, कुलाचार की रक्षा, देश, कुल, जाति की शुद्धता गृहस्थो की मर्यादा है। जो श्रावक इन मर्यादाओ मे रहकर धर्माचरण करता है वही साधु जीवन की मर्यादा का पालन कर महाव्रतो को अगीकार कर कर्मो को क्षय करने मे समर्थ हो सकता है।

मर्यादा की रक्षा के लिए भगवान राम ने कोमलागी सीता को वनवास दिया, और सीता ने मर्यादापुरुषोत्तम राम की भक्ति मे धर्म की मर्यादा बनाये रखने का समाचार भेजा।

नदी, समुद्र, तालाब की मर्यादा उसका पुल है। पुल टूटते ही गाँव के गाँव बह जाते है। रेल की मर्यादा पटरियाँ है। पटरियाँ टूटते ही खतरा उत्पन्न हो जाता है, उसी प्रकार जीवन मे देश, कुल, जाति, धर्म, समाज, परिवार आदि की मर्यादा जब तक है तब तक जीवन खुशहाल रहेगा, मर्यादा टूटते ही त्राहि-त्राहि मच जायगी।

हे विमल आत्मन्! जिनदेव की मर्यादा मे रहकर मर्यादापुरुषोत्तम आत्माराम मे निश्चल होना ही सच्ची रामनवमी है।

॥ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण॥

सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति

हे आत्मन्! रागद्वेष का नाश करने के लिए वीतराग, सर्वज्ञ, हितोपदेशी देव, प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग रूप सिद्धान्त शास्त्र तथा आचार्य, उपाध्याय, साधु (निर्ग्रन्थ गुरु) की भक्ति करना, उनमे श्रद्धान करना यही सच्चा मुक्ति का पथ है।

जिनभक्ति को करने वाले अष्टमूलगुणधारक ही होते है। जिनके अष्टमूलगुण नही है वे श्री १००८ देवाधिदेव वीर भगवान की दिव्य देशना के अधिकारी नही है। हाथी के पालन को गधा नही सहन कर सकता है, वैसे ही अष्टमूलगुण के पालन बिना वीतराग धर्म को धारण करने की योग्यता नही होती है। तब तक मोक्षमार्गी भी नहीं है। भव्यात्मा ही अष्टमूलगुण का धारक व पालक होता है।

'मूल के बिना वृक्ष कभी नही ठहरता'। ससार-शरीर-भोगो से विरक्त होकर मूलगुणो को धारण कर श्रेष्ठ सिद्धो के आठ गुणो की प्राप्ति करो।

यह दिगम्बरी दीक्षा स्वैराचार विरोधिनी है। राग-द्वेष की हानि करने वाली है। अपने मूलगुणो की रक्षा के लिए व्रत की पॉच-पॉच भावनाओ का निरन्तर चिन्तन करो। अहिसाव्रत की रक्षा के लिए—वचनगुप्ति, मनोगुप्ति व ईर्यासमिति का पालन करो। वचन से परुष, निन्दनीय मध्यकशा आदि दुष्ट वचन वर्गणाएँ मत बोलो। मन से कभी किसी का बुरा मत सोचो, सदैव आर्त-रौद्र ध्यान से हटकर धर्म्यध्यान मे मन लगाओ, शुक्लध्यान का लक्ष्य बनाये रखो, अपने लक्ष्य को कभी न भूलो। वस्तु को देख-शोधकर धरो व उठाओ। देख-शोधकर भोजन करो। भोजन मे लम्पटी मत बनो।

आत्मा का सच्चा भोजन ज्ञानामृत है, इसका पान करो।

हे आत्मन्! तुम परमामृत रूप हो, ज्योतिस्वरूप हो, त्रिकाल त्रिलोक मे सतत शुद्धात्म स्वरूप, ज्ञानानन्दमयी, चिन्दानन्द ज्योति-पुञ्ज तुम्हारा आत्मा ही वदनीय है, पूजनीय है, उसी की सदा उपासना करो।

भगवन्! आत्मा की प्राप्ति के लिए वीतराग देव-शास्त्र व निर्ग्रन्थ गुरु की सतत श्रद्धा-भक्ति करते हुए उनकी देशना पर चले तभी मोक्ष-पथ की प्राप्ति होगी।

●●●

॥ॐ ह्रां णमो अरहताणा॥

कोहिनूर हीरा

हे आत्मन्! पचेन्द्रिय विषय एव राग-द्वेष आत्मप्रबोध के घातक है। आत्म-धर्म ससारार्णव से निकालने के लिए जहाज के समान है। हीरा और कोयला दोनो ही एक खान की वस्तु है पर हीरे को घिसते ही घिसावट से चमक

उठता है परन्तु कोयले को कितना ही घिसो काला ही रहता है। जिस हीरे मे एक भी काली रेखा होती है वह किसी काम का नही होता, उसी प्रकार कोयले को जितना जल से धोयेगे, उतना ही काला है।

हे आत्मन्! तुम्हारी आत्मा कोहिनूर हीरे के समान है। जो हीरा सुन्दर, स्वच्छ एव बहुमान वाला है, उसकी प्राप्ति करो, जो स्वभाव से केवलज्ञानी है, पूर्ण आनन्द घन, चैतन्ययुक्त है।

जिन आत्मा का ध्यान एक क्षण मात्र मे असख्यात कर्म-निर्जरा का कारण है।

हे आत्मन्! सत्सगति के अभाव मे भावनाएँ गिर जाती है, मानव की मानवता बिक जाती है।

अकेले रहकर जीवन बिताना अच्छा है किन्तु दुर्जनो की सगति कभी अच्छी नही होती है।

एक जिनभक्ति, दुर्गति से बचाने वाली सुगति की जननी है। विभाव स्वभाव का नाशक, व क्षमा जीवन का स्वभाव है।

क्षमा कवच के समान है जिसके होने पर क्रोध रोता हुआ भाग जाता है। क्षमावान् ही धैर्यवान् होता है। सीता, द्रौपदी, चन्दना, कुमुदचन्द्र, आचार्य मानतुगजी, कवि भूपाल, धनञ्जय, वादिराज सूरि आदि अनेक नाम है, जिन्होने भक्ति के फल से व क्षमा के प्रभाव से कर्मो को जीत लिया था।

एक मिनट का क्रोध ६० मिनट की प्रसन्नता को नष्ट कर देता है। क्रोध करने वाले! क्रोध पर चिन्तवन करो, क्रोध एक बहुत बड़ा शत्रु है। एक क्रोध ने द्वीपायन की बारह वर्ष की तपस्या को भग कर दिया। प्रभु पार्श्वनाथ की एक क्षमा ने केवलज्ञान को प्राप्त करा दिया।

हे विमलात्मन्! क्षमा-हार पहनकर अपनी सुरभि से जीवन को सुरभित बनाओ। आत्मा को सुगंधित बनाओ।

●●●

॥ओम् ह्री णमो उवज्झायाण॥

पञ्चपरमेष्ठी

हे आत्मन्! अपनी आत्मा के शोधन करने के लिए पञ्चपरमेष्ठी के अनन्त गुणो का चिन्तवन करो।

पञ्चपरमेष्ठी के गुणो का चिन्तवन करने से सम्यग्दर्शन होता है।

बड़े-बड़े आचार्य व इन्द्रो ने भगवान की १००८ गुणो से स्तुति की। ससार शरीर भोगो से विरक्त हो, निजानुभूति मे जागृत रहने के लिए पञ्च-परमेष्ठी के गुणो का चिन्तन करना परम कर्तव्य है, वही शुद्धोपयोग की सीढ़ी है। अत गुण चिन्तन, अनन्त गुण को प्रकट करने का अमोघ साधन है। हर क्षण पुण्यार्जन करो, जो कर्मशुद्धि मे कारण है।

हे भव्यात्मन्! अरहत जिन केवली के ४६ गुण है जिनमे ४२ गुण तो बाह्य शरीर आश्रित है और ४ अनन्त चतुष्टय आत्माश्रित है। तीर्थंकर पद पुण्य की महिमा है। कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है—"पुण्यफला अरहता"।

तीनों समय पाँच भरत, पाँच ऐरावत की भूत, भविष्यत् व वर्तमान-तीनों कालों की चौबीसी का नाम भी स्मरण करने से कर्मों की निर्जरा होती है। पुण्य की प्राप्ति होती है। भविष्य काल के तीर्थंकर तो भावीकाल मे होंगे, पर उनका नाम मात्र भी अनन्त भव्यो को भव-समुद्र से पार करता है। पुण्य का प्रभाव है—तीर्थंकर पद प्रकृति का उदय तो तेरहवे गुणस्थान मे आता है। पर यह सत्ता मे बैठी-बैठी अपना चमत्कार दिखाती है। गर्भ में आने के छह माह पूर्व ही, रत्नो की वर्षा होती है। नगर मे दरिद्रता नही रहती। जन्म लेते ही, तीनो लोको में शान्ति की अनुभूति, एक क्षण के लिए नरक मे भी शान्ति मिलती है। दस जन्मातिशय, दस केवलज्ञानातिशय, चौदह देवकृत, प्रातिहार्य, अनन्त चतुष्टय आदि गुणो से युक्त, सकल पदार्थों के ज्ञायक फिर भी निजानन्द रस मे लीन रहने वाले, अरिमोहनीय कर्म रज, ज्ञानावरण-दर्शनावरण और रहस याने अन्तराय कर्मों के नाशक अरिहत परमात्मा, वीतरागी, सर्वज्ञ व हितोपदेशी होने से पूज्य अरहत परमात्मा और घाति कर्म रूपी वृक्ष को जड़ से उखाड़ देने से अरहत परमात्मा केवली जिन की मै त्रिकाल वन्दना करता हूँ।

हे विमल आत्मन्! निश्चय दृष्टि से तुम स्वय अरहत परमात्मा हो। तुम केवलज्ञान ज्योति से भासमान परम चैतन्य प्रभु हो। तुम्हारा वही स्वरूप है जो अरहत का है। अपने स्वरूप को अपना उपादेय मानकर उसी को भजो।

नित्य, निरञ्जन, विमल, शान्त, परमशान्ति विधायक, सिद्ध परमेष्ठी के आठ मूलगुण है—सम्मत्त णाण दसण वीरिय सुहुम तहेव अवगहण।

परमपूज्य-गुरुदेवाय चरणारविन्दे सिद्ध-श्रुत-आचार्य-भक्तिपुरस्सर त्रिकाल प्रतिक्षण नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!

●●●

॥ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूण॥

मुक्ति का प्रथम सोपान

हे आत्मन्! रत्नत्रय की सिद्धि ही सच्ची सिद्धि है। भव्य प्राणी उस रत्नत्रय की प्राप्ति पञ्च-परावर्तन रूप ससार के नाशक पञ्चपरमेष्ठी की भक्ति, स्तुति-अर्चा-वन्दना द्वारा करते है।

रत्नत्रय की प्राप्ति ससार एव शरीरभोगो से विरक्त होकर, व्रत-सयम धारण कर, द्वादशानुप्रेक्षाओ के मनन चिन्तन से होती है। अनुप्रेक्षाओ के चिन्तन से भावो की विशुद्धि होती है, मद-लोभ, मोहकर्म का क्षय होता है। श्रावक चारित्र दो प्रकार का है—(१) पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत तथा समाधिमरण करना=५+३+४+१=१३ भेद रूप।

दूसरा—मद्यादि तीन मकार का त्याग—१, बड़-पीपल-पाकर-उमर-कटूमर=५ इनका त्याग, जुआ खेलना, मास खाना, सुरापान, वेश्या-सेवन, चोरी, परस्त्री-सेवन और शिकार करना—ये सात व्यसन। १३ प्रकार का चारित्र श्रावक का धर्म है।

मुनिधर्म भी १३ प्रकार के चारित्र से शोभित है। अर्थात् ५ महाव्रत, ५ समिति और ३ गुप्ति।

मुनिधर्म और श्रावकधर्म एक नदी के दो तट है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नही। श्रावक अपने चारित्र में दृढ़ होंगे तो मुनिधर्म का निर्वाह सुचारु रूप से होगा और मुनि अपने चारित्र मे दृढ़ होंगे तो उत्तम देशना से धर्म की रक्षा होगी।

हे विमलात्मन्! "चारित्त खलु धम्मो" कुन्दकुन्द आचार्य ने चारित्र को धर्म कहा। तुम उस चारित्र की निरन्तर भावना करो। निर्दोष चारित्र पालन का सदैव प्रयत्न करो। परद्रव्य, परक्षेत्र, पर-काल और पर-भाव से भिन्न अपने शुद्ध चैतन्य प्रभु की आराधना मे तन्मय, तल्लीन व तद्रूप होना ही सच्चा चारित्र है—

तीन रत्न जग माँहि सु ये भवि ध्याइये।
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये।

देव-शास्त्र-गुरु तीन रत्नो की भक्ति का प्रसाद सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र है। रत्नो का उपासक ही जौहरी बन सकता है, और सच्चा जौहरी ही सच्चे रत्नो की प्राप्ति कर सकता है।

●●●

।।ओम् ह्रां णमो अरहताण।।

सच्ची आराधना

हे आत्मन्! भव्य ससारी प्राणी ससारार्णव से पार होने के लिए जिनेन्द्र कथित सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र और सम्यक् तप रूप चार आराधनाओ की आराधना करे।

सच्चा आराधक ही अनादिकालीन चार घातिया कर्मो का नाश कर, अनन्त चतुष्टय रूप अन्तरग्ङ लक्ष्मी को प्राप्त करता है। वही अष्ट प्रतिहार्यों से युक्त चौतीस अतिशयो का स्वामी, छियालीस गुणो से युक्त, केवली, तीर्थंकर, अरहन्त परमात्मा, जिन आदि नामो से पुकारा जाता है।

सच्चा आराधक ही सच्चा आराध्य बनता है। आराधक बने बिना आराध्य की आराधना अधूरी है। अनेकानेक भव्यजीव देशना को सुनकर दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पूर्णता को प्राप्त होते है और अनेक जीव सम्यग्दर्शन को प्राप्त करते है।

सच्चे आराधक ससारार्णव से पूर्ण कर्मो का क्षयकर सिद्ध, निरञ्जन, परमहस, मुक्तिवधू के स्वामी हो जाते है। अत वे ही तारण-तरण कहलाते है।

शका-काक्षा आदि आठ दोषो से रहित सम्यग्दर्शन की आराधना दर्शन-आराधना है। ज्ञान के आठ अग अर्थाचार, व्यञ्जनाचार आदि सहित सम्यक् ज्ञान की आराधना ज्ञान-आराधना है। तेरह प्रकार का चारित्र निरतिचार पालना चारित्र-आराधना है तथा बारह प्रकार के तपो मे निरन्तर उद्यम करना तपाराधना है।

हे विमल आत्मन्! विमल कहते है मल रहित आत्मा को। तुम भी अपनी पूर्ण अनुभूति, निर्मल आत्मा की प्राप्ति के लिए निरन्तर चारो आराधनाओ की आराधना करो, यही श्रेयोमार्ग है। निश्चय से परमसिद्ध परमात्मा के समान शुद्ध चैतन्य प्रभु चिन्तामणि की श्रद्धा ही सम्यग दर्शन आराधना है। चैतन्य आत्मा की प्रतीति ही ज्ञान आराधना है। चैतन्य की सम्यक् अनुभूति ही चारित्र आराधना है, उस चैतन्य की खोज ही सच्ची तपाराधना है। इस प्रकार सच्ची आराधना आराधक को आराध्य बना देती है।

●●●

॥ॐ ह्री णमो सिद्धाण॥

षट् आवश्यक

हे आत्मन्! मोहजाल को नाश करने के लिए वीतराग प्रभु की आज्ञा का अनुसरण करो। जिनदेव की आज्ञा है—

षट् कर्मो का अनिवार्य पालन करो। षट् आवश्यक क्रियाओ मे हानि नही करना श्रेयोमार्ग है। श्रावकधर्म व मुनिधर्म दोनो के ६-६ आवश्यक कर्म वीतराग प्रभु ने अपनी देशना मे बताये है। देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, सयम, तप और दान ये श्रावक के षट् आवश्यक कर्म है तथा सामायिक, प्रतिक्रमण, वन्दना, सयम, तप और दान ये मुनियो के षट् आवश्यक कर्म है। दोनो को शक्त्यानुसार इनका पालन करना चाहिए।

षट् आवश्यको को समय पर करना चाहिए। असमय मे किया गया कार्य फलदायी नही होता, जैसे फल लगने पर वृक्ष से फूल की इच्छा करना व्यर्थ है। षट् आवश्यक कार्य समय पर करने से परिणामो मे विशुद्धि आती है। ये कृतिकर्म ही आत्मा को अञ्जन से निरञ्जन बनाते है।

ये षट्कर्म मोक्षमार्ग का कलेवा रूप है; इनका प्रतिसमय परिशीलन करते हुए भव्यात्मा, ससार शरीर भोगो से विरक्त होकर जीवनोन्मुख परमात्मा बन जाता है।

अवश्य करणीयम् इति आवश्यकम्, अर्थात् जो जीव मे अवश्य करणीय कार्य है वे आवश्यक कहलाते है। जैसे नीव बिना भवन नही बन सकता, पुत्र के बिना गृह की शोभा नही होती, पडित के बिना सभा की शोभा नही होती, वैसे ही षट् आवश्यको के पालन के बिना श्रावक व साधु की भी शोभा नही होती।

हे विमल आत्मन्! द्वादशानुप्रेक्षाओ का बार-बार चिन्तन करो जो व्रत सयम की रक्षिका है। अनुप्रेक्षाओ का चिन्तन विशुद्धता लाता है। हे आत्मन्! निश्चय से एकमात्र चैतन्यमयी आत्मा ही नित्य है, शेष सर्व अनित्य है, तू ही मेरा शरण है, अन्य कोई शरण नहीं है, व्यवहार मे पञ्चपरमेष्ठी शरण है। ससार असार है, मुख्य अवस्था ही सार है, स्वयं अकेला आया है, अकेला सुख-दुख का भोक्ता है। तेरे परिणाम ही शुभाशुभ के कारण भूत हैं जीवन में कोई तेरा नहीं है। तू भी किसी का नहीं है, बाह्य क्रिया-कलापो से रहित आत्मनिधि का चिन्तन ही सवर है, समय पा कर कर्म निर्जरित हो जाते है और आत्मा में स्थिरता की प्राप्ति हो जाती है। इस संसार

में सब धन-दौलत परिवार आदि की प्राप्ति सुलभ है। पर सत्य समीचीन बोधि की प्राप्ति अत्यन्त कठिन है। अपने मे अपने परिवार को खोजकर सहजानन्दी आत्मधन की प्राप्ति ही आवश्यक कृति-कर्म का फल है।

●●●

।।ओम् ह्रीं णमो आइरियाण।।

भक्ति

जिनदेव की भक्ति कल्पवृक्ष के समान है।

वीतराग प्रभु १००८ श्री महावीर के चरणो मे श्रद्धान्वित होते हुए, भक्ति से अर्चन, पूजन, वन्दन, मनन, चिन्तन व ध्यान करना श्रेयोमार्ग है।

जिनभक्ति भव्यात्माओ को क्रमश ससार के शरीर भोगो से छुड़ाकर मुक्ति की ओर ले जाती है।

जिनभक्ति परमोत्कृष्ट वैराग्य भावना की जननी है।

जिनभक्ति मुक्तिद्वार की अचूक कुञ्जी है।

जीव जिनभक्ति से अष्टकर्मों का क्षय कर, अष्टगुणो को प्राप्त कर अष्टम क्षिति (सिद्धशिला) पर विराजमान होता है।

जिनभक्ति मानव को दानवता से बचाती है। आत्मा मे मार्दव-आर्जव आदि उत्तम गुण प्रकट होते है।

जिनदेव की भक्ति सम्यक् दर्शन प्रकट करती है। जिनशास्त्र की भक्ति से सम्यक् ज्ञान व निर्ग्रन्थ दिगम्बर गुरुजन की भक्ति से सम्यक् चारित्र प्रकट होता है। स्पष्ट है, भक्ति 'रत्नत्रय की आधार शिला' है।

हे आत्मन्! यह ससारी प्राणी अपनी अनुभूति की प्राप्ति के लिए सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति कर पूर्ण सिद्ध बन सहजानन्दी, परमानन्दी, नित्यानन्दी, अविनाशी, आनन्दघन परमात्मा बन जाता है।

पूज्य पुरुषो में आदर ही भक्ति है। वह भक्ति पूजक को पूज्य बनाती है। गुणो मे अनुराग बढ़ाती है।

इष्ट की सिद्धि के लिए मगलमय आनन्दघन, जीवमुक्त, पूर्णज्ञानी, सहजानन्दी, परमानन्दी, परमात्मा पद की प्राप्ति के लिए देव, शास्त्र, गुरु, पञ्चपरमेष्ठी, चैत्य, चैत्यालय, नौ देवताओ की भक्ति 'कामधेनु' के सामन है।

जो जीव कषायवश देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति नही करता, मन्दिर नही जाता, शास्त्र का स्वाध्याय नही करता वह नरक-तिर्यञ्च के घोर दु खो को उठाता है। जिनभक्ति 'चिन्तामणि रत्न' है।

रावण ने क्रोधावेश मे कैलाश पर्वत को उठाकर फेकना चाहा तब बालि मुनि ने अपना अगुष्ठ दबाकर पर्वत पर स्थित जीवो की रक्षा की। मन्दोदरी ने मुनिराज से रक्षा की प्रार्थना की। रावण जिनभक्ति मे लीन हुआ। भगवान शान्तिनाथ की स्तुति मे इतना तल्लीन हो गया कि वीणा का तार टूट. गया। तब अपनी नस लगाकर वीणा बजाई,

तभी घोर पापबंध मात्र तीसरे नरक तक रह गया। गुरुभक्ति के प्रसाद से, उनको भाव-भक्ति से नमस्कार करने से स्व की निन्दा-गर्हा को प्राप्त श्रेणिक का सप्तमनरक का आयुबन्ध मात्र ८४ हजार वर्ष का रह गया। इसलिए भक्ति को कभी न छोड़ो। हे आत्मन्! भक्ति से मुक्ति सरल मार्ग है।

●●●

॥ॐ ह्रौ णमो उवज्झायाण॥

मृत्युञ्जयी

ॐ ह्रा-ह्री-ह्रु-ह्रौ-ह्र —अ सि आ उ सा नम सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा।
ॐ ह्री आचार्यमहावीरकीर्तिभ्यो नम। ॐ हूँ णमो आइरियाण।

हे आत्मन्! अपना हर क्षण मगलमय बनाने के लिए पञ्चपरमेष्ठी भगवान की, अरहत जीवन्मुक्त, केवली वीतराग हितोपदेशी देवाधिदेव, सहजानन्द, परमानन्द, आनदघन, अविनाशी सिद्ध भगवान तथा सूरि आचार्य पाठक उपाध्याय साधु, ऋषि, मुनि, यति, अनगार, निर्ग्रन्थ गुरु की वन्दना, ध्यान व चिन्तन कर।

जो परमेष्ठी के गुण है वही तेरा स्वभाव है। इनसे भिन्न राग-द्वेष विभाव है।

हे आत्मन्! क्रोध, मान, माया, लोभ, राग-द्वेष, ये सब ससार के कारण है। इनको दूर करने के लिए जिनाज्ञा मे चलो

हे आत्मन्! रत्नत्रय ससारार्णव से पार करता है। इसकी आराधना करने वाला दुखो से पार होकर अनुभूति को प्राप्तकर आनन्दघन, सहजानन्द, परमात्मा बन शाश्वत सुख का स्वामी बन जाता है।

हे भव्यात्मन्! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष परुषार्थ की सिद्धि के लिए वैरागी बनना आवश्यक है।

परम वैराग्य को धारण करने वाला सज्जातीय होगा, पञ्चेन्द्रिय विषय-कषायो से रहित होगा। वही धर्म पुरुषार्थ के साथ-साथ मोक्ष पुरुषार्थ की सिद्धि कर सकेगा। उत्तम सस्कार (वर्णसकर दोष रहित) और कुलाचार श्रेष्ठ है। वही ससार भोगों से विरक्त होकर व्रत सयम धारणकर, पूर्व महाव्रत रूप सयम को धारण करता हुआ, संसार का विच्छेद कर स्व-पर का कल्याण करने वाला महापुरुष ध्यानाध्ययन की सच्ची देशना देने वाला होता है।

इच्छाएँ, जीव को ससार समुद्र मे पटकती है। इन इच्छाओ को ध्यान, स्वाध्याय, चिन्तन, मनन से भव्यगण काबू मे करके विजय करते है।

धैर्य की रक्षा परिग्रह त्याग मे निहित है।

मृत्युञ्जयी

हे आत्मन्! ससारी प्राणी मरने से डरते हैं। पर वीतराग सन्त मरण से लड़ते है और मरण उनसे डरता है।

श्वासों का निकलना ही ससार-मरण है। जीव मृत्यु से डरता है पर मरकर जिस गति मे जाता है, उसी गति मे रम जाता है। उसी परिवार मे तन्मय हो जाता है। मृत्यु को जीतने के लिए उपक्रम करने से डरता है। जिसने मृत्यु को जीत लिया उन्हे मृत्युञ्जयी कहते है। ये मृत्युञ्जयी जिन भगवान, जीवन्मुक्त व सिद्ध परमात्मा है।

चतुर्विंशति तीस होती है। चौबीसी वर्तमान, भूत व भविष्य की तथा ऐरावत क्षेत्र की ७२-७२ जम्बूद्वीप के, इसी प्रकार घातकी खड व पुष्करार्द्ध के कुल पूर्णरूपेण ५ भरत, ५ ऐरावत की तीस चौबीसी के ७२० जिनेन्द्र सब मृत्युञ्जयी है। मृत्युञ्जयी का ध्यान जीव को मृत्युञ्जयी बना देता है।

॥ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण॥

संगति, व्यसन व ध्यान

कुसगति के प्रभाव से अहर्निश उच्च भावना रखने वाला भव्य जीव भी नीच बन जाता है और हीन भावना रखने वाला भी सत् सगति को पाकर आनन्दघन, चिदानद, परमानन्द, सहजानन्द बन जाता है।

हे भव्यात्मन्! सप्तव्यसनो का त्याग कर, विशुद्धि का श्रम करना ही कार्यकारी है। सप्तव्यसनो का त्याग, धर्मध्यान का साधन व वैराग्य का बीज है।

राग के कारण जीव को शारीरिक-मानसिक महान दु खो का भार वहन करना पडता है।

सर्व-दुखो से छूटने के लिए णमोकार मत्र के जपने से सर्व कार्य अपने आप सिद्ध हो जाते है।

महामत्र, अपराजित मत्र ये सब णमोकार मत्र के नाम है।

अपराजित मत्र का जाप्य शुरू करते ही सौभाग्य की वृद्धि होना शुरू होगी। मानसिक, शारीरिक आधि-व्याधि सब इसी से भाग जाती है। इसलिए हे विमल आत्मन्! खाते-पीते, सोते-जागते, हर पल इस मत्र का स्मरण करो।

हे आत्मन्! आत्मविकास के लिए धर्मध्यान ही कार्यकारी है। धर्मध्यान, भव्यप्राणी के राग-द्वेष का परिहार कर आत्म-ज्योति को प्रकट करता है। इस ध्यान के श्री १००८ देवाधिदेव भगवान महावीर स्वामी ने अपनी देशना मे चार भेद बतलाये है। वे है—आज्ञा-विचय, अपाय-विचय, विपाक-विचय, और सस्थान-विचय। इनमे वीतराग सर्वज्ञ की आज्ञा मानना, उनके उपदेश पर विश्वास करना आज्ञा-विचय धर्मध्यान है। मिथ्यात्व व पञ्चेन्द्रिय विषय-कषायो से बचना और भी जो आत्मध्यान व धर्मध्यान के विरोधी है उनसे बचना अथवा ससारी भव्यजीवो को देखकर चिन्तन करना कि ये पामर प्राणी सर्वज्ञ के प्रतिकूल चलकर दुखी हो रहे है। ये कब सुखी होगे आदि, ये सब अपाय-विचय धर्मध्यान है। अष्टकर्म ज्ञानावरणादि कब तक दूर होंगे अथवा शान्तभाव से कर्म फल सहना अथवा जीवों के कर्मफल का चिन्तन करना यह सब विपाक-विचय धर्मध्यान है तथा तीन लोक के आकार आदि का चिन्तन करना सस्थान-विचय धर्मध्यान है।

हे विमल आत्मन्! तुम धर्मध्यान करते हुए शुक्लध्यान का ही लक्ष्य रखना, यही सर्वोत्कृष्ट है। धर्मध्यान परम्परा से मुक्ति का कारण है जबकि शुक्लध्यान साक्षात् मुक्ति का कारण है पर धर्मध्यान के बिना शुक्ल ध्यान की सिद्धि नही हो सकती। धर्मध्यान भी वीतरागप्रभु की देशनानुसार चलने पर विशुद्ध बनाता है। ●●●

॥ॐ ह्रां णमो अरहंताणं, ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं॥

पञ्चधारणा

हे आत्मन्! संसारी प्राणी संसारार्णव से निकलने के बजाय उसमे फँसने का कार्य करता है। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह—ये पाँच पाप तथा पंचेन्द्रिय विषय कषाय इस जीव को दीर्घ संसारी बनाते है। जैसे जब कफ मे मक्खी पड़ जाती है तब उससे निकलने के लिए अनेक बार फड़फड़ाती है परन्तु उल्टी उसी मे फँस जाती है और यहाँ तक कि अपने प्राण भी गवाँ देती है। वैसे ही मानव है। अस्तु, हरेक मानव का कर्तव्य है कि वह रत्नत्रय धर्म का पालन करे।

हे आत्मन्! वीतराग सर्वज्ञदेव की द्वादशांग जिनवाणी भव्यात्माओं के आधि-व्याधि की नाशक है। इसके स्वाध्याय, मनन, चिन्तन से परम शान्ति प्रकट होती है। समस्त आपदाएँ मिट जाती है। जिनवाणी सुख का परम रसायन है।

हे आत्मन्! जिनेन्द्र देव ने अपनी देशना मे समभाव की सिद्धि के लिए संस्थान-विचय धर्मध्यान व शुक्ल ध्यान को विशेष कारण बताया। संस्थान-विचय भी चार प्रकार का कहा है—पिण्डस्थ, पदस्थ, रूपस्थ और रूपातीत मे भिन्न-भिन्न पदो से मन्त्रोचारण करना। ॐ नमः। ॐ ह्रीं नमः। ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। ॐ अ ह्राँ सि ह्रीं आ ह्रूँ उ ह्रौं सा ह्रः नमः, ॐ अर्हद्भ्यो नमः। ॐ सिद्धेभ्यो नमः। ॐ सूरिभ्यो नमः। ॐ पाठकेभ्यो नमः। ॐ सर्वसाधुभ्यो नमः। इत्यादि मंत्र वाक्यों का ध्यान पदस्थ ध्यान है। अनन्तचतुष्टय आदि ४६ गुणो से युक्त अर्हन्त प्रभु का समवसरण आदि विभूति सहित ध्यान करना रूपस्थ ध्यान है। सिद्धप्रभु का चिन्तन रूपातीत ध्यान है। पिण्डस्थ ध्यान के भी पाँच भेद है। पृथ्वी धारणा, अग्नि धारणा, वायु धारणा, जल धारणा, और तत्त्वरूपवती धारणा। ये धारणाये सम्यक् प्रकार के ध्यान मे मदद करती है।

जब यह ध्यान, पृथ्वी धारणा मे करता है—एक बडे समुद्र का चिन्तन कर उस समुद्र मे एक कमल सहस्रदल का है और उस पर एक स्फटिक का सिंहासन है। उसमे मैं बैठा हुआ हूँ। ठंडी-ठंडी आत्मप्रबोध लहर उठ रही है। उस सिंहासन पर मै शान्तिपूर्वक बैठा हुआ पंचनमस्कार मंत्र का चिन्तन करता हुआ, अपने को अपने मे लीन करता हूँ। इसका नाम पृथ्वी धारणा है।

हे विमल आत्मन्! अष्ट कर्मों का क्षय करने के लिए मै अब अग्नि धारणा का चिन्तन करता हूँ। वह उत्तम, महान् आत्मा, पद्मासन से बैठा हुआ अपनी नाभि मे १६ दल कमल का चिन्तन करता हुआ, बीच कर्णिका मे 'अर्हं' और १६ पखुड़ियों पर १६ स्वर का चिन्तन कर हृदय कमल मे अष्ट कमल दल का चिन्तन कर उनमे ज्ञानावरणादि अष्टकर्मो का स्थापन करता हुआ नाभि के अर्हं मे से र र र र र करती हुई अग्नि प्रज्वलित होकर अंतरंग मे द्रव्यकर्म एवं भावकर्म को जला रही है और बाह्य मे नौ कर्म रूप शरीर को जलाती हुई सीधी होकर त्रिकोणाकार ▲ बनकर तीनों कोणो पर स्वस्तिक बनाती हुई चिन्तवन करे।

हे विमल आत्मन्! जन्म-मरण के नाश करने के लिए, कर्मों का नाशक परम ध्यान महान उपकारी है।

हे विमल आत्मन्! अग्नि धारणा मे अपनी सफलता के पश्चात् उसी क्षण वायु धारणा का चिन्तन करते हुए, जो अग्नि धारणा में अपने पिंड को भस्म कर दिया था और जो राख बची उसे सॉय-सॉय सॉय-सॉय करके

वायु धारणा ने उड़ा दिया। स्फटिक के समान. चैतन्य आत्मा जो राखमयी है उसे प प प प प करती हुई जल धारणा से बरसते हुए जल ने साफ कर दिया। पूर्ण शुद्ध चैतन्य आत्मा उसी समय अपने रूप को प्राप्त कर ऊर्ध्वगामी हो गया। सिद्धो के समूह मे विरजमान उस चिदानन्द चैतन्य प्रभु का ध्यान तत्त्वरूपवती धारणा है।

स्वाध्याय से पदार्थों का ज्ञान होता है और तत्त्वज्ञान से ध्यान की सिद्धि होती है। ध्यान से परम सुन्दर आत्म तत्त्व की प्राप्ति होती है इसीलिए हे कल्याणेच्छुक! विमल आत्मन्! कण्ठगत प्राण होने तक भी स्वाध्याय को कभी न छोड़ना।

धर्मध्यान बोथरा चाकू है। शुक्लध्यान तेज धार है।

ध्यान कार्यसिद्धि का अमोघ मन्त्र है।

ध्यान आत्मा का बल है।

ध्यान भव्यात्मा का परम मित्र है।
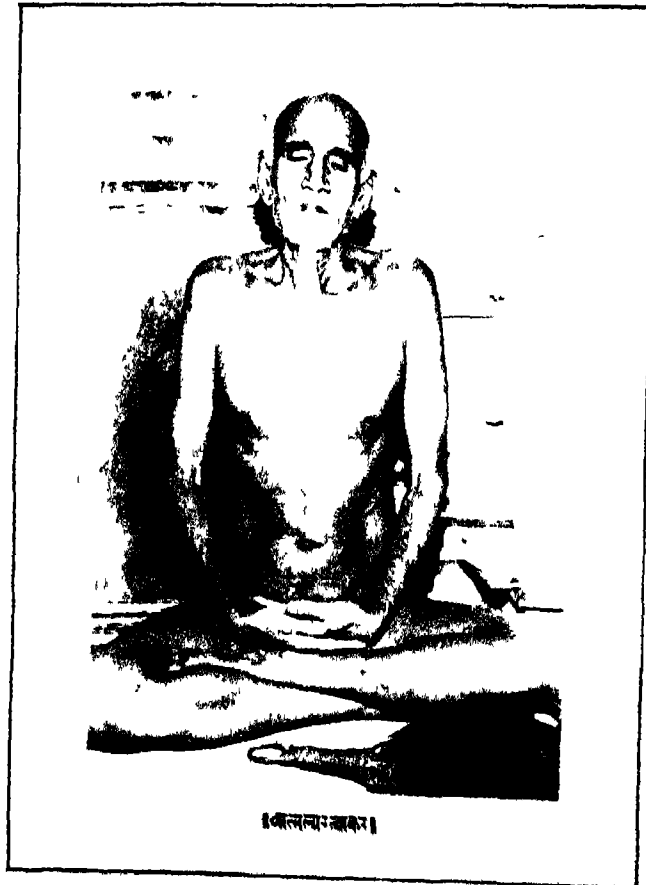
सागर के मोती

(आचार्यश्री की डायरी से)

(१) हे आत्मन्। परिणाम जितने निर्मल रहेंगे, उतनी ही शीघ्रता से ससार-बधन से मुक्त हो जाओगे।

(२) स्वय अर्जित कर्मोदय को हम नही रोक सकते परन्तु कर्मोदय में हर्ष-विषाद नही करना यह हमारे पुरुषार्थ का कार्य है।

(३) जो आत्मा मानसिक निर्मलता की सावधानी रखेगा वही इस अनादि ससार से पार होगा।

(४) राग-द्वेष ही आत्मिक सुख मे बाधक है।

(५) बाह्य उत्तम समागम की प्राप्ति पुण्य का फल है और अतरग निर्मलता पुरुषार्थ का फल है।

(६) सच्चा पुरुषार्थ वही है, जब कर्म उदय मे आने पर भी आत्मा मे इष्ट-अनिष्ट की कल्पना न रहे।

(७) द्रव्य का होना तो पूर्व उपार्जित पुण्य से होता है परतु उसका सदुपयोग विरले पुण्यात्मा ही करते है।

(८) सयम क्रोधादिक कषायो व इन्द्रिय तथा मन को विजय करने वाला है।

(९) सयम रहित जीवन पशु तुल्य जीवन है।

(१०) असयम से तन, धन व यश का नाश होकर, आत्मा का पतन होता है।

(११) सयम से तन, धन व यश की प्राप्ति हेकर, उत्तम गति की प्राप्ति होती है।

(१२) विषय-कषायो का सेवन करना मानो दुर्गति को आमत्रण देना है।

(१३) दान देना दूसरो का भला करना नही, अपितु सर्वोपकार है।

(१४) आत्मा की हानि शारीरिक रोग से नही, विकारी भावो से है।

(१५) हमारे परिणामों मे ही सुख-दुख है। शुद्ध परिणामो से सुख और अशुद्ध परिणामो से दुख होता है।

(१६) हजार मन ज्ञान से एक मुट्ठी चारित्र श्रेष्ठ है।

(१७) लाखो शत्रुओ से उतनी हानि नही होती, जितनी क्रोधादि परिणामो से हो जाती है।

(१८) समता भाव के बिना सयम आदि का पालन निरर्थक है।

(१९) अज्ञानी दुख से डरता है, ज्ञानी दु ख मे धैर्य धारण करता है।

(२०) इच्छाओ का अभाव ही सुख है। इच्छाओ का बढ़ना दुख है।

(२१) हे आत्मन्! कर्म सेवक है, आत्मा स्वामी है।

(२२) स्वामी को सेवक से डरना नही चाहिए।

(२३) जिस प्रकार विपरीत भोजन से स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उसी प्रकार विषय-कषाय से आत्मा का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।

(२४) पर के दोषो को प्रकट करना मानो स्वदुर्गति को बुलाना है।

(२५) जितने अशो मे ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है, उतने ही अशो मे शारीरिक व मानसिक शक्ति विकसित होत है।

(२६) ब्रह्मचर्य की रक्षा पाँचो इन्द्रियो और मन पर विजय करने से होती है।

(२७) निंदक के वचन सुनकर नाराज होना अशुभ आस्रव की वृद्धि करना है।

(२८) हे आत्मन्! प्राणी मात्र को सुखी देखने की भावना, उनका हित करने का प्रयत्न करना मानवता है।

(२९) मनुष्य का सबसे बडा गुण सदाचार व विश्वासपात्र होना है।

(३०) मनुष्य वही है जो अपने वचनो का पालन करे।

(३१) ससार मोह रुप है। मोह पर जिसने विजय प्राप्त की वही मानव है।

(३२) आत्महितैषी इन्द्र व चक्रवर्ती के भोगों को भी रोग समझता है।

(३३) ससार अनादिकाल से जेलखाना है। ससारी जीव अनादिकाल से बन्दी है।

(३४) राजपाट व स्त्रियो का त्याग सरल है किन्तु मान, सत्कार, पूजा का त्याग कठिन है। यही भव-भ्रमण क कारण है।

(३५) धन-धान्य पर दृष्टि रखना, ज्ञानियों की दृष्टि मे अपराध है।

(३६) चोर चोरी करता है पर धनवान् सैकडों अनीतिया, अन्याय व असत्य के बल पर धन छीनता है। वास्त मे दोनो अपराधी है।

(३७) वर्तमान मे धन से ही खानदानी समझे जाते है। पूर्व में, धर्म से समझे जाते थे। वास्तव मे धर्मी ह खानदानी होते है।

(३८) चैतन्य का ज्ञान विश्व में प्रेम व शान्ति उत्पन्न होने का कारण है।

(३९) अज्ञान के कारण द्वेष, क्लेश, ईर्षा व निन्दा का साम्राज्य फैलता है।

(४०) ससार रूपी कुटुम्ब के घर अपनी आत्मा मेहमान के समान है।

(४१) योग-निरोध की चिन्ता होती है, पर कषाय-निरोध की उपेक्षा की जाती है। हे विमल आत्मन्! कषाय ह ससार है।

(४२) शारीरिक सुख पराधीन है परन्तु आत्मिक सुख स्वाधीन है।

(४३) मेरी भूल बताने वाला मेरा मित्र है।

(४४) राग करना है तो सत्पुरुषो मे करो।

(४५) द्वेष करना है तो अपने कुटिल भावो पर करो।

(४६) जहाँ राग-द्वेष है वहाँ सदा संक्लेश है।

(४७) जहाँ उदासीनता है वहाँ दुखों का नाश है।

(४८) मूल द्रव्य न तो उत्पन्न होता है न उसका नाश ही होता है, मात्र पर्याय बदलती है।

(४९) जो ज्ञानी को पहचानता है वही ज्ञानी बन जाता है।

(५०) वही मनुष्य ससार से मुक्त होगा जो अपने दोषों की आलोचना करेगा।

(५१) दुख की जननी आकुलता है।

(५२) निराकुलता ही सुख की जननी है।

(५३) पर की रक्षा करो परन्तु उसमे अपने आपको मत भूलो।

(५४) कल्याण-पथ पर सम्यग्दृष्टि ही चलता है।

(५५) दूसरे के प्रति बुरा विचार करके अपने उपयोग का दुरुपयोग मत करो।

(५६) जिन कार्यों को करने मे आकुलता होती है वे कभी मत करो, चाहे शुभ हो या अशुभ।

(५७) उस त्याग का कोई महत्त्व नही जिसमे शान्ति न हो।

(५८) राग-द्वेष को बुद्धिपूर्वक जीतने का प्रयत्न करो, ये केवल पठन-पाठन से दूर नही होगे। आवश्यकता है कि पर-वस्तुओ मे इष्टानिष्ट कल्पना न होने दो, यही सच्चा पुरुषार्थ है।

(५९) अपनी प्रवृत्ति निर्मल बनाओ, उस पर तुम्हारा अधिकार है।

(६०) पर की प्रवृत्ति आपके अधीन नही है, उसकी चिन्ता करना व्यर्थ है।

(६१) अन्याय का धन और इन्द्रिय विषय—ये दो सुमार्ग के रोड़े हैं।

(६२) घर को छोड़ना, मौन धारण करना, देशव्रती, महाव्रती का वेश धारण करने मात्र से कल्याण नही है। हे विमल आमन्! कल्याण है भावों की निर्मलता से।

(६३) यदि निर्मलतापूर्वक तथा तात्त्विक विचारपूर्वक अपने को देखा जाय तो अपने मे ही तीर्थ और शान्ति का सागर है।

(६४) शरीर को सदा निश्चल बनाओ, मन को निश्चिन्त बनाओ, वचनों को सदा सरल बनाओ।

(६५) व्रत, उपवास व ध्यान करके आकुलता का क्षय करो।

(६६) शत्रु व मित्र मे समभाव ही उन्नति का साधक है।

(६७) पारमार्थिक धर्म की प्राप्ति, बिना व्यवहार के नहीं होती।

(६८) हर एक के अभिप्राय को सुनकर कुछ समय विचार करो, सहसा कदम मत बढ़ाओ।

(६९) जिसे क्षमा का स्वाद आ गया, उसे क्रोध दूर से ही छोड़ देता है।

(७०) निज स्वभाव की प्राप्ति पुरुषार्थ से सहज है।

(७१) हे विमल आत्मन्! मोह के उदय से ही बड़ी-बड़ी भूले होती है। उस भूल को निकालना ही श्रेयोमार्ग है।

(७२) वचन की सुन्दरता से, अन्दर की प्रवृत्ति भी सुन्दर हो, यह जरूरी नही है।

(७३) पद के अनुसार शान्ति आती है।

(७४) गृहस्थ अवस्था मे शान्ति की श्रद्धा हो सकती है परतु उसका स्वाद नही आ सकता।

(७५) जीव जो कुछ काम करता है वह अपनी कषाय पीड़ा के शमन के अर्थ से करता है, फिर वह काम पर के उपकार का हो या अपकार का हो।

(७६) हम परोपकार करते है यह भावना नही होनी चाहिए, तभी उपकार की सिद्धि होती है।

(७७) वर्तमान मे नि:स्वार्थ समागम मिलना बहुत दुर्लभ है। अत सर्वोत्तम समागम तो अपनी आत्मा मे रागादि परिणति को घटाना है। हे विमल आत्मन्! मनुष्य भव का यही लाभ है।

(७८) हे आत्मन्! सुख न तो ससार में है न मोक्ष मे। न कर्मोदय मे है, न कर्मो के अभाव में। सुख तो स्वय के पास है। इस निराकुल सुख का, आत्मा के साथ तादात्म्य सम्बन्ध होते हुए भी, मोहवश हम उसे अन्यत्र खोजने मे लगे रहते है, जैसे कस्तूरी हिरण के पास है पर वह खुशबू के लिए बाहर घूमता है।

(७९) सुख इन्द्रिय-विषयो मे नही है, सुख इच्छाओ के रोकने मे है।

(८०) अन्य प्राणियो पर दया व रक्षा करने वाले मानव विश्व में बहुत है। अपनी दया व रक्षा करने वाले विरले ही है।

(८१) दूसरे के द्वारा तुम्हारा कोई अनिष्ट हो जाए तो उसके लिए खेद न करो। उसे अपने पहले किये हुए बुरे कर्मों का फल समझो।

(८२) अमुक ने मेरा अनिष्ट किया, ऐसा विचार कभी मन में मत आने दो, यही श्रेयोमार्ग है।

(८३) अपने दोषो को देखने की आदत डालो। तभी तुम्हे पता चलेगा कि तुम्हारा मन भी दोषों से भरा है फिर दूसरो के दोष देखने की फुर्सत ही नही मिलेगी।

(८४) जीवन बहुत थोड़ा है, सबसे हिलमिलकर चलो।

(८५) घटे भर के लिए भी यदि कोई तुमसे मिले तो प्रेमपूर्वक अपने सरल व्यवहार से उसके हृदय मे अमृत भर दो और पग-पग पर केवल वही वितरण करो।

(८६) गुण-दोष सबमे रहते हैं। भूल भी सबसे होती है। यदि तुम किसी का कोई काम देखते ही दोष ढूंढने लगोगे तो तुम्हारी वृत्ति आगे चलकर बहुत दूषित हो जायेगी। खुद जलोगे दूसरों को जलाओगे।

(८७) यदि तुम दूसरो के गुण देखोगे तो तुम्हारी वृत्ति सात्विक होगी, प्रसन्नता मिलेगी, शान्ति बढ़ेगी।

(८८) सम्यग्दृष्टि को नियम से ज्ञान और वैराग्य होता है।

(८९) सम्यग्दृष्टि दृष्टि की अपेक्षा से अबधक कहा गया है किंतु पर्याय मे जितना राग है उतना बन्ध अवश्य है।

(९०) शुभ-अशुभ के उदय में समता भाव रखना शान्ति का साधन है।

(९१) अनावश्यक कार्यों मे मन को रोको, इन्द्रिय व्यापार को रोको। यह आत्मा के विकास का मुख्य साधन है।

(९२) अपनी शान्ति के बाधक हम स्वय ही है। चेतन-अचेतन कोई भी पदार्थ शान्ति का बाधक नही, जैसे बर्तन में रखी गई शराब विकृति का कारण नहीं है।

(९३) हे आत्मन्! राग-द्वेष मोह आदि शत्रुओ से सदा सावधान रहो। इनमें से, जिस किसी को भी देखो तुरन्त उसे भगा दो, क्योंकि ये मौका पाकर अपना विकराल रूप धारण कर लेते है।

(९४) मोह के उदय में सर्वत्र दु ख है। यही प्राचीन रोग आत्मा के साथ लगा है।

(९५) किसी के मुख से कोई बात विरुद्ध सुनकर उसे अपना विरोधी मत मान बैठो। विरोध का कारण ढूँढो, उसे मिटाने की सच्चे हृदय से चेष्टा करो।

(९६) अविरत सम्यग्दृष्टि अपने को द्रव्यदृष्टि से अबधक जानता है किंतु पर्याय से अपने को तृणतुल्य मानता है कि अहो मेरी पर्याय में अभी पामरता है! स्वभाव की प्रभुता होने पर भी पर्याय मे अभी पामरता है। कहाँ केवली की दशा, कहाँ सन्त-मुनियो का पुरुषार्थ और कहाँ मेरी पामरता। इस तरह सम्यग्दृष्टि की पर्याय का विवेक होता है।

(९७) शुभ परिणाम से पुण्य होता है, अशुभ परिणाम से पाप होता है और शुद्ध परिणाम से मोक्ष होता है।

(९८) अपने ज्ञान-स्वभाव में लीन होने पर इच्छाओं का निरोध हो जाता है।

(९९) ज्ञानी हठपूर्वक उपवास आदि नहीं करते, वे परिणामो की शक्ति देखकर तप करते है। जहाँ हठ है वहाँ लाभ नहीं है।

(१००) जिस वस्तु को प्राप्त करने में सन्ताप होता है, उसे दूर से ही छोड़ देना चाहिए।

(१०१) जिसकी प्राप्ति में सन्ताप उत्पन्न होता है, अनंत शक्ति और अमृतमय होने पर भी उसका सुख नाममात्र का सुख है।

(१०२) चिन्ता मनुष्य को जला देती है।

(१०३) अपने भाग्य पर संतोष रखकर पुरुषार्थ करना चाहिए।

(१०४) जीवन यात्रा उसी की सफल है जो समभाव रहकर जीवन व्यतीत करते है।

(१०५) सौ टंची सोने के समान यह ज्ञायक भगवान आत्मा पवित्र शुद्ध है, इसे जो दृष्टि में लेता है वह मालामाल बन जाता है। शुद्ध आत्मा की प्राप्ति ही सच्ची संपत्ति है।

(१०६) संसार भयावह है परन्तु मुक्ति भी ससार से ही होती है।

(१०७) जीवन-यात्रा का गन्तव्य मोक्ष है।

(१०८) पुरुषार्थ के अभाव मे मुक्ति सम्भव ही नही।

शान्ति-पुष्टि मंत्र

(आचार्यश्री की डायरी से)

शांति मंत्र

ॐ-ह्रां-ह्रीं-ह्रूं-ह्रौं-ह्र अ सि आ उ सा सर्वशान्ति कुरु कुरु नमः।

प्रतिदिन प्रात १ माला जपे।

व्यापार-वृद्धि मंत्र

ॐ-ह्रां-ह्रीं-ह्रूं-ह्रौं-ह्र: क्रयाणे लाभ कुरु, कुरु स्वाहा।

इस मंत्र का सवा लाख जाप करें।

उदर रोग निवारण

ॐ इटि मिटि भस्म कुरु कुरु स्वाहा।

संतान प्राप्ति मंत्र

ॐ-ह्रीं-श्री क्ली श्री पद्मावती मम पुत्र देहि देहि नमः।

सवा लाख जाप्य करे।

लक्ष्मीवाचक

ॐ ह्री ला व्ह प लक्ष्मी ह्वीं कुरु कुरु स्वाहा।

सवा लाख जाप करे।

निधिदर्शन मंत्र

ॐ ह्री धरणेन्द्र पार्श्वनाथाय नम निधिदर्शन कुरु कुरु स्वाहा।

विधि—श्रावण मास मे सवा लाख जाप्य करें जिस स्थान पर धन मिलने की आशका है उसी स्थान पर जाप्य करे।

बांझ के भी पुत्र हो

"अर्हं नम "

विधि—भक्तामर स्तोत्र का पाँचवाँ काव्य पढ़कर इस मंत्र का सवा लाख जाप्य करे। पश्चात् बिजोरा के बीज या नारियल पर इस मत्र को १०८ बार पढ़े, ७२ दिनों तक स्वयं पढ़ें और स्वय खावें।

अक्षय लक्ष्मी बनी रहे

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं-ह्रा-ह्री ह्रू नमः।

दो लाख जाप करें।

विद्याप्राप्ति मंत्र

ॐ ह्रीं सरस्वती देव्यै नम।

ॐ ह्रीं श्रीं कीर्ति कौमुदी वागीश्वरी प्रसन्न वरदे कीर्तिमुख रंजिनी स्वाहा। (१ लाख माला। पश्चात् १ माला)

स्वप्न मे शुभाशुभ ज्ञान मंत्र

ॐ-ह्रा क्ली ह्री त्रिभुवनस्वामिनी ज्ञानप्रकाशिनी मम चिन्तित कथय कथय, स्वप्ने दर्शय दर्शय, मम वाञ्छितं पूरय पूरय स्वाहा।

स्वप्नेश्वरी मंत्र

ॐ-ह्रा क्ली-ह्री-ह्री त्रिभुवनस्वामिनी, ज्ञानप्रकाशिनी मम चिंतितकार्य कथय-कथय स्वप्ने दर्शय-दर्शय मम वाछितं पूरय-पूरय स्वाहा।

ॐ णमो जिणाण, ॐ णमो खीरसवीण, ॐ णमो सप्पिसवीण, ॐ णमो महुरसवीण, ॐ णमो अमिय सवीण झौ झौ स्वाहा।

(इस मत्र से मत्रित करके औषधि सेवन करे)

ॐ णमो लोहित पिगलाय मातग राजानो स्त्रीणा रक्त स्तम्भय स्तम्भय, ॐ तद्यथा हुलु-हुलु लघु-लघु तिलि-तिलि मिलि-मिलि स्वाहा।

विधि-कच्चा सूत ७ तार का २१ बार मत्र पढ़कर स्त्री के अगूठा मे बाँधे तो रक्त प्रदर दूर हो।

वाकसिद्धि मंत्र

ॐ णमो चारणाण, ॐ-ह्री-श्री क्ली अ सि आ उ सा चुलु-चुलु कुलु-कुलु इच्छय वाक्‌सिद्धि कुरु-कुरु स्वाहा। पच्चीस हजार जाप।

सर्वकार्य सिद्धि मुद्रिका

नीला थोला का सत, नाग (सीसा) ताम्र इनके बराबर सोना डालकर अँगूठी बनावे। यह अँगूठी स्थावर जगम विषो को तथा भूत बाधा डाकिनी, शाकिनी नजर और विष इनको दूर करती है।

इसे दाहिने हाथ की कनिष्ठा (छोटी) अँगुली मे पहनना चाहिए।
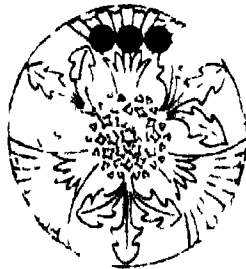
मंत्र जपने का फल

चैत्र मास में मंत्र जाप्य शुरू करे	सर्वपुरुषार्थ सिद्धि
वैशाख मास मे	रत्नलाभ
ज्येष्ठ मास में	मरण
आषाढ़	बन्धुनाश
श्रावण, भाद्र, क्वार (आश्विन)	रत्नलाभ
कार्तिक	मत्रसिद्धि
मगसिर	मत्रसिद्धि
पौष	शत्रुवृद्धि व पीड़ा
माघ	मेधा (बुद्धि) वृद्धि
फाल्गुन	सर्वकार्य सिद्धि
रविवार को मत्र जाप आरंभ करे तो	धनलाभ
सोमवार	शान्ति
मगल	आयुष्यक्षय
बुध	सुन्दर
गुरु	ज्ञानवृद्धि
शुक्र	सौभाग्य
शनि	यश-हानि
तिथियों से	
(१) प्रतिपदा को मत्र जाप्य आरभ करने से	बुद्धि हानि
(२) द्वितीया को जाप्य आरभ करने से	बुद्धि-विकास
(३) तृतीया को	शुद्धि
(४) चतुर्थी को	आर्थिक हानि
(५) पञ्चमी को	ज्ञानवृद्धि
(६) षष्ठी को	ज्ञाननाश
(७) सप्तमी को	सौभाग्यवृद्धि

(८) अष्टमी को	बुद्धिक्षय
(९) नवमी को	शरीर-हानि
(१०) दसमी को	राज्य की सफलता
(११) एकादशी को	शुद्धता
(१२) द्वादशी को	सर्वकार्य-हानि
(१३) त्रयोदशी को	सर्वकार्य-सिद्धि
(१४) चतुर्दशी को	तिर्यञ्चयोनि
(१५) A अमावस्या को	सिद्धि नही
(१५) B पूर्णिमा को	सिद्धि होती है।

नोट–

जिन तिथि, वार तथा माह मे कार्य वर्ज्य है उनमे भी विशेष योग–सिद्धियोग आदि, विशेष नक्षत्र–पुण्य नक्षत्र आदि मे तथा तीर्थंकरों की पञ्चकल्याणक तिथियो मे कार्य करने पर सफलता मिलती है।
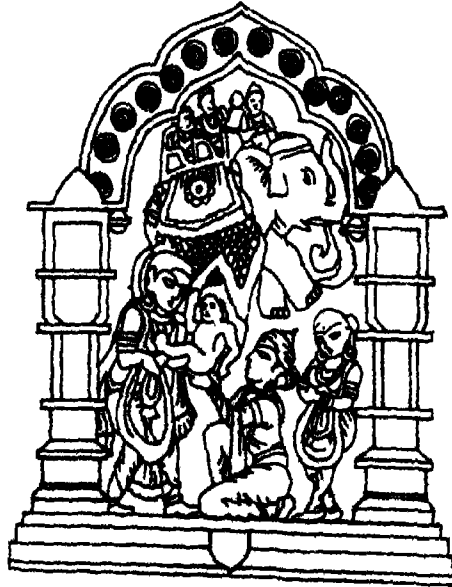
शांति-पुष्टि तंत्र

एक तारा बुखार

श्वेत अर्क की जड़ पुरुष के दाये और स्त्री के बाये हाथ में बाँधने से एक तारा ज्वर चला जाता है। अथवा मयूर शिखा को लाल कपड़े मे रखकर कमर या हाथ मे बाँधें।

तिजारी—दो दिन छोडकर, तीसरे दिन बुखार आने वाला तिजारी कहलाता है।

अपामार्ग को लाल कपड़े मे रखकर कमर मे बाँधे। अथवा छोटी दुद्धी को कमर या हाथ मे बाँधे।

चौथैय्या ज्वर—भागरे का मूल सूत मे लपेटकर सिरहाने रखे। (ज्वर दूर हो)

रात्रिज्वर—मकोह की मूल कान मे बाँधे अथवा भाँगरे की मूल कान मे बाँधे तो ज्वर जाये।

सर्वरोगशमन तत्र-अरलू की लकड़ी रात्रि मे मिट्टी के बर्तन में, पानी मे भिगोकर प्रात उस पानी को पिलाने से सर्व रोग शान्त हो जाते है।

नजर न लगे—सफेद आँकड़े की जड़ बच्चे के गले मे बाँधने पर नजर नही लगती है।

दाँत आसानी से आये—सम्हालू के मूल गले मे बाँधने से बच्चो के दाँत आसानी से आते है। अथवा हाथ-पैर मे लोहे का कड़ा पहना देने से बालक को नजर भी न लगे व दाँत भी सुविधा से निकलते है।

मृगी—'अकरकरा' को गले मे बाँधे तो मृगी रोग चला जाय।

खाँसी—कौए की बीट कपड़े की थैली मे डालकर गले मे लटकाने से खाँसी रोग न रहे।

रोना बन्द हो—खडिया मिट्टी को कपड़े की थैली मे डालकर गले मे बाँधने से अधिक रोना बन्द होता है।

संग्रहणी—गेहुँआ (पीला) सर्प की काँचली पेडू पर बाँध देने पर सग्रहणी रोग दूर होता है।

पेट दर्द—कपूर पर णमोकार मत्र पढ़कर खिला दो, कैसा भी पेट-दर्द हो बन्द हो जाता है।

धरण—भिण्डि की जड़ धरण पर रखे तो धरण ठीक हो जाता है।

पथरी—दायें हाथ की मध्यमा अँगुली मे लोहे की अँगूठी पहने तो पथरी ठीक हो (घोड़े की नाल के लोहे की अँगूठी बनावे)।

वायुगोला—घोड़े की नाल या नाव की कील निकालकर उसका कड़ा बनाकर उसे पहने, वायुगोला ठीक हो।

मोटापा निकालने के लिए—राँगा की अँगूठी मध्यमा अँगुली में पहनने से मोटापा दूर हो जाता है।

बवासीर—काले धतूरे की जड़ कम-से-कम छह मासा लेकर कमर मे बाँधे।

स्वप्नदोष—जिन पुरुषों को स्वप्नदोष अधिक होता हो वह अपनी माँ का नाम कागज पर लिखकर सिर के नीचे रखकर सोवें।

चित्तभ्रम—शैल खड़ी सिंबदराज को घिसकर उसे छेदकर अँगूठी मे पहन लें।

दस्त—पत्थर चूल की जड़ ताँबे के वत्र मे या कपड़े मे रखकर, गले मे बाँधे तो दस्त बन्द हो।

हिचकी—अरीठा को गले मे बाँधे तो हिचकी बन्द हो।

निद्राभय—मूँगे को गले मे लटकायें तो निद्राभय दूर हो।

दु:स्वप्न—सिरहाने फिटकरी रखे तो दु:स्वप्न नही आये।

प्रसूति—(१) अडूसा की मूल (जड़) को कच्चे सूत मे सात तागो मे बाँधे तो सुखपूर्वक संतान होगी।

(२) लाल कपड़े मे नमक रखकर उसे फिर स्त्री के बाये हाथ मे बाँधे तो प्रसूति सुखपूर्वक हो।

(३) बाँस की जड़ कमर मे बाँधे तो सुखपूर्वक प्रसूति हो।

अकाल मे गर्भ न गिरे-

(१) धतूरा की जड़ कमर मे बाँधे तो अधूरा न गिरे। (काला धतूरा उत्तम है।)

(२) अडूसा की जड़ या पत्ते पीसकर नाभि मे रखे।

दस्त बन्द हो—सहदेवी की जड़ सात टुकड़े कर लाल डोरे मे लपेटकर कमर मे बाँधे तो कैसा भी दस्त हो बन्द होता है।

पुत्र-प्राप्ति—लौकी का गूदा बीज सहित मिश्री से खावे तो पुत्र हो। (गर्भ ठहरा है तब से तीन माह तक) स्त्री के सहवास में ४-६-८ व १२ वे दिन जावे तो पुत्र हो।

पुत्री-प्राप्ति-नीबू के वृक्ष की मूल चावल के पानी मे एक माह तक पिलावे तो पुत्री हो।

व्यापार वृद्धि-नीबू व हरी मिर्च की माला बनाकर दुकान पर टाँगने से व्यापार-वृद्धि हो।

विजय तंत्र-ॐ नमो विश्वरूपाय अमुकेन विजय कुरु कुरु स्वाहा। १ माला प्रतिदिन।

स्तम्भनतंत्र-ॐ ह्रीं गर्भधारिणी गर्भ स्तम्भन कुरु-कुरु स्वाहा। महिला २१ दिन तक १-१ माला फेरे। शिवलिंगी के बीज ९-९ दिन तक देने से नियम से गर्भ रुकता है।

वाद मे विजय—मगसिर मास की पूर्णमासी मे गाजर की जड़ लाकर भुजा मस्तक आदि मे कही भी बाँधें तो वाद मे विजय हो।

बहता रक्त बन्द हो-जँवासा की जड़ को पीसकर सिर पर लेप रखने से शरीर मे कहीं से भी खून बहता हो तो बन्द हो।

आधासीसी-गाय के घी मे सोरा मिलाकर सूँघने से आधासीसी रोग जाता है।

धनप्राप्ति-पुष्य नक्षत्र मे सफेद अकौआ की जड़ को लाकर द्रव्य के साथ मे रखने से अष्टसिद्धि और नव-निधि की प्राप्ति हो।

इसी के विभिन्न प्रयोग-(१) इस अँगूठी को जल मे धोकर उस पानी को पीने से शूल रोग दूर हो।

(२) अँगूठी को तेल में डालकर पकावें, और उस तेल को शरीर मे होने वाले दर्द मे लगावे तो समस्त पीड़ाएँ दूर हों।

(३) इस अँगूठी को पानी में धोकर, पीड़ित स्त्री को उस पानी को पिलाएँ, प्रसूति शीघ्र हो।

[illegible]

परात्म उद्‌बोधन

❑ आ. श्री विमलसागरजी महाराज

संस्कार

व्यक्ति के जीवन की सम्पूर्ण शुभ और अशुभ वृत्तियॉ उसके सस्कारो के अधीन है, जिनमें से कुछ वह पूर्व भव से अपने साथ लाता है और कुछ इसी भव मे गति व शिक्षा आदि के भाव से उत्पन्न करता है। इसीलिए र्भ मे आने के पूर्व से ही बालक मे विशुद्ध सस्कार उत्पन्न करने के लिए विधान बताया गया है। गर्भावतरण से लेकर निर्वाण पर्यन्त यथावसर जिनेन्द्रपूजन व मन्त्र विधान सहित ५३ क्रियाओ का विधान है जिनसे बालक सस्कार उत्तरोत्तर विशुद्ध होते हुए एक दिन वह निर्वाण का भाजन बन जाता है।

मन-वचन-काय को सम्यक् प्रकार से करना सस्कार है। आचार्यश्री जिनसेनस्वामी ने आदिपुराण ग्रन्थ मे ५३ क्रियाएँ बताई है-(१) गर्भाधान, (२) प्रीति, (३) सुप्रीति, (४) धृति, (५) मोद, (६) प्रियोद्‌भव, (७) नाम कर्म,) बहिर्यान, (९) निषद्या, (१०) प्राशन, (११) व्युष्टि, (१२) केशवाप, (१३) लिपिसख्यान सग्रह, (१४) उपनीति, ५) व्रतचर्या, (१६) व्रतावतरण क्रिया, (१७) विवाह क्रिया, (१८) वर्णलाभ, (१९) कुलचर्या, (२०) गृहीशिता क्रिया, (२१) प्रशान्ति, (२२) गृहत्याग, (२३) दीक्षाद्य, (२४) जिन-रूपता, (२५) मौनाध्ययन व्रतत्व, (२६) तीर्थकृतभावना, (२७) गुरुस्थानाभ्युपगमन, (२८) गणोपग्रहण, (२९) स्वगुरु स्थान, (३०) निसगत्वात्मभावना, (३१) गनिर्वाण से प्राप्ति, (३२) योगनिर्वाण साधन, (३३) इन्द्रोपपाद, (३४) अभिषेक, (३५) विधिदान, (३६) सुखोदय, ७) इन्द्र त्याग, (३८) अवतार, (३९) हिरण्योत्कृष्टजन्मा, (४०) मन्दरेन्द्राभिषेक, (४१) गुरु पूजोपलभन, (४२) विराज्य, (४३) स्वराज्य, (४४) चक्रलाभ, (४५) दिग्विजय, (४६) चक्राभिषेक, (४७) साम्राज्य, (४८) निष्क्रान्ति, ९) योगसन्मह, (५०) आर्हन्त्य, (५१) तद् विहार, (५२) योगत्याग, (५३) अग्रनिर्वृत्ति। परमागम मे गर्भ से कर निर्वाण पर्यन्त ५३ क्रियाएँ मानी गई है।

(१) गर्भाधान क्रिया—ऋतुमती स्त्री के चतुर्थस्नान के पश्चात् गर्भाधान के पहले अर्हन्तदेव की पूजा के द्वारा न्त्रपूर्वक जो सस्कार किया जाता है, उसे गर्भाधान क्रिया कहते है। भगवान के सामने तीन अग्नियो की (१) अर्हन्तकुण्ड (२) गणधरकुण्ड (३) केवलीकुण्ड—मे स्थापना करके भगवान की पूजा करे तत्पश्चात् आहुति दे फिर केवल पुत्रोत्पत्ति की इच्छा से भोगाभिलाष-निरपेक्ष स्त्रीससर्ग करे।

(२) प्रीति क्रिया—गर्भाधान के पश्चात् तीसरे महीने पूर्व तक भगवान की पूजा करनी चाहिए। उस दिन से लेकर प्रतिदिन बाजे नगाड़े आदि बजवाने चाहिए।

(३) सुप्रीति क्रिया—गर्भाधान के पाँचवे महीने पुन पूर्वोक्त प्रकार भगवान की पूजा करे।

(४) धृति क्रिया—गर्भाधान के सातवे महीने मे गर्भ की वृद्धि के लिए पुन पूर्वोक्त विधान करना चाहिए।

(५) मोद क्रिया—गर्भाधान के नौवे महीने मे गर्भ की पुष्टि के लिए पुन पूर्वोक्त विधान करके स्त्री को गात्रिका बन्ध, मन्त्र पूर्वक बीजाक्षर लेखन, व मगल-आभूषण, ये कार्य करने चाहिए।

(६) प्रियोद्भव क्रिया—प्रसूति होने पर जात कर्म रूप मन्त्र व पूजन आदि का बड़ा भारी पूजन विधान किया जाता है जिसका स्वरूप उपासकाध्ययन से जानने योग्य है।

(७) नामकर्म क्रिया—जन्म से बारहवे दिन पूजा व द्विजादि के सत्कारपूर्वक अपनी इच्छा से या भगवान के १००८ नामो मे से घटपत्र विधि द्वारा बालक का कोई योग्य नाम छाँटकर रखना।

(८) बहिर्यान क्रिया—जन्म से ३-४ महीनो पश्चात् ही बालक को प्रसूतिगृह से बाहर लाना चाहिए। बालक को यथाशक्ति कुछ भेट आदि दी जाती है।

(९) निषद्या क्रिया—बहिर्यान के पश्चात् सिद्ध भगवान की पूजा-विधिपूर्वक बालक को किसी बिछाये हुए आसन पर बैठना चाहिए।

(१०) अन्नप्राशन क्रिया—जन्म के ७-८ महीने पश्चात् पूजनविधिपूर्वक बालक को अन्न खिलायें।

(११) व्युष्टि क्रिया—जन्म के १ वर्ष पश्चात् जिनेन्द्र पूजनविधि, दान व बन्धुवर्ग निमत्रण आदि कार्य करना चाहिए। इसे वर्षवर्द्धन या वर्षगाँठ भी कहते है।

(१२) केशवाप क्रिया—तदनन्तर किसी शुभ दिन पूजाविधिपूर्वक बालक के सिर पर उस्तरा फिरवाना अर्थात् मुण्डन कराना व उसे आशीर्वाद देना आदि कार्य किया जाता है। बालक द्वारा गुरु को नमस्कार कराया जाता है।

(१३) लिपिसख्यान—पाँचवे वर्ष अध्ययन के लिए पूजाविधिपूर्वक किसी योग्य गृहस्थी के पास छोडना।

(१४) उपनीति क्रिया—आठवें वर्ष यज्ञोपवीत धारण कराते समय केशो का मुण्डन तथा पूजाविधिपूर्वक योग्य व्रत धारण ग्रहण कराकर बालक की कमर मे मुञ्ज की रस्सी बाँधनी चाहिए। यज्ञोपवीत धारण करके सफेद धोती पहनकर सिर पर चोटी रखने वाला वह बालक माता आदि के द्वार पर जाकर भिक्षा माँगे व भिक्षा मे आगत द्रव्य से पहले भगवान की पूजा करे व फिर शेषान्न को स्वय खावे। अब यह बालक ब्रह्मचारी कहलाने लगता है।

(१५) व्रतचर्याक्रिया—ब्रह्मचर्य आश्रम को धारण करने वाला वह ब्रह्मचारी बालक अत्यन्त पवित्र व स्वच्छ जीवन बिताता है। कमर मे रत्नत्रय के चिह्न स्वरूप तीन लर की मुञ्ज की रस्सी, टाँगो में पवित्र अर्हन्त कुल की सूचक उज्ज्वल व सादी धोती, वक्षस्थल पर सात बर का यज्ञोपवीत, मन, वचन व काय की शुद्धि का प्रतीक सिर का मुण्डन, इतने चिह्न धारण करके अहिसाणुव्रत का पालन करते हुए गुरु के पास विद्या-अध्ययन करता है। वह कभी हरी दातौन नही करता। पान-खाना, अजन लगाना, उबटन से स्नान करना व पलँग पर सोना आदि बातों का त्याग करता है। स्वच्छ जल से स्नान करता है तथा अकेला पृथ्वी (चटाई पाटा) आदि पर सोता है। अध्ययन क्रम मे गुरुमुख से पहले श्रावकाचार और फिर अध्यात्म शास्त्र का अध्ययन कर लेने के अनन्तर व्याकरण, न्याय, छन्द अलकार, गणित, ज्योतिष आदि विद्याओं को भी यथाशक्ति पढ़ता है।

(१६) व्रतावतरणक्रिया—विद्याध्ययन पूरा कर लेने पर बारहवे या सोलहवें वर्ष में गुरुसाक्षीपूर्वक देवपूजादि विधिपूर्वक गृहस्थाश्रम पाने के लिए उपरोक्त सर्व व्रतो को त्यागकर श्रावक के योग्य ८ मूलगुणो को धारण करता

है। और कदाचित् क्षत्रिय धर्म के पालनार्थ अथवा शोभार्थ कोई शस्त्र धारण करता है।

(१७) विवाह क्रिया—विवाह की इच्छा होने पर गुरुसाक्षी मे सिद्धभगवान व पूर्वोक्त (प्रथमक्रियावत् तीन अग्नियों की पूजाविधि पूर्वक अग्नि की प्रदक्षिणा देते हुए कुलीन कन्या का पाणिग्रहण करे। सात दिन पर्यन्त दोनों ब्रह्मचर्य से रहे फिर तीर्थयात्रादि करे। तदनन्तर केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए स्त्री के ऋतुकाल मे सेवन करे। शारीरिक शक्ति हीन हो तो पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहे।

(१८) वर्णलाभ क्रिया—यथोक्त पूजनविधिपूर्वक पिता उसको कुछ सम्पत्ति व घर आदि देकर धर्म व न्यायपूर्वक जीवन बिताते हुए पृथक् रहने के लिए कहता है।

(१९) कुलचर्या—अपनी कुल-परम्परा के अनुसार देवपूजादि गृहस्थ के षट्कर्मों को करता हुआ यथाविधि नित्य धर्म पालता है यही कुलचर्या है।

(२०) गृहीशिता क्रिया—धार्मिक क्षेत्र मे तथा ज्ञान के क्षेत्र मे वृद्धि करता हुआ अन्य गृहस्थ के द्वारा सत्कार किए जाने योग्य गृहस्थाचार्य होता है।

(२१) प्रशान्ति क्रिया—अपने पुत्र को गृहस्थ का भार सौपकर विरक्त चित्त हो धर्म का पालन करते हुए शान्तिवृत्ति से रहने लगता है।

(२२) गृहत्याग क्रिया—गृहस्थाश्रम मे कृतार्थता को प्राप्त हो योगी पूजाविधिपूर्वक अपने ज्येष्ठ पुत्र को घर की सम्पूर्ण सम्पत्ति व कुटुम्ब के पोषण का कार्य-भार सौपकर व धार्मिक जीवन बिताने का उपदेश देकर स्वय घर त्याग देता है।

अन्य विशेष प्रकरण आदिपुराण जी से देखिये।

"सोऽहमित्यात्मसस्कारात् तस्मिन् भावनया पुन ।
तत्रैव दृढसस्काराल्लभते ह्यात्मनि स्थितिम्"। (समाधितन्त्र)

एक नगर मे जैनधर्मावलम्बी धर्मप्रिय राजा रहते थे। उनकी रानी विदुषी व धर्मप्रिया थी। धर्मप्रिया माता की मदालसा नामकी धर्मात्मा ऐसी राजकन्या थी। पुत्री का विवाह योग्य धार्मिक उच्च वर्णीय सज्जातीय राजपुत्र से हुआ। विवाह के बाद पहली सुहाग-रात थी।

मदालसा ने अन्त पुर मे जाने से इन्कार कर दिया। राजा चिन्तित हो गया। मदालसा के इन्कार का रहस्य नही जान पाया। खोज करने पर ज्ञात हुआ—मदालसा ने एक शर्त रखी है कि मुझसे जो भी सन्तान पैदा होगी उस पर मेरा पूर्ण अधिकार होगा। दूल्हा राजा ने कहा—यह भी कोई बात है। उसका और मेरा अधिकार एक ही बात है, मुझे मदालसा की शर्त स्वीकार है।

समय पाकर रानी मदालसा गर्भवती हुई। विधिवत् सस्कार की सभी विधियाँ चालू थीं। रानी स्वयं प्रसन्नवदना हो जिन भक्ति, पूजा, स्तवन, गुरुभक्ति, आहारदान, स्वाध्याय, तीर्थों की वन्दना आदि शुभ कार्यों में समय बिताने लगी। दिन-रात उत्तमोत्तम भावनाओ से मन को शान्त रखती थी। बारह भावनाओं व वैराग्य भावनाओं के चिन्तन से ससार-शरीर-भोगो के विरक्ति की भावना रखती थी। नव मास पूर्ण हुए। तभी मदालसा के गर्भ से एक सुन्दर

मन-मोहक बालक का जन्म हुआ।

बालक को पलना देती हुई माँ उसे अच्छे-अच्छे भजन-गीत आदि सुनाया करती—अरहन्त तेरे पिता, जिनवाणी तेरी माता।

भैय्या! अरहन्त बनना सरल है।

हे बेटा! तू शूर है, वीर है, अरहन्त-सिद्ध स्वरूप है, आदि वचनो को बोलकर बच्चे को माँ सहलाया करती थी। बच्चे को कभी भय या डर नही दिखाती थी। णमोकार मन्त्र को कानों में सुनाते हुए उसे दूध पिलाती थी। और हर समय अपने परिणामो में निर्मलता रखती थी।

माँ के सच्चे सस्कारों मे पालित हुआ बालक आठ वर्ष की उम्र पाते ही वन की ओर मुँह कर गया। जैनेश्वरी दीक्षा आचरण कर मुक्ति पथ में आरूढ़ हो गया। उस महारानी ने एक नही इस प्रकार उत्तम सस्कारो से युक्त ९ पुत्रो को जन्म दिया। सभी बालक आठ वर्ष की उम्र मे जिन दीक्षा लेकर आत्मविशुद्धि को प्राप्त हो गये।

राजा चिन्तित हुए। सभी बालक संसार से विमुख हो दीक्षा लेकर आत्मकल्याण मे लग गये है। मेरे वश की वृद्धि कैसे होगी? पतिदेव को चिन्तित देख धर्मप्रिया मदालसा ने कहा—"प्रियवर! चिन्ता किस बात की है। नारी सस्कारो मे वह ताकत है कि वह चाहे तो सतान को मोक्षमार्ग मे लगा सकती है और चाहे तो राजा बना सकती है। यदि बुरे सस्कार डाले तो एक बडा डाकू भी बना सकती है। आप चिन्ता न करें। माँ के दूध मे वह ताकत है जो नर को नारायण बना सकती है तो आपके वश की रक्षा कैसे न होगी!"

समय पाकर रानी गर्भवती हुई। गर्भावस्था मे उसने राजनीति शास्त्रो का अच्छा अध्ययन किया। घुड़सवारी, सैन्यरक्षा, शास्त्रकला आदि राजा के योग्य सर्व कलाओ को सीखा। नौ मास पूर्ण होते ही मदालसा ने शूर वीर पुत्र को जन्म दिया। मदालसा ने स्वाभिमान के साथ कहा—"प्रियवर! इस पुत्र को आप कितना भी कहे पर यह बाल-अवस्था मे दीक्षा धारण नही करेगा। राजकार्य में ही समय बितायेगा।" राजा ने कहा—"यह कैसे?" "यह मेरे द्वारा प्रदत्त सस्कारो का प्रभाव है।" उत्तर मिला।

आज सस्कारो का अभाव-सा हो गया है। घर-घर मे शूद्रता का वास होने लगा है। रजस्वला धर्म का कही भी पालन नही हो रहा है। इसी कारण सारी हानि होती है। रजस्वला स्त्री के तीन दिन अशौच है। आजकल कितने ही लोग रजस्वला को स्पर्श कर लेने पर भी स्नान आदि शुद्धि नही करते है तथा कितने ही लोग दूसरे या तीसरे ही दिन स्नान कराकर उसके हाथ से तैयार किये हुए सब तरह के भोजन खा लेते है। कोई-कोई लोग तो उन्ही दिनों कुशील सेवन भी करते है परन्तु ऐसे लोग महा अधर्मी, पातकी और भ्रष्ट—नीचातिनीच कहलाते है। रजोधर्म वाली स्त्री की प्रथमदिन चाडाली सज्ञा है, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनि सज्ञा है, तीसरे दिन रजकी सज्ञा है और चौथे दिन शुद्ध होती है। इसलिए स्त्री चौथे दिन ही शुद्ध होती है। जो स्त्री परपुरुषगामिनी है वह जीवनपर्यन्त अशुद्ध रहती है। व्यभिचारिणी स्त्री स्नानादि कर लेने पर भी शुद्ध नही होती।

आचार्यों ने रहस्यशास्त्रों मे रजस्वला स्त्रियो के आचरण इस प्रकार बताये है—१. जो स्त्रियाँ इन तीन दिनों में अंजन लगाती हैं, उबटन करती है, तेल-मर्दन, गन्ध लगाना आदि श्रृगार क्रिया करती हैं उनका गर्भ सदोष

और विकृत रूप हो जाता है। २ तीन दिनो मे ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना चाहिए। इन दिनो में रोना, नाखून काटना, सीना-बुनना, भोजन पकाना तथा कूटना-पीसना, अधिक बोझा उठाना, अधिक सोना आदि और भी अयोग्य कार्य नहीं करना चाहिए। इस समय कोई स्त्री प्रमाद या अज्ञानवश गलत कार्य करती है तो आगे गर्भ में आने वाले बालक पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।

जो कोई स्त्री तीन दिनो मे रोती है, उसके गर्भ के बालक (जो आगे गर्भ मे आयेगा) के नेत्र-विकार हो जाते है। अधा हो जाता है, धुँधला हो जाता है अथवा नेत्रो मे फूला हो जाता है। जो स्त्री इन दिनो नाखून काटती है उसके बालक के नाखूनों मे विकार हो जाता है। उसके नाखून टेढे, टूटे, फटे, काले, सूखे और देखने मे बुरे हो जाते है। जो स्त्री रजोधर्म के समय मे परिश्रम करती है, उसके उन्मत्त, उन्माद रोग वाला बालक या बावला पुत्र होता है। थोड़ी-सी अज्ञानता से प्रमादवश अनेक दोष उत्पन्न हो जाते है। इसलिए अयोग्य कार्य नहीं करने चाहिए। विवेकपूर्वक रहना चाहिए। यह उपर्युक्त विवेचन लटकन मिश्र के पुत्र भावमिश्र द्वारा बनाये हुए 'भाव प्रकाश' वैद्यक शास्त्र का है। सक्षेप मे यहाँ दिया है।

गर्भावस्था मे माता द्वारा प्रदत्त आचार-विचार का प्रभाव बालक पर गहरा पडता है इसीलिए माता बहिनो। आपका कर्तव्य है कि इस समय अपने परिणामो को अधिकाधिक निर्मल बनाने का प्रयत्न करे।

रजस्वला धर्म को मानना आज लोगो को अन्धविश्वास जैसा लगता है। कितने ही अधर्मी इन तीन दिनो मे ही सामायिक प्रतिक्रमण तथा शास्त्र के स्पर्श आदि कार्य करते है। ऐसे लोग इससे होने वाले अविनय और महापाप को नही मानते है। कोई समझाता है तो उल्टा उत्तर देते है कि 'इस शरीर मे शुद्ध पदार्थ है ही क्या? इसमे से नव द्वार सदा बहते रहते है। यदि किसी के गॉठ का फोड़ा हो जाता है और वह पककर फूट जाता है उसी प्रकार स्त्रियो का यह मासिकधर्म है। ऐसे लोग जिन-आज्ञाबाह्य है, महापातकी व अनाचारी है।

स्मरण रहे कि रजस्वला स्त्री के स्नान का पानी यदि अगूर की बेल पर चला जाये तो वह बेल ही सूख जाती है। यदि रजस्वला स्त्री की छाया पड जाये तो सर्प अन्धा हो जाता है—

नारी की छाया पड़त अन्धा होत भुजग।
रहिमन नर की का गति जो नित नारी के सग।

अनुभवी महिलाएँ जानती है कि बड़ी, पापड़ आदि वस्तुएँ रजस्वला स्त्रियो की छाया पड़ने पर लाल, खट्टी अथवा दूषित हो जाती है। जहाँ रजस्वलाधर्म की रक्षा की जाती है, वही धर्म का रक्षण हो सकता है। रजस्वला धर्म की रक्षा करते हुए तीन दिनो का समय यापन करने के बाद चतुर्थ स्नान के पश्चात् गर्भाधान के पहले अर्हन्तदेव की पूजा कर गर्भाधान क्रिया की जानी चाहिए।

अष्टाग के अनुसार पुत्रोत्पादन विधि इस प्रकार है—
पूर्णषोडशवर्षा स्त्री पूर्णविंशेन सङ्गता।
शुद्धे गर्भाशये मार्गे शुक्रेऽनिले हृदि॥१॥
वीर्यवन्त सुत सूते न्यूनाब्दयो पुन।
रोग्यल्पायुरधन्यो वा गर्भो भवति नैव वा॥२॥

जिसका गर्भाशय का रक्त, शुक्र और ह्रदय की वायु और मन शुद्ध है, इस प्रकार की १६ वर्ष की स्त्री यदि बीस वर्ष के वयस्क पुरुष से समागम करे तो शक्तिशाली पुत्र होगा और इस अवस्था से कम के स्त्री-पुरुषों के समागम से पहले तो सन्तान नही होगी और यदि होगी तो रोगी या अल्पायुष्क तथा अधन्य होगी।

चतुर्थेऽहनि तत· स्नाता शुक्लमाल्याम्बरा शुचि·।
इच्छन्ती भर्तृसदृश पुत्र पश्येत्पुर पतिम्॥
ऋतुस्तु द्वादशनिशा· पूर्वास्तिस्त्रोऽथ निन्दिता।
एकादशी च युग्मासु स्यात्पुत्रोऽन्यासु कन्यका॥

चौथे दिन स्नान करके शुद्ध होकर स्वच्छ वस्त्र पहनकर सफेद फूलो की माला पहननी चाहिए। अपने पति जैसा पुत्र होवे, इस भावना से पति के मुख का अवलोकन करना चाहिए। स्त्री का यह ऋतुकाल १२ दिन तक रहता है, इनमें से पहले तीन दिवस और ११ वी रात निषिद्ध है और शेष रात्रियो मे समरात्रियो मे समागम करने से पुत्र होता है और विषमरात्रियों मे समागम करने से पुत्री होती है। इस प्रकार विधिवत् गर्भधान क्रिया के पश्चात् सन्तान की रक्षार्थ प्रीति क्रिया, सुप्रीति क्रिया आदि करनी चाहिए।

आजकल सस्कारों का अभाव हो गया है। इसी कारण उच्च विचारशील सन्तान का भी अभाव-सा हो गया है। एक सिर्फ आठवी, जिसे अगरनी भी कहते है, क्रिया रह गयी है वह भी सिर्फ लड़की वालो से पैसा लूटने के लिए। बाकी पूजा विधान-हवन आदि क्रिया तो कोई करता ही नही।

माताओ का कर्तव्य है कि उन्हे गर्भावस्था मे परिणामो को निर्मल रखना चाहिए। प्रसन्नचित्त रहकर देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति पूजा-दान आदि षट्कार्यों में समय व्यतीत करना चाहिए। तीर्थों की वन्दना, सत्शास्त्रो का अध्ययन करना चाहिए। यह समय एक ऐसा अवसर है कि माता जीवनभर जिन गुणो को बालक मे नही भर सकती है, उसके कई गुणा सस्कार गर्भावस्था मे दे सकती है। गर्भावस्था मे डाले गये सस्कार अमिट होते है। इस अवस्था मे ६३ शलाका पुरुषो का वर्णन पद्मपुराण, श्रेणिकपुराण, प्रद्युम्नचरित, आदि प्रथमानुयोग शास्त्रो का अध्ययन करना चाहिए। चौबीस तीर्थंकर भगवान की माताएँ, जिन्हे परमेश्वरी माता कहते है, चिन्तन कर धीरता, वीरता व सहिष्णुता से समय यापन करे।

प्रसूति होने पर जातकर्मरूप मन्त्र व पूजन विधान आदि आगमविधि से किया जाता है। जन्म से बारहवें दिन बालक का नामकरण सस्कार विधिपूर्वक करना चाहिए। बालक का यथार्थ नाम रखे। रखे गये नामो का बालक के जीवन मे प्राय प्रभाव अवश्य पड़ता है। अर्जुन जिस समय गर्भ मे था उस समय माता ने चक्रव्यूह मे फँसने आदि कला का अध्ययन किया। उस प्रभाव से अर्जुन एक बड़ा धनुर्धर बन गया था। प्राचीन सस्कृति या भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है वर्तमान में यहाँ सन्तान का नाम प्राय सिनेमा के कलाकारो के नामो पर रखे जाते है। फलत आज के बालक अपने आपको एक हीरो के रूप मे देखना चाहते है। दक्षिण प्रान्त के देशो में आज भी यह विशेषता है कि वहाँ शिशु का नाम आदिराज, पद्मराज, अरहन्त आदि रखे जाते है। प्रतिफल यह है कि वहाँ आज भी सदाचार व शालीनता पाई जाती है। विधि है कि भगवान के १००८ नामो मे से घट-पत्र विधि अनुसार नामकरण करना उत्तम है।

जन्म से २-३ या ३-४ माह के बाद शुभ मुहूर्त में बालक को घर से बाहर निकाल सर्वप्रथम जिनदेव के मन्दिर में ले जाने की क्रिया बहिर्यान क्रिया है। मंदिरजी मे ले जाकर देव-गुरु-शास्त्र की साक्षी पूर्वक उसे जैनधर्म की दीक्षा दी जाती है। मानव जन्म से कभी जैन या वैष्णव धर्मानुयायी नही होता। जैन धर्म उसे धारण कराया जाता है। जाति तो धर्म से होती है पर धर्म जन्म के दो माह बाद धारण कराया जाता है।

योग्य मुहूर्त मे मदिरजी ले जाकर माता व परिवारजन बालक को गुरु अथवा गृहस्थाचार्य से निवेदन करे कि हे प्रभो! बालक को जैनी बनाइए। विधिवत् दिगम्बर गुरुजन या गृहस्थाचार्य उसे कर्ण में णमोकार मन्त्र सुनाते हैं व माता को साक्षी बनाकर आठ मूलगुण देकर माता को व्रत पालन करने की शिक्षा देते है—"माता! इस बालक को मद्य, मांस, मधु व पच उदम्बर फलो का त्याग है।" आठ वर्ष की उम्र तक बालक की व्रतरक्षा माता के आश्रित है। पश्चात् बालक स्वय व्रतो का रक्षक होता है। किसी भी परिस्थिति मे माता उसे मद्य, मधु आदि सेवन कराये तो सारा पाप माता को लगता है।

प्रत्येक माता का कर्तव्य है कि बालक को सस्कारित बनाने के लिए अशुद्ध वस्तु कभी नही खिलावे। मधु-मक्खियो के वमन का पिण्ड ऐसा शहद कभी नही खिलावे, बालक को क्रोधावेश मे कभी स्तनपान नही करावे अन्यथा दूध विषाक्त होकर बालक के प्राण भी ले सकता है। बालक को णमोकार मत्र कानो मे प्रतिदिन सुनाते हुए स्तनपान करावे, बालक को पालना झुलाते समय महापुरुषो की लोरियाँ सुनावे। स्मरण रहे कि भगवान कुन्दकुन्द की माता अपने पुत्र को जब झूला झुलाती थी तब वह कहती थी—

> शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरञ्जनोऽसि ससारमायापरिवर्जितोऽसि।
> ससारस्वप्न त्यज मोहनिद्रा श्री कुन्दकुन्दजननी मिदमेवमूचे॥

हे बेटा! तुम शुद्ध हो, बुद्ध हो, निरञ्जन हो, ससार के मायाजाल से अलग हो, यह ससार एक स्वप्न है, बेटा! मोह रूपनिद्रा को छोड़ो। धन्य है वह मात श्री! जो कुन्दकुन्द को ऐसे वीतरागतामयी गीत सुनाकर उसे सस्कार रूप अग्नि मे दमका रही थी।

फलत कुन्दकुन्द बालक ग्यारह वर्ष की अवस्था मे मुनिव्रत धारण कर महात्मा बन गये। जिनसेनाचार्य, कुन्दकुन्दाचार्य, पूज्यपादस्वामी आदि दिगम्बर महापुरुषो ने कभी कपड़े धारण ही नही किये। ९-११ वर्ष की उम्र मे ही दिगम्बर बन गये। माता के द्वारा प्रदत्त सस्कारो से बालक जहाँ वीर, धीर तीर्थंकर बन सकता है, वही वह एक बड़ा डाकू लुटेरा भी बन सकता है। माता के दूध मे अचिन्त्य शक्ति है। माता प्यार से बच्चे को सुनाती है—"अरहत तेरे पिता, जिनवाणी तेरी माता।"

"भैया! अरहत बनना सरल है"। धमकाना, डराना आदि अनुचिताक्रियाएँ योग्य नहीं हैं।

पाँचवे माह मे बालक को शुद्ध आसन पर बिठाना चाहिए। ६-७ महीने के बाद विधिवत् जिनपूजापूर्वक बालक को अन्नप्राशन क्रिया करानी चाहिए। इसके पूर्व अन्न खिलाने से शरीर की प्रवृत्ति ठीक नही रहेगी। जन्म के एक वर्ष पश्चात् दान-पूजा विधि करके परिवार या बन्धुवर्ग मे निमत्रण आदि करके वर्षवर्द्धन क्रिया करनी चाहिए। इस दिन चौबीस तीर्थंकर की पञ्चकल्याणक पूजा करनी चाहिए। चार प्रकार के दान, करुणा दान, मडल विधान आदि क्रियापूर्वक बालक की वर्षवर्धन क्रिया मनाना, यह व्युष्टि क्रिया सस्कार कहलाता है।

पाँच वर्ष की अवस्था में बालक को योग्य गुरु के पास शिक्षणार्थ भेजें। आज बालक को २-४ वर्ष मे ही बोझिल बना दिया जाता है, यह युक्त नही है। उसके विकास मे कमियाँ आती हैं। बालक स्कूल नही जाता है तो माताएँ जबरदस्ती उसे गाड़ी मे बैठाकर निकाल देते है, सोचते हैं चलो अच्छा हुआ, ३-४ घटे की शान्ति मिली, पर अशान्ति को प्राप्त बालक दु.खो की सीमा मे कुठित हो जाता है।

आज की सबसे बड़ी समस्या है शिक्षण पद्धति की व्यवस्था। छोटे बालकों पर १०-१५ पुस्तकों का बोझ उसके सन्तुलन को बिगाड़ देता है। उसी मे उसका दिनरात पूरा हो जाता है। धार्मिक शिक्षण को अवकाश नही मिलता। प्राचीन पद्धति मे बालक को लौकिक और धार्मिक दोनो शिक्षाएँ दी जाती थीं। पर आज लौकिक पढ़ाई का भार ही इतना हो गया है कि फुर्सत नही है। माता-पिता का भी धार्मिक शिक्षा की ओर लक्ष्य नहीं है। यहाँ तक कि बहुत छोटी उम्र मे ही बालक को जबरदस्ती गाड़ी मे डालकर स्कूल भेज देते हैं। ८ वर्ष के बालक के लिए भी धार्मिक शिक्षण की बात सुनते ही माँ कहती है—अभी तो बालक है। बस ये ही कुसस्कार धर्म का बीज नही बोने देते है। प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य है कि अपनी सन्तान को लौकिक और धार्मिक शिक्षण से सस्कारित करे। दुनिया मे सबसे बड़ा शत्रु कौन है? जिन माता-पिता ने बालक को शिक्षण नही दिया, सुसस्कार नही दिये।

बाल्यकाल मे बालक को जैसा बोलना, खेलना, खाना-पीना सिखाया जाता है, वे ही सस्कार अन्त तक बने रहते है। बचपन मे बालक को माता-पिता परिवारजन लाड़-प्यार की बोली से बिगाड़ देते है फिर बड़े होने पर वह आदर सन्मान नही देता है तो रोते है। स्मरण रहे कि छोटेपन से उसे 'तू' बोलना सिखाया, वह बड़ा होने पर माता-पिता को भी 'तू' 'तू' कर बोलता है और 'आप' बोलना सिखाते है तो वह भी 'आप' बोलेगा। 'जैसा सिखाया है वैसा ही मिलेगा'। कच्ची मिट्टी का घड़ा जैसा बनाओगे बन जायेगा, पके पर उसे कोई तोड़ नहीं सकता। बाल्यकाल कच्ची मिट्टी के समान है। उस समय जैसा सस्कार डाला जायेगा, बालक वैसा ही बनेगा।

बालक जब तक आठ वर्ष की उम्र को प्राप्त नही हो जाता तब तक उसे जिनाभिषेक, पूजा, गुरुओ के लिए आहारदान आदि का अधिकार नही है। आठ वर्ष की उम्र पाते ही बालक का रत्नत्रय का सूचक उपनयन सस्कार करना चाहिए। प्राय: मोह के वशीभूत होकर माता-पितादि परिवारजन २-३-४ वर्षों के बालको को गोदी में ले-लेकर जिनाभिषेक कराते देखे जाते है, यह क्रिया अनुचित है। आगम पद्धति का लोप है। यह अनुचित क्रिया बालक के लिए भी घातक है तथा इससे मूर्तियो का अतिशय घटता जाता है। अकस्मात् बालक के द्वारा अशुद्धि होने पर महान पापबन्ध का भागी भी बनना पड़े तो कोई आश्चर्य नही है। दूरदर्शितापूर्वक व समझदारी से काम लेना ही श्रेयस्कर हैं। कई लोगों से कहा-सुना जाता है कि यह सब रूढ़ियाँ अन्धविश्वास रूप है या जैन धर्म से बाह्य हैं पर यह उनकी भूल है। भगवान आदिनाथ जब ८ वर्ष की कुमारावस्था मे थे तभी इन्द्र ने उनका जनेऊ सस्कार व मौजी-बन्धन आदि संस्कार किये थे। यह जैन दर्शन की ही परम्परा है जिसे दूसरे धर्मावलम्बियों ने अपनाया, पर हम छोड़ रहे हैं।

दक्षिण में आज भी यह पद्धति मौजूद है, वहाँ विधिवत् सैकड़ो बालको को संस्कारित किया जाता है। इसी प्रकार बालिकाओं के लिए भी ८ वर्ष की उम्र में 'कुकुम सस्कार' विधि का वर्णन आगम में पाया जाता है। दक्षिण

में बालक-बालिकाओं का विधिवत् सस्कार गृहस्थाचार्य आज भी कराते है।

विद्याध्ययन पूरा कर लेने पर सोलह वर्ष की उम्र मे गृहस्थाश्रम के योग्य अष्ट मूलगुणों (मद्यमांस-मधु त्याग, रात्रि भोजन त्याग, पच अणुव्रत का पालन, पाँच फलविरति, पचपरमेष्ठी को नमन, जीव दया, जल गालन आदि रूप से) को धारण करे। विवाह योग्य पुत्र बीस वर्षीय और पुत्री सोलह वर्ष की होने पर उत्तम कुल, स्वजाति के योग्य वर से सबध करे। शादी करते समय जैनागम पद्धति से सस्कार करना आगम-सम्मत है।

विवाह सस्कार के बाद आचार्यों की आज्ञा है कि वर-वधू को सात दिन तक ब्रह्मचर्य से रहना चाहिए। तीर्थयात्रा गुरु-वन्दना आदि पुण्य क्रियाओं को करने के अनन्तर ऋतुकाल मे सेवन करे। एक बार के भोग करने मे ९ लाख जीवो का हनन होता है। बुद्धिमान प्राणी धर्म की रक्षा करते हुए कामसेवन करे।

आचार्य कहते है—

जननी जने तो ऐसो जन कै दाता कै सूर।
नही तो रहियो बॉझडी मति लजावे नूर॥

मातापिता का कर्त्तव्य है, घर का वातावरण अच्छा बनाये रखे। घर मे कार्य के लिए आपस मे झगडा ठीक नही। 'ससार में काम प्यारा है, चमड़ा नही'। घर मे बच्चा रोता है, टी वी के पास माताएँ बिठाकर उसे छोड़ देती है, बालपन मे अश्लील गाने आदि सुनाकर उसका मनोरञ्जन करती है। यह कार्य माता-पिता के लिए ही घातक है।

जिस पुत्र के लिए माता-पिता इतना पाप करते है, या फिर वश की रक्षा के लिए गोदी लेते है। वहीं पुत्र गर्भ मे आते ही माता के द्वारा खाये गये अन्न का रस खीच लेता है, माता का मुख पीला व कमजोर पड़ जाता है। पुत्र पैदा होते ही पति का आधा प्रेम लुट जाता है। थोडा बडा होने पर पुत्र माता-पिता के कर्जदार के रूप मे लाड़-प्यार मे धन को लूटता रहता है। शादी होने पर माता-पिता की ओर ऑख उठाकर भी नही देखता। विवाह होते ही पुत्र अर्द्धाङ्गिनी मे ऐसा मस्त हो जाता है कि माता-पिता उसे कॉटे की तरह दिखते है। इसीलिए जिनसेनाचार्य लिखते है—विवाह के पश्चात् यथोक्तपूजन विधिपूर्वक पिता उस पुत्र को कुछ सम्पत्ति व घर देकर धर्म व न्यायपूर्वक जीवन बिताने की आज्ञा दे। उसे अपना गुलाम नही बनाये। दूर रहने पर वह हर समय पिता की सेवा में उपस्थित रहेगा। अन्यथा अपने इन्द्रिय-सुखो को भोगने में प्रतिबधक मानकर अवज्ञा करेगा।

घर मे माताओ का कर्त्तव्य है कि भोजनादि बनाने के लिए कार्य करते समय जिन-नाम उच्चारण करते हुए द्वेष रहित हो कार्य करे। भक्तामर स्तोत्र, आलोचना पाठ आदि की रेकार्ड घर मे बजती रहे। प्रात काल मगल स्तोत्रादि का पठन-श्रवण करने से सारा समय मगलमयी बनता है। एक नारी चाहे तो घर को स्वर्ग बना सकती है और वह चाहे तो नरक बना सकती है

उज्जयिनी नगरी मे एक सेठजी रहते थे। सेठजी अपनी सेठानी और घर की मौज में धर्म कार्य से रहित थे। सेठ जी के सात पुत्र थे। धन का ठाट था। आनन्द, भोग-विलास और कुछ नही। छ पुत्रो की शादी हो गयी। घर मे सभी सम्पत्ति थी पर घर नरक बना हुआ था। पुत्रवधुएँ भी इन्द्रिय-विषयो मे मस्त-आलसी, धर्म-सस्कार से रहित थी। नौकर भोजन बनाते थे। सारा कार्य अव्यवस्थित था। घर मे लड़ाई, जीवहिंसादि कार्य होने लगे। मकान

की दीवारों पर जाले आने लगे, बर्तनो को कुत्ते चाटने लगे, बिल्ली भोजन खाने लगी। कौन काम करे, सबकी बुद्धि भ्रष्ट होने लगी। आपस मे ईर्ष्या फूट पड़ी थी, काम के नाम पर एक-दूसरे का मुँह देखती थी। श्वसुर ने दुर्व्यवस्था को दूर करने के लिए सबके कार्य नियमित बाँध दिये। सोमवार, मंगलवार, क्रमश सात दिन निश्चित कर दिये। रविवार की बारी सास की थी। सास तो स्वयं मूर्खा थी यदि वह ज्ञानी होती तो सारे परिवार को सस्कारित कर देती पर उल्टा हुआ।—सास ने अपने पतिदेव के लिए अच्छा मिष्टान्न बनाया और सबके लिए रूखा-सूखा भोजन बना दिया। सब क्रियाएँ ६ बहुएँ देख रही थी। बर्तनो को कुत्ते चाटने लगे। रसोई बिखर रही थी। घर क्या था, गूजड़ बना हुआ था। बहुओं की बारी सोमवार से आरम्भ हो गयी। उन्होंने सास की पूर्ण नकल की क्योंकि वे भी बेअकल थी, मूर्खा थीं। घर मे चारो ओर जीवों की विराधना हो रही थी। कही मल है, कहीं जीव हैं, कही रोटी पड़ी है। सारा घर अस्त-व्यस्त पडा था। बडी हैरानी थी। घर क्या था, नरक से अधिक बदबू देता था।

उस नगरी मे, एक दूसरा सेठ भी रहता था। उसकी सस्कारयुक्त, सुशीला, विनयी एक कन्या थी जिसका नाम मनोरमा था। मनोरमा आर्यिकाओं के पास धार्मिक अध्ययन करती थी। युवावस्था आते ही मनोरमा का विवाह पहले सेठ के सातवे लडके से निश्चित हो गया। शादी के पूर्व कन्या मुनिराज के पास दर्शन को गयी। ''गुरुदेव! मुझे कोई व्रत दीजिए, शिक्षा दीजिए जिससे मै श्राविका धर्म पालन करने मे सफलता को प्राप्त कर सकूँ।'' मुनिराज ने कहा—विपत्ति में धैर्य धारण करो।

शुभ वेला मे विवाह हुआ। पतिगृह मे प्रवेश करते ही मनोरमा का हृदय दया से भीग गया। नरक की वेदना देख धैर्य टूटने लगा और ध्यान आया कि मुनिश्री ने कहा था ''विपत्तौ धैर्य''। उसने सारी परिस्थिति का अवलोकन किया। अचानक सासजी के पास पहुँची। रविवार का दिन था। काम की बारी सास की थी। विनयपूर्वक मनोरमा ने मस्तक झुकाया, कहा—''माता जी, यह कार्य अब मै करूँगी, मेरे रहते आप काम करे, शोभा नही देता। आप अपनी बारी आज से मुझे दीजिए।'' विनयपूर्वक सास के काम की बारी स्वय ले ली। क्रम से सभी जिठानियो के पास जाकर उनका भी काम अपने हाथो मे ले लिया। अब क्या था, पैसो की तो कमी थी ही नही। वरवधू ने श्वसूर के नाम पत्र लिखा—''पूज्य पिताजी, मुझे १५ आदमियो की जरूरत है।'' श्वसूर घरेलू वातावरण से दुखी तो थे ही, सोचा—अब कौन-सी बला सिर पर आयी है, न मालूम क्या भाग्य मे लिखा है। प्रथम दिन है, १५ आदमी नही भेजता हूँ तो इज्जत का सवाल है, वह क्या कहेगी। श्वसुर ने २० मजदूर भेज दिये। मनोरमा तत्त्वज्ञा थी। उसने मुलायम कपड़ो से सारे दीवारो के जाले निकलवाये, घर की सफाई आदि कार्य मे सबको जुटा दिया। घर मे खुशबू महकने लगी। मनोरमा अन्न का शोधन कर चक्की से आटा पीसने लगी और भक्तामर जी का पाठ करने लगी। कुएँ से पानी खीच रही है और णमोकार मत्र बोल रही है। रसोई बना रही है, अन्दर सोच रही है 'क्या ही पुण्य हो कि मेरे द्वारा बनाया गया भोजन व्रती, त्यागियो, मुनिराजो के उदर मे पहुँच जाय, मेरा एक भी ग्रास त्यागियों के ध्यान की सिद्धि का कारण बनेगा तो मेरा जीवन सफल हो जायेगा। मुनि की आहारचर्या का समय निकट आने पर विनयवती कन्या सभी अग्रजो को विधिवत् शुध्द कपड़े आदि पहनवाकर गृह पर द्वारपेक्षण को खड़ी कर देती है। सभी सोचते हैं कि यह वधू है या तानाशाह। क्या नाच नचाती है, देखते हैं अब क्या कराती है। कारण वे प्रमादी भला मुनिचर्या को क्या जाने?

अहो! सच्चा पुरुषार्थ कैसा फलदायी है। अचानक मुनिराज द्वार की ओर चले आ रहे हैं, उनकी आकड़ी, जोड़ा जहाँ मुझे पड़गाहन करेंगे, वही आहार करूँगा। आठ जोड़े भिन्न-भिन्न वस्तुएँ लेकर पड़गाहन कर रहे मुनिराज को नवधा भक्ति पूर्वक आहार देते है। उधर पुष्पवृष्टि, दुन्दुभिनाद, जयध्वनि, गधोदक वृष्टि और अहोदाय—ये पंचाश्चर्य होते है। मुनिराज अक्षीण महानस ऋद्धिधारी थे। उनकी तेज दीप्तिमान किरणो से सारा गृह चमक उठा। सबके मनोभावो मे ज्ञान-ज्योति दीप्तिमान होने लगी। कमाल हो गया! मुनिराज के जाने पर उस भोजन में इस प्रकार वृद्धि होने लगी कि सारा गाँव जीम गया पर कमी नही आयी। श्वसुर की आँखो से खुशी की अश्रुधारा बह पड़ी। कह रहा है—यह देवी है या कोई महासती। मै धन्य हो गया। मेरा जीवन सफल हुआ। बेटी मनोरमा! धन्य है तू! धन्य हैं तुम्हारे माता-पिता।'' सभी परिवार के सदस्यो ने भोजन किया, सबके मुख कमल खिल उठे।

दोपहर का समय हुआ। सभी मिलकर मनोरमा के समीप स्वाध्याय कर रहे है। सायकाल मन्दिर जी में प्रभु की आरती, कीर्तन मे मग्न होते है। प्रभात समय मंदिर जी मे प्रभु के दर्शन को वधू जाती है और जाकर चक्की पीसना, कुएँ से पानी लाना, मुनि को आहार देना दैनिक चर्या बन गयी। सास, जेठानी सभी पूछने लगी "चक्की पीसने से, कुएँ से पानी खीचने से क्या लाभ है?'' तत्वज्ञा मनोरमा ने बताया "चक्की पीसते समय भक्तामर का पाठ करते है जिससे आटा मंत्रित हो जाता है, रोटी शुद्ध बन जाती है, दूसरी बात, चक्की मे गेहूँ के कण जलते नही, शक्तियुक्त अन्न खाने से शरीर पुष्ट रहता है। मंत्रित आटे से बनी रोटी खाने से स्वर्ग-मिलता है।'' सब योग्य समय पर रोटी पानी के कार्य मे उत्साह से भाग लेने लगी। "मनोरमा बेटी! मंदिर, पाषाण की मूर्ति के दर्शन से क्या लाभ है?'' सास के पूछते ही मनोरमा ने कहा—"माताजी, यह पत्थर की मूर्ति नही है, इसमे अरहन्त प्रभु की स्थापना की गयी है। वह आदिनाथ प्रभु है जिन्होंने युग के आदि मे धर्ममार्ग सिखाया। भगवान के दर्शन करने से पाप नष्ट हो जाते है, मन को शान्ति मिलती है। जो रोज भगवान के दर्शन करता है वह भी एक दिन भगवान बन जाता है।'' मनोरमा की जादूमयी और शिष्ट वाणी सबको आह्लादित करने लगी। घर मे चारो ओर धर्म की सुगन्ध महकने लगी। कभी स्वाध्याय, कभी जिनदर्शन, कभी पूजा-स्तुति—यही घर का दैनिक नियम बन गया। अब वहाँ कोई किसी को बुरी दृष्टि से नही देखता। सभी प्रेम से रहते है। घर की काया पलट गयी। नरक नही अब चारो तरफ स्वर्ग नजर आने लगा।

वैधव्य संस्कार

आज के वातावरण मे विधवा सुहागन मे कोई भेद नही नजर आता है। विधवा का श्रृगार मुर्दे श्रृंगारवत् निष्फल है। आगम मे विधान है कि अपने पति के मर जाने पर उसकी स्त्री को नियम से मोक्ष देने वाली जिनदीक्षा ग्रहण कर लेनी चाहिए, अथवा वैधव्यदीक्षा लेनी चाहिए। सामर्थ्य न हो तो समस्त शल्यों का त्यागकर शुद्ध ब्रह्मचर्यपूर्वक अपने योग्य व्रत धारण करने चाहिए। उस विधवा को व्रत और तपश्चरण के द्वारा मन और इन्द्रियों को वश मे करना चाहिए। प्रतिदिन जप, पूजा आदि श्रेष्ठ धार्मिक क्रियाओ को करके शांतिपूर्वक समय बिताना चाहिए।

सौभाग्य को सूचित करने वाले समस्त वस्त्रो तथा आभूषणो और यहाँ तक कि सौभाग्यसूत्र का भी त्याग कर

देना चाहिए। खाट पर सोना, सुन्दर वेशभूषा धारण करना, अञ्जन लगाना, शरीर पर सुगन्धित वस्तुओं का लेप आदि कार्य विधवा स्त्री को त्याग देना चाहिए।

हम कहां हैं?

एक नगर मे एक सेठजी रहते थे। सेठजी की पुत्री का नाम कमला था। वह आर्यिका माताजी के पास धर्म का अध्ययन करती थी। वह धर्मात्मा व तत्त्वज्ञानी थी। कमला का विवाह धनराज सेठ के पुत्र के साथ हुआ।

धनराज सेठजी के घर मे ऐशो-आराम था। धर्म को सब लोग भूल रहे थे। पैसे की मस्ती थी। एक दिन सेठजी के घर कमला ने अभयनन्दि मुनिराज को नवधाभक्ति पूर्वक आहार दान दिया। आहार के बाद सेठजी के द्वारा प्रार्थना करने पर मुनिराज चौकी पर बैठ गये।

सेठ की पुत्रवधू ने हाथ जोड़कर महाराज से सविनय प्रश्न किया—"महाराज, इतने सबेरे-सबेरे कैसे?" मुनिराज ने विद्वत्तापूर्ण उत्तर दिया—"समय की खबर ही नही थी।" फिर मुनिराज ने प्रश्न किया—"बेटी! तुम्हारी आयु कितनी है?" उत्तर मिला—"तीन वर्ष।" तेरे पति की आयु कितनी है? "कुल एक वर्ष।" फिर मुनिराज ने पूछा—"तेरी सास की आयु कितनी है?" "कुल छह माह।" "बेटी! तुम्हारे श्वसुर की?"

उत्तर मिला—"वे अभी पैदा ही हुए है।" "बेटी! ये सब ताजा खा रहे है या बासी?" उत्तर मिला "बासी"

इतनी चर्चा के बाद मुनिराज वन की ओर चले गये। इधर धनराज सेठ अपनी पुत्रवधू के विचित्र उत्तरो को सुनकर तथा उन्हे अपमानजनक मानकर क्रोध से आगबबूला हो गया। पुत्रवधू से बोला—"अरी मूर्खा! तूने मुनिराज के सामने हमारी नाक काट दी। तू इसी समय घर से निकल जा।" कमला ने कहा—"मैने सब कुछ सत्य ही कहा है। आपका अपमान नही किया है। आपको विश्वास नही तो मुनिराज से पता कर लीजिए।"

तब सेठजी मुनिराज के पास पहुँचे। मुनिराज से सारी गूढ बातो का रहस्य पूछा। मुनिराज ने कहा—"सेठजी! तुम्हारी पुत्रवधू बड़ी बुद्धिमती है। उसने पूछा था—महाराज, सबेरे-सबेरे कैसे? अर्थात् इतनी छोटी आयु मे मुनिव्रत कैसे ले लिया? मैने उत्तर दिया था कि समय की खबर नही अर्थात् काल का भरोसा नही है। मैने आयु पूछी थी, उसका मतलब था—किसको कब से धर्म की रुचि प्राप्त हुई है। उत्तर में तुम्हारी पुत्रवधू ने कहा था कि उसे तीन वर्ष से, पति को एक वर्ष से, तथा सास को छह मास से, धर्म का सच्चा श्रद्धान हुआ है एव श्वसुर को अभी-अभी यथार्थ श्रद्धान हुआ है क्योंकि मनुष्य का सच्चा जीवन तो धर्म-श्रद्धान से ही प्रारम्भ होता है, शेष आयु तो निष्फल है। बासी खाने का मतलब है कि सब पूर्व अर्जित पुण्य की कमाई खा रहे है।" इससे सेठजी को वास्तविकता का ज्ञान हुआ।

बन्धुओ! अब मैं कुछ नहीं कहूँगा। आप स्वय निर्णय कीजिए कि आपकी आयु कितनी है? पैदा भी हुए या नही। "सयम बिना एक समय न मुक्कउ" संयम के बिना एक समय भी मत गमाओ। सच्चे धर्म को धारण करो, जो अहिंसामय है। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह-ये पाँच व्रत हैं, इनको धारण करो। पुण्य का सम्पादन करो। पुण्य आत्मा को पवित्र करता है। पुण्य भी धर्म है, इस धर्म का भी सही श्रद्धान करो। पुण्य हेय

नही है। "पुण्य फला अरहंता" पुण्य का फल अरहत पद की प्राप्ति है। पुण्य छोड़ना नहीं पड़ता, यह तो छूट जाता है। पुण्य के फल मे राग करना हेय है, पुण्य हेय नही है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य सातिशय पुण्य प्रकृति तीर्थंकर पद को दिलाता है। पुण्यात्मा जीव अनेकानेक भव्यजीवो को धर्म मार्ग मे लगाकर ससार से पार कराता है। पापी स्वय भी डूबता है तथा दूसरे को भी डूबाता है।

बासी कब तक खाओगे? पूर्व मे पुण्य किया तो मनुष्य भव, उत्तम कुल, जाति सब मिले, पर प्रमाद मे इस खो दोगे तो क्या होगा? प्रतिदिन देवपूजा, गुरुपास्ति, दान, सयम, शील आदि पुण्यार्जन के साधन हैं। प्रमाद मे समय खो दिया तो कर्जदार बन जाओगे।

अपनी अपनी जातियो की रक्षा करो, जैसे गेहूँ चना एक साथ बोने पर जो फल आयेगा उसे क्या कहोगे? गधा घोड़ा मिलकर होने वाली सन्तान खच्चर कहलाती है, इसी प्रकार विजातीय रजोवीर्य से उत्पन्न सन्तान जातिसकर हो जाती है। वह मुनि आर्यिका के व्रतो को धारण नही कर सकती है। ८४ जातियाँ है। उनके अपने अपने आचार-विचार भिन्न भिन्न है। अत सभीका कर्त्तव्य है की अपनी अपनी जातियो मे पुत्र पुत्री का विवाह करे। कुलीन घरानो मे ही उत्तम सतान की उत्पत्ति हो सकती है।

धर्म के नाम से हम सब जैनी भाई एक है पर जातियो की अपेक्षा मर्यादा की रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। आचार्य परम्परा का उल्लघन करना अनैतिकता है। नैतिकता, सदाचार का पालन करो, यही हमारा आशीर्वाद है।

जैसा खाओ अन्न, वैसा होवे मन

एक सेठजी थे। देव-शास्त्र-गुरु के सच्चे भक्त व धर्मप्रिय नररत्न थे। एक दिन छत पर बैठे-बैठे सेठजी की दृष्टि खुले आकाश की ओर गयी। आकाश मे भिन्न-भिन्न प्रकार के सुन्दर-सुन्दर बादल आ रहे थे। अचानक सेठजी को एक हजार कलशो का एक विशाल शिखरबन्द मन्दिर दिखाई दिया। सेठजी ने एक कोयला उठाया कि मै तुरन्त चित्र बना लूँ फिर ऐसा विशाल मन्दिर मै भी बनवाऊँगा। पर क्या हुआ?

देखते ही देखते बादल बिखर गए। यह दृश्य देखकर ससार की अनित्यता का विचारकर सेठजी को वैराग्य उत्पन्न हो गया। बस, चल दिये सेठजी जगल की ओर। जिनदीक्षा धारण कर महामुनि बन गये।

मुनिराज एक दिन आहार के लिए नगर में आये। नगरसेठ ने रत्नो के हार से मुनिराज का पड़गाहन किया एव नवधाभक्ति पूर्वक आहार दान दिया।

आहार करते-करते मुनिराज की दृष्टि रत्नो के हार पर जा पडी। बस, लोभ आ गया। शीघ्र आहार पूर्ण कर, मुनिराज ने रत्नहार कमण्डलु मे डाल लिया। जगल की ओर चल दिये।

सेठ के घर मे हाहाकार मच गया। हार कहाँ गया? कौन ले गया? यहाँ मुनिराज के अलावा कोई आया नही है पर दिगम्बर मुनि चोर नही होते है? चर्चाओ के पश्चात् सेठजी मुनिराज के पास जगल की ओर हार की तलाशी लेने रवाना हुए।

उधर मुनिराजश्री को वमन हो गया जिससे पेट में से अन्न का एक-एक कण निकल गया। वमन होते ही परिणामों मे शुद्धता आ गयी। मुनिराज विचारने लगे-रे पापिष्ठ! तूने आज प्रथम दिन ही चोरी का महापाप कर लिया! तेरे घर में क्या कमी थी? निन्दा, गर्हा करते हुए पश्चाताप से भर उठे। मुनिराज ने हार लौटाने के लिए नगर की ओर प्रस्थान किया।

सेठजी और मुनिराज दोनों बीच मार्ग मे मिल गये। सेठजी ने गुरुदेव के चरणों में नमस्कार किया। मुनिराज ने कहा—"लो, यह अपना हार लो। मैं देने ही आ रहा था। भैया, एक बात बताओ, तुम काम क्या करते हो?"

"महाराजजी। आपसे क्या छिपाऊँ, मै चोरी का माल सस्ते दाम पर लेता हूँ और अच्छी कीमत पर बेचता हूँ। रात मे १२ बजे दुकान खोलता हूँ और ४ बजे बन्द कर देता हूँ।"

"जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन-सेठजी। तुम्हारे अन्न का प्रभाव देखो, चोरी का माल खाते ही परिणामो मे विकृति आ गयी और वमन के कारण कण-कण निकलते ही मेरे परिणामो मे निर्मलता आ गयी। सेठजी। न्याय की कमाई करो।"

बन्धुओ। आज अन्याय का धन कमाकर व्यक्तियो की बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। जहाँ आचार की शुद्धि नही है वहाँ विचारों की शुद्धि कभी नही हो सकती है। आप गृहस्थ लोग अन्याय का पैसा कमाते हो और वैसा ही भोजन साधुओ के लिए देते हो। आज साधुओ के परिणामो मे मलिनता क्यो है? मूल कारण आहार-शुद्धि का न होना है।

फिर आप साधुओ के दोष निकालते हो, साधु क्या करेगा? पर-घर की भिक्षा सरल नही। साधु का जीवन गृहस्थो के अधीन है। चौबीस घटे में एक घटा ऐसा आता है जब साधु को अपने हाथ नीचे करने पड़ते है। प्रत्येक गृहस्थ का कर्त्तव्य है कि शुद्ध आहार बनाएँ। शुद्ध भोजन दे। आचार्यश्री कुन्दकुन्ददेव ने आहार-शुद्धि को सच्चा समयसार कहकर मूलाचार में विशेष वर्णन किया है।

किसी का धन हरण मत करो, न्याय की कमाई करो। अपनी कमाई का दसवाँ हिस्सा सदैव दान करो। हिल-मिल कर प्रेम-वात्सल्य से रहो। कन्धे से कन्धा मिलाकर चलो।

एक हाथ से कभी ताली नहीं बजती है। साधु को आहार देते समय सदा णमोकार मन्त्र पढ़ो। वात्सल्य से अच्छी तरह माता के समान आहार कराओ। विचार करो—मेरे द्वारा दिया गया यह दान साधु की ध्यान-साधना मे वृद्धि करे। आपकी आहार-शुद्धि नही है तो हमारे भी परिणामों में उचित निर्मलता नही रहेगी।

भैया! सद्गृहस्थ बनो। मुनिधर्म का पालन नही कर सकते हो तो श्रावक धर्म तो पालो। कुन्दकुन्दाचार्य ने रयणसार में लिखा है—

'दाण पूजा मुक्खं सावय धम्म'

दान देना और पूजा करना श्रावक का मुख्य कर्त्तव्य है। कोई भी अतिथि सत्पात्र घर पर आये, उसे भूखा मत जाने दो। सत्पात्र मे भक्तिपूर्वक दान दो। प्रतिदिन जिनभगवान की पूजा करो। दान और पूजा करने वाला कभी भी दरिद्री नहीं होता। आचार्य कहते है-पावभर आटे में मोक्ष मिलता है।

एक शहर मे एक मुनिराज का चातुर्मास हुआ। उस शहर मे एक अत्यन्त कजूस सेठ रहते थे। वे कभी भी किसी को दान नहीं देते थे। उनकी पत्नी अत्यन्त धर्मात्मा एव दयालु थी। उसकी मुनिराज को आहार देने की बहुत इच्छा थी परन्तु सेठजी नही देने देते थे। एक दिन सेठजी प्रात काल ही किसी कार्यवश दूसरे शहर जाने के लिए घर से रवाना हो गये। सेठानी ने सोचा कि यह अवसर अच्छा है। उसने कंजूस सेठजी की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर अपने घर मुनिराज के लिए चौका लगाया और मुनिराज को आहार कराया। सेठजी के कार्य मे कुछ व्यवधान हो जाने से दूसरे शहर नही गये और वे लौट आये। घर पर उन्होंने जो कुछ देखा, उससे ज्ञात हुआ कि मुनिराज को आहार कराया गया है। उन्होंने पहले तो सेठानी से झगड़ा किया, फिर पूछा कि इसमें कुल कितना खर्च बैठा? सेठानी ने बताया कि कुल दस रुपये। सेठ ने कहा—"अच्छा, ठीक है। मैं वह रुपये मुनिराज से वसूल करूँगा।" यह कहकर वह मुनिराज के पास गया। पर मुनिराज मन्दिर में नहीं थे, वे जंगल मे तपस्या के लिए चले गये थे। सेठ उन्हे तलाशता रहा। मुनिराज जिस जगल मे साधना कर रहे थे, उसमे बहुत हिंस्र-पशु थे। वहाँ एक भील युगल रहता था, उन्होंने मुनिराज को आगे जगल मे जाने से रोका-"हे साधुराज। रात होने वाली है, आप आगे मत जाइए। आज की रात हमारे मकान (जो दो-मजिला था) मे ही व्यतीत कीजिए, प्रात ही पधारिए।" मुनिराज ने उनका आग्रह स्वीकार कर लिया और दूसरी मजिल पर चले गये। बाहर गैलरी में वे भील युगल लकड़ी लेकर रात-भर पहरा देने के लिए खड़े हो गये, जिससे जगली पशु मकान मे न घुसें। आधी रात मे ही पुरुष को नीद का झोका आ गया और वह दूसरी मजिल से नीचे जा गिरा। नीचे हिंस्र-पशु थे, वे उसे ले भागे और मार डाला। भीलनी बहुत दु खी हुई, किन्तु फिर भी चुपचाप खड़ी रहकर मुनिराज की सुरक्षा करती रही।

प्रात मुनिराज जगल की ओर विहार करने लगे तब भीलनी को आशीर्वाद प्रदान किया। आशीर्वाद मे भी बहुत शक्ति होती है। माँ के द्वारा खिलाई जाने वाली सूखी रोटी भी अमृत के समान प्रतीत होती है क्योंकि वह वात्सल्य भावना से ओत-प्रोत होकर खिलाती है। होटल मे बहुत अच्छा खाना भी खाते है तो भी वह आनन्द-प्राप्त नही हो सकता।

मुनिराज ने कहा—"वह भील युवक दान की पवित्र भावना के साथ मरा है। उसे सद्‌गति प्राप्त हो, यही हमारा आशीर्वाद है।" मुनि जगल की ओर चल दिये। अचानक सेठजी वहाँ पहुँच गये। उन्होंने मुनिराज को प्रणाम किया और कहा—"मुनिराज, आपने उस शहर मे चातुर्मास किया था?" मुनिराज ने कहा—"हाँ, किया था।" सेठजी ने कहा—"उस समय आपने मेरे घर पर मेरी अनुपस्थिति मे आहार किया था, मेरे दस रुपये खर्च हो गये थे। आप मेरे दस रुपये लौटाइए।" मुनिराज परिग्रह-त्यागी, कहाँ से रुपये देते?

सेठ न कहा—"आपके बहुत भक्त है, किसी से माँगकर दे दे।" मुनिराज हैरान, वे किससे रुपये माँगे? सेठजी भी अपनी जिद पर अड़े रहे। "मुनिराज, अमुक शहर मे राजा-रानी आपके परम भक्त है। आप उनके नाम हुण्डी लिख दीजिए, वे मुझे दस रुपये दे देगे।" मुनिराज बहुत असमजस मे पड़ गये। वे हुण्डी क्या जाने? परेशान हो, उन्होंने एक पत्र पर णमोकार मत्र लिखकर दे दिया और कहा—"जाओ, अमुक राजा-रानी को दे दो।" सेठजी उस शहर मे पहुँचे। द्वारपालो से कहा—"मुनिराज ने यह पत्र देकर राजा की सेवा मे भेजा है।" द्वारपाल ने उन्हें अन्दर भेज दिया।

सेठजी ने कहा—"यह आप लोगों के लिए मुनिराज ने भेजा है।" राजा ने पत्र पढ़ा। उस समय रानी प्रसव-वेदना से पीड़ित थी। राजा ने उन्हें वह पत्र दिया, कहा—"मुनिराज ज्ञानी हैं, उन्होंने तुम्हारे कष्ट-निवारण हेतु यह मन्त्र भेजा है, इसे पढ़ो।" रानी ने वह मंत्र पढ़ा और तत्काल एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। राजा ने पुत्र-प्राप्ति व मुनिराज का पत्र लाने की प्रसन्नता मे पत्रवाहक सेठजी को खूब धनधान्य भेंट किया। उसी समय वह नवजात बालक बोल उठा—"अरे सेठ ! मैंने केवल एक रात भीलरूप में मुनिराज को वस्तिका का दान दिया था। उसी रात मेरी मृत्यु हो गयी। उस वस्तिका दान के फलस्वरूप मै आज इतने उच्च कुल में, धर्मप्राण कुल मे जन्मा हूँ। आहारदान की तो तुलना ही नही है। एक ग्रास आहार (मुनि को) दान करने वाले का पुण्यफल सुमेरुपर्वत जितना प्राप्त होता है। तू उस आहार-दान का पैसा वसूल करना चाहता है? धिक्कार है तुझे।" यह सुनकर सेठ लज्जित हो गया। उसे दान का महत्त्व समझ में आ गया। परिणामस्वरूप उसने राजा से प्राप्त धन-धान्य को स्वीकार करने से इंकार कर दिया।

पंचरत्न

महानुभावो!

मै तो जहाँ भी जाता हूँ, पाँच बातो का प्रवचन देता हूँ। आप लोग अपनी-अपनी डायरी निकालकर नोट कर लीजिए—

(१) हाथी बाँधना, (२) मीठा भोजन करना, (३) छाया मे आना, छाया मे जाना, (४) देकर माँगना नही और (५) बाँधकर छोड़ना नही।

बिना दृष्टान्त के समझ में नही आयेगा। सुनिए, एक नगर मे एक सेठजी रहते थे। उनका पुत्र इकलौता था। पढ़ने मे रुचि नही रखता था। वह कहता था—पढ़ेगे लिखेगे बनेगे खराब। खेलेगे कुदेगे बनेगे नवाब।

सेठजी परेशान थे। बहुत समझाने पर भी नवाब सा ने एक नही सुनी। सेठजी वृद्धावस्था को प्राप्त हुए। अन्तिम समय निकट जानकर उन्होंने पुत्र को बुलाकर कहा—"बेटा! आज तक बहुत समझाया, पर तुम अपनी बुरी आदतें नही छोड़ पाये। अब मेरा अन्तिम समय निकट आ गया है। मेरी अन्तिम पाँच शिक्षाप्रद बाते याद रखना। जीवन में इनका पालन करना।"

पुत्र ने कहा—"पिताजी! मुझे क्षमा कीजिए। अब आपकी शिक्षा को विनयपूर्वक ग्रहण करूँगा। आप मुझे अवश्य बताइए।"

सेठजी ने उपरोक्त पाँचो बाते बतायी और इतना बताते ही सेठजी का कठ रुक गया। प्राण-पखेरू उड़ गये। जिन्दगी भर शिक्षा दी पर नही माना। अब अज्ञानी, मूर्ख बेटा पिता की शिक्षा पालने का पुरुषार्थ करने लगा। पिता ने कहा था, हाथी बाँधना। एक हाथी खरीद लिया और घर में बाँध दिया। अज्ञानी सत्यता के रहस्य को क्या जाने। हाथी का भारी खर्च उठाना सरल काम नहीं था। दूसरी शिक्षा पालन करने के रूप मे प्रतिदिन नये-नये मिष्टान्न बनवाकर खूब मिठाई खाने लगा अतः पेट खराब हो गया। अजीर्ण से परेशान हो गया। पिताजी

ने कहा था—छाया में आना, छाया में जाना तो मूर्ख ने घर से दुकान तक चँदोवा बँधवा दिया, छाया में दुकान आने और छाया में जाने लगा। पिताजी ने कहा था—देकर माँगना नही अत दुकान से किसी को भी जो वस्तु दे देता फिर माँगता नहीं। उधार माल देकर पैसा लेना भी छोड़ दिया। सारी दुकान में नुकसान, घाटा लगने लगा। अब सोचने लगा—चार बातें तो पिताजी की मैने पूरी कर ली है, अब पाँचवी का पालन कैसे करूँ। किसको बाँधू? उन्होंने कहा था—बाँधकर छोड़ना नही। क्या करूँ? अज्ञानी की दशा देखो—उसने अपनी पत्नी की दोनो चोटियाँ झाड़ से बाँध दी। पत्नी बिलख-बिलखकर रो रही थी पर मूर्ख ने कहा—"मेरे पिताजी कह गये थे बाँधकर छोड़ना नहीं।" विचित्र दशा थी।

उसी समय एक वृद्ध अनुभवी आये। वे सेठजी के प्रिय मित्र थे। वृद्ध अनुभवी ने कहा—"हे भैया। यह क्या कर रहे हो?" "अरे । तुम्हारे मित्र ने मुझे बर्बाद कर दिया।" "क्या हुआ?" "वे मुझे पाँच बातें कह गये थे, उन्हे ही पालन कर रहा हूँ।" उसने पाँचो बाते बता दी।

वृद्ध ने कहा—"हाथी बाँधना—इसका मतलब यह नही कि हाथी लाकर बाँधना। हाथी बाँधने का तात्पर्य यह है कि मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका तो निमन्त्रण से भोजन करने आते नही है अत ब्रह्मचारी, व्रती, श्रावक या साधर्मी बन्धु-बहनो को पहले ही निमन्त्रण देकर बाँध लेना चाहिए जिससे अतिथि-सत्कार व्रत में कोई बाधा नही आये।

बन्धुओ। मानव का कर्तव्य है पहले पात्रदान करके फिर स्वय भोजन करे। यही हाथी बाँधने का रहस्य है।

दूसरी बात थी—मीठा भोजन करना। इसका मतलब यह है कि सयम से भोजन करो। सयम रहित किया गया भोजन कभी मीठा नही होता है।

तीसरी बात थी—छाया मे आना-छाया मे जाना। इसका रहस्य है घर मे पिता की छाया मे पुत्र, सास की छाया मे बहू रहती है तो जीवन सुखी रहता है, वैसे ही आपके पिताजी कह गये है कि बेटा। सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की छत्र-छाया मे चलना। उनकी आज्ञानुसार चलना। देव अरहन्त, गुरु-निर्ग्रन्थ व दयामयी धर्म की छाया मे रहने से जीवन सुखी बनेगा।

चौथी बात थी—देकर माँगना नही। बेटा। इसका मतलब यह है कि जो वस्तु तुमने दान में दे दी है, उसे फिर माँगना नही। दान देकर फल की इच्छा नही करना। तुम्हारे पूर्वजो ने मन्दिर के लिए जो जमीन आदि दान में दे दी है, उनका ब्याज लेकर आय कभी नही करना। बन्धुओ। जो वस्तु दान दे दी गयी है, उसका पुन ग्रहण करना वमन करके पुन ग्रहण करने के समान जानकर इस दुष्कार्य को छोड़ देना चाहिए।

अन्तिम बात थी—बाँधकर छोड़ना नही। इसका मतलब है—देव-शास्त्र-गुरु की साक्षी मे जो नियम प्रतिबद्ध कर लिया, एक बार लेने के बाद छोड़ना नही। जो व्यक्ति बाँधे हुए नियम को भग करता है, वह वास्तव मे भगी है।" पुत्र का हृदय-परिवर्तन हो गया। उसने विधिवत् सारे नियमो का पालन करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

भैया। शुद्ध भोजन करो। सयम से रहो। पानी छानकर पियो। रात्रि मे भोजन नही करो।

बड़ी, पापड, अचार, मुरब्बा ये सब साल-साल भर के बने हुए लोग खाते हैं, उनमें अनन्त त्रस जीवों

की उत्पत्ति हो जाती है। ये सब अभक्ष्य हैं, उत्तम पुरुषों को उनका सेवन नही करना चाहिए। खान-पान जितना शुद्ध होगा, जीवन उतना ही पवित्र बनेगा। हर प्राणी से प्रेम करो। किसी को सताओ नही। वात्सल्य से रहो, यही हमारा आशीर्वाद है।

भक्ति से मुक्ति

बन्धुओं! जिनभक्ति सदा सुख देने वाली है। सच्ची भक्ति हमारे प्रसिद्ध आचार्यश्री समन्तभद्रस्वामी ने की थी। समन्तभद्र आचार्य एक महान, न्यायविद्, सिद्धाताचार्य थे। दीक्षा के कुछ ही दिनों के बाद पूर्व कर्मोदय से असातावेदनीय कर्म ने उन्हे घेर लिया। भस्मक रोग हो गया। बहुत भूख लगती थी। जितना खाते, सारा भट्टि मे जले अन्न की तरह भस्म हो जाता था। सयम में बाधा आने का प्रसग प्राप्त हुआ। आपने अपने दीक्षा गुरु से प्रार्थना की—"गुरुदेव! असातावेदनीय की शारीरिक पीड़ा असह्य है। इससे सयम की रक्षा असभव है। आप मुझे सल्लेखना (समाधि) दे दीजिए।"

शिष्य की प्रार्थना पर दूरदर्शी आचार्यश्री गुरुराज ने विचार किया और कहा—"समन्तभद्र! तुम जैन धर्म के एक प्रभावशाली रत्न हो। भविष्य मे तुम्हारे द्वारा जैन धर्म की बहुत प्रभावना होने वाली है अत समाधि लेना उचित नही है। कुछ समय व्यतीत कर जिस प्रकार हो, रोग का शमन करके आओ, फिर से दीक्षा दे दी जायेगी।"

"जो आज्ञा गुरुदेव!" बुद्धिमान प्राण जाने पर भी गुरु-आज्ञा का उल्लघन नही करते है।

समन्तभद्र चलते-चलते एक शैव मदिर मे पहुँच गये। वहाँ प्रतिदिन शिवपिडी के लिए भक्तजन भोग चढाते थे। इन्होंने सबसे कहा—"देखो! आप लोग अधिक से अधिक भोजन, अच्छे-अच्छे पदार्थ बनाकर लाइए, मुझमे एक शक्ति है। मै शिवपिड को खिलाऊँगा।"

भक्ति अधी होती है। मनो लड्डू-पेड़ा चढाये जाते। ये द्वार बन्दकर, सब गट कर जाते। सभी लोगो मे चर्चा का विषय था। कितना अच्छा बाबा है कि हमारे भगवान को अच्छे-अच्छे पकवान खिलाता है। कार्य प्रतिदिन चलता रहा। धीरे-धीरे समन्तभद्र की शारीरिक व्याधि शमन होने लगी। फलत चढ़ावे की सामग्री बचने लगी। किसी ने प्रश्न कर लिया—"यह भोग पहले तो सब खत्म हो जाता था, अब इतना बचता क्यों है?" समन्तभद्र ने कहा—"अरे! आपकी पिंडी कई वर्षो से भूखी थी अत तीव्र भूख से पीड़ित पहले तो सब खा जाती थी पर अब उसकी भूख कम हो गयी, मैं क्या करूँ अब इतना खाती ही नही है। भोग पड़ा रहता है।"

एक अनुभवी के अन्दर शका उत्पन्न हो गयी। उसने कहा—"पिंडी भोजन करती है या तुम खा जाते हो? सच-सच बताओ।" समन्तभद्र ने कहा—"मैं तो सच कहता हूँ, आपका सारा भोग यह पिंडी ही खाती है।" अब तो अनुभवी ने सोचा—इसकी अच्छी तरह खोज करनी चाहिए कि वास्तव में सत्य क्या है? दरवाजे बन्द होने के पूर्व ही गुप्तरूप से एक बालक मंदिर की छोटी खिड़की में छिपा दिया गया। समन्तभद्र ने दरवाजे लगाये और पिंडी पर आराम से बैठ गये और पेट भर भोजन कर आराम से सो गये। उस खिड़की में बैठे बच्चे ने हल्ला कर दिया।

नगर के राजा के पास सारी खबर पहुँची। समन्तभद्र के व्यवहार से राजा-प्रजा सभी में असंतोष छा गया। राजा ने कहा—"समन्तभद्र! तुम इस शिवपिंडी को नमस्कार करो अन्यथा दण्ड दिया जायेगा। तुमने हम लोगों को ठगकर ठीक नहीं किया है।"

समन्तभद्र—"राजन्! आपकी यह पिंडी मेरा नमस्कार नही झेल सकेगी।" समन्तभद्र कर्मोदय वश चारित्र से च्युत हुए थे, उनका सम्यक्त्व मलिन नही हुआ था। उनके रोम-रोम मे जिनेन्द्र के प्रति अटूट अनुराग समाया हुआ था। समन्तभद्र की इस प्रकार तिरस्कार रूप वाणी को सुनकर राजा का क्रोध भभक उठा। उसने कहा—आपको नमस्कार करना ही पड़ेगा। आगे क्या होगा देखेगे"।

समन्तभद्र ने फिर कहा—"राजन्! याद रखिए, मेरे नमस्कार करते ही आपकी यह पिंडी फट जायेगी।" राजा ने कहा—"हम इसकी पूर्ण सुरक्षा रखेंगे। ऐसा कभी नही होगा। यह छलभरी बाते अब नहीं चलेंगी।" राजा ने तुरन्त ही पिंडी के चारों ओर लोहमयी साँकलें डलवा दी। सिपाही तैनात कर दिये। घोषणा हो गयी, सुबह समन्तभद्र शिवपिण्डी को नमस्कार करेगा।

स्वामि समन्तभद्र मुनिवर सो शिवकोटि हठ कियो अपार।
वन्दन करो शम्भुपिंडी को तब गुरु रच्यो स्वयम्भू भार॥
वन्दन करत पिंडिका फाटी प्रकट भये जिन चन्द्र उदार।
सो गुरुदेव बसो उर मेरे विघ्नहरण मगल करतार॥

सारा शैवमंदिर इस दृश्य को देखने के लिए दर्शनार्थियो से खचाखच भरा पड़ा था। अब क्या होगा? समन्तभद्र ने स्वयम्भू स्तोत्र सस्कृत की (चौबीस भगवान की स्तुति) स्तुति रचना आरम्भ की। सात तीर्थंकरों की स्तुति हो गयी, वहाँ नमस्कार शब्द आया ही नही अष्टम चन्द्रप्रभ की स्तुति मे—

चन्द्रप्रभ चन्द्रेमरीचिगौर, चन्द्रद्वितीय जगतीवकान्त
वन्देऽभिवन्द्य

'वन्दे' शब्द आते ही शिवपिंडी धड़ाम से फट गयी और उसी में से मनोज्ञ, वीतराग, चन्द्रप्रभ की प्रतिमा प्रकट हुई। सच्ची भक्ति का ऐसा माहात्म्य जानकर राजा स्वय जैनी बन गया। जैनधर्म की अपूर्व महिमा देख प्रजा के लोग भी जैनी बने। समन्तभद्र ने पुन जिनदीक्षा लेकर जिनशासन का माहात्म्य बढ़ाया।

एक दिन शिवकोटि राजा स्वय मुनिराज समन्तभद्र के पास दीक्षा के लिए पहुँचे। आचार्यश्री ने कहा—"अभी तुम्हारा मिथ्यात्व नहीं गया अत दीक्षा के पात्र नही हो।" राजा ने कहा—"गुरुदेव! क्या उपाय करूँ?" गुरुदेव ने कहा—"तुम्हारे एक करोड़ मन्दिर है। उन्हे पहले बेचकर आओ।" राजा गये, सारे मदिर बेचने पर खरीदने वाला कोई नहीं मिला। राजा उदास हो गया। अचानक एक व्यक्ति मिला। राजा ने कहा—"एक करोड़ मन्दिर खरीद लो।" उसने कहा—"मेरे पास तो एकमात्र खल का टुकड़ा है—उसमें देना हो तो दे दीजिए।" राजा ने एक खल के टुकड़े मे एक करोड़ शैव मन्दिरो को बेच दिया।

सच है महानुभावो! मिथ्यात्व खल के टुकड़े बराबर है। सत्य की पूजा करो, भक्ति करो। जिनभक्ति सम्यक्त्व के लिए कारण है। आज भक्ति कोई करना नहीं चाहता है, सब भगवान बनना चाहते हैं, पर भैया! भगवान बनने

के लिए पहले भक्त बनना ही पड़ेगा। सर्प के डसने से तो एक भव ही बिगड़ता है पर मिथ्यात्व की पूजा से अनेक भव बिगड़ जाते हैं। सारा प्रथमानुयोग भरा पड़ा है भक्ति से। रावण ने कैसी भक्ति की थी कि अपनी वीणा के तारों के टूट जाने पर शरीर में से नस निकालकर वीणा बजाते हुए भक्ति मे लीन हो गया था।

इतना ही नहीं, कुन्दकुन्द स्वामी बारह सभाओं के मध्य ध्यान करने लगे। भावपूर्वक वन्दन किया। वह सच्ची वन्दना प्रभु के कर्णों में पहुँच गयी और विदेह क्षेत्र से ही प्रभु ने कुन्दकुन्दाचार्य के लिए आशीर्वाद दिया।

जो भावपूर्वक अरहत की भक्ति करता है, वह थोड़े समय मे कर्मों का नाश करके मुक्ति को प्राप्त करता है।

गृहस्थो को इन्द्र-इन्द्राणी बनकर उत्साहपूर्वक जिन भगवान की पूजा करनी चाहिए। ऐसा नहीं कि फटे-पुराने कपड़ों से पूजा करो। दान-पूजा में फटे कपड़े का कभी उपयोग नहीं करना चाहिए। अशुद्ध द्रव्य से पूजा नही करनी चाहिए। बाजार का द्रव्य अनेक जीवों-पशुओं के द्वारा स्पर्श किया हुआ होता है अत सामग्री धोकर ही चढ़ाओ।

अच्छे-अच्छे उत्तम प्रासुक द्रव्य चढ़ाकर अष्ट द्रव्यों से पूजा करने वाला जीव अष्ट कर्मों का क्षय करता है।

भैया। मेरा तो इतना ही कहना है कि भक्ति से युक्ति और युक्ति से मुक्ति मिलती है इसलिए कभी भी जिन-चरणों की भक्ति करना मत छोड़ो। आपस मे भाई-भाई की तरह मिलकर रहो। साधर्मिकों मे वात्सल्य रखो। किसी के दोषो की निन्दा-आलोचना न करके, उसका स्थितिकरण करो। यही सच्ची भक्ति है। मै तो एक बात जानता हूँ—

"सुनी हो तो अनसुनी करे वो हजारो में एक।
देखी हो तो ढाँक दे वो लाखों में एक।।

भगवान की भक्ति का सच्चा फल यही है—"दोषवादे च मौन।

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा। निवारे सभी भाँति के कर्म फन्दा।
सुचन्द्रप्रभनाथ तोसो न दूजा। करो जानि के पाद की जासु पूजा।।
लखे दर्श तेरो महा दर्श पावे। जो पूजे तुम्हे आप ही सो पुजावे।

इस प्रकार भगवद् भक्ति करने से सच्चे सुख की प्राप्ति हो जाती है।

कषाय चतुष्टय प्रवचनामृत

क्रोध

एक राजा का आधिपत्य विश्व के कोने-कोने में जमा है। बालक, युवा, वृद्ध, योगी भी, जिसके शासन से शासित हैं। आप जानते हैं वह कौन-सा राजा है? उत्तर मिल रहा है-वर्तमान मे राजाओं का राज्य नही है। यहाँ

तो प्रजातन्त्र हैं। हर व्यक्ति अपने मन का राजा है।

बन्धुओ। आपका कहना ठीक है। बाहरी व्यक्ति बाहर ही दौड़ लगा सकता है। सबको जीतकर एक पुत्र (राजा) अपनी माँ के पास आया। "माँ, मै सारे विश्व पर विजय प्राप्त करके आ गया हूँ। माँ, मुझे लोग सर्वजित कहते है। माँ, मुझे आशीर्वाद दीजिए।" माँ अनुभवी थी। अत माँ के मुख से पवित्र वाणी मुखरित हुई—"दुनिया तुम्हें जो चाहे कहे, मैं तुम्हें सर्वजित नही मानती हूँ। मै तो कहती हूँ, तुमने एक शत्रु पर भी विजय प्राप्त नही की है, मैं तुमको सर्वजित् तो दूर एकजित भी नही मानती हूँ।"

पुत्र आश्चर्य से बोला—"माँ। आप क्या कह रही हो? मैने युद्ध मे सबको हरा दिया। मुझ जैसे वीर के सामने सब शत्रु दाँतो तले अँगुली दबा युद्ध क्षेत्र मे पीठ दिखाकर भाग गये। माँ, मुझे एक बार सर्वजित कह दो।"

माँ—"बेटा। अभी तुमने जीता ही क्या है जो मै तुम्हे सर्वजित कहूँ? यह तो बहुत असभव है।"

पुत्र—"माँ। मुझे शत्रु तो बताओ, जिसे जीतकर मै आपको अपनी वीरता दिखा सकूँ।"

माँ—"बेटा। तुमने बाहर के शत्रु जीते है। अभी तुम्हारे अन्दर मे बहुत बड़े-बड़े शत्रु बैठे है, उन्हे जीतने पर ही तुम सर्वजित कहला सकते हो।"

ससार मे 'कषाय' रूपी एक बहुत बडा राजा है। जिसका शासन ससार के समस्त जीवो पर है। वह हर प्राणी पर ऐसा शासन कर रहा है कि अन्तर मे सबके त्राहि-त्राहि मची है। एक क्षण भी चैन से नही रहने देता है।

'कृष्' विलखने धातु से यह कषाय शब्द बना है। जिसका अर्थ है जोतना। जिस प्रकार किसान अपने लम्बे-चौड़े खेत को इसलिए जोतता है कि उसमे बोया हुआ बीज अधिक से अधिक प्रमाण मे उत्पन्न हो, उसी तरह कषाय द्रव्यापेक्षया अनादि अनिधन कर्मरूपी क्षेत्र को जिसकी कि सीमा बहुत दूर तक है, इस तरह जोतता है कि शुभाशुभ फल इसमे अधिक से अधिक उत्पन्न हो।

राजवार्तिक में अकलक स्वामी ने हिसार्थक कृष् धातु की अपेक्षा कषाय शब्द की निरुक्ति की है। कहा है-सम्यक्त्वादि विशुद्धात्मपरिणामान् कषति हिनस्ति इति कषाय ।

इस कषाय रूप राजा के चार पुत्र है- (१) क्रोध, (२) मान, (३) माया, (४) लोभ।

आज प्रथम दिन क्रोध कषाय पर हमे चिन्तन करना हैं। अनुकूल या प्रतिकूल दोनो परिस्थितियो मे कषाय का उद्वेग उठता है। अनुकूल परिस्थिति मे मान और लोभ का सचार होता है तथा प्रतिकूल स्थिति में क्रोध और मायाचारी का तूफान उबाले लेता है।

एक माँ ने शरारती बालक से उसके हितार्थ सत्य मार्ग बताते हुए कहा—"बेटा। स्कूल जाओ। अच्छी पढ़ाई करो, ज्यादा खेलना अच्छा नहीं।" पाँच साल का बच्चा खेलना चाहता है। माँ के प्रतिकूल वचन सुनते ही क्रोध मे रोता है, चिल्लाता है, बर्तन फेकता है, मारना, पीटना, कलम, किताब, स्लेटादि फेंकना आदि क्रियाएँ करता है। बच्चा बड़ा होता है, माँ कहती है—"ज्यादा सिनेमा नही देखो, जुआ नहीं खेलो, होटल में जाकर गन्दी चीजें

मत खाओ।'' जवानी के जोश मे, ऐसा क्रोध आता है, होश खो देता है, माँ को दुश्मन की तरह देखता है। क्रोध बहुत बड़ा शत्रु है। माँ की प्रतिकूल वाणी, सुन क्रोध के वश कोई भाग जाता है, कोई माँ को ही खरी-खोटी सुनाता है। घर-घर में सास-बहू की यही स्थिति है। हर व्यक्ति अपनी कषाय की पुष्टि करता है। सास के अनुकूल यदि बहू नही करे तो क्रोध कषाय से सास तमतमाती है और बहू के अनुकूल सास नही करे तो बहू क्रोध से अपनी झोली-झण्डा लेकर माँ के घर भागने का प्रयास करती है। रहस्य यही है कि घर हो या ऑफिस, मन्दिर हो या मस्जिद, कुटी हो या महल, क्रोध कषाय की अग्नि चारों ओर फैली हुई है। इसी क्रोध के वशीभूत आये दिन पति-पत्नी मे झगड़े, तलाक आदि होते रहते हैं। इतना ही नही, आये दिन आत्महत्याएँ क्रोध कषाय का ही फल हैं। आजकल कषाय का एक नया निमित्त और मिल गया है—'नयी दुल्हन दहेज मे कितना लायी है। अनुकूल दहेज यदि लड़की के घर से नही आया है तब देखिए सास-ससुर-दूल्हा आदि सब उसके ऊपर लाल-लाल हो बरस पड़ते है। इतना ही नही, उस मासूम बालिका को एक व्यापार बना रहे हैं। नाना त्यौहार, रीति-रिवाजों मे मन-चाही रकम बाप के घर से लेकर आना नही तो इस घर में पैर मत रखना। क्रोध मे आग जैसे बरसते हुए आज के महाजन परायी लड़की को भी मौत के घाट उतारते लज्जित नहीं होते।

आचार्य कहते है कि अरे! ससार मे चाण्डाल कौन है? 'क्रोध चाण्डाल है'। जिसने क्रोध को जीत लिया है, उसे सौ-सौ बार नमन है। क्रोध कही बाहर से नही आता है, बाहरी निमित्त क्रोध के कारण नही हैं अपितु स्वय की विभाव परिणति क्रोधरूपी अग्नि मे आत्मा को भस्मीभूत करती है। जो क्रोध आने पर निमित्त को दोष देते है, 'पर ने ऐसा किया इसलिए मैने क्रोध किया, वे मूढ़ है। ज्ञानी पर को दोष नही देकर 'क्रोध पर क्रोध' करते है। क्रोध पर क्रोध करने वाले योगी के सामने दुष्ट भी झुक जाते है। एक शरारती बालक ने चलते हुए एक राहगीर के सिर पर पत्थर फेका और आनन्द से झूमने लगा। राहगीर मे क्रोधाग्नि भभक उठी। बदला लेने की भावना से उसके नाश का प्रयत्न करने लगा।

बच्चा आगे बढा-उसने समुद्र में जोरदार पत्थर फेंका। पत्थर फेंकते ही समुद्र अपनी लहरो से बालक को आनन्दित करने लगा। वह किसी प्रकार भयकर तूफान से जूझकर बच्चे को निगलने नही आया अपितु बच्चे की शरारत पर हँस पड़ा।

बच्चा आगे बढ़ा-बालक ने हरा-भरा आम का पेड़ देखा। बस, उसी समय पेड़ ने प्यार से बच्चे को आशीर्वाद रूप ठडी-ठडी छाया एवं मीठे-मीठे आम खाने को दिये।

उसी वृक्ष के नीचे एक महात्मा ध्यानस्थ थे। बच्चे ने एक बड़ा पत्थर लेकर उनके सिर पर फेक दिया। पत्थर तीखा था। तुरन्त ही उनके सिर से खून की धारा बह निकली। बच्चा नाच रहा था। महात्मा मुस्करा रहे थे। परन्तु आँखों से अविरत अश्रुधारा बह रही थी। बच्चा आश्चर्य में पड़ गया। उसने उनके पास जाकर पूछा—''बाबाजी! क्या आपको दर्द अधिक हो रहा है?'' साधु बोले—''बेटा! नही।''

बालक—''फिर आप रो क्यों रहे हैं? क्या पत्थर मारा इसलिए?''

साधु—''नहीं, बेटा!''

बच्चा हठ करने लगा। ''बताओ, आपकी आँखों मे आँसू क्यो है? मेरी गलती क्षमा कर दो। मैं आगे कभी

ऐसा नहीं करूँगा।''

साधु—''बेटा। मेरी आँखों में आँसू आने का कारण दूसरा है।''

बालक—''क्या है?''

साधु—''बेटा! एक वृक्ष अबोध, एकेन्द्रिय है, उसको तुमने पत्थर मारा। उसने बदले में ठडी-ठडी छाया और मीठा-मीठा आम खाने को दिया। पर मै पञ्चेन्द्रिय मानव, मुझे भी तुमने पत्थर मारा पर मै तुमको कुछ नहीं दे सका। यही मुझे दु ख है। इसी कारण मेरी ऑखो मे अश्रुधारा है।''

शरारती बालक को पश्चाताप हुआ। साधु के चरणो मे नतमस्तक हो, आगे ऐसा नही करने की प्रतिज्ञा करने लगा। क्रोध आत्मा का विभाव परिणाम है, क्षमा स्वभाव है।

आचार्यों ने अनेक प्रकार की अग्नियाँ बतायी है— (१) क्रोधाग्नि, (२) कामाग्नि, (३) जठराग्नि और (४) दावाग्नि।

सब अग्नियो के प्रशमन के लिए भिन्न-भिन्न जलो से सिचन आवश्यक है-क्रोधाग्नि के लिए क्षमाजल, कामाग्नि के लिए ब्रह्मचर्य जल, उदराग्नि के लिए भोजन जल तथा दावाग्नि के लिए शीतल जल आवश्यक है। जैसे अग्नि पकाती है, पचाती है व जलाती है, उसी प्रकार क्रोधाग्नि ससार के दु ख को पकाती है, पाप को पचाती है तथा विभाव रूप भयकर चाण्डाल रूप धधकती ज्वाला के समान उत्तेजित हो स्व-पर दोनो का नाश कर देती है।

आचार्यो ने बन्ध तत्त्व का वर्णन करते हुए लिखा है—''ठिदि अणुभाग कसायदो होति''।

पूर्वकृत कर्मो का शुभाशुभ फल इस जीव को भोगना ही पडता है। चाहे हँसकर भोगो या रोकर भोगो। इष्ट वस्तु का वियोग या अनिष्ट का सयोग, पीडा की तीव्र वेदना आदि दु ख पूर्वकत कर्मो का फल है। कर्मों का स्वभाव जैसा है वैसा है। वह इतना तीव्र नही होता है किन्तु उसे कषाय परिणामो से तीव्र बना लिया जाता है। दु ख के आने पर जीव नानाविध-रोना, चिल्लाना, शोक, चिन्ता आदि खोटे परिणामो से आये कर्म को देखकर हाहाकार करता है। फलत वर्तमान दु ख तो असह्य है ही, आगे के लिए तीव्र कषाय के वशीभूत हो उत्कृष्ट स्थिति-अनुभाग बंध करता है। कर्मों मे स्थिति-अनुभाग की विशेषता कषाय की हीनाधिकता से होती है।

जहाँ ज्ञानी कर्मों के तीव्र उदय को भी कषाय की मन्दता या तत्त्वचिन्तन से हल्का कर लेता है, वहीं अज्ञानी कर्म के मन्द उदय को भी क्रोधादि कषाय के वशीभूत हो तीव्र कर लेता है।

कौरव और पाण्डवो की कथाएँ जगत्प्रसिद्ध है। पाडव अपने विशाल महल मे रहते थे। महल की रचना विशेष प्रकार की थी। कही फर्श था कही पानी। फर्श का रग पानी जैसा ही था। अन्तर विदित नही हो पाता था। एक दिन कौरव अपने चाचा के घर पहुँचे। धीरे-धीरे पैर आगे बढ़ाये। पर पानी को फर्श समझ अचानक पानी मे तेजी से पॉव रख दिया, गिरने की नौबत हो गयी। महल मे बैठी द्रौपदी सारा दृश्य दर्पण में देख रही थी। उसे हँसी आयी। मुख से निकल गया—''अरे। अधो के अन्धे ही होते है।'' बस, शब्द सुनते कौरवों मे क्रोध का तूफान भड़क उठा। महाभारत की तैयारी हुई। युद्ध मे अठारह हजार अक्षौहिणी सेना मारी गयी।

जड़ शब्द को जीव अपना स्वभाव समझ बैठा है। घर-घर में महाभारत चालू है। आश्चर्य कहते है-आश्चर्य है, शब्द वर्गणाएँ पुद्गल है, मिट्टी मिट्टी में मिल गयी। पर जीव उसे अपना मान-मानकर स्वभाव को खो बैठा है। शब्द पर है, जीव स्व है। शब्द जीव का कुछ बिगाड़-सुधार नही करता है पर शब्द के साथ अपनत्व आते ही, कषाय अग्नि भभकती और जीव को बेहाल कर देती है। विभाव को निकालो, तत्त्व को परखो।

पूज्यपाद स्वामी समाधिशतक ग्रन्थ मे लिखते है—

> जानन्नप्यात्मनस्तत्त्व विविक्तभावयन्नपि।
> पूर्वविभ्रमसस्काराद्भ्रान्ति भूयोऽपि गच्छति॥४५॥

यह जीव आत्म-तत्त्व को जानता है, क्रोध आदि नही करना चाहिए, ऐसा भी जानता है फिर अनादिकालीन खोटे सस्कारों के कारण बुद्धि विपरीत हो जाती है, स्व को भूल जाता है। बन्धुओं! इस जीव ने आज तक संसार के बढाने वाले अशुभ भावो को बार-बार करके अपने सस्कार को दूषित किया। क्षमादि रूप भाव के सस्कार से आज तक आत्मा को सजाने का प्रयत्न ही नही किया। उसी का परिणाम है कि आज व्यक्ति चाहता हुआ भी क्रोधादि कषाय से नहीं बच पाता है।

एक बार एक योगीराज के पास एक महिला पहुँची, कहने लगी—''गुरुजी, मेरे कारण सारे घर में बहुत अशाति है। मुझे क्रोध बहुत आता है। उपाय बताइए जिससे शान्ति का वातावरण बने।'' योगीराज ने कहा—''देखो, चन्द्रमा शीतलता का प्रतीक है, क्रोध एक अग्नि है। उस अग्नि को शान्त करने के लिए प्रतिदिन अपनी दोनो भौहो के बीच चन्द्रमा का ध्यान करो। तीन माह तक ऐसा करो, तुम्हारा क्रोध शान्त हो जायेगा। घर मे भी शान्ति हो जायेगी।''

उस महिला ने तीन माह तक वैसा ही किया। पुन आनन्दित हो योगीराज के पास आयी। वह कहने लगी—''मुझे अब बहुत शान्ति है। मेरा क्रोध बहुत कम हो गया। घर मे भी सब लोग मुझसे प्रसन्न रहते है। मेरे पति भी अब मुझे चाहते है।''

योगीराज ने कहा—''बहिन। जिस समय तुम क्रोध करती थी तब क्रोध की सारी वर्गणाएँ पाकर भोजन दूषित हो जाता था। तुम भोजन के साथ क्रोध को भी परोसती थी जिससे खाने वाले के परिणाम भी तुम्हारे प्रति बुरे रहते थे। एक क्रोध सबको शत्रु बना देता है, वही एक क्षमा शत्रु को भी मित्र बना देती है।''

क्रोध को जीतने के अनेक उपाय है—(१) सर्वप्रथम तो यह निश्चित है कि क्रोध में व्यक्ति होश-हवाश को भी खो बैठता है। क्रोध मे आकर झूठ बोलता है, हिंसा करता है, अनेक प्रकार के कटु वचनो का प्रयोगादि करता है अत सैकड़ो पापों की नाशक उत्तम दवा पीने के लिए क्रोध को उगलो नही, पी जाओ। क्रोध के समय मौन रहना चाहिए। बोलोगे तो आपत्ति सामने आती है। मौन रहने से क्रोध धीरे-धीरे अपने आप शान्त हो जायेगा।

(२) क्रोध को शान्त करने के लिए तुरन्त ही पानी के पास जाओ। एक ग्लास पानी लेकर 'णमोअरहताण' बोलो, एक घूँट उतारो फिर सिद्धाण पढो, एक घूँट उतारो। शीतल जल मत्रित हुआ पीना चाहिए, एकदम शान्ति मिलेगी क्रोध भी ठंडा हो जायेगा।

(३) क्रोध आने पर चेहरा बदल जाता है, कुरूप हो जाता है, देखते ही भय लगता है। विश्वास नही हो तो एक बार क्रोधी को दर्पण में झाँककर देख लेना चाहिए। दर्पण मे देखने पर अपना चेहरा प्रिय लगे तो खूब क्रोध करना यदि स्वय को ही अच्छा नही लगे तो आगे कभी मत करना।

(४) क्रोध आने पर तत्त्वचिन्तन कीजिए-क्रोध स्वभाव है या विभाव है। क्रोध अच्छा है या बुरा? क्रोध हेय है या उपादेय है? तत्त्वज्ञानी क्रोध को तत्त्वज्ञान के बल से जीत लेता है जबकि अज्ञानी उसमें रच-पच जाता है।

एक परिवार था। बेटा और पिता दोनो घर के बाहर दुकान मे बैठे थे। अचानक घर से ग्लास के फूटने की आवाज आयी। सास-बहू सभी शान्त। सन्नाटा रहा। पिता ने कहा—"बेटा! क्या फूट गया है?" बेटा ने कहा—" लगता है माँ के हाथ से काँच का ग्लास फूट गया है।" पिता ने कहा—"बेटा! ग्लास अन्दर फूटा है, तुम यहाँ बैठे, माँ के हाथ से फूट गया, यह कैसे जान गये?"

बेटा बोला—"पिताजी, मै सत्य कह रहा हूँ। यदि बहू से ग्लास फूटता तो सास क्रोध अग्नि से बरस पड़ती, घटों चिनगारियाँ धधकती रहती किन्तु स्वय से गिरा, उसे कौन कहे।" पिता अन्दर पहुँचा, बात सत्य निकली।

तात्पर्य यह है कि घर मे, ऑफिस मे, फैक्ट्री आदि मे दूसरो से जरा भी नुकसान हो जाये तो क्रोधाग्नि धधक उठती है पर स्वय से लाखो का नुकसान हो जाये तो चिन्ता नही। यही पक्षपात दु:ख का कारण बन जाता है। आचार्य कहते है तत्त्वज्ञानी एक क्षण के लिए चिन्तन करता है-यदि यह नुकसान मुझसे हो जाता तो क्या होता अत पर मे क्रोध करना व्यर्थ है।

चिन्तन कीजिए-गयी वस्तु कभी आने वाली नही है। फिर कषाय करने से क्या प्रयोजन?

दूसरी बात विचार कीजिए-जड़ के नुकसान होने पर क्रोधादि करने से आपका लाभ है या हानि? जड़ की भी काललब्धि इतनी ही थी, ऐसा सोचकर धैर्य धारण करे। पर तो निमित्त मात्र है।

आज हम लोगो को जड़ की चिन्ता है, आत्मा की चिन्ता ही नही है। जड के नाश पर रोते है, चिल्लाते है पर बेचारी आत्मा का विभाव परिणामो से निरन्तर घात हो रहा है, उसकी जरा भी चिन्ता हमने नही की।

क्रोध आत्मा की विभाव परिणति है। क्रोध मे व्यक्ति अधिक से अधिक अन्तर्मुहूर्त तक रह सकता है जबकि क्षमा मे अनन्तकाल तक रहता है अत चेतन आत्मा के स्वभाव को समझकर ज्ञानी अपने अन्दर मे विभाव से बचने का प्रयत्न करता है।

क्रोध से आत्मा भी दु:खी और शरीर भी दु:खी होता है। शरीर काला पड़ जाता है, धीरे-धीरे जल जाता है।

क्रोध करना यदि हितकर है तो खूब करो और अहितकर है तो छोड दो, स्वय निर्णय कीजिए, जैसा आपको उचित लगे, कीजिए, स्वय निर्णायक बनिए।

कोई कहे पञ्चमकाल है, क्या करे? निमित्त मिलते ही क्रोध बढ़ जाता है। आचार्य कहते है-पञ्चमकाल में हीनसहनन है अत अपने परिणामो को सम्हालने के लिए निमित्तो से बचिए।

क्रोधी जीव को प्रकृति भी वैसी ही दिखती है। क्षमावान् को सर्वजगत् क्षमारूप दिखता है। क्रोध मे आँखे लाल हो जाती हैं, शरीर से मानो अग्नि ही टपकती है।

एक समय की चर्चा है-हनुमान सीताजी का पता लगाते हुए लका पहुँचे। वहाँ सुन्दर अशोक वाटिका में प्रशान्त मूर्ति सीता प्रभु-चिन्तन में मग्न थी। वृक्षों पर सुन्दर-सुन्दर श्वेत पुष्प खिल रहे थे। पश्चात् एक समय राम, सीता और हनुमान आपस मे चर्चा कर रहे थे। चर्चा के दौरान राम ने हनुमान से पूछा—"सीता लंका मे जिस वाटिका मे थी उसके फूलों का रग कैसा था?"

हनुमान ने तड़ककर उत्तर दिया—"प्रभो! सच कहता हूँ। लाल-लाल फूल थे, मानो अंगारे ही बरस रहे हों।"

सीता ने कहा—"सच कहती हूँ प्रभो! सफेद-सफेद सुन्दर फूल वाटिका मे खिल रहे थे।"

राम ने कहा—"एक कहता है सफेद, दूसरा कहता है लाल। आखिर सत्य क्या है? निर्णय कैसे हो?"

तत्त्वानुभवी राम ने कहा—"आप दोनो की बात सही है। देखिए, जिस समय हनुमान लका पहुँचे थे, उस समय इनके अग-अग मे क्रोध के अगारे फूट रहे थे। आँखो मे मानो खून ही बरस रहा था। इसी के कारण इनको सारे फूल भी अगारे की तरह लाल-लाल दिखते थे और सीता तत्त्वज्ञान मे मग्न हो प्रभु की भक्ति मे मग्न थी अत उन्हें सारा वातावरण शान्त दिखता था, सफेद-सफेद फूल दिखते थे।"

जैसी दृष्टि होती है वैसा ही दृश्य होता है। कषायी को सब कषायी ही दिखते है, क्षमाशील को सब क्षमावान् दिखते है। चोर को सब चोर नजर आते है। कोई-कोई कहता है-क्रोध तो मुनि व्रती भी करते है, हम भी करे तो क्या आश्चर्य? अथवा उनसे तो हम अच्छे?

याद रखिए, त्यागी व्रतियो से गृहस्थ या असयमी कभी भी उत्तम नही हो सकते। मुनियों के क्रोध मे व ससारी जीवो के क्रोध मे बहुत अन्तर है। संसारी मिथ्यादृष्टि जीवों का क्रोध अनन्त ससार का कारण है। आपस मे खटपट हो गयी तो बदला लेने की भावना बनी रहती हैं, वहाँ तक कि कहते है कि भव-भव मे बदला लिये बिना नही रहूँगा। पर मुनि, व्रती, त्यागी का क्रोध नियम से अधिक समय नही टिकता, समुद्र मे तूफान की तरह आता है और नष्ट हो जाता है। अनन्त ससार का कारण नही बनता है अत अपने आप को क्रोधादि कषायों से बचाने का प्रयत्न करे। स्व की रक्षा में ही लाभ है। पर की ओर एक अँगुली दिखाने पर तीन अँगुलियाँ तुम्हारी ओर इशारा करती है कि तुम तीन गुना गुनहगार हो।

अत. निरन्तर विभाव परिणति से हटकर स्वभाव का चिन्तन करे। क्रोध एक महाशत्रु है जो ध्यान रूपी उद्यान को उजाड़ कर जीवन रूपी वृक्ष को जड़-मूल से उखाड़ कर फेक देता है।

करुणा, वात्सल्य, मैत्री के अभाव में क्रूर क्रोध का जन्म होता है। अत मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ भावनाओं का चिन्तन करते हुए, विकारी भाव क्रोधादि कषायों को छोड़ने का निरन्तर प्रयत्न करना चाहिए। यही मानव-जीवन का सार है।

मान

एक परोपकाररत साधु दुखियो के दु:ख दूर करता हुआ, धर्मोपदेश देता हुआ पृथ्वी पर यथेच्छ विचरण किया करता था। एक स्थान पर उसने देखा, एक सिपाही घायल होकर मरणासन्न अवस्था मे जमीन पर पड़ा है। बाबाजी ने सोचा-मरणासन्न अवस्था मे धर्म का एक शब्द भी कान मे पहुँच जायेगा तो इसका जीवन सफल हो जायेगा। इसी विचार से महात्मा ने सिपाही से पूछा—''तुझे भगवान का नाम सुनाऊँ? कुछ धर्मचर्चा सुनोगे?''

सिपाही प्यास से तड़प रहा था। उसने सक्लेशित होकर कहा—''मुझे तुम्हारा भगवान नही चाहिए। मुझे अभी पानी चाहिए।''

महात्मा ने तुरन्त उसे पानी पिलाया। पानी पीने के बाद सिपाही ने कहा—''मेरे सिर को अब थोड़ा ऊँचा कर दो।'' महात्मा ने अपने शरीर से उत्तरीय वस्त्र निकाला और उसके सिरहाने रखा। सिपाही को ऐसा लगा मानो जाते हुए प्राण लौटकर आ गये है। उसने कहा—''अब मै कुछ स्वस्थ्य हूँ पर ठडी से मेरे हाथ-पैर अकड़ रहे है।'' महात्मा को जगल मे शीतनिवारणार्थ कोई साधन नजर नही आया तब उसने अपने शरीर की कफनी निकाल उसे ओढ़ा दी। उसी समय मरणोन्मुख सिपाही के नेत्रो मे ऑसुओ की बूँदे झलकने लगी। उसने गद्‌गद् स्वर मे साधु से कहा—''महात्मन्! मैने अभी तक धर्मग्रन्थ नही पढा है, परन्तु जिस तरह आज आप मेरे काम आये उसी प्रकार प्राणीमात्र की रक्षा व सेवार्थ बुद्धि जिस भगवान के स्मरण या धर्म ग्रन्थ के अध्ययन से मिलती है, उस भगवान का नाम बताइए या धर्मग्रन्थ सुनाइए।'' महात्मा ने वैसा ही किया। सिपाही अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

विणओ मोक्ख द्वारो— कहने का तात्पर्य यह है कि विनय ही मोक्ष का द्वार है। जीवन मे विनय, परोपकार, स्वार्थत्याग की भारी आवश्यकता है। सच्चा स्वाध्याय, सच्चा धर्म विनय को प्रादुर्भूत करता है।

ख्याति-पूजा-लाभ की भावना से कितनी ही देश, समाज की सेवा करो, तप करो, शरीर को सुखा दो किन्तु यदि विनय, शील, सदाचार, नम्रवृत्ति का जीवन मे प्रादुर्भाव नही हुआ तो आपकी क्रियाएँ ससार की वृद्धि की ही कारण है अत मान को छोड़कर स्वाभिमान के मार्ग पर चलना श्रेयस्कर है। आप जानते ही है, कषाय जीवन का महाशत्रु है। जीवो के जितना भी शुभाशुभ कर्मो का आस्रव होता है उसमे कषाय की मन्दता या तीव्रता ही मूल कारण है। कषाय की तीव्रता मे अशुभ कर्मो का तथा मन्दता मे शुभ कर्मो का आस्रव होता है। कर्मो के आस्रव व बन्ध मे कषायो का ही योगदान है।

यदि मॉ न हो तो सन्तान नही हो सकती, उसी प्रकार आस्रव और बन्ध की जननी कषाय है। यदि कषाय नही हो तो आस्रव नही, बन्ध नही, ससार का ही अभाव हो जाय। ससार वृक्ष की रक्षा सतति की अक्षुण्ण धारा जीवत रखने का मूल स्रोत कषाय है। कषाय के ही आस्रव बन्ध आदिपूत है। मोक्षवृक्ष का मूल कषायों से विरक्ति है। जैसे-जैसे कषायो का अभाव या मन्दता बढ़ती है, वैसे-वैसे सवर, निर्जरा, मोक्ष रूप सपूतो की उत्पत्ति होती है। आप जैसी सतति चलाना चाहे स्वतत्र हो। चलाये, आपका एकाधिकार है।

आपने कल सुना था, क्रोध मे शरीर गरम हो जाता है, ऑखे लाल-लाल हो जाती है, अब मान में क्या होता है, देखिए-मान कषाय के उदय मे शरीर अकड़ जाता है, छाती फूल जाती है और सिर ऊँचा करके चलता है। हित-अहित, हेय-उपादेय का भान नही रहता है। पर मानी का सिर नीचा, ऐसी कहावत प्रसिद्ध है। मर्यादा

पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी का नाम घर-घर मे लिया जाता है, क्यो? राम स्वाभिमानी थे, राम ने सीता जैसी नारी की अग्नि-परिक्षा स्वाभिमान, शील एव मर्यादा की रक्षा के लिए ली। राम ने रावण से युद्ध भी सस्कृति एव सभ्यता की रक्षा के लिए ही किया था। यदि राम रावण का विरोध नही करते तो स्त्रियो के शील की रक्षा कभी नही हो पाती, आगे यही मार्ग बन जाता। राम को तो अनेक सीताएँ मिल सकती थी, सीता चली भी गयी थी तो कोई बात नही थी पर राम दूरदर्शी थे। उन्होने स्वाभिमान की रक्षा के लिए युद्ध कर सीता को पाया। किन्तु रावण ने अन्त तक मान नही छोड़ा। प्राण निकल गये किन्तु कषाय नही छूटी आखिर नरक का पात्र बनना पड़ा। यद्यपि रावण जानता था जो कुछ मैंने किया है वह वीरो का काम नही है फिर भी यदि मै सीता को वैसे ही लौटा दूँगा तो लोग मुझे क्या कहेंगे? मेरा अपमान होगा बस, इसी मान कषाय ने उसे डुबो दिया।

जिस समय रावण का मृत शरीर जमीन पर पड़ा हुआ था, मन्दोदरी बिलख रही थी। राम कह रहे थे—रावण एक महान राजनीतिज्ञ कुशलवीर थे। हमारा उनसे कोई बैर नही था। उनके पापो से हमे घृणा थी। तभी मन्दोदरी भी राम के गुणो की प्रशसा करती हुई रावण के कुकृत्य की भर्त्सना कर रही थी-

> धन्या राम त्वया माता, धन्यो राम त्वया पिता।
> धन्यो राम त्वया वश-, परदारा न पश्यति॥

इसी प्रकार कौरव मानी थे, पाडव स्वाभिमानी थे। बालि स्वाभिमानी थे, रावण मानी था। रावण की मान कषाय के अनेक प्रसग प्रथमानुयोग मे पाये जाते है। रावण का असली नाम दशानन था।

एक समय रावण आकाशमार्ग से जा रहा था। चलते-चलते उसका विमान अचानक अटक गया। दशानन ने सोचा-यहाँ विमान रोकने वाला मेरा शत्रु कौन आया है? अभी उसे मजा चखाता हूँ। नीचे उतरा। बालि नामक एक मुनिराज ध्यानस्थ थे। तद्भवमोक्षगामी के ऊपर से कभी विमान नही जा सकता है, यह आगम का नियम है।

बालि मुनि को देखते ही रावण की क्रोध और मान दोनो कषाएँ एकदम उबाल पर आ पहुँची। बालि ने रावण की दुष्टता से परेशान हो दीक्षा ली थी। पूर्व भाव जागृत हो गया। अरे! यह वही दुष्ट है जिसने गृहस्थावस्था मे भी मुझे कभी सिर नही झुकाया और अभी फिर विमान रोक लिया। अभी इसे जान से मार डालूँगा। ऐसी तीव्र कषाय की वेदना से युक्त दशानन ने तुरन्त पहाड़ उठाया और मारने को तैयार हुआ। उसी समय बालि मुनि, जो करुणा के सागर थे, ने सोचा-मुझे अपनी कोई चिन्ता नही है पर बेगुनाह करोड़ो, पशु-पक्षियो की अभी हिसा हो जायेगी। उन्हें तप के प्रभाव से ऋद्धि प्राप्त थी। उन्होंने पैर का अँगूठा दबाया जिससे रावण पहाड़ के नीचे दब गया और 'बचाओ-बचाओ' करके रोने-चिल्लाने लगा। रावण के रोने की आवाज सुनकर मन्दोदरी विमान से उतरकर नीचे आयी। मुनिराज से दया की भीख माँगी। मुनिराज ने अपना अँगूठा ढीला किया, करोड़ो जीवो की रक्षा की। तभी मानी दशानन का नाम 'रावण' पड़ गया।

> लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर।
> जो प्रभु होना चाहते, लघुता धार जरूर॥

बाप बनकर कोई माल नहीं खा सकता। आज तक सबने बेटा बनकर ही धन खाया है। विनम्रता, सज्जनता

से ही प्रभुता मिलती है। जो जितना लघु रहेगा वह आगे उतना ही पूज्य बनेगा। पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती १०८ आ. श्री शान्तिसागरजी महाराज से किसी ने पूछा—"महाराज जी, आपका परिचय क्या है?"

यद्यपि आचार्यश्री इस युग के मुनिधर्म के सबसे बड़े साधु थे फिर भी उन्होंने अपना परिचय दिया—"भैया! ढाई द्वीप के तीन कम नौ करोड़ मुनियों मे मेरा नम्बर अन्तिम है, मै सबसे छोटा साधु हूँ। यही मेरा असली परिचय है।"

आज सब पदो के लिए लड़ते है। कुर्सी के लिए झगड़ते है। अरे! क्षणभगुर ससार मे शरीर भी नहीं रहेगा तो पदो से क्या प्रयोजन? विचार कीजिए आचार्य ठोक बजाकर कहते है—'हे मुने! ये आचार्य, उपाध्याय पद भी उपाधियाँ है, मान कषाय को पुष्ट नही करना, कर्त्तव्य समझकर इनसे भी अपने को भिन्न समझना। समाधि के समय इनको भी छोड़ना ही पड़ेगा। पदो मे कभी समाधि नही, बिना सम्यक् समाधि के मुक्ति का मार्ग नही।'

आप जानते है, बडे-बडे वृक्षो पर समय आने पर खट्टे-मीठे फल लगते है। फल लगते ही वे झुक जाते है, नम्र बन जाते है। वे प्राणी मात्र को शिक्षा देते है—महानुभाव! दर्शन, ज्ञान, चारित्र रूप उत्तम फलो को पाकर झुकने की कला सीखो। जो जितना दर्शन-ज्ञान-चारित्रवान होगा, वह उतना ही विनम्र और सुशील बनेगा। सच्चा रत्नत्रय मार्दव धर्म का विकास करता है और मिथ्या त्रय मान कषाय को पुष्ट करते हैं।

अर्हन्त भगवान कैवल्य की प्राप्ति होते ही आठ प्रतिहार्य (मन को हरण करने वाले) से सुशोभित होते है, उनमे एक चँवर प्रतिहार्य है, वह हमे क्या शिक्षा देता है—कुमुदचन्द्राचार्य कल्याणमन्दिर स्तोत्र मे सुन्दर चित्रण करते हैं—

> स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचय सुर-चामरौघा ॥
> यस्मै नति विदधते मुनि-पुगवाय ते नूनमूर्ध्वगतय' खलु शुद्ध-भावा ॥

हे प्रभो! ये सुन्दर चँवर जितने अधिक नीचे जाते है, उतने ही ऊपर जाते है। ये भव्यजीवों को शिक्षा देते है कि जो देव-शास्त्र-गुरु पूज्य पुरुषो में जितना झुकेगा, विनम्र रहेगा, वह उतना ही ऊँचा जायेगा अर्थात् उसके परिणाम भी उतने ही शुद्ध-निर्मल बनेंगे। पर आज की स्थिति में हम मदिर जायेंगे तो भगवान को मानो सेल्यूट मारने जाते है। मस्तक भी नही झुकता। प्रथम तो पहनावा ही संस्कृति के विरुद्ध है, दूसरी बात झुकने मे शरीर को पीड़ा होती है। देव-शास्त्र-गुरु के सामने, माता-पिता के सामने झुकने से अपनी मान-हानि समझते हैं। छोटेपन का अनुभव करना पड़ता है। शर्म लगती है।

आचार्यों ने कहा—"सबसे पहले उठकर भगवान का नाम लो। नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ो। चौबीस भगवान का स्मरण करो। स्नान आदि करके सबसे पहले मदिरजी मे जाकर जिनदेव को नमस्कार करो।" पर यह तो आजकल मुश्किल हो गया। देव-शास्त्र-गुरु बदल गये है। सबसे बडा देव है चाय। बिस्तर मे बैठे 'बेड टी' चाहिए। स्नानादि कुछ नही, मुख-शुद्धि भी नही करेगे। सबसे पहले चाय देवता के दर्शन कर उसको सिर झुकायेंगे और गटागट उतार जायेंगे। बताइए, बिना सिर झुकाये कोई चाय पीता है। शास्त्र हमारे अखबार हो गये। बिना देखे चाय का घूँट भी नही उतरता परन्तु पढ़ते ही शान्ति नहीं अशान्ति का साम्राज्य छा जाता है। कितने मरे, कितने घायल, देश की स्थिति क्या है? आदि-आदि समाचारों से मन विकृत हो जाता है। गुरु हमारे आज डॉक्टर बन गये।

गुरु कितना भी कहें—शुद्ध खानपान करो, सयम से रहो, बुरा लगता है पर डॉक्टर कह दे—मूँग की दाल का पानी, उबला हुआ पानी, बस इससे अधिक नही। गुरु की मान सकते नहीं पर डॉक्टर की बात टाल सकते नहीं। कवि कहते है-

बड़ा बड़ाई ना करे बड़ा न बोले बोल।
हीरा मुख से ना कहे लाख हमारे मोल॥

अपनी प्रशंसा और पर की निन्दा गोत्र कर्म के आस्रव कहे गये है—"परात्मनिन्दाप्रशंसा सदसद् गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य"। सज्जन पुरुष हमेशा पर के गुणो का पारखी होकर अपने आपको बहुत छोटा, तुच्छ समझता है। ज्ञान का विकास कब तक होता है? जब तक व्यक्ति यह सोचता है कि मुझे कुछ नही आता है, मैं अल्पज्ञ हूँ समझ लीजिए उसकी उन्नति के क्षण अभी मौजूद है परन्तु जिस समय मन मे यह भावना आ जाय कि मेरे ज्ञान के सामने सब तुच्छ है, वह दूसरा व्यक्ति क्या जानता है? मूर्ख है। ऐसी भावनाएँ आते ही समझ लीजिए, उसके विकास का द्वार बन्द हो चुका।

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पथी को छाया नही, फल लागे अति दूर॥

चक्रवर्ती भरतजी जिस समय छ खड को जीतकर आ गये तभी वृषभाचल पर्वत पर अपना नाम लिखने गये। उनके अन्दर चक्रवर्ती पद का अह था। पर वहाँ जाकर देखा, उनके नाम लिखने की भी वहाँ जगह नही। अरे! चक्रवर्ती किस राज्य का अह करते हो। तुम्हारे जैसे अनेक चक्रवर्ती यहाँ हो चुके। चक्रवर्ती का मद गल जाता है। तभी किसी दूसरे का नाम मिटाकर अपना लिखकर चले आते है।

कुन्दकुन्द, अमृतचन्द्र, उमास्वामी, विद्यानदी जैसे महाचार्यों ने बड़-बड़े ग्रन्थो की रचना की। पर कितना लाघव है उनकी वाणी मे। जिनेन्द्रदेव ने कहा है—मेरा अपना कुछ नही है। एक शब्द भी आगम विरुद्ध लिखने पर मार्ग के लोप का उन्हे भय था, वे सदा आगम परम्परा का ध्यान रखते गये। कुन्दकुन्द स्वामी ने तो यहाँ तक कह दिया—छद्मस्थ होने के नाते "चुक्केज्ज छल न घेतव्व" कही चूक हो जाय तो छल ग्रहण नही करना।

पर खेद है आज ख्यातिलभ्य पूजा के लोभी आगम को अपने अनुसार मोड़ते हुए लज्जित नही होते। आगम वाणी का मनमाना अर्थ लगाते हैं। आचार्यो की वाणी को असत्य कहते है। 'मै ऐसा मानता हूँ, मै ऐसा कहता हूँ' शब्द ही मान कषाय के पोषक है। मार्दव गुणधारी आचार्य सदैव यही कहते रहे "जिणेहिं णिद्दिट्ठ" जिनेन्द्रदेव ने ऐसा कहा है। कहने का मूल यही है कि अपनी कषाय की पुष्टि के लिए आगम को कभी मत मोड़ो। श्रद्धा मात्र करो, उसे असत्य कहकर मनमाने रूप से बदलने की चेष्टा मत करो। जिनागम के एक शब्द का भी उलट फेर करने पर ७० कोड़ाकोड़ी सागर की दर्शन मोहनीय की स्थिति से कोई भी नही बचा पायेगा।

अन्त में यही कहना है महानुभावो। जीवन मे जितने अनर्थ होते है, उनके पीछे मान कषाय की बलिहारी है। मानव पर्याय मे इसी की तीव्रता है। इसकी तीव्रता का फल नरक तिर्यञ्च आयु है अत. जीवन मे झुकना सीखो। एक कविता पढ़ी थी-वृक्षों की डाली से सीखो झुकना और झुकाना।

जो अर्हन्त प्रभु का दास बनेगा वही स्वयं अर्हन्त बन सकेगा। पहले भक्त बनो, भगवान नहीं। बिना भक्त

बने भगवान नहीं बन सकोगे। मान से जितना बचोगे उतना आत्मा के निर्मल गुणो से ऊँचा उठोगे। "विद्या विनयेन् शोभते" ज्ञान, ध्यान, तप, त्याग की शोभा मार्दव गुण से ही है। बिना उस गुण के जीवन, बिना सुगन्ध के फूल की तरह व्यर्थ, अनुपयोगी है।

मटका कुएँ मे डालने पर थोडा औधा होने पर ही भरता है, सीधा कभी नहीं भरता। उसी प्रकार झुकने वाला ही गुणों से भर सकता है, अकड़ने वाला नही।

घड़े पर पानी भरने की कटोरी रहती है। आप जानते है, कटोरी सदैव भर-भर पानी दूसरो को पिलाती है पर आप सदैव खाली रहती है। एक बार घडे से पूछा, "भैया। कटोरी को क्यो नही भरते?" उत्तर मिला—"वह बड़ी घमडी है। मेरे सिर पर बैठती है।" अभिमानी व्यक्ति सिर पर नाचता है, विनम्र व्यक्ति चरणों मे बैठकर गुणों को भर लेता है। मान किसी का नही रहा—

"इक लख पूत, सवा लख नाती, ता रावण घर दिया न बाती"।

जिस रावण के घर एक लाख पुत्र, सवा लाख नाती थे वह लका भी जलकर खाक हो गयी।

पाप समय निर्बल बनो, धर्म समय बलवान।
वैभव समय विनम्र अति, दु ख मे धीर महान।।

आज दूसरी मान कषाय का प्रकरण है। कषाएँ दु ख देनेवाली है, आप सुन रहे है। परन्तु कषाय को पुष्ट करते जा रहे हैं। कषायो की पुष्टि मे धर्मस्थान का समय, प्रवचन का समय आदि शुभ क्रियाओ के समय को भी भूल जाते है। कषाय के पोषक सिनेमा हॉल मे समय पर पहुँचते है, टी वी का हर समय का कार्यक्रम समय पर जाकर देखते है, स्टेशन पर समय पर पहुँचेगे, स्कूल, कॉलेज, ऑफिस, दुकान प्रत्येक कार्य मे निश्चित समय पर पहुँचते है। उनके प्रति श्रद्धा है पर जिनसे आत्मा की पुष्टि होती है, स्थायी शान्ति एवं सुख मिलता है, ऐसे शुभकार्यों के लिए समय की कीमत ही नही है। उन कषाय पोषक स्थानो पर तो अहकार पूर्वक जायेगे और नाना प्रयत्नो से उसका आनन्द लेते है पर स्वाभिमान को बेच आयेगे। आचार्य कहते है—मान कभी करना नही, स्वाभिमान कभी छोड़ना नही।

मान अहकार को कहते है। अहकार मद को कहते है।

मान एक ऐसा शत्रु है चाहे जान चली जाय पर झुकना मजूर नही है। मेरी नाक नीची नही होनी चाहिए, यह भावना मान कषाय की ही प्रतीक है। एक नगर मे दो सेठ रहते थे। बराबरी की होड़ उनमे चला करती थी। एक दिन बाजार मे सीजन की पहली ककडी, एक दुकान पर आयी। ककड़ियाँ पतली-पतली मीठी और सुन्दर थी। अचानक उस दुकान पर दोनो सेठ के मुनीम पहुँच गये। ककड़ी की कीमत पूछी गयी। दुकानदार ने कहा दो रुपये की एक है। एक मुनीम ने कहा—"हमको सारी लेनी है।" दुकानदार बोला—"पचास रुपये मे सब ले लीजिए।" दूसरे ने कहा १०० रु मे मुझे दे दीजिए। दोनो मे जिद्द शुरू हुई। दुकानदार ने कहा आधी-आधी दोनो ले जाइए। पर मान कषाय की तीव्रता, नयी चीज सेठ के अलावा कहीं नही जाने देगे। एक ने सौ रुपये मे सारी ककड़ी माँगी। दूसरे ने दो सौ कहे। होडाहोड़ लग गयी। पचास रुपये की ककड़ी के पाँच हजार रुपये लग गये। दोनो को सेठजी की मान-मर्यादा की रक्षा का खयाल था। कितनी भी लगे पर सेठ जी का अपमान

नहीं होगा। आखिर एक को तो झुकना ही पड़ा। दस हजार रुपये मे ककड़ी की कीमत पूरी करके मदमाते हाथी की तरह मुनीम सेठजी के पास घर पहुँचा। दूसरा बेचारा अपने सेठ का अपमान समझ कछुए की तरह घर की ओर आ रहा था। सोच रहा था—सेठजी मुझे क्या कहेगे। पर आखिर मे करता भी क्या? वह तो इतना उद्दण्ड निकला कि जरा भी मानने को तैयार नही। सोचते-सोचते आखिर घर पहुँचा।

सेठजी ने पूछा—"मुनीमजी! आज इतने उदासीन क्यो हो। क्या हुआ?" सेठजी को सारी आपबीती कथा मुनीम ने बताई। सेठजी मान मे मदमाते मुनीम को गालियाँ देने लगे—"तू बेअकल! मेरी सारी इज्जत पर पानी फेर कर आ गया। मैं बाजार मे अपना मुँह कैसे दिखाऊँगा। अरे! सारा धन लुट जाता तुझे क्या परवाह थी। कमानेवाला तो मै था, तुझे स्वामी की इज्जत लुटाने बाजार मे थोड़ी भेजा था। दुष्ट कही का, अभी निकल जा इस घर से।" इस प्रकार अपमान की असह्य वेदना से पीड़ित सेठजी अपने घर मे छोटा-सा मुँह बनाये, नीची गर्दन कर ऐसे बैठे थे मानो घर मे कोई मर गया हो।

उधर जहाँ ककड़ी पहुँच गयी थी, सेठजी ने मद मे फूले-फूले मुनीमजी को अपने गले का हार इनाम मे देकर उसका सन्मान किया। "शाबाश! नौकर हो तो ऐसा, जो सेठ की इज्जत बचाये।" मान मे फूले सेठजी ने दूसरे की इज्जत गिरायी, यह सोचकर आनन्द में फूल रहे थे। पर अभी भी उन्हे चैन नही था। उस दूसरे सेठ को मालूम तो हो कि बाजार मे तुम्हारी क्या इज्जत रही है? ऐसा विचार कर एक चाँदी की तश्तरी ली और उसमे कुछ ककड़ियाँ रख उसपर चाँदी का वर्क लगाकर सजा दिया तथा उसी मुनीम से कहा—"जाओ सेठजी को कहना कि हमारे सेठजी ने आज आपके लिए यह भेट भेजी है। आप इसे खाइए। किसी प्रकार का सोच-विचार मत कीजिए।"

स्वामी की आज्ञा से मुनीम दूसरे सेठजी के घर पहुँचा। सेठजी अपमान से जल चुके थे। सामने उस मुनीम को आता देख अधिक शोकाकुल हो गये। मुनीम के हाथ की अँगुलियाँ काँप रही थी। सेठजी चिन्तित थे, देखे यह क्या जले पर नमक बुरकने आ गया है। दुष्ट को अभी भी चैन नही है। जिन्दगी की सारी इज्जत पानी मे मिल गयी, मै किसी को अब अपना मुँह कैसे दिखाऊँगा? मानहानि का भूत ऐसा सवार हुआ कि भेट लेने भी नही पाये और उसी समय, सेठजी के प्राण-पखेरू उड़ गये।

सोनागिरजी सिद्धक्षेत्र पर आप लोग देखेगे—पहाड़ पर चढ़ते हुए, परिक्रमा को जाते हुए, दातारो की पाटियाँ लिखी हुई है। एक बार वहाँ के एक सज्जन से पूछा गया—"भाई! पैरो में ये नाम क्यो लिखते हो?" उत्तर मिला—"क्या करे यदि नाम नही दे तो कोई तीर्थों की रक्षार्थ पैसा नही देता। यहाँ तक स्थिति है कि दातारों से कहो कि एक लाख रुपया दे दीजिए, आपके नाम का पटिया लगायेगे, तुरन्त स्वाकार करेगे। यदि ऐसा नही है तो सौ रुपये भी जेब से नही दे सकते।"

कितनी मान कषाय छिपी है इसमे! जो भी आयेगा, हमारा नाम देखेगा, हमे सन्मान मिलेगा। पर आचार्य कहते हैं, ऐसे लोग पैरों तले रौंदे जा सकते हैं। जो जितना चाहता है कि मेरा नाम हो, मेरी नाक नीची न हो, उसका निश्चित ही पतन होता है। थोड़ा दान देकर, फल की इच्छा करना दान के फल को निष्फल कर देता है। जिस दान के फल से स्वर्ग और मुक्ति मिलती है, उसको पटिये पर नाम लिखाकर निष्फल कर दिया।

कैसा आश्चर्य है।

प्राचीन काल में व्यक्ति.काम चाहता था, नाम नही। पर आज हर व्यक्ति नाम तो चाहता है, बड़े-बड़े पदों पर आसीन हो जाता है पर काम कुछ करना नही चाहता। जयपुर मे सेठजी ने एक विशाल जिनमन्दिर बनवाया। सारा मन्दिर स्वय के पैसे से बनवाया। सीढ़ियाँ लगाने के समय सेठजी ने घर-घर जाकर झोली फैला दी—"सारा मन्दिर बन गया है, अब पैसों का मेरे पास अभाव है। आप सब मिलकर, सहायता कीजिए।" सबने अपनी शक्ति अनुसार अनुदान दिया। सीढ़ियाँ बनकर तैयार हो गयी थी। विचारणीय है, जिस समय मन्दिर पर नाम लिखने का अवसर आया मन्दिर किसने बनाया? सेठजी ने कहा—'मन्दिर समाज ने बनाया है अत पचायती है।"

सेठजी ने पूरा मन्दिर बनवा दिया, क्या सीढी के लिए पैसा नही था। किसी ने कहा—"सेठजी! आपके पास इतना पैसा है फिर झोली क्यो फैलाते हो?" सेठजी ने कहा—"भैया! मै और मेरी आने वाली पीढ़ी नाम को देखकर मान मे नही फूल जाये इसलिए अपनी रक्षार्थ मैने ऐसा किया है।"

कषाय के चार भेद गोम्मटसार ग्रन्थ मे बताये गये है-अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और सज्वलन।

(१) अनन्तानुबन्धी— अनन्तानुबन्धी मान पत्थर के समान होता है, मर सकते है पर झुक नही सकते। अनन्तानुबन्धी मान नरकायु मे ले जाने का कारण बनता है। यह सम्यक्दर्शन का घात करता है, सच्ची श्रद्धा को नही होने देता। जैसे पत्थर जरा भी नही नमता, वैसे ही इस कषाय वाले जीव की स्थिति है। यह अनन्त ससार का कारण है।

(२) अप्रत्याख्यान— यह मान हड्डी के समान कहा है, हड्डी कुछ नमती है, यह अधिक से अधिक छह माह तक रहता है तथा श्रावक को देशचारित्र व्रत नही लेने देता है।

(३) प्रत्याख्यान— यह मान काष्ठ के समान होता है। काष्ठ कुछ अधिक नमता है। यह सकल चारित्र को नही होने देता है। मुनिपद का घातक है।

(४) सज्वलन— यह बेत के समान होता है। जैसे बेत को जैसा चाहे नमाया जा सकता है, उसी प्रकार इस अवस्था मे मान कषाय अतिशिथिल हो जाती है। यह जीव के यथाख्यात चारित्र का घात करता है।

कषाय चाहे मन्द हो या तीव्र, जीवन मे चारित्र की घातक ही होती है, अत कषायो को निरन्तर मन्द करने का अभ्यास करना चाहिए। ये कषाये मुख्यतया क्रम से नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य एव देवायु की कारण है। कषाय रहित अवस्था मे ही मुक्ति होती है।

आचार्यश्री समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्डश्रावकाचार मे मान के भेद बताये है—

> ज्ञान पूजा कुल जातिं, बलमृद्धिं तपो वपु ।
> अष्टावाश्रित्य मानित्व, समयमाहुर्गतस्मया ॥

ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और शरीर का मान इस प्रकार आठ भेद बताये है।

कवि भर्तृहरि ने लिखा है—"जब मुझे थोड़ा ज्ञान था, तब मै हाथी की तरह झूम-झूमकर चलता था। मै अपने आप को महाज्ञानी समझता था पर आज मुझे ज्ञान हुआ है, अब मै पग-पग पर फूँक-फूँक कर, सोच-

विचार कर चलता हूँ। कारण, अब मुझे अथाह ज्ञान की सीमा का ज्ञान हो गया है। कहाँ केवली भगवान का क्षायिक प्रत्यक्ष ज्ञान और कहाँ हमारा इन्द्रियजन्य ज्ञान। ज्ञानी होकर अहंकार नही करना ही मानवता है।

मात्र ज्ञान से कभी मुक्ति नही होती। आज ज्ञान के नाम पर बड़ी-बड़ी संस्थाएँ स्थापित की जा रही हैं किन्तु जो ज्ञान स्व-पर-उपकारी होता है वही आज स्व-पर का घातक बन चुका है। आचार्यश्री कहते हैं—''ज्ञानस्तोकाच्च मोक्ष स्यात्''—रागरहित, मदरहित ज्ञान ही मुक्ति का कारण है।

माया

एक समय एक ठग व्यक्ति महानगर की सुप्रसिद्ध होटल मे पहुँचा। शायद दो-चार दिन का भूखा था। खाने का ठिकाना नही, पर बाबूजी बन-ठन कर आये हुए थे। ऐसा लगता था मानो कोई करोड़पति का बेटा हो।

नौकर—''बाबूजी! क्या चाहिए?''

बाबूजी—''जोर से भूख लग रही है। जो भी बना है, अच्छे से अच्छा माल ले आओ पैसे की ।''

नौकर—''अरे। बाबूजी पैसे की क्या बात है। मै अभी लाकर देता हूँ।''

अच्छी-अच्छी माल-मिठाइयाँ, दाल-बाटी-चूरमा सभी बढ़िया से बढिया माल खाकर बाबूजी मस्त हो गये। नौकर ने १०० रुपये का बिल सामने रखा। बिल देखकर बाबूजी बोले—''बस, इतना रुपया। अभी देता हूँ।''

मायाचारी ठग अपनी कला मे पहले ही तैयार रहते है। मन मे कुछ, वचन से कुछ और करे कुछ और।

''अरे नौकर। दूध है या नही?''

''बाबूजी। दूध की क्या कमी है। जितना कहो उतना लाऊँ।''

''बस, एक लीटर दूध शीघ्र ले आओ।'' नौकर दूध ले आया।

दूध देकर नौकर ने मुँह फेरा। बाबूजी ने चारो ओर दृष्टि फेरी, कोई नजर नही आया। मौका पाकर तुरन्त अपनी जेब टटौली और जेब मे से एक मरा हुआ चूहा निकालकर दूध मे डाल दिया।

बाबूजी की मायाचारी चालू हुई। जोरो से चिल्लाने लगे—''अबे, ओ नौकर। क्या बदमाशी लगा रखी है, देख जरा, इस दूध मे मरा हुआ चूहा है। अभी मेरी जान चली जाती। आप लोगो ने समझ क्या रखा है। मै एक पैसा भी देने वाला नही हूँ। कहाँ है तेरा मालिक, बुला। मै अभी थाने मे रिपोर्ट करता हूँ।''

दुकान का मालिक आ गया। ''बाबू, माफ करो।''

''माफ-वाफ नही जानता, मै एक पैसा भी देने वाला नही हूँ और अभी रिपोर्ट करता हूँ।''

मालिक ने हाथ जोड़े, ''गलती हो गयी है। आप एक पैसा भी मत दीजिए, पर थाने में रिपोर्ट मत कराइए, मैं क्षमा माँगता हूँ।'' बाबूजी का सौदा पट गया। छककर खाया और ऐसा ठगा कि दुनिया क्या जाने।

बाबूजी की भेट अपने मित्र से हुई। 'मित्र, आज मैने होटलवाले को ऐसा उल्लू बनाया, कोई नही बना

पायेगा।'' सारी कथा सुना दी। अच्छी बात कोई नही सीखना चाहता, बुरी बात सीखने को हर व्यक्ति तैयार है।

दूसरा मित्र भी सारी तैयारी से होटल में पहुँचा। सारी हरकतें अपने मित्र की तरह की, अन्त में दूध माँगा। पर किस्मत की बात, होटल में दूध समाप्त हो गया था। जैसे ही नौकर ने कहा–''बाबूजी! आज तो दूध समाप्त हो गया है और कुछ कहो तो लाऊँ।'' बाबूजी बोले–''अरे मूर्ख! दूध के बिना मै ये मरा हुआ चूहा कहाँ डालूँ?'' चोरी पकड़ी गयी। फलत छ महीने तक जेल मे सजा पायी।

बन्धुओ! आज तीसरी माया कषाय का प्रकरण है। इसका एक उदाहरण आपने सुना।

आत्मा की कुटिलभाव रूप वैभाविक परिणति माया है। इसे निकृति या वचना भी कहते हैं। दूसरो को ठगने के लिए जो कुटिलता या छल किया जाता है, वह माया है। आचार्यों ने माया के पाँच प्रकार बताये है–(१) निकृति, (२) उपाधि, (३) सातिप्रयोग, (४) प्रणिधि और (५) प्रतिकुचन।

(१) निकृति माया– धन के विषय मे अथवा किसी अन्य कार्य के विषय मे जिसकी अभिलाषा उत्पन्न हुई, ऐसे मनुष्य का फँसाने या ठगने का चातुर्य 'निकृति' माया है। अधिक धन प्राप्ति के लिए–दूध मे पानी मिला देना, घी मे शकरकन्द मिला देना, असली वस्तु मे नकली मिला देना, नकली वस्तु को असली की कीमत मे बेचना, ये सब निकृति माया के प्रारूप है।

एक व्यक्ति को अच्छे सूट के लिए कपड़े की जरूरत थी। प्रसिद्ध दुकान पर पहुँच गया। अच्छा कपडा देखकर पसन्द कर लिया। उचित कीमत दे दी, पर दुकानदार के नौकर ने अन्दर जाकर कपड़ा बदल लिया, जो दिखाया वह कपड़ा अलग था, जो दिया, वह कपडा अलग। इस प्रकार भोली जनता को ठगना, ठगने की चतुरता मे जो व्यक्ति पारगत है अपने आपको धनी बनाकर आनद ले रहा है, यह सब निकृति माया है।

(२) उपाधि माया– अच्छे परिणामो को छिपाकर, धर्म के निमित्त से चोरी आदि दोषो मे प्रवृत्ति करना उपाधि माया है। जैसे–मदिर के चौधरी बनकर मदिर की सम्पत्ति हडप जाना। जो स्थान, मकान धर्म कार्य मे दान दिये उसके किराये से अपनी आजीविका चलाना। मदिर की सम्पत्ति का ब्याज चोरी सें स्वय ले लेना और हिसाब नही देना आदि सब धर्म के नाम पर की जाने वाली चोरी उपाधि माया है।

(३) सातिप्रयोग– धन के विषय मे असत्य बोलना, किसी की धरोहर का कुछ भाग हरण कर लेना, दूषण लगाना अथवा प्रशसा करना सातिप्रयोग माया है। जैसे-किसी से उधार लेकर इन्कार कर देना-मैंने लिया ही नही अथवा लाख रुपये लिये थे तो दस-बीस हजार लिये, ऐसा कहना। अथवा कभी एक पैसा नही लिया। मेरे घर मे क्या कमी थी, जो दूसरे से माँगता आदि दूषण लगाकर दूसरे का धन हजम कर लेना अथवा नाना प्रकार से प्रशासा करके उसे अपना बना लेना-ये सब सातिप्रयोग माया के लक्षण है।

(४) प्रणिधि माया– हीनाधिक मूल्य की सदृश्य वस्तुएँ आपस मे मिलाना, तोल-माप के सेर, पसेरी आदि बाँटो को अथवा माप-तौल के अन्य साधनो को कम-अधिक रखकर उनसे लेन-देन करना, असली-नकली पदार्थ परस्पर मे मिलाना-यह सब प्रणिधि माया है। यह मायाचार माँ-बेटी के सबध को भी तोड़ने से नहीं डरता। एक सत्य घटना है-एक लखपति परिवार की कन्या का विवाह धनाढ्य परिवार मे हुआ। भाग्यवश उस कन्या के घर वालो का दिवाला निकल गया। सारी वस्तुएँ बेची जा रही थी। लड़की ने सुरक्षार्थ अपने पिता के घर अपने असली

गहने सम्हालने को दे दिये। पिता के मन मे पाप आ गया। चार साल पश्चात् लड़की ने अपने पिता से गहने माँगे। पिता ने उसकी तोल के खोटे गहने वैसे ही बनवाकर दे दिये। कुछ दिन बीते, पैसे की जरूरत पड़ी। लड़की के पति गहने लेकर बेचने को गये। बाजार मे जौहरी ने कहा—"ये तो सब नकली है।" सुनते ही मानो सिर पर पहाड़ गिर पड़ा। लड़की बड़ी हैरान थी। पिता भी अपनी पुत्री से इस प्रकार की मायाचारी कर सकता है? लड़की की आँखें आँसू बहाकर रह गयी।

(५) प्रतिकुचन माया— आलोचना करते समय अपने दोषो को छिपाना प्रतिकुचन माया है। गुरु के सामने आलोचना करते समय जिन दोषो को गुरु ने या अन्य किसी ने देख लिया है—उन्हे तो कहना, दूसरे नही, अथवा बड़े-बड़े दोषो को कहना, छोटे दोष नही कहना, अथवा गुरु के द्वारा जिनसे बहुत बड़ा प्रायश्चित्त मिलेगा, उसे तो नही कहना, दूसरे दोष कह देना अथवा गुरु मुझे अधिक प्रायश्चित नही दे इसलिए उन्हे पहले मायाचारी से कुछ देकर या उनकी प्रशसा करके अपना बना लेना फिर आलोचना करना आदि सब प्रतिकुचन माया के प्रारूप है।

मायाचारी व्यक्ति अन्य पुरुषो की वञ्चना करके मन मे यह सोचता है कि मै कितना चतुर हूँ कि मैने अमुक व्यक्ति को ठग लिया है किन्तु ऐसा सोचने या करने वाला आत्मवञ्चना करता है—वह स्वय को ठगता है। मायाचारी के मन-वचन-काय ऋजु नही होते, वह मन से कुछ सोचता है, वचन से अन्य ही कहता है तथा काय से कुछ और ही चेष्टा करता है। यह इतनी टेढी व छिपी कषाय है कि अपना-अपना कहते हुए सर्प कब डस लेगा, पता नही। मायावी जीव मच्छर की तरह होता है—जैसे मच्छर आपके चारो ओर आनद से घूमता है, पैरो को चूमता है, कानो मे गीत गुनगुनाता है और मौका पाते ही काट लेता है—ठीक वैसे ही मन-वचन-काय से कुटिल है आत्मा के परिणाम जिसके ऐसे पुरुष आपके चारो ओर घूमेगे, आपकी बहुत प्रशसा करेगे, आप के चरणों मे माथा रगड़ेगे, विनय से आपको लुभा लेंगे, मीठी-मीठी बाते करेंगे और समय पाकर ऐसा डसेगे कि जड़मूल से उखाड़ कर ही चैन लेगे।

क्रोध और मान कषाये तो बाहर मे दिखती है और कटु भी लगती है पर मायाचारी मीठी कषाय है। अन्दर-ही-अन्दर चलती रहती है, बाहर दिखाई नहीं देती। क्रोध मान को सब छोड़ना चाहते है पर मायाचारी से दुनिया को पागल बनाना चाहते है।

नेमिचन्द्र आचार्य कहते है—कषाये जितनी तीव्र होती है, कर्मो का बध व अनुभाग भी उतना ही तीव्र होता है। ये ही कषायें योगो के साथ जब प्रवृत्त होती है तो लेश्या कहलाती है। तीव्र अनन्तानुबधी कषाय में कृष्ण लेश्या रूप परिणाम होते है। इस समय में जीव अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए दूसरो को जड़मूल से उखाड़ना चाहता है, क्रोधी बैर को कभी नही छोड़ता, लड़ने के स्वभाव वाला होता है। जैसे-जैसे कषाय की मदता होती जाती है वैसे-वैसे लेश्याओ (परिणामो) मे भी सरलता आती है। कृष्ण, नील, कापोत अशुभ लेश्याएँ है, पीत पद्म, शुक्ल शुभ लेश्याएँ हैं।

शास्त्रों मे अनेक उदाहरण भरे पड़े है, जिन्होंने भी मायाचारी की, उनका इहलोक मे तो अपमान हुआ ही है, परलोक भी दुखो से भरा हुआ मिला। मात्र ऐश्वर्य के लोभ मे कौरवो ने पाडवो के साथ कितनी बार मायाचारी

की, उनके प्राण तक हरने के लिए मायाजाल रचा। लाक्षागृह मे पाडवो को जलाने का षडयंत्र किया, किन्तु चरम शरीरी तथा सर्वार्थसिद्धि विमानो में उत्पन्न होनेवाले वे महापुरुष कैसे जल सकते थे। हाँ! कौरवों के कारण उनको १२ वर्ष तक माता कुंती और अर्जुन-पत्नी द्रौपदी के साथ, पूर्व कर्मोदय होने से वनवास में कष्ट अवश्य भोगने पड़े। अन्त मे मायावी कौरवों का पतन हुआ।

इसी प्रकार रावण का दृष्टान्त भी हमारे सामने है। रावण ने सीता को मायाचारी से चुराया, परिजनों के द्वारा समझाने पर भी उसने सीता को वापस नही किया। फलत रावण युद्ध मे पराजित हो नरकगामी बना।

छोटी-छोटी भी मायाचारी दुख का कारण बनती है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम भी इससे नही बच पाये। यद्यपि मर्यादा की रक्षार्थ राम ने सीता को वनवास भेजा था फिर भी गर्भवती सीता के साथ इन्होंने मायाचारी की। सीता को अकृत्रिम चैत्यालयों की वन्दना का बहाना करके वन मे छुडवाया, अग्नि-परिक्षा होते ही राम ने सीता को अन्त पुर मे ले जाने का बहुत प्रयत्न किया पर सीता ने ससार की दशा से· उदासीन हो आर्यिका दीक्षा धारण कर ली। राम सीता के लिए तरसते रहे, पर सीता ने फिर महल की ओर मुड़कर नही देखा। राम बहुत दुखी हुए।

घर मे सास-बहू का व्यवहार माया से आक्रान्त है। ब्याही हुई बेटी जब वापस आती है तो माँ कहती है—''बेटी। यहाँ मैके में तुम काम मत करो, ससुराल से थककर आयी हो।'' बेटी, कितना भी खाये, माँ यही कहेगी—''मेरी बेटी कुछ खाती ही नही अथवा बहुत ही कम खाती है।'' वही माँ बेटी के स्थान पर बहू के लिए कहेगी—''न जाने कहाँ से आई है राक्षसनी, खाती तो ढेर सारा है, पर काम कुछ नही करती।'' बेटी को तो उदार दृष्टि से देखे और उसके अवगुणो को भी गुण समझे और वही परायी 'बेटी' के गुणो को भी अवगुण रूप देखे। यह मिथ्या दृष्टि से मायाचारी सास के लक्षण है। पर समदृष्टि (सम्यक्दृष्टि) विशालदृष्टि वाली सास वही है, जिसकी दृष्टि मे बहू-बेटी दोनो समान है, सम्यग्दृष्टि बहू भी वही है जो माँ व सास के प्रति सम-व्यवहार करे। वास्तव मे शास्त्र या पढ़ी गई शिक्षा का उपयोग जीवन मे उतारने से ही है मात्र पढ़ने से नही।

घर मे मायाचार का उदाहरण मुझे स्मरण आ रहा है—प्राय स्त्रियो मे मायाचारी की विशेषता देखी जाती है—एक परिवार की इकलौती कन्या शादी के बाद ससुराल आई। ससुराल में पहुँचते ही काम-काज की भरमार सहन नही कर पायी। सास बहुत समझाती रही। पर बहू ढीठ बनती गई। चक्की पीसना, पानी भरना, इतने काम मुझसे नही होते। पति को सास के सबध मे, उल्टा-सीधा सिखाती। एक दिन बहू ने मायाजाल बिछा ही दिया। आखिर पेट और कमर पकड़े चिल्ला रही है। भयकर तकलीफ। डॉक्टर, वैद्य, हकीम सभी की लाईन लग गई। पर कोई बीमारी पकड़ मे नही आई। सभी हताश होकर चले गये। सारा घर परेशान हो गया। सास बेचारी कहे—''मेरी बहू को एकदम क्या हो गया है नयी-नयी है, क्या भूत लग गया?

एकान्त मे पति ने पूछा—''देवी। हमे तो कोई इलाज समझ मे नहीं आ रहा है, तुम्ही कोई उपाय हो तो बता दो।'' पत्नी मुस्कराते हुए बोली—''देखिये, आज स्वप्न मे एक देवी ने आकर मुझसे कहा है-यदि आपकी माँ अपने बाल कटाकर (मुडन कराके) काला मुँह करके सुबह चार बजे मुझे दर्शन दें तो मेरा रोग दूर हो जाये।'' पति ने सारा छल, कपट, ठगनी विद्या को जान लिया। उसने सोचा-अब मै इसे ठीक करता हूँ। पत्नी की माँ को पत्र लिखा—''मुँह देखना हो तो चली आइये, आपकी लड़की को देवी ने आकर कहा है कि यदि उसकी

माँ सिर मुँडाकर, काला मुँह करके सुबह-सुबह दर्शन देगी तो उसका रोग दूर होगा अन्यथा दो दिन मे मर जायेगी। आपकी लड़की की हालत गभीर है, शीघ्र आइये।''

पत्र प्राप्त होते ही जैसा कि स्त्रियों मे मोह की अधिकता होती है— रोना-धोना चालू हो गया। माँ ने सारी विधि कराई और सुबह चार बजे लड़की के सामने आकर खड़ी हो गई। लडकी असलियत नहीं समझ पाई। सास को मजा चखा दिया, ऐसा सोचकर हँसती हुई चकिया पीसने लगी। सारा रोग भाग गया। वह गाने लगी—''देखो मर्दनी चालें सिर मुण्डा मुँह काला।'' पति को गुस्सा आ ही रहा था, वह सोच रहा था, देखो-स्त्रीया चरित्र, कैसा मायाजाल फैलाया है। वह कहने लगा—''देखो मर्दो की फेरी, माँ तेरी या मेरी।''

पत्नी ने देखा, अरे! मेरी माँ की यह दुर्दशा? पति से कहा—''आपने यह क्या किया?'' ''माँ तेरी या मेरी, बात तो एक है, तेरा रोग तो चला गया।'' बहू ने दूसरे को ठगना चाहा पर स्वय ठगी गई। उसने क्षमा माँगी, आगे ऐसी मायाचारी कभी नही करूँगी।

एक व्यक्ति मदिर में माला करने बैठा। एक दो मन्त्र बोलकर इधर-उधर देखता था। जब कोई देखता तो आँखे बन्द कर बगुला-भक्त बन जाता, नही तो मन भी नही लगे। ऐसे मायाचार से मन्त्र जपने, ध्यान करने से फल की प्राप्ति कैसे होगी?

माया कषाय अति विकराल है। अनन्तानुबधी माया शल्य रूप कही गई है। उमास्वामी आचार्य ने कहा—''नि शल्यो वुव्रती''। माया, मिथ्या, निदान ये तीन काँटे, जब तक मौजूद रहते हैं, सम्यग्दर्शन नही होने देते है। राग के उदय से परस्त्री आदि मे वाञ्छा रूप तथा द्वेष-अन्य जीवो के मारने बाँधने अथवा छेदने रूप मेरे दुर्ध्यान को कोई नही जानता। ऐसा मानकर, निजशुद्धात्मक भावना से निरन्तर आनन्दरूप सुखामृत जल से अपने चित्त की शुद्धि न करते हुए, बाहर से बगुले जैसे वेश को धारणकर लोगो को प्रसन्न-करना, माया शल्य है।

क्रोध में शरीर गर्म हो जाता है, आँखे चढ़ जाती है, चेहरा लाल-लाल हो जाता है। मान मे शरीर अकड़ जाता है, सीना फूल जाता है। मायाचार मे शरीर सिकुड़ जाता है, चेहरा फीका, उदास हो जाता है, आनन्द कभी नही आता हमेशा भय बना रहता है। हमेशा शल्य लगा रहता है—जैसे दाँतो मे तिनका फँस जाने पर जिह्वा बार-बार वहीं जाती है, उसी प्रकार माया, मिथ्या, निदान-तीन काँटे अन्दर-ही-अन्दर कार्य किया करते है-चुभते रहते है।

> अय निज परो वेत्ति गणना लघुचेतसाम्।
> उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

यह मेरा है, यह तेरा है, इस प्रकार की बुद्धि छोटी बुद्धि वाले प्राणियों में होती है। महावीर की वाणी सर्वोदय तीर्थ है, यहाँ वीतराग प्रभु की शरण मे सारी वसुधा ही मेरा कुटुम्ब है। निश्चय दृष्टि से ससार का कोई पदार्थ मेरा नही, मैं भी किसी का नही, पर व्यवहार दृष्टि में सारी पृथ्वी मेरी है। सर्वोदय तीर्थ में सभी के उद्धार की अमृत भावना है। मेरे-तेरे की भावना से सहित प्राणी से आत्महित की वाञ्छा कैसे? अनुत्सुक प्राणी के लिए मेरी पूर्ति हो, इसी उधेड़बुन मे सुबह से शाम तक मायाचार का जाल बिछाकर, दुनिया को लूटता है।

मीठा-मीठा व्यवहार करके सारा धन वैभव हड़प लेता है और अन्त मे लाल झण्डी दिखा देता है—"मुँह मे राम बगल मे छुरी, कैसे होवे यात्रा पूरी"।

दो मित्र थे। एक बार एक मित्र अपने मित्र के घर भोजन के लिए पहुँच गया। मित्र के पहुँचते ही प्यार से मित्र ने उसे गले लगाया, बहुत अच्छी तरह स्वागत किया। पूछा—"मित्र कुशल-क्षेम तो है?" उत्तर मिला—"क्या कहूँ, कुशल-क्षेम, बड़ी कठिनाई मे दिन गुजर रहे है। कुछ दिन यही शाति के साथ निकल जाये। आपके प्रेम की वजह से चला आया।"

"प्रिय मित्र। मित्र ही सुख-दुख के साथी है। मेरा अहोभाग्य है कि आप इस समय यहाँ आये।" मीठी-मीठी बातें कहकर बिचारे मित्र को फँसाया। "कोई चिन्ता नही करना-घर को अपना ही समझो, जब-तक चाहो आनन्द से रहो।"

अन्दर पहुँचते ही, पति-पत्नी के मन मे मायाचार सिर चढ़ा। ये कहाँ से आया मित्र बनकर, कैसे भगायें इसको। पत्नी ने कहा—"देखोजी, मुझे उपाय समझ मे आ गया। तुम मुझे मारना, मै रोऊँगी। आपस मे लडाई देखकर वह चला जायेगा।" माया का कार्य शुरू हुआ-पति ने पत्नी को मारा, पत्नी जोर-जोर से रोने लगी। भूखा-प्यासा मेहमान, पाप का उदय-यहाँ भी मुझे सुख नही। चलो, अब कब तक यहाँ ठहरे। मेहमान दरवाजे के बाहर निकला। दोनो आपस मे गले मिले।

पति ने कहा—"पगली। इतनी रोती है, मैने तुझे सचमुच मे मारा थोड़ा ही था।" पत्नी ने कहा—"तो मै भी सचमुच मे रोयी थोड़ी ही थी।" तभी मायाचार का पर्दाफाश हुआ। मेहमान भी तुरन्त दौड़कर आ गया—"मै भी सचमुच गया थोडे ही था।"

इसीलिए कहा है—

> मुख मीठी बातें करे, अत कटारी पेट।
> तुलसी तहाँ न जाइये, जहाँ कपट को हेतु।।

छल-कपट-धोखा ये सब माया के पर्यायवाची है। आत्मा मे उत्पन्न वक्र-कुटिल भाव का नाम माया कषाय है, जो मन-वचन-काय की क्रिया को विद्रूपता प्रदान करती है। मन, वचन व काय का भिन्न व्यवहार मायाचार का लक्षण है।

मायाचारी छलपूर्वक अपने कार्य को सिद्ध करने का इच्छुक होता है। किसी ने कहा है— माया अविद्या की जन्मभूमि, अपयश का घर, पापरूपी पक का गड्ढा, नश्वर घर का दरवाजा व शील के वृक्ष को जलाने वाली अग्नि है। श्री नेमिचन्द्राचार्य ने मायाकषाय के चार भेद बताये है। अनन्तानुबधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन।

कुटिलता की अपेक्षा माया के चार भेद है। जितनी अधिक कुटिलता जिसमे पाई जाती है वह उतनी ही उत्कृष्ट माया कही जाती है। और वह क्रम से चारो गतियो की उत्पादक होती है। 'वेणुमूल' बाँस की गठीली जड़, मेढे का सीग, गोमूत्र की वक्ररेखा और अवलेखनी खुरपा के समान यह चार प्रकार की है। वेणुमूल में सबसे

अधिक वक्रता पाई जाती है इसलिए शक्ति की अपेक्षा उत्कृष्ट अनन्तानुबधी माया का यह दृष्टान्त है।

ससार मे होने वाले भीषण युद्ध, हिंसात्मक कार्यवाहियाँ आदि अनेक दूषित कार्य सब मायाचार के ही परिणाम हैं। राजनीतिक क्षेत्र में राज्य धरोहर को लूटने की नीति अनादि से चली आई है। राजनेताओ का जीवन मायाचार का घर बना हुआ है। तीर्थंकर नेमिनाथ के समय की कथा है। एक दिवस नेमिनाथ कुमार तालाब में क्रीड़ार्थ गये थे, साथ मे सारा परिवार था। नेमि कुमार ने अपनी भाभी जाम्बवती से कहा—"भाभीजी! मेरी धोती निचोड़ दीजिये।" गर्वीली भाभी ने कहा—"देवर जी! जानते हो, ऐसे महापुरुष की पत्नी हूँ जो नागशय्या पर शयन करते है तथा शखयुक्त है।" स्वाभिमानी नेमिकुमार तुरन्त आयुधशाला मे पहुँचे। नागशय्या को लिटा दिया तथा नाक से शख को ऐसा बजाया कि सारी नगरी कम्पित हो गयी। असमय मे शख किसने बजाया? सारे नगर, राजा-प्रजा मे आश्चर्य छा गया था। पता लगा कि नेमिं कुमार ने शख बजाया है। तभी कृष्ण नेमिकुमार की शक्ति को देखकर आशकित हो गये। नेमिकुमार श्रीकृष्ण के भाव समझ चुके थे।

एक दिन नेमिकुमार ने अपनी कनिष्ठा अँगुली टेढ़ी कर ली और श्रीकृष्ण से कहा कि तुम इसे सीधी कर दो। श्रीकृष्ण अपनी सारी शक्ति लगाकर हार चुके किन्तु सफल नही हुए। नेमिकुमार की शक्ति को देखकर श्रीकृष्ण के अन्दर विचार आया— इस शक्तिशाली के रहते मै राज्य कैसे कर पाऊँगा। तुरन्त ही मायाजाल रचा कि ऐसा उपाय करूँ कि तुरन्त ही नेमिकुमार को वैराग्य उत्पन्न हो जाये। नेमिकुमार की शादी के समय पशुवध का दृश्य तैयार कर दिया। अहिंसक नेमि प्रभु को अपने निमित्त हिंसा कहाँ सहन होती? तुरन्त ससार-शरीर-भोगो से विरक्त हो गये।

मायाचार से बडे-बड़े महापुरुष भी नही बच पाये। घर-घर मे परिवार के बीच भी यह जाल देखा जाता है।

किसी गाँव मे एक धर्मात्मा सेठ रहते थे। प्रतिदिन साधु ब्रह्मचारी आदि कोई भी पात्र आ जाये, उसे वे भोजन कराते थे। सेठानी को बड़ी तकलीफ रहती थी। वह सेठजी के इस व्यवहार से बड़ी दुखी थी। एक दिन एक ब्रह्मचारी दोपहर मे करीब १ बजे आये। सेठजी इन्हे लेकर घर आये। सेठानी से कहा—"इन्हे भोजन कराओ।" सेठानी ने मायाचारी की—"घर मे घी का ठिकाना नही है, व्रती त्यागी को रूखा भोजन कैसे खिलाये, आपको तो कुछ सूझता ही नही, घर की भी कोई इज्जत है या नही।"

भोले सेठजी बोले—"बस, इतनी-सी बात है। अभी घी लाकर देता हूँ। तुम तैयारी तो करो।" सेठजी घी लेने चले गये।

इधर सेठानी ने मौका पा लिया। उसने ब्रह्मचारीजी से कहा-देखिये, सेठजी मे सब गुण अच्छे है, परन्तु भोजन कराने के बाद वे (मूसल दिखाकर) इस मूसल से मारते है।" सुनते ही ब्रह्मचारी ने कहा—"यदि ऐसी बात है तो यहाँ से चल देना ही अच्छा है।" और वे बिना भोजन किये ही चल दिये।

थोड़ी देर बाद सेठजी घर आये तो ब्रह्मचारी जी को वहाँ न देखकर सेठानी से पूछा—"वे ब्रह्मचारीजी कहाँ चले गये?" सेठानी बोली—"वे यह मूसल माँग रहे थे, मैंने कहा यह मूसल तो मेरे पीहर से आया है, इसे मैं नहीं दूँगी। इस पर वे नाराज होकर चले गये।" यह सुनकर सेठजी ने कहा—"मूसल दे देती, मैं तुझे और

ला देता। छोटी-सी चीज के लिए आये मेहमान को खाली हाथ भेज दिया।'' तुरन्त ही सेठजी मूसल लेकर उसे देने के लिए चल पड़े।

ब्रह्मचारी को आवाज लगाते हुए वह मूसल लेकर दौड़ रहे थे। ब्रह्मचारी ने सेठजी को मूसल लिये देखकर सोचा कि देखो, इसने भोजन भी नही कराया और मूसल लेकर दौड रहा है। वे भागे। आगे-आगे ब्रह्मचारी, पीछे-पीछे सेठजी को दौड़ते सारा नगर देख रहा था। आखिर ब्रह्मचारी थककर वृक्ष की छाया में जा बैठा। सेठजी से चर्चा हुई। सेठानी की मायाचारी प्रकट हुई। पत्नी के मायाचार से विरक्त सेठजी ने जिन-दीक्षा धारण कर आत्मकल्याण किया।

इसीलिए कहा है- कपट छिपाये ना छिपे, छिपे न मोटो भाग। दाबी दूबी ना रहे रुई लपेटी आग।।

और भी कहा है- ''नृपस्य चित्त कृपणम्य वित्त मनोरथ दुर्जन मानवानाम्।
स्त्रिया चरित्र पुरुषस्य भाग्य दैवो न जानाति कुतो मनुष्य ।।''

जैसे राजा के मन को, कजूस के धन को, दुर्जनो के मनोरथो को, स्त्रियो के चरित्र और पुरुष के भाग्य को कोई नही जान सकता, वैसे ही मायाचारी एक ऐसी मीठी कषाय है जो पकड़ी नही जा सकती। चोरो के नगर, महल, बँगले, कोठी कभी नही बन पाये। सरल हृदय मानव के पास ही सम्पत्ति टिकती है। क्षण भगुर लक्ष्मी, शाश्वत मुक्तिलक्ष्मी, ज्ञानलक्ष्मी, सभी लक्ष्मियाँ मायाचारी से दूर रहती है। इसीलिए आचार्य बार-बार कहते है-बन्धुओं! जिस शरीर, परिवार के पोषण के लिए तुम निरन्तर मायाचारी छल कपट करते हो, वे सब नश्वर हैं। तुम्हारा साथ देने वाले नही है, सब स्वार्थ के साथी है।

एक प्रसग है-रामचन्द्रजी और सीता एक साथ वन मे घूमते-घूमते एक नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ एक बगुला को ध्यानस्थ देखकर सीताजी पूछती है-

उज्ज्वल वर्ण, गरीब गति, एक टाँग मुख ध्यान।
रामचन्द्रजी ने उत्तर दिया- देखत लागत भगतवत्, निपट कपट की खान।।

कपटी जीव सदैव शकित रहता है, कही मेरा पाप खुल नही जाए। वह सदैव चिन्तित रहता है। ऊपर से ऐसी भक्ति दिखाता है, मानो उसके समान कोई भक्त दुनिया मे ही नही हो परन्तु अन्दर-ही-अन्दर वृक्ष को खोखला कर देता है। जिस पेड़ पर खड़ा है, उसी को जड़ से काटना चाहता है। मीठी वाणी से जग को ठगता है। इसलिए कहा है-

अरकसिया के मुख नही, नही गोच के दन्त।
जे नर मीठे बोलही तिनसे बचिए कन्त।।

मीठी कटारी, सतत दुखारी। माँ सदैव कडवी बोलती है। बच्चे को बुरा लगता है, पर आगे बालक सुधर जाता है। मीठा बोलकर अपना स्वार्थ साधने वाले से सदैव दूर रहना श्रेयस्कर है।

अन्तत माया कषाय एक मीठी कटारी है। देखने मे दिखाई नही देती, पर अन्त में, कटुक फल से युक्त

है अतः निश्चित सुखी, निःशल्य जीवन बनाने के लिए माया कषाय का त्याग करना चाहिए। जब तक मायाचारी रहेगी, तब तक वस्तु तत्त्व का सच्चा आनन्द नही आ सकता है।

निश्चित समझिये, सर्प जब भी बाहर चलता है तब टेढा चलता है, पर अपने बिल मे सीधा ही प्रवेश करता है। उसी प्रकार महानुभावों! अपने आत्मस्वरूप मे रमण करने के लिए वक्रता का त्याग आवश्यक है। मन, वचन व काय की कुटिलता जब तक रहेगी; अपने मुक्तिस्थलरूपी सच्चे बिल मे प्रवेश नही कर सकते। वक्रता रहित आत्मा ही मुक्त अवस्था को प्राप्त करती है। अत सरलता को धारण करना, जीवन को सफल बनाना है।

बन्धुओं! कषाय को पुष्ट मत करो, आत्मा की पुष्टि मे अहितकारण कषायो का उन्मूलन करो। यही मुख्य उपदेश है।

लोभ

अकलक स्वामी जैन दर्शन मे न्याय व सिद्धान्त के ज्ञाता बहुत बड़े आचार्य हुए। जैन दर्शन की प्रभावनार्थ उन्हे वादियो से कई बार वाद करने पड़े। उनकी ज्ञानशक्ति की तीक्ष्णधार के आगे सभी प्रतिवादी तभी सदैव निरुत्तर रहे। आचार्यश्री ने राजवार्तिक महाग्रन्थ को लिपिबद्ध किया। वहाँ प्रकरण आया है-लोभ कैसे बढ़ता है। उत्तर मिलता है—''लाभात् लोभ प्रजायते।''

जितना-जितना लाभ होता जाता है, जीवो का लोभ भी उतना ही बढ़ता जाता है। प्रमाण या सीमा के बीच मे आयु की निकटता आने से शरीर बूढ़ा होता जायेगा पर लोभ बूढा नही होता। लोभ सदैव जवान बनकर सामने खड़ा रहता है। बालक से लेकर वृद्ध तक, दरिद्री भिखारी से लेकर राजा चक्रवर्ती तक लोभ का साम्राज्य बना हुआ है।

एक बार एक भिखारी राजा के द्वार पर बैठ गया। राजा जी से कुछ दान-धर्म मे पैसा मिल जाय। द्वार पर बैठा हुआ राजा की प्रतिक्षा कर रहा था। चपरासी ने कहा—''राजा अभी भगवान की भक्ति कर रहे है। थोड़ा बैठो।'' भिखारी के कानो मे कुछ गुनगुनाहट सुनाई दी। राजा भगवान से कुछ माँग रहे थे।'' हे भगवन्! मेरे राज्य मे धन, वैभव बढ़े, सब सुखी रहे, रत्नो के हारो का ढेर हो, माणिक-मुक्ता मिले।'' आदि-आदि। भिखारी ने सोचा-ये राजा होकर माँगता है। फिर बड़प्पन किस काम का! अरे ये माँगता है इसलिए यह भी भिखारी है। चलो, भिखारी से याचना क्यो करें।

तभी राजा बाहर आये। ''आपको क्या चाहिए?''

''कुछ नही। राजन्! आप खुद भगवान से माँग रहे थे, मुझे क्या देगे?'' राजा—''अरे! मै तो बड़ा वैभव माँग रहा था, तुम अपने लिए माँग लो।''

भिखारी—''मै समझ गया। तुम बड़े भिखारी हो और मै छोटा भिखारी। बस, जो आपको देगा, वही मुझे देगा। तुम भिखारी मुझे क्या दोगे?''

लोभ कषाय ने राजा को भी रंक बना दिया है। हर व्यक्ति इच्छाओ मे डूबा रेडिमेड माल पाने के चक्कर

में है। आचार्य कहते हैं-बढ़ते हुए लोभ को जीतने के लिए उत्तम मार्ग है, आय का चौथा हिस्सा दान करो पर आज के लोभी जीवन मे यदि इतना अशक्य है तो कम से कम दसवॉ हिस्सा तो अवश्य ही दान मे निकालना चाहिए अन्यथा जो नही निकालता है, उसे निर्माल्य खाने का पाप लगता है। उसके जीवन मे दरिद्रता का वास रहता है।

इच्छा ही परिग्रह है। इच्छा ही लोभ कषाय की जननी है—

जो दस बीस पचास भये, शत लक्ष करोड की चाह जगेगी।
अरब खरब लौ द्रव्य भयो तो धरापति होने की आश लगेगी।।
उदय अस्त तक राज्य भयो पर तृष्णा और ही और बढेगी।
सुन्दर एक सन्तोष बिना नर तेरी तो भूख कबहुं न मिटेगी।।

लोभ की अग्नि ऐसी धोखेबाज अग्नि है, ऊपर से चगा और अन्दर से नगा बनाती है। यह एक मीठी छुरी है। पैनी धार है। लोभ की धधकती ज्वाला मे खून-पसीना एक कर मानव सुख और शाति का अनुभव करना चाहता है। सुखाभास मे सच्चे सुख की कल्पना कर मक्खी की तरह जीवन को बर्बाद कर देता है—

मक्खी गुड़ मे गड़ रहे पख रहे लिपटाय।
हाथ मले और सिर धुने लालच बुरी बलाय।।

जैनाचार्यो ने पाप पॉच बताये— हिसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह। हर जीव हिंसा आदि चार पापो को तो बुद्धिपूर्वक छोडना चाहता है पर आश्चर्य इस बात का है कि परिग्रह को जोड़ना चाहता है। आप ही बताइये, आपको हिसा, झूठ, चोरी और कुशील ४ पापो को करने से या करने वाले को देखने से भी जो घृणा होती है क्या परिग्रह के सञ्चय करने मे वैसी घृणा होती है? आज तो स्थिति ही अलग है, गुणो की पूजा नही। परिग्रह पाप की पूजा-सन्मान बढ़ गया है। जो जितना अधिक परिग्रही है, उसको उतना ही सम्मान मिल रहा है। पुत्र या दहेज देने की शक्ति के अभाव मे सुन्दर, रूपवान, गुणवान, धर्मात्मा, उत्तम कुलो की कन्याएँ कुँवारी बैठी है और जिसके पास पैसा है उनकी लॅगड़ी, कानी, कुरूप, असभ्य लड़कियो की भी शादी ठाठ-बाट से हो रही है, गुणो की कीमत पैसो मे ऑकी जाने लगी। मानव-मानव का शालीन प्रेम आज समाप्त-सा हो गया है। प्रेम पैसे मे बिक गया है।

आचार्यो ने नौ ग्रह-रवि, शशि, मगल, बुध, शनि आदि कहे। इनमे शनि घातक है। यदि एक बार पीछे पड़ गया तो साढे सात वर्ष तक पीछा नही छोडता। पर एक १० वॉ गृह परिग्रह है जो परि-समन्तात् ग्रसति अर्थात् चारो ओर से ऐसा ग्रसता है कि जन्म से ग्रसता है और अर्थी पर भी नही छूटता, जलकर स्वय भी भस्म होता है, शरीर को भी भस्म कर देता है।

सुकरात एक बहुत अच्छे दार्शनिक हुए है। उन्होंने जीवन को सरलता से जिया। वे लिखते है, "मै प्रतिदिन यह विचार करता था कि किस वस्तु के बिना मेरा काम चल सकता है, किसके बिना भी मैं जी सकता हूँ" निर्णय के पश्चात् अनावश्यक को छोड़ता जाता था। आज का मस्तिष्क यह सोचता है—मेरे पास और किस वस्तु की कमी है, और क्या लाऊँ? और मै जीवन की व्यर्थ की आवश्यकताओं की पूर्ति में लग जाता हूँ पर कवि

कहता है-अभावों मे जीना सीखो, अभावो मे जीने की कला महापुरुष बनने की कला है। सद्‌भावो मे तो संसार अनादि से जीता आया है-

> जितने पास अभाव रहेगे, उतनी मञ्जिल पास रहेगी।
> जो मुश्किल में मुस्कायेगा, मुश्किल उसकी दास रहेगी॥

ममकार बुद्धि परिग्रह की सूचिका है। पाप के बाप को प्रवेश कराने का द्वार 'ममकार' है। जीव जाति सब एक हैं पर इच्छाएँ अनेक हैं। अनन्त काल बीत गया पर आशा, तृष्णा नही मिट पाई। कबीरदासजी कहते है—

> माया मरी न मन मरा, मर-मर गया शरीर।
> आशा तृष्णा न मरी, कह गये दास कबीर॥

शरीर अनन्त बार जीर्ण-शीर्ण हो गया किन्तु मन नही मरा, आशा-तृष्णा के गड्ढे नही भरे। अग्नि मे घी डालोड, धधकती रहेगी, भूख को जितना बढ़ाओ बढ़ती रहेगी, नीद को जितना बढ़ाओ बढ़ती जायेगी, जिस प्रकार अग्नि का शमन जल से, भूख का शमन सयम से, नीद का शमन इन्द्रिय विजय से होता है, उसी प्रकार लोभ कषाय का शमन सतोष रूप जल से होता है-

> गोधन गजधन वाजिधन, और रतनधन खान।
> जब आवे सतोषधन, सब धन धूरि समान॥

महानुभावो। सरकार ने कट्रोल चालू किया। क्यो? कट्रोल पद्धति का कारण हमारी सग्रह प्रवृत्ति है। हमने मन पर, इच्छाओं पर, तृष्णा, लोभ पर कट्रोल नही किया तो सरकार ने वस्तुओ पर कट्रोल करना चालू कर दिया। लोभी स्वय भी नही खाता है और दूसरे को खाते हुए भी नही देख सकता है। एक सेठजी बड़े कजूस थे। दुकान से घर पधारे। मन पर बड़ी उदासी थी। चेहरा फीका पड़ रहा था। पत्नी समझ गई-आज कुछ गड़बड़ है, पूछने लगी उदासी का कारण क्या है-

> नारी पूछे सूम की, काहे वदन मलीन।
> कहा तुम्हारो गिर गयो के काहू को दीन॥
> सूम कहे नारी सुनो गिरो न कुछ मै दीन।
> देतन देखत और को तासो वदन मलीन॥

इसके ठीक विपरीत उदारमना व्यक्ति सदा प्रसन्न चित्त रहता है। उदारमना जीव स्वय भी खाता है और दूसरो को भी खिलाता है। एक बार एक राजा ने प्रजा को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। जिस समय भोजन परोसा गया, राजाज्ञा हुई—''बधुओं! भोजन को इस प्रकार खाया जाय कि हाथ टेढ़ा न हो और पेट भी भर जाए।'' सारी प्रजा पगत में बैठकर आश्चर्य में बैठी रही। कुछ उपाय समझ मे नही आया। तभी एक अनुभवी वृद्ध ने कहा—''सभी एक-दूसरे को भोजन कराइये। एक-दूसरे के मुँह में डालिये।'' सबने भोजन किया, हाथ भी टेढ़ा नहीं हुआ और पेट भी भर गया। तात्पर्य यही था-स्वार्थी नहीं, उदारचरित बनो, स्वय खाओ और दूसरो को भी खिलाओ।

> अय निज. परो वेति गणना लघुचेतसाम्।

उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

यह मेरा, यह तेरा यह छोटी बुद्धि वाले कहा करते है परन्तु उदारचरित्र महापुरुष के लिए तो सारी पृथ्वी ही परिवार है।

दूसरे दानी पुरुष स्वय के खाने मे कमी कर लेते है पर धर्मकार्य या दान मे कजूसी या कमी नही करते है। ऐसे पुरुषो मे प्रसिद्ध हुए माघ कवि-अद्भुतदानी। उन्हे अपनी कविता के पारितोषिक मे महाराज भोज से हजारों मुद्राएँ पुरस्कार मे मिलती थीं किन्तु वे सब मुद्राए गरीबो मे बाँट देते और खुद भूखे रह जाते। एक दिन उनकी स्त्री ने कहा—''बच्चे भी भूखे पड़े है। कल तो कुछ बचाकर लाना।'' कवि माघ ने कहा—''अवश्य।'' दूसरे दिन फिर अच्छा इनाम मिला। वह भी सब गरीबो को बाँटकर थोड़ा-सा बचाकर रख लिया। किन्तु द्वार पर कुछ गरीब लोग मिल गये तो बची हुई मुद्राए उनको दे दी। घर जाने पर स्त्री ने पूछा—''कुछ लाये हो?'' सुनकर चुप। तब पत्नी ने कहा-

लाखो इनाम पाते दुखियो को जा खिलाते।
हम और आप भूखे क्यो व्यर्थ दुख उठाते॥

माघ ने उत्तर दिया-

अपनी क्षुधा तपन को, सतोष जल बुझाये।
दीनो का करुण-क्रन्दन, हमसे सुना न जाये॥

तीसरे प्रकार के व्यक्तियो मे नम्बर कजूस का है— जो स्वय भी नही खाते और दूसरे को खाने भी नही देते। धन की तीन गतियाँ बताई है— दान, भोग और नाश। इनमे कजूस के धन की तीसरी गति होती है। एक सेठजी थे। धन के भडार थे। पर मन से उदार न थे। एक बार सारा परिवार शादी मे बाहर गाँव गया था। तभी अकेले सेठजी को मौका मिला। उन्होंने कमरे के दरवाजे चारो ओर से बन्द किये, कही मेरी सम्पत्ति कोई देख नही ले। तिजोरी के पास बैठकर नोटो की गड्डियॉ गिनने लगे। वायु का सचार न होने से सेठजी घबरा रहे थे। अचानक पेट मे भयकर पीडा होने लगी। दर्द के कारण सेठजी चिल्ला रहे थे। बचाओ, बचाओ, मै मरा- पर कौन सुनता उनकी आवाज को, अन्ततोगत्वा सेठजी के प्राणपखेरू वही नोटो के बडलो के बीच निकल गये। दो दिन बीत गये। सेठजी की खोज मे लोगो ने कमरे का दरवाजा तोड़ा और सारी स्थिति देखकर सेठजी की बड़ी निन्दा हुई। लोभ कषाय का फल चिन्तन कर, वैराग्य के प्रति उन्मुख हुए। भव्यात्माओं! अधिक लोभी मरकर, अपनी ही तिजोरी का रक्षक सर्प बनकर, घोर यातनाओ को सहता है। सभी लोग कहते थे— इस कजूस सेठ ने कभी शाति से खाना नही खाया और न कभी किसी को खिलाया। इसीलिए इसकी दुर्दशा हुई।

चौथे प्रकार के जीव 'मक्खीचूस' कहलाते है— एक सेठजी के यहाँ घी का व्यापार चलता था। वर्षा का समय था। मक्खियाँ बहुत थी। लड़ते-लड़ते एक मक्खी घी मे गिर गई। तभी एक ग्राहक आया, मुनीम ने घी तोला। मक्खी को घी से निकालकर बाहर किया। सेठ को गुस्सा आ गया। फोकट का माल दिखता है, आक्रोश मे चिल्लाते हुए मक्खी को ऐसा नूच डाला कि (रत्ती भर घी कैसे छोड़ूँ) घी भी ले लिया। मक्खी का खून भी नूच लिया। लोभ कषाय की ऐसी दशा है। चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय, प्राण लुटा सकते हैं पर धन

•नहीं दे सकते। आचार्य कहते है—''पाप का बाप लोभ है'' एक लोभ कषाय नाना प्रकार के अनर्थ कराती है। लोभ के पीछे मनुष्य अन्याय से कमाई करता है, गरीबो का गला घोटकर धन इकट्ठा कर महाहिंसा करता है, धन की रक्षा में प्रतिपल झूठ बोलता है, चोरी करता है, परिग्रह को इकट्ठा करता है, सारे अनर्थों का मूल लोभ है। एक लोभ कषाय मे सारे पाप निहित है, इसलिए लोभ कषाय का त्यागकर पवित्रता को धारण करो।

नीतिकार कहते हैं-

> ¹नार्जनादपि क्षेमे क्षेमादपिच तत्क्षये।
> उत्तरोत्तर वृद्धा हि पीड़ा नृणामनन्तश ॥ (क्ष चू २-६७)

परिग्रह को इकट्ठा करने में बडी .चिंता रहती है, इकट्ठा करने से भी रक्षा की अधिक चिन्ता रहती है अर्थात् परिग्रह से निरन्तर दुख और चिन्ता ही रहती है। कहा है-परिग्रह दुख का ही एक मात्र कारण है। बधुओं। शास्त्र उठाकर देख लीजिए, यह वैभव किसके साथ गया है।

> सिकन्दर जब चला भू से, सभी हाली बहाली थे।
> पड़ी थी पास मे माया, मगर दो हाथ खाली थे॥

जिसके पास परिग्रह नही है, वह प्राप्ति की लालसा मे दुखी है, जिसके पास कुछ है वह अधिक की इच्छा मे दुखी है— ''दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।''

गृहस्थी के पास पैसा नही तो वह भी कौड़ी कीमत का नही, अत. दानादि षडावश्यक क्रियाओ के लिए परिग्रह रखे—'तुम पेट भरो, पेटी नही''

> साई इतना दीजिए जामे कुटुम्ब समाय।
> मै भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाय॥

सतोष सयम एव परिग्रह परिमाणव्रत रूपी अमृतपान से जीवन को अमर बनाइए तथा लोभ रूपी विष को उगलते जाइए।

एक परिवार मे माँ, एक पुत्र और पिताजी थे। परिवार बहुत छोटा था किन्तु गरीबी का डेरा था। किसी तरह भी पिता ने बालक को पढ़ा-लिखाकर शिक्षित किया। लड़का एक योग्य वकील बन गया। गाँव से बाहर जाकर अपना कार्य करने लगा। ज्ञान का मद ऐसा छाया कि माँ-बाप को ही भूल गया। वृद्धावस्था मे गरीबी से परेशान थे। इधर पुत्र का नाम गाँव-गाँव में प्रसिद्ध हो गया। दोनो ने सोचा चलो थोड़ा समय पुत्र के पास बिता आये।

माँ-बाप उसी गाँव में पहुँचे जहाँ पुत्र था। बँगले के बाहर नौकर खड़ा था। फटे-पुराने कपड़े पहने थे। अत दरवाजे पर रोक दिया गया। पिता ने कहा—''जाओ वकील साहब से कह दो-तुम्हारे माता-पिता आये है।'' इतने बड़े वकील के माता-पिता की ऐसी दशा? लोग मुझे क्या कहेंगे, ऐसा सोचकर ज्ञान के मद में चूर बेटे ने कहा—'मेरे कोई माता-पिता नहीं है,' मर चुके मेरे माता-पिता।'' आवाज सुनते ही पिता ने कहा—''अरे मैं तेरी माँ का खसम हूँ।'' वकील बहुत शर्मिन्दा हुआ। यह ज्ञान का मद जीव का अकल्याण कर देता है अतः ज्ञान को पाकर कभी

मान नहीं करना चाहिए।

जो जितना अधिक सच्चा ज्ञानी होगा वह उतना ही विनयशील विनम्र होगा। सद्ज्ञान से विनय आता है। विनय रहित ज्ञान दुख का कारण है। उस ज्ञान से क्या प्रयोजन जो मद उत्पन्न करे।

(१) पूजामद— किसी को अपनी पूजा प्रतिष्ठा का मद है, मै राजा हूँ, मेरी प्रजा मेरे अनुसार चलती है, मै सारे नगर का स्वामी हूँ। लोग मेरा बहुत सन्मान करते है, मुझे पूजते है आदि पूजा-सत्कार का मान कहलाता है।

(२) कुलमद— पिता के वंश को कुल कहते है। मै उत्तम कुल का हूँ। मेरे पिता बहुत बड़े सेठ है, राजा है, व्यापारी है, विशुद्ध वश आदि के है। इस प्रकार पिता के वश का मद करना कुलमद कहलाता है।

(३) जातिमद— माता के कुल को जाति कहते है। मेरे मामा बहुत बडे व्यक्ति है। मेरी माँ के घर मे (ननिहाल में) बहुत पैसा है, नौकर-चाकर, सारी सुविधाएँ है। इस प्रकार मद करना जातिमद कहलाता है।

(४) बलमद— अपनी शक्ति का मद करना बलमद है। मै युद्धक्षेत्र मे शत्रुओ को चुटकी मे पछाड सकता हूँ, मेरी शक्ति के सामने सब पीछे हट जाते है, इत्यादि रूप से शक्ति का मान करना बलमद कहलाता है।

(५) धन या ऋद्धि का मद— मै धनवान हूँ, अथवा मुझे अनेक ऋद्धियाँ प्राप्त है ऐसा मद धनमद है। गृहस्थो की अपेक्षा धनमद और तपस्वियो की अपेक्षा ऋद्धिमद भी कहा जाता है। तपस्या के बल से साधुओ के अनेक ऋद्धियाँ हो जाती है पर वे उसका मद कभी नही करते। मद आते ही साधु पद से च्युत हो जाते है। इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि श्रावको के पास भी चक्रवर्ती पद आदि रूप विभूति प्राप्त होती है पर वे पुण्य-पाप का नाटक समझ व्यामोह मे नही फँसते। भरत चक्रवर्ती छ खण्ड के अधिपति होने पर भी मान से रहित हो, यही सोचते थे, अहो! पुण्य का फल मुझे भोगना ही पडेगा, मै चक्र हाथ मे आये बिना दीक्षा भी ले नही सकता, कैसा नियोग है।

(६) तपमद— तपश्चरण का मद करना। मैने इतने व्रत उपवास किये है, मै बड़ा तपस्वी हूँ, मेरे समान तप करने वाला दुनिया मे कोइ नही है, आदि भावनाएँ तपमद है।

(७) शरीरमद— अपने शरीर की सुन्दरता का मान करना शरीरमद है। प्राचीन इतिहास मे राजघराने की स्त्रियो (रानियो) ने रूप के मद मे चूर होकर मुनियो के शरीर पर थूक दिया था। किसी ने अपशब्द कहे, किसी ने कूड़ाकचरा फेका जिसके फलस्वरूप उसी भव मे कुष्ठ रोग से पीडित हुआ और शरीर से भयकर दुर्गन्ध आने लगी, आगे के भवो में भी अनेको खोटी पर्यायो को प्राप्त किया।

सम्यक्दृष्टि के पास एक भी मद नही होता है। वह निर्मल परिणामो से युक्त सरल हृदय वाला होता है। जैसे लड्डू शुद्ध, मीठे गोल-गोल महमोहक है पर एक कणिका भी जहर की उसमे मिली हो तो जीव का नाश कर देती है, वैसे ही कितना ही दर्शन-ज्ञान-चारित्र उत्तम दर्जे का हो यदि मद का लेश मात्र भी आ गया तो सम्यग्दर्शन रूपी बगीचे को उजाड़ कर बीहड़ वन की तरह बना देगा।

महानुभावो! रावण एक महापुरुष था। उसने अपने जीवन मे निरतिचार व्रतो का पालन किया। सीता के साथ

किसी प्रकार बलात्कार नहीं किया किन्तु एक मान कषाय ने उसे कलंकित कर दिया।

राम-लक्ष्मण से पराजित रावण मरणासन्न अवस्था मे अन्तिम घड़ियाँ गिन रहा था। तभी गुणग्राही रामचन्द्रजी ने लक्ष्मण से कहा—"भैया लक्ष्मण! रावण के पास जाओ और अन्तिम समय मे कुछ उपयोगी शिक्षा लेकर आओ।"

लक्ष्मण जरा तेज प्रकृति के थे। वह जरा चिढ़ते हुए सोचने लगे-वह तो हमारा दुश्मन है फिर उसके पास शिक्षा लेने क्यो जायें। पर बड़े भाई सा के सामने कौन बोल सकता था।

राम, लक्ष्मण की बात समझ गये। उन्होंने स्नेह से समझाते हुए कहा—"भैया लक्ष्मण! रावण एक महापुरुष था। हमें उसके पाप से घृणा है। उनसे अब हमारी कोई शत्रुता नही है। अब तो वह भी हमारे धर्मभाई है। वह एक बड़ा राजनीतिज्ञ हैं, उन्होंने अपने जीवन मे अनेक उतार-चढाव देखे है, हमें उनसे शिक्षा लेनी चाहिए।"

बड़े भाई की आज्ञा शिरोधार्य करके लक्ष्मण रावण के समीप पहुँचे। रावण की स्थिति गभीर थी। अभी भी इसकी मान कषाय गली नही थी। शरीर कृश हुआ पर कषाय मे जवानी थी। लक्ष्मण रावण के सिरहाने बैठ गये। जय-जिनेन्द्र किया।

रावण से लक्ष्मण ने कहा—"हे त्रिखण्डाधिपते लकेश! मुझे अपने जीवन मे कुछ अच्छी शिक्षा दीजिये। राजनीति की शिक्षा दीजिए।"

रावण निरुत्तर रहा। लक्ष्मण ने तीन बार कहा। पर रावण का कोई उत्तर न पाकर लक्ष्मण पुन लौट गये।

भाई राम ने देखा लक्ष्मण उदास थे। "क्या हुआ?"

"उन्होंने मेरी ओर मुँह फेर कर भी नही देखा। शिक्षा तो बहुत दूर की बात।" राम दूरदर्शी थे। वे जानते थे, महापुरुषो का वैर कारणवश ही होता है, बाद मे वे भाईवत् रहते है। फिर रावण तो जिनभक्त है।

राम ने पूछा—"लक्ष्मण! यह बताओ, तुम रावण के किस ओर बैठे थे?"

लक्ष्मण—"सिरहाने।"

राम—"भैया! शिक्षा, ज्ञान लेने के लिए नीचे बैठना होता है। सिरहाने बैठकर शिक्षा नही मिलती। फिर रावण जैसा नीतिज्ञ, अभिमानी तुमको सिरहाने बैठने पर शिक्षा कैसे दे सकते है। जाओ, पुन जाओ, रावण के चरणो मे बैठना, तुम्हें अच्छे अनुभव और शिक्षाएँ अवश्य प्राप्त होगी।"

लक्ष्मण ने वैसा ही किया। रावण के चरणो मे बैठकर अपने अनुभव और शिक्षा देने की सविनय प्रार्थना की।

यद्यपि रावण की शक्ति क्षीण हो चुकी थी, आवाज मन्द थी। मरणासन्न अवस्था, फिर भी वाणी में मधुरताभरी अन्तिम शिक्षा देते हुए कहा—"लक्ष्मण! इस समय मेरा अन्तिम समय आ चुका है। अब मैं तुमको क्या शिक्षा दूँ। फिर भी तुम्हारी इच्छा ही है तो सुनो-तीन बातें ध्यान रखना—

(१) बुरे कार्य को करने के पहले किसी योग्य व्यक्ति से परामर्श कर लेना चाहिए।

(२) क्रोधावेश में कोई कार्य नही करना।

(३) अच्छे कार्य को कल पर नहीं छोड़ना।

मुझे अच्छी तरह अनुभव हो चुका है। मैंने जो गलत कार्य किया, उसके लिए किसी से विचार नही किया। तथा दीक्षा जैसे शुभ कार्य की भावना को कल पर छोडता गया, आखिर मै अपने जीवन मे कुछ भी नही कर पाया। लक्ष्मण, इतना और याद रखना, आपके भाई राम के मर्यादा पितृभक्ति के गुण जहाँ प्रसिद्धि के कारण बनेंगे, वही शत्रु को जीतने के लिए विभीषण को अपनाना तथा सीता जैसी सती नारी को अग्नि-परीक्षा जैसे दुष्कार्य उनकी बदनामी, अपयश के कारण बनेंगे।''

कहते-कहते रावण के प्राण-पखेरू उड़ गये। व्यक्ति जितना ज्ञानी होगा, उतना ही विनयशील, नम्र होगा। आप जानते है बिन्दु कितनी छोटी होती है पर कहाँ बैठती है? सिर पर जाकर बैठती है। उसी प्रकार तुच्छ मानी व्यक्ति सिर पर बैठता है। उद्दण्ड होता है।

आज के समय मे हर स्थान पर मान का सवाल है। एक युवक ने शादी की मजूरी एक सुशील कन्या के साथ दे दी। इसी बीच उसके मित्र की शादी मे तीन लाख रुपये का दहेज आया। उस युवक के मन मे आ गया-मेरी शादी मे तो सिर्फ एक लाख मिलेगा। मेरी इज्जत का सवाल है, शादी के लिए दहेज की माँग की, असमर्थ होने पर शादी की नामजूरी हो गई।

मान कषाय की तीव्रता पतन का कारण बनती है। जिसने अपने जीवन मे नम्रता नही सीखी, उसका ज्ञान, ध्यान आदि सब व्यर्थ है। महात्मा गाधी का नाम आज बच्चा-बच्चा लेता है। आज का विद्यार्थी ज्ञान प्राप्त तो करना चाहता है पर गुरुओ का, पुस्तकों का, सरस्वती का विनय नही करता। मान कषाय मे आकर गुरुओ को ही मारने की धमकी देता है। गुरुओ के साथ बराबरी से बैठकर विद्या लेना चाहता है। बताइए, सच्चा ज्ञान कैसे मिलेगा?

मुझे परीक्षा मे पास क्यो नही किया, सरकार ने हमारी माँगे पूरी क्यो नही की, आदि कषायो को लेकर स्कूलो को व सरकारी सम्पत्ति को आग लगा देना, काँच आदि फोड़ देना, ऐसे दुष्कार्य किये जाते है। सच्चे विद्यार्थी को ऐसी मान कषाय को दूर से ही तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए।

पुस्तको को जमीन पर रखना, पुस्तको को बडल की भाँति मरोड़ना, कवर नही चढ़ाना, अनादर कर चाहे जहाँ फेक देना। यह सब क्या है? ज्ञान का अविनय है। बिस्तरो मे सोये-सोये पढना, जूते-चप्पलो मे चिट बनाकर रख लेना, गुरुओ को धमकी देकर शान से नकल करना आदि सब कार्य मान कषाय मे किये जा रहे है। ऐसा विद्यार्थी ज्ञान का सत्य रूपेण अर्जन नही कर सकता है। गेद जितनी तेजी से जमीन पर गिरती है उतनी ही ऊपर जाती है। उसी प्रकार जो जितना झुकेगा, नम्र बनेगा वह उतना ही ज्ञानी एव महापुरुष बनेगा।

एक बार रेल्वे डिब्बे मे कुछ युवक गाधी जी के ऊपर थूकते रहे। वे चुप थे। जवानी का मान युवकों में था। आखिर जब अधिक परेशान करने लगे तो गाधीजी ने कहा—''प्यारे बच्चो! तुम्हारे मुँह में कोई रोग हो गया है तो लाओ मेरे दोनों हाथो मे थूक दो मै फेक दूँगा।'' गाधीजी नगर मे पहुँचे। स्वागत की तैयारियाँ थी। बच्चे भी पीछे थे। अरे! यही गाधीजी है, शर्मिन्दा हो चरणो मे क्षमा माँगने लगे।

आपको करना है तो 'स्वाभिमान' करो, मान नही। मानी का सिर सदा नीचा होता है। जो सोचता है मेरी

नाक नीची नहीं होनी चाहिए वह निश्चित ही मरकर हाथी होता है, उसकी नाक जमीन मे लटकती है।

स्वाभिमान नाम की चीज ही नही रह गई। हमें स्वाभिमान होना चाहिए-हम किस कुल के है, और कैसे आचरण करे? हमारा धर्म, हमारा देश कौन-सा है। यदि एक बार भी कुल, देश, धर्म का स्वाभिमान जागृत हो जाये तो व्यक्ति कभी मास भक्षण, अण्डा खाना, शराब पीना, देश-समाज की सम्पत्ति को नष्ट-भ्रष्ट करना आदि कार्य नही कर सकेगा।

महानुभावो! यह वह देश है जहाँ मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने कभी भी मासादि भक्षण नही किया, गाधी जी, राजेन्द्रप्रसाद आदि नेता भी देश की सस्कृति की रक्षार्थ लड़ते रहे। पूर्ण शाकाहारी रहे। आज उसी देश समाज मे रहने वाले महावीर के अनुयायी दो नम्बर का पैसा कमाकर मास, जुआ, शराब जैसे कार्यो मे बर्बाद करते हुए नही लजाते। यही आश्चर्य है। किसी भी देश ने अपना आचार-विचार पहनावा नही छोड़ा। एक भारतवर्ष ही ऐसा है। यहाँ के अनुयायी अपनी कुल धर्म देश की परम्पराओ को छोड़कर पाश्चात्य सस्कृति मे रगना चाहते है। मान कषाय की उत्तेजना मे प्राचीन परम्पराओ को रूढ़िवाद कहकर ठुकराया जाना, असत्य कहना हमारी असमीचीनता है। समय पाकर अपने आपको सुधारने का प्रयास करे। अन्त मे मान कषाय को दूर छोड़कर मार्दव गुण का प्रकाशन करे, यही जीवन का ध्येय बनाए। ''बोलिए महावीर भगवान की जय।''

सूक्तियाँ

१ मन पर विजय पाना ही सच्ची साधना है।

२ डूबने वाले को तैरकर बचाओ, स्वय न डूबो।

३ गरीब लोग प्रेम और सहानुभूति के भूखे होते है।

४ कर्त्तव्य पालन में मिठास है।

५ घृणा को केवल प्रेम से ही जीता जा सकता है।

६ मीठी वाणी मानव की शिष्टता का द्योतक है।

७ निष्क्रियता मनुष्य के लिए अभिशाप है।

८ बुढ़ापे की झुर्रियाँ आत्मा पर मत पडने दो।

९ व्यक्तिगत चरित्र समाज की महान आशा है।

१० आत्मविश्वास शूरवीरता का रहस्य है।

११ स्वाध्याय परम तप से बढकर है।

१२ धर्म, सत्य और तप यही जीवन की सारी सम्पत्ति है।

१३ आत्म-गौरव नष्ट करके जीना मृत्यु से भी बुरा है।

१४ आत्मचिंतन से ही मुक्ति का मार्ग मिलता है।

१५ क्रोध विष है, इसका त्याग करना ही सुख कर है।

१६ तप का फल है आत्म-प्रकाश और आत्म-ज्ञान।

१७ तत्वज्ञान रहित जीवो के परिग्रह का परित्याग (मुनिपना) भी निष्फल होता है।

१८ स्व कर्तव्य का पालन करते हुए पुरुष को कभी लज्जित नही होना पड़ता।

१९ रत्नत्रय मडित एक ही गुरु श्रेष्ठ है।

२० भव्यजीव पुण्यानुबन्धिनी जैनी पूजा विधिवत् करे।

२१ तत्वज्ञ को सदा गुणो का ही आदर करना चाहिए।

२२ निरतिचार व्रत पालन ही ससार के विच्छेद का कारण है।

२३ तपश्चर्या से असाध्य कार्य भी साध्य हो जाता है।

२४ बहिरग तप के बिना अतरग तप नही होता।

२५ कर्मों की स्थिति विचित्र है किस को क्या दोष दिया जाय?

२६ कष्टो से घिरे होने पर भी धर्म का त्याग नही करना चाहिए।

२७ यथार्थ ज्ञान के उपार्जन का पुरुषार्थ महान पुरुषार्थ है।

२८ शील वह दायरा है जिसमे मनुष्य के व्यक्तित्व की निर्मिति होती है।

२९ ससार मे जो जितना सह सकता है वह उतना ही महात्मा है।

३० सत्य आत्मोन्नति की परम खुराक है।

३१ चारित्र मानवता का कलश है।

३२ उद्यम ही सफलता की कुंजी है।

३३ मानव तन केवल आत्मकल्याण के लिए है।

३४ विवेक की ऑखे पतन से बचाती है।

३५ समाधिमरण वीरो का मरण है।

३६ क्षमा मोक्षमार्ग की सिद्धि कराने वाला है।

३७ शास्त्र-स्वाध्याय मोक्षनगर मे पहुँचने के लिए वायुयान है।

३८ वाणी का सही ढग का उपयोग उन्नति का साधन बनाना है।

३९ अमुलस्य कुत सुखम्।

४० अहोपापस्य घोरत्वम्।

४१ आशाब्धि केन पूर्यति।

४२ अहो पुण्यस्य वैभवम्।

४३ आनुनयो हि माहात्म्य महतामुबुहयेत्।

४४ आस्था सता यश काये न ह्यस्थायिशरीरके।

४५ ईर्ष्या हि स्त्रीसमुद्भवा।

४६ उद्वेल शोकसागर सन्निधौ हि स्वबन्धूनाम्।

४७ उदात्ताना हि लोकोऽमयखिलो हि कुटुम्बकम्।

४८ एधोन्वेषीजनैर्दृष्ट किं वा न प्रीयते मणि।

४९ कालो विलयमियिवान्।

५० कुद्धा किं न कुर्वति।

५१ कि गोष्पदजलक्षोभी क्षोभयेजलध्येर्जलम्।

५२. कूरा. किं किं न कुर्वन्ति।

५३ कि मुधा तुषाखण्डने।

५४. गुरुस्नेहो हि कामसू ।

५५. बुद्धि कर्मानुसारिणी।

५६. भाग्ये जागृति का व्यथा।

५७ मात्सर्य. किं न नश्यति।

५८ लोको ह्यभिनवप्रिय ।

५९ वक्त्र वक्ति हि मानसम्।

६० विपाके हि सता वाक्य विश्वसन्त्यविवेकिन ।

६१ विद्या हि विद्यमानेयम्।

६२ विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।

६३ विक्रिया हि विमूढाना सम्पदापल्लवादहि।

६४ सौभाग्य हि दुर्लभम्।

६५ सता हि प्रहणता शान्त्ये खलाना दर्पकारणम्।

६६ सुकृतीनामहो वाञ्छा सफलैव हि जायते।

६७ सन्तो हि समवृत्तिक ।

६८ ससार विषयेसद्य स्वतो हि मनसो गति ।

६९ स्नेहपाशो हि जीवानामाससार न मुञ्चति।

७० समो हि नाट्य सभ्याना, सम्पदा चलादयो।

७१ श्रेयासिं बहुविघ्नानि।

७२ क्षुद्रे कि वा न साधयेत्।

७३ मात्सर्यात्कि न नश्यति।

७४ कुत्सित कर्म कि किं वा सत्परिभ्यो न रोचते।

७५ पण्डित्य हि पदार्थाना गुणदोषविनिश्चय ।

७६ निर्विवादनिधि र्नो चे नैपुण्य नाम किं भवेत्।

७७ पन्नगेन पय पीत विषस्यैव वर्धनम्।

७८ दुर्जनाग्रे हि सौजन्य कर्दमे पतित पय ।

७९ ससारविषये सद्यस्वतो हि मनसो गति ।

८० न हि प्राणवियोगेऽपि प्राज्ञैर्लंघ्य गुरोर्वच ।

८१. गुरुस्नेहो हि कामसू.।

८२. गुरुभक्ति सती मुक्त्यै।

८३ सुतप्राणा हि मातय ।

८४ वत्सलै. सह सम्वासे वत्सरो हि क्षमयते।

८५ न हि प्रसादखेदाभ्या विक्रीयन्ते विवेकिन ।

८६ दानपूजातप -शील-शालिना कि न सिध्यति।

८७ अहिंस्यैव भूताना कार्यं श्रेयोनुशासनम्।

८८. प्राणप्रयाणवेलाय, न हि लोके प्रतिक्रिया।

८९ पीयूष न हि नि शेष पिबन्नेव सुखायते।

९० अविचारितरम्य हि रागान्धाना विचेष्टितम्।

९१ नटायन्ते हि भूभुज ।

९२ नहि रक्षितुमिच्छ तो निर्दहन्ति फलद्रुमम।

९३ सत्यामप्याभिषङ्गार्त्ते जागर्त्येव हि पौरुषम्।

९४ पावके नहि पात स्यादातपक्लेशशान्तये।

९५ प्रदीपैर्दीपिते देशे न ह्यस्ति तमसो गति ।

९६ दु खचिन्ता हि तत्क्षणे।

९७ विपाके हि सता वाक्य विश्वसन्त्यविवेकिन ।

९८ न ह्यकालकृता वाञ्छा सपुष्णाति समीहितम्।

९९. आस्था सता यश भक्ति स्यादात्मप्राणनपेक्षणी।

१०० गाढा हि स्वामि भक्ति स्यादात्मप्राणनपेक्षणी।

१०१ राजा हि पर देवता।

१०२ पित्तज्वरवत क्षीर त्तिक्तमेव हि भासते।

१०३. दोष नार्थी हि पश्यति।

१०४ पयो ह्यास्यगत शक्य पाननिष्ठीवनद्वये।

१०५. संभ्रमेन हि तिष्ठति राजसम्।

१०६ स्त्रीष्ववज्ञा हि दु:सहा।

१०७ तत्वज्ञान जागर्ति विदुषामार्तिसंभवे।

१०८ दीपनाशे तमोराशि किमाह्वान्मपेक्षते।

१०९ दग्धभूम्युप्तबीजस्य न ह्यङ्कुरसमर्थता।

११० अल क्रूरतमो विधि।

१११ न ह्यङ्गुलिरसाहाय्या स्वय शब्दायतेतराम।

११२ गत्यधीन हि मानसम्।

११३ अनन्ताह्यसुभद्भवा ।

११४ पीड़ा ह्यभिनवा नृणा प्रायो वैराग्यकारणम्।

११५ अविचारितरम्य हि रामासपर्कज सुखम्।

११६ आस्थाने हि मतिर्भवेत्।

११७ मोहात् देहिन मुह्यन्ति।

११८ दूसरो के दोषों की तरह अपने दोषो को देखनेवाला ही सत्पुरुष कहलाता है।

११९ दृष्टान्ते हि स्फुटा मति ।

१२० पापाद्भिभ्यतु पण्डिता ।

१२१ पुण्ये किं वा दुरासदनम्।

१२२ सनिधौ हि स्वबन्धूना दु खमुन्मस्तक भवेत्।

१२३ निश्चलादर्सिवादाद्वस्तुनो हि विनिश्चय ।

१२४. एधोन्वेषिजनैर्दृष्ट किं वा न प्रीयते मणि ।

१२५ प्राणवत्प्रीतये पुत्रा।

१२६ समीहितार्थससिद्धौ मन कस्य न तुष्यति।

१२७ अवश्य ह्यनुभोक्तव्य कृत कर्म शुभाशुभम्।

१२८ सौभ्रात्त हि दुरासदम्।

१२९ भाग्ये जागृति का व्यथा।

१३० स्वय वृण्वन्ति हि स्त्रिय ।

१३१ गुरु एव देवता।

१३२. पुण्यफलानि हि निर्वेगो भव्यानां कालपाकत ।

१३३ जैनी तपस्या हि स्वैराचारविरोधिनी।

१३४ वैदुष्ये हि वशयव वैमव सदुपास्यता सदस्यता।

१३५. माणिक्यसम हि लब्धस्य शुद्धेर्मोदो विशेषत.।

१३६ परिपालिनधर्मो हि भवाब्धेस्तारको गुरु॰।

१३७ गुरुभक्ति सती मुक्त्यै क्षुद्र किं वा न साधयेत्।

१३८ अमूलस्य कुत स्थिति।

१३९ अपथघ्नी हि वाग्गुरो।

१४० अतिहेतो विकारस्य तद्भावो हि धीरता।

१४१ अजलाशयसभूतभमृत हि सतां वच।

१४२. आत्मैव गुरुयात्मन।

१४३ प्राणप्रयाणवेलाय न हि लोके प्रतिक्रिया।

१४४ निष्प्रत्यूहा हि सामग्री नियत कार्यकारिणी।

१४५ गर्भाधान क्रियामात्रन्यूनौ हि पितरौ गुरु।

१४६ असमानकृतावज्ञा पूज्याना हि सुदु सहा।

१४७ स्वदेशे हि शशप्रायो बलिष्ठ कुञ्जरादपि।

१४८ किं स्यात्किकृत इत्यैव चिन्तयन्ति हि पीड़िता।

१४९ असुमत्ताम सुभ्योऽब्पि गरीयो हि मृश धनम्।

१५० न ह्ययोग्ये स्पृहा सताम्।

१५१ गात्रमात्रेण भिन्न हि मित्रत्व मित्रता भवेत्।

१५२ निरङ्कुश हि जीवानामैहिकोपारयाचिन्तनम्।

१५३ रोचते न हि शौण्डाय परपिण्डादिदीनता।

१५४ सर्वदा भुज्यमानो हि पर्वतोऽपि परिक्षयी।

१५५ अत्यक्त मरण प्राणैः प्राणिना हि दरिद्रता।

१५६ काकार्यफलनिम्बेऽपि श्लाघ्यते न हि आम्रवत्।

१५७ लवणाब्धि गत हि स्यान्नादेय विफल जलम्।

१५८ वार्धिमेव धनार्थी किं गाहते पार्थिवानपि।

१५९. न हि वेद्यो विपत्क्षण॰।

१६०. अज्ञातज्ञस्य को भेदों हेलोश्चेद्विकृतिर्द्वयोः।

१६१ तत्वज्ञान हि जीवाना लोकद्वयसुखावहम्।

१६२ सत्यायुषि हि जायेत प्राणिना प्राणरक्षणम्।

१६३ राज्यभ्रष्टोऽपि तुष्ट स्याल्लब्धप्राणो हि जन्तुक ।

१६४ दु खार्थोऽपि सुखार्थो हि तत्वज्ञानधने सति।

१६५ मध्ये मध्ये हि चापल्य मोहादपि योगिनाम्।

१६६ ससृतौ व्यवहारस्तु न हि मायाविवर्जित ।

१६७ दु खस्यानन्तर सौख्यमतिमात्र हि देहिनाम्।

१६८ मित्र धात्रीपतिं लोके कोऽपर पश्यत सुखी।

१६९ प्राणेष्वपि प्रमाण यत्तद्धिमित्र मितीष्यते।

१७० अग्ङ्जाया हि सूत्यायामयोग्य कालयापनम्।

१७१ स्त्रीणामेव हि दुर्मति ।

१७२ स्त्रीरागेणात्त को नाम गत्या न प्रतारिता ।

१७३ अपुष्कला हि विद्य स्यादवज्ञैकफला क्वचित्।

१७४ अनवद्या हि विद्या स्याल्लोकद्वयफलवहा।

१७५ अन्तिक कृतपुण्याना श्रीरन्विष्य हि गच्छति।

१७६ अन्याभ्युदयखिन्नत्व तिद्ध दौर्जन्यलक्षणम्।

१७७ शस्त्र वस्तु हि भूभुजाम्।

१७८ प्रकृत्या स्यादकृत्ये धीर्दु शिक्षाया तु किं पुन ।

१७९. अल काकसहस्रेभ्य एकैव हि दृषध्दवेत्।

१८० शास्त्र वस्तु हि भूभुजाम्।

१८१ रागान्धाना वसन्तो हि बन्धुरग्नेवानिल ।

१८२ लोको ह्यभिनवाप्रिय ।

१८३ क्रूरा किं किं न कुर्वन्ति कर्म धर्म पराङ्मुखा ।

१८४ कारुण्यमन्येषा स्वस्येव व्यसने व्यथा।

१८५ न ह्यकालकृता यत्नो भूयानपि फलप्रद ।

१८६ कालायस हि कल्याण कल्पते रसयोगत ।

१८७ मुक्तिब्देन मन्त्रेण देवत्व न हि दुर्लभम्।

१८८ अनवद्या सती विद्या लोके किं न प्रकाशते।

१८९ निर्विवाद विधिर्नो चैन्नेपुण्य नाम किं भवेत्।

१९० न ह्यकालकृत कर्म कार्यनिष्पादनक्षमम्।

१९१ निर्विवाद वितन्वाना न स्वतेन न भूतले।

१९२ न ह्यत्र रोचतेन्यायमोर्ष्यादूषित चेतसे।

१९३ न हि भेद्य मन स्त्रिया।

१९४ न ह्यनिष्टेष्ट सयोगवियोगा ममरून्तुदम्।

१९५ विपदोऽपि हि तभ्दीतिर्मूढाना हन्त बान्धवा।

१९६ न हि सन्तीह जन्तुनामपाये सती बान्धवा।

१९७ समदु ख-सुखा एव बन्धवोह्यत्र बान्धवा।

१९८ स्वापद न पश्यन्ति सन्त पारार्थ्यतत्परा।

१९९ स्वास्थ्येह्यदृष्ट पूर्वाश्च कल्पयन्तेव बन्धुताम्।

२०० योग्यायोग्यविरायोऽय रागान्धाना कुतो भवेत्।

२०१ इष्टस्थाने सती वृष्टिस्तुष्टये हि विशेषत।

२०२ प्रेक्षावन्तो वितवन्वन्ति न ह्यपेक्षामपेक्षिते।

२०३ स्वस्यैव सफलो यत्न प्रीयते हि विशेषत।

२०४ दुर्लभो हि वरो लोके योग्यो भाग्यसमन्वित।

२०५ न हि नीचमानोवृत्तिरेकरूपास्ति भवेत्।

२०६ अदोषोपहतोऽप्यर्थ परोक्त्या नैव दूष्यते।

२०७ प्रयत्नेन हि लब्ध स्यात्प्राय स्नेहस्य कारणम्।

२०८ सर्पिष्पातेन चापि सुतरा भवेत्।

२०९ पन्नगेय पय पीत विषस्यैव हि वर्धनम्।

२१० मृगा. किं नाम कुर्वन्ति मृगेन्द्र परित स्थिता।

२११ तत्त्वज्ञान जल नोचेत्क्रोधाग्नि· केन शाम्यति।

२१२ अलङ्घय हि पितुर्वाक्यमपत्यै पथ्यकाङ क्षिभि।

२१३ न हि वारयितुं शक्यं पौरुषेण पुराकृतम्।

२१४. सतां हि प्रह्वता शान्त्यै खलानां दर्पकारणम्।

२१५. सचेतनः कथ नुस्यादकुर्वन्प्रत्युपक्रियाम्।

२१६ न हि स्ववीर्यगुप्ताना भीतिः केसरिणामिव।

२१७ सुकृतीनामहो वाञ्छा सफलैव हि जायते।

२१८ सदसत्त्व हि वस्तुना ससर्गादेव दृश्यते।

२१९ प्रतिहन्तुं नहि प्राज्ञै प्रारब्ध पार्यते परै ।

२२० पावनानि हि जायन्ते स्थानान्यपि सदाश्रयात्।

२२१ कालायस हि कल्याण कल्पते रसयोगत ।

२२२ निर्व्याज सानुकम्पा हि सार्वा सर्वेषु जन्तुषु।

२२३ भव्यो वा स्यान्न वा श्रोता परार्थ्य हि सता मन ।

२२४ न हि कार्यपराचीनैर्मृग्यते भुवि कारणम्।

२२५ मुमुक्षूणा हि कायोऽपि हेय किमपर पुन ।

२२६. रक्तेन दूषित वस्त्र न हि रक्ते शुध्यति।

२२७ नादाने किंतु दाने हि सता तुष्यति मानसम्।

२२८ तादात्विक सुखप्रीति ससृतौहि विशेषत ।

२२९ प्रत्यक्षे च परोक्षे च सन्तो हि समवृत्तिका ।

२३०. शरण्य सर्वजीवाना पुण्यमेव हि नापरम्।

२३१ भव्योवा स्यान्न वा श्रोता परार्थ्यं हि सता मन ।

२३२ पतन्तः स्वयमन्येषा न हि हस्तावलम्बनम्।

२३३ समीहितेऽपि सामर्थे प्रच्यवो हि प्रकृष्यते।

२३४ अपदानमशक्तीनामभ्दुताय हि जायते।

२३५ सनिधाने समर्थाना वराको हि परोजन ।

२३६ विधिर्घटयतीष्टार्थे स्वयमेव हि देहिन ।

२३७ वपुर्वक्ति हि सुव्यक्तमनुभावमनक्षरम्।

२३८ आराधनैकसपाधा विद्या न ह्यन्यसाधना।

२३९ कृतार्थाना हि पायार्थ्यमैहिकार्थपराड् मुखम्।

२४० विय खलु विद्यानां दोग्ध्री सुरभिरञ्जसा।

२४१ पुत्रमात्रं। मुदे पित्रोर्विद्यापात्र तुर्किं पुन ।

२४२. विद्याप्रदायिना लोके का वा स्यात्प्रत्युपक्रिया।
२४३ शक्यमेव हि दातव्य सादरैरपि दातृभि ।
२४४ उदारा खलु मन्यन्ते तृणायेद जगत्त्रयम्।
२४५ तीरस्था' खलु जीवन्ति न हि रागाब्धिगाहिन ।
२४६ वत्सलै सह संवासे वत्सरो हि क्षणायते।
२४७ विवक्षालिग्डत्त हि स्यात्प्रस्तु' प्रश्न कुतूहलम्।
२४८ अयुक्त खलु दृष्ट वा श्रुत वा विस्मयावहम्।
२४९ संसारविषये सद्य स्वतो हि मनसो गति ।
२५० आस्थाया हि बिना यत्नमस्ति वाक्यायचेष्टितम्।
२५१ भ्रातुर्विलोकन प्रीत्यै विप्रयुक्तस्य किं पुन ।
२५२ विस्मृत हि चिर भुक्त दु खे भृश दु खायते जन ।
२५३ विपञ्च सपदे हि स्याद्भग्य यदि पचेलियम्।
२५४ ध्यातेऽपि हि पुरा दु खे भृश दु खायते जन ।
२५५ चतुराणा स्वकार्योक्ति स्वमुखान्न हि वर्तते।
२५६ विद्वेष पक्षपातश्च प्रतिपात्र च भिद्यते।
२५७ न हि प्रसादखेदाभ्या विक्रियन्ते विवेकिन ।
२५८ बन्धोर्बन्धै च बन्धौ हि बन्धुता चेदवञ्चिता।
२५९ पीड़ाया तु भूश जीवा अपक्षन्ते हि रक्षकान्।
२६० एधोगवेषिभिर्भाग्ये रत्न च पि हि लभ्यते।
२६१ एक कोटिगत स्नेहो जडाना खलु चेष्टितम्।
२६२ कृतिनोऽपि न गण्या हि वीतस्फीत परिच्छदा ।
२६३ एकेच्छानामतुच्छाना न ह्यन्यत्सगमात्सुखम्।
२६४ विशेते हि विशेषज्ञो विशेषाकारवीक्षणात्।
२६५ एककण्ठेषु जाता हि बन्धुता ह्यवतिष्ठते।
२६६. सज्जनाना हि शैलीय सक्रमारम्भशालिता।
२६७ जीवाना जननी स्नेहो न ह्यन्यै प्रतिहन्यते।
२६८ अम्बादृष्टापूर्वा च द्रष्टु को नाम नेच्छति।

२६९ रागद्वेषादि तैनैव बलिष्ठेन हि बाध्यते।

२७० आवश्यकेऽपि बन्धूना प्रतिकूल्य हि शल्यकृत।

२७१ अनुनयो हि माहात्म्य महातामुपबृहयेत्।

२७२ तत्वज्ञानतिरोभावे रागादि हि निरङ्कुशाम्।

२७३ लाभलाभमभीच्छा स्यान्न हि तृप्ति कदाचन।

२७४ सामग्रीविकल कार्यं न हि लोके विलोकितम्।

२७५ मुग्धोष्वति-विदग्धाना युक्त हि बलकीर्तनम्।

२७६ मुग्धा श्रुतविनिश्चेया न हि युक्तिवितर्किण ।

२७७ अमित्रो हि कलत्रं च क्षत्रियाणा किमन्यत ।

२७८ विचार्यैवेतरै कार्यं कार्यं स्यात्कार्यवेदिभि ।

२७९ न हि मातु सजीवेन सोढव्या स्याद्दुरासिका।

२८० विश्रृङ्खला न हि क्वापि तिष्ठन्तीन्द्रियदन्तिन ।

२८१. ममत्वधी कृतो मोह सविशेषो हि देहिनाम्।

२८२. संपदामापदा चाप्तिर्व्याजेनैव हि केनचित।

२८३. वशिना हि मनोवृत्ति स्थान एव हि जायते।

२८४ अञ्जसा कृतपुण्याना न ही वाञ्छापि वञ्चिता।

२८५ चिरकाङक्षितसप्राप्त्या प्रसीदन्ति हि देहिन ।

२८६. वाञ्छिता यति वाञ्छेयु ससारैव हि ससृति ।

२८७ अन्यररोधि न हि क्वापि वर्तते वहिना मन ।

२८८ ऐहिकातिशय प्रीतिरतिमात्रा हि देहिनाम्।

२८९ बहुद्वारा हि जीवाना पराराधन दीनता।

२९० हेतुच्छलोपलम्भेन जृम्भते हि दुराग्रह ।

२९२ अनपायादु पायाद्धि वाञ्छितप्तिर्मनीषिनाम्।

२९३ करुणामात्रपात्र हि बाला वृद्धाश्च देहिनाम्।

२९४ अनवद्या सती विद्या फलमूकापि कि भवेत्।

२९५ अन्यैरशक्ङनीया हि वृत्तिर्नीतिज्ञगोचरा ।

२९६ विषयेषु व्यरज्यन्त वार्धक हि विरक्तये।

२९७ न ह्यसत्य सता क्व ।

२९८ अविवेकिजनाना हि सता वाक्यमसगतम्।

२९९ सर्वथा दग्धबीनाभा कुतो जीवन्ति निर्गुणा ।

३०० भवितव्यानुकूल हि सकल कर्मदेहिनाम्।

३०१ अन्तस्तत्त्वस्य याथात्म्ये न हि वेषो नियामक ।

३०२ परस्परातिशायी हि मोह पञ्चेंद्रियोद्भव ।

३०३ पञ्चा हि बुध्यन्ते सदसन्तौ कुतश्चन।

३०४ येषु हि तात्पर्यं स्वभावादेव देहिनाम्।

३०५ दानपूजातप शीलशालिना कि न सिध्यति।

३०६ हन्त कापटिका लोके बुधायन्ते हि मायया।

३०७ आ समीहितनिष्पत्तेराराध्या खलुवैरिण ।

३०८ उपायपृष्टरुढा हि कार्यनिष्ठ निरङ्कुशा ।

३०९ आमोहो देहिनामास्थामस्थानेऽपि हि पात्येत्।

३१० स्थाने हि कृतिना गिर ।

३११ वीरेण हि मही भोग्या योग्यतायाँ च कि पुन ।

३१२ आत्मनीने विनात्मानमञ्जसा न हि कश्चन।

३१३ स्ववधाय हि मूढात्मा कृत्योत्थापनमिच्छति।

३१४ मरुत्सखे मरुद्धते महया कि वा न दह्यते।

३१५ विपदो वीतपुण्याना तिस्ठन्त्येव हि पृष्ठत ।

३१६ मत्सराणा हि नोदेति वस्तुगाथात्म्यचिन्तनम्।

३१७ सुजनेतरलोकोऽयमधुना न हि जायते।

३१८ दुर्बला हि बलिष्ठेन बाध्यन्ते हन्त ससृतौ।

३१९ मुधावधादि भीत्या हि क्षत्रिया व्रतिनो मता ।

३२० समौ हि जाटयसभ्याना सपदा च लयोदयौ।

३२१. भगवद्दिव्यसान्निध्ये निष्प्रत्यूहा हि सिद्धय ।

३२२ फलमेव हि यच्छन्ति पनसा इव सज्जना ।

३२३. न ह्यासक्त्या तु सापेक्षो भानु पद्मविकासने।

३२४ स्वयं नाशी हि नाशक।

३२५ स्वभावो न हि वार्यते।

३२६ दुग्ध च भाति कल्याण न केनाग्ङारविशुद्धता।

३२७ खातापि हि नदी दत्ते पानीय न पयोनिधि।

३२८ राजन्वती सती भूमि कुतो वा न सुखायते।

३२९ न ह्यस्थानेऽपिरुद् सताम्।

३३० महिषै क्षुभित तोय न हि सद्य प्रसीदति।

३३१ अविशेष परिज्ञाने न हि लोकोऽनुरज्यते।

३३२ चिरस्थाय्यपि नष्ट स्याद्विरुद्धार्थे हि वीक्षिते।

३३३ चिरकाङ्क्षितलाभे हि तृप्ति स्यादतिशयिनी।

३३४ काचो हि याति वैगुण्य गुण्यता हारगो मणि।

३३५ प्रजानां जन्मवर्जं हि सर्वत्र पितरौ नृपा।

३३६ वृषला किं न तुष्यन्ति शालेये बीजवापिन।

३३७ कालातिपात मात्रेण कर्तव्य हि विनश्यति।

३३८ तपसा हि सम राज्य योगक्षेमप्रपञ्चत।

३३९ त्वापि कुण्डपातोऽय कुत्सिताना हि चेष्टितम्।

३४० पाके हि पुण्यपापाना भवेद्वाह्यच कारणम्।

३४१ न हि खादापतन्ती चेददत्नवृष्टिर्निवार्यतो।

३४२ भस्मेन रत्नहारोऽय पडितै र्न हि दह्यते।

३४३ सत्यपाये शरण्य न तत्स्वास्थ्ये हि सहस्तधा।

३४४ मोहक्षेमविहीनस्य परिणामो हि निर्मल।

३४५ न हि तण्डुलपाक स्यात्पावकादिपरिक्षये।

३४६ कारणे श्रृम्भमाणोऽपि न हि कार्यपरिक्षय।

३४७ कणिशोद्गमवैधुर्ये केदारादिगुणेन किम्।

३४८ भस्मेन दहतो रत्न मूढ क स्यात्परो जन।

दीपक अधकार को खाकर कालिमा या कज्जल ही उगलता है उसी प्रकार अभक्ष्य पदार्थो का सेवन करने वाले मानव की बुद्धि अभद्रता ही उगलती है।

जिस प्रकार दीपक अन्धकार का विनाश करता हुआ प्रकाश की वृद्धि करता है उसी प्रकार विवेकी प्राणी दुर्व्यसनो के जनक अज्ञानरूपी अन्धकार को पाटकर समीचीनता को प्रकाश मे लाता है।

जिस प्रकार दीपक स्वय जलते हुए भी प्राणीमात्र को प्रकाश देता है उसी प्रकार सेवाभावी होना ही हमारी मानवता का प्रकाश है।

पतितों को पावन बनाने की योग्यता धर्म मे ही है।

अन्य देशो से अधिक धार्मिक सस्कृति रूप चारित्र का भण्डार भारतवर्ष मे ही था परन्तु वर्तमान समय मे मानव-जीवन की प्रत्येक दशा (अवस्था) मे यहाँ चारित्रनाशक दानवता रूप भीषण अशान्ति का ताण्डव नृत्य चल रहा है।

उत्तम पुरुषो की उत्पत्ति अन्य जाति की माता और अन्य जाति के पिता से हुई कहना तथा परजीवों के लिए मिथ्या अपवाद की रचना करना कुश्रुतज्ञान है।

महत्त्वाकाक्षी का हृदय उसकी रक्षा पूर्ति के लिए ही महान होता है, अन्य के लिए नही।

जब तक दीपक दीपक के रूप मे रहता है तब तक प्रकाश देता है और जब वह ज्वाला का रूप धारण कर लेता है तो सब कुछ भस्म कर देता है। इसी प्रकार मानव मानव के रूप मे रहता है तब तक ज्ञान, विनय और कीर्ति से सबको प्रकाशित करता है और जब कषायो की ज्वाला से दग्ध होता है तो सब कुछ नष्ट कर लेता है।

जय, विजय और प्रभुत्व की आकाक्षाएँ मानव को मानवता से पतित कर दानव बना देती है।

नदी और पर्वत जितना देश के खण्ड-खण्ड नही कर पाए, उससे अधिक मानव की अर्थ-लिप्सा ने उसे खण्डित किया है।

झपट्टा मार कर शिकार करने वाले बाज की तरह विवेकी जनो को लोकमर्यादा, कुलमर्यादा का उल्लघन कर किसी व्यामोहवश यद्वा-तद्वा आचरण करना शोभनीय नही।

स्वार्थरत प्रभुत्व को धिक्कार है क्योंकि इसके कारण मनुष्य मिल-जुल कर सुखमय जीवन नही बिता सकते।

आत्मा मे अपरिमित शक्ति है। वह शक्ति दुधारी है। उसका सदुपयोग या दुरुपयोग करना स्वय पर निर्भर है।

भो आत्मन्! शुद्ध भाव-सत्यता से किया गया पश्चाताप बडे-बड़े पापो/दोषो को नष्ट करने में समर्थ है।

प्रतिकूल परिस्थितियों में विचलित न होना ही महानता की निशानी है।

कषाय, कीर्ति-कामना और हठग्राहिता से जिन्होंने मुक्ति पा ली, वे ही सच्चे मानव हैं।

सुधारवादी की हेकडी से सामाजिक और धार्मिक मर्यादा की रक्षा करना सबका कर्त्तव्य है।

भगवान आदिनाथ से महावीर पर्यन्त किसी भी तीर्थंकर ने सामाजिक सगठन के लिए कभी धार्मिक शिथिलता को स्वीकार नहीं किया जब कि सख्या बढ़ाने के लिए कुछेक धर्मानुयायियों ने धार्मिक शिथिलता को अवश्य अपनाया

है। उसका फल सामने है।

दुष्ट परिणति वाला मिथ्यादृष्टि यदि धर्मश्रवण व अध्ययन करता भी है तो उसमे से दूध पीने वाले भुजंग की तरह विष ही उगलता है।

भो आत्मन्! तीर, भाला, कटार आदि शस्त्रो को चलाना सीख लेने मात्र से सफलता नही मिलती, उसकी विशेषता तो अचूक निशाने मे है। शस्त्र और शास्त्र का निशाने पर पहुचना ही उनकी दक्षता का द्योतक है।

जिस प्रकार पर्वत नदियों के मूल है और शासक मर्यादा के मूल; उसी प्रकार आचार्य श्रमणसस्कृति के मूल हैं।

भो! आत्मन्! वेग से प्रवाहित होने वाली नदियो का जल, आयु के निषेक और यौवन का तेज कभी लौटकर नहीं आते।

यथार्थ (सत्य) वचनो से धर्म की जागृति होती है, दया दान आदि से उसकी वृद्धि होती है और क्षमा से उसे स्थायित्व मिलता है परन्तु लोभ से वह नष्ट हो जाता है-

सच्चा दान वही है जिसमे छिपी नही है फल की चाह।
सच्चा धर्म वही है जिसमे, रहे निरन्तर एक प्रवाह।।

वर्तमान में हमारे श्रीमान्, धीमान् और त्यागीगण भी अपनी सामाजिक धार्मिक गरिमा को खो बैठे है। आम्नाय को धर्म मे घसीट कर सगठन बनाना चाहते है परन्तु क्या कभी केमिकल नगीने, हीरे बन सकते है।

समय प्रतिक्षण बदलता और दौड़ता रहता है। ऐसी स्थिति मे सही मार्ग अपनाने से पीछे न रह कर आत्मज्योति के महत्त्व को अपनाने का अभ्यास करते रहना चाहिए।

सिंह मे क्रूरता और सर्प मे दुष्टता स्वाभाविक है, उसी प्रकार वर्तमान युग के मानवो मे स्वार्थान्धता रूप क्रूरता स्वाभाविक सी बन रही है।

जीवन मे ज्ञान के साथ श्रद्धान की आवश्यकता है। उसके अभाव में सफलता की कुंजी नही मिल सकती, क्योंकि इसकी गहराई मे पहुचना ही चारित्र का मूल है और तीनो का होना ही अभेद रत्नत्रय का साधन है उसके अभाव मे कर्मो पर विजय नही पाई जा सकती।

विनम्र और विनयी शिष्य ही गुरुजनो से ग्रन्थो का अनुशीलन कर ज्ञान और चारित्र प्राप्त कर सकता है, अपनी चलाने वाले कुतर्की नही।

भौतिक शिक्षा एव विविध प्रलोभनो के प्रभाव से मर्यादाघातक परिणति का प्रादुर्भाव ही राक्षस वृत्ति का मूल और मानवता का विराधक है। प्रतिज्ञा-पालन रूप सद्भावना का होना ही आगम, सिद्धान्त और सस्कृति की सेवा है।

जो प्राणी वासनाओ के वशीभूत होकर अपने धारण किये हुए व्रत, शील, सयम को भग कर लेता है, वह नियम से दु ख ही भोगता है।

●●●

प्रात: प्रतिदिन जाप कीजिए

❑ *(आचार्य विमलसागरजी की डायरी से)*

१ ओम् ह्री अर्हं णमो जिणाण।

२. ओम् ह्री अर्हं णमो ओहि जिणाण।

३. ओम् ह्री अर्हं णमो परमोहि जिणाण।

४. ओम् ह्री अर्हं णमो सव्वोहि जिणाण।

५ ओम् ह्री अर्हं णमो अणतोहि जिणाण।

६ ओम् ह्री अर्हं णमो कोट्टबुद्धीण।

७ ओम् ह्री अर्हं णमो बीजबुद्धीण।

८ ओम् ह्री अर्हं णमो पादाणुसारीण।

९ ओम् ह्री अर्हं णमो सभिण्णसोदाराण।

१० ओम् ह्री अर्हं णमो सयबुद्धाण।

११ ओम् ह्री अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाण।

१२ ओम् ह्री अर्हं णमो बोहियबुद्धाण।

१३ ओम् ह्री अर्हं णमो उजुमदीण।

१४ ओम् ह्री अर्हं णमो विउलमदीण।

१५ ओम् ह्री अर्हं णमो दसपुव्वीण।

१६ ओम् ह्री अर्हं णमो चउदसपुव्वीण।

१७ ओम् ह्री अर्हं णमो अट्टगमहाणिमित्तकुसलाण।

१८ ओम् ह्री अर्हं णमो विउव्वइड्ढि पत्ताण।

१९ ओम् ह्री अर्हं णमो विज्जाहराण।

२० ओम् ह्री अर्हं णमो चारणाण।

२१ ओम् ह्री अर्हं णमो पण्णसमणाण।

२२ ओम् ह्री अर्हं णमो आगासगामीण।

२३ ओम् ह्री अर्हं णमो आसीविसाण।

२४ ओम् ह्री अर्हं णमो दिट्टिविसाण।

२५ ओम् ह्री अर्ह णमो उग्गतवाण।

२६ ओम् ह्री अर्ह णमो दित्ततवाण।

२७ ओम् ह्री अर्ह णमो तत्ततवाण।

२८ ओम् ह्री अर्ह णमो महातवाण।

२९ ओम् ह्री अर्ह णमो घोरतवाण।

३० ओम् ह्री अर्ह णमो घोरगुणाण।

३१ ओम् ह्री अर्ह णमो घोरपरक्कमाण।

३२ ओम् ह्री अर्ह णमो घोरगुणबभयारीण।

३३ ओम् ह्री अर्ह णमो आमोसहिपत्ताण।

३४ ओम् ह्री अर्ह णमो खेल्लोसहिपत्ताण।

३५ ओम् ह्री अर्ह णमो जल्लोसहिपत्ताण।

३६ ओम् ह्री अर्ह णमो विप्पोसहिपत्ताण।

३७ ओम् ह्री अर्ह णमो सव्वोसहिपत्ताण।

३८ ओम् ह्री अर्ह णमो मणबलीण।

३९ ओम् ह्री अर्ह णमो वचिबलीण।

४० ओम् ह्री अर्ह णमो कायबलीण।

४१ ओम् ह्री अर्ह णमो खीरसवीण।

४२ ओम् ह्री अर्ह णमो सप्पिसवीण।

४३ ओम् ह्री अर्ह णमो महुर-सवीण।

४४ ओम् ह्री अर्ह णमो अमिय-सवीण।

४५ ओम् ह्री अर्ह णमो अक्खीण-महाणसाण।

४६ ओम् ह्री अर्ह णमो वड्ढमाणाण।

४७ ओम् ह्री अर्ह णमो सिद्धायदणाण।

४८ ओम् ह्री अर्ह णमो भयवदो महदि महावीर वड्ढमाणबुद्धरिसीणो चेदि।

तीर्थाटन व धर्म प्रभावना

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

दिगम्बर मुनि का स्वरूप एवं उनका विहार

विहार करते हुए भी दिगम्बर मुनि कभी भी किसी भी जीव को पीड़ा नही पहुचाते है, वे सदा जीव-दया मे प्रवृत्त रहते है। जैसे जननी पुत्र-पुत्रियो पर दया करती है वैसे ही दिगम्बर मुनि सर्वत्र सर्वदा प्राणी मात्र पर दयाभाव रखते है।

स्वतत्र विहार करने वाले मुनिराज धर्म की प्रवृत्ति के लिए सूर्योदय के बाद तथा सूर्यास्त से पहले गमन करते है। आगे की चार हाथ भूमि देखते हुए ही गमन करते है। उन मुनियों के ऐसे शुध्द गमन करने को उत्तम विहार-शुध्दि कहते है।

मुनि जीव-योनि सूक्ष्मकाय, बादरकाय आदि समस्त जीवो पर कृपा करने में तत्पर रहते है जो ज्ञानरूपी नेत्रो को धारण करते है और वायु के समान परिग्रह-रहित है, ऐसे मुनि प्रयत्नपूर्वक मन-वचन-काय से पापो का त्याग करते है। वे मुनि विहार करते हुए किसी भी कारण से एकेन्द्रियादिक जीवो की बाधा या विराधना न तो कभी स्वय करते है और न कभी किसीसे कराते है। वे मुनिराज तृण, पत्र, प्रवाल (कोमल पत्ते), हरे अकुर, कद, बीज, फल आदि समस्त वनस्पतिकायिक जीवो को पैर आदि से न तो कभी मर्दन करते है, न मर्दन कराते है, न उनको छेदते है, न छिदवाते है, न स्पर्श करते है, न स्पर्श कराते है, और न ही उनको पीड़ा पहुचाते है न ही पहुँचवाते है। वे मुनि न तो खोद-पीट कर पृथ्वीकायिक जीवो को बाधा पहुँचाते है न प्रक्षालनादि के व्दारा त्रसकायिक जीवो को बाधा पहुँचाते है। वे न तो आग बुझाकर या जलाकर अग्निकायिक जीवो को हानि पहुँचाते है, न पखादिक से हवा कर वायुकायिक जीवो को बाधित करते है और न गमन करने, बैठने या सोने मे त्रस्त जीवों को बाधा देते हैं। वे चतुर मुनि मन-वचन-काय और कृत, कारित, अनुमोदना से इन समस्त जीवो को कभी पीड़ा नही पहुँचाते।

ऐसे मुनि शस्त्ररहित निशक होकर विहार-गमन करते है—उनके श्रेष्ठ हाथो मे डडा आदि हिंसा का कोई उपकरण नही होता। वे सर्वथा मोहरहित और ससाररूपी भयानक समुद्र मे गिरने से अपने को बचाते हुए सदा प्रमादहीन

और सावधान बने रहते है।

मुनि चर्या-परीषह को जीतते हुए आत्मा के परिभ्रमण का चिंतवन करते है। यदि उनके पैर मे कॉटा लग जाय या पत्थर के टुकड़ो की धार छिद जाय और उनसे उनको पीड़ा होती हो तो भी वे अपने मन मे कभी क्लेश नही करते है। क्लेश से वे सदा दूर ही रहते है। वे चर्या परिषह रूपी शत्रुओं को जीतने के लिए सदा तत्पर रहते हैं, तथा चिन्तन करते है कि मेरी यह आत्मा चारो गतियो मे चिरकाल से परिभ्रमण करती रहती है। आत्मा का यह परिभ्रमण अत्यन्त निंद्य है, समस्त दु खो की खान है और कर्म के अधीन है। परीषहो को जीतने के लिए मुनि विहार करते है—अत्यन्त निराकुल हो वे अपने हृदय मे ससार, शरीर और भोगो के प्रति सवेग धारण कर समस्त आगम का चिंतवन करते और ज्ञान तथा ध्यानरूपी अमृत का सदा पान करते रहते है। वे अपनी इच्छानुसार नगर, पत्तन , कोट, पर्वत, गॉव, जगल, वन आदि सुन्दर-असुन्दर समस्त स्थानो मे विहार करते रहते है, उस समय यद्यपि वे मार्ग को भली भॉति देखते है, तथापि स्त्रियो के रूप आदि को देखने मे वे अधे ही बने रहते है। यद्यपि वे श्रेष्ठ तीर्थो की वन्दना के लिए विहार करते है, चलते है, तथापि कुतीर्थो के लिए वे लगड़े ही बने रहते है। यद्यपि वे श्रेष्ठ कथाओं को कहते है तथापि विकथाओ को कहने के लिए वे गूँगे बन जाते हैं। यद्यपि उपसर्गों को जीतने के लिए वे शूरवीर है तथापि कर्म बधन करने के लिए वे अपार कायर बन जाते है। अपने शरीर आदि से वे अत्यन्त निष्पृह है तथापि मुक्ति को सिध्द करने की वे तीव्र लालसा रखते है। वे सर्वत्र अप्रतिबध्द है, किसी से बधे हुए या किसी के अधीन नही है तथापि वे जिनशासन के सदा अधीन रहते है। ऐसे वे प्रमाद रहित मुनिराज मोह या ममत्व का सर्वथा त्याग करने के लिए तथा अशुभ कर्म और परीषहो को जीतने के लिए सर्वत्र विहार करते है।

यत्नाचाररहित चलने वाले मुनि के विहार-शुध्दि नही होती। लेकिन उपर्युक्त प्रकार सिंह के समान अपनी निर्भय वृत्ति रखने वाले और पापरहित मार्ग मे चलने वाले इन मुनियो के विहार-शुध्दि कही जाती है।

आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज ने उक्त मुनिचर्या का पालन करते हुए भारत के गॉव-गॉव मे विहार कर जैन धर्म की अपूर्व प्रभावना की है। इन जगद्वंद्य ऋषिराज ने इस कलिकाल मे जितना विहार किया है, उतना विहार शायद ही किसी मुनि या आचार्य ने किया होगा।

आचार्यश्री एक ऐतिहासिक महापुरूष है। कालान्तर मे ऐसे महापुरूष की प्राप्ति कठिन होगी। आचार्यश्री इस वर्तमान पीढ़ी के लिए जितने उपकारक हुए है उसे हम भुला नही सकेंगे।

प्रथम चातुर्मास गुनौर

सन् १९५३ मे पावन सिध्दक्षेत्र सोनागिर पर दिगम्बर यथाजात रूप धारण कर, गुरू आज्ञा से धर्मप्रभावनार्थ विहार किया। सोनागिर से विहार कर मुनिश्री विमलसागरजी का प्रथम चातुर्मास गुनौर मे हुआ। यहाँ जैनियो के करीब ८० घर है, एक मदिर है। यहाँ चारो और हिसा का आतक छाया हुआ था। भैसो की बलि दी जाती थी। अहिंसा के पुजारी दिगम्बर सन्त का करूणामयी हृदय यह देख द्रवित हो उठा। मुनिश्री ने तत्काल जनसमुदाय के बीच हिंसा को रोकने का कड़ा उपदेश दिया। जैन जनता भयभीत थी। मुनिश्री ने कठोर नियम लिया— जब

तक यहाँ जीवो की बलि चढ़ाने की प्रथा पर रोक नहीं लगाई जाएगी तब तक चारो प्रकार के आहार (अन्न-जल आदि) का त्याग है। एक दिन, दो दिन बीते, तीन दिन उपवास हो गये, सारे गाँव मे सनसनी फैल गयी। त्याग की महिमा अपूर्व है। गाँव की सारी पचायत आकर गुरूदेव के चरणो में नतमस्तक हो गई तथा पचायत की ओर से आदेश जारी किया गया-महान सत विमलसागरजी महाराज के आदेश से पचायत गुनौर ग्राम मे यह नियम लागू करती है कि हमारे गाँव मे कभी भी किसी जीव-बकरा, भैंसा आदि की बलि नही चढ़ाई जाएगी। सभी जैन-अजैन समाज ने इस नियम का सहर्ष स्वागत कर स्वीकृति प्रदान की।

ईसरी चातुर्मास

चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ। अनेक भाइयो ने सप्तव्यसनो का त्याग किया। अजैन बन्धुओ ने मद्य-मास-मधु आदि का त्याग किया। चातुर्मास पूर्ण होते ही सघ का विहार जय-जयकार ध्वनिपूर्वक ईसरी की ओर हुआ। सन् १९५४ का चातुर्मास ईसरी मे हुआ। यहाँ अच्छी धार्मिक प्रभावना हुई। यहाँ से विहार कर सम्मेदशिखरजी, राजगृही, चम्पापुरी आदि सिध्दक्षेत्रो की वन्दना करते हुए मुनिश्री सघ सहित भगवान महावीर की निर्वाणस्थली पावन सिध्दक्षेत्र पावापुरी पहुँचे।

पावापुरी सिध्दक्षेत्र

जब पावापुरी समीप आया तब वहाँ की प्राकृतिक शोभा मन को अपनी ओर आकर्षित करने लगी। जलमदिर के भीतर भगवान महावीर प्रभु के चरण चिन्ह विराजमान है। तालाब लगभग आधा मील लम्बा तथा उतना ही चौडा होगा। उस सरोवर मे सदा मनोहर सौरभसपन्न कमल शोभायमान रहते है। उसके मध्य श्वेत सगमरमर का बड़ा ही मनोज्ञ मदिर है। पूर्णिमा की चाँदनी मे उसकी शोभा और भी बढ़ जाती है। सरोवर के कारण मदिर का सौदर्य बड़ा आकर्षक है। भगवान का अतरग जितना सुदर था, उनका शरीर जितना सौष्ठव सपन्न था, वहाँ का बाह्य वातावरण भी उतना ही भव्य प्रतीत होता है। सरोवर मे बड़ी-बडी मछलियाँ स्वच्छद क्रीड़ा करती है, उन्हें भय का लेश भी नही है, कारण वहाँ प्राणीमात्र को अभय देने वाली वीरप्रभु की अहिसा की शुभ्रचन्द्रिका छिटक रही है। मदिर के पास पहुँचने के लिए सुदर पुल बना है। विदेशी पर्यटक भी पावापुरी के जलमदिर के सौदर्य की स्थायी स्मृति (फोटो के रूप मे) साथ ले जाया करते है।

भगवान महावीर

पावापुरी की वन्दना से बढ़कर सुखद और निर्वाणस्थल कौन होगा यहाँ चढ़ाई का नामो निशान नही है, लम्बा जाना नही है। शीतल समीरयुक्त जलमदिर के मध्य मे निर्वाणपद प्राप्त करने वाले प्रभु वर्धमान जिनेन्द्र के चरणचिन्ह विद्यमान है, जो निर्माणस्थल के स्मारक है। आचार्यश्री यतिवृषभ ने लिखा है कि वीर भगवान ने कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को प्रात:काल मे स्वाती नक्षत्र मे पावापुर से अकेले ही सिध्दपद प्राप्त किया था। उनके निर्वाण

के समय में पावापुर से अन्य किसी मुनि ने मुक्ति का वरण नही किया। इसके पूर्व भगवान पार्श्वनाथ स्वामी के निर्वाण काल मे छत्तिस मुनियो ने श्रावण सुदी सप्तमी को सध्या के समय प्रदोषकाल मे सम्मेदाचल से मोक्ष प्राप्त किया था।

वृषभनाथ, वासुपूज्य तथा नेमिनाथ प्रभु ने पल्यक आसन से तथा शेष इक्कीस तीर्थंकरों ने **कायोत्सर्ग आसन** से मोक्ष प्राप्त किया। इसी कारण मुनिश्री विमलसागरजी जलमदिर मे जाकर सिध्दपद प्राप्त महावीर **भगवान के विषय** मे चितवन करते समय उनके कायोत्सर्ग आसन का ध्यान करते थे। यह उत्तम आसन भी है.

बालब्रम्हचारी

भगवान महावीर के सघ मे तीन सौ पूर्वधर मुनीश्वर, निन्यानवे-सौ शिक्षक, तेरह सौ अवधिज्ञानी, सात सौ केवलज्ञानी, नौ सौ विक्रियाधारी, पाँच सौ विपुलमति मन पर्यय और चार सौ वादि मुनि थे। छत्तिस हजार आर्यिकाओ की सख्या कही गई है, उनमे प्रमुख आर्यिका चन्दना थी। भगवान महावीर बालब्रम्हचारी थे। पावापुरी का पुण्यस्थल वीरप्रभु की पवित्र स्मृति को जागृत करते हुए बताता है कि यथार्थ मे वे पूर्ण सिंहवृत्ति के थे, जिन्होंने सपूर्ण कर्मो का क्षयकर मुक्ति प्राप्त की थी। आचार्य कहते है-जो जीव ध्यान मे स्थित होकर तथा सयम और योग से सयुक्त होते हुए वीर भगवान के चरणो को सदा प्रणाम करते है, वे जगत् मे वीतशोक होते है और विषम ससार के सकटों के पार पहुँचते है। वर्तमान मे उन्ही वीरप्रभु का तीर्थ प्रवर्त्तमान है।

चातुर्मास

वीरप्रभु के समान वीरता की ओर कदम बढाने की भावना से मुनिश्री ने, इसी पावन स्थल पर चातुर्मास स्थापन का निर्णय लिया। सन् १९५५ का चातुर्मास महावीर प्रभु के पावन चरणो मे सानन्द सम्पन्न हुआ। चातुर्मास मे अतिशय धर्म प्रभावना हुई। हजारो नर-नारियो की कतार दूर-दूर से मुनिश्री के दर्शनार्थ आती रही। सासारिक समस्याओ से परेशान सभी लोग मुनिश्री के दर्शन कर और उनका आशीर्वाद प्राप्तकर सतुष्ट हो जाते थे।

मिर्जापुर

पावापुरी से विहार करता हुआ सघ तीर्थों की वन्दना करता हुआ मिर्जापुर पहुँचा। मिर्जापुर मे महती धर्म-प्रभावना हुई। यह पावापुरी के पास एक शहर है। मुनिश्री पावापुरी से सम्मेदशिखर आदि की वन्दना करके पुन पावापुर से मिर्जापुर पहुँचे थे। चातुर्मास का समय निकट होने से सन् १९५६ का चातुर्मास मिर्जापुर मे ही हुआ।

चातुर्मास मे मुनिश्री को अपूर्व उपलब्धि हुई। आपके द्वारा ईसरी के ब्रम्हचारीजी की क्षुल्लक दीक्षा सम्पन्न हुई। क्षुल्लकजी का नाम जिनसागर रखा गया। यहाँ से विहार करते हुए आप ने इन्दौर नगरी (धर्मनगरी इन्द्रपुरी) में पदार्पण किया।

इन्दौर

इन्दौर एक धर्मनगरी है। यहाँ जैनियों की सख्या ५० हजार के लगभग है। यहाँ जैन धर्मावलम्बियों में एक विशेष प्रकार का सगठन पाया जाता है। यहाँ जैनियों की विशेष संख्या की अधिकता के सबंध में उदारमना सरसेठ हुकमचंदजी की उदारता मननीय है—

हुकमचंदजी ने एक कपड़ा मिल खोली। वहाँ के अनेक जैन भाइयों को काम में लगाया। हजारों जैन बेरोजगार बन्धुओं को उन्होने काम दिया, रहने के लिए मकान दिए। आज वहाँ जैनो की संख्या बढ़ती जा रही है।

इन्दौर में काँच का मदिर दर्शनीय है। इस मदिर मे काँच की बहुत बारीक एव कलापूर्ण कारीगरी मन को मोह लेती है। खभे, फर्श, दिवार सभी काँच के है। यही मदिरजी में चावल पर णमोकार मत्र से चने की दाल पर सेठजी का पूरा नाम तथा ताड़पत्र पर भक्तामर, तत्त्वार्थसूत्र, पार्श्वनाथस्तोत्र, घटाकर्ण आदि लिखे हैं। इतनी सूक्ष्म कलाकारी, सुन्दर लेखन भारतीय श्रमण सस्कृति की उज्ज्वलता के प्रतीक है। मदिर मे सप्त व्यसनों का फल, पाँच पापों का फल बताने वाली सुन्दर चित्रावलियाँ आखों को सहसा आकर्षित करती है। तीर्थक्षेत्रों के पावन चित्रों में मोतियों का जड़ाव इतना सुदर लगता है मानो दातार की उदारचरिता उसमें बिखर पड़ी हो। शान्तिनाथ भगवान की श्यामवर्ण की पद्मासन प्रशान्त वीतराग छवि मानस मे अद्भुत शान्ति प्रदान करती है। आस-पास आदिनाथ और चद्रप्रभ जी की मनोज्ञ प्रतिमाएँ तथा मध्य में पाषाण की ढाई फीट की बाहुबली भगवान की अति मनोज्ञ प्रतिमा मन को लुभाती है। शेष रजत की प्रतिमाएँ भी अति मनोज्ञ है। मदिर मे ऊपर महावीरजी, शीतलनाथजी व पुष्पदन्तजी की स्वर्णमयी प्रतिमाएँ है तथा दूसरी ओर वेदी व प्रतिमा दोनों ही चाँदी की है।

इन्दौर में २६ जिन मदिर है। शक्कर बाजार के बड़े मदिर (मारवाड़ी मंदिर) में स्फटिक मणि की अनेक छोटी बड़ी मूर्तियाँ वन्दनीय है तथा तेरापथी मदिर में पद्मासन डेढ़ फुट की चन्द्रप्रभ की प्रतिमाजी अति मनोज्ञ है। सहस्त्रफणी पार्श्वनाथ अतिशयकारी है। समवसरण रचना, काँच मदिर, बावन चैत्यालय, इन्द्रभवन में चद्रप्रभ प्रतिमाजी तथा वैराग्य भवन, आदि अनेक वदनीय व दर्शनीय जिनमदिर इस नगर में है।

भगवान शान्तिनाथ

इस धर्मप्राण जैन नगरी में मुनिश्री इसके पूर्व ऐलक अवस्था में भी अपने गुरू महाराज के साथ पधारे थे। अब १९५६ का चातुर्मास इसी नगरी में करने का सघ ने निर्णय लिया। सघ का चातुर्मास शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मदिर, मल्हारगज में हुआ था। यहाँ मदिरजी में गुलाबी (बदामी) रंग का, शान्तिनाथ भगवान का अति मनोज्ञ खड्गासन जिनबिम्ब है। पूज्य आचार्यश्री महावीरकीर्ति महाराज कहा करते थे- ''ऐसी वीतराग छवि, प्रशान्त जिनप्रतिमा के दर्शन मुझे कही प्राप्त नही हुए। यह एक अतिशयकारी जिनबिम्ब है।''

आचार्यकल्प श्री श्रेयाससागरजी म के शब्दों में- ''मैने सपूर्ण भारत में भ्रमण किया पर ऐसी वीतराग प्रशान्त जिन प्रतिमा के दर्शन पहली बार हुए।'' शान्तिनाथ प्रभु की प्रतिमा आगमानुकूल यक्ष-यक्षिणी सहित है। यहाँ प्रतिदिन जिनभगवान का पञ्चामृताभिषेक होता है। स्त्री-पुरुष शुध्दवस्त्र धारण कर जिनाभिषेक व पूजा कर जीवन को मगलमय बनाते हैं।

मुनिश्री प्रतिदिन भगवान का पञ्चामृताभिषेक देखते थे, फिर प्रवचन के द्वारा भव्यजीवों को मोक्षमार्ग का उपदेश देते थे। आपकी आहारचर्या बहुत कठिन थी। मुद्रा लेकर दो-दो कि मी तक चर्या को जाते थे। आहारचर्या का दृश्य बड़ा विचित्र रहता था। कठिन वृत्तिपरिसख्यान से जुड़ी आपकी चर्या भक्तों के भाग्य की कड़ी परीक्षा करती थी।

इन्दौर में धर्मप्रभावना कर जीवन की अमिट छाप छोडते हुए मुनिश्री ने आगे विहार किया। इन्दौर से विहारकर आप बनेड़िया अतिशय क्षेत्र, मक्सी पार्श्वनाथ, सनावद, सिध्दक्षेत्र ऊन, सिध्दवर कूट के दर्शन करते हुए बड़वानी सिध्दक्षेत्र पहुँचे। बड़वानी एक प्रसिध्द क्षेत्र है। यहाँ ब्र सोनाबाई को आपने क्षुल्लिका दीक्षा दी तथा नाम चन्द्रमती रखा। यहाँ से आप वीतराग भगवान राम, हनुमान, सुग्रीव आदि ९९ करोड़ मुनियों की निर्वाणभूमि पावन क्षेत्र माँगी-तुगी पहुँचे। क्षुल्लिका चन्द्रमतीजी को आपने आर्यिका दीक्षा दी तथा उनका नवीन नामकरण सिध्दमती किया।

आर्यिका सिध्दमतीजी

आर्यिका सिध्दमती माताजी सघ में प्रथम व प्रमुख आर्यिका थी। आप एक विदुषी, सरल स्वभावी, वात्सल्यरूपा आर्यिकारत्न थी। वैय्यावृत्ति, उपदेश, स्वाध्याय आदि आपके गुण थे। आप आरा आश्रम की स्नातिका थी। पडिता चन्दा बाई से आपने धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन कर गहन अनुचितन-मनन किया था। पश्चात् गया में अध्यापन का कार्य करती थी। मुनिश्री के दर्शन से ही आप विरक्ति को प्राप्त हुई थी।

मेरा दुर्भाग्य रहा कि मै उनकी छत्र-छाया प्राप्त नही कर सकी। सम्मेद-शिखर सिध्दक्षेत्र पर जिन भगवान का स्मरण करते हुए आपकी समाधि हो गई। आपके अनुशासन में आर्यिकावृन्द धर्म की विशेष प्रेरणा प्राप्त करती थी, आपके अनुशासन एव गुरूभक्ति की चर्चा आज भी आचार्यश्री व उपाध्यायश्री से सुनकर ऐसा लगता है—काश मैं भी उनकी छत्र-छाया में रहती

मागी-तुगी क्षेत्र से विहार कर सघ कर्नाटक प्रान्त में भगवान गोम्मटेश्वर बाहुबली की वन्दना करता हुआ वहाँ से कारकल, वेणूर, गोम्मटगिरि आदि के दर्शन करता हुए कोल्हापुर पधारा।

एक माह अभी पूरा नही हुआ

दक्षिण कर्नाटक प्रान्त की कन्नड़ भाषा को सघ में कोई नही बोल पाता था, न ही कोई समझता था। उन दिनों कन्नड़ प्रान्त में हिन्दी-भाषी भी कोई बिरला ही था। आज तो वहाँ भी हिन्दी भाषा का शिक्षण अनिवार्य हो गया है।

एक धार्मिक महिला मुनिश्री के दर्शनार्थ आई। छोटी उम्र में ही वैधव्य प्राप्त करके भी, जिसने वीरता से काम लिया था। मुनियो के सघ में जाकर आहारदान देना उसकी अपनी रुचि थी। आचार्य शान्तिसागरजी, आ पायसागरजी, आ देशभूषण महाराज आदि के सघ में लम्बे समय तक रहकर उसने साधु-सेवा कर अपूर्व पुण्य

कमाया था।

निमित्तज्ञानी विमलसिन्धुजी ने दर्शनार्थ आई इस महिला के सर्व गुणों को शायद एक ही दृष्टि में जान लिया। सहसा मुनिश्री ने कहा- बाई जी, आप कन्नड भाषा जानती है।

बाईजी ने कहा- जी हाँ महाराजजी।

महाराज ने कहा- बाईजी, हम लोग सघ सहित कर्नाटक प्रान्त के प्राचीन मदिरों, तीर्थों की वन्दना को इधर आये हैं। हम लोग यहाँ की भाषा नही जानते, यहाँ के लोग हमारी भाषा नही जानते अत विहार में कठिनाई महसूस होती है। सिर्फ एक माह के लिए आप हमारे साथ चलिए। एक माह में हम यात्रा पूरी करके आप को भेज देंगे।

बाईजी ने मुनिश्री के इस आग्रह को तत्काल शिरोधार्य कर लिया।

विभिन्न तीर्थो की वन्दना करते हुए समय बीतता चला गया। बाईजी कौन? चित्राबाई जी। चित्राबाई जी सघ सचालिका के रूप में कर्मठता से अपनी सेवा का दान करीब ३३ वर्षो से दे रही है पर आचार्यश्री का अभी एक माह पूरा नही हुआ।

चित्राबाई एक कर्मठ महिला है। ये ऊपर से जितनी कठोर है, अन्दर से उतनी ही कोमल भी। प्रत्येक साधु की उनके योग्य वैयावृत्ति करने में आपकी दक्षता है। ७६ वर्ष की वृध्दावस्था में भी आहारदान के समय आपकी भाग दौड़ बालकवत् देखकर आश्चर्य होता है।

सन् १९५८ का चातुर्मास फलटण में हुआ। धार्मिक अनुष्ठानों व विविध धर्मप्रभावना के साथ चातुर्मास निर्विघ्न सपन्न हुआ। भक्ति की विशेषता, तीर्थ वन्दना की निरन्तर प्रदीप्त रहने वाली लौ में विहार की कोई सीमा ही नजर नही आती थी। दक्षिण से विहार करते हुए सीधे उत्तर की ओर चल पडे।

फलटण समाज ने मुनिसघ को शिखरजी सिध्दक्षेत्र की वन्दना कराने का नियम लिया था। अत फलटण से विहार करता हुआ सघ सम्मेदशिखर पहुँच गया। सम्मेदशिखरजी पर तीन क्षुल्लक दीक्षाएँ आपके कर कमलों द्वारा दी गई, बहुत प्रभावना हुई। सम्मेदशिखर, राजगृही, पावापुरी, चम्पापुरी आदि की वन्दना करता हुआ, सघ मध्य प्रदेश के पन्ना नगर में आ पहुँचा।

मध्य प्रदेश में पन्ना एक छोटासा कस्बा है। यहाँ जमीन में खदानों से पन्ना (एक रत्न) निकलता है इसी कारण इसका नाम पन्ना पड़ गया। पन्ना ने धर्मात्मा जनों को जन्म दिया है। आत्मा रूपी पन्ना (आत्मरत्न) के खोजी विमलसिन्धु ने चातुर्मास का समय निकट जानकर यही चातुर्मास करने का निर्णय लिया। सन् १९५९ का चातुर्मास महती प्रभावना के साथ पन्ना में संपन्न हुआ।

यहाँ के बुन्देलखण्ड के खजुराहो, पपौरा, अहारजी, देवगढ़ तथा कुन्डलगिरि सिध्दक्षेत्र आदि तीर्थो की वन्दना करते हुए मुनिसघ विहार करता हुआ पावन सिध्दक्षेत्र सोनागिरजी पहुँचा।

सोनागिरजी पावन तीर्थ है। यहाँ से नगानगआदि साढ़े पाँच करोड़ मुनिश्वर मुक्ति को प्राप्त हुए है। प्रभु चन्द्रप्रभ का समवसरण यहाँ आया था। उसी का प्रतीक रूप चन्द्रप्रभ भगवान का विशाल अतिशयकारी जिनबिम्ब पर्वत

के सौंदर्य का मूल है। यहाँ का प्राकृतिक वातावरण कश्मीर, मसूरी, नैनीताल के प्राकृतिक सौंदर्य को भी फीका कर देता है।

मुनिश्री प्रतिदिन पर्वत की वन्दना करते थे। भगवन चन्द्रप्रभ का प्रतिदिन पञ्चामृताभिषेक देखते थे। पर्वतराज पर मुनिश्री ने दो मुनि दीक्षा तथा एक क्षुल्लक दीक्षा दी। नवीन मुनियों का नामकरण-मुनिश्री सुवर्णसागरजी तथा मुनिश्री चन्द्रसागरजी रखा गया।

सोनागिरजी से मुनिसघ विहार कर टुण्डला पहुँचा। टुण्डला एक धार्मिक नगरी है। यहाँ जैनियों के अनेक घर है। चार-पाँच जैन मदिर है। सघ के यहाँ पहुँचने पर सारा वातावरण धार्मिकमय बन गया। नगर में चातुर्मास का दृश्य बन गया था। चातुर्मास का समय निकट था। नगर के धार्मिक भव्य नर-नारियों की विशेष भावनाओं को स्वीकार करते हुए मुनिश्री ने यही चातुर्मास करने का निर्णय ले लिया। चातुर्मास में मुनिश्री के केशलोंच हुए। केशलोंच को देखने के लिए आस-पास से बहुत लोग आए थे। भेद-विज्ञान का दृश्य अद्‌भुत था। लोगों ने अनेक बार नाटक-सिनेमा आदि कार्यक्रम तो देखे थे पर ऐसा अनोखा दृश्य देखकर लोगों के नेत्रों से अश्रुपात हो रहा था। युवा अवस्था थी। बड़े-बड़े घने बाल, दाढ़ी-मूछों के घने बाल, नग्न कोमल शरीर, पर वीर धीर महापुरूष उन्हें घास की तरह उखाड़े जा रहे थे। दर्शकों का ह्रदय दहल उठता था पर मुनिश्री के धैर्य को देखकर सब चकित थे।

आज आत्मा की रटन लगाने वाले तोता रट्टू भेद ज्ञान की बातें भर करते है, करते धरते कुछ नही है। याद रखने की बात यह है कि जैन धर्म वीरों का धर्म है। यहाँ चर्या की प्रधानता है, चर्चा की नही।

एक बार किसी ने पुछा- "गुरुदेव! केशों का लोच करते हुए तकलीफ तो अवश्य होती होगी।"

मुनिश्री ने कहा था- "तकलीफ मुझे बिलकुल नही होती है, उल्टे इस क्रिया के करने में विशेष आनन्द अवश्य आता है।"

महाशय ने पूछा- "महाराजजी, कैसा आनन्द आता है?"

"एक बार लोंच करके देख लीजिए," मुनिजी का उत्तर था।

केशलोंच क्रिया समाप्ति के पश्चात् विधिवत् जिनाभिषेक क्रिया सपन्न हुई तथा केशों को नदी में विशेष उल्लासपूर्वक क्षेपण किया गया।

चातुर्मास के विशेष अनुष्ठान हुए- सिध्दचक्र विधान, शाति विधान आदि हुए। उपदेशामृत से प्रभावित अनेक जन, असयम से हटकर सयमपथ की ओर आगे बढे। मुनि अवस्था में ही आचार्य पद के अनेक गुणों की उपस्थिती देखकर समाज और विद्वत्वर्ग में मुनिश्री को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने की विशेष भावना जागृत हो उठी थी।

आचार्यपद

भावना को साकार बनाने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किए गए। मुनिश्री के कानों तक यह फुसफुसाहट जा

पहुँची। निस्पृही, सरलवृत्ति साधुराज ने स्पष्ट अस्वीकृति प्रदान कर दी थी। विद्वानों (प माणकचदजी कोंदेय न्यायाचार्य, लालारामजी शास्त्री) ने विद्वत्ता से कार्य किया। मुनिश्री के दीक्षागुरु आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज की अनुमति प्राप्त कर समाज व विद्वानों ने चतु सघ की सर्वसम्मति से मुनिश्री विमलसागरजी को आचार्य पद से विभूषित किया।

आचार्य पद की दीक्षा के योग्य सस्कार विधिवत् किये गये। मुनिश्री विमलसागरजी, टुण्डला में अगहन वदी दूज सन् १९६० के शुभ दिन, शुभ नक्षत्र, शुभ वेला में आचार्यपद पर प्रतिष्ठापित किए गए। इस पावन प्रसग पर आपने दो भव्यात्माओं को क्षुल्लक पद की दीक्षा प्रदान की।

टुण्डला से आचार्य सघ का विहार अतिशय क्षेत्र राजमहल पहुँचा। वहाँ से विहार करते हुए, स्याद्वाद विमल वाणी के प्रचारक, विमल जीवन के विकासक, विमल धर्मोपदेष्टा, विमल की सिध्दावस्था के शुभेच्छु आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज तीर्थंकर विमलनाथ की पावन जन्मस्थली कम्पिला जा पहुँचे। विमल जीवनावस्था को प्राप्त श्री विमलनाथ भगवान के गर्भ-जन्म-तप और ज्ञान ऐसे चार कल्याणक यहाँ हुए हैं। ऐसी विमलभूमि की जो भव्यात्मा भक्ति-भाव पूर्वक वन्दना करता है, वह निश्चित ही विमल वैभव को प्राप्त कर निर्वाण का भाजन बनता है। इस पावन क्षेत्र पर आचार्य महाराज ने दो आर्यिका दीक्षाएँ दी- (१) वीरमती (२) विमलमती।

मेरठ चातुर्मास

आवला, अहिक्षेत्र पार्श्वनाथ आदि अतिशय क्षेत्र के दर्शन करते हुए आचार्य-सघ ने ५ मई १९६१ को मेरठ शहर में पदार्पण किया। चातुर्मास मेरठ में स्थापित हुआ। यहाँ पर विशेष धर्म प्रभावना हुई। आचार्य पद पर सुशोभित महाराजश्री का ससघ यह प्रथम चातुर्मास था। आचार्य महाराज के दर्शनार्थ भारी भीड़ उमड़ उठी थी। आपके निमित्तज्ञान की चर्चा घर-घर फैलने लगी। मात्र चेहरा देखकर अथवा बाह्य निमित्तो के आधार पर आचार्यश्री उत्तर देते है, यह सुन लोग यहाँ खाली आने लगे और झोली भर-भर घर जाने लगे।

मेरठ में बड़े समारोह के साथ बृहद् (सस्कृत) सिध्दचक्र विधान हुआ। महती धर्म-प्रभावना हुई। इसी बीच चातुर्मास में क्षु बाहुबली सागर जी को आपने मुनि दीक्षा देकर कृतार्थ किया। नामकरण मुनि पार्श्वसागरजी किया गया।

मुनि पार्श्वसागरजी

आचार्यपद के बाद प्रथम दीक्षित मुनि- मुनि पार्श्वसागरजी थे। पार्श्वसागरजी एक साधुरत्न थे। आपने आचार्य महाराज के साथ ही मोरेना विद्यालय में अध्ययन कर शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आप आगमनिष्ठ, गुरुभक्त महात्मा थे। आपके योग्य गुणों से प्रभावित हो समाज ने गुरु आज्ञा से आपको आचार्यपद पर आसीन किया था। आपने शरीर की जीर्णावस्था जान आगम के आधार से १२ वर्ष की उत्तम समाधि को गुरुसाक्षीपूर्वक ग्रहण किया था।

शरीर अति कृश था पर आत्मा अति शक्तिसम्पन्न। धीर-वीर, गभीर एव साहसी साधुराज ने बसनगढ़ी अतिशय

क्षेत्र पर आचार्य पद का त्याग कर विधिवत् अपने शिष्य मुनि वासुपूज्य सागरजी को आचार्यपद पर आसीन किया और स्वय सम्यक् समाधिपूर्वक स्वर्गारोहण कर गये। आचार्य महाराज को नमन। यहाँ मेरठ मे मुनिश्री सुवर्णसागरजी की आपने सम्यक् समाधि कराई। यहाँ ब्रह्मचारी ओमप्रकाश को आपने क्षुल्लक दीक्षा के व्रत दिये तथा नाम- क्षुल्लक नेमिसागर रखा। चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ।

मेरठ से संघ बड़ौत पहुँच गया। बड़ौत एक धर्मप्राण नगरी है। यहाँ जैनों की सख्या लगभग ५० हजार है। यहाँ साधुजनों का आवागमन प्राय होता ही रहता है। आचार्य महाराज ने यहाँ क्षुल्लक श्री सिध्दसागरजी को मुनिव्रत देकर पवित्र परमेष्ठिपद पर आसीन किया तथा नवीन नामकरण मुनिश्री 'अरहरसागरजी रखा।' वर्तमान में सघ में ये वयोवृध्द साधु माने जाते है। आपने आचार्य महाराज के पावन चरणों में सन् १९८७ के जयपुर चातुर्मास में बारह वर्ष की सल्लेखना ग्रहण की है। सघ में आप वयोवृध्द क्षपकराज के रूप में आज विराजमान है।

बड़ौत से दिल्ली-हस्तिनापुर आदि क्षेत्रों की ओर विहार करता हुआ आचार्य सघ पावन ऐतिहासिक तीर्थराज मथुरा पहुँच गया।

मथुरा

मथुरा अन्तिम अनुबध्द केवली जम्बूस्वामी की निर्वाणभूमि होने से प्रसिध्द निर्वाण-भूमि है। यह नगर प्राचीन काल से जैन सस्कृति का केन्द्र रहा है।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि मथुरा ने जैन धर्म की प्राचीनता को प्रमाणित करने वाली अत्यंत महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रदान की है।

मथुरा के प्रसिध्द ककाली टीला की खुदाई में अनेक जैन मूर्तियाँ प्राप्त हुई थी जो लखनऊ के सग्रहालय में हैं। मथुरा के सग्रहालय में लगभग ९० दिगम्बर मूर्तियाँ है। उस टीले से प्राप्त ११० जैन शिलालेख हैं, जो प्राय कुशाणवशी राजाओं के समय के है। स्मिथ महाशय उनको ईसा की प्रथम तथा द्वितीय सदी का मानते है। एक खड्गासन जैन मूर्ति पर लिखा है- "यह अरहनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा ७९ सवत् में देवों के द्वारा निर्मित, इस स्तूप की सीमा के भीतर स्थापित की गई है।" इस देव निर्मित स्तूप के विषय मे यशस्तिलकचम्पू की कथा विशेष महत्त्वपूर्ण है। उसमें बताया गया है कि- मथुरानरेश की महारानी उर्मिला देवी एक धार्मिक नारी थी। वह अष्टाह्निका पर्व का समय विशेष व्रत-उपवास में व्यतित करती थी। अष्टाह्निका पर्व में जिनेन्द्र देव का रथ निकलवाकर धर्म की महती प्रभावना करती थी। प्रसग इस प्रकार है-मथुरानरेश की महादेवी उर्मिला रानी ने अष्टाह्निका महापर्व के आगमन पर सदा की भाँति मथुरा में जिनधर्म के रथ निकाले जाने में सपत्नी (सौत) बुध्ददासी द्वारा विघ्न जाल रचा देखा, तब चिंतित हो महारानी ने सोमदत्ताचार्य के समीप जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया- भगवान! मैं गुरु चरणों में प्रतिज्ञा करती हूँ कि आज से दो तीन दिन पश्चात् आने वाले महापर्वराज अष्टाह्निका की पूजा में, पूर्व क्रम के अनुसार जिन भगवान की पूजा हेतु मेरा रथ निकलेगा, तभी मै शरीरस्थिति में कारणरूप अन्न पान ग्रहण करूँगी अन्यथा मुझे अन्न-पान का त्याग रहेगा।

इस समय विराजमान श्री वज्रकुमार मुनिनाथ ने कहा- माता, आप चिन्ता न करो, हम सरीखे जिन भक्तों

के होते हुए अर्हन्त भगवान की पूजा में विघ्न नही आएगा। पश्चात् वज्रकुमार मुनिराज द्रुतगति से विद्याधरपुर में पहुँचे और भास्करदेव विद्याधर आदि को अपने आगमन का कारण, मथुरा में जिनेन्द्र के रथ विहार कराने की आवश्यकता बतायी।

पश्चात् दैविक चमत्कार तथा वैभव के साथ मथुरा में भगवान जिनेन्द्र के रथ का विहार हुआ और उनके निमित्त से मथुरा में अर्हन्त भगवान की प्रतिमायुक्त एक स्तूप की स्थापना हुई। ("मथुरायां चक्रचरण परिभ्रमय्यर्हत् प्रतिबिम्बांकितमेक स्तूप तत्रातिष्ठत्") अत आज भी देवनिर्मित नाम से उस तीर्थ की ख्याति है। "अतएवाद्यपि तत्तीर्थं देवनिर्मिताख्यया प्रथमे" (यश ति पृ ३१४-३१५ अध्याय ६ , कल्प १८) इसी कारण प्रभावना अग में वज्रकुमार का नाम समतभद्र स्वामी ने रत्नकरड श्रावकाचार में लिया है। सोमदेव सूरि के अद्यापि शब्द से विदित होता है कि उनके समय दसवी सदी में वह स्तूप विद्यमान था।

महारानी रेवती मथुरा की ही थी। अमूढदृष्टि अग प्रसिध्द रेवती रानी मथुरानरेश महाराज वरुण की पट्टरानी थी।

राजा मधु

मथुरा नगरी में राजा मधु का राज्य था। शत्रुघ्न ने राजा मधु के साथ युध्द किया। युध्दक्षेत्र में अपनी हार के आसार नजर आते ही ससार की विचित्रता को देख मधु राजा को ससार से विरक्ति हो गई। उन्होंने युध्दभूमि में हाथी पर बैठे-बैठे ही केशलोंच किया, पश्चात् जिनदीक्षा धारण कर उत्तम गति को प्राप्त हुए।

ऐसी अनेक घटनाएँ मथुरा नगरी के साथ जुड़ी हुई है। प्रसिध्द सप्तर्षि की घटना भी मथुरा की प्राचीनता से जैन धर्म की प्राचीनता को स्पष्ट करती है। घटना इस प्रकार है- मथुरा नगर में मरी रोग से प्राणीमात्र सतापित हो रहा था। ऐसे समय -

जय सातों मुनीश्वर एक सग, नित गमन किया करते अभग।
जय आये मथुरापुर मंझार, तह मरी रोग को अति प्रचार।।
जय-जय तिन चरणनि के प्रसाद, कब मरी देवकृत भई वाद।
•जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त।।

इसी पावन नगरी में आचार्य शातिसागरजी महाराज का सघ सहित चातुर्मास हुआ था। सघ सप्त ऋषियों का था। यह सप्तर्षि दल उन्ही चतुर्थकालीन मुनियों का स्मरण कराता है।

चारित्रचक्रवर्ती पुस्तक में प. सुमेरचन्द दिवाकर ने लिखा है- चातुर्मास में आचार्य शान्तिसागर महाराज मथुरा में रहेंगे, इससे ऐसा लगा मानो कृष्णपुरी मथुरा में पुन वीतराग शासन की प्रभावना का पुण्य युग अवतीर्ण हो गया हो। दूर-दूर से हजारों लोगों ने आकर जीवत तीर्थ का दर्शन कर अपने को धन्य माना था। वहाँ आचार्य महाराज ने घोर तप करना प्रारभ कर दिया, सात-सात, आठ-आठ उपवासपूर्वक आहार लेना साधारण बात हो गई थी। देखने वाले जैन-अजैन सभी लोग चकित होते थे। जो मथुरा सेरो मिष्टान्न उड़ाने वाले बहुभोजी वर्ग के

लिए विख्यात है, वहाँ आठ-आठ दिन तक अन्न कण भी न लिये, जल के बिन्दु भी ग्रहण न किये, आध्यात्मिक साधना में बड़ी सावधानी के साथ संलग्न आचार्यश्री को देख किसके अन्त करण पर प्रभाव नहीं पड़ेगा? मुनि नेमिसागरजी ने वसन्तरुद्रोदर व्रत प्रारभ किया था। श्री नेमिसागर मुनि ने लघु सिह नि क्रीड़ित व्रत किया था। लोगों को ऐसा लगता था कि- हम इस प्रसिध्द मथुरापुरी में पुराणप्रसिध्द सप्तर्षियों का ही दर्शन कर रहे हैं।

आचार्य विमलसागरजी महाराज के सघ सहित मथुरा नगरी पधारने का समाचार मिलते ही चारों ओर से दर्शनार्थियों की भीड जमा हो गई। आचार्यश्री का सिध्दक्षेत्र पर केशलोच हुआ। भारी धर्मप्रभावना हुई। मथुरा से आचार्य संघ ने डीग होते हुए कामा में पदार्पण किया।

कामा में दिगम्बर मुनियों का पहली बार आगमन होने से, धार्मिक जनता में विशेष उल्हास दिखाई देता था। ग्रामीण लोग दिगम्बर साधु को देखने के लिए तरस रहे थे। नागा बाबा कहकर सभी लोग दौड़ लगा रहे थे। साधु महाराज के चरण-कमलों में अनेक अजैन नर-नारियों ने अभक्ष्य भक्षण का त्याग किया। जैन बन्धुओं ने जैन कुल के आचारों को पालने का व्रत लिया। यही आचार्यश्री के सान्निध्य में पचकल्याणक उत्सव विशेष धूम-धाम से पूर्ण हुआ। ब्र शान्तिकुमार को आचार्यश्री ने क्षुल्लक दीक्षा दी और नामकरण आदिसागर किया।

जैनधर्म, सिध्दान्त व सस्कृति की रक्षा करते हुए आप जलेसर पहुँचे। यहाँ आपके सान्निध्य में वृहत्सिध्दचक्र विधान निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर जबलपुर की दो महिलाओं ने ब्रह्मचर्य प्रतिमा के व्रत लिए।

चैत्र वदी में सघ आगरा पहुँचा। आगरा में जैन धर्मावलबियों की अच्छी सख्या है। प्राचीन जैन मदिर, दिगम्बर जैन धर्म की प्राचीन सस्कृति एव कला कौशल का दिग्दर्शन कराते हे। यहाँ जैनकटरा, मोती कटरा में जैनियों की बस्ती और जैन मदिर के दर्शन है। शीतलनाथ भगवान का मदिर दर्शनीय है। यहाँ की शीतलनाथ भगवान की मनोहर दिगम्बर प्रतिमा पर श्वेताम्बरों ने अपना अधिकार जमा लिया है। आजकल श्वेताम्बर मूर्ति नाम से इसकी ख्याति है।

मूर्ति श्याम वर्ण, पद्मासन, दिगम्बर के चिन्हों से युक्त सागोपाग है। श्वेताम्बर भाई इसे अपनी कहकर चन्दन अगी रचाते है। सत्यता का पता तब चलता है, जब प्रात सात बजे वहाँ भगवान पर से सारी अगी, आँखे निकालकर वीतराग प्रतिमाजी का दुग्धाभिषेक व जलाभिषेक होता है। आचार्यश्री प्रतिदिन प्रात सात बजे प्रभु की मनोज्ञ वीतराग मुद्रा के दर्शन को जाते थे, अभिषेक भी देखते थे। प्रतिमाजी को एक बार देखने के बाद फिर वहाँ से हटने को मन नही करता है। आचार्य बार-बार उसी ओर निहारते हुए श्रध्दा और भक्ति से नतमस्तक हो अपनी भावाञ्जलि भेंट करते थे।

अति खेद व्यक्त करते हुए आचार्यश्री कहते है- पचमकाल का प्रभाव कि भगवान को दिगम्बरत्व से, वीतरागत्व से हटाकर राग में लपेटा जा रहा है।

आगरा में महाराजजी ने सभी मदिरो के क्रम-क्रम से दर्शन किये। प्रतिदिन उपदेश से हजारों जन सन्मार्ग की सच्ची दिशा का बोध पाकर, लाभान्वित हुए। यहाँ ब्र शरबती बाई को चैत्रवदी ३, सवत् २०१८ सन् १९६१ को शुभ नक्षत्र, शुभ योग व शुभ घडी में आपने आर्यिका पद की दीक्षा दी। आर्यिका पद प्राप्त आपका नाम श्री आ विजयमती रखा गया।

आर्यिका विजयमती जी

आर्यिका विजयमती माताजी विदुषी है। लौकिक अध्ययन आपने बी ए, बी टी. तक किया तथा धार्मिक अध्ययन करते हुए आपने आरा में चन्दाबाई के आश्रम में न्यायतीर्थ की परीक्षा उत्तम श्रेणी मे पास की। आपकी लेखनशैली व प्रवचनशैली लोगों को प्रभावित करने वाली है। आचार्यश्री की योग्य शिष्या ने कर्नाटक के तीर्थो की खोज करके जैन सस्कृति को एक अमूल्य निधि प्रदान की है। आर्यिका माताजी को शतश वन्दामि।

आचार्य, योग्य मुनि एव आर्यिकाओं से शोभित सघ धर्म की आभा फैलाता हुआ आगे बढ़ता चला गया। विशेष धर्मप्रभावना, धार्मिक उत्सव, अनुष्ठानों को कराता हुआ सघ ईशरी की ओर आगे बढा।

ईशरी में, पूर्व में भी मुनिसघ आया था। वही आज आचार्य-सघ के रूप में पुन प्रभु पार्श्वनाथ के दर्शनार्थ आ पहुँचा। ईशरी मे भी पार्श्वनाथ की विशालकाय पद्मासन प्रतिमा मनोहारी व दर्शन मात्र से सम्यक्त्वोत्पत्ति की निमित्त है। यहाँ का उदासीन आश्रम प्रसिध्द है। त्यागी विद्वान आदि यहाँ पर सतत बने रहते है। यहाँ तत्वचर्चा, ज्ञानगोष्ठी का विशेष लाभ प्राप्त होता है। ईशरी का आश्रम गणेश प्रसाद वर्णी की देन है, जिसे इतिहास कभी भी भूला नही सकेगा।

सन् १९६२ का चातुर्मास ईशरी में पार्श्वनाथ प्रभु के चरणो में सानन्द सम्पन्न हुआ। मुनिश्री चन्द्रसागरजी ने यहाँ समाधि प्राप्त कर उत्तम गति प्राप्त की। यहाँ रहकर आचार्य-सघ ने अनादि-निधन तीर्थराज सम्मेदशिखर की भक्ति-भावना से वन्दना की। कहा है-

"भावसहित वन्दे जो कोई, ताहि नरक पशुगति नही होई।"

आचार्यश्री के कर-कमलो से ब्र चिरजीलाल और ब्र जिनेन्द्रकुमार की क्षुल्लक दीक्षा हुई, नामकरण क्रमश निर्वाणसागर व जिनेन्द्रसागर किया गया। साथ ही ब्र उग्रसेन जी की क्षुल्लक दीक्षा हुई और नामकरण आदिसागर हुआ। क्षुल्लक नेमिसागरजी की मुनिदीक्षा आपके कर कमलों से हुई, नाम मुनिश्री सन्मतिसागरजी हुआ।

सन्मतिसागरजी

मुनिश्री सन्मतिसागरजी आचार्य परमेष्ठी भगवान के एक महाकुशल शिष्य एव तपस्वी साधुराज है। आपकी तपस्या, वर्तमान युग में, मानव मन को झकझोर देती है। अध्ययनशीलता, गाम्भीर्य, वैयावृत्ति और अनुकम्पा आदि आपके प्रशसनीय गुण हैं। दीक्षा के बाद कुछ वर्षो के पश्चात् आप आचार्य महावीरकीर्ति महाराज के पास अध्ययनार्थ गुरु-आज्ञा लेकर गये थे।

आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज ने अपने जीवन के अन्तिम समय में सल्लेखना व्रत धारण किया। मुनि सन्मतिसागरजी की आगमानुसार सारी चर्या से प्रभावित होकर उन्होंने उन्हें आचार्यपद देकर स्वर्गारोहण किया।

मुनि सन्मतिसागर जी आचार्य सन्मतिसागरजी के रूप में जीवन को प्रतिष्ठित करते हुए अपनी तपश्चर्या से जिनधर्म की महती प्रभावना कर रहे है।

आचार्य विमलसागर महाराज की साधना, अपूर्व तेज, वात्सल्य व करुणा, उज्ज्वल चारित्र लोगों के मन-

मस्तिष्क को प्रभावित कर रहा था। सघ का विहार बड़ी तेजी से हो रहा था। आचार्य सघ बाराबंकी पहुँच गया। सन् १९६३ का चातुर्मास बाराबकी में सानन्द सम्पन्न हुआ।

चारित्र-चक्रवर्ती

आचार्यश्री के उज्ज्वल चारित्र से प्रभावित हो बाराबकी जैन समाज ने आप को चारित्र-चक्रवर्ती पद से विभूषित किया। चारित्र-चक्रवर्ती आचार्य विमलसागरजी महाराज की जय-जयकार से सारा नभोमडल गूँज उठा। यहाँ ब्र. मोहनलालजी को आपने ऐलक दीक्षा दी।

गुरुसान्निध्य में चातुर्मास (अपूर्व मिलन)

सन् १९६४ का पावन वर्ष विशेष पुण्य अवसर लेकर आया। पावन तीर्थराज बड़वानी सिध्दक्षेत्र पर तपस्वी, ध्यानी, उपसर्ग विजेता योगीराज आचार्य महावीरकीर्ति गुरुदेव व आचार्य महाराज विमलसागरजी का (गुरु-शिष्य) पावन मिलन हुआ। आचार्य विमलसागरजी ने गुरुवर्य्य के पावन चरणों की रज को मस्तक पर लगाकर, वर्षो से गुरुदर्शन के बिना तृषित आत्मा की प्यास को सतृप्त किया। गुरु-दर्शन होते ही-तीन प्रदक्षिणापूर्वक, सिध्द-श्रुत आचार्यभक्तिपूर्वक त्रिबार नमोस्तु किया। शिष्य की स्थिति देखते ही बनती थी-'आनन्दाश्रु स्नपित वदन गद्गद चाभिजल्पन्' नेत्रों से अवरिल आनन्दाश्रु छलछला उठे, जिन्होंने गुरुचरणों का मानो प्रक्षालन ही किया था। गुरुदेव ने प्रतिनमोस्तु करके शिष्य का यथोचित सम्मान किया।

गुरु-शिष्य का एक साथ चातुर्मास

सन् १९६४ का चातुर्मास गुरु-शिष्य का एक साथ हुआ। दो ज्ञान सूर्यो का तेज जहाँ एक साथ उदित हुआ है, उस प्रकाश पुज में ज्ञानकिरण का लाभ लेने वाले पुण्यात्मा जीव ही हो सकते है। चातुर्मास में उपसर्ग और परिषहों को झेलते हुए भी समतारस का पान करने वाले दो आचार्यरत्नों का धैर्य वदनीय है।

आचार्यश्री महावीरकीर्तिजी महाराज

आचार्य भगवन्त इस युग के महान योगीरत्न थे। आपने अपने दीक्षा काल में घोर उपसर्गो को साम्य भाव से सहन किया था। आप अपना अधिकाश समय ध्यान में व्यतित करते थे। भगवान आदिनाथ की ८४ फीट विशाल उन्नत प्रतिमा के सामने आप घटो खड़े रहकर ध्यान किया करते थे। आहार के तुरन्त बाद आप पर्वतराज पर चढ़ जाते थे।

अधिक मौन आपके जीवन का मुख्य गुण था। चौबीस घटो में मुश्किल से १-२ घटे आप अनुवीचि भाषण करते थे, उत्सूत्र वचन आप कभी नही करते थे। धीर, वीर, गभीर, तत्वचिंतक, समाधि की चर्या कराने में कुशल

निर्यापकाचार्य भी आप थे। श्रावक हो या साधु- सभी की वैयावृत्ति में सदैव तत्पर रहते थे।

इन्ही महान गुणों की विशेषता का अनुभव करके आचार्य शांतिसागर जी महाराज ने दीक्षेच्छुक नेमिचंद (आ विमलसागरजी को) को कहा था-तुम्हें दीक्षा महावीरकीर्तिजी से लेनी चाहिए, वे योग्य साधुरत्न है, सिध्दान्त के ज्ञाता है।

उपसर्ग-विजेता

भगवान आदिनाथ की मूर्ति के समीप मधुमक्खियों का एक छत्ता लगा रहता था। आचार्य म. प्रायः भगवान के चरणों में बैठकर ध्यान किया करते थे। एक दिन किसी अज्ञानी ने अगरबत्ती जला दी, जिसके धुएँ से वे मक्खियाँ उड़कर महाराज के शरीर पर चिपट गई। सारा शरीर लहूलुहान हो गया, मक्खियों के सैकड़ो डक शरीर में तकलीफ दे रहे थे, पर आचार्य महाराज घोर उपसर्ग में भी अपने ध्यान से चलायमान नही हुए। इसी प्रकार अनेक उपसर्ग- चींटीकृत, सर्पकृत, गिरनारजी में मानवकृत आदि हुए परन्तु महामना सन्तराज कभी विचलित नही हुए।

चातुर्मास में दूर-दूर से यात्रीगण दर्शनार्थ आते थे। धर्मानुष्ठान हुए। दान, पूजा, दर्शन आदि के द्वारा भव्यात्माओं ने बहुत पुण्य-लाभ लिया।

सब कुछ आपका है

आचार्य विमलसागरजी के सघ में उस समय युवा और अध्ययनशील साधु मुनि सन्मतिसागरजी और आर्यिका विजयमतीजी थे। दोनो योग्य होने से सघ की शोभा बढ़ाते थे।

आचार्य महाराज से एक दिन मैंने पूछा- दोनों आपको छोड़कर कैसे चले गए।

आचार्य महाराज ने बताया- हमारे गुरु महाराज ने बड़वानी चातुर्मास में हमें सहसा बुलाया, हम गये। वहाँ गुरु महाराज ने कहाँ- ये दोनो छोरा-छोरी (सन्मतिसागर, विजयमती) योग्य हैं, इन्हें मै अध्ययन कराऊँगा, इनको मुझे दे दे। महाराज ने बताया की यद्यपि सघ की शोभा इनसे थी, पर गुरु महाराज को हम क्या कहते। अत हमनें गुरु महाराज से कहा- भगवन् सब कुछ आपका ही है, छोरा-छोरी भी आपके हैं। जैसी आपकी आज्ञा है, वही मुझे शिरोधार्य है।

आचार्य विमलसागरजी ने गुरुचरणों में अपने दोनों रत्नों को मानो गुरु-दक्षिणा रूप में सहर्ष समर्पित कर दिया।

चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ। गुरु-शिष्य का पुन वियोग देख दर्शकों के ह्रदय दुख से भीगे हुए थे।

यहाँ से विहार करते हुए मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र पर आये। इस पवित्र भूमि पर आपने क्षु. विमलमती,विशुद्धमती और निर्मलमती को आर्यिका व्रत की दीक्षा दी। नाम क्रमश आर्यिका आदिमती, श्रेयमती और सुधर्मती रखे गये। माघ बदी तीज को एक ब्रम्हचारीजी को आपने क्षुल्लक दीक्षा दी जिनका नाम सुमतिसागर रखा गया।

सन् १९६५ का चातुर्मास कोल्हापुर मे हुआ। चातुर्मास मे दो ब्रम्हचारियों की क्षुल्लक दीक्षा हुई, नाम हुआ क्षु. विजयसागर और क्षु ज्ञानसागर। धर्मप्रभावना अच्छी होती रही। वहाँ से विहार कर आचार्य सघ मुक्तागिरि, माँगीतुगी, गजपथा, बम्बई, कलिकुण्ड, कुम्भोज-बाहुबली, स्तवनिधि, श्रवणबेलगोला, शखेश्वर, हुबली, हुमच-पद्मावती, आँवता, सिवन राजपुर आदि तथा अतिशय क्षेत्र कुन्दकुन्दाद्रि, कारकल, वेणूर, मूडबद्री, गोम्मटगिरि, कुन्थलगिरि आदि के दर्शन करता हुआ सोलापुर आ गया। सन् १९६६ में आर्यिका ज्ञानमतीजी का सघ और आचार्य सघ दोनों का चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ। चातुर्मास में तत्त्वगोष्ठी, धर्मानुष्ठानादि से धर्म की अक्षयधारा प्रवाहित रही। इस चातुर्मास मे क्षुल्लिका वैराग्यमतीजी को आचार्यश्री ने दीक्षा दी। कुन्थुसागर मुनिराज व सुधर्मसागरजी की भी दीक्षा आपके द्वारा यही सम्पन्न हुई।

वहाँ से अलोरा, विघ्नेश्वर, पावागढ आदि की वदना करते हुए गिरनार सिध्दक्षेत्र की वन्दना की। सघस्थ क्षुल्लक जी ने आपके कर-कमलों से मुनिव्रत के सस्कार प्राप्त किये, नाम पाया मुनि नेमिसागर। वहाँ से गुजरात के क्षेत्रों की वदना करते हुए आचार्य सघ ईडर पधारा। सन् १९६७ का चार्तुमास ईडर में हुआ। विशेष धर्म-प्रभावना के साथ एक विद्वान (आचार्य महाराज के साथ मुरैना में एक कक्षा में अध्ययन करने वाले) प पन्नालालजी शास्त्री भिण्डवालो को आचार्यश्री ने क्षुल्लक दीक्षा दी। क्षुल्लकजी का नाम प्रबोधसागर रखा गया।

ईडर से विहार कर सघ बागड प्रांत में अकलेश्वर पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र के दर्शन करता हुआ बाँसवाड़ा आ गया।

जगमगाता रत्न मिला

बाँसवाड़ा में आचार्यसघ को एक जगमगाता तेजपुञ्ज रत्न प्राप्त हुआ-आचार्य महाराज के वात्सल्य एव सदुपदेश से प्रभावित हो एक युवा तेजस्वी बालक आचार्यश्री के चरणो में आया।

बालक ने कहा- "महाराज जी! हमे भी अपने जैसा बना लीजिये।"

आचार्यश्री ने कहा- "बेटा! जैन धर्म की दीक्षा बहुत कठोर है।"

बालक ने कहा- "महाराज जी! हम आपकी सेवा करना चाहते है, हमें अपने साथ ले लेगे।"

आचार्यश्री ने कहा- "चलो बेटा, हम तुम्हे अवश्य साथ में ले लेंगे।" आचार्यश्री का बेटा शब्द बालक के हृदय में स्नेह वात्सल्य भर रहा था तथा बारबार कर्ण प्रिय बनकर गुज रहा था।

सादा जीवन उच्च विचार सत्यनिष्ठ बालक छोटेलाल ने तुरन्त तैयारी की और बाँसवाड़ा ग्राम से आचार्यश्री के साथ हो लिया।

सघ बाँसवाड़ा से पारसोला आया। यहाँ ब्र सागरबाई (भिण्डर) और ब्र कुकमबाई ने आचार्यश्री से क्षुल्लिका व्रत ग्रहण किये। आचार्यश्री ने नामकरण- पार्श्वमती और जिनमती किया। यहीं सागरबाई ने भी क्षुल्लिका दीक्षा ली और पद्मश्री नाम पाया।

सघ विहार करता हुआ बालक छोटेलाल की जन्मभूमि लोहारिया आ पहूँचा। बालक की माँ शिखरजी सिध्दक्षेत्र

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

वात्सल्यरत्नाकर केशलोच करते हुए

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज को वदना करते हुए उपाध्याय श्री भरतसागरजी महाराज

आचार्यश्री प्रवचन मुद्रा में।

आचार्यश्री का सघ (सम्मेदाशखर १९९३)

आचार्यसंघ, सोनागिर

हस्तिनापुर मे जम्बूद्वीप का अवलोकन करते हुए आचार्यश्री सघ के साथ, साथ मे है आर्यिका ग ज्ञानमतीजी

व्रती-श्रावकोको गधोदक देते हुए आचार्यश्री

।वात्सल्यरत्नाकर।

वात्सल्यरत्नाकर केशलोंच करते हुए

।वात्सल्यरत्नाकर।

॥वात्सल्य रत्नाकर॥

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज को वदना करते हुए उपाध्याय श्री भरतसागरजी महाराज

आचार्यश्री प्रवचन मुद्रा मे।

आचार्यश्री का संघ (सम्मेदशिखर १९९३)

आचार्यसघ, सोनागिर

हस्तिनापुर मे जम्बूद्वीप का अवलोकन करते हुए आचार्यश्री सघ के साथ, साथ मे है आर्यिका ग ज्ञानमतीजी

व्रती-श्रावकोको गधोदक देते हुए आचार्यश्री

।वात्सल्य रत्नाकर।

की यात्रा के लिए गई थीं तथा बालक की विरक्त भावना को शुरु से जानती भी थी। बालक ने सोचा- मौका अच्छा है, माँ उसे कुछ करने नही देगी, कारण, माँ का सबसे लाड़ला छोटा पुत्र था, अतः माँ की अनुपस्थिति में बालक मैदान में कूद पड़ा माँ ने बहूरानी के स्वप्न सँजोए थे, पर बालक काममल्ल को युद्ध क्षेत्र में पछाड़ने का संकल्प कर चुका था। उसने अखंड ब्रम्हचर्यव्रत आचार्यश्री से ले लिया था।

बालक छोटा था अत लोगो ने आचार्यश्री से इन्कार किया किन्तु दूरदर्शी आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए कहा- "हाथ में आये चमचमाते हीरे को कौन छोड़ता है?"

ब्र छोटेलालजी को भवानी मंडी में आचार्यश्री ने दो प्रतिमा व्रत दिये। पश्चात् अजमेर में उन्नीस वर्षीय होनहार बालक को आचार्य महाराज ने क्षुल्लक दीक्षा दी थी। अजमेर के इतिहास में वह दीक्षा समारोह अपूर्व था। क्षुल्लक जी का अन्वर्थ नाम शान्तिसागर रखा गया। क्षुल्लक अवस्था में घोर उपसर्ग और परीषहों को धीरता से सहने वाले क्षुल्लकजी की प्रसिद्धि चारों दिशाओं मे फैलने लगी।

एक दिन पं सुमेरचन्दजी दिवाकर आचार्यश्री के दर्शनार्थ एव पर्यूषण पर्व मे सुजानगढ़ आये। नमोस्तु किया। पंडितजी की दृष्टि सामने बैठे छोटे से क्षुल्लक महाराज पर पड़ी।

पडितजी ने गंभीरता से क्षुल्लकजी को देखा। छोटी-सी वय में यह क्या?

पडितजी ने कुछ आवेश भरे शब्दो में कहा- "महाराज जी। इनको छोटी अवस्था में दीक्षा क्यों दी? पढ़ाना लिखाना चाहिए था। समाज की रोटी फोकट की है क्या?"

आचार्यश्री तो मात्र मुस्कुरा दिये, बोले- "पंडितजी आप तो पढ़कर महापडित हो गए हो, आओ तुम ही दीक्षा ले लो।" पंडितजी सिर नीचा करके चले गये।

कुछ समय बाद पडित जी, सरल स्वभावी क्षुल्लकजी के पास पहुँच गये। बेचारे बालक तो थे ही, धर्म का विशेष कुछ जानते नहीं थे। पडितजी ने क्षुल्लकजी पर प्रश्नों की बौछार लगा दी। क्षुल्लकजी ने कहा- "पडितजी, अभी मैने अध्ययन शुरू किया है, अभी तो मैं कुछ नहीं जानता हूँ।"

पडितजी ने सहसा कह दिया- "क्या पैसा कमाना नही आता था जो समाज की रोटी खाने आ गये हो।"

क्षुल्लकजी का चेहरा शान्त व गंभीर देख, पडित जी सहम गये। कुछ देर पश्चात् क्षुल्लकजी के शारीरिक लक्षण देख चुप हो, चरणों में नतमस्तक हो पंडितजी मन ही मन पछताते हुए चल दिये।

क्षुल्लक शान्तिसागर एकान्तप्रिय, निस्पृह, ध्यान-अध्ययन पठन-पाठन में संलग्न रहे। आपके प्रवचनों से लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा। रात्रि मे घटो आपका प्रथमानुयोग के आधार से प्रवचन होने लगा। छोटे महाराज के प्रवचन सुनने के लिए जनता आतुर रहने लगी। क्षुल्लकजी ने संघ में, समाज में, गुरुहृदय में स्थान पाया।

क्षुल्लक अवस्था में भी आपकी कठिन चर्या, व आगमनिष्ठ ज्ञान से जन-जन प्रभावित हो रहा था।

सुजानगढ़

भक्तों की विशेष प्रार्थना स्वीकार करते हुए आचार्य संघ १९६८ में चातुर्मास के लिए सुजानगढ़ पहुँच सुजानगढ़ एक धार्मिक नगरी है। यहाँ गुरुभक्तों की सख्या भरपूर है। यह दानवीरों की भूमि है। आचार्य महावीरकीर्तिज महाराज इसे सज्जनगढ़ कहते थे तथा लाडनू को लन्दन। चातुर्मास में सेठ चन्दनमल पाण्ड्या, फूलाबाई पाण्ड्य और रामचन्द्र तथा पत्नी विद्यावती गोलालारे दो धर्मात्मा युगल ने क्षुल्लक-क्षुल्लिका के व्रत आचार्य महाराज लिए। उनके नाम क्रमश - उदयसागरजी, विमलमतीजी, रतनसागरजी तथा सयममतीजी रखे गये।

सुजानगढ़ से विहार कर संघ कल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए पद्मपुरी अतिशय क्षेत्र पर आ पहुँचा।

पद्मपुरी

यहाँ पद्मप्रभ भगवान की अतिशयकारी प्रतिमा भव्यजीवों के मन-मदिर को प्रकाशित करती है। यहाँ का पञ्चकल्याणक उत्सव आचार्य महाराज के सान्निध्य में निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री ने अंगन्यास और सूर्यमं देकर जिन बिंबो में प्राणों का सचार किया। इस अवसर पर ब्र. रतनलालजी लुहाड़िया को आचार्यश्री ने क्षुल्लक पद की दीक्षा दी, नाम रखा- वृषभसागर।

दो आचार्यो का मिलन

सन् १९६९, महावीर जयंती के पावन दिवस पर आचार्य सघ भगवान महावीर के पावन चरणों में, महावी जी अतिशय क्षेत्र पर आ पहुँचा। इस क्षेत्र की महिमा अपने आप में अवर्णनीय है, फिर जहाँ दो आचार्य रूप शीतल सूर्य दीप्तिमान हो जाये तब तो जो शोभा हुई होगी उसका वर्णन कौन कर सकता है।

तीर्थो की शोभा साधुओं से होती है। यहाँ आचार्य महाराज परमपूज्य धर्मसागरजी और आचार्य विमलसागरज का प्रवेश के समय अद्भुत मिलन हुआ। दो धर्मचक्री आपस में हृदय से मिले। चारों और हजारों की सख्य में खड़ा जनसमूह आनन्दाश्रुओं से सजल नेत्रों से एकटक दृश्य देख रहा था। जय-जयकार के उद्घोष से नभोमंडल गुञ्जायमान हो रहा था।

दोनो संघों के मिलाकर ७७ त्यागीयों का सघ, अति वात्सल्य से एक स्थान पर रहा। आपस में बैठक तत्त्वचर्चा, ज्ञानगोष्ठी में जो समय बीतता था उसका स्मरण आज भी साधुवर्ग व श्रावकजन करते है। आहार व चर्या का दृश्य देखकर तो ऐसा लगता था मानो चतुर्थकाल का दृश्य ही उपस्थित हो गया है। सारे त्यागी भगवा महावीर के चरणों में सकल्प करके एक कतार में अपने-अपने क्रम से निकलते थे। निश्चित ही अनुशासित साधुजीव शोभा को प्राप्त होता है।

विहार कर वहाँ से आचार्यश्री पुन मथुरा आये। यहाँ ब्र. हजारीलाल को आपने क्षुल्लक व्रत दिये तथा नय नाम जम्बूसागर रखा। पश्चात् भारतदेश की राजधानी दिल्ली आ पहुँचे।

भारत की राजधानी दिल्ली में चातुर्मास

सन् १९६८ का चातुर्मास पहाड़ी धीरज, दिल्ली में हुआ। यहाँ धर्म की रूची जागृत हुई। सोई जनता पुन धर्म मार्ग में लगी। ब्र. सुमनबाई ने क्षुल्लिका व्रत लिया, नाम शान्तिमती रखा गया, तथा क्षु विजयसागरजी ने ऐलक व्रत ग्रहण कर कुन्थुसागर नाम पाया। अष्टाह्निका में सिध्दचक्र विधान हुआ, महती धर्मप्रभावना और वैराग्य दृश्यों से ह्रदय परिवर्तन हुआ। फलस्वरूप शुक्ला बाई (दिल्ली) ने भी क्षुल्लक दीक्षा लेकर ज्ञानमती नया नाम पाया।

दिल्ली में ही सेठ सोहनलालजी पहाड़िया ने आचार्य संघ से शिखरजी चातुर्मास करने की प्रार्थना की। चातुर्मास के लिए नारियल भेंट किया।

मोक्ष पथ के पथिक सघ ने शिखरजी चातुर्मास के लिए मगल विहार किया। मार्ग में शिक्षा-दीक्षा, उपदेश, तपश्चर्या के द्वारा महती धर्म-प्रभावना हुई। फिरोजाबाद में आगरा निवासी जयमाला बाई को आचार्यश्री ने क्षुल्लिका दीक्षा दी तथा प्रभावती नाम रखा। कोड़ा जैनाबाद ग्राम में ब्र अशर्फीलाल ने क्षुल्लक व्रत की दीक्षा ली, क्षुल्लकजी का नाम श्री श्रुतसागर रखा गया। आगे मार्ग में अनेक भव्यात्माओं ने दो से सात प्रतिमा के व्रत आचार्यश्री से लेकर अपने को कल्याण मार्ग में लगाया। आचार्यश्री संघ सहित राजगृही, कुण्डलपुरी, गुणावा, नवादा, चम्पापुरी, पावापुरी आदि क्षेत्रों की वन्दना करता हुआ पर्वतराज सम्मेदशिखर जी आ पहुँचा।

सन् १९७० का चातुर्मास सम्मेदशिखर पर्वतराज पर हुआ। चातुर्मास का पूरा भार सेठ सोहनलालजी पहाड़िया ने उठाया। इस चातुर्मास में धर्म कार्य का निर्माण हुआ। चातुर्मास बड़े धूम-धाम से हुआ।

यहाँ पार्श्वमती माता जी पहले ही विराजमान थी। माताजी की तीव्र भावना थी की इस पर्वतराज पर तीर्थंकरों के समवसरण अनादि काल से आते रहे है अत इसके प्रतीक स्वरूप समवसरण की रचना बनवाई जाये।

पुण्योदय से माताजी को आचार्यश्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। माताजी ने अपनी भावना आचार्यश्री के सम्मुख निवेदित कर दी। आचार्य महाराज तो सदैव मन-मन्दिर में समवसरण का चिन्तन करते ही है। जिनभक्ति तो आपके रग-रग में भरी हुई है।

आचार्यश्री के सान्निध्य में समवसरण रचना का शिलान्यास हुआ, नींव भरी गई। आचार्यश्री ने जनता में एक आदेश प्रसारित किया- समवसरण रचना की नीव में जिसको भी कुछ डालना है, डाल सकते है- सुनते ही भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ी, दान देने को टूट पड़ी- महिलाओं ने अपने हाथों से कगन, अंगूठी, जो जिसकी समझ में आया वही भर-भर मुट्ठी सोना, नीव में डाला गया। नींव में जितना सोना उस अवसर पर डाला गया है शायद ही कही डाला गया हो।

हमने आचार्यश्री से पूछा- "महाराज जी नींव में इतना सोना डाला गया, उसका क्या महत्त्व है?"

आचार्यश्री ने कहा- "माताजी! नींव जितनी भारी होती है, कार्य उतना अच्छा होता है। नींव में जितना सोना पड़ता है उतना ही शुभ है। क्षेत्र के लिए भी उत्तम होता है।"

समवसरण की रचना में छाने गये पानी का प्रयोग किया गया था। चातुर्मास में ब्र सुरेशकुमार को आचार्य

महाराज ने क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की तथा चन्द्रसागर नाम दिया। क्षुल्लिका अनन्तमती ने यहाँ आर्यिका पद की दीक्षा ग्रहण की और पार्श्वमतीजी नाम पाया। अनेक भव्यात्माओं ने दो, सात प्रतिमा के व्रत लिए तथा अनेक ने शक्ति अनुसार त्याग, संयम ग्रहण किया। श्री सोहनलालजी ने आचार्यश्री के सान्निध्य में वृहत् सिध्दचक्र विधान करवाकर महती धर्म-प्रभावना की।

शिखरजी से पुनः तीर्थों की वन्दना करता हुआ आचार्यसघ 'राजगृही' तीर्थराज पधारा। सन् १९७१ का चातुर्मास यहीं हुआ। चातुर्मास में आचार्यश्री ने ब्र शक्करबाई को आर्यिका दीक्षा व क्षुल्लक प्रबोधसागरजी को मुनि दीक्षा दी। नाम क्रमशः आर्यिका ब्राह्मिमती और मुनिसुव्रतसागरजी रखे गये। कई लोग व्रती भी बने।

सारी खुशियाँ दुख में बिखर गई

आचार्य गुरुदेव महावीरकीर्तिजी महाराज सम्मेदशिखरजी की ओर आने के विचार से विहार कर रहे थे। विहार मार्ग में गाँव-गाँव में श्रावकों को शिखरजी सिध्दक्षेत्र चलने के लिए आचार्य महाराज प्रेरित करते आ रहे थे।

इधर आचार्य विमलसागरजी महाराज अपने गुरुदेव के आगमन की प्रतीक्षा में अनेक खुशियाँ जुटाये बैठे थे। आचार्यश्री ने निर्णय लिया था-गुरु महाराज पधारेंगे तभी दोनो सघ मिलकर एक साथ सम्मेदशिखर पहुँचेगे। संघ के सभी साधुवर्ग भी इन्तजार में थे। खुशियों का ठिकाना नही था।

अचानक दुखद समाचार मिला- 'आचार्यश्री गुरु महाराज महावीरकीर्तिजी की माघ वदी ६ को समाधि।'

समाचार सुनते ही चारों और सन्नाटा छा गया। गुरु महाराज आयेंगे, साथ में सम्मेदशिखर जायेंगे पर यह क्या पहाड़ टूट पड़ा।

उपाध्यायश्री भरतसागरजी महाराज ने हमें बताया था कि वह दुखद दृश्य एक अद्भुत अनहोनी घटना थी। गुरु महाराज का वियोग शिष्य के हृदय में गहरी चोट दे गया। गुरु वियोग सुनते ही अविरल अश्रुधारा बह चली थी। आचार्य महाराज (विमलसागर) के मुख से एक ही वाक्य बार-बार निकल रहा था- "मेरी छत्र-छाया चली गई, मेरा छत्र चला गया।"

आचार्य महाराज (विमलसागर) गुरु महाराज की आज्ञा से सभी कार्य करते थे। अत बार-बार यही कहते थे- "अब मुझे मार्ग कौन बतायेगा, आदि "

जिसने भी इस दृश्य को देखा उसी का हृदय द्रवित हो उठा था। शोकसभा मनाई गई।

सरस्वती भवन

उसी समय आचार्य महाराज ने सभा के मध्य आदेश दिया- "गुरु महाराज की स्मृति में यहाँ महावीरकीर्ति सरस्वती भवन की स्थापना की जायेगी।" आदेश सुनते ही लाखों रुपये तुरत श्रावकों ने दान में दिये। राजगृही का सरस्वती भवन आज जिनवाणी रक्षा का एक महान केन्द्र बन गया है। यहाँ के वाचनालय में सभी प्रकार

के ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

यहीं १८-३-७२ को ब्र. मालतीबाई को आचार्य महाराज ने क्षुल्लिका दीक्षा दी व श्रीमती नाम रखा।

सन् १९७२ में आचार्यसंघ का तथा मासोपवासी मुनि सुपार्श्वसागरजी के संघ का एक साथ चातुर्मास शिखरजी में हुआ। यहाँ ब्र. लक्ष्मीचन्द, ब्र अम्बालाल की मुनि दीक्षा हुई। नामकरण क्रमश मुनि विनयसागरजी व विजयसागरजी हुआ। इसी बीच मुनि अनन्तसागरजी व आचार्य सुपार्श्वमतीजी की सम्यक् समाधि हुई।

इसी पावन क्षेत्र पर आचार्यश्री ने क्षु सुमतिसागरजी व क्षुल्लक शान्तिसागरजी को मुनि दीक्षा दी। नवीन नामकरण मुनि बाहुबलीसागरजी व मुनि भरतसागरजी रखा गया।

एक दिन हमने पूछा- "महाराजजी। दोनो नाम बड़े चुनकर रखे है। पर ये ही नाम क्यों रखे?"

आचार्यश्री ने कहा- "हमने दोनों के नाम इनके गुणों के आधार से रखे हैं।" आचार्य महाराज ने बताया- "बाहुबलीजी तपस्वी हैं, कठोर साधना, आठ-दस उपवास करना तो इनके लिए खेल है। कठोर तपस्वी भ बाहुबली के समान स्वाभिमानी, तपस्वी होने से इनका बाहुबलीसागर नाम रखा है। भरतजी तो भरत चक्रवर्ती सम शान्त, गम्भीर है।

एक बार एक व्यक्ति ने आचार्य जी से शिकायत की- "महाराजजी। भरतसागरजी अकेले वहाँ बैठे हैं, आप अकेले क्यों छोड़ते हैं उनको?"

आचार्य महाराज ने कहा- "आप चुप बैठ जाइये, वे जहाँ भी रहेगे अपना ध्यान-अध्ययन ही करेगे, मुझे उन पर पूर्ण विश्वास है।" शिकायत करने वाला नतमस्तक होकर उल्टे पाँव लौट गया।

मुनि बाहुबलीसागरजी

आप आचार्य सघ के तपस्वी साधु थे। आपने अपने जीवनकाल में आचार्यश्री की जो वैयावृत्ति की उसका वर्णन अकथनीय है। आप सरल स्वभावी साधुरत्न थे। आपके रग-रग में गुरुभक्ति समाई हुई थी। दुर्भाग्यवश वे साधुरत्न, हमारे बीच से सोनागिरजी सिध्दक्षेत्र पर सन् १९८८ में गुरु-चरणों में सम्यक् समाधि को प्राप्त हुए।

मुनि भरतसागरजी

मुनि भरतसागरजी संघ के प्रशांत गंभीर वक्ता, एकान्तप्रिय, साधनाशील, तत्त्वचिंतक, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी संत हैं। आपकी धीर, वीर, गंभीर, प्रशान्त मुद्रा जीवों को मोह लेती है। आप संघ के मनोज्ञ साधु के रूप में शोभायमान हैं। संघ में पठन-पाठन का सारा कार्य आचार्यश्री के उपदेश से आपके द्वारा होता है।

इसी चातुर्मास में पावन क्षेत्र पर ४ क्षुल्लिका माताजी और एक ब्रह्मचारिणी बाई की आर्यिका दीक्षा हुई। उनके नाम क्रमशः आर्यिका श्री पार्श्वमतीजी, जिनमतीजी, शांतिमतीजी, नन्दामतीजी और सुनन्दामतीजी रखे गये।

आर्यिका नन्दामती

नन्दामतीजी संघ में एक विदुषी आर्यिका है। वैयावृत्ति आपका गुण है। जिनवाणी की सेवा में आपका जीवन गुरुचरणों में समर्पित है। सघस्थ साधुओं की वैयावृत्ति में आपका विशेष अनुदान रहता है। आचार्यश्री के पास प्राचीन ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थराजों की सुरक्षा का महान कार्य करके, आप निरतर पुण्यार्जन करती रहती है।

कार्तिक शुक्ला १२ को ब्र. प्रेमचन्द ने मुनिव्रत की दीक्षा आचार्य महाराज से ली। उनका शीलसागर नाम रखा गया।वैशाख में क्षुल्लक वर्धमानसागरजी को आचार्यश्री ने मुनि दीक्षा देकर उनका नाम आनंदसागरजी रखा। चैत्र शुक्ला १५ को मुनिश्री मल्लिसागरजी समाधि को प्राप्त हुए।

सन् १९७३ में गुरु-शिष्य दोनों आचार्य सघों (आचार्य विमलसागरजी और आचार्य सन्मतिसागरजी) का चातुर्मास शिखरजी क्षेत्र पर सानन्द सम्पन्न हुआ। चातुर्मास में आर्यिका महावीरमतीजी, दयामतीजी एव मुनि सकलकीर्ति ने आचार्यश्री के चरणों में सम्यक् समाधि प्राप्त की।

शिखरजी से विहार कर, आचार्य सघ खडगिरि-उदयगिरि पहुँचा। वहाँ से पुन लौटते समय अनेक अजैन बन्धुओं को मद्य-मांस-मधु का त्याग आचार्य महाराज ने कराया, धर्म-प्रभावना काफी हुई।

सन् १९७४ में सघ का चातुर्मास पुन तीर्थराज सम्मेदशिखरजी पर हुआ। चातुर्मास के बाद भी भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य में आचार्यश्री के सान्निध्य में समवसरण रचना का पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव माघ सुदी ८ से १३ तक सानन्द सम्पन्न हुआ। देश के कोने कोने से यात्री बन्धुओं ने पधारकर तथा इस अवसर का लाभ लेकर पुण्योपार्जन किया। पञ्चकल्याणक महोत्सव में, पार्श्वनाथ भगवान के केवलज्ञान के दिन लोहारिया, जिला बाँसवाड़ा निवासी ब्र जिनेन्द्रकुमारजी ने आचार्यश्री से क्षुल्लक दीक्षा ली, जिनका नाम क्षु पार्श्वकीर्तिजी रखा गया। यही सेठ मदनलाल चूड़ीवाल की धर्मपत्नी श्री मौनी बाई को आर्यिका दीक्षा देकर, सम्यक् समाधि आचार्यश्री ने कराई। चैत्र वदी ११ को मुनिश्री वीरसागरजी, जिन्होंने ५ वर्षो से सल्लेखना ले रखी थी, का उत्तम प्रकारेण समाधिमरण आचार्यश्री के चरणों में हो गया।

आचार्यश्री की तीर्थभक्ति तथा भगवान सिध्दों के प्रति महाश्रध्दा का ही यह प्रतीक है कि आचार्य सघ के लगातार तीन-तीन चातुर्मास तीर्थराज सम्मेदशिखर पर हुए। इतना ही नही, जीवन का अधिकाश समय तीर्थक्षेत्रों पर ही व्यतीत हुआ।

एक बार हमने पूछा- "गुरुदेव! शहरो में चातुर्मास करने से भव्यजीवों को उपदेशामृत मिलता, अनेकों जीवों का आपके द्वारा कल्याण भी होता।" आचार्यश्री ने कहा- "हमारे बाप-दादाओं की भूमि में रहना हमें प्रिय लगता है। परिणामों में विशुध्दता बढ़ती है। सिध्दभूमि में सिध्दप्रभु का ध्यान, चिंतन करने से असख्यात कर्मों की निर्जरा होती है।"

हमने पूछा- "महाराजजी! सिध्दभूमि का ध्यान कैसे किया जाता है?"

महाराजजी ने कहा- "हम तो पर्वतराज पर प्रत्यक टोंक पर जाकर जब चरणों को नमन करते है तो भावों से साक्षात् उसी स्थान पर विराजमान लोकाग्रस्थित सिध्द भगवान के दर्शन करते है। सिध्दों के पास लोकाग्र में

बैठकर आत्मचिंतन हम किया करते है, उसका आनन्द वर्णातीत है।''

ॐ सिध्दाय नमः

सन् १९७५ का चातुर्मास राजगृही क्षेत्र में हुआ। राजगृही में बृहत्सिध्दचक्र विधान हुआ। राजगृही सिध्दक्षेत्र पंच पहाड़ी नाम से प्रसिध्द है। यहाँ श्री वासुपूज्य भगवान को छोड़कर २३ तीर्थंकरों का समवसरण आया था। हरिवंशपुराण में लिखा है- ''पंचशैलपुरं पूतं मुनिसुव्रतजन्मना'' (३-५२).

यह पंचशैलपुर राजगिरि भगवान मुनि सुव्रत के जन्म के द्वारा पवित्र है। भगवान महावीर के समवसरण में मुख्य प्रश्न-कर्ता का गौरव जिन श्रेणिक महाराज (बिम्बसार) को प्राप्त हुआ, उनकी वह राजधानी थी। यहाँ पंचपहाड़ी की वंदना की जाती है। राजगृही के पूर्व में चतुष्कोण आकारवाला ऋषि-शैल है। दक्षिण में वैभारगिरि, नैऋत्य दिशा में विपुलाचल दोनों त्रिकोण है। पश्चिम, वायव्य तथा उत्तर दिशा में धनुषाकार छिन्न नाम का पर्वत है। ईशान दिशा मे पांडु पर्वत है। पाँचो ही पर्वत कुशसमूह से वेष्टित है।

राजगिरि को प्रथम धर्म देशना का प्रथम सौभाग्य मिला है।

भगवान महावीर स्वामी ने धर्मतीर्थ का प्रथम उपदेश कहाँ दिया, इसके समाधान में जयधवला टीका में लिखा है- ''राजगिरि में।''

राजगिरि में आते ही जैन संस्कृति के ज्ञाता के चित्त में महावीर भगवान के विपुलाचल पर समवसरण आने की तथा धर्मामृतवर्षा की आगमोक्त बात स्मृतिपथ में आये बिना नहीं रहती है।

आचार्य महाराज ने संघ सहित पंचपहाड़ी की वन्दना की थी। इस पर्वत की चढ़ाई बड़ी कठिन होती है पर आचार्यश्री तो बच्चे की तरह, आसानी से वन्दना पूरी करते थे।

चातुर्मास सम्पन्न होते ही आचार्यश्री पुन , जिनके दर्शन से सर्व पाप क्षय हो जाते है, ऐसे तीर्थराज सम्मेदशिखर की ओर संघ सहित पधारे। सन् १९७६ का चातुर्मास तीर्थराज पर ही हुआ। यहाँ ब्रह्मचारी जी की क्षुल्लक दीक्षा हुई, नाम विपुलसागर रखा गया। ब्र बोधुलाल, और कमलादेवी तथा ब्र छोटेलाल की दीक्षाएँ हुई, नाम क्रमश क्षु उत्साहसागर, क्षुल्लिका कीर्तिमती व क्षु. मतिसागर रखे गये।

सात वर्षो के बाद आचार्यश्री ने बिहार प्रान्त को छोड़कर उत्तर की ओर विहार किया। पावन तीर्थो की वन्दना करते हुए आचार्य संघ टिकैतनगर आ पहुँचा। सन् १९७७ का चातुर्मास त्यागी आत्माओं की जन्मदात्री परम-पावन भूमि टिकैतनगर में हुआ। टिकैतनगर में आचार्य संघ के प्रवेश के समय बड़ी तैयारियाँ की गई थी। सारा नगर इन्द्रपुरी की तरह सजाया गया था, विशाल जुलूस में हजारों नर-नारियों ने भाग लिया था। काफी धर्म-प्रभावना हुई।
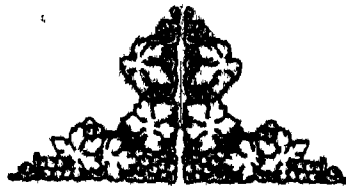
टिकैतनगर

यह नगरी एक पावन भूमि है, जहाँ पू. आर्यिकारत्न ज्ञानमतीजी माताजी ने जन्म लिया। आपके परिवार में माता, भाई, बहन सभी ने धर्म की प्रभावना की है। आपकी माता ने आर्यिका व्रत धारण कर समाधि ली। चार बहनें, एक भाई पाँच-पाँच बाल-ब्रह्मचारी रत्न इस पावन भूमि से मोक्षमार्ग में लगे और वर्तमान में धर्म की प्रभावना कर रहे हैं।

यहाँ चातुर्मास में अनेक धार्मिक अनुष्ठान हुए। चातुर्मास बड़े धूम-धाम से मनाया गया। आश्विन कृष्णा सप्तमी को आचार्यश्री का जन्म-जयन्ती समारोह मनाया गया । जयन्ती के उपलक्ष्य में सेठ श्री पन्नालाल सेठी ने आये हुए जनसमूह को प्रीतिभोज दिया।

कार्तिक सुदी पूर्णमासी को मगल विहार करके सघ त्रिलोकपुर नेमिनाथ अतिशय क्षेत्र के दर्शन करता हुआ गणेशपुर पहुँचा। गणेशपुर में पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा आचार्यश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुई। सूर्यमत्र की विधि आपके द्वारा सम्पन्न कराई गई। यहाँ से विहार करके आचार्यश्री ने अयोध्या में हो रहे पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा के लिए प्रस्थान किया।

अयोध्या

तीर्थंकर जैसे महापुरुषों को जन्म देने वाली पावन भूमि है अयोध्या। आगम आज्ञा से प्रत्येक चतुर्थ काल में नियम से २४ तीर्थंकरों का जन्म यहीं होता है, लेकिन इस समय कालदोष (हुण्डावसर्पिणीकाल) होने के कारण तीर्थंकरो का जन्म भिन्न-भिन्न भूमियों में हुआ। इसी पावन भूमि पर मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने जन्म लिया।

भगवान आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ तथा अनन्तनाथ की जन्मभूमि अयोध्या नगरी में, आचार्यश्री के सान्निध्य में पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर आचार्यश्री ने क्षु. मतिसागरजी को मुनि-दीक्षा दी। सघ यहाँ करीब डेढ माह तक रहा। शान्तिविधान, ऋषिमडल आदि धर्मानुष्ठानो को आपके सान्निध्य में कराने से बड़ी धर्म प्रभावना रही। अयोध्या से विहार कर आचार्यसघ श्रावस्ती पहुँचा।

श्रावस्ती

श्रावस्ती श्री संभवनाथ भगवान की जन्मभूमि है। यहाँ आचार्यश्री ने तीन दिन तक विश्राम किया। जैन-अजैन धर्मबन्धुओं में आपके धर्मोपदेश से भारी धर्मप्रभावना हुई। अनेक जीवों ने मद्य, मास, मधु का त्याग किया।

माघ सुदी ६ को बहराईच ग्राम में आचार्यश्री १०८ पूज्य श्री महावीरकीर्तिसागरजी महाराज का पुण्य दिवस मनाया। यहाँ से बाराबकी होते हुए डालीगज लखनऊ में बसत-पञ्चमी के धार्मिक मेले पर पहुँचकर आचार्यसंघ ने मेले की शोभा बढ़ाई। लखनऊ के सभी जिनमन्दिरों के दर्शन किये। यहाँ से महमूदाबाद पञ्चकल्याणक में आपके द्वारा अच्छी धर्मप्रभावना हुई।

आचार्यश्री जाप मुद्रा मे

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
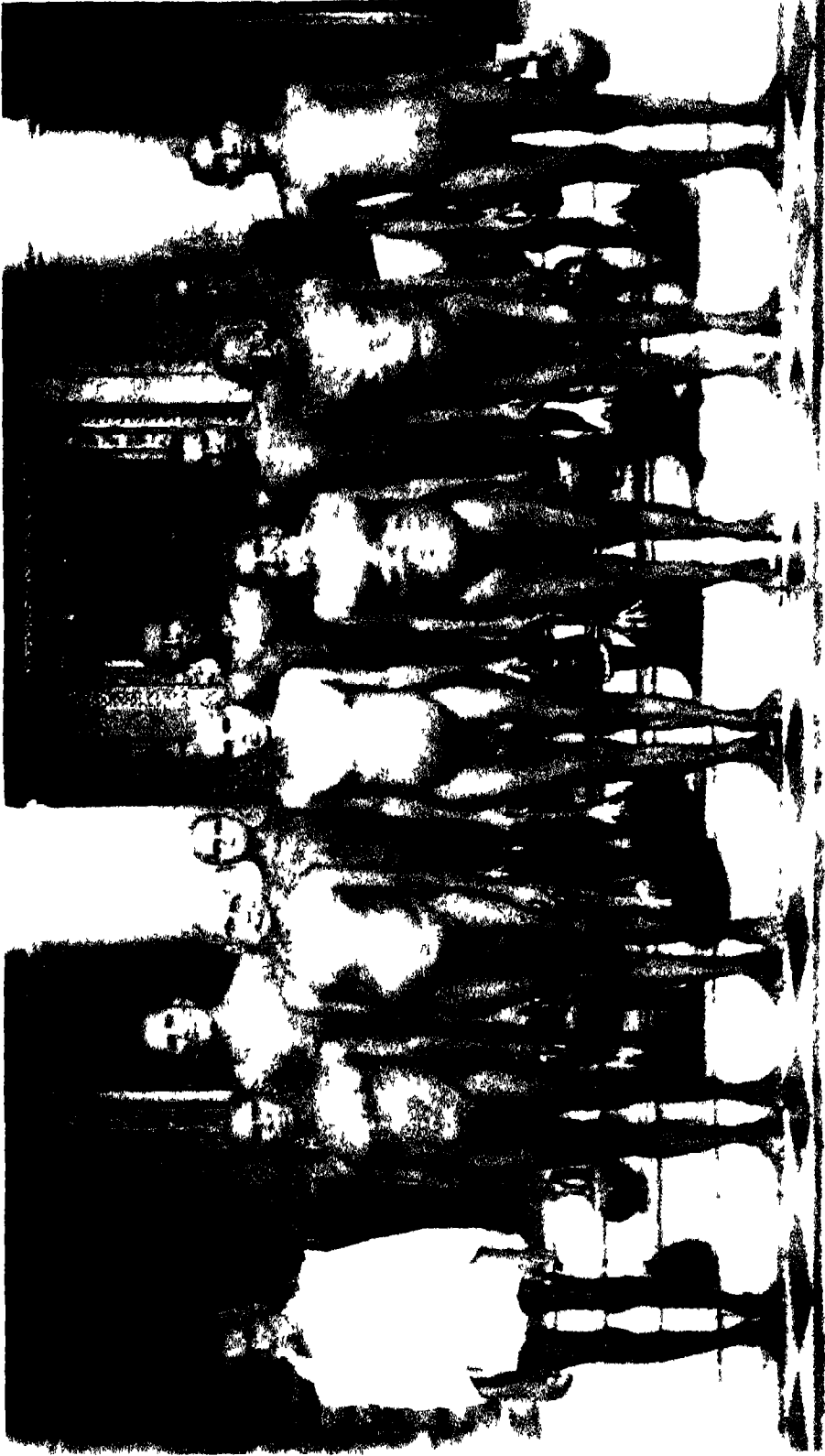
क्षु १०५ श्री चद्रसागरजी, मुनि १०८ श्री सुव्रतसागरजी (समाधि), मुनि १०८ श्री अरहसागरजी, आचार्यश्री, मुनि १०८ श्री सम्भवसागरजी (समाधि), मुनि १०८ श्री वीरसागरजी (समाधि), मुनि १०८ श्री भरतसागरजी (वर्तमानमे उपाध्याय), मुनि १०८ श्री आनदसागरजी (समाधि), मुनि १०८ श्री शीलसागरजी (समाधि), मुनि १०८ श्री माघनदीजी (समाधि), मुनि १०८ श्री बाहुबलीसागरजी (समाधि), ऐ १०५ श्री चद्रसागरजी (समाधि)

आचार्य कल्प श्रुतसागर जी तथा आचार्य श्री विमलसागर जी
नमोस्तु प्रतिनमोस्तु करते हुए।

युगल आचार्यो का अभूतपूर्व मिलन लोहारिया राजस्थान मे
(आ श्री अजितसागरजी व आचार्य श्री विमलसागर जी)

आचार्यश्री धर्मसागरजी, आचार्य श्री विमलसागरजी, आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी
एव श्री अरहसागरजी, (श्री महावीरजी)

आचार्यश्री अपने शिष्यो के साथ।
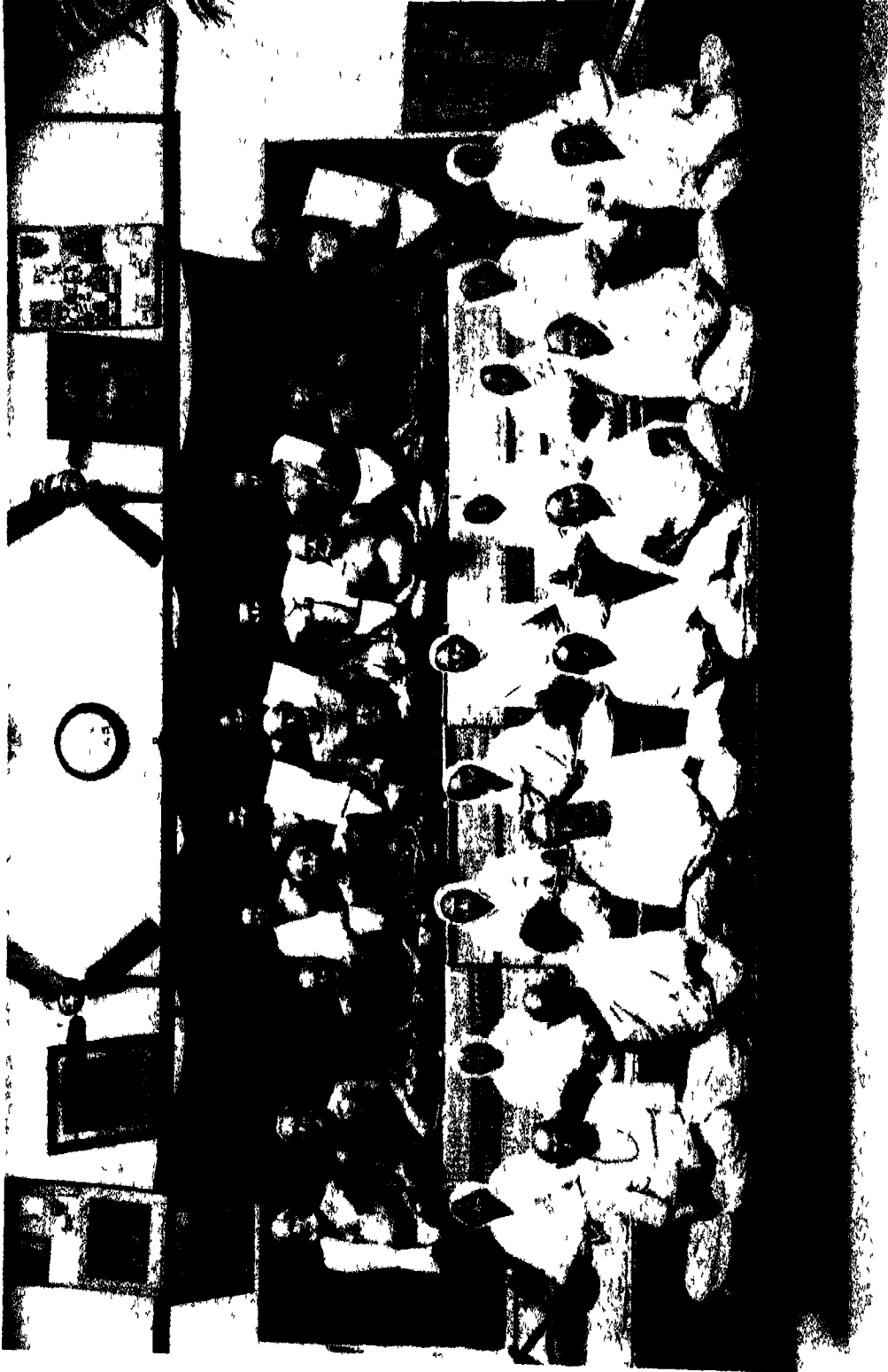
पहाडी धीरज दिल्ली मे श्री १०८ आचार्य रत्न श्री विमलसागर जी महाराज का सघ सहित चातुर्मास

स २४९६ सन् १९६९

।वात्सल्यरत्नाकर।
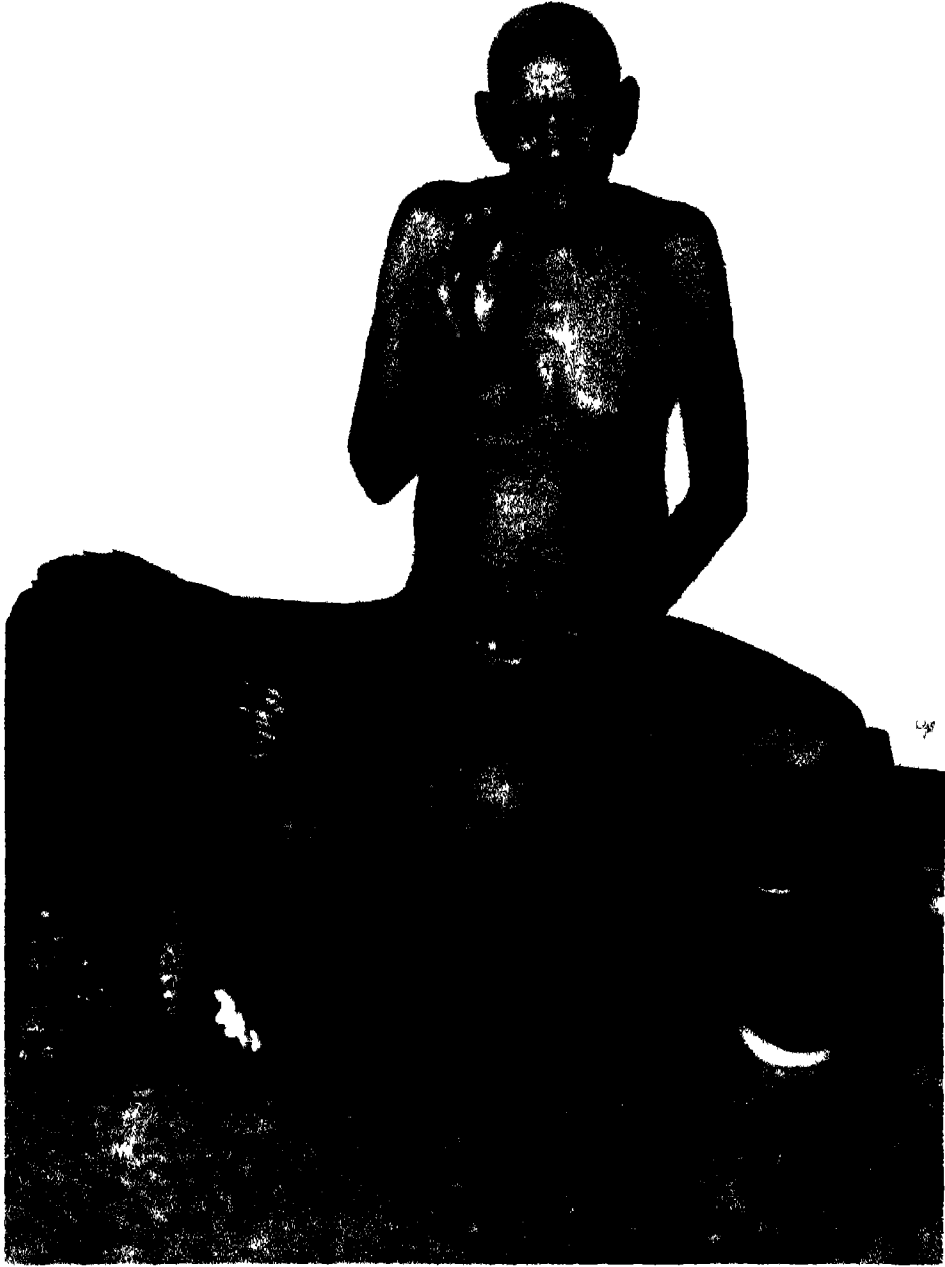
॥वात्सल्यरत्नाकर॥

आचार्यश्री की मगल दीपको से आरती करती हुई श्रीमती सौ कैलाशवती जी,
धर्मपत्नी लाला श्रीपाल जी जैन पहाड़ी धीरज, दिल्ली।

आचार्यश्री संघसहित प्रतिक्रमण करते हुए (सम्मेदशिखरजी)

वेदी-प्रतिष्ठा

सीतापुर में वेदी-प्रतिष्ठा में पधारने के लिए निर्मलकुमारजी सेठी ने आचार्यश्री से सविनय प्रार्थना की। आचार्य महाराज ने स्वीकृति दे दी। वेदी-प्रतिष्ठा का कार्य आचार्यश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

निर्मलजी की प्रार्थना

प्रतिष्ठा के बाद निर्मलजी ने आचार्यश्री से प्रार्थना की- "आचार्य महाराजजी! आप यहाँ १५ दिन और ठहरिये।"

आचार्यश्री ने कहा- "भय्या निर्मल, आप हमें भूखे रखते हो, बताओ यहाँ कैसे रहें?"

निर्मलजी समझ नही पाये।

आचार्यश्री ने पुनः कहा- बेटा! तुम्हारे घर पर आये है, पर भूखे जाना पड़ता है। बेटा तुम शुद्र-जल का त्याग करो तब तो यहाँ हम कुछ दिन रह सकेंगे।

छोटी उम्र थी, युवावस्था थी, पर गुरुवचन शिरोधार्य कर निर्मलजी ने तुरन्त शुद्र-जल का त्याग कर आचार्यश्री को आहार-दान दिया।

निर्मलजी ने आचार्यश्री के सानिध्य में वृहद् सिध्दचक्र विधान कराया। विधान का कार्य बहुत सुन्दर, उत्तम रीति से सम्पन्न हुआ। विधान की पूजा एक गोडाउन में हुई थी। वह स्थान तीर्थवत् बन गया था।

पूजा के बाद दान राशि की घोषणा हुई। निर्मलजी ने आचार्यश्री के चरणो में नियम किया- जिस गोडाउन में विधान की पूजा हुई है उसका किराया जितना भी आयेगा वह जीवन भर दान में लगाया जायेगा। सत्य है, महापुरुषो के चरण-रज से कण-कण भूमि तीर्थ बन जाती है।

सीतापुर से संघ बरेली पहुँचा। मंदिर में पहुँचते ही आचार्यश्री के परिणामों में वहाँ एक मानस्तंभ के निर्माण का विचार आया। आचार्यश्री ने अपना प्रस्ताव समाज के सामने रखा। समाज ने सहर्ष स्वीकार किया, मिनटों मे हजारों रुपये इकट्ठे हो गये। विशाल मानस्तंभ आज मंदिर की शोभा को बढ़ा रहा है।

अहिच्छत्र पार्श्वनाथ

यहाँ से आचार्यसंघ अहिच्छत्र पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र पहुँचा। कहा जाता है कि यहाँ भगवान पार्श्वनाथ पर कमठ के जीव ने घोर उपसर्ग किया था। बहुत प्रयत्न करने के पश्चात् भी बैरी कमठ उन्हें चलायमान नहीं कर सका। ध्यान के प्रभाव से पार्श्वनाथ प्रभु को केवलज्ञान हो गया। त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थ उनके ज्ञान में एक साथ झलकने लगे। देवों ने समवसरण की रचना की। बैरी कमठ यह सब कुछ देखकर पश्चाताप की अग्नि से जल उठा। उसने भगवान के पास जाकर क्षमा माँगी, मिथ्यात्व का त्यागकर सम्यक्त्व प्राप्त किया, अणुव्रत धारण किया।

यहाँ आचार्यश्री के सान्निध्य में पञ्चकल्याणक महोत्सव विशेष प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ। यहाँ से विहार कर संघ श्रुतपंचमी पर्व पर मुरैना पहुँचा।

मुरैना

मुरैना गुरुदेव आचार्यश्री की सम्यक्ज्ञानदायिनी मातृभूमि है। यहाँ प गोपालदासजी बरैया द्वारा स्थापित छात्रावास है। इस (छात्रावास) विद्यालय ने जैन संस्कृति के प्राण - त्यागी, ज्ञानी, तत्त्वचिंतकों को उत्पन्न कर जैन (श्रमण) संस्कृति की जो रक्षा की है और धर्म की ध्वजा फहराई है, जैन समाज उसे कभी भी नहीं भुला सकेगा। यह पावन भूमि, श्री गुरुदेव की विद्याभूमि होने से हमारे लिए तीर्थवत् है।

यहाँ श्रुतपंचमी बड़े उत्साह से आचार्यश्री के सान्निध्य में मनायी गयी। जिनवाणी को रथ में विराजमान कर जुलूस निकाला गया। श्रुतस्कन्ध यत्र का अभिषेक व धवला-जयधवला आदि सिध्दान्त ग्रन्थों की अष्टद्रव्य से पूजा की गई। मुनिश्री भरतसागरजी महाराज ने श्रुतपचमी पर्व पर मार्मिक उपदेश हुआ। आपने पर्व की महिमा व श्रुतावतार के सबंध में प्रकाश डाला! आचार्यश्री ने जिनवाणी की विनय कैसे करे, इस बात पर मार्मिक उपदेश दिया तथा जनता मे एक आदेश किया कि यह पर्व जिनवाणी की रक्षा का पर्व है। मुरैना की जनता का कर्तव्य है कि वे प्रतिवर्ष इसी प्रकार यह पर्व मनाया करें और आगम की रक्षा करें।

मुरैना से सिहोनिया अतिशय क्षेत्र के दर्शन के लिए प्रस्थान किया।

सिहोनिया

यहाँ शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ भगवान की मनोज्ञ वीतराग जिनप्रतिमाएँ है। तीनो मूर्तियाँ एक विशाल पाषाण पर, एक साथ है। जानकारी से ज्ञात हुआ है कि ये मूर्तियाँ एक खेत में पाई गई थी। यह भूमि इतनी पावन है कि आज भी खेत-खेत में मूर्तियाँ मिलती है। मूर्तियाँ सागोपाग है, पर खेद इस बात का है कि हमारी प्राचीन निधियों की ओर विशेष ध्यान नही दिया जा रहा है। मदिर पूरा खडहर पड़ा हुआ है। धर्मात्माओं, श्रमण सस्कृति के रक्षक बन्धुओं का कर्तव्य है कि प्राचीन मदिरों के जीर्णोध्दार में अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करे।

सोनागिरजी

आचार्यसघ आषाढ़ वदी ८ दिनाक २८-६-७८ रविवार को पावन सिध्दक्षेत्र सोनागिरजी पधारा। यहाँ पर पहले से ही आचार्यश्री कुन्थुसागरजी महाराज, तथा आर्यिका विजयमतीजी सघ सहित विराजमान थे। दोनो सघो का चातुर्मास - स्थापना का कार्य आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी को सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास में आचार्यश्री एक आहार और एक उपवास कर रहे थे। फिर भी प्रतिदिन प्रात पहाड़ के ७७ मदिरों की पूरी वन्दना व सायंकाल नीचे के १७ मदिरों की वन्दना तथा परिक्रमा का कार्य निर्बाध चलता था। गर्मी, सर्दी वा वर्षा का प्राकृतिक प्रकोप जितेन्द्रिय आचार्यश्री को कभी प्रभावित नही कर पाया। भगवान चन्द्रप्रभ का पञ्चामृत अभिषेक भर-भर घड़ो से होता था, आज भी होता है। बिना अभिषेक के इन्हें कभी सतोष नहीं आता।

आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज की समाधि का १८ वाँ दिन था। महाराज ने प्रबधको से कहा था, "जब तुम लोग पूजा की बोली द्वारा हजारों रुपया वसूल करते हो, तब अभिषेक के लिए केशर, दूध, दही, आदि

के परिमाण में कमी क्यों करते हो?" दूसरे दिन से बड़े वैभवपूर्वक अभिषेक होने लगा। ऐसे भव्य अभिषेक को ध्यान पूर्वक देखने पर उनके हृदय को बड़ा संतोष मिलता था।

यदि वह घी, दूध, दही से किया गया जिनेन्द्राभिषेक, आचार्यश्री की अत्यन्त विरक्त तथा यम सल्लेखना के शिखर पर समारूढ़ आत्मा को शान्ति प्रदान न करता तो वे देह की क्षीण अवस्था में क्यों बहुत समय बैठकर अभिषेक व दर्शन में अपना बहुमूल्य समय देते। आचार्यश्री की प्रवृत्ति आगम विरूध्द कभी नही रही। (चा. च)।

पक्ष-व्यामोह छोड़कर आगम के अनुसार महान संतों के चरणों का अनुगमन करना श्रेयस्कर है। चातुर्मास के समय आचार्यश्री प्रतिदिन नगानग भगवान के चरणों के दर्शन करते तो उन्हें दोनों की सुन्दर मूर्तियाँ ही नजर आती थी। आपकी भावना मुक्ति को प्राप्त नग-अनग की मूर्तियाँ पर्वतराज पर स्थापित करने की थी। भावना को जानते ही सेठ चैनरूप बाकलीवाल और पन्नालाल सेठी ने इस पुण्य कार्य में धन लगाने की स्वीकृति सहर्ष प्रदान की।

आचार्यश्री का जन्म-जयन्ती समारोह यहाँ उत्साहपूर्वक मनाया गया। पन्नालालजी सेठी ने इस पावन अवसर पर विधान मंडल मँडवाकर तीन दिन उत्साहपूर्वक जिन पूजा की तथा समस्त जैनाजैन भाइयों को प्रीतिभोज कराया। चातुर्मास के समापन के उपलक्ष्य में अनतनाथ भगवान के मंदिर में, सेठ नेमिचन्द जी व इंजीनियर सा और ताराचन्दजी ने बड़े ठाटबाट से बृहद् सिध्दचक्र विधान कराया।

क्षेत्र पर गुरुओं के उपदेश सुनने के लिए विशाल जनसमूह के बैठने के लिए स्थान की कमी थी अत. यहाँ पर संघस्थ चित्राबाईजी ने सभाभवन बनवाने का भार स्वीकार किया। आज सुन्दर सभाभवन में बैठकर जिनवाणी का अमृतपान करने की सुलभता है।

'विमल सभाभवन' जीवों के विमल परिणामों के बनाने में सहकारी है।

चातुर्मास के पश्चात् बुन्देलखण्ड के पावन तीर्थो की वन्दना करते हुए आचार्यसंघ पुन· सोनागिर सिध्दक्षेत्र पर चातुर्मास के लिए पधारा। चातुर्मास के स्थापना के पूर्व श्रुतपचमी के पावन अवसर पर यहाँ आचार्यश्री संघ के सान्निध्य में श्रुतसप्ताह मनाया गया। एक सप्ताह तक जिनागम कथित सप्त तत्त्वों का विवेचन, उपदेश, त्यागी और विद्वानों द्वारा विशेष रूप से हुआ। सम्यक् ज्ञान के प्रचार से धर्म की महती प्रभावना हुई। सन् १९७९ में ५ जून को आचार्यश्री के शुभाशीर्वाद से यहाँ पर 'स्याद्वाद नगानगकुमार संस्कृत महाविद्यालय' की स्थापना हुई।

एक और चातुर्मास

१९७९ का चातुर्मास भी इसी पावन तीर्थराज सोनागिर पर हुआ। इस चातुर्मास में दिल्ली के सेठ सुमतिप्रसाद जी एवं कोमलचंदजी भोपाल ने अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करके महापुण्योपार्जन किया। चातुर्मास में ऐलक पार्श्वकीर्तिजी की मुनि दीक्षा हुई तथा नाम वही रखा गया। बाल ब्र. ऐरावतीबाई, सुधर्मा बाई की दीक्षाएँ हुई- नाम क्षु. अनंगमती व आर्यिका नंगमतीजी रखे गये। यही पर आर्यिका भरतमतीजी और क्षु. नंगसागरजी को भी आचार्य महाराज ने दीक्षा दी थी।

उपाध्याय पद

आचार्यश्री के ६४ वे जन्म-दिवस पर हजारों नर-नारी दूर-दूर से आये थे। इसी पावन प्रसग पर संघस्थ अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, तत्त्वचिंतक, गभीर और प्रशान्तमूर्ति भरतसागरजी को चतु सघ की सम्मति से उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित किया गया। आचार्यश्री ने उपाध्याय दीक्षा के सस्कारों की विधि से सस्कारित कर, पुष्पक्षेपण कर मंगल पद की प्रतिष्ठा की। चातुर्मास निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

२९-११-७९ मार्गशीर्ष सुदी ११ से १५ तक आचार्यश्री के सान्निध्य में श्री १००८ नगानग कुमारभगवन्तों की प्रतिमाओं का पञ्चकल्याणक बड़े उत्साह के साथ सेठ श्री निर्मलकुमारजी दिल्ली वालों ने कराया। इसी मगल अवसर पर ज्ञानकल्याणक के दिन आचार्य महाराज को सन्मार्ग दिवाकर धर्मालकरण से अलकृत किया गया। चतु सघ व जैन समाज ने तालियों के स्वर-घोष के साथ जय-जयकार की ध्वनिपूर्वक इस पदवी का स्वागत किया।

सन्मार्गदिवाकर

इस कलिकाल में संसारी जीव दु खों से भयभीत है, गृहीतमिथ्यात्व का पोषण करके जीवन को सुखी बनाना चाहता है। रोग-शोक, आधि-व्याधि का शिकार होने पर मिथ्यात्वपोषक तत्वों को मान्यता देकर पतन के गर्त में गिर रहा है। ऐसे समय में, आचार्य महाराज ने सत्यधर्म का उपदेश देकर, असख्य भव्यजीवों को सत्य का मार्ग दिखाया है। इसी से प्रभावित होकर, प मक्खनलालजी शास्त्री (मोरेना विद्यालय के प्राचार्य आपके शिष्यगुरु) ने आचार्य महाराज को जीवन के अन्तिम क्षणों में इस पदवी से अलकृत किया। गाँव-गाँव में, घर-घर में आपने सत्य का दीपक प्रज्वलित करने का महत् पुरुषार्थ किया।

तीन परमेष्ठियों से सुशोभित सघ का विहार यहाँ से बाहुबली के महामस्तकाभिषेक के अवसर पर सम्मिलित होने के लिए पावन तीर्थराज गोम्मटेश्वर की ओर हुआ। विहार की शोभा दर्शनीय थी। आगे-आगे आचार्यश्री, उनके ठीक पीछे उपाध्यायजी, उनके पीछे मुनिवृन्द, आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका चलते थे।

आचार्यसघ, अतिशय क्षेत्र करगुवाँ, सिध्दक्षेत्र पावागिरि भी दर्शनार्थ पहुँचा। ललितपुर होते हुए संघ मालथौन पहुँचा। यहाँ पर दो ऐलक महाराज, आचार्यश्री के दर्शनों के प्यासे, चातक पक्षी के समान बाट जोह रहे थे कि उनकी प्रतिक्षा की घड़ियाँ पूर्ण हुई।

ऐलक दर्शनसागरजी और शीलसागरजी ने आचार्यश्री के चरणों में त्रिभक्तिपूर्वक नमोस्तु किया ही था कि आचार्यश्री के मुख से शब्दों के रूप में अमृत बरस पड़ा- "क्या मुनि बनने आये हो।" दोनो ऐलक महाराज ने सोचा-हम तो सुनते ही थे कि आचार्यश्री निमित्तज्ञानी है पर आज तो हमने प्रत्यक्ष देख भी लिया। दोनो ने कहा- "गुरुदेव! आपने हमारे मन की भावना को कैसे जान लिया?"

आचार्यश्री ने कहा- "हमारी आत्मा में जो आवाज आयी, हमने कह दी। वह कैसे? सो हम नही जानते।"

वात्सल्य-करुणामूर्ति, सन्मार्गदिवाकर के प्रिय वचनों की आकर्षण शक्ति से प्रभावित दोनों ने गुरुचरणों में अपना जीवन समर्पित कर मुनिधर्म की दीक्षा आचार्यश्री से माँगी। दोनो की योग्यता का परिक्षण कर आचार्यश्री ने स्वीकृति

प्रदान की। माघ शुक्ल पूर्णिमा को आचार्यश्री ने 'बालावेट' में दोनों को मुनिदीक्षा प्रदान की। नाम- मुनि पुष्पदंतसागरजी और भूतबलिजी रखे गये।

बालावेट मे पार्श्वनाथ भगवान की सप्तफणी, पद्मासन, अति मनोज्ञ जिनप्रतिमाओं के दर्शन कर सघ ने विहार किया।

विहार कितना विहार? उत्तर से दक्षिण, दक्षिण से उत्तर। इतना क्यों? एक बार हमने आचार्यश्री से पूछा- "इतना अधिक विहार क्यों करते है।" आचार्यश्री ने कहा- "बेटा। अभी तो कुछ भी विहार नही होता है। अब किलोमीटर बन गये हैं। पहले हम मीलों चलते थे।" आचार्यमहाराजश्री ने बताया, पहले हम दो उपवास और एक आहार करते थे। तब एक दिन में ४० मील उपवास के दिन चलते थे। ९० मील चलकर आहार करते थे और यदि अन्तराय हो गया तो फिर दो दिन का उपवास रहता था अर्थात् १८० मील पर भी आहार हो जाय, तो हो जाय। सब भाग्याधीन बात थी।

आचार्य महाराज से हमने पूछा- "गुरुदेव। उपवास में तो चलने में तकलीफ होती होगी।"

आचार्य महाराज ने कहा- "उपवास के दिन शरीर हल्का रहता है, प्रमाद सताता नही है अत अधिक चलना हो जाता है।"

आचार्यश्री का जितना विहार हुआ, इस युग में आज तक शायद ही किसी साधु ने किया होगा। परतु विहार आगम की छत्र-छाया को लेकर ही हुआ। आपने व्यर्थ परिभ्रमण या मनोरजन के लिए कभी भी विहार नही किया। आपका विहार चार शुध्दियों पूर्वक हुआ, जैसा कि मूलाचार में बताया गया है- साधु को विहार की चार शुध्दियों को हमेशा ध्यान में रखकर विहार करना चाहिए- (१) प्रकाश-शुध्दि, (२) मार्ग-शुध्दि, (३) आलम्बन-शुध्दि और (४) उपयोग-शुध्दि। आलम्बन-शुध्दि का अर्थ यह है कि दिगम्बर साधु को तीर्थो की वन्दना, गुरुदर्शन, पञ्चकल्याणक, अध्ययन आदि के लिए विहार करना चाहिए।

पाठकगण विचार सकते है, शुरु से आज तक आचार्यश्री का जितना भी विहार हुआ सारा ही तीर्थो की वन्दना, प्रतिष्ठा-महोत्सव व गुरुदर्शन के लिए हुआ। आपका एक दिन भी विहार मनोरञ्जन या टहलने के लिए नही हुआ।

इतना ही नही, आचार्यश्री ने पुण्यकार्यो में भाग लेने में भी कभी प्रमाद नही किया। गर्मी हो या सर्दी, शरीर-स्थिति कितनी भी अस्वस्थ हो, पर कोई छोटा आदमी भी आकर कह दे- गुरुदेव! हमारे गाँव में प्रतिष्ठा है, आपको पधारना होगा, गुरुदेव ने सदैव तुरन्त ही स्वीकृति प्रदान की है। किसी समय भी कोई आकर कहे- गुरुदेव! हमें आपके सान्निध्य में विधानमंडल करवाना है, गुरुदेव तुरन्त प्रसन्न हो मुस्कुरा देते हैं, इसलिए पुण्य आपके चरणों में लोट रहा है। पर पुण्य को भी विभाव परिणति मानकर आप उससे भी अलिप्त रहते हैं।

किसी ने पूछा- "गुरुदेव। पुण्य तो हेय है, हम क्या करे? आचार्यश्री ने मार्मिक उत्तर दिया- "पुण्य फल अरहंता, पुण्यका फल अरहन्त पद है।"

पुनः किसी ने पूछा- "पाप-पुण्य दोनो छोड़ने योग्य हैं क्योंकि विभाव भाव है।"

आचार्यश्री ने कहा- "अपेक्षाकृत आपका कथन ठीक है कि दोनो विभाव है पर याद रखें- जैसे पाप को बुध्दिपूर्वक छोड़ा जाता है वैसे पुण्य को नही। पुण्य स्वय छूट जाता है, छोड़ना नही पड़ता।" आचार्य महाराज ने उदाहरण दिया- "आपको एक मजिल ऊपर अपने कमरे में पहुँचना है। २० सीढ़िया बनी हुई हैं। ऊपर पहुँचने के लिए प्रत्येक की अपनी-अपनी उपयोगिता है। आगे की सीढ़ी पर पहुँचते ही पहले वाली स्वयं छूट जायेगी। कमरे में पहुँचते ही २० सीढ़ियाँ स्वय छूट गई। पर कोई यह कहे- नही, मै इन सीढ़ियों को नहीं छोडूँगा, इनके सहारे यहाँ तक आया हूँ, पकड़कर बैठ जाये तो बात बनती नही, ठीक उसी प्रकार, शुध्द अवस्था की प्राप्ति के पूर्व तक पुण्य कथंचित् उपादेय है।"

पुण्य हेय नही है, पुण्य के फल में वाञ्छा करना हेय है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य परम्परा से मुक्ति का कारण होता है।

आगे विहार करते हुए, आचार्यश्री ईशरवारा अतिशय क्षेत्र के दर्शन करते हुए ससघ धर्मनगरी सागर पहुँचे।

सागर

ज्ञान के अनेक सागरों को जन्म देने वाली यह पावन नगरी है। इस नगरी ने अनेक सरस्वती-पुत्रों को जन्म दिया है। अनेक सस्कृत ग्रन्थों की टीका करने वाले पडित पन्नालाल साहित्याचार्य इसी भूमि की अमर देन है। यहाँ के संस्कृत विद्यालय से अनेक विद्वान् निकले जो जैन धर्म की सस्कृति के सरक्षणार्थ अपना योगदान दे रहे है।

आचार्यश्री के स्वागत की तैयारियाँ जोरदार हुई थी। चारों ओर बन्दनवारो से नगरी सजाई गई थी। विशाल जुलूस निकाला गया। सघ सस्कृत महाविद्यालय मोराजी में ठहरा। चारों ओर भीड़ लगी थी।

सघ की व्यवस्थानुसार सघ में विराजमान तीर्थंकरप्रभु के पञ्चामृत अभिषेक-विधी की क्रिया आरम्भ हुई। अभिषेक को देखने के लिए हजारों नर-नारियों की भीड़ जमा थी। जल, इक्षुरस, घी, दूध, दही, सर्वोषधि, चतुष्कोण व सुगंधित जलधारा से पञ्चामृताभिषेक के पश्चात् शातिधारा हुई, सभी लोगों ने अभिषेक को अपने मस्तक पर लगाकर जीवन पवित्र और सफल बनाया।

सत्य बात स्वयं मुख से निकल पड़ी

दोपहर में प्रवचन सभा हुई। आचार्यश्री के उपदेश-अमृत को सुनने के लिए जनता लायित हो रही थी। सर्वप्रथम सागर के प्रसिध्द समाजसेवक मलैयाजी ने अपने भाषण में जनता को सबोधित करते हुए कहा- 'मेरे प्यारे बन्धुओं! आज प्रात· आपने जिनेन्द्रदेव का पञ्चामृताभिषेक देखा। सच्चा जिनाभिषेक आगम अनुसार तो यही है। हम प्रान्तीय रूढ़िवाद की अपेक्षा कुछ भी कहें। मेरा कथन यद्यपि आपको बुरा लगेगा पर सत्यमार्ग यही है। विचार कीजिये, हम लोगो ने उस अभिषेक को कितनी पावन भावना से अपने शरीर पर लगाया है। प्रान्तीय रूढ़िवाद के वश हम आगम को इन्कार करते है। पर सत्य के लिए हमारी भावना कैसी उमड़ पड़ी थी कि गन्धोदक तो समाप्त

हो गया पर हमारी भावनाएँ समाप्त नही हुई। यही सत्य की पहचान है।

पश्चात् उपाध्यायश्री का मार्मिक उपदेश हुआ। आपने अपने उपदेश में बताया कि 'रूढ़ि से आगम बड़ा' है। रूढ़ि सदा सत्य नही होती, जबकि 'आगम त्रिकाल सत्य' है। आगम का कोई पन्थ नही है। पन्थ की आड़ में, आगम को मोड़ना अज्ञानता है। आगम के साथ चलने वाला कभी दुख नहीं पाता।

पश्चात् आचार्यश्री का आशीर्वादात्मक प्रवचन हुआ। आपने मार्मिक बात कही कि आगम में तेरापन्थ या बीसपन्थ नाम की कोई चीज ही नही। पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति इस प्रकार १३ प्रकार के चारित्र को पालन करने वाले तेरापथी है और १२ व्रत और ८ मूलगुणों- इस प्रकार बीस प्रकार चारित्र का पालन करने वाला बीसपंथी है। अब आप ही तेरापथ बीसपंथ आदि का निर्णय कर लिया करो।

व्यर्थ के झगडों, द्वन्द्वों में फँसना ठीक नही है। आगम के अनुसार चलने वाला पथिक सुख पाता है। आगम से बढ़कर कोई आम्नाय नही है। सभी धर्मात्माओं का कर्तव्य है कि आपस में प्रेम वात्सल्य से रहे, विवाद में पड़ना ठीक नही है।

सागर में सघ ७ दिन रहा। आचार्य परमेष्ठी व उपाध्याय परमेष्ठी तथा अन्य त्यागियो के केशलोंच हुए। हमने अपनी दीक्षा के पश्चात् करीब १० वर्षो से यह देखा है कि आचार्यश्रीव उपाध्यायश्री के केशलोंच सदा एकसाथ ही होते है। देखने वाले को भी वैराग्य की क्षणिक रेखा आये बिना नहीं रहती है।

आगम में उल्लेख आता है कि मुनियो को उत्कृष्ट दो माह, मध्यम तीन माह व जघन्य चार माह में केशलोच करना चाहिए। इनमें आचार्य महाराज उत्कृष्ट क्रिया का पालन करते है। आप मुनि अवस्था से ही दो माह में केशों का लोंच कर लेते है। आपके पीछे-पीछे आपके पदचिन्हों पर चलने वाले परम शिष्य उपाध्यायजी भरतसागरजी महाराज भी दो माह में केशों को जीर्ण तृणवत् उखाड़कर फेंक देते है। इन्ही गुणों की वजह से उत्तरप्रान्त में प्राय युवावर्ग एक नारा लगाते थे- "गुरु का शिष्य कैसा हो, भरतसागर जैसा हो।"

महावीर भगवान और पार्श्वनाथ भगवान के अतिशय क्षेत्र दर्शनार्थ आचार्यश्री सागर से गढ़ाकोटा होते हुए पावन सिध्दक्षेत्र कुण्डलपुर पधारे।

श्रीधर केवली की निर्वाणभूमि (कुण्डलपुर)

उत्तरपुराण में वर्णन आता है कि कुण्डलपुर से अन्तिमश्रुतकेवली श्रीधर मोक्ष पधारे। यहाँ पहुँचते ही आचार्य सघ ने बड़े-बाबा के नाम से प्रचलित वीतराग पद्मासन जिनबिम्ब के दर्शन किए। आचार्यश्री ने अपनी महत्त्वपूर्ण चर्चा में बताया कि- मूर्ति के दोनों ओर सिंह बने हुए हैं अत कोई इसे भगवान महावीर की बताता है और उसी नाम से पूजता है, कोई बड़े बाबा यानि आदिनाथ के नाम से पूजता है तथा कोई मात्र बड़े बाबा कहकर आराधना करता है।

हमने पूछा- "वास्तविकता क्या है गुरुदेव?"

आचार्यश्री ने बताया- मूर्ति पर किसी प्रकार का चिन्हांकन नहीं है, मात्र छत्र आदि हैं, चिन्ह रहित लेकिन

प्रातिहार्य सहित मूर्ति सामान्य केवली की होती है। इस पावन क्षेत्र पर से अन्तिम श्रीधर केवली मुक्त हुए अतः यह मूर्ति श्रीधर केवली की है।

शंका- "मूर्ति किसी भगवान की हो और पूजा किसी दुसरे नाम से की जाये तो कोई बाधा है या नहीं?"

समाधान- "लड्डू मीठा है, वह ऊपर नीचे कही से भी खाओ मीठा ही मीठा है उसी प्रकार वीतराग जिनबिम्ब को किसी भी नाम से पूजा जाये आनन्दही आनन्द होगा। जैनधर्म में नाम की नही, गुणों की पूजा होती है।

कुण्डलपुर पर सघ करीब ६-७ दिन रहा। यहाँ सघस्थ त्यागियों के केशलोंच हुए। काफी धर्मप्रभावना हुई। यहाँ से विहार कर दामोह से पटनागंज अतिशय क्षेत्र के दर्शन कर सघ पुन सागर आया। आचार्यश्री व संघस्थ त्यागियों ने सभी मदिरों के दर्शन किये। सागर में विमलसागर आये। मधुर विमलसागर में गोते लगाने वाला सागर भी आज मीठा हो गया। आचार्यश्री का मगल विहार हुआ। काफी दूर तक जनता आचार्य सघ को छोड़ने के लिए पहुँची।

देवगढ़

अतिशय क्षेत्र देवगढ़ के आचार्यश्री ने दर्शन किये। देवगढ़ में हजारों जिनमूर्तियाँ हमारी प्राचीन सस्कृति व कला सौन्दर्य का अद्भुत नमूना है। हर्ष की बात है कि उनकी सुरक्षा के लिए जैन समाज द्वारा अनेक प्रयास किये जा रहे है। आचार्यश्री ने पावन क्षेत्र व कला सस्कृति एव जिनबिम्बों की रक्षा का पावन उपदेश दिया तथा अनेक उपाय समाज के सामने रखे जिससे सस्कृति जीवित रहे। समाज ने उन्हे स्वीकार किया।

थौवनजी

प्राचीन प्रसिध्द चन्देरी की चौबीसी के दर्शनकर, आचार्यश्री ने खन्दारगिरि व थौवनजी के भी दर्शन किये। यहाँ से आप अशोकनगर पधारे। अशोकनगर में जैनियों के हजारों घर है। यहाँ दोपहर में आचार्य एव उपाध्याय महाराज के पावन उपदेश होते थे तथा रात्रि में सघस्थ क्षुल्लक क्षुल्लिकाओ के मार्मिक प्रवचन। आर्यिका माताजी के यहाँ केशलोंच हुए। जनता ने मुनियों के केशलोंच तो देखे थे पर आर्यिका माताजी के केशलोंच कभी नहीं देखे थे।

उनके केशलोंच देखकर सबके नेत्र आँसुओं से भर आये थे। नारी की कोमल काया और केशलोंच का कठिन परीषह। वीर नारियाँ ही इस तपश्चरण को धारण कर व स्त्रीलिंग छेदकर निकट भव में मुनि होकर मुक्ति प्राप्त कर सकती है।

बजरंगगढ़

अशोकनगर से गुना होते हुए श्रीशातिनाथ भगवान के अतिशय क्षेत्र बजरगगढ़ पहुँचे। यहाँ शांतिनाथजी,

कुन्थुनाथजी व अरहनाथजी भगवान की खड्गासन विशाल मूर्तियाँ हैं। सभी ने वहाँ की भावपूर्ण वन्दना की। अशोकनगर व गुना की जनता आचार्यश्री का पीछा करती हुई यहाँ आ पहुँची थी। यहाँ संघ तीन दिन रहा।

आचार्यश्री का नियम है कि वे किसी भी क्षेत्र पर कम से कम तीन दिन अवश्य विश्राम लेते है।

पावन तीर्थराज के दर्शन के पश्चात् वर्तमान शासनाधीश भगवान महावीर के जन्म-जयन्ती पर्व पर आचार्यश्री का विहार रावलगढ़ की ओर हुआ।

यहाँ महावीर जयन्ती के उपलक्ष्य में प्रभातफेरी निकाली गई तथा उपाध्यायश्री व आचार्यश्री के मंगल उपदेश हुए। उपाध्यायजी ने अपने उपदेश में भगवान महावीर के जीवन पर प्रकाश डाला।आपने बताया कि भगवान महावीर ने अपनी पूर्व अवस्था में कौए के मांस का त्याग किया था। छोटे से त्याग से वे आगे चलकर तीर्थंकर महावीर बने। जो छोड़ता गया वह ऊँचा उठता गया और जो जोडता गया वह डूबता गया। आपने बताया 'त्यागात् शान्ति.' यही महावीर का उपदेश है।

आचार्यश्री ने कहा- भगवान महावीर ने कहा था- ''पाप से घृणा करो पापी से नही।'' अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये वीर भगवान के पाँच मौलिक सिध्दान्त है। पाँच पापों को त्यागने वाला ही शांति को प्राप्त कर सकता है।'' यहाँ के अनेक जैन बन्धुओं ने जैनकुलाचारों को पालन करने की प्रतिज्ञा की। धर्म की बड़ी प्रभावना हुई।

बनेड़िया

यहाँ से विहार कर सघ ने अतिशयक्षेत्र मक्सी पार्श्वनाथ के दर्शन किये। पश्चात् उज्जैन धर्मनगरी में अपूर्व धर्मप्रभावना करते हुए अतिशय क्षेत्र बनेड़िया में प्राचीन प्रतिमा अजितनाथजी के अतिशयकारी दर्शनकर आचार्यसघ ने धर्मनगरी इन्दौर की ओर प्रस्थान किया।

आचार्यश्री का सघ इन्दौर की ओर विहार कर रहा है यह समाचार सुनकर, नगर की धर्मानुरागिणी जनता ने आपके स्वागत की विशाल पैमाने पर तैयारियाँ की। मोदिजी की नसियाँ से बैण्डबाजों के साथ विशाल स्वागत जुलूस निकला था। घर-घर से आचार्यश्री पर पुष्पवृष्टि हो रही थी, तो कही चरणप्रक्षालन और आरती की जा रही थी। अपार भीड़ में आरती व प्रक्षालन की थालियाँ आकाश में उठती नजर आती थी। ग्रीष्मकालीन तपिश के बाद वर्षा का आगमन हुआ है।

इन्दौर की जनता आत्मविभोर थी। इन्दौर नगर के दो सम्पन्न परिवार की बाल-ब्रह्मचारिणी नन्ही-नन्ही शिक्षित बालिकाओं (नगमती-अनगमती) ने आचार्यश्री के चरणो में आर्यिका और क्षुल्लिका व्रत धारण किये थे। अपनी नगरी के रत्नों को पाकर जनता में अपार हर्ष था। प्रवचन के लिए महावीर चौक में विशाल मंडप सजाया गया था। आचार्यश्री व उपाध्यायजी के मार्मिक उपदेश हुए। आचार्यसंघ यहाँ ७ दिन रहा। सात दिनों में सभी मंदिरों के दर्शन किये। भिन्न-भिन्न स्थानों पर आपके उपदेशामृत भी हुए।

संघ माधोवसतिका में ठहरा था। वैराग्य का सूचक मंगल केशलोंच आचार्यश्री व उपाध्यायजी व अन्य त्यागियों

का महावीर चौक में हुआ। इस प्रसग पर बाल ब्रह्मचारिणी कु सुलोचनाबाई बिलाला ने आचार्यश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया तथा सप्तम प्रतिमा के व्रत को पालने का सकल्प किया। धर्म की बहुत प्रभावना हुई।

इन्दौर से सनावद, सिध्दवरकूट व पावापुरी (ऊन) सिध्दक्षेत्र के दर्शन कर आचार्यसघ बड़वानी सिध्दक्षेत्र पहुँचा।

बड़वानी

बड़वानी सिध्दक्षेत्र पर गुरु-शिष्य (आचार्यश्री व शिष्य स्व आ पार्श्वसागरजी) का कई वर्षो बाद अपूर्व मिलन हुआ। शिष्य ने हर्षातिरेक में अविरल अश्रुबूँदों से गुरुदेव के चरणों का प्रक्षालन कर, तीन परिक्रमा कर त्रिभक्तिपूर्वक गुरुदेव की मंगल वन्दना की। दोनों सघों ने मिलकर बावनगजा आदिनाथ प्रभु व चूलगिरि सिध्दक्षेत्र की वन्दना की। चतुर्दशी के दिन पाक्षिक प्रतिक्रमण सामूहिक रूप से हुआ। आचार्यश्री के केशलोंच भी हुए। ससंघ आचार्यश्री के आगमन से तीर्थक्षेत्र को अपूर्व दानराशि भी प्राप्त हुई।

बड़वानी में उमेशकुमार, कनकमाला तथा सनावद की एक बहन ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया। बड़वानी से विहार कर आचार्य सघ दक्षिण में कुसुम्बा ग्राम आ पहुँचा। यहाँ जैनियों के १२५ घर हैं।

कुसुम्बा में श्रुतपचमी पर्व विशेष समारोहपूर्वक मनाया गया। प्रात प्रभात फेरी निकाली गई। दोपहर में रथ में धवलादि सिद्धातग्रन्थों को विराजमान कर रथयात्रा निकली। आचार्यसघ से जुलूस की शोभा द्विगुणित हो गई। आचार्यश्री, उपाध्यायजी के मगल उपदेश हुए।

आचार्यश्री ने जिनागम का महत्त्व बताते हुए कहा कि- पचमकाल में स्वाध्याय ही परम तप है। प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन थोड़ा समय निकालकर स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए। अनेक लोगों ने प्रतिदिन स्वाध्याय करने की प्रतिज्ञा भी ली।

उपाध्यायजी ने सम्यग्ज्ञान की महिमा बताई।

माँगी-तुंगी

उपाध्यायजी ने एकान्तवाद पोषक ग्रन्थों के पठन-पाठन को मोक्षमार्ग के विरुध्द बताते हुए सम्यग्ज्ञान के विषय में सारगर्भित उद्बोधन किया। यहाँ से पावन तीर्थराज सिध्दराज सिध्दक्षेत्र माँगी-तुगी पर आचार्यसघ आ पहुँचा। राम-हनु-सुग्रीव के चरणों की सर्वसंघ ने वन्दना की। यहाँ पर आचार्यश्री के सान्निध्य में एक मदिर व एक धर्मशाला का शिलान्यास श्री दानवीर सेठ हरकचन्द जी पाड्या व शकरलालजी बम्बईवाले के कर-कमलों द्वारा पडित तेजपालजी काला ने करवाया। यहाँ से सघ ने गजपथा की ओर विहार किया।

गजपंथा

सत्तेवय बलभद्दा जदु व णरिंदाण अट्ठ कोडिओ।

गजपंथे गिरि सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं।

मुनिराज गजकुमार की निर्वाणभूमि की आचार्यसघ ने वन्दना की। गजकुमार की कथा इस प्रकार है-

राजपुत्र गजकुमार शादी करके आये थे। कंकण भी नही छूटा था कि वैराग्य को प्राप्त होकर जिनदीक्षा अगीकार कर ली। गजकुमार के श्वसुर को जब यह बात मालुम हुई तो क्रोधावेश में मुनिराज के सर पर जलती हुई सिगड़ी रख दी। उसने कहा- यदि तुझे दीक्षा ही लेनी थी तो मेरी बेटी से शादी क्यों की? अब उसका क्या होगा? उपसर्ग विजयी मुनिराज ध्यान से जरा भी विचलित नही हुए और केवलज्ञान को प्राप्त कर, इसी क्षेत्र से मुक्त हुए। यहाँ संघपति श्री गेंदमल जी बम्बई वालों को आचार्यश्री ने क्षुल्लक दीक्षा दी तथा गजेन्द्रसागर नाम रखा।

आचार्यश्री के सान्निध्य में यहाँ ब्र गुणमालाबाई ने स्याद्वाद गजकुमार पाठशाला की स्थापना की। यहाँ पर आचार्य महाराज व उपाध्यायजी ने भेदविज्ञान का प्रतिक केशलोंच किया। दक्षिण के आसपास के हजारों नर-नारी आचार्यश्री के दर्शनार्थ इस तीर्थराज पर आये थे। पावन प्रसग पर धर्मप्रिय दानवीर सेठ श्री रिखबचन्द जी ने आचार्यश्री के चरणों में नीरा चातुर्मास करने की प्रार्थना की तथा तदर्थ श्रीफल भेंट किया। आचार्यसघ ने चतु सघ की सम्मति से चातुर्मास की स्वीकृति दे दी।

सघ विहार का मुख्य लक्ष्य, श्रवणबलगोल में गोम्मटेश्वर बाहुबली भगवान के महामस्तकाभिषेक में सम्मिलित होने का था। अत गाँव-गाँव में भगवान बाहुबली की अमर तपस्या का शुभ सदेश सुनाते हुए आचार्यसघ ने १८-६-८० को, शुक्रवार-आषाढ शुक्ला षष्ठी के दिन, शुभ मुहूर्त में, नीरा नगर में प्रवेश किया। उस समय यहाँ जैनियों के ४५ घर थे।

नीरा

नीरा नगर की जनता ने बड़ी धूम-धाम से आचार्यश्री का अपने नगर में मगल प्रवेश कराया। नीरा की भूमि को इतने विशाल सघ के आगमन का प्रथम अवसर प्राप्त हुआ था। सघ में २२ त्यागी थे। यहाँ चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ। चातुर्मास में धार्मिक अनुष्ठान बहुत हुए। आचार्यश्री के जन्मदिवस पर, हाथी-घोड़े मँगाये गये थे। विशेष प्रभावनापूर्वक यह जयन्ती पर्व यहाँ मनाया गया। चातुर्मास की समाप्ति पर, सेठजी श्री ऋषभचन्दजी ने बृहद् सिध्दचक्र विधान आचार्यश्री के सान्निध्य में कराया था।

विशेषता यह रही है की विधान में जो प्रभूत सामग्री लाई गई थी उससे विधान पूजा आश्चर्यकारी हो गई थी। अक्षत-पुष्प, नैवेद्य व फलों की मानो छोटी-छोटी पहाड़ियाँ ही बन गई थी। पूजा का यह वैभव भरत चक्रवर्ती की पूजा का स्मरण दिलाता था। यहाँ आचार्यश्री के सान्निध्य में लघु पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

नीरा के जिनालय में भगवान महावीर के दर्शन करके सघ ने आगे कुम्भोज बाहुबली की ओर प्रस्थान किया।

कुम्भोज बाहुबली

कुम्भोज बाहुबली पर दो महान आचार्यो का मिलन हुआ- आचार्य विमलसागरजी और आचार्य समन्तभद्रजी का। अपूर्व दृश्य था वह। कुम्भोज बाहुबली पर्वत की यह शोभा, यह सौंदर्य, पर्वत पर अनेक तीर्थराजों का दृश्य आदि परम पूज्य स्व. आचार्य महाराज समन्तभद्रजी की देन है।

यहाँ गुरुकुल - श्रमण संस्कृति की निर्माणशाला भी आचार्यश्री की ही देन है। वर्तमान में गुरुकुलों का अभाव-सा है, सच्ची शिक्षा मिलना दुष्प्राप्य है। आचार्य समन्तभद्र महाराज की असीम कृपा-प्रेरणा व अनुकम्पा का ही फल कहिये जो इस गुरुकुल की स्थापना हुई। आज हजारों विद्यार्थी इस गुरुकुल में अध्ययन कर सच्ची शिक्षा का लाभ ले रहें है। वर्तमान युग में गुरुकुल प्रणाली से शिक्षादान आचार्य महाराज समन्तभद्रजी की अपूर्व देन है।

आचार्य सघ यहाँ से विहार कर, स्तवनिधि क्षेत्र के दर्शन कर, आचार्य देशभूषण महाराज की जन्मभूमि कोथली पहुँच गया। दो महान धर्मप्रभावक आचार्यो का अपूर्व मिलन था। दो हृदय आपस में मिले थे, ऐसा लगता था मानो दो धर्मचक्रवर्ती ही आपस में मिल रहे है।

कोथली में शान्तिनगर की प्रशान्त भूमि में शातिनाथ भगवान की पावन प्रतिमा के दर्शन कर सारा साधु-संघ अपूर्व आनद का अनुभव कर रहा था।

गोम्मटेश्वर बाहुबली (श्रवणबेलगोल) में प्रवेश

बाहुबली क्षेत्र पर पहुँचने की घडियॉ ज्यों-ज्यों निकट आ रही थी, आचार्यश्री के स्वागत की तैयारियाँ चल रही थी। ऐलाचार्य मुनि विद्यानन्दजी, अनेक त्यागीवृन्द तथा भट्टारक चारुकीर्ति जी लम्बी दूरी तक आचार्यश्री को लेने आये। गुरुकुल के बच्चों द्वारा जय-जयकार की ध्वनि गूँज रही थी। ऐलाचार्य महाराज ने आचार्यश्री के चरणों मे श्रध्दा भक्ति से नमोस्तु किया। अपूर्व मिलन की भव्य वेला थी। विशाल जनसमूह था। आचार्यश्री का भव्य स्वागत हुआ। घर-घर, द्वार-द्वार लोगो ने आचार्य महाराज का दूध-दही जल से पाद-प्रक्षालन किया। पुष्पवृष्टि पूरे जुलूस में होती रही। घर-घर के द्वार पर आरती उतारी गई। मनोहर दृश्य देखकर, आनन्दाश्रु से नेत्र सजल हो उठे। आचार्य संघ क्षेत्र भडार वसदि में ठहरा।

गोम्मटेश्वर बाहुबली का सहस्राब्दी वर्ष महामस्तकाभिषेक अपने आप में कीर्तिमान है। इस दर्शनीय, सम्यक्त्व की उत्पत्ति के कारणभूत प्रसग में, २५० से भी अधिक पिच्छी त्यागीवृन्द का पदार्पण हुआ था।

एक मच पर त्यागियों का समूह देखकर चतुर्थकालीन दृश्य आँखों के सामने आ खड़ा होता था। वे कितने भाग्यशाली होंगे जिन्होंने इस अवसर पर वहाँ जाकर भगवान बाहुबली के चरणो में अपना मस्तक रखा था। इस उत्सव के अवसर पर प्रात ७ से ८ बजे तक त्यागियों के बीच वृहद् द्रव्यसग्रह का स्वाध्याय तथा मध्यान्ह में न्यायदीपिका ग्रन्थ का मूल से स्वाध्याय होता था। ग्रन्थवाचन पडित श्री दरबारीलाल जी कोठिया करते थे। आचार्यश्री, ऐलाचार्य विद्यानन्दजी, आचार्य कुन्थुसागरजी व उपाध्याय श्री भरतसागरजी आदि अनेक मुनि व आर्यिका समूह के

बीच तत्त्व चर्चा का विशेष लाभ मिलता था। इस समय आपस मे अनेक शंका-समाधान हुए। सर्वसघ वात्सल्य से एकसाथ रहे, बहुत ही आनन्द का वातावरण था।

मस्तकाभिषेक

प्रतिक्षा की घड़ियाँ समाप्त हुई, ध्येय पूर्ति का समय समीप आया, श्री १००८ बाहुबली भगवान का २२ फरवरी १९८१ को महामस्तकाभिषेक हुआ।

उस दिन अपार जन-समूह के द्वारा जिनदेव का नीर-क्षीर आदि से पञ्चामृताभिषेक किया जा रहा था। हजारों नर-नारियों ने अभिषेक किया व श्री गधोदक को मस्तक पर लगाकर अपने पाप-पक का प्रक्षालन किया।

कोई-कोई स्वाध्याय प्रेमी भाई कहते है, आगम में दूध, दही, रस आदि से अभिषेक नही लिखा है। उन बन्धुओं के लिए हम अपने मान्य ग्रन्थों के दो-चार प्रमाण देते है ताकि वे गम्भीरतापूर्वक सोच सके। हम स्वय अभिषेक के विरोधी थे, किन्तु आचार्यश्री ने ग्रन्थ का आधार दिखाया तो हमने हठ न कर, आगम की आज्ञा को शिरोधार्य किया।

हरिवश पूराण आचार्य जिनसेन स्वामी रचित है। वे महाज्ञानी एवं आगम के मर्मज्ञ दिगम्बर जैन आचार्य हुए है। हरिवश पूराण में बाईसवें सर्ग में कहा है कि वासुपूज्य भगवान के जन्म से पुनीत चम्पापुरी में वासुदेव ने गन्धर्व सेना के साथ फाल्गुन के अष्टान्हिका महापर्व में जिनमदिर में जाकर बड़े हर्ष से क्षीर, इक्षुरस, दधि, घृत, जलादि के द्वारा जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक किया। उन्होंने हरिचन्दन की गन्ध, शालि, तन्दुल, नाना प्रकार के पुष्प, निर्दोष नैवेद्य, दीप, धूप से भगवान की पूजा की थी। ग्रन्थ के ये शब्द ध्यान देने योग्य है—

क्षीरेक्षुरस-धारौघैर्घृतदध्युदकादिभि ।
अभिषिच्य जिनेन्द्रार्चामर्चिता नृसुरासुरै ॥
हरिचन्दन-गधाढ्यैर्गन्धशाल्यक्षताक्षतै ।
पुष्पैर्नानाविधैरुध्दैर्धूपै कालागुरूद्भवै ॥
दीपैर्दीप्त-शिखजालै-र्नैवेद्यैर्निरवद्यकै ।
तावानर्चतुरर्चां तामर्चना-विधिकोविदौ॥२२।२१-२३॥

पूजा के अन्त में वसुदेव ने अढ़ाईद्वीप के १७० धर्मक्षेत्रों में त्रिकाल सम्बन्धि जिनेन्द्रादि की इन भव्य शब्दों द्वारा वन्दना भी की थी–

द्विपेष्वर्धतृतीयेषु स-सप्ततिशतात्मके।
धर्मक्षेत्रे त्रिकालेभ्यो जिनादिभ्यो नमोऽस्त्विति॥२७॥

पद्मपुराण भी इस विषय में हरिवंश का समर्थन करता है। राम के वनवास के पश्चात् भरत शासन करते रहे थे। भरत ने द्युति नाम के महान आचार्य के समीप नियम लिया कि 'पद्मदर्शनमात्रेण करिष्ये मुनिताम्'- राम के दर्शन मात्र से ही मुनिव्रत धारण करूँगा। उस समय आचार्य द्युति महाराज ने कहा था, कि इसके पूर्व तुमको

श्रावकों के व्रत धारण करना चाहिए। उन्होंने उपदेश दिया था- "अर जो रात्रि कू आहार का त्याग करै सो गृहस्थपद के आरंभ विषै प्रवृते है जो तो हू शुभ गति के सुख पावै। जो पुरूष कमलादि जल के पुष्प तथा केतकी, मालती आदि पृथ्वी के सुगन्ध पुष्पनिकरी भगवान् कूं अरचे सो पुष्पक विमान कू पाय यथेष्ट क्रीड़ा करै।" (दौलतरामजी की भाषाटीका पृ. ३०८ पर्व ३२)

रविषेणाचार्य रचित पद्मपुराण के मूल वाक्य ध्यान देने योग्य है-

> य करोति विभावर्यामाहारपरिवर्जनम्।
> सर्वारंभप्रवृत्तोऽपि यात्यसौ सुखदा गति।।३२।१५७।।
> सामोदैर्भूजलोद्भूतै पुष्पैर्यो जिनमर्चति।
> विमानं पुष्पक प्राप्य सक्रीडति यथेप्सितम्।।१५९।।

इस आगम के प्रकाश में पुष्पों द्वारा भी भगवान की पूजा का निषेध नहीं होता है। जिस सिध्दपूजा को श्रावक जन बड़े चाव से पढ़ते है, उसमें भी मदार, कुद, कमल आदि वनस्पति से उत्पन्न पुष्पों द्वारा सिध्दचक्र की वदना की गई है-

> मन्दार-कुद-कमलादिवनस्पतीना, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिध्दचक्रम्।

अभिषेक का महाफल

पद्मपुराण की भाषा-टीका में दौलतरामजी ने लिखा है, "जो नीर करि जिनेन्दर् का अभिषेक करै, सो देवनिकर मनुष्यनि तै सेवनिक चक्रवर्ती होय, जाका राज्याभिषेक देव-विद्याधर करै। अर जो दुग्धकरि अरहत का अभिषेक करै, सो क्षीरसागर के जल समान उज्ज्वल विमान विषै परमकाति धारक देव होय, बहुरि मनुष्य होय मोक्ष पावै। अर जो दधिकर सर्वज्ञ वीतराग का अभिषेक करै, सो दधि समान उज्ज्वल यश कू पाय कर भवोदधि कू तरै। अर जो घृतकर जिननाथ का अभिषेक करै, सो अमृत का आहारी सुरेश्वर होय नरेश्वर पद पाय मुनीश्वर होय अविनश्वर पद पावै। अभिषेक के प्रभाव करि अनेक भव्य जीव देव अर इद्रनिकर अभिषेक पावते भए, तिनकी कथा पुराणनि में प्रसिध्द है।"

मूल सस्कृतग्रन्थ (सर्ग३२) के ये पद पढ़ने योग्य है-

> अभिषेक जिनेन्द्राणा कृत्वा सुरभिवारिणा।
> अभिषेकमवाप्नोति यत्र यत्रोपजायते।।१६५।।
> अभिषेक जिनेन्द्राणा विधाय क्षीरधारया।
> विमाने क्षीरधवले जायते परमद्युति ।।१६६।।
> दधि-कुभैर्जिनेन्द्राणा य करोत्यभिषेचनम्।
> दध्याभ-कुट्टमे स्वर्गे जायते स सुरोत्तम ।।१६७।।
> सर्पिषा जिननाथाना कुरुते योऽभिषेचनम्।

कांतिद्युति प्रभावाढ्यो विमानेशः स जायते।।१६८।।
अभिषेकप्रभावेण श्रूयंते बहवो बुधा।
पुराणेऽनंतवीर्याद्या बुभूलब्धाभिषेचना।।१६९।।

वराग चरित्र में लिखा है, जन्म, जरा, मृत्यु आदि की शाति के लिए जल चढ़ाते हैं, विषयवासना को सर्वथा मिटाने के लिए दूध से पूजा करते है। दधि के द्वारा पूजा करने से कार्यसिध्दि होती है। क्षीर-पूजा से पवित्र स्थान मोक्ष में निवास होता है।

वरांगचरित्र की हिन्दी टीका में लिखा है, सोना, चाँदी आदि के कितने ही कलश दूध, दधि, जल, घी आदि अभिषेक में उपयोगी द्रव्यों से भरे रखे हुए थे। वे सब कलश मुख पर रखे श्रीफल आदि फूलों के गुच्छों तथा फलों से ढके हुए थे। प्रत्येक कलश पर माला लटक रही थी। (पृ २१२, पर्व२३)

भावसग्रह मे आचार्य देवसेन ने दूध, दही आदि द्वारा भगवान के अभिषेक का वर्णन करते हुए लिखा है-

उच्चारि ऊणमते अहिसेयं कुणुउ देवदेवस्स।
णीर-घय-खीर-दहिय खिवउ अणुक्कमेण जिणसीसे।।

पडित् सुखदासजी ने रत्नकरण्डश्रावकाचार के ११९ वें श्लोक में 'देवादिदेवचरणे आदि की टीका में' यह महतवपूर्ण कथन किया है- ''बहुरि जे अचित द्रव्यनितें पूजन करे है, ते जल, गध .अक्षतादि उज्ज्वल द्रव्यनिकरि पूजन करे है। अर चमेली, चपक, कमल सोनाजाई इत्यादि सचित्त पुष्पनितें पूजन करे है। घृत का दीपक तथा कपूर आदिदीपकनि की आरती उतारे है। अर सचित्त, आम्र, केला, दाडिमादिक द्रव्यनि कर हूँ पूजन करे हैं। धूपायनि में धूप दहन करे हैं। ऐसे सचित्त द्रव्यनि कर हूँ पूजन करिए हैं। दोऊ प्रकार के आगम की आज्ञा प्रमाण सनातन मार्ग है। अपने भावनि के अधीन पुण्य बध के कारण हैं।''

जैन पुराणों का अवलोकन करने पर हमें यह देखने को मिला है कि उस समय में भी पचामृत अभिषेक का प्रचलन था। सम्यक्त्वी जीव आगम के अनुसार श्रध्दान करता है। वह वीतराग आचार्यो पर पक्षपात का आरोप नही लगाता। तिलोयपण्णत्ति भाग २ (अ. ५, गाथा १११) में फलों के द्वारा भी पूजा का कथन मिलता है। आचार्य कहते है, ''दाख, अनार, केला, नारंगी, मातुलिंग, आम तथा अन्य भी पके हुए फलों से जिननाथ की पूजा करते हैं।'' गाथा इस प्रकार है-

दक्खा-दाडिम-कदली-णारगय-मादुलिंग-भूदेहिं।
अण्णेहिं वि पक्केहिं, फलेहिं पूजंति जिणणाहं।।१११-५।।

शास्त्र स्वाध्याय के मध्य एक दिन आचार्यश्री से चर्चा करते हुए ऐलाचार्य मुनि विद्यानन्दजी महाराज ने कहा- यदि वात्सल्यमूर्ति आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज यहाँ भगवान बाहुबली के चरणों में चातुर्मास करे तो मैं भी आचार्य महाराज के साथ चातुर्मास करूँगा। आचार्य महाराज तो भोले बाबा है, उनके लिए तो साधु संघ स्वर्ग से भी बढ़कर है। आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए तुरन्त ही स्वीकृति दे दी। निर्णय हुआ कि- आचार्य विमलसागरजी, ऐलाचार्य मुनि विद्यानन्दजी, आचार्य गणधर कुन्थुसागरजी, विजयमती माताजी व माता श्रुतमतीजी सभी संघों का सन् १९८१ का चातुर्मास इसी तीर्थ पर होगा।

अभी चातुर्मास का समय दूर था अत. महाराज ने संघ सहित क्षेत्रों की वन्दनार्थ विहार किया। कदम्बहल्ली, रंगपट्टन, मैसूर अतिशय क्षेत्र (यहाँ की चौबीसी, खड्गासन श्यामवर्ण में अति शोभनीय है), कनकगिरि (अतिशय क्षेत्र पार्श्वनाथ एव समाधि स्थल श्री पूज्यपाद स्वामी), गोम्मटगिरि, शालिग्राम आदि तीर्थो की वन्दना आचार्यश्री ने संघसहित निर्विघ्न पूर्ण की। सघ पुन बाहुबली प्रभु के चरण सान्निध्य में लौटा क्षुल्लिका अनगमती को आचार्यश्री ने अपने कर-कमलों से आर्यिका व्रत देकर आर्यिका स्याद्वादमती बनाया तथा ब्र चम्पाबाई ने क्षुल्लिका दीक्षा ली जिनका नाम नियममती रखा गया। इसी अवसर पर इन्दौर निवासी कु प्रभा पाटनी B.Sc. L.L.B. ने आचार्य श्री से अखंड बम्ह्चर्य व्रत लेकर जीवन को कृतार्थ किया।

दिनाक १६-७-८१ गुरुवार (संवत् २०३८ वीर नि स २५०७) की मगल बेला में आचार्यश्री, ऐलाचार्यश्री व अन्य ४२ त्यागियों द्वारा बाहुबली भगवान के चरणों में चातुर्मास स्थापना हुई।

सामूहिक तत्त्व चर्चाओं के दौरान इस चातुर्मास में अनेकों महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हुई। चातुर्मास में आचार्यसघ तथा श्री ऐलाचार्य आदि साधुवृन्दों का स्वाध्याय एक साथ होता था। चातुर्मास में समयसार और समयसार कलश ग्रन्थराजों का सामूहिक स्वाध्याय ज्ञानवृध्दि व तात्त्विक चिन्तन के लिए एक अपूर्व देन थी। वात्सल्य की बहती गंगा में अनेक भव्यात्माओं ने डुबकी लगाकर अपने को पावन किया। इस पचमकाल में ऐसा स्वर्ण अवसर प्राप्त होना अत्यन्त दुर्लभ है।

तपस्या का अतिशय

गोम्मटेश्वर बाहुबली में एक गरीब परिवार ने मुनियों के आहार-दान की अपने छोटे से घर में व्यवस्था की। श्रध्दा और भक्ति से पड़गाहते हुए पक्ष बीत गया पर आचार्य महाराज का आहार अभी तक नहीं हुआ था।

आचार्य महाराज ने कठिन अवग्रह लिया था। घूमते-घूमते काफी समय हो गया। उसी गरीब परिवार के भोले-भाले पुरुष ने अपने हाथों में छोटा-सा दर्पण ले लिया व आचार्यश्री उसी समय उसके घर जाकर ठहर गये।

बड़ी भक्ति व श्रध्दा से पति-पत्नी दोनों ने आचार्यश्री को आहार दान दिया। निरन्तराय आहार के बाद आचार्यश्री तो अपने स्थान पर आ गये। इधर एक-दो घटे पश्चात् जिस समय महिला चौका साफ करने लगी तो उसने एक अतिशय देखा-जिस स्थान पर खड़े होकर आचार्य महाराज ने आहार लिया था उस स्थान पर आचार्यश्री के पावन चरण-कमल जैसे के तैसे बने हुए थे।

उस महिला के आश्चर्य व आनन्द का ठिकाना न रहा। उसने पतिदेव को दिखाया। महिला ने उस स्थान को बहुत धोया, पर चरण चरण ही थे। पुण्य का फल था। दौड़ी-दौड़ी वह मंदिर जी में गई। सारी घटना साधुवर्ग को बताई। हम सभी ने वहाँ जाकर इस चमत्कार को साक्षात् देखा था।

यह घटना आचार्यश्री के जीवन की पहली सातिशय घटना थी।

इसके पश्चात् लोहारिया चातुर्मास में गुरुभक्त श्री मीठालालजी के घर पर भी आचार्यश्री के चरण-कमल आहार के पश्चात् उकर आये थे। सभी ने जाकर यह घटना भी देखी थी। मीठालालजी ने चरणों के पास तीन दिन

श्रवणबेलगोला मे सहस्राब्दि मस्तकाभिषेक के अवसर पर साधु समुदाय के बीच आचार्यश्री
साथ मे आचार्य विद्यानन्दजी, आ कुन्थुसागरजी, उपाध्यायजी आदि मुनिवृन्द तथा भट्टारक चारुकीर्तिजी।

चामुण्डराय मडप गोम्मटेश्वर बाहुबली सहस्राब्दि महामस्तकाभिषेक मे आचार्य श्री विमलसागरजी, आचार्यश्री देशभूषणजी महाराज व अन्य साधुओ के बीच उद्घाटन समारोह मे।

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
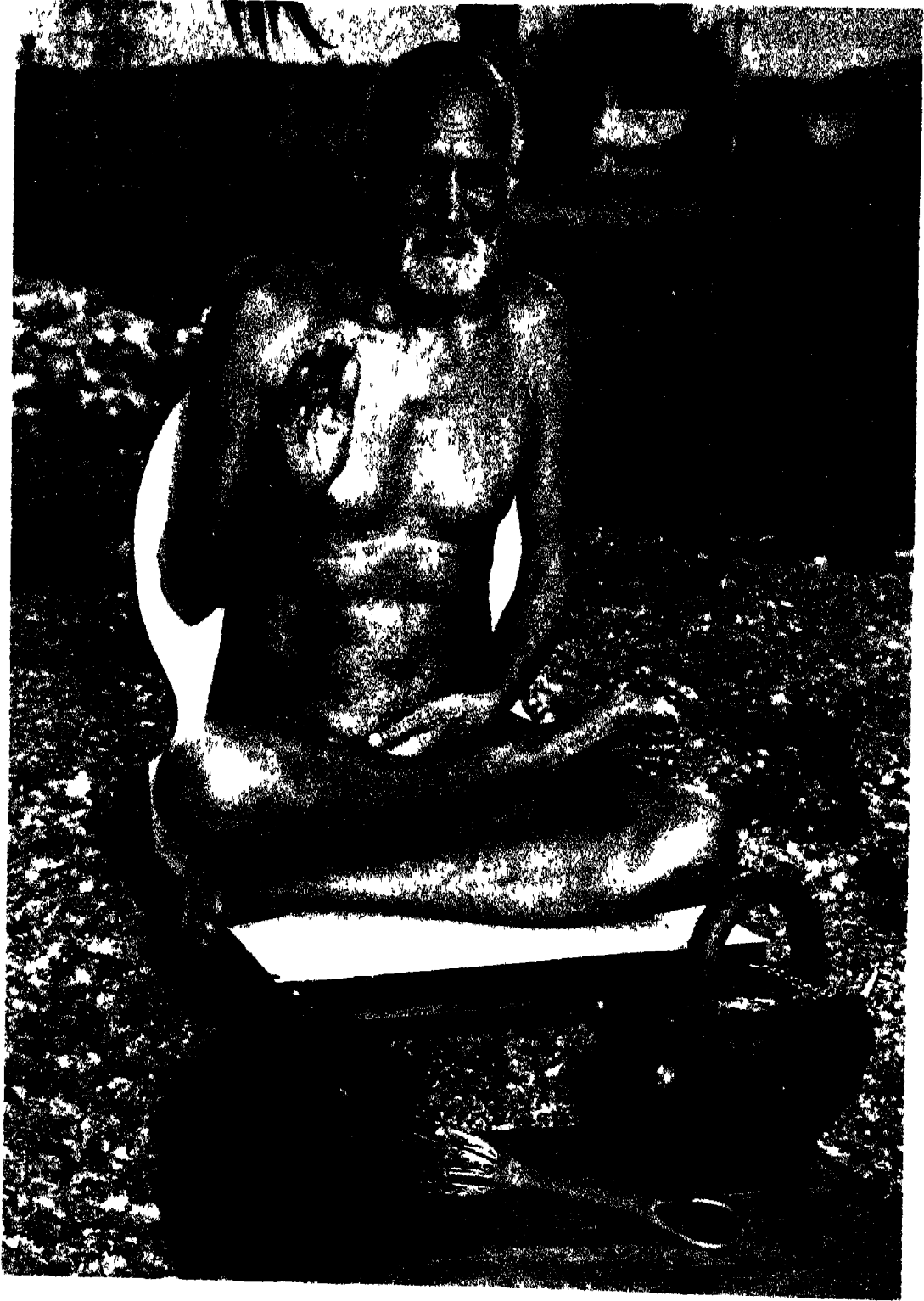
गोम्मट गिरी (इन्दौर) पर आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए केन्द्रीय मत्री श्री प्रकाशचन्दजी सेठी।

आचार्यश्री से मगल आशीर्वाद लेते हुए
श्री निर्मलकुमारजी सेठी।

गोम्मटगिरी (इदौर) मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मे आचार्य श्री विमलसागरजी और आचार्य श्री विद्यानदजी।

जयपुर मे आचार्यश्री सघ सहित।

औरगाबाद मे आचार्यश्री के
चरणो में नतमस्तक
सगीत कलाकार रवीन्द्र जैन।
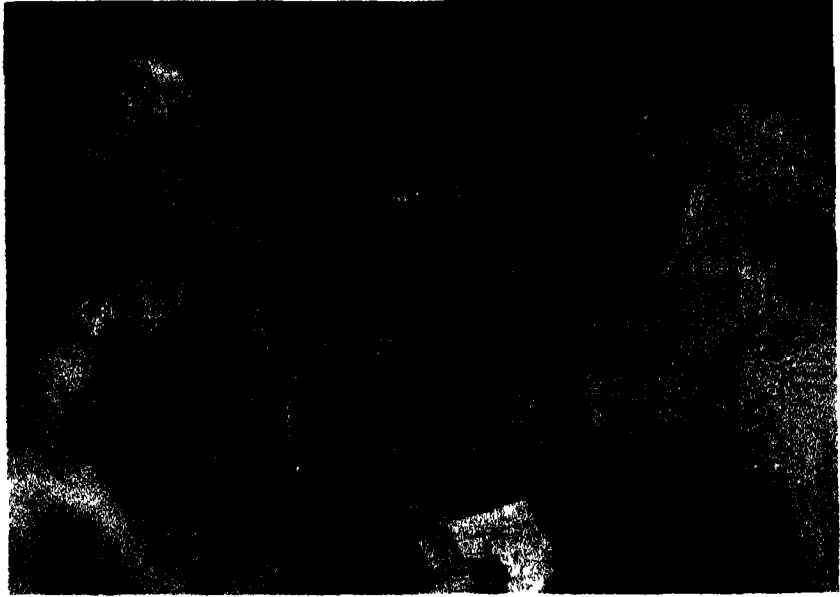
दिल्ली पहाड़ी धीरज मे श्री आर के जैन, बम्बई के
गृह चैत्यालय मे आचार्यश्री के ऊपर गुरु भक्त
श्री जैन व उनका परिवार पुष्पवृष्टि करते हुए।

ससदसदस्य श्री जे के जैन सपत्लिक आचार्यश्री का आशीर्वाद लेते हुए, औरगाबाद (मराठवाडा) मे।

गिरनारजी सिद्धक्षेत्र पर जन्म-जयती के पावन अवसर पर मगल यात्रा मे आचार्यश्री।

बम्बई मे प्रवचन देते हुए आचार्यश्री।

बम्बई मुलुन्ड मे गृह चैत्यालय स्थापना के अवसर पर अविनाश मेहता सपरिवार आचार्यश्री का आशीर्वाद लेते हुए।

बम्बई जुहू मे श्री प्रकाशचन्द जी छाबड़ा के गृह चैत्यालय मे आशीर्वाद देते हुए।
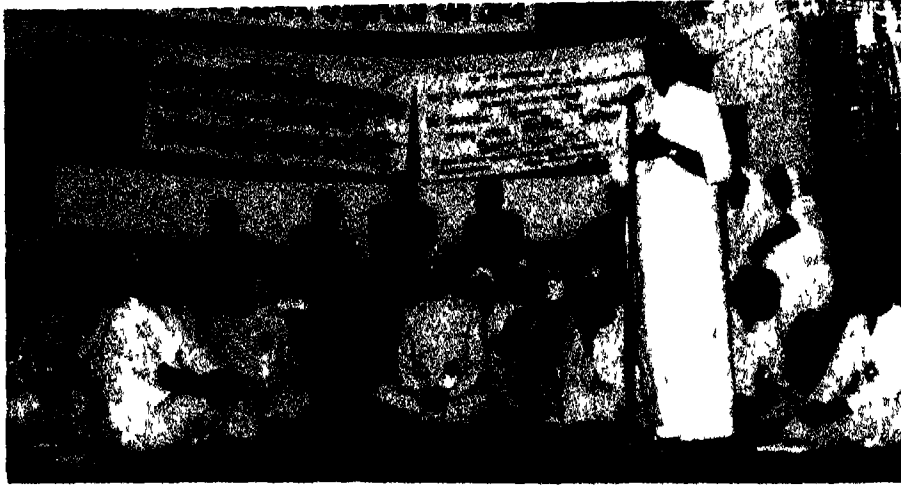
आचार्यश्री के सानिध्य मे घाटकोपर बम्बई मे सर्वोदय तीर्थ पर
पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर सबोधन करते हुए श्री गौतमभाई।

लोहारिया म आचार्यश्री के जन्म-जयती पर्व पर राजस्थान के मुख्यमत्री श्री हरदेव जोशी आचार्यश्री के कर-कमलो म स्मारिका भेट करते हुए।

जन्म-जयती पर्व पर आचार्यश्री के चरण प्रक्षालित करती हुई सघ सचालिका ब्र चित्राबाई और आचार्यश्री के चिरायु की कामना मे विमलसागर भक्तामर स्तवन करते हुए श्री श्यामसुन्दरजी शास्त्री, फिरोजाबाद।

श्रीमान व श्रीमती आर क जैन ब्रह्मचर्य व्रत लेते हुए।

आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए श्रीमान श्रीपालजी जैन।

तक घी का दीपक लगाकर, चरणों की पूजा की थी।

सच्ची श्रद्धा, सच्चा त्याग सातिशय फल को प्रदान करता है, इसमें किञ्चित मात्र भी आश्चर्य नही है।

भगवान बाहुबली के चरणारविन्दो को हृदयमन्दिरों में विराजमान कर संघ बाहुबली प्रभु नव-निर्मित प्रतिमा के पञ्चकल्याणक हेतु, वीरेन्द्र हेगड़े व उनकी मातश्री रत्नम्मा के विशेष आग्रह पर धर्मस्थल आ पहुँचा। वीरेन्द्रजी आचार्यश्री को उस मूर्ति के पास ले गये जो कुछ ही दिनों में आचार्यश्री के द्वारा प्रदत्त सस्कारों से भगवान बनकर भव्यजीवों को सच्चा मार्ग दिखाने वाली थी।

मूर्ति को देखते ही आचार्य महाराज ने वास्तुशास्त्र के आधार से उसका माप आदि देखा। आचार्यश्री ने कहा- "मूर्ति का माप अभी ठीक नही है। वास्तुशास्त्र के आधार से यह मूर्ति सदोष है। सदोष मूर्ति पूजक के लिए हानिकारक होती है।"

रत्नम्मा ने कहा- "गुरु महाराज! आप जो उपाय बताये वही स्वीकार है। हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिये।" आचार्य महाराज की आज्ञा से कारीगर बुलवाये गये। आचार्यश्री के मार्गदर्शन में मूर्ति की छिलाई-घिसाई का कार्य हुआ। मूर्ति में निखार आया।

आश्चर्य इस बात का था कि हजारों मजदूर यहाँ पर अति उत्साह से कार्य कर रहे थे। स्कूलों के बच्चे भी अपना हाथ बँटा रहे थे। एक अनोखा ही दृश्य था। पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की शोभा आचार्यश्री व ऐलाचार्य विद्यानन्दजी महाराज से बढ़ रही थी। दोनो ऋषिराजों ने प्रभु बाहुबली की मूर्ति में सूर्यमत्र देकर उन्हे जीवत, साक्षात् भगवान बाहुबली का रूप दिया। धन्य थी वह घड़ी, धन्य था वह सुहाना अवसर, धन्य थे वे नर-नारी जिन्होंने तन-मन-धन से इस पुण्य कार्य में योगदान दिया था जिसका वर्णन सगीतकार, रविन्द्र ने अपने भजन में किया है- "हो नगर-नगर में बाहुबली, सारी धरती धर्मस्थल हो, हम यही कामना करते है।" इसी धर्मस्थल में आचार्यश्री के कर-कमलों से क्षुल्लक धवलसागरजी ने दीक्षा प्राप्त की थी। धर्मस्थल से विहार कर आचार्यश्री और त्यागीवृन्द ने मूडबद्री, कारकल, वराग, कुन्दकुन्दाद्रि, नरसिंगपुर हुम्मच, बीजापुर में सहसफणी पार्श्वनाथ आदि तीर्थों की वन्दना की। वहाँ से उदारखुर्द नामक शहर में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए आपका पदार्पण हुआ। पचकल्याणक प्रतिष्ठा आचार्यश्री के सान्निध्य मे निर्विघ्न सम्पन्न हुई। यहीं पर आचार्य व उपाध्याय श्री के केशलोंच भी हुए। विहार करके सघ भोज पहुँचा।

भोजभूमि

पंचमकाल में दिगम्बर साधु कैसे होते हैं इसका दिग्दर्शन कराने वाली, महान आत्मा पूज्य चारित्रचक्रवर्ती शांतिसागरजी महाराज की जन्मभूमि भोज है। इस कुल की परम्परा मुनियों-त्यागियों के जन्म देने की रही है। ऐसी पावन भूमि की रज भी हमारे लिए वन्दनीय है। धन्य है वह सत्यवती माता, धन्य है वे भीमगोंडा पिता जिन्होने सातगोंडा (शांतिसागरजी) जैसे महान पुत्र को जन्म दिया।

पू. आ. शांतिसागरजी महाराज ने इस युग में मुनिचर्या के पालन में आने वाली अनेक कठनाईयों को धैर्य

और शांतिपूर्वक सहन कर निर्दोष व्रताचरण किया।

पाठकगण, स्मरण करे, हम जिनका अभिवन्दन इस पावन ग्रन्थ के माध्यम से कर रहे है, ऐसे आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज का जनेऊ संस्कार इन्हीं आचार्य शातिसागरजी महाराज ने अपने कर-कमलों द्वारा किया था।

पावन भूमि को नमन (ते गुरु चरण जहाँ धरे जग मे तीरथ होय) कर, सघ आगे अक्कीवाट आ पहुँचा।

अक्कीवाट

अक्कीवाट के विद्यासागर मुनि एक महाप्रभावक साधु हो चुके है। जिन्होंने श्री जैन धर्म की सुरक्षा में महान योगदान दिया। जैनधर्म पर सकट के समय अपने मत्रबल से अनेक जैनियो की मुस्लिम बनने से रक्षा की।

अक्कीवाट में स्व विद्यासागर महाराज के चरणचिन्हो के दर्शनकर, कुञ्जवन में द्रव आदि सागर महाराज के समाधिस्थल की वन्दना कर सघ सांगली से कलिकुड पार्श्वनाथ के दर्शन कर, सतारा आ गया। सतारा में श्रुतपंचमीपर्व मनाया गया। सिध्दान्तग्रन्थो की पूजा व श्रुतपञ्चमी क्रिया सर्वसघ ने आचार्यश्री के सान्निध्य में की। इसी पावन पर्व पर चाँदमलजी मेहता सा आदि (श्री शातिसागर स्मारक ट्रस्ट पोदनपर) ने आचार्यश्री के चरणों में बम्बई चातुर्मास हेतु प्रार्थना की।

आचार्य महाराज ने चतु संघ की सम्मति लेकर बम्बई चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान की।

दिनाक २४-६-१९८२, आषाढ सुदी ४ को आचार्यसघ का तीन मूर्ति पोदनपुर, बम्बई पदार्पण हुआ।

पोदनपुर त्रिमूर्ति

पोदनपुर (बम्बई) में रत्नत्रय की प्रतीक विराजमान तीनमूर्तियाँ जन-जन को मिथ्या त्रय के त्याग का सदुपदेश देती है। बम्बई जैसे बड़े शहर में व्यक्ति ससार सुखों की दौड़धूप में इर्द-गिर्द फिरता है, वहाँ उस नगर में साधु समाज के ठहरने के लिए कोई स्थान ही नही था। आचार्यश्री शांतिसागरजी महाराज के शिष्य पूज्य आ नेमिसागरजी महाराज के सदुपदेश से पोदनपुर का निर्माण हुआ। यह स्थल शांति का एक अपूर्व केन्द्र बन गया है। यहाँ पहुँचते ही व्यक्ति सारे झझटो से मुक्त हो अपने आप में एक अपूर्वशाति का अनुभव करता है।

आषाढ की अष्टाह्निका में आचार्यश्री के चरण-सान्निध्य में वृहद् सिध्दचक्र विधान सम्पन्न हुआ। चतुर्दशी के दिन शुभ वेला में आचार्य सघ की चातुर्मास-स्थापना का मंगल कार्य सम्पन्न हुआ।

बम्बई चातुर्मास के अन्तर्गत अनेक धार्मिक, साहित्यिक, सास्कृतिक, और ऐतिहासिक कार्यक्रम हुए। बम्बई शहर में इतना विशाल (३१ पिच्छिधारी) संघ पहले कभी भी नही आया था। यह इस नगरी का ऐतिहासिक चातुर्मास था।

आचार्यश्री का जन्म-जयन्ति पर्व यहाँ विशेष उत्साह से मनाया गया। तीन दिन तक विशाल विद्वत् गोष्ठी का आयोजन किया गया था। इस गोष्ठी में भारत के कोने-कोने से उच्चकोटि के विद्वान पधारे थे। विद्वानों ने अपने

अपने विशिष्ठ विषयों पर शोधपूर्ण प्रकाश डाला। गोष्ठी के उद्देश्य थे- (१) सामाजिक सगठन, (२) वर्तमान में विद्वानों की कमी की पूर्ति कैसे हो, (३) श्रमण संस्कृति की रक्षा कैसे हो और (४) सरल सुबोध साहित्य का प्रकाशन।

इस अवसर पर आचार्यश्री एवं उपाध्यायजी के मगल आशीर्वाद जनता को प्राप्त हुए।

आचार्यश्री की ६७ वीं जन्म-जयन्ति के अवसर पर सेठ श्री पन्नालालजी सेठी ने आगत समाज को प्रीतिभोज दिया। महिला सम्मेलन, केशलौंच, रथयात्रा आदि कार्यक्रम विशेष उत्साहमय वातावरण में सफल हुए।

बम्बई में रविवार की विशेषता रही। वहाँ का हर व्यक्ति चाहता था कि सभी विशिष्ट कार्य रविवार को ही हो, उसी व्यवस्थानुसार प्रति रविवार को विशिष्ट त्यागियों के विभिन्न विषयों पर विशिष्ट प्रवचन होते थे।

एक दिवस रविवार को उपाध्यायजी ने अपने प्रवचन में जनता को सबोधित करते हुए कहा- ''अभी तक हमने तीन प्रकार के मनुष्य देखे थे- सदैया (जो सदा जिनेन्द्र देव की आराधना करे, प्रतिदिन मन्दिर जाये), भदैया (जो मात्र भाद्रपक्ष में ही जिनपूजा आदि करे) और तीसरा कदैया (जो कभी-कभी जिन पूजा दर्शन आदि करे) है। आप चाहते है किसी का मरण हो तो वह रविवार को ही हो, जन्म हो तो भी रविवार को पर जन्म-मरण किसी समय का इन्तजार नही करते है। वैसे ही आपको भी जन्म-मरण से छूटने के लिए जिनभक्ति के लिए रविवार का इन्तजार नही करना चाहिए।''

शातिविधान, ऋषिमडल-विधान, इन्द्रध्वजविधान, पचपरमेष्ठी विधान, सिध्दचक्र विधान एव लघु पञ्चकल्याणक आदि आयोजनों से यहाँ का वातावरण धर्मरस से भीगा रहता था।

घाटकोपर पंचकल्याणक

भक्ति भावना से प्रेरित होकर श्वेताम्बर स्थानकवासी भाई कान्तिलालजी सेठ, घाटकोपर (बम्बई) निवासी ने आचार्यश्री से दिगम्बर मूर्तियो के पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में पधारने की प्रार्थना की। आचार्यश्री ने स्वीकृति प्रदान की।

आचार्यसघ १३-१२-१९८२ को घाटकोपर पधारा। प्रतिष्ठाचार्य कन्हैयालालजी नारे ने आचार्यश्री के सान्निध्य में पञ्चकल्याणक, सस्कार विधि को दिगम्बराचार्य परम्परा के अनुसार विधिवत् सम्पन्न किया। इस पचकल्याणक की विशेषता यह रही कि- सेठ कांतिलालजी के भाई श्री गौतमभाई एव उनकी धर्मपत्नी दोनो ने सौधर्म इन्द्र व इन्द्राणी बनकर अपनी भावभीनी भक्ति से सर्व जनसमुदाय को मोह लिया था। ऐसा लगता था कि मानो देवलोक से सौधर्म इन्द्र और इन्द्राणी ही आ पधारे है।

गौतमजी आदि सारा परिवार आचार्यश्री को बार-बार नत-मस्तक हो रहा था। गौतम जी तो आचार्यश्री को साष्टाग नमस्कार करते थे और बार-बार उनके मुख से यही निकलता था कि सच्ची वीतरागता दिगम्बरत्व के बिना नहीं आती। उनकी मातुश्री ने शूद्रजल त्याग का व्रत लेकर आचार्यश्री को आहार दान दिया। बम्बई के इतिहास में उल्लेखनीय यह घटना सदा अमर रहेगी।

घाटकोपर से विहार कर आचार्यश्री बम्बई एवं उपनगरों, कालोनियों में जिनालयों के दर्शन करते हुए १० वें महामस्तकाभिषेक के अवसर पर त्रिमूर्ति पोदनपुर पहुँचे।

मस्तकाभिषेक के शुभावसर पर सहस्रनाम मंडल विधान की पूजा हुई, आचार्यश्री एव अन्य त्यागियों के केशलोंच हुए तथा अनेक सास्कृतिक कार्यक्रम भी हुए। २ फरवरी १९८३ को त्रिमूर्तियों का दूध, घी आदि पञ्चामृत से महामस्तकाभिषेक निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर श्रवणसागर की मुनिदीक्षा हुई तथा बालब्रह्मचारी शान्तिकुमार को भी आचार्यश्री ने क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की। क्षुल्लकजी का नाम चैत्यसागर रखा गया।

यही पर महासभा के मंत्री जी त्रिलोकचन्द कोठारी ने आचार्यश्री के सान्निध्य में इन्द्रध्वज विधान कराया। बम्बई की धर्मप्रिय जनता ने बालचन्द हिराचन्द दोसी की पुण्य शताब्दी भी मनाई तथा महासभा का अधिवेशन भी निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

बम्बई से २४-२-१९८३ को आचार्यसघ का विहार सिध्दक्षेत्र श्री कुन्थलगिरि की ओर हुआ। मार्ग में फलटण में आचार्यश्री के परम शिष्य श्री आचार्य पारससागरजी महाराज ने गुरुचरणों में नमन कर गुरुदेव का आशीर्वाद पाया। गुरु-शिष्य का यह अद्‌भुत मिलाप था। यहाँ से आचार्यश्री दहीगाँव पहुँचे।

दहीगाँव

दहीगाँव एक प्राचीन अतिशयक्षेत्र है। यहाँ के मूलनायक भगवान महावीर की प्रतिमा अतिशयकारी है। यहाँ का सहस्त्रकूट चैत्यालय और तलघर में विद्यमान बीस तीर्थंकरों की मूर्तियाँ दर्शनीय है। यहाँ पर महावीर जन्म-जयती पर्व सानन्द मनाया गया। यहाँ जैनियों के बहुत घर है। किंवदन्ती है कि भगवान महावीर का समवसरण यहाँ आया था।

आचार्यश्री, उपाध्यायश्री के यहाँ पर केशलोंच हुए। सघ के द्वारा काफी धर्म प्रभावना हुई।

विहार करते हुए सघ अकलूज आ पहुँचा। यहाँ मानस्तंभ का लघुपञ्चकल्याणक आचार्यश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

पढरपुर मे जैन मदिर में सघ का आवास रहा। यहाँ आर्यिका ज्ञानमतीजी की प्रेरणा से निकाली गई ज्ञानज्योति को आचार्यश्री ने आशीर्वाद देते हुए सम्यग्ज्ञान की महिमा पर प्रकाश डाला। संघ विहार करते हुए मानकेश्वर ग्राम पहुँचा। मानकेश्वर में जैन मदिर नही था। जैनी भाई बिना जिनदर्शन के अतिदुखी नजर आ रहे थे। आचार्यश्री के सान्निध्य में तथा ऐलक जयभद्रजी के तत्त्वावधान में नवमदिर निर्माण कार्य यहाँ आरंभ हुआ।

पावन तीर्थराज कुन्थलगिरि

कुन्थलगिरि एक पावन सिध्दक्षेत्र है। यहाँ से बालब्रह्मचारी यतिराज श्री देशभूषण व कुलभूषणजी मुक्ति पधारे। यहाँ दोनों यतिराजों की खड्गासन मगलमूर्तियाँ भक्तहृदय में भक्ति के अकुर जागृत करती हैं। सर्व संघ ने निर्विघ्न पर्वतराज की वन्दना की। यही वह पावन तीर्थराज है जहाँ से पावन युग में मुनिचर्या के सच्चे पथदर्शक मुनिपुंगव

ऋषिराज आचार्यवर शांतिसागरजी महाराज ने सल्लेखना धारण कर स्वर्गारोहण किया।

इस पावन तीर्थराज पर क्षपकराज (समाधिरत)मुनि वृषभसागरजी विराजमान थे। क्षपकराज ने आचार्यश्री के मगल दर्शन कर जीवन सफल बनाया तथा चतु:संघ ने वयोवृध्द, समाधिस्थ, मुनिराज के दर्शन कर जीवन को मगलमय बनाया। आचार्यो ने कहा भी है-क्षपकमुनि का दर्शन विशेष मगलकारक होता है।

प्रायः श्रुतपंचमी पर्व पर आचार्य महाराज चातुर्मास के स्थान का निर्णय कर लेते हैं। यहाँ श्रुतपचमी पर्व मनाया गया। पश्चात् विभिन्न स्थानों- अकलूज, फलटण, औरंगाबाद आदि से पधारे लोगों ने आचार्य महाराज के चरणों में चातुर्मास के लिए श्रीफल भेंट किये। सभी उत्सुक थे- कौन पुण्यवान् इस अवसर को प्राप्त करेगा। आचार्यश्री ने औरगाबाद चातुर्मास की स्वीकृति दी।

तदनन्तर विहार करते हुए आचार्यश्री पैठण पधारे। पैठण अतिशय क्षेत्र है। यहाँ मुनिसुव्रत स्वामी की पद्मासन अति मनोज्ञ प्रतिमा दर्शनीय है। यहाँ से आचार्य सघ ढोरकीन (मुनि आर्यनंदी की जन्मभूमि) पहुँचा। आचार्य महाराज के आगमन से ढोरकीन में रत्नत्रय की एकता का भव्य दृश्य उपस्थित हुआ। सम्यक्त्व का हेतु- जिनालय का शिलान्यास आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ, सम्यग्ज्ञान निमित्तक-'ज्ञानज्योति' का मगल आगमन और सम्यक् चारित्रके प्रतीक आचार्यश्री का नगर में पदार्पण हुआ। गाँव मे चारों ओर आनन्द का वातावरण छाया हुआ नजर आ रहा था।

सत्य है- वीतराग, निस्पृह, मंगलमय आचार्यश्री का पदार्पण जहाँ भी होता है वहीं का वातावरण मंगलमयी बन जाता है।

यहाँ से विहार कर आचार्यश्री ने सघसहित कचनेर अतिशय क्षेत्र (पार्श्वनाथ) के दर्शन किये। वहाँ से आडुल ग्राम में 'ज्ञानज्योति' को मगल आशिर्वाद देते हुए ससघ आचार्यश्री दिनाक १२-७-१९८३ को चातुर्मास के निमित्त औरगाबाद पधारे।

औरंगाबाद

अष्टाह्निका पर्व में श्री देवेन्द्रकुमार महेशकुमार सोनी ने आचार्यश्री के सान्निध्य में वृहद् सिध्दचक्र विधान कराया।

औरगाबाद की जनता ने सिध्दचक्र विधान किये थे पर ऐसा विधान, जो आचार्यश्री के सान्निध्य में हो रहा था, आज तक किसी ने न तो किया था और न देखा था।

समवसरण के प्रतीक रूप लकड़ी के ऊँचे सिंहासन पर भगवान विराजमान थे। पूजाविधि भी निराली- आठ अर्घ्य प्रथम पूजा मे होते हैं पर इस पूजा में ८-८ बार सभी द्रव्य भिन्न-भिन्न रूप से चढ़ाये गये थे। अन्तिम दिन करीब दस हजार दो सौ चालीस आहुतियाँ चढ़ाई गयीं। पूजा देखकर ऐसा लगता था मानो पर्वत खड़े हो। नारियलों की राशि तो कैलाश पर्वत की सूचना दे रही थी। इस पूजा विधान को देखने के लिए दक्षिण के दूर-दूर से लोग आये थे। पूजा में एक विशेषता यह थी कि पूजक श्रावकजन अनुशासित थे। ठीक समय पर पहुँचना उनकी विशेषता थी जो अन्य स्थानों पर हमें आज तक नहीं मिल पाई। दि. २३-७-८३, चतुर्दशी (आषाढ़ शुक्ला),

वीर नि सं २५०९ रात्रि ८ बजे शुभ वेला में सोना मगल कार्यालय में चातुर्मास की स्थापना हुई। चातुर्मास हेतु मगल कलश की स्थापना इसी सोनी परिवार ने की।

गुरु पूर्णिमा के दिन सप्तर्षि पूजन के पश्चात पूज्य आचार्य महाराज की पूजा हुई, विधान की निर्विघ्न समाप्ति हुई।

चातुर्मास में शिक्षण शिविर के विशेष आयोजन हुए। शिविर के माध्यम से आबाल-वृध्द सभी ने जैन धर्म के प्रति अपनी विशेष उत्सुकता जतायी। फलस्वरूप उपाध्याय महाराज ने युवा पीढी को विशेष शिक्षण दिया। तत्त्वार्थ सूत्र का अर्थ व शुध्द उच्चारण, भक्तामर स्तोत्र का अर्थ व शुध्द उच्चारण कराया गया। इसी प्रकार योग-साधना शिविर भी उपयोगी रहा। बच्चे, युवा, वृध्द, नर-नारी सभी ने योग्यतानुसार शिविर में भाग लिया।

शिक्षक व आचार्य महाराज प्रत्येक कक्ष में जाकर विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर भरपूर आशीर्वाद विद्यार्थियों को देते। विशेषता यह थी कि- जनता में समय की पूरी पाबन्दी थी। जिस समय कार्यक्रम समाप्त होता था उस समय भी सोना मगल कार्यालय भरा हुआ नजर आता था।

आचार्यश्री का जन्म-जयन्ती पर्व भी यहाँ विशेष उत्साहपूर्वक मनाया गया था। चातुर्मास में रविवार के दिन विभिन्न विषयों पर विशिष्ट साधु वर्ग के प्रवचन होते थे जिसे जैन-अजैन जनता ध्यानपूर्वक सुना करती थी।

चातुर्मास में आचार्य महाराज से कई लोगो नें छोटे व्रत लिये। दो से सात प्रतिमा के धारी भी बहुत बने। चातुर्मास बहुत अच्छे वातावरण में सम्पन्न हुआ।

दि ८-११-८३ को आचार्यश्री कचनेर अतिशय क्षेत्र पधारे। यहाँ आपके सान्निध्य में वृहद् सिध्दचक्र विधान व मानस्तभ का मस्तकाभिषेक सानन्द सम्पन्न हुआ। यहाँ से विहार कर एलोरा में पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन कर आचार्यसंघ ने पुन औरगाबाद में पदार्पण किया। यहाँ आचार्यश्री ने क्षुल्लक पूर्णसागर को मुनिदीक्षा और ब्र श्रीकुमारजी को ऐलक दीक्षा प्रदान की। नवदीक्षित मुनि का नाम विरागसागरजी व ऐलक जी का नाम सिध्दान्तसागरजी रखा गया।

नेमिगिरि

पश्चात् नेमिगिरि, जिन्तूर, परभणी, नवागढ़ में नेमिनाथ, शिरह शहापुर में (मल्लिनाथजी की मनोज्ञ प्रतिमा) ओंडा में पचबालयति, शिरपुर में भगवान पार्श्वनाथ के दर्शन कर आचार्यसघ मुक्तागिरि सिध्दक्षेत्र आ पहुँचा।

मुक्तागिरि से साढ़े तीन करोड़ मुनि मुक्त हुए है। सर्वसघ ने तीर्थराज की वन्दना की। यहाँ आचार्यकल्प श्री चन्द्रसागरजी म का जन्म शताब्दी वर्ष का उद्‌घाटन आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ तथा ऐलक सिध्दान्तसागरजी आचार्यश्री से सस्कारों को पाकर मुनि सिध्दान्तसागरजी बने।

विहार करते हुए सघ ने भुसावल में प्रवेश किया। भुसावल में खादी सा ने आचार्यश्री से रुकने का विशेष आग्रह किया। खादी सा. की विशेष भक्ति को देख, आचार्यसघ ने तीन दिन यहाँ विश्राम किया। आचार्यश्री के उपदेश से जनता विशेष रूप से लाभान्वित हुई।

भक्ति का अजस्त्र स्रोत प्रवाहमान था। हजारों नर-नारी आचार्यश्री का आशीर्वाद पाने के लिए दौड़े आ रहे थे। सघ ने नन्दुरबारग्राम में प्रवेश किया। यहाँ ब्र कुलभूषणजी औरगाबाद वालो ने आचार्यश्री से क्षुल्लक दीक्षा ली, नवीन क्षुल्लकजी मुक्तिसागर नाम से जाने गये। यहाँ से महुआ में विघ्नेश्वर पार्श्वनाथ प्रभु के अतिशयकारी दर्शन कर आचार्यसंघ ने सूरत शहर में पदार्पण किया।

सूरत में विशेष दुखद घटना यह हुई कि मार्ग से ही आचार्यश्री के पैरों में जो साइटिका का दर्द था, वह यहाँ बहुत अधिक वेदना लेकर उभर आया। तीव्र वेदना में भी आचार्यश्री ने शहर के सभी मदिरो के दर्शन किये। वेदना असह्य थी पर वीर-धीर-साहसी मुनिराज आगे बढ़ते चले जा रहे थे।

सूरत से दिल्ली के सेठ श्रीपालजी, श्रीमती कैलासीबाई व सुपुत्र राजेन्द्रकुमारजी ने संघपति बनकर आचार्यसघ को गिरनार जी सिध्दक्षेत्र की वन्दना कराने का संकल्प पूज्य आचार्य महाराज के चरणों में लिया।

सघपति श्रीपालजी की श्रध्दा और भक्ति एक आदर्श थी। सेठ जी प्रात जल्दी उठकर भगवान का नाम स्मरण करते। मौनपूर्वक स्वय अपने हाथों गर्मी को शान्त करने वाली ठडाई घटो पीसते। चौके में शुध्द कपडे पहनकर जाना और सब साधुओं को आहार दिलाना-यह इनकी भक्ति का एक नमूना था। धन्य है वे श्रध्दालु भक्तजन जो वृध्दावस्था में भी अपने शारीरिक रोगों की चिन्ता न करते हुए दिगम्बर सन्तों की भक्ति में तन, मन, धन तीनों से समर्पित रहते है।

आचार्यश्री सघ सहित विहार करते चले जा रहे थे। नेमिनाथ प्रभु के पावन तीर्थ के दर्शन की एकमात्र भावना थी। पैरों में रोग की पीड़ा इतनी अधिक थी कि देखने वाले की आँखों से अश्रुधारा बह पड़ती थी, पर आपकी वीरता देख कर सबको आश्चर्य हो रहा था।

सघपति, श्रीपालजी के निर्देशन में संघ विहार करता हुआ सजोद, अङ्कलेश्वर से पावागढ सिध्दक्षेत्र पहुँचा।

पावागढ़ पावन तीर्थराज से रामचन्द्रजी के पुत्र लव-कुश मुक्त हुए हैं। पहाड़ की चढ़ाई-कठिन होने पर भी ऊपर विशाल जिनमंदिरों में मनोज्ञ वीतराग छवि के दर्शन पाते ही शरीर से राग की कालिमा दूर भाग जाती है।

पावागढ़ से आचार्यश्री ससघ भावनगर, गोधा होते हुए सोनगढ आ पहुँचे।

सोनगढ़

सोनगढ पहुँचते ही वहाँ की जनता आचार्य महाराज के दर्शन के लिए दौड़ पड़ी। दर्शन के पश्चात् भीड़ आचार्य संघ में साधुओ की आहार चर्या को देखने के लिए आतुर थी। उस भीड़ को देखकर ऐसा लग रहा था-ये बेचारे चर्चा ही चर्चा में पलकर बड़े हो गये। काश! एकबार चर्या देख लेते तो उसके अनुकरण में भी देर न करते। 'वाचन से पाचन' उक्ति सत्य है।

> लोहमयी आभूषण गढ़ के, ताते कर पहराये।
> पाँचो पांडव मुनि के तन में, तो भी नाहिं चिगाये।

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव भारी॥

उपसर्ग विजयी पांडवों की सिध्दभूमि शत्रुञ्जय तीर्थ की चतु सघ ने वदना की । श्रुतपंचमी-पर्व पर साधुवर्ग ने श्रुतपचमी क्रिया की। पश्चात् आचार्यश्री ने चतु सघ की सम्मति से गिरनारजी के पर्वतराज पर चातुर्मास करने का निर्णय दिया।

दिनांक १५-६-१९८४ को आचार्यश्री का मगल प्रवेश गिरनारजी की मगलभूमि में, मगल वेला मे हुआ।

गिरनारजी की वन्दना का चमत्कार

आचार्य महाराज ने पहुँचते ही सर्व सघ को आदेश दिया- "कल सुबह ५ बजे हम पर्वतराज की वन्दना को जायेंगे।"

सर्व साधुवृन्द ने आचार्य महाराज से प्रार्थना की- "गुरुदेव! आपके पैरों में असह्य वेदना है, आप कुछ दिन रुककर वन्दना कीजिये।"

आचार्य महाराज ने कहा- "शरीर अपना कर्तव्य नही छोड़ रहा है, यह अपना कार्य करेगा, हम अपना कार्य करेंगे।"

प्रात आचार्यश्री सर्वसघ सहित बालकवत् निर्भय नि शक हो वन्दना को चल पड़े। प्रथम वन्दना में ही कई वर्षो पुराना आचार्यश्री का साइटिका का दर्द कहाँ चला गया, पता नही।

सत्य ही है, तीर्थराज की वन्दना करने से कर्मराज डरकर दूर भाग जाता है। पावन परम मंगलमूर्ति नेमिनाथ भगवान की सिध्दस्थली के दर्शन से हमारे गुरुदेव ने नव-जीवन पाया। तीर्थवन्दना जीवन को तीर्थ बना देती है। आचार्यो ने इसीलिए तो कहा है- "जिससे ससार समुद्र तिरा जावे उसे तीर्थ कहते हैं।"

गिरनारजी चातुर्मास में अनेक विधान अनुष्ठान आदि सम्पन्न हुए। मंदिर का जीर्णोध्दार हुआ। आपके कर-कमलों से ब्र चम्पाबाई की क्षुल्लिका दीक्षा हुई जो धैर्यमती के नाम से जानी जाती है। सेठ श्रीपालजी ने यहाँ चातुर्मास समाप्ति के अवसर पर उदारमना होकर बृहद् सिध्दचक्र विधान कराया।

यहाँ मुनिश्री १०८ वर्धमानसागरजी महाराज की समाधि निर्मलतम परिणामों से शान्तिपूर्वक हुई।

गिरनार से दि १०-१२-८४ को विहार हुआ। मार्ग मे आचार्यश्री का स्वास्थ्य काफी बिगड़ गया। शीत के प्रकोप से शरीर बुखारग्रस्त हो गया। फिर भी बुखार में १४ किलोमीटर चल दिये। न किसी का सहारा लिया न किसी की दवा। जगल भयंकर था। एक स्कूल में सघ ठहरा। आचार्य महाराज का स्वास्थ्य बिगड़ता चला गया। जैनी का एक घर भी वहाँ नही। बड़ी मुसीबत थी। शीत-प्रकोप से सभी त्यागी किसी-न-किसी रूप से अस्वस्थ थे। उनमें से तीन मुनिराज तेज बुखार में थे। आचार्यश्री की स्थिती तो चिन्ताजनक थी ही। तेज पुंज, मुस्कराता वह चेहरा धीरता से सजग ही रहा। आस-पास गाँव में कोई फोन नहीं, डॉक्टर नहीं, विकट समस्या में संघ फँसा हुआ था।

नीरा मे मुख्यमत्री श्री शरदरावजी पवार को आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री, साथ म स्व श्री रिखबचदजी शाह, नीरा।

महाराष्ट्र के मत्री शिवराज पाटील को सोलापुर मे मासाहार का त्याग कराते हुए आचार्यश्री।

सघपति सेठ श्री गेदनमलजी जवेरी, बम्बई, दीक्षा के लिए प्रार्थना करते हुए।

नीरा (महाराष्ट्र) के श्री सेठ रिखबचद को आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री।

पद्मश्री सेठ श्री लालचद हीराचद आचार्यश्री के सानिध्य मे पोदनपुर (बम्बई) मे भाषण देते हुए।

६९ वे जन्म जयन्ती पर्व पर ६९ थालिया सजाये सुहागन महिलाओ का मगल जुलूस। (बम्बई)

धर्मस्थल मे भगवान बाहुबली की पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा पर मगल प्रवेश के समय आचार्यश्री का चरण प्रक्षालन कर रहे है श्री वीरेन्द्र हेगडे।

आचार्यश्री के चरणो मे फल चढ़ाते हुए धर्माधिकारी वीरेन्द्र हेगड़े।

श्रवणबेलगोल भट्टारक बस्ती मे स्वाध्याय के समय विराजमान आचार्यश्री। नमस्कार कर रहे श्री भ चारुकीर्तिजी।

धर्मस्थल मे भगवान बाहुबली की मूर्ति के निरीक्षण के समय आचार्यश्री से चर्चा कर रही हैं श्रीमती रत्नम्मा हेगड़े, ..स मे खड़े है भ श्री चारुकीर्तिजी।

श्रवणबेलगोला म श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा अधिवेशन म आचार्यश्री

आचार्य सघ का श्रवणबेलगोला मे स्वागत करते हुए भट्टारक चारुकीर्तिजी।

गोम्मटेश्वर बाहुबली मे सहस्राब्दि महाभिषेक के अवसर पर चामुण्डराय मडप मे विशाल साधु समाज के बीच आचार्यश्री।

आचार्यश्री को अभिवादन करती हुई पद्मश्री सुमतिबाई शाह, सोलापुर व नादणी मठ के भट्टारकजी स्व श्री जिनसेनस्वामी।
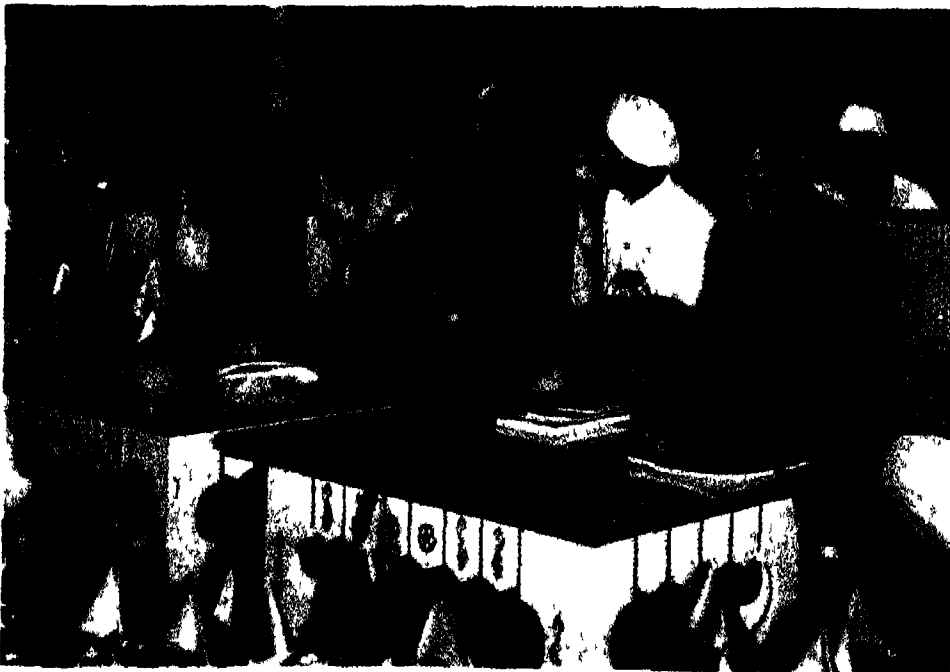
१९८१ मे श्रवणबेलगोला मे पूज्य आचार्यश्री की मगलदेशना। साथ मे विराजमान है
आ श्री देशभूषणजी महाराज व ऐलाचार्य श्री विद्यानन्दजी। पास मे है स्व सेठ श्री भागचन्दजी सोनी,
श्री बाबूलाल पाटोदी व स्व साहू श्री श्रेयास प्रसाद।
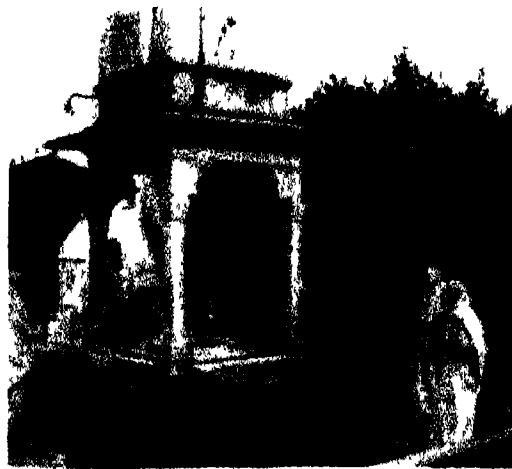
तीर्थ – वंदना

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज
ने
विशाल चतुर्विध (मुनि- आर्यिका, श्रावक, श्राविका) संघ
के साथ पूरब से पश्चिम व उत्तर से दक्षिण
छोटे बड़े समस्त दिगम्बर जैन तीर्थों की
अनेकों बार वन्दना की है। आचार्य श्री
के पद विहार से अनेकों तीर्थों पर
विकासोन्मुख धार्मिक कार्य सम्पन्न हुए हैं
तथा उत्साहपूर्ण धार्मिक वातावरण का
निर्माण हुआ है।

दर्शनार्थ तीर्थों एवं जिनबिम्बों का अद्भुत
संकलन यहाँ प्रस्तुत है.
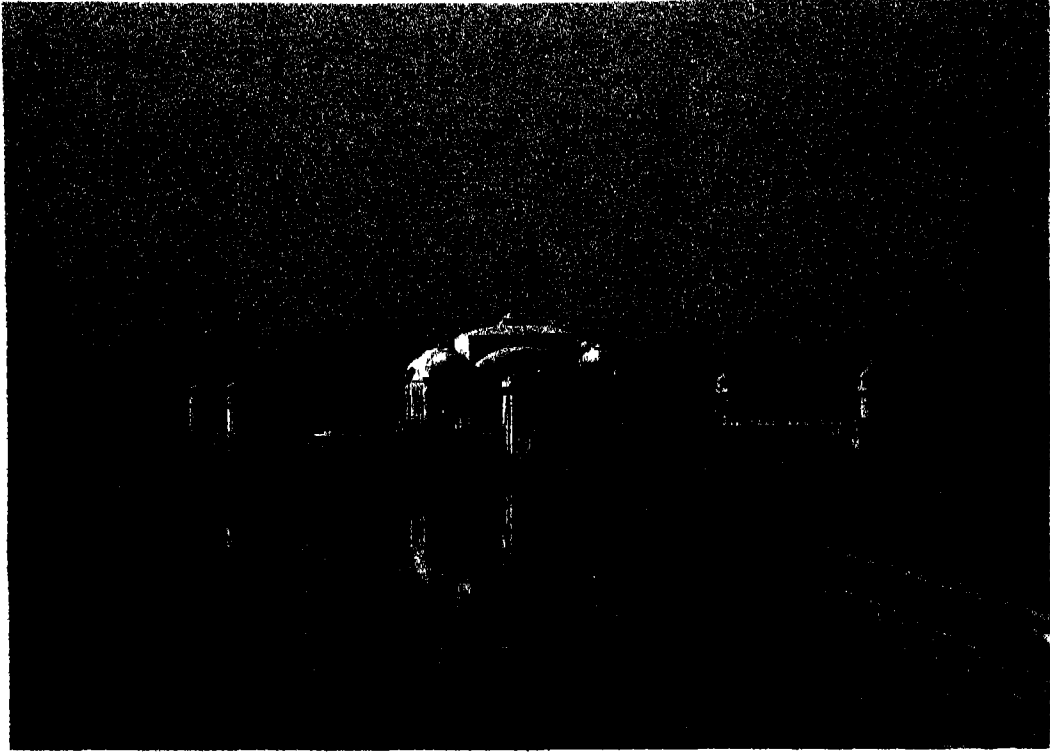
भ महावीर की निर्वाण भूमी पावापुरी (बिहार) जलमंदिर
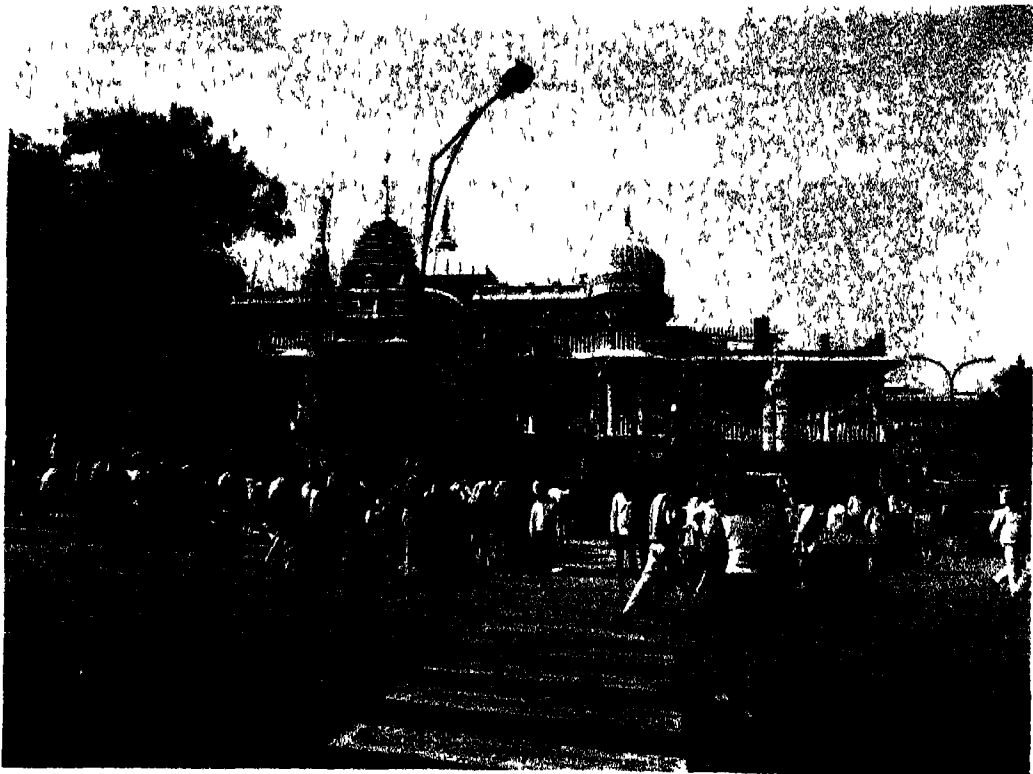
दिल्ली ऐतिहासिक दिगम्बर जैन लाल मंदिर

पाकबीड़रा-पुरोलिया सातिशय क्षेत्र

राजगृही (बिहार) दिगम्बर जैन मंदिर
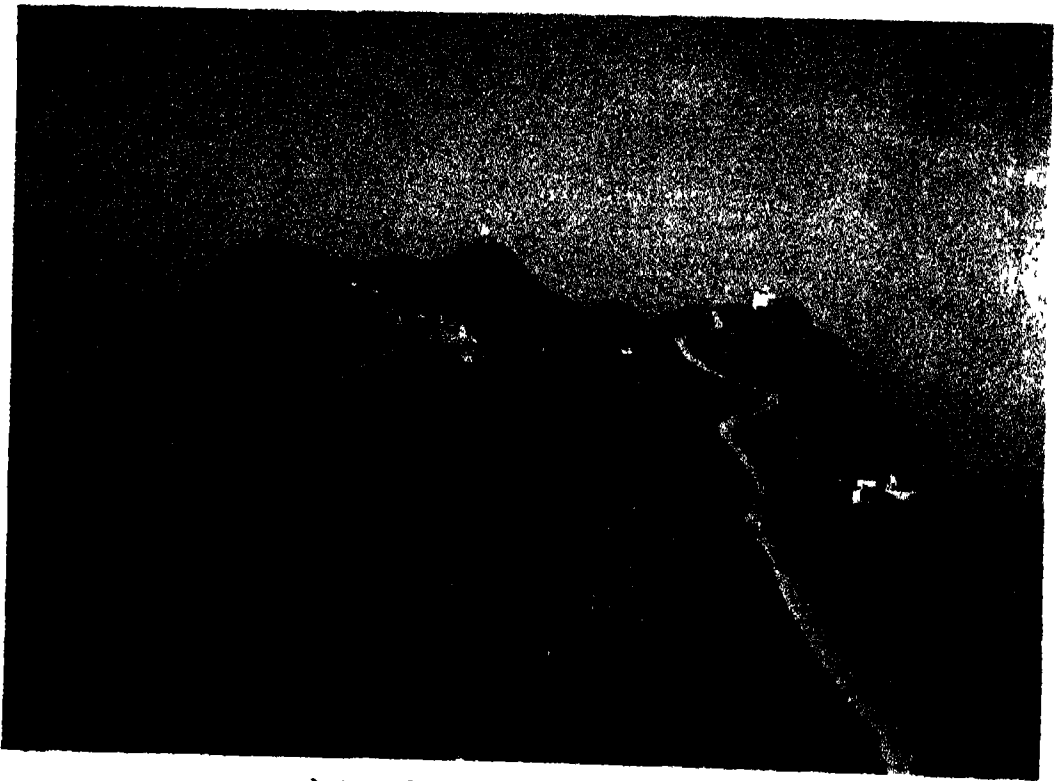
सम्मेदशिखरजी (बिहार) २० तीर्थंकरोंकी निर्वाणभूमि

मदारगिरी (बिहार) सिद्धक्षेत्र
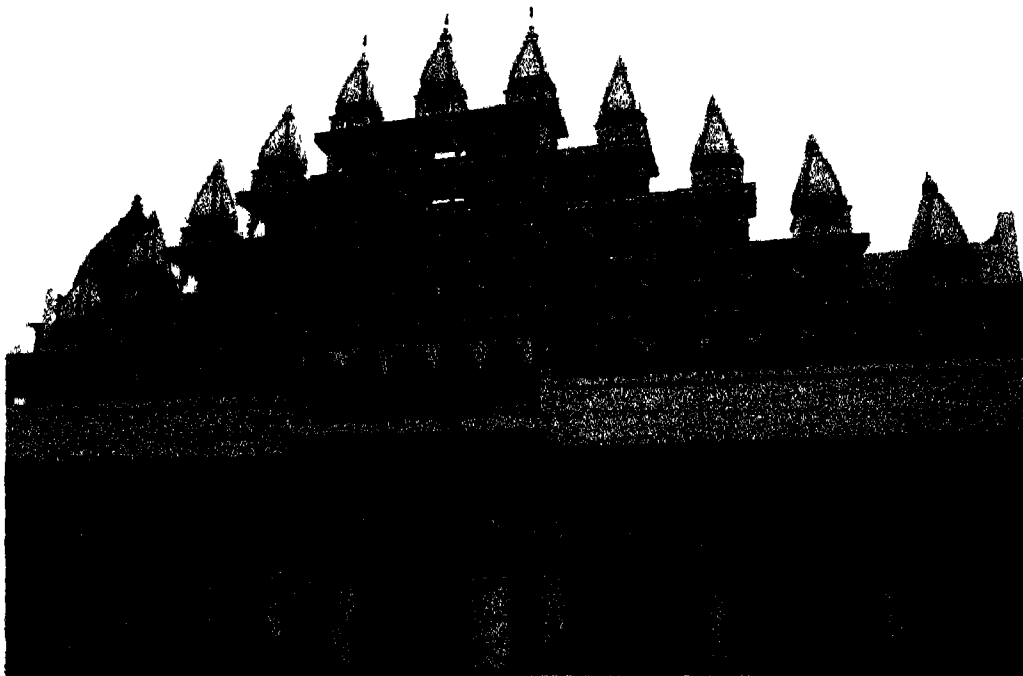
चम्पापुर (बिहार) दिगम्बर जैनमंदिर का कलापूर्ण प्रवेश द्वार

चम्पापुर (बिहार) भ वासपूज्य के चरणचिन्ह
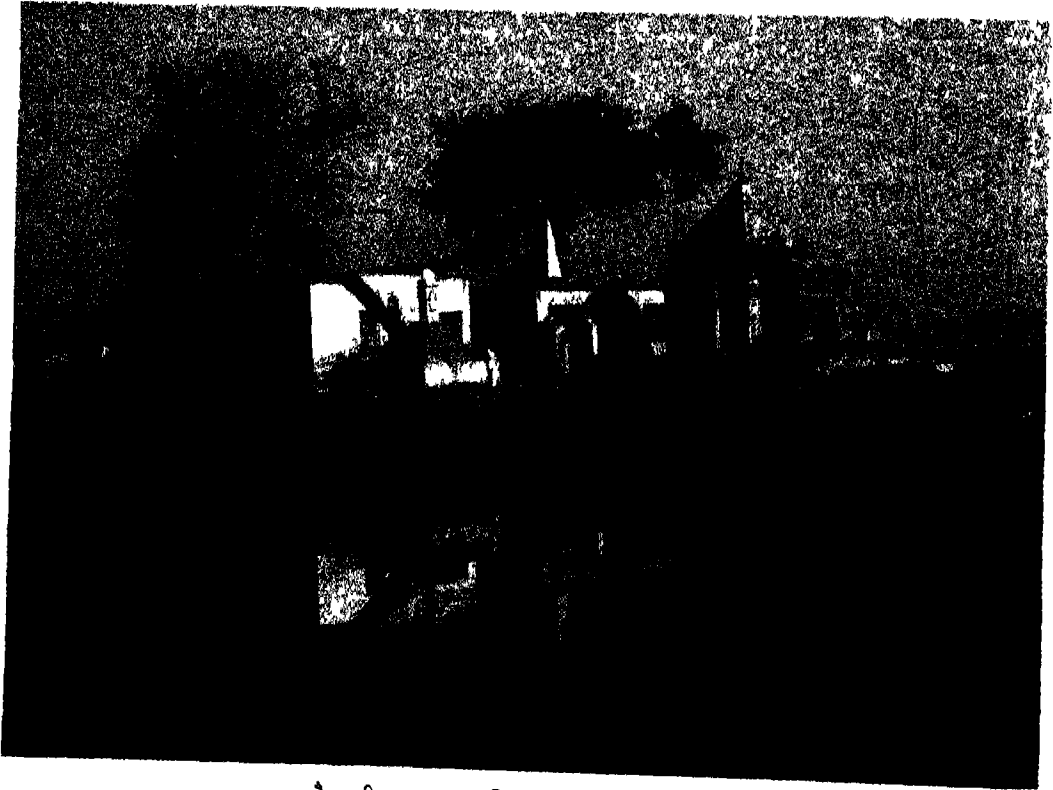
वैशाली, कुडलपुर (बिहार) दिगम्बर जैन मंदिर
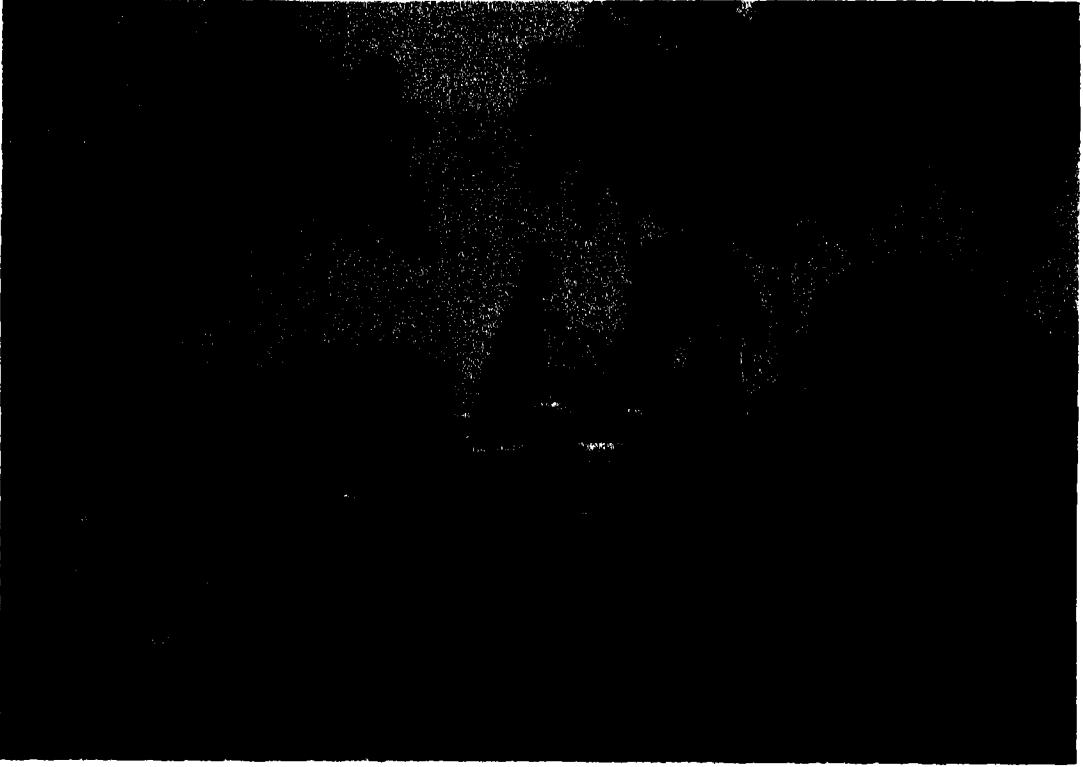
आरा (बिहार) दिगम्बर जैन मंदिर
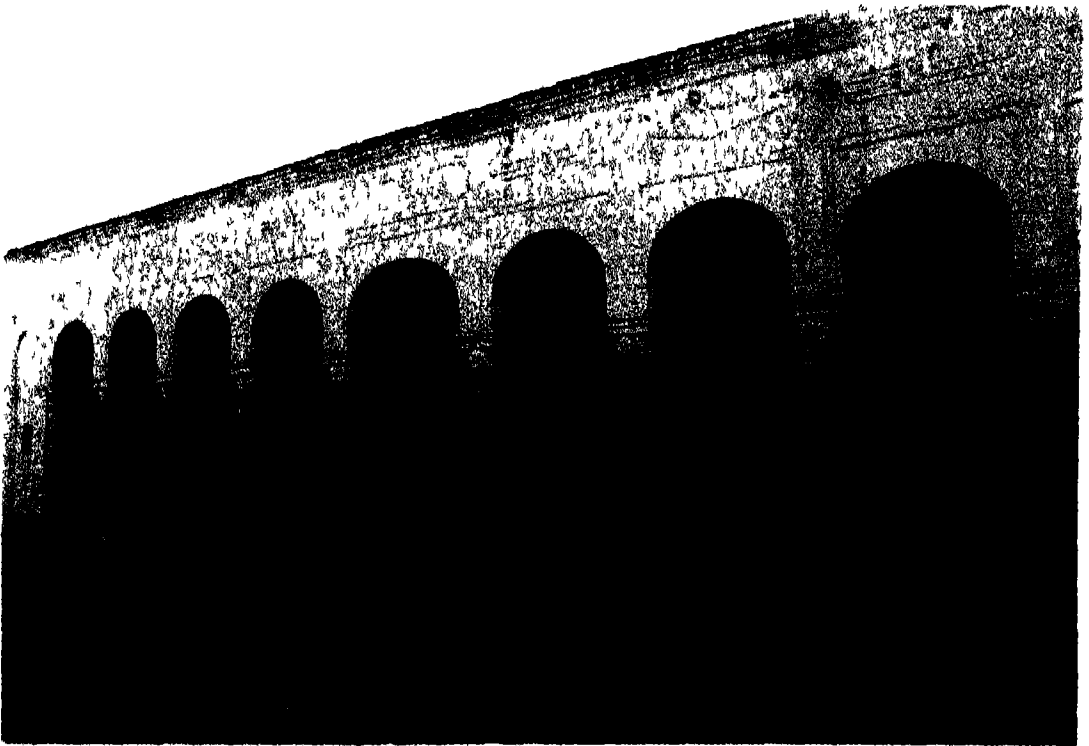
गुनोर (मध्य प्रदेश) आचार्यश्री के प्रेरणासे निर्मित पाठशाला

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
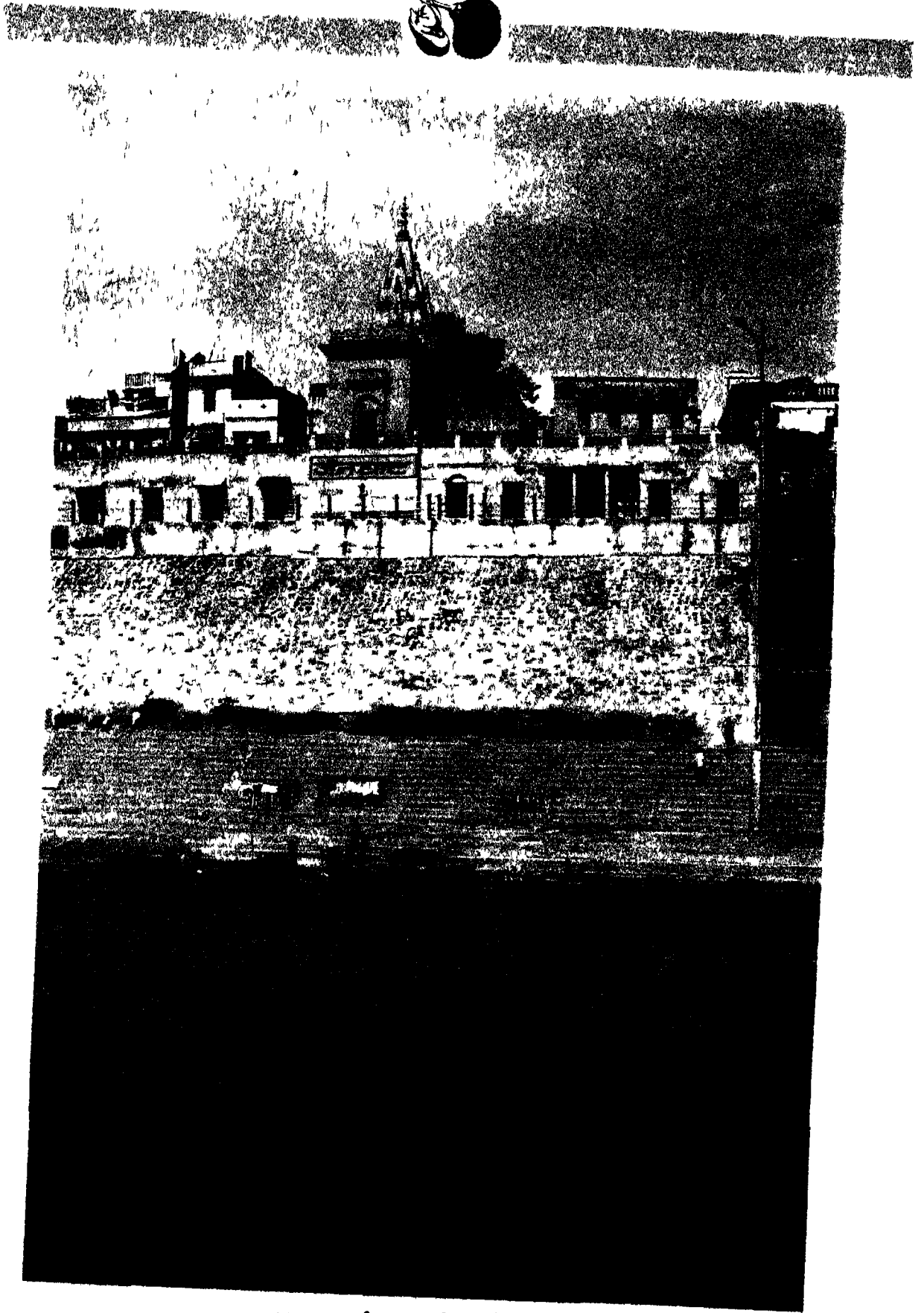
बनारस (काशी) (उत्तर प्रदेश) जैन घाट
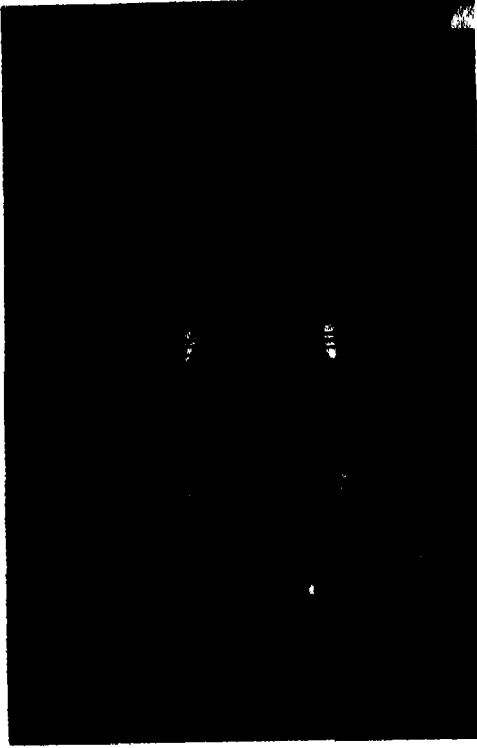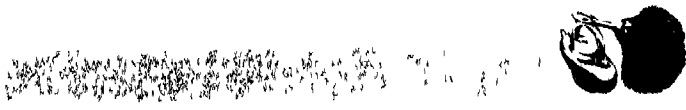
अयोध्या (उत्तर प्रदेश)
भ आदिनाथ की ३३ फुट ऊँची विशाल प्रतिमा
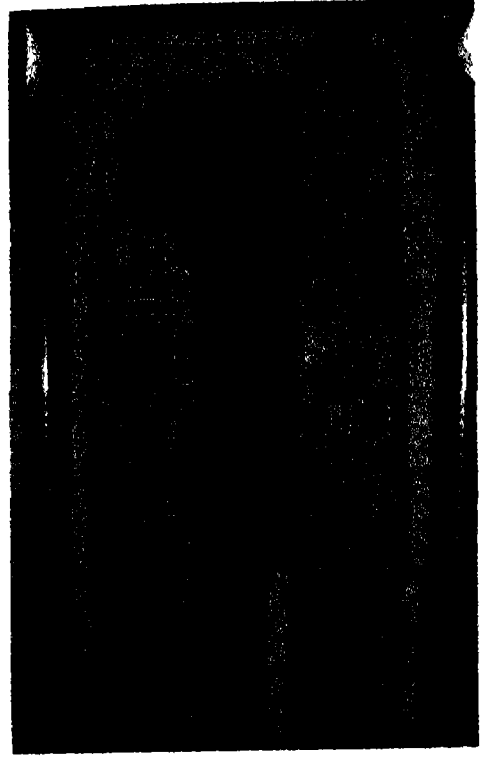
बिजौलिया (राजस्थान) प्राचीन शिलालेख

सकरोली (उ प्रदेश) दिगम्बर जैन मंदिर
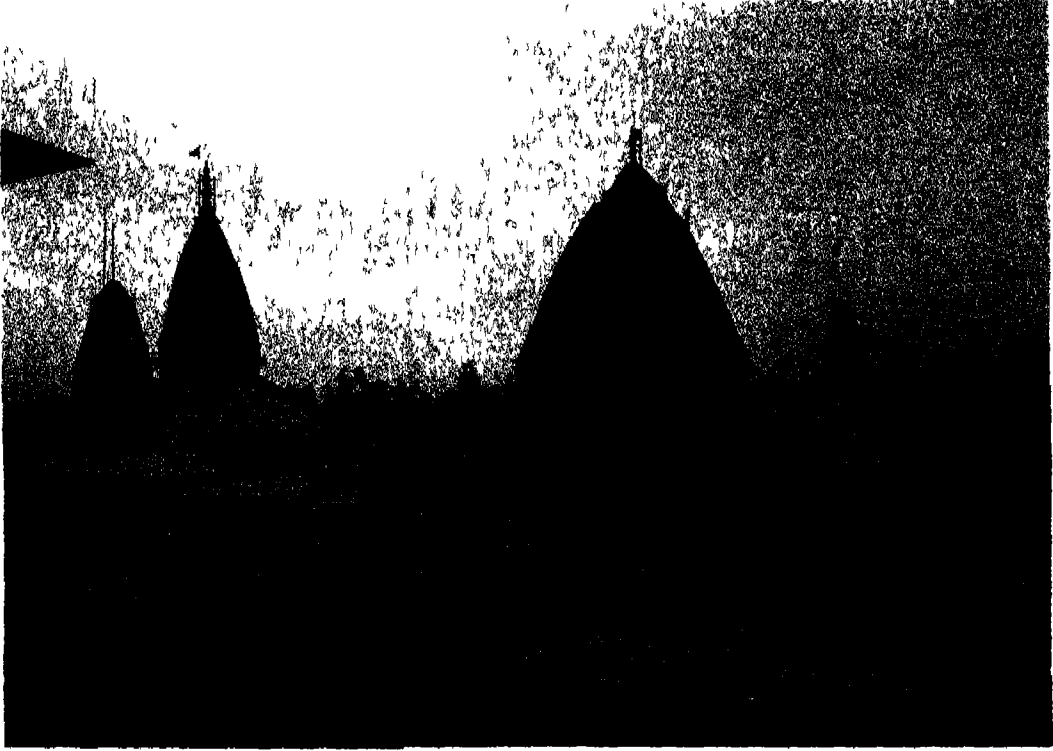
हस्तिनापुर (उत्तर प्रदेश) प्राचीन मंदिर
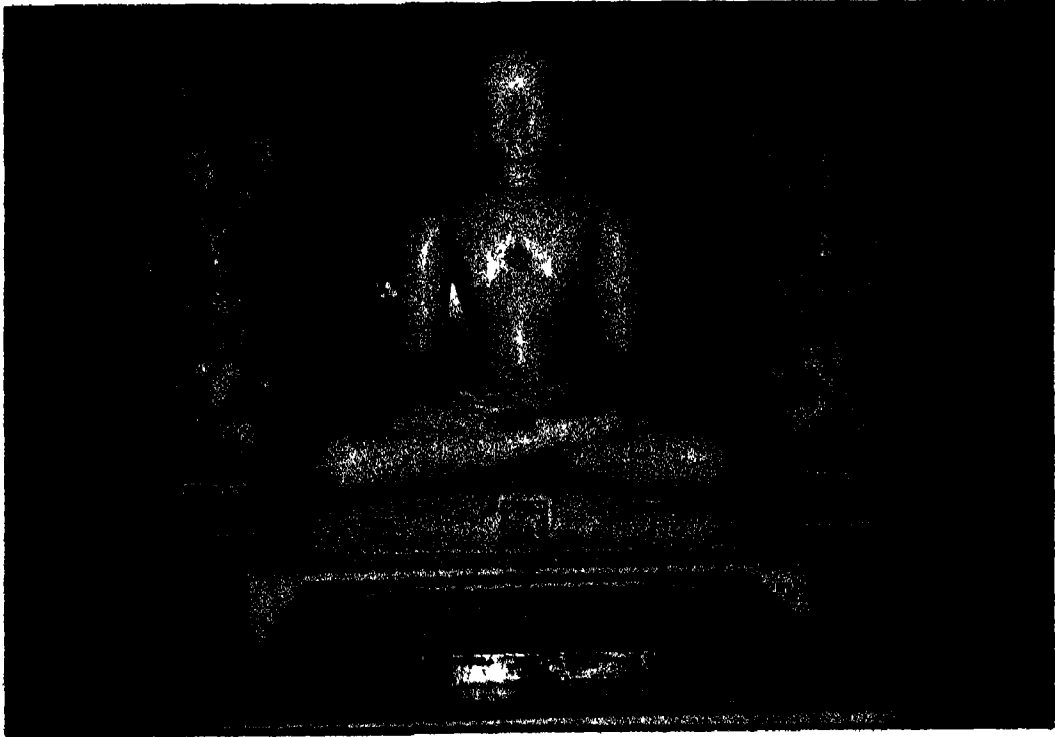
मथुरा (उत्तर प्रदेश) भगवान अजितनाथ की सातिशय प्रतिमा

प्रयाग (उत्तर प्रदेश) अक्षय वृक्ष
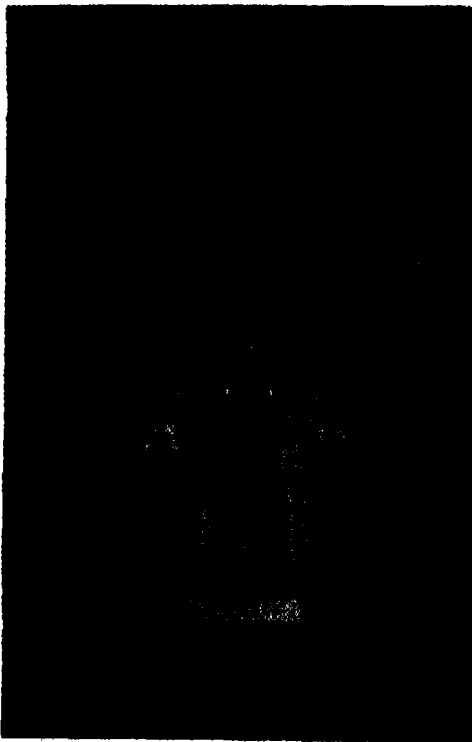
सिरोंनजी (उत्तर प्रदेश) मूलनायक भगवान शान्तिनाथ

कोसमा ग्राम (उत्तर प्रदेश) आचार्यश्री के जन्मस्थान पर मंदिर
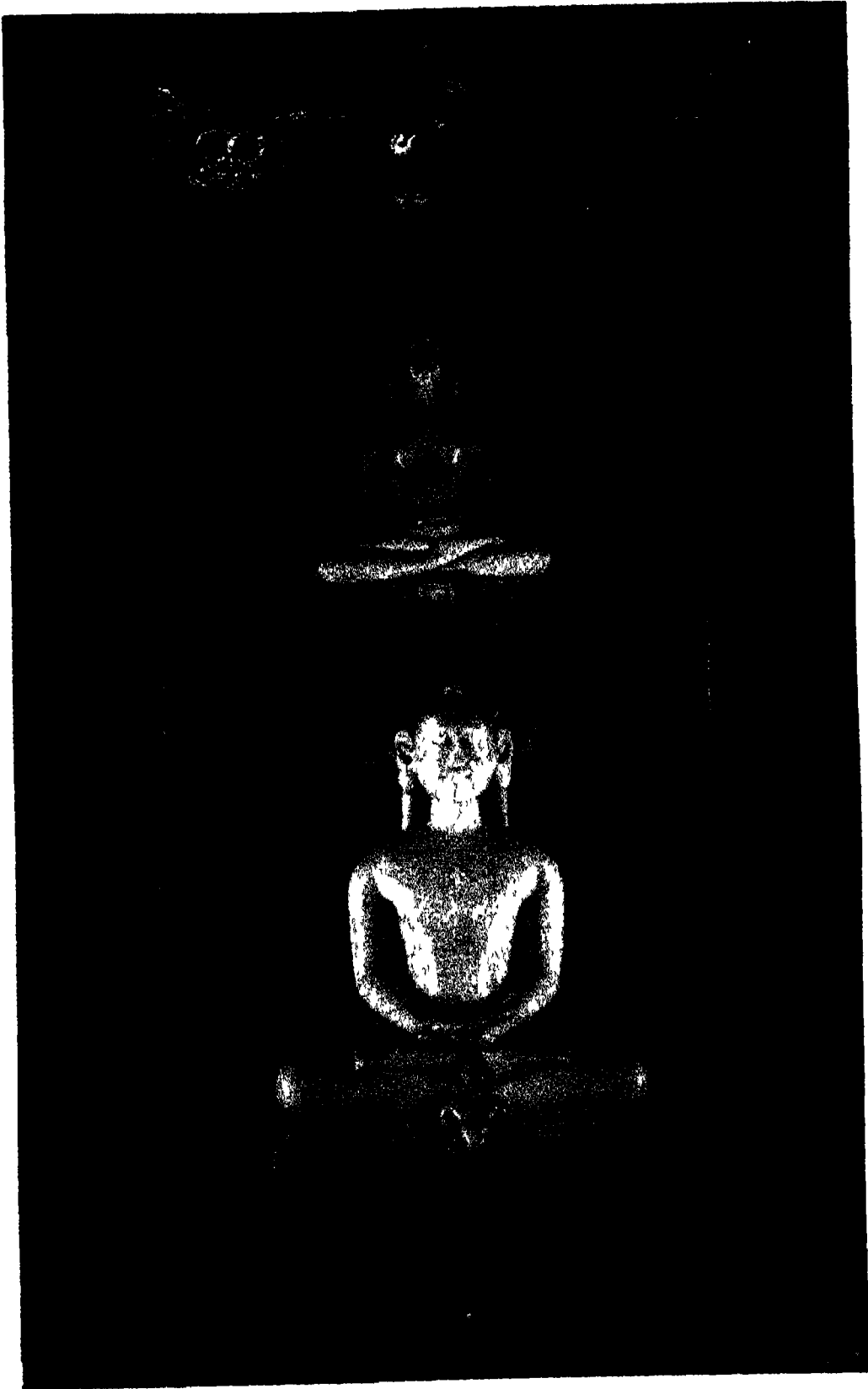
चन्द्रपुरी-बनारस (उत्तर प्रदेश) मूलनायक चन्द्रप्रभु भगवान (भगवान का जन्मस्थान)
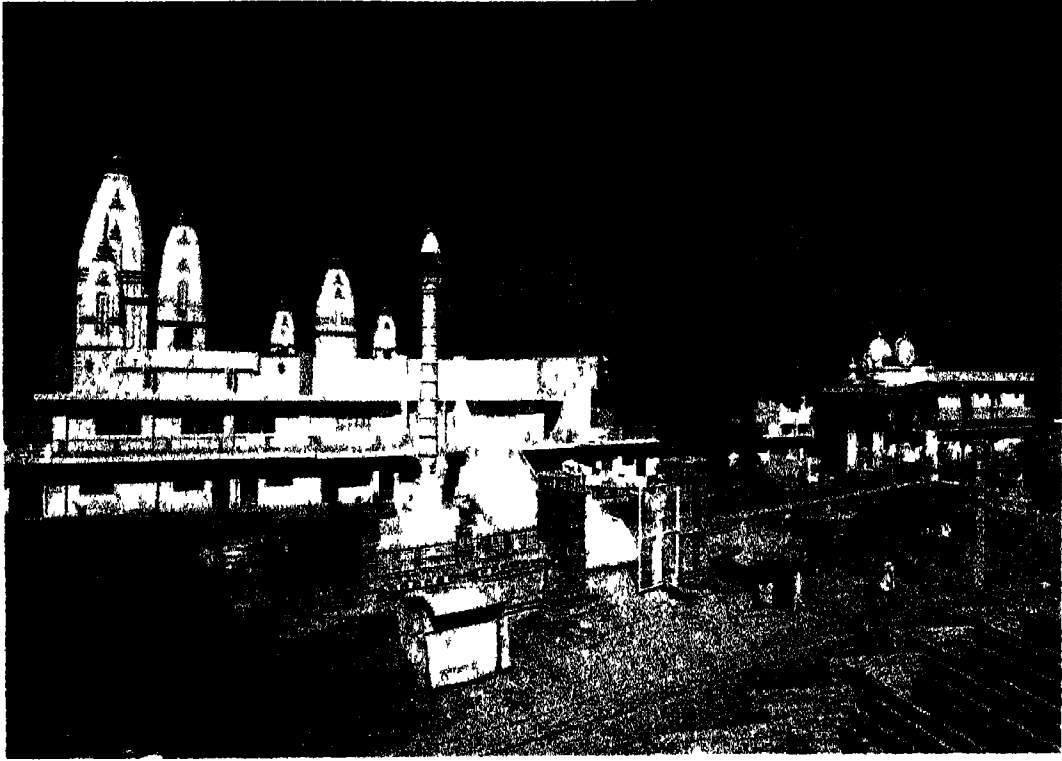
अहिच्छत्र (उत्तर प्रदेश) अतिशय क्षेत्र
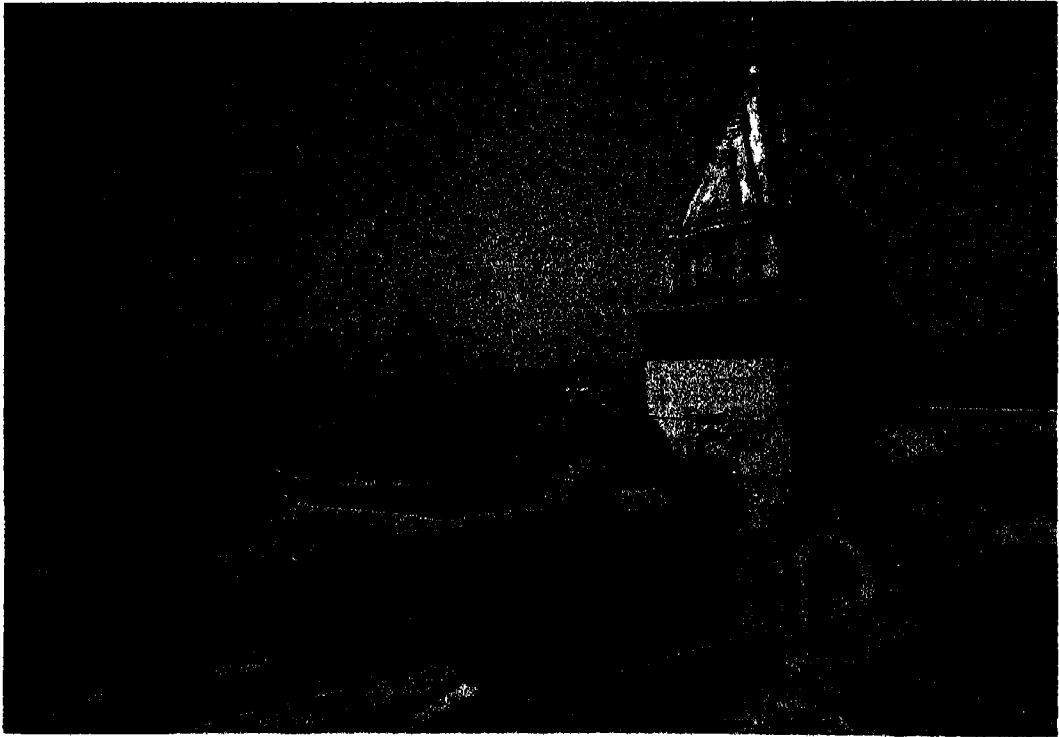
कौशाम्बी (उत्तर प्रदेश) मूलनायक भ पद्मप्रभु

अहिच्छेत्र (उत्तर प्रदेश) मूलनायक भ पार्श्वनाथ
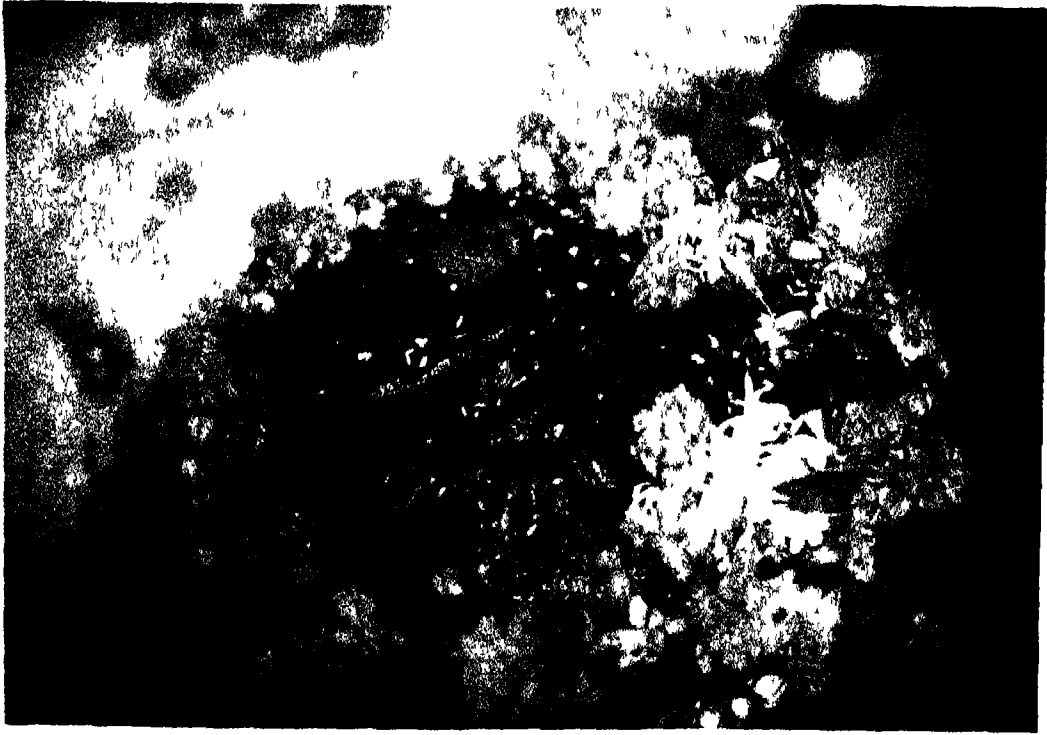
बनारस (उत्तर प्रदेश) फटा महादेव जिसमे से चन्द्रप्रभु भ की प्रतिमा प्रकट हुई थी
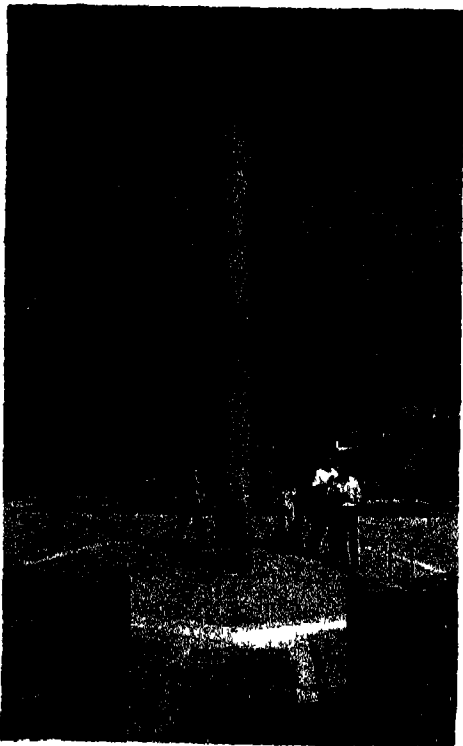
कुकुभग्राम (उत्तरप्रदेश) मानस्तभ
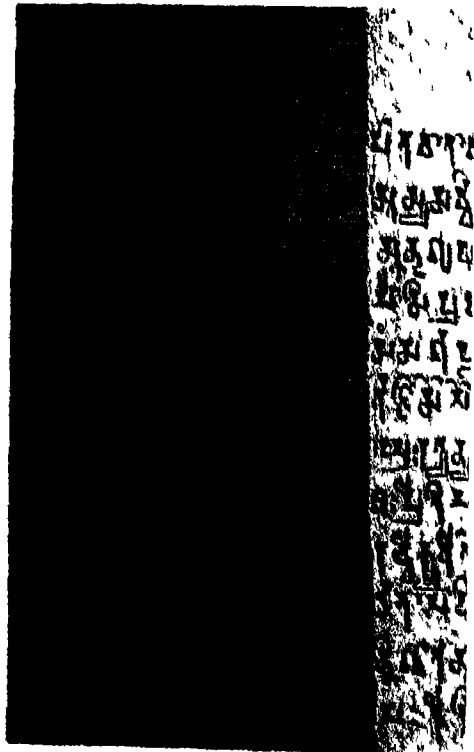
कुकुभ ग्राम (उत्तर प्रदेश) ब्राम्हीलीपि मे शिलालेख
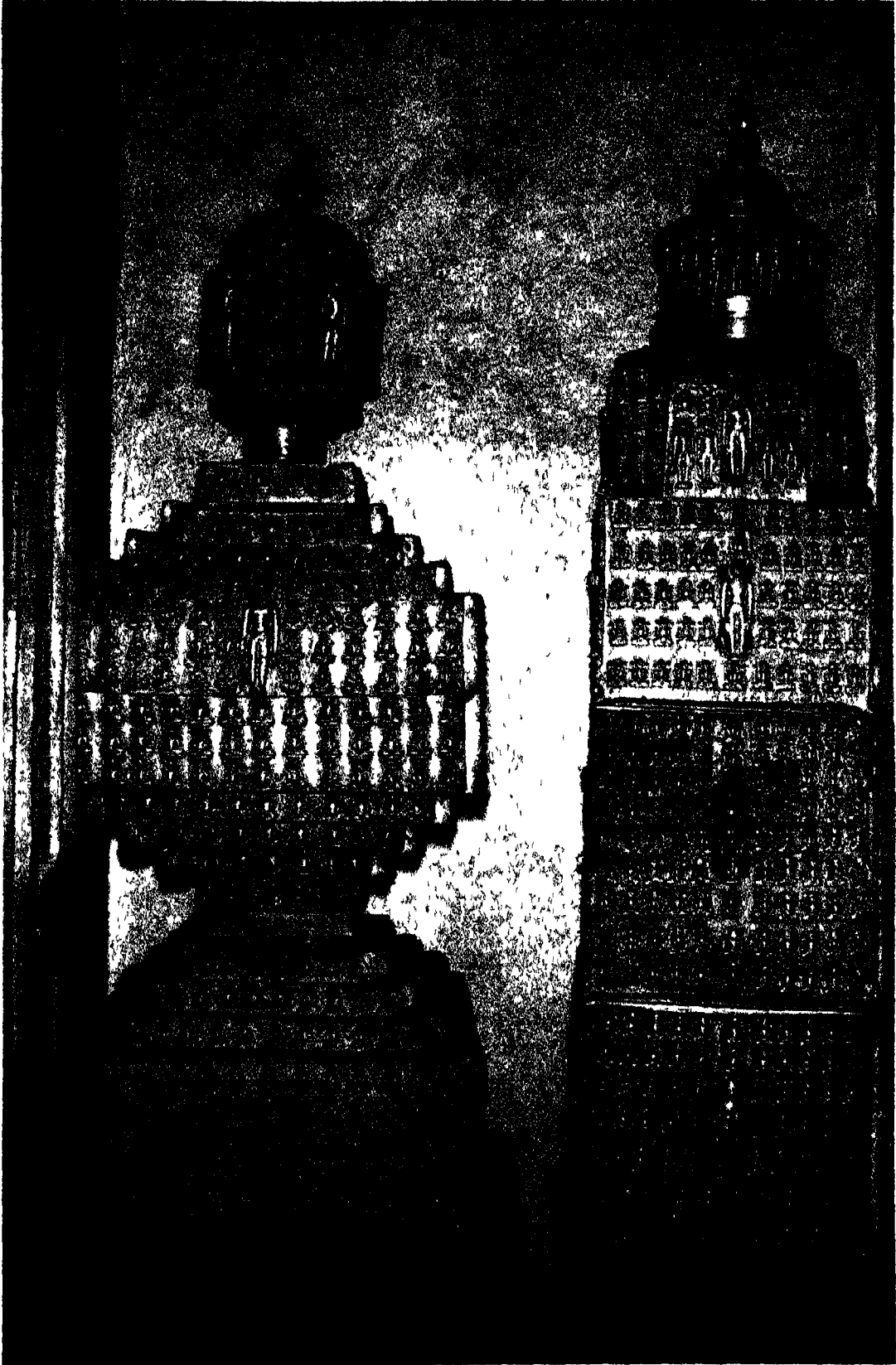
जिन्तूर (महाराष्ट्र) सहस्त्रकूट पचमेरू
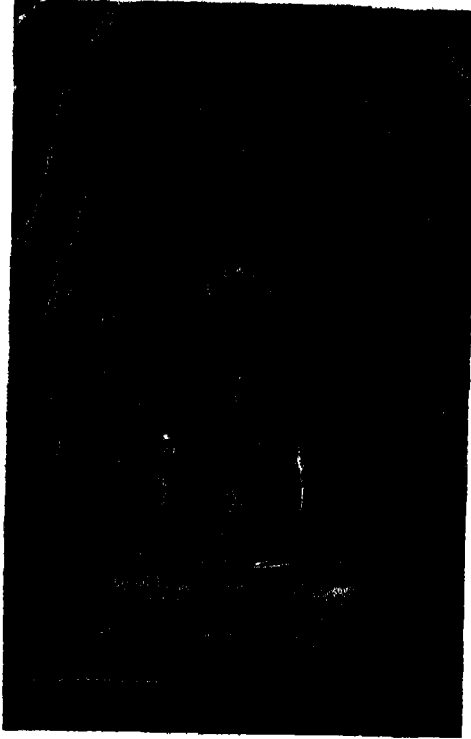
बड़ागाव (उत्तर प्रदेश)
भगवान महावीर की सातिशय मूर्ति
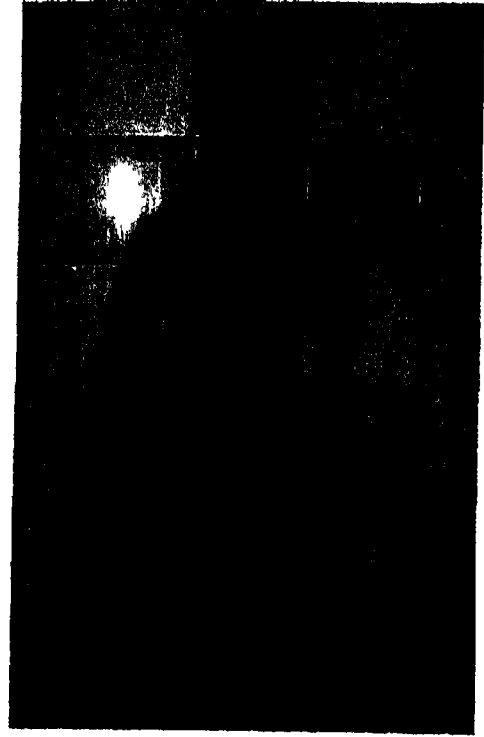
देवगढ़ (उत्तर प्रदेश)
उपाध्याय परमेष्ठी की प्राचीन मूर्ति
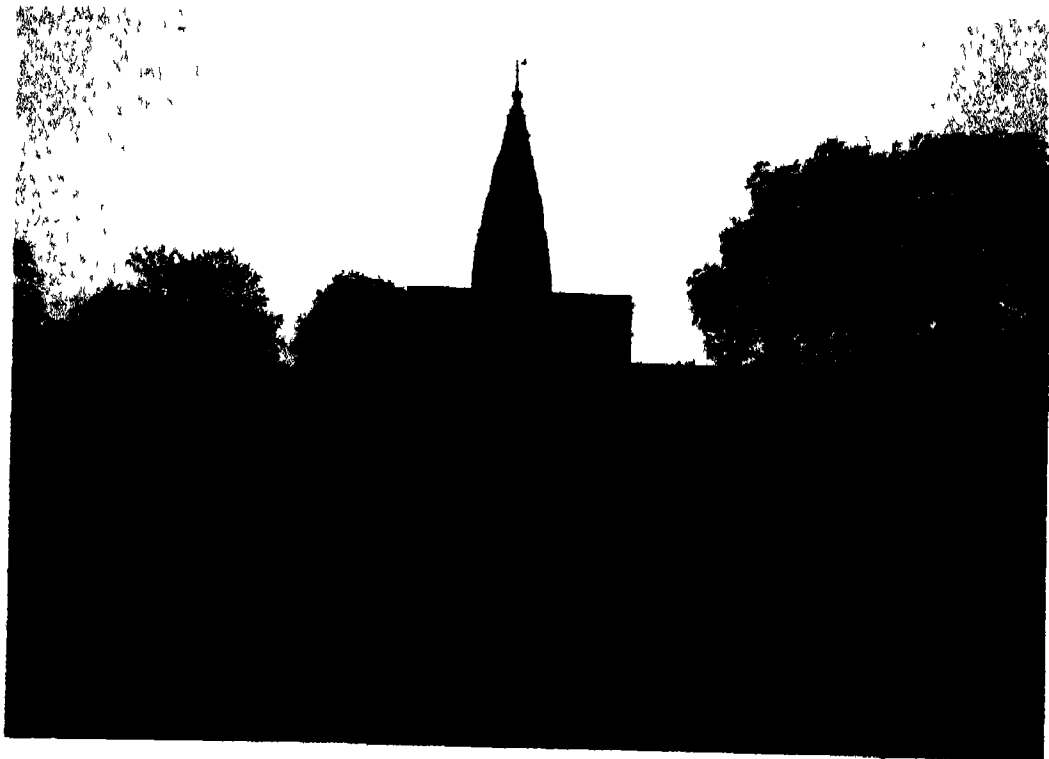
सारनाथ (उत्तर प्रदेश) भ श्रेयासनाथ का जन्मस्थान

बालाबहेट (उत्तर प्रदेश) मूलनायक सांवलिया पार्श्वनाथ की सातिशय प्रतिमा
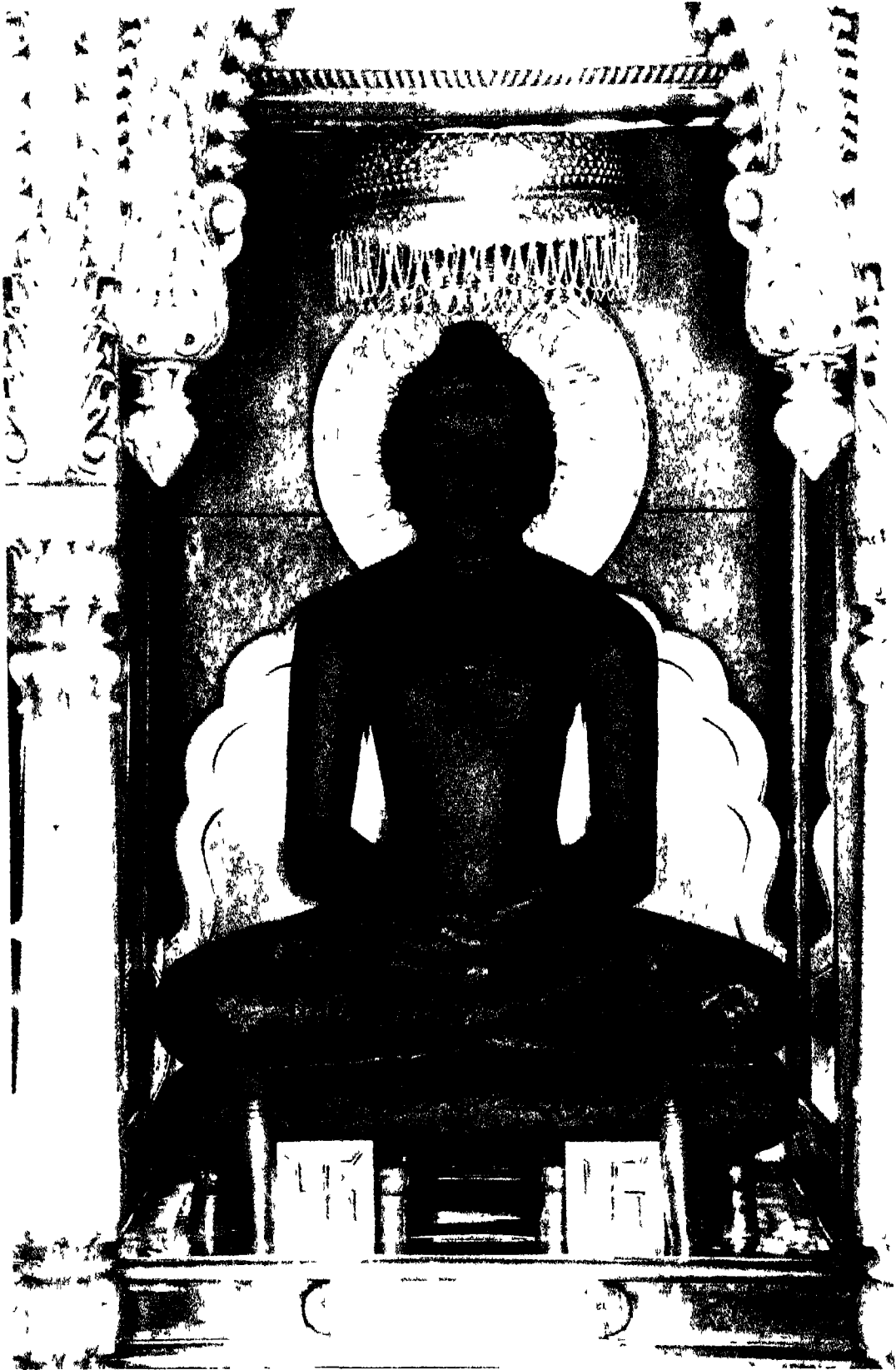
श्रीमहावीरजी (राजस्थान) भ महावीर मूलनायक, भूगर्भ से प्राप्त सातिशय मूर्ति
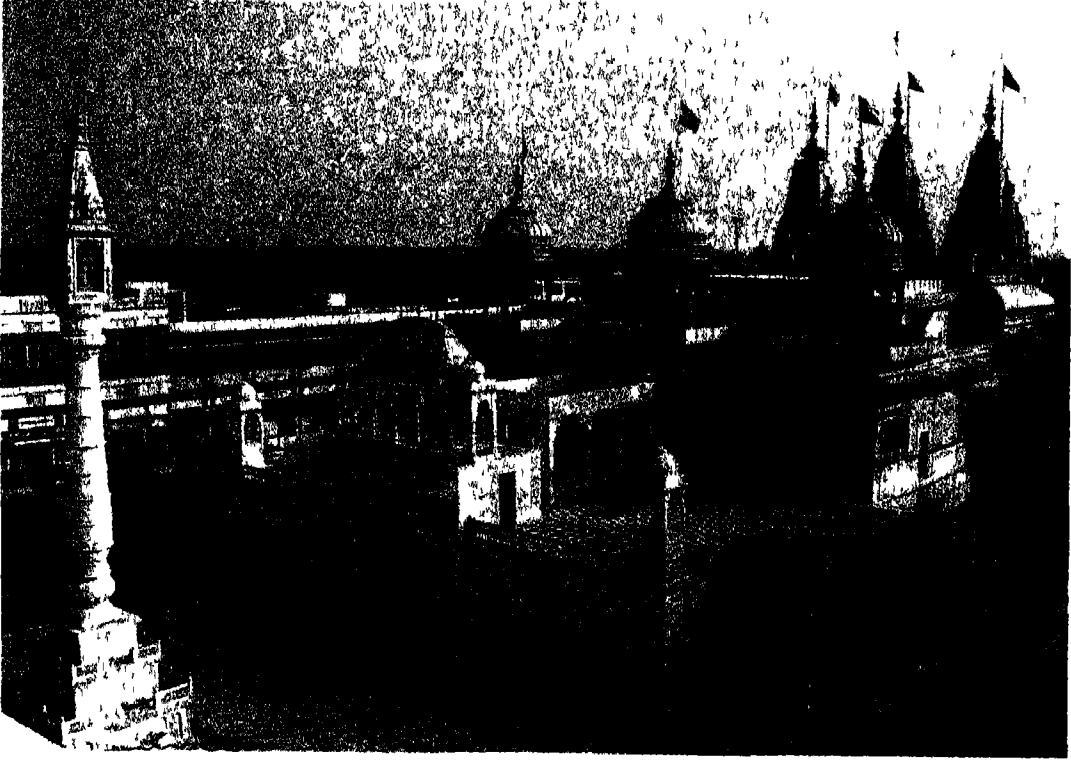
श्रीमहावीरजी (राजस्थान) दिगम्बर जैन मदिर (बाहरी दृष्य)

नागफणि पार्श्वनाथ (राजस्थान) सातिशय क्षेत्र
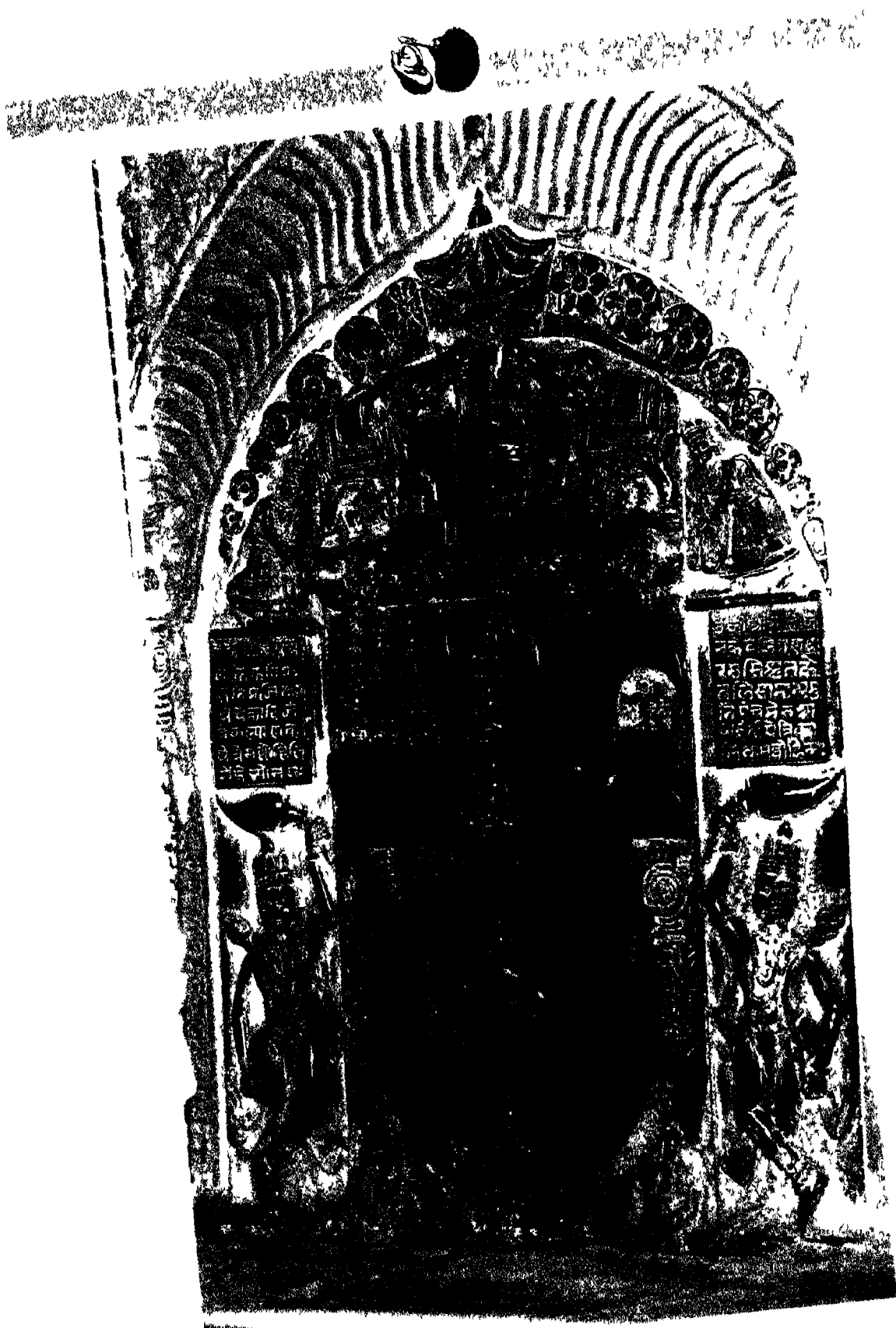
प्रतापगढ (राजस्थान) ह्री म स्थित भगवान

चाँदखेड़ी (राजस्थान) भगवान आदिनाथ की सातिशयमूर्ति
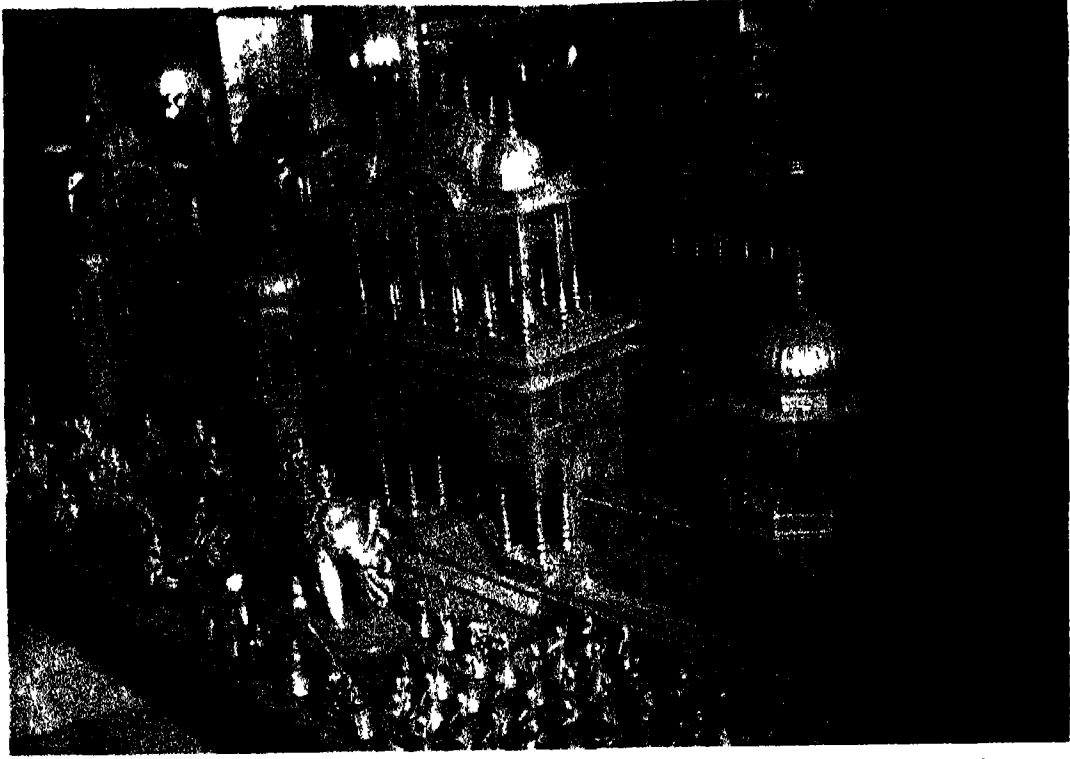
अजमेर (राजस्थान) ऐरावत हाथीपर जिनेन्द्र बालक भगवानको जन्माभिषेक हेतु पाडुक शिलापर ले जाते हुए का मनोरम चित्र

पद्मप्रभुजी (राजस्थान) मदिरकी मनोरम छवि
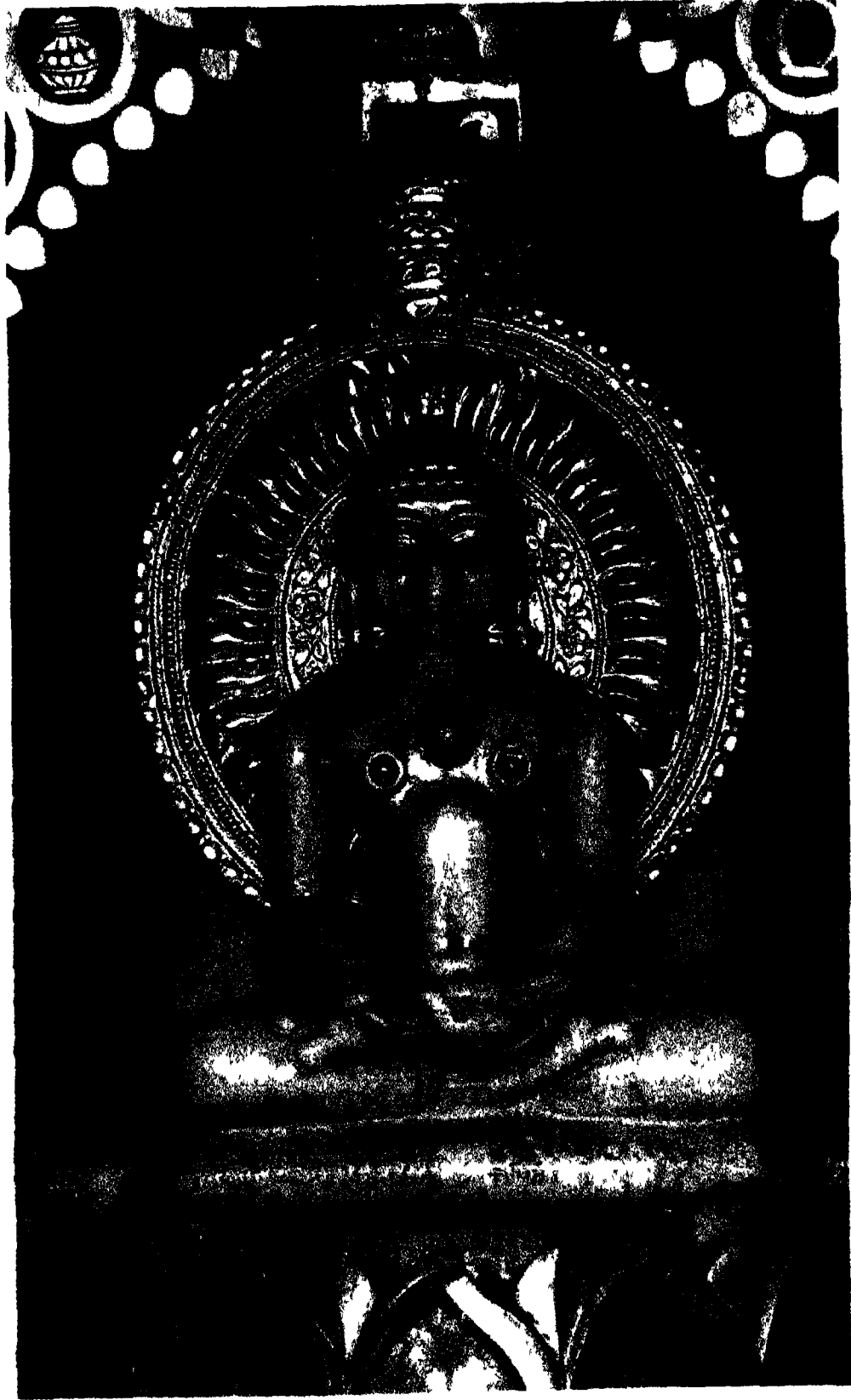
तिजारा (राजस्थान) चद्रप्रभू भ की सातिशय प्रतिमा

लाडनूँ (राजस्थान) सरस्वती की कलापूर्ण मूर्ति

लोहारिया (राजस्थान) आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज की प्रेरणासे निर्मित दिगम्बर जैन मंदिर
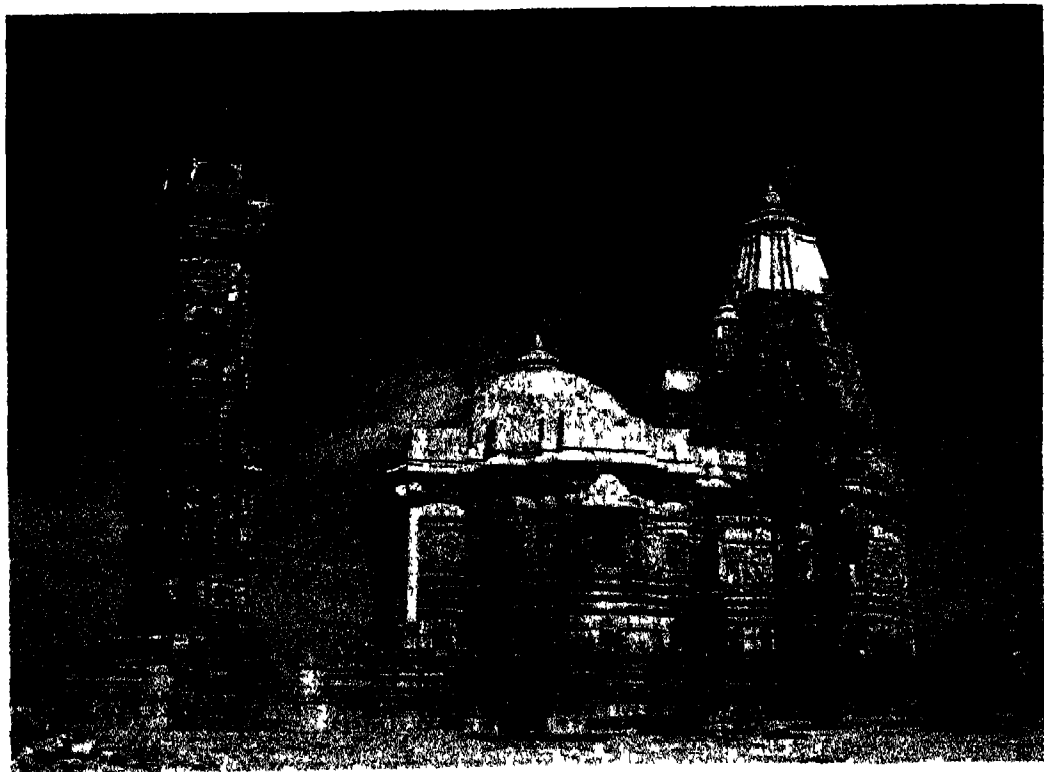
चित्तौड़ (राजस्थान) कीर्तिस्तम्भ और प्राचीन मंदिर
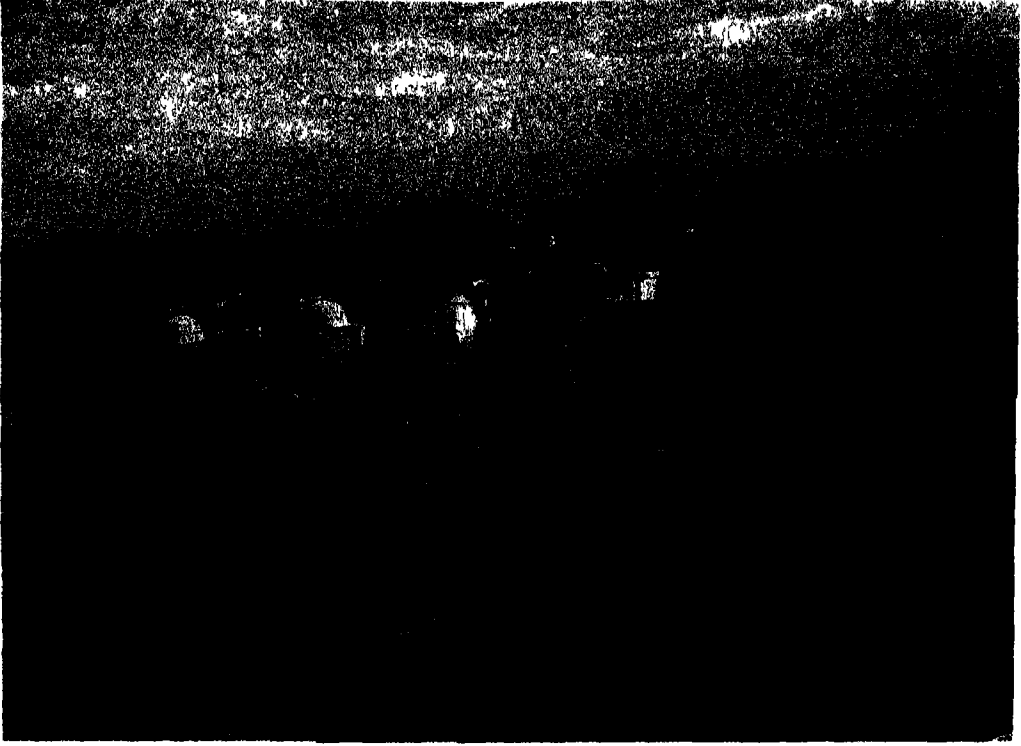
केशरियाजी (राजस्थान) अतिशय क्षेत्र

नागफणि पार्श्वनाथ (राजस्थान) धरणेन्द्र के मस्तकपर स्थित मूलनायक भ पार्श्वनाथ
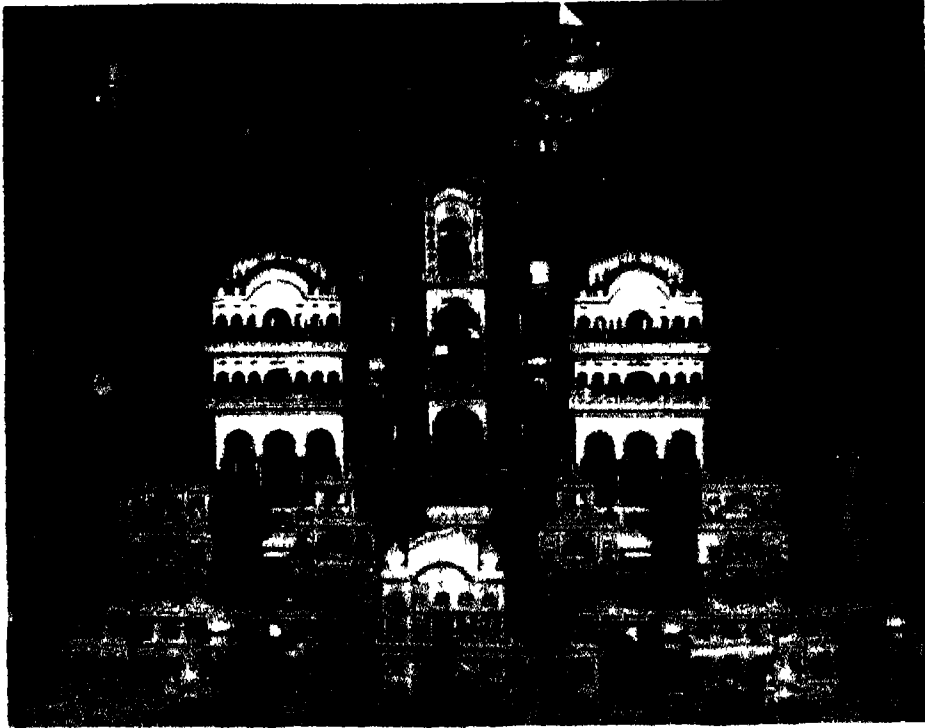
समोवशरण रचना अजमेर

भिलोडा का दिगम्बर जैन मंदिर व मानस्तभ
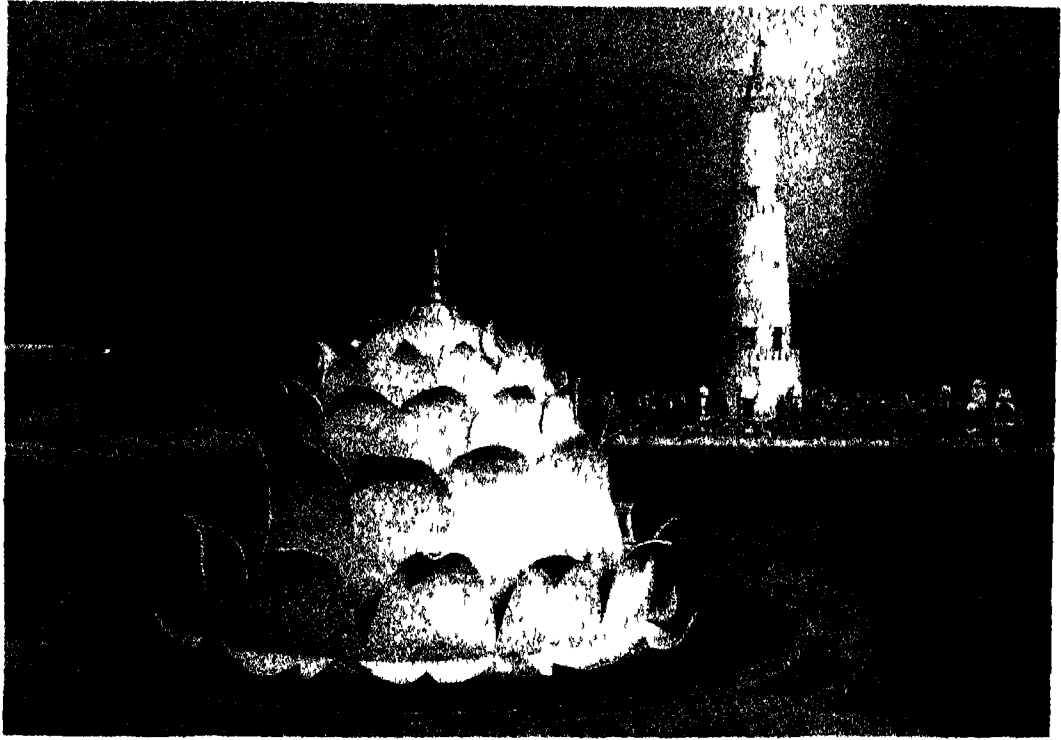
हस्तिनापुर (उ. प्र.) जम्बूद्वीप

चमत्कारजी-स माधोपुर (राजस्थान) भूगर्भ से प्राप्त
भगवान आदिनाथ की स्फटिक मणि की सातिशय मूर्ति

सोनागिर (मध्य प्रदेश)
आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ध्यान मुद्रा म

कुण्डलपुर (मध्य प्रदेश) अतिशय क्षेत्र
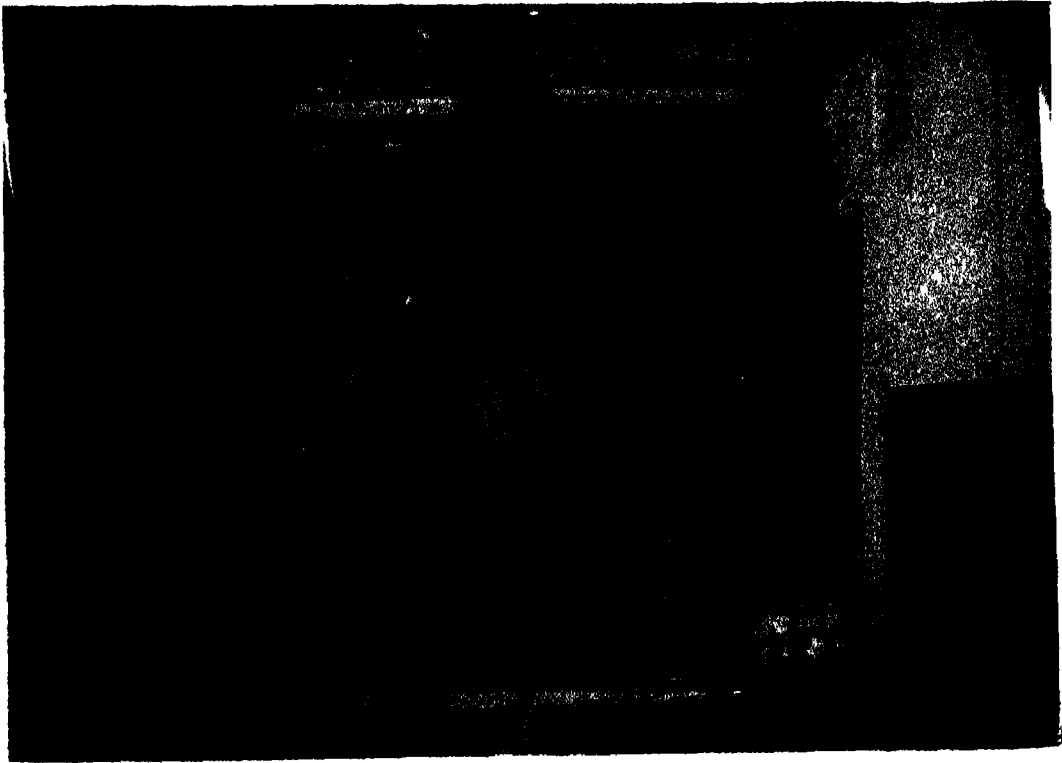
कुण्डलपुर (मध्य प्रदेश) भगवान महावीर-बड़ेबाबा

पपौराजी (मध्य प्रदेश) अतिशय क्षेत्र
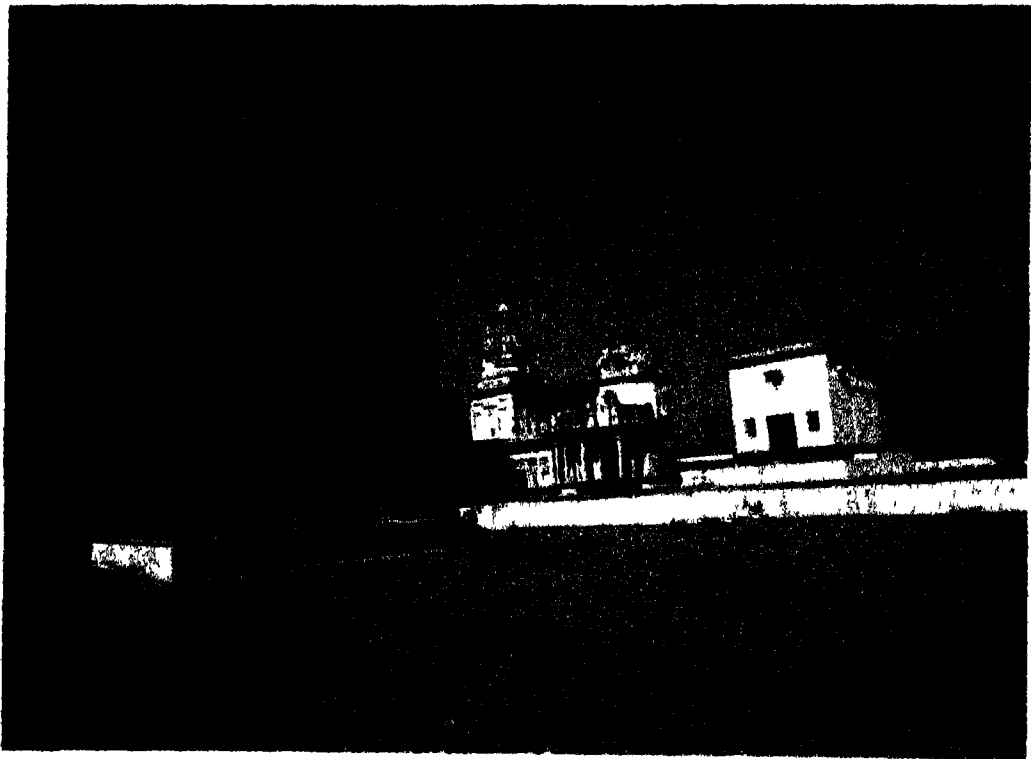
बानपुरा (मध्य प्रदेश) अतिशय क्षेत्र

ग्यारसपुर (मध्य प्रदेश) भगवान पार्श्वनाथ की सातिशय मूर्ति

बजरग गढ़ (मध्य प्रदेश) मूलनायक शातिनाथ, कुंथुनाथ व अरहनाथ

खजुराहो (मध्यप्रदेश)
भगवान शान्तिनाथ की सातिशय मूर्ति

गोम्मटगिरी-इन्दौर (मध्य प्रदेश)
भगवान बाहुबली (नूतन क्षेत्र)
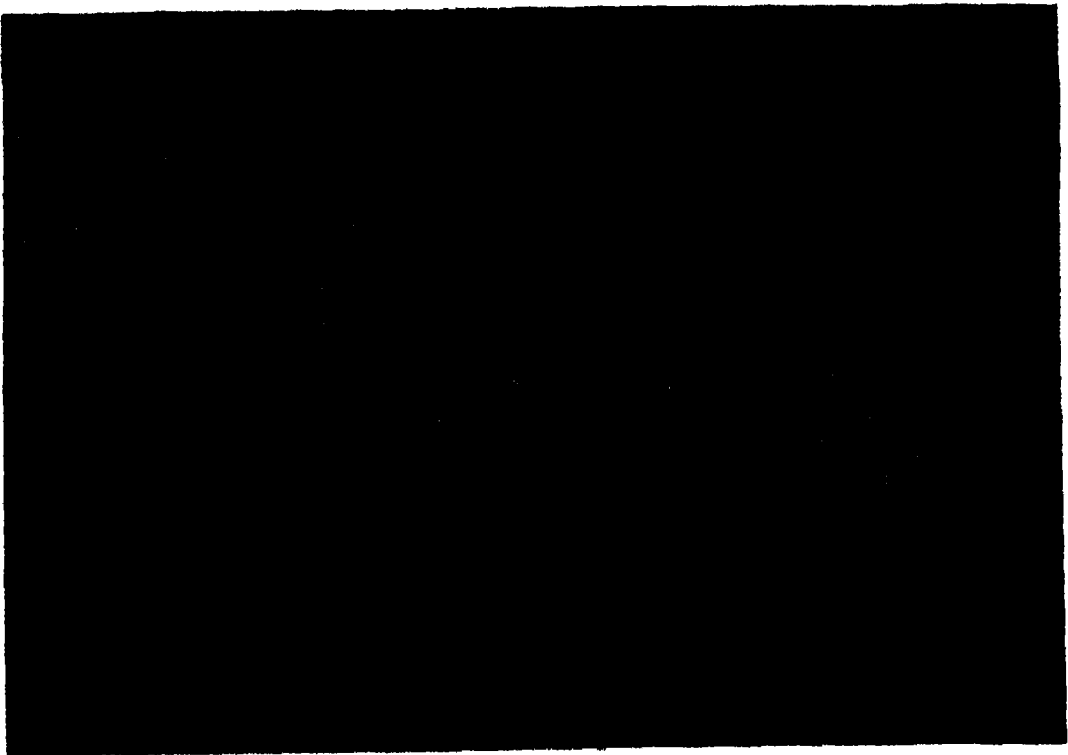
सोनागिरी (मध्य प्रदेश) सिद्धक्षेत्र

आचार्य श्री विमलसागरजी के सघ म चल जिन चैत्यालय
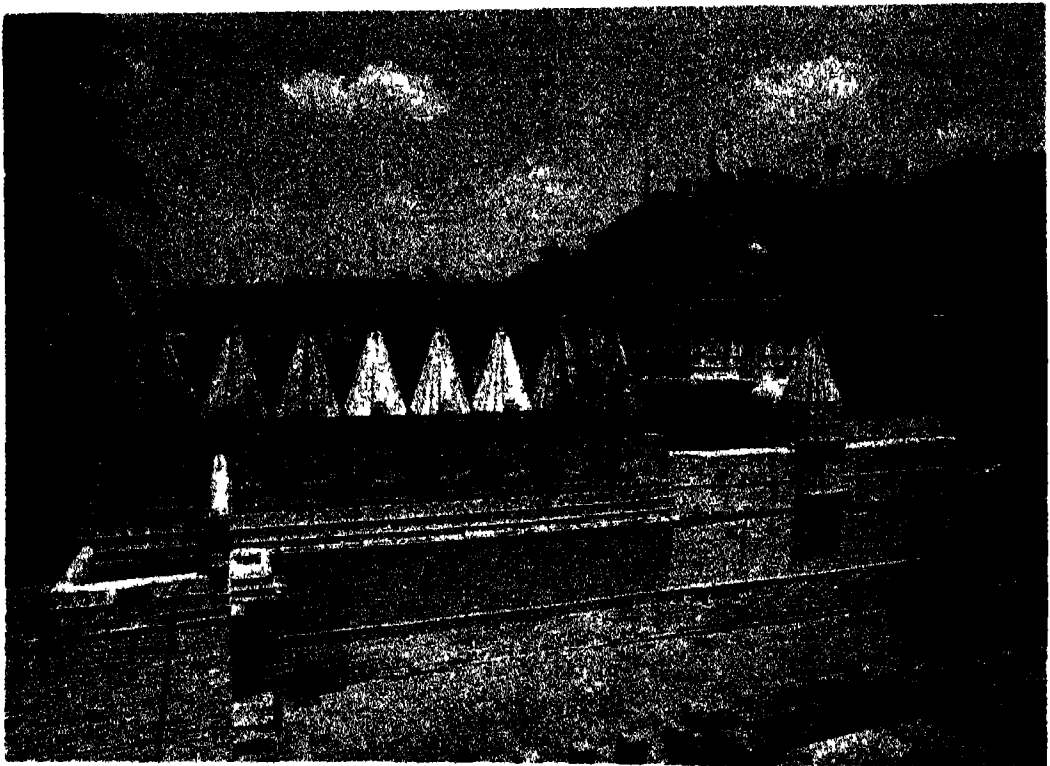
चन्देरी (मध्य प्रदेश) शिखरसहित २४ टोक का प्राचीन मदिर
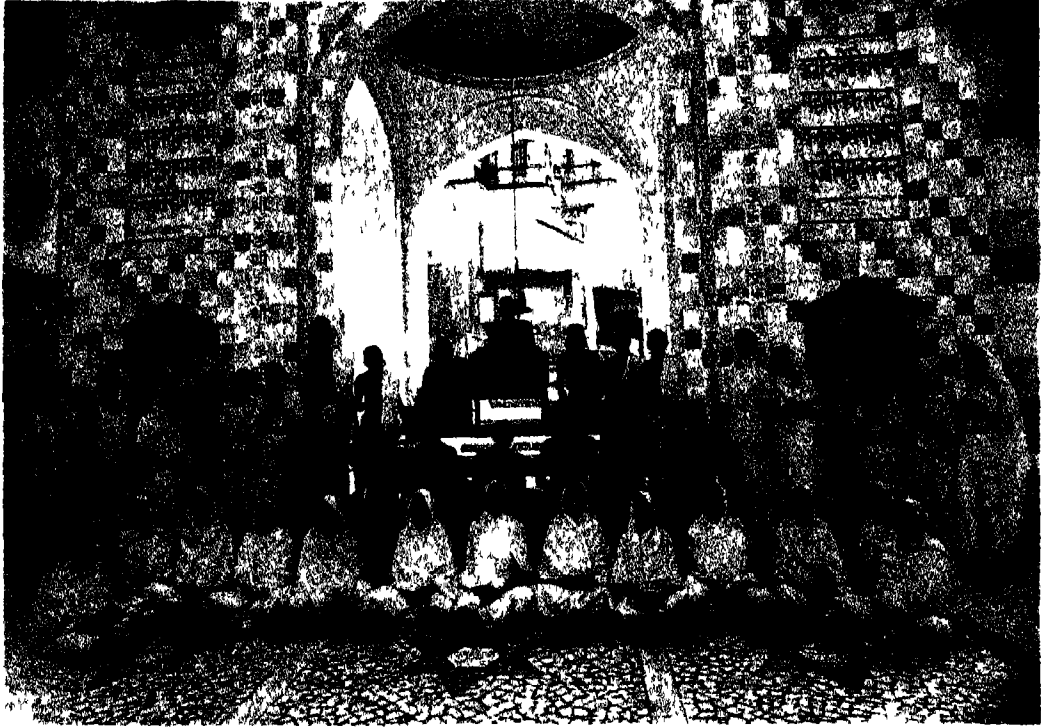
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज अपने संघ सहित

ग्वालियर (मध्य प्रदेश) किले मे स्थित हजारो वर्ष प्राचीन प्रतिमाएँ

चन्देरी (मध्य प्रदेश)· अतिशय क्षेत्र
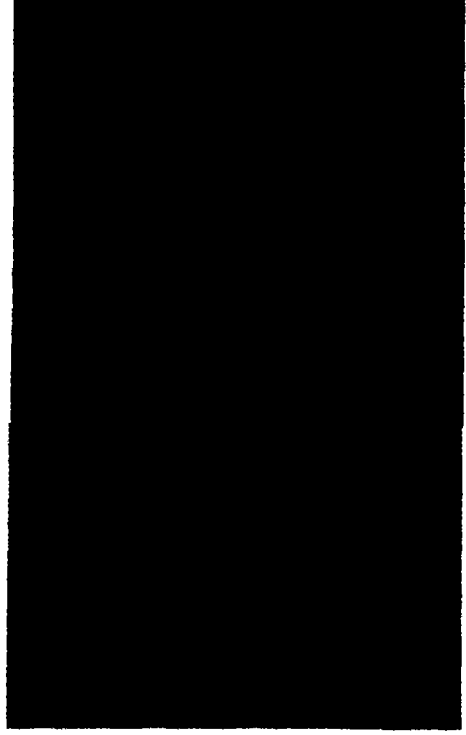
खजुराहो (मध्य प्रदेश)
भगवान आदिनाथ के माता-पिता
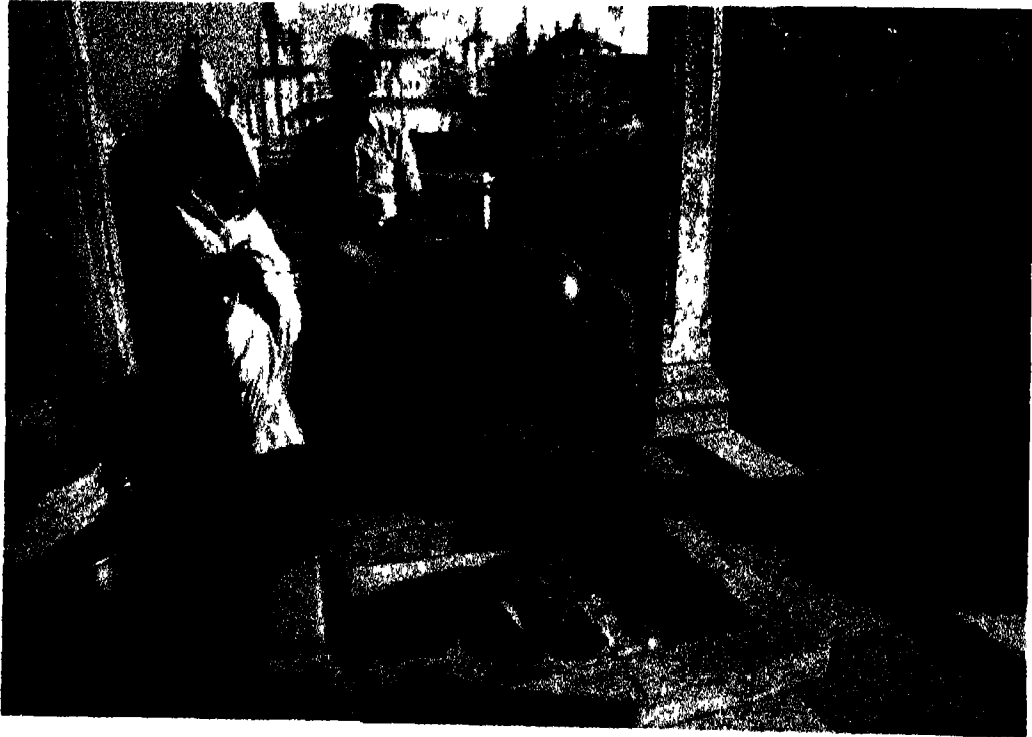
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज गंधोदक लेते हुए
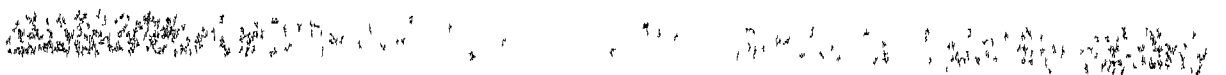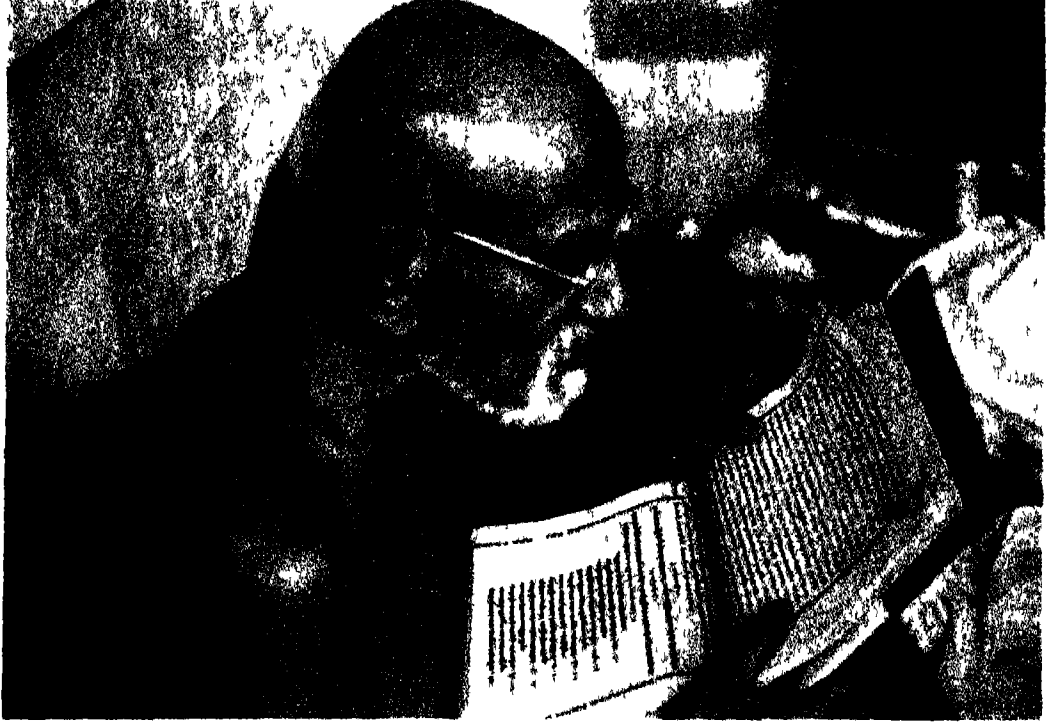
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज प्रतिष्ठा पाठ पढ़ते हुए
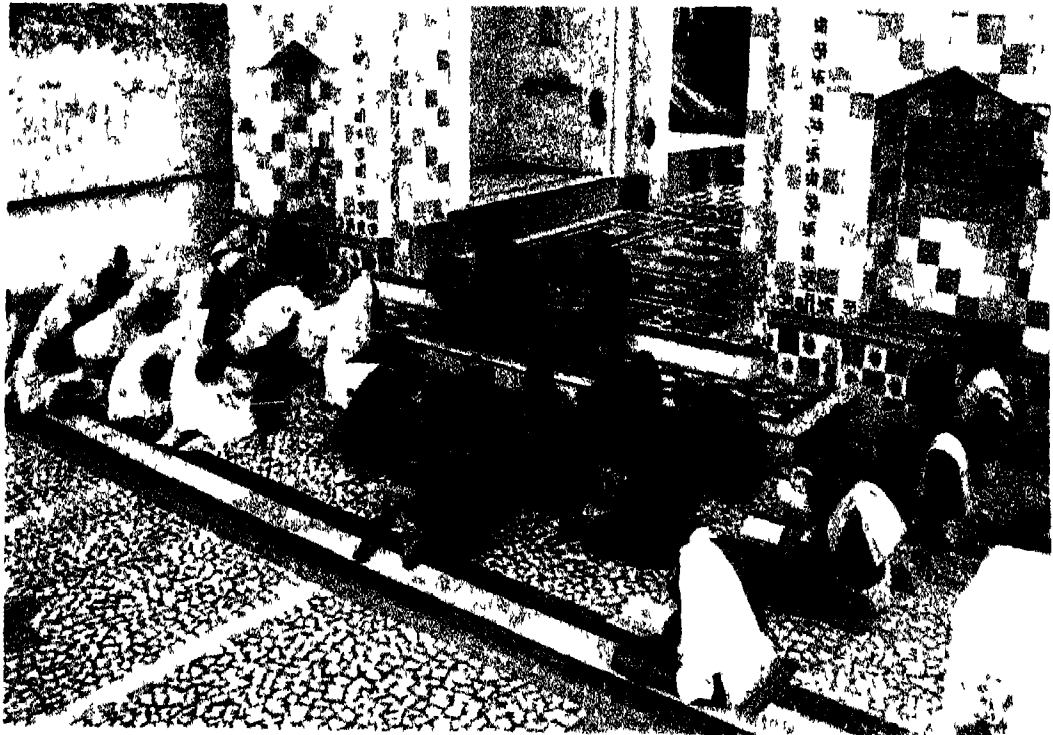
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्यश्री की वदना करते हुए समस्त सघ
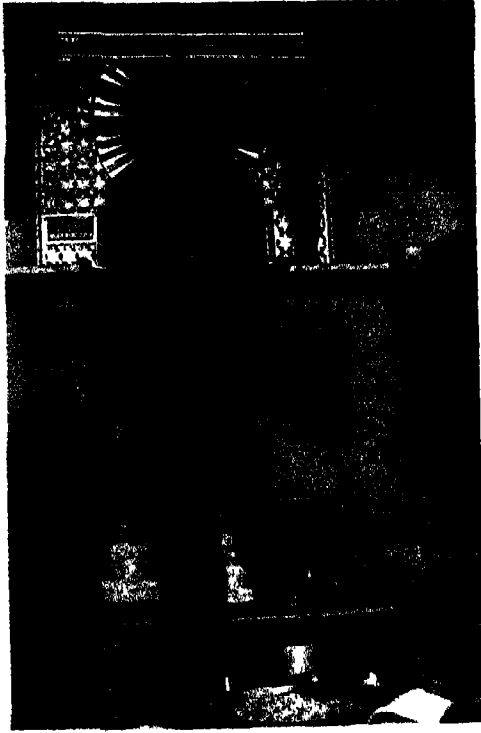
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्य श्री पचकल्याणक प्रतिष्ठा मे प्रतिमा को सूर्यमत्र देते हुए

सोनागिर (मध्य प्रदेश)
मूलनायक चद्रप्रभु भगवान
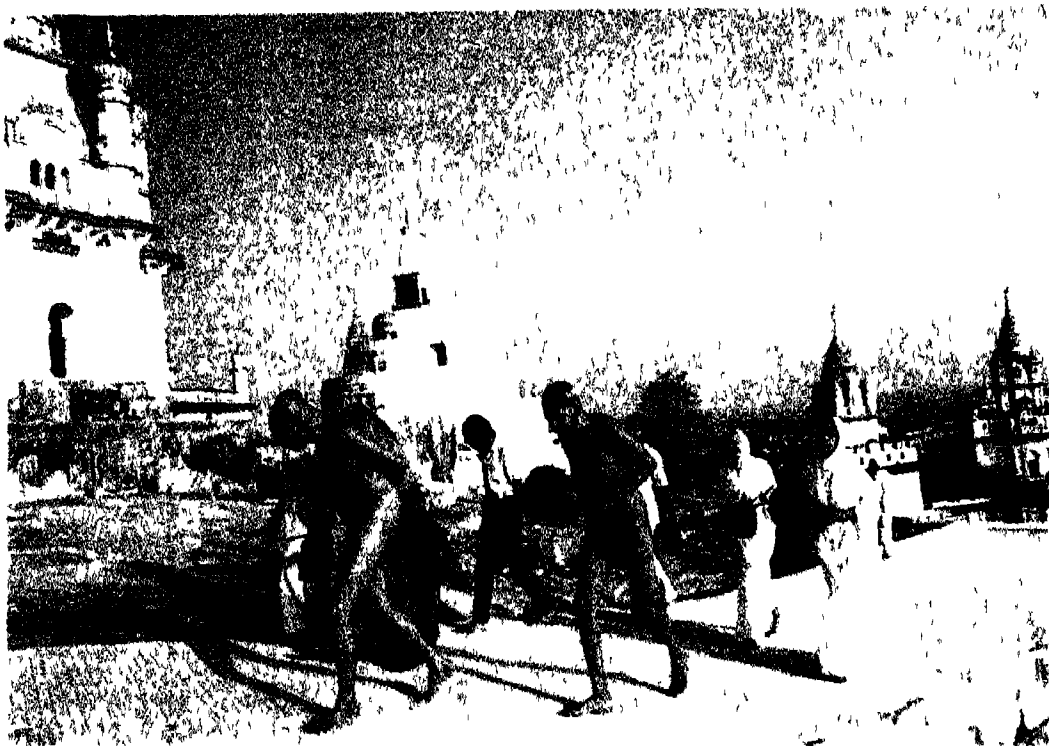
सोनागिर (मध्य प्रदेश) आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ससघ पहाड़ की वदना करते हुए
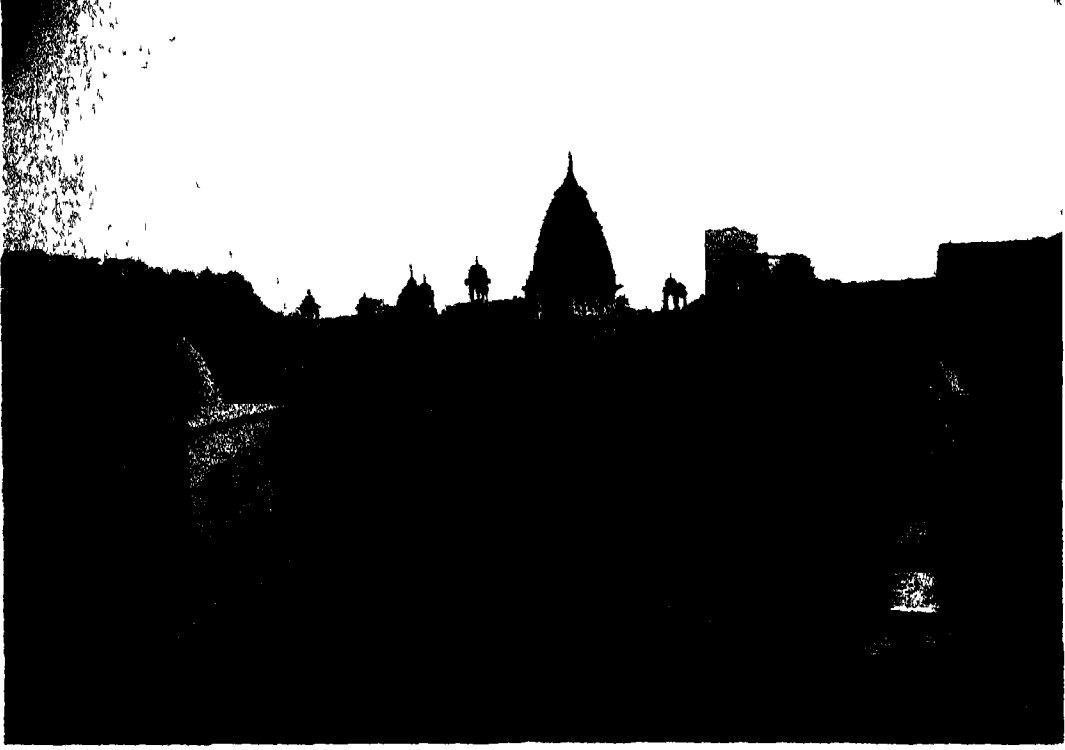
अहारजी (मध्य प्रदेश) अतिशय क्षेत्र
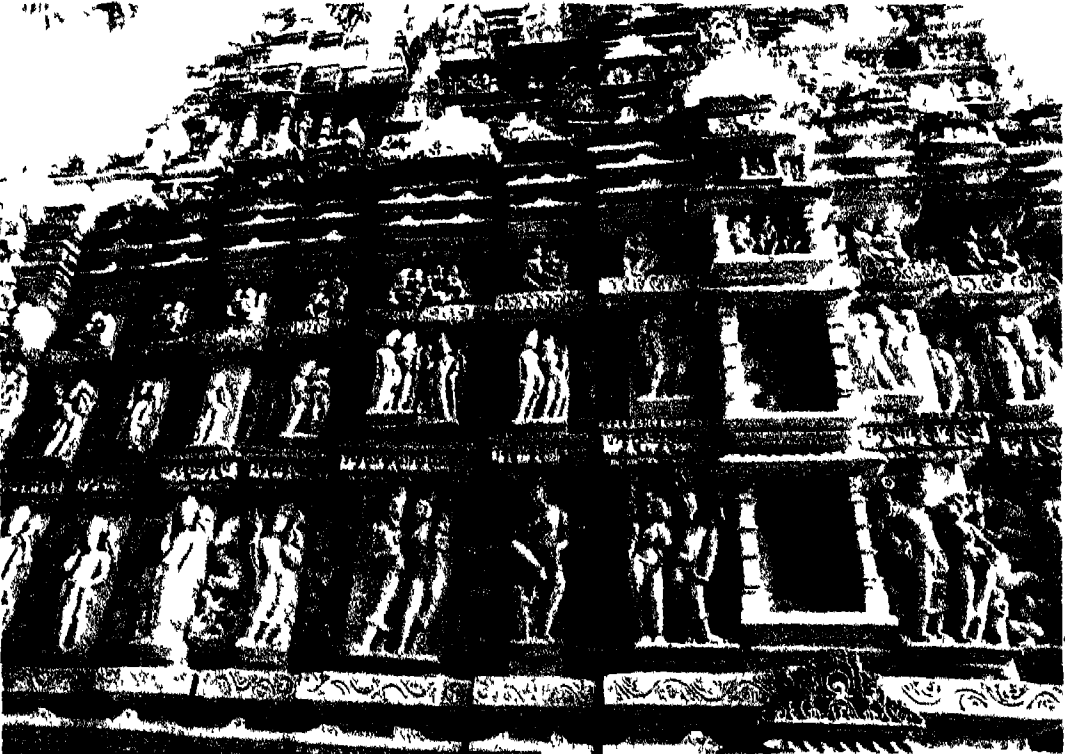
खजुराहो (मध्य प्रदेश) आकर्षक कलाकृति युक्त दिगम्बर जैन मन्दिर
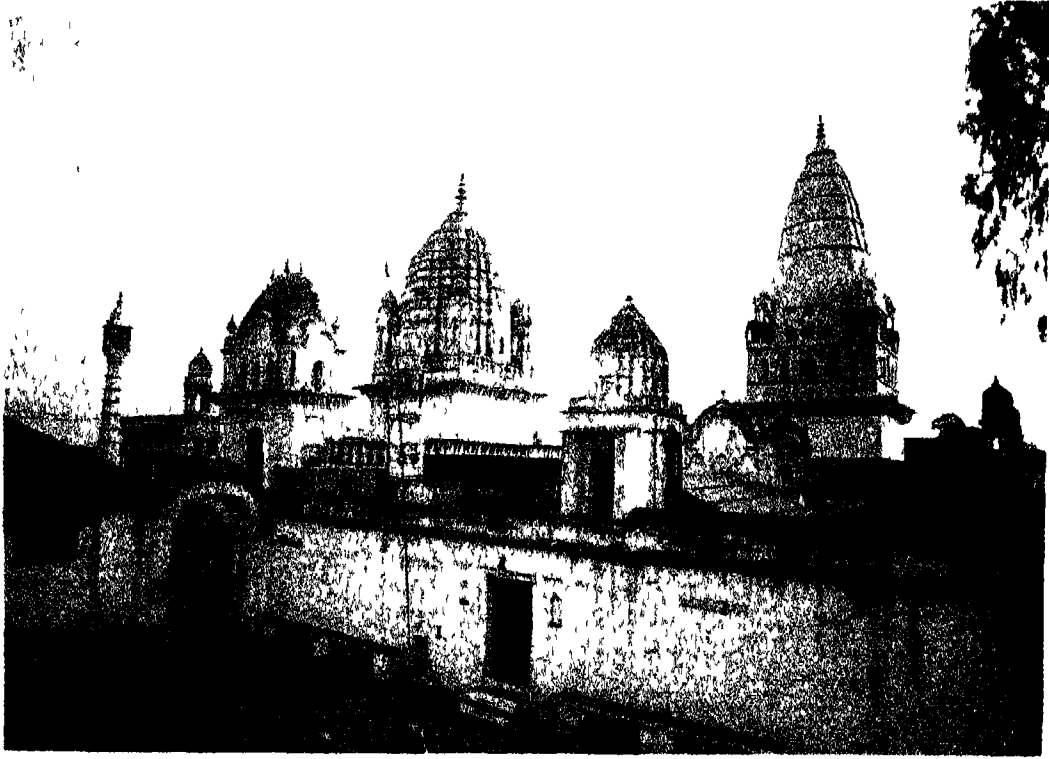
बीना-बारहा (मध्य प्रदेश) अतिशय क्षेत्र

पटनागज (मध्य प्रदेश) भगवान महावीर की सातिशय मूर्ति
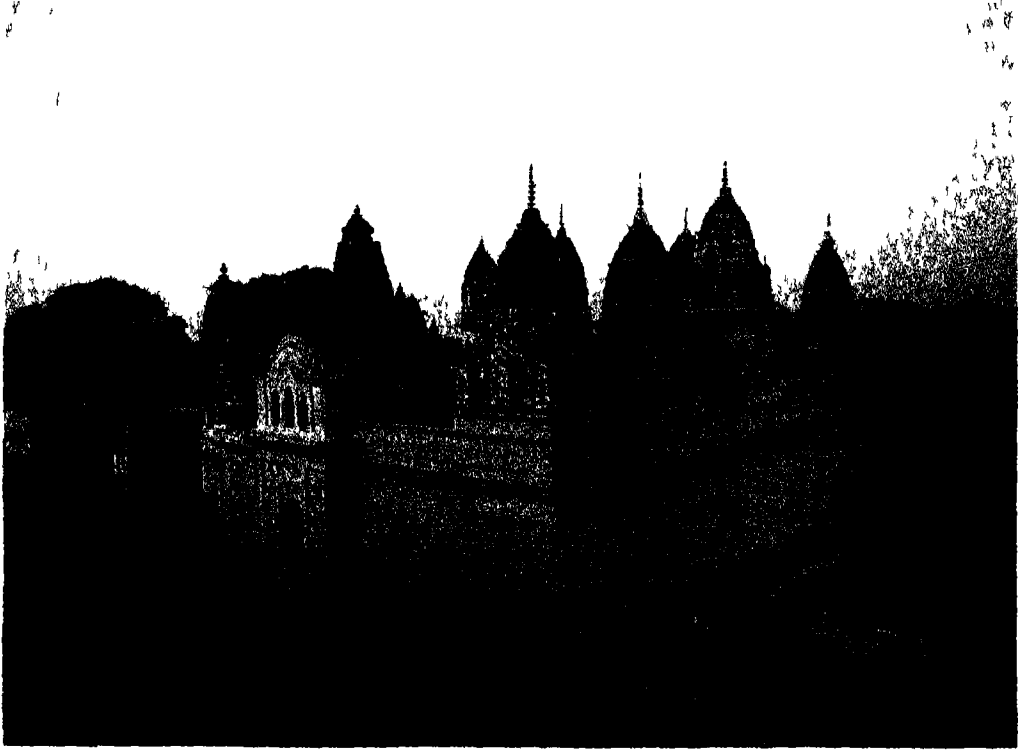
खजुराहो (मध्यप्रदेश) शिल्पकलायुक्त दिगम्बर जैन मंदिर
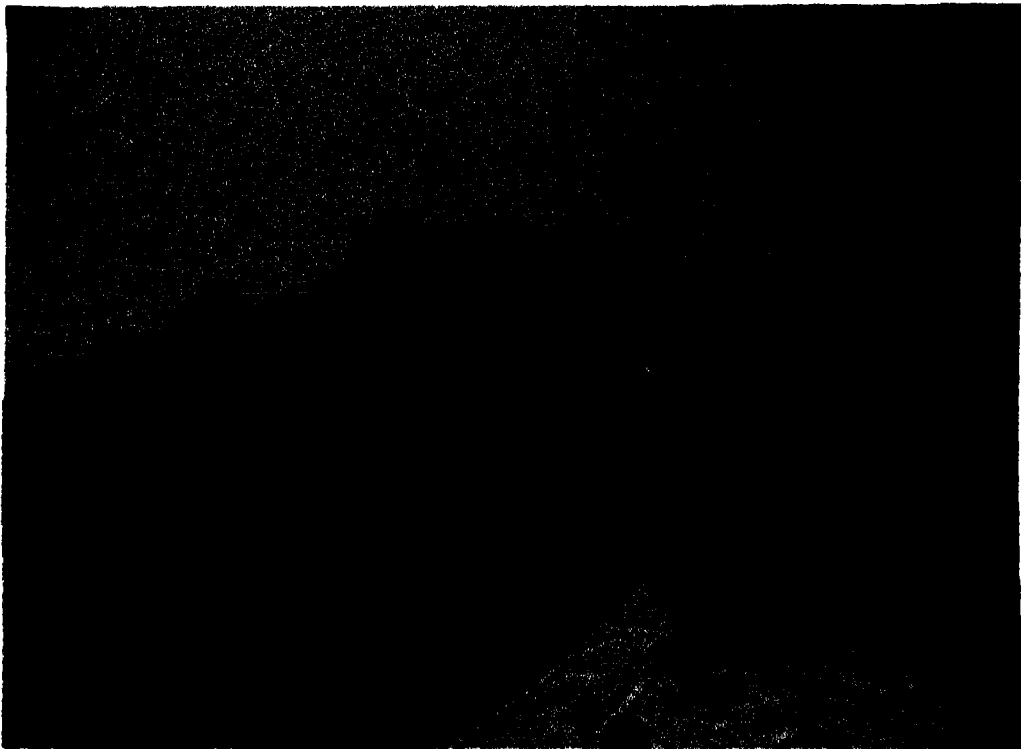
जबलपुर (मध्यप्रदेश) पिसनहारी की मढिया-दिगम्बर जैन मंदिर

पावाँजी (मध्य प्रदेश) मूलनायक भगवान पार्श्वनाथ

नैनागिरी (मध्य प्रदेश) सिद्धक्षेत्र
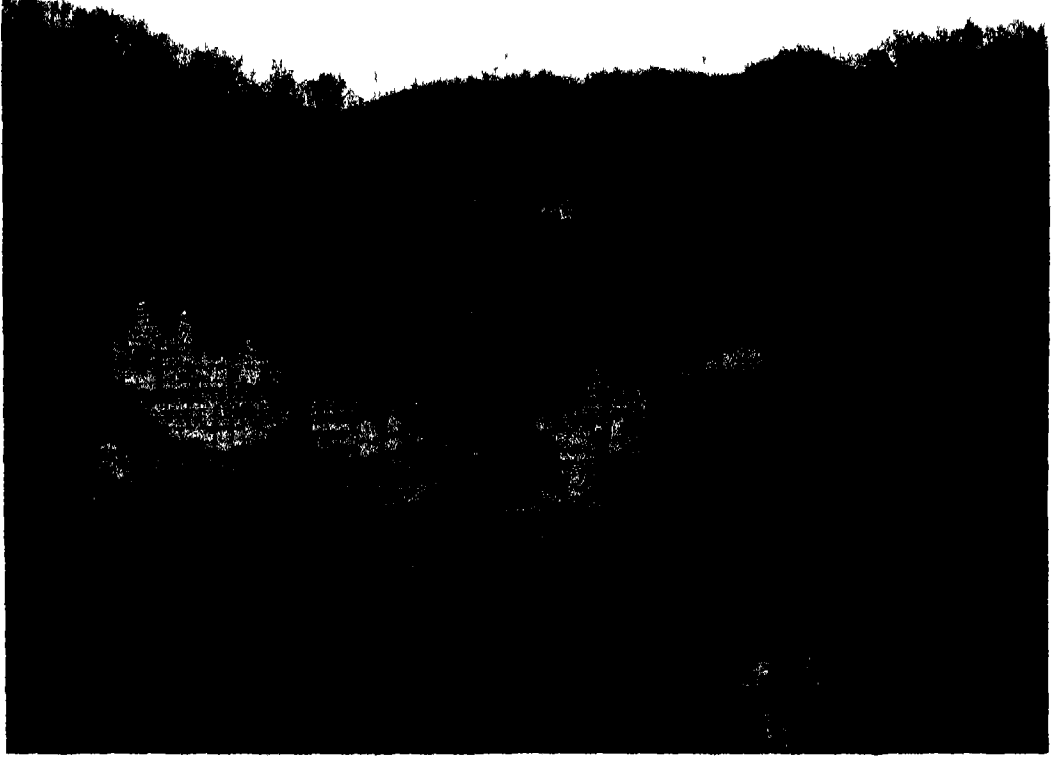
मुक्तागिरी (मध्य प्रदेश) सिद्धक्षेत्र

बावनगजा-बड़वानी (मध्य प्रदेश)
भगवान आदिनाथ की उत्तग विशाल मूर्ति
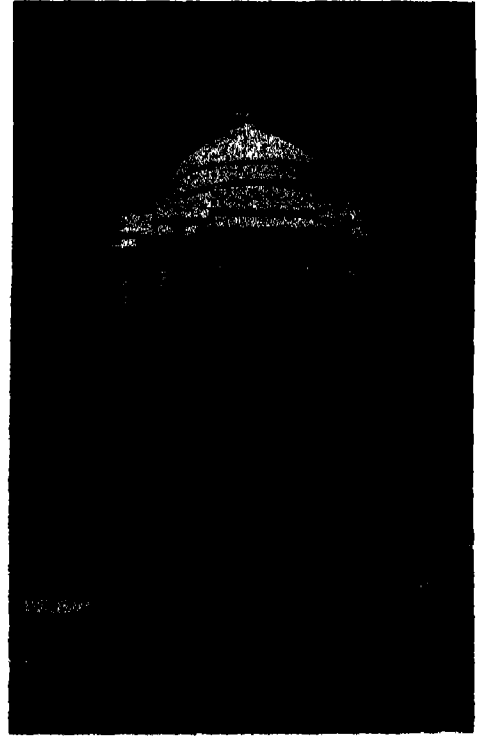
भिलोड़ा (गुजरात) मानस्तम्भ

सातिशय मूर्ति श्री पद्मावती

पावनभूमि गिरनार (गुजरात)
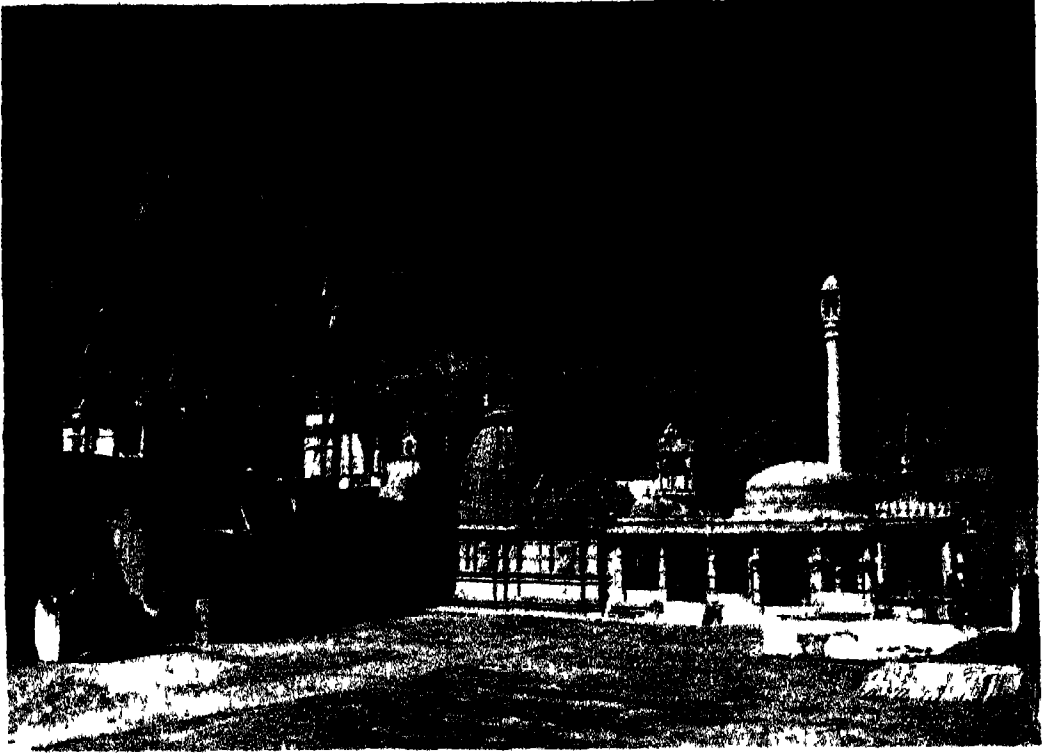
तारगा (गुजरात) तलहटी पर स्थित दिगम्बर जैन मदिर

ईडर (गुजरात) किलेपर स्थित दिगम्बर जैन मदिर
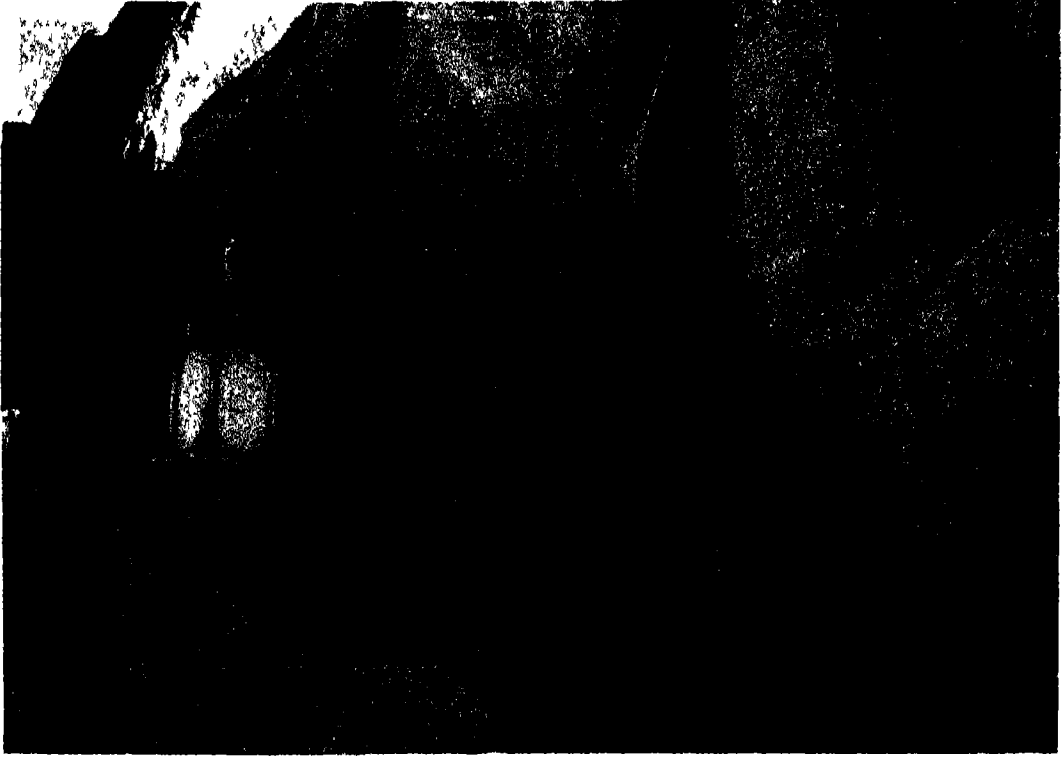
तारगा (गुजरात) सिद्धक्षेत्र

गिरनारजी (गुजरात) सिद्धक्षेत्र

पावागढ़ (गुजरात) सिद्धक्षेत्र
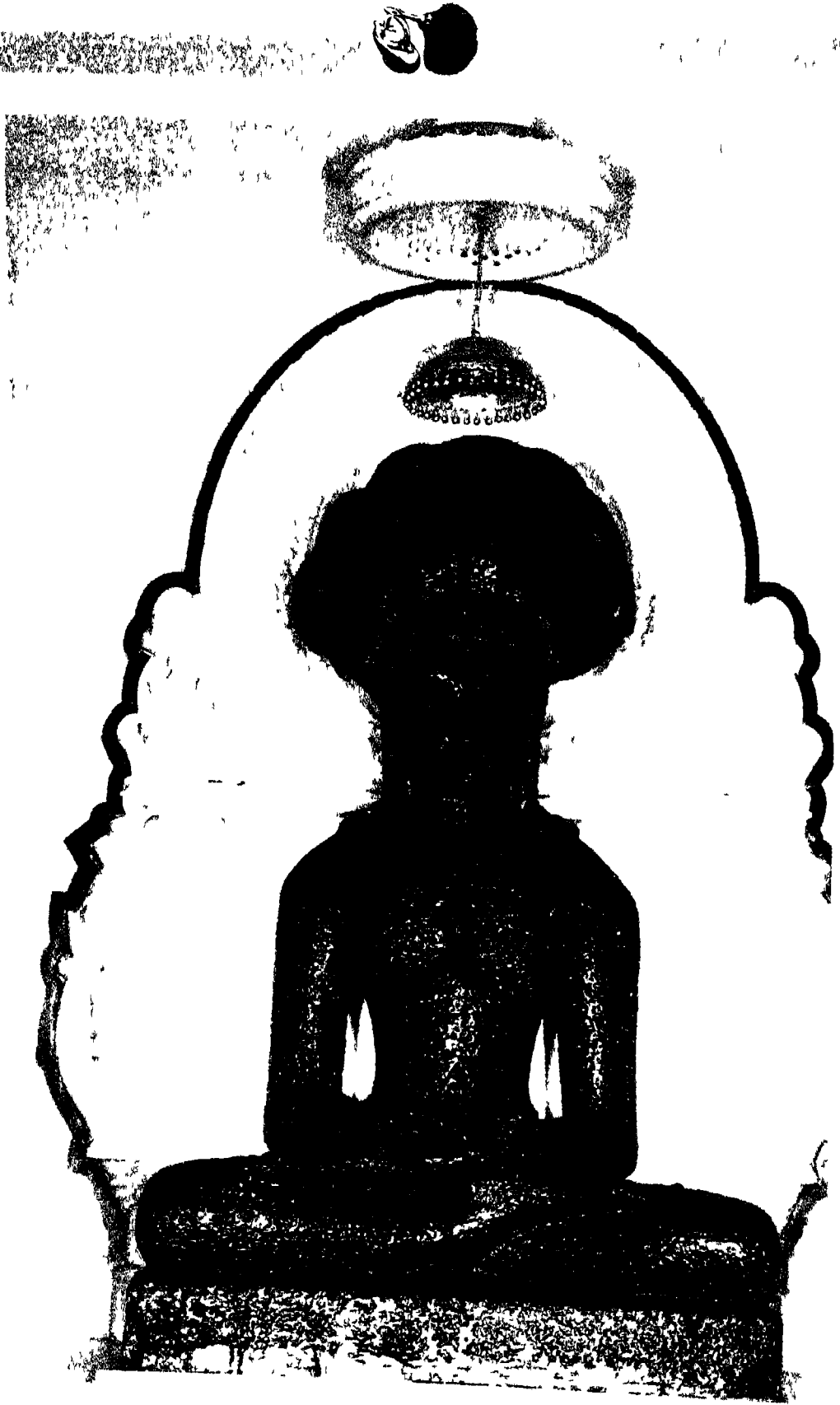
महुवा (गुजरात) विघ्नहर पार्श्वनाथ दिगम्बर सातिशय क्षेत्र
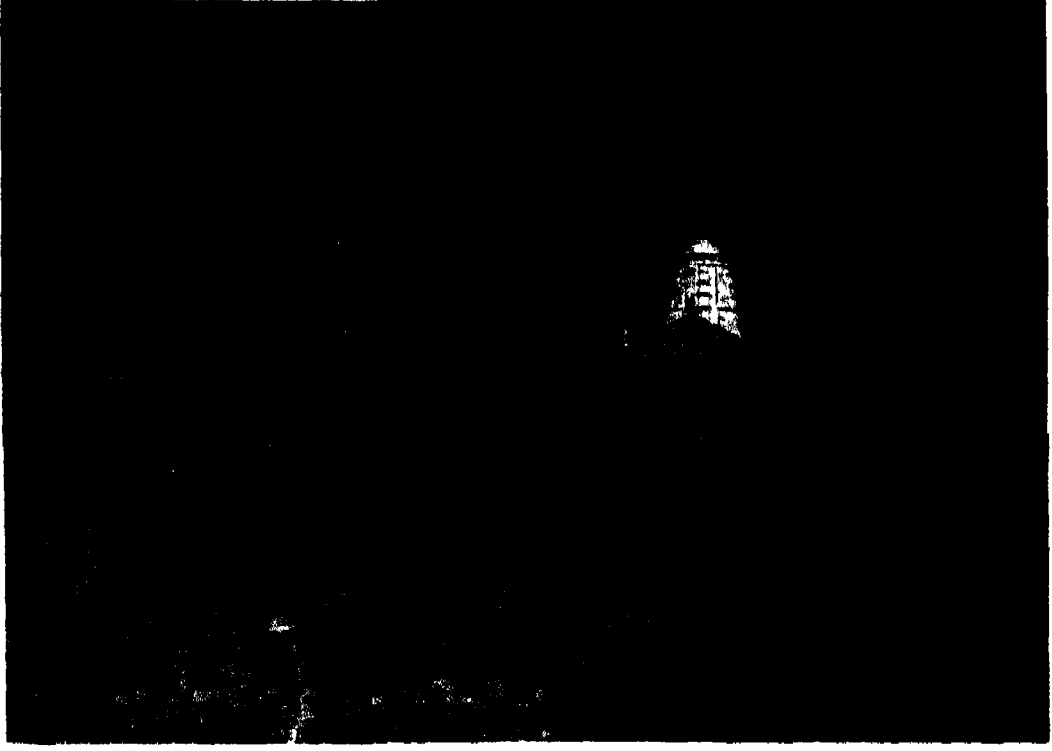
भिलोडा (गुजरात) शिल्पकलायुक्त दिगम्बर जैन मंदिर
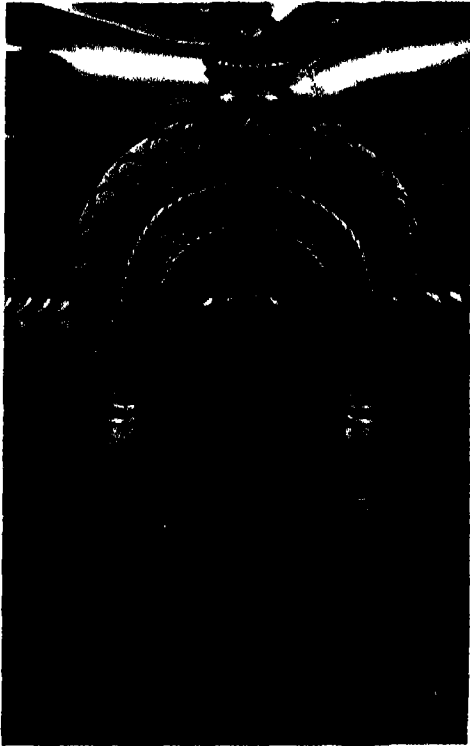
सोलापुर (महाराष्ट्र) माणिक मंदिर
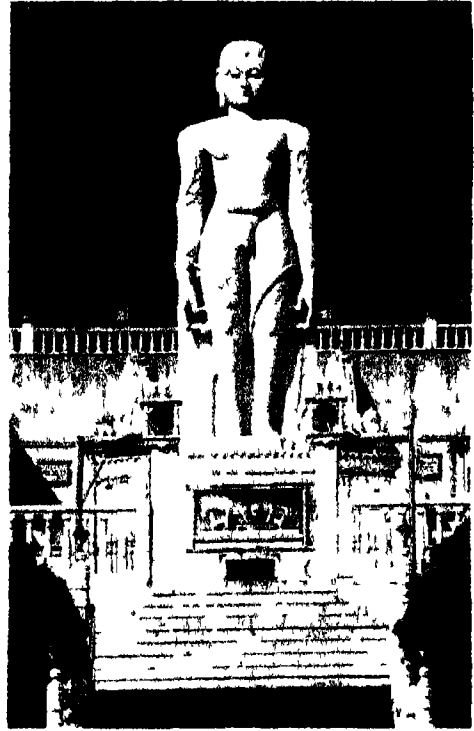
कुंभोज बाहुबली (महाराष्ट्र)
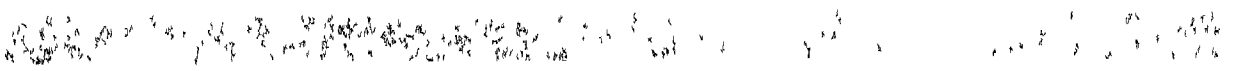
मांगीतुंगी (नासिक) (महाराष्ट्र)
तुंगी पर्वत, रामनिर्वाण स्थल

कारंजा (महाराष्ट्र) दिगम्बर जैन मंदिर में
शिसम की लकडी पर सूक्ष्म कला मंडप व हाथी
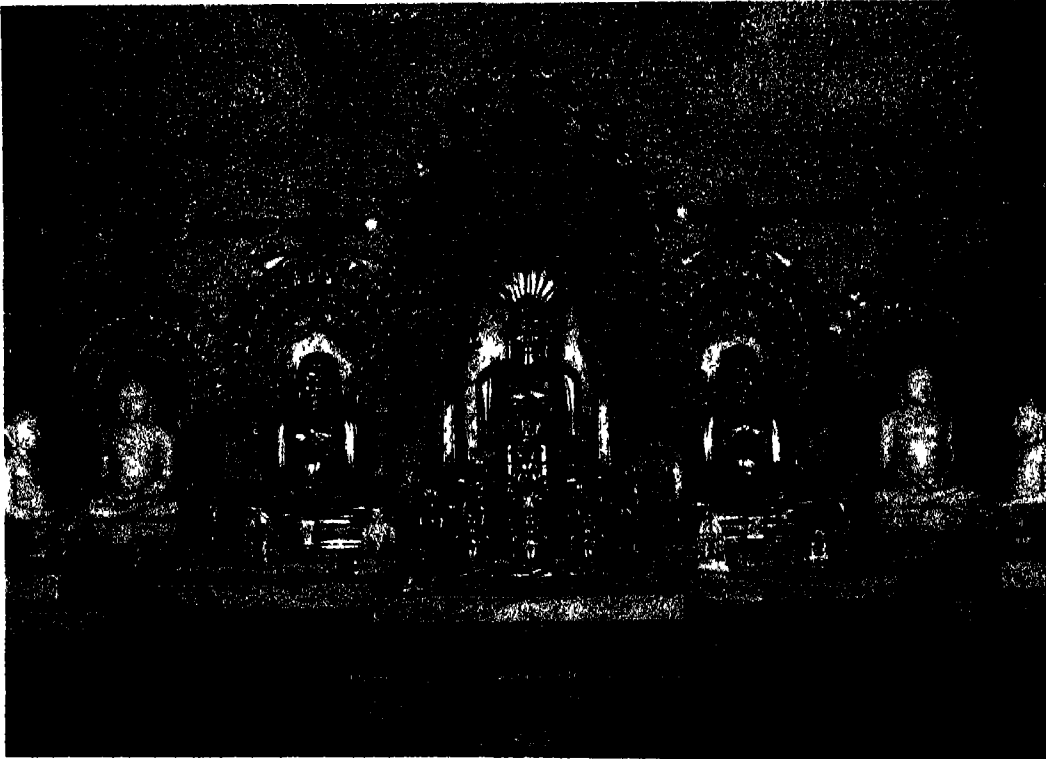
अक्कलकोट (महाराष्ट्र) श्री १००८ भगवान पार्श्वनाथ की सातिशय मूर्ति
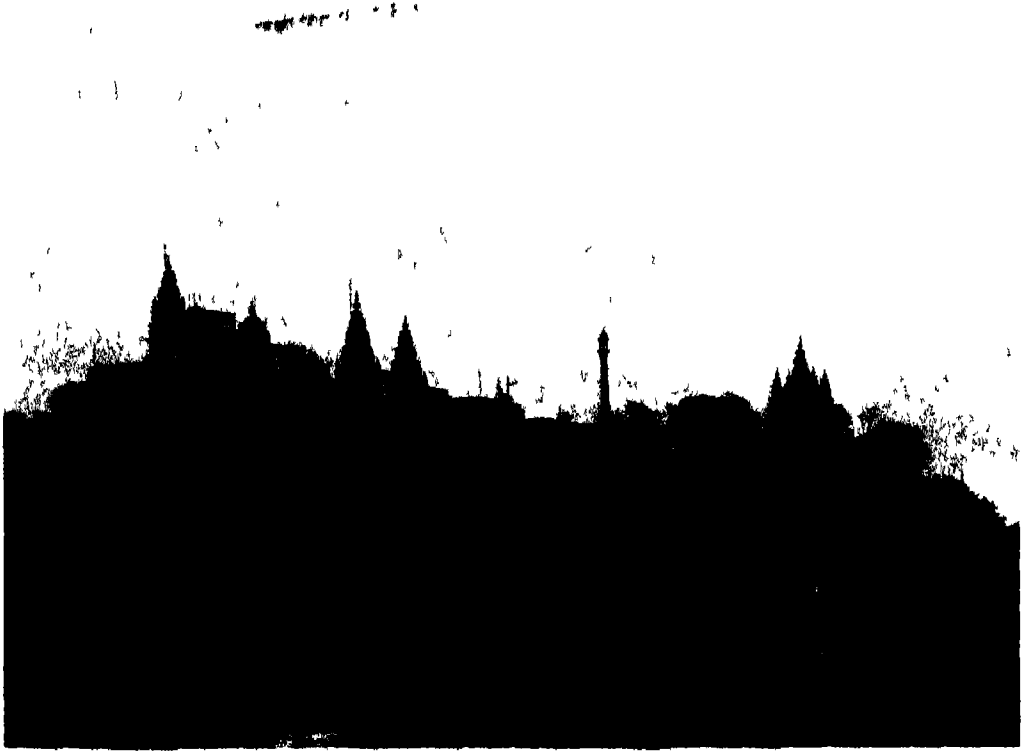
कुथलगिरी (उस्मानाबाद) (महाराष्ट्र) सिद्धक्षेत्र

शिरपुर (महाराष्ट्र) अतरिक्ष पार्श्वनाथ
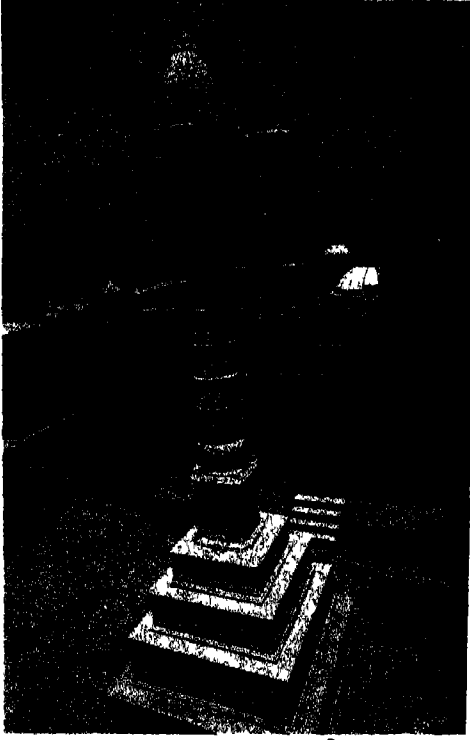
पैठण (महाराष्ट्र) अतिशय क्षेत्र
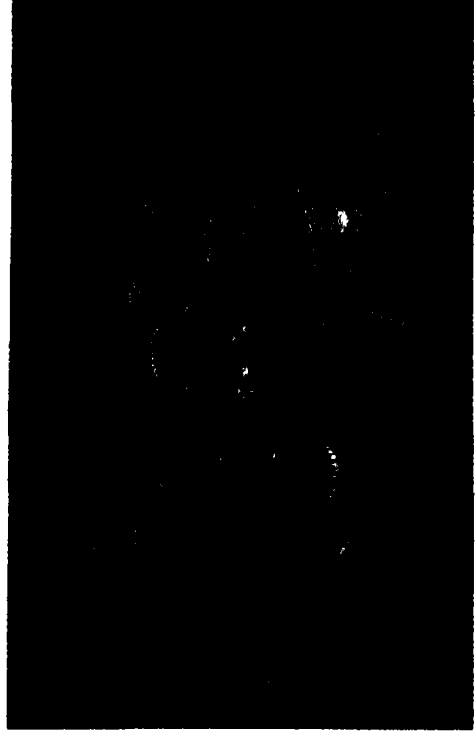
स्तवनिधि (कर्नाटक) नवखण्ड पार्श्वनाथ

मूडबद्रि (कर्नाटक) त्रिभुवनतिलकचूडामणि मन्दिर
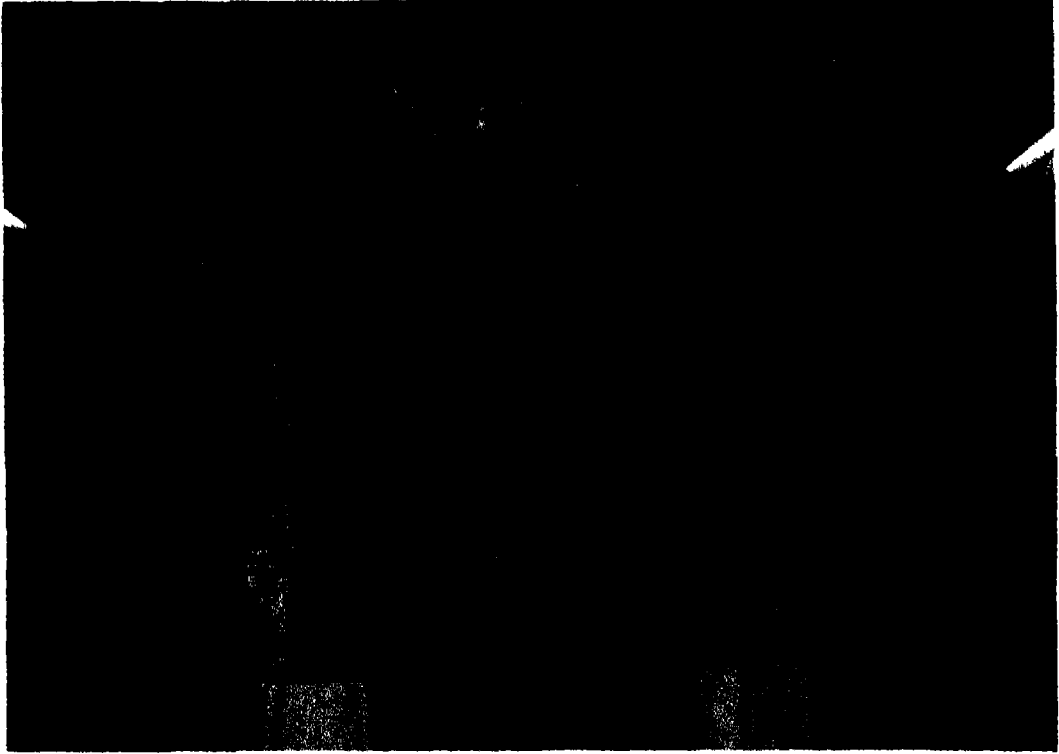
एलोरा (महाराष्ट्र) भगवान पार्श्वनाथ की विशाल प्रतिमा

नवागढ़ (महाराष्ट्र)
भगवान नेमिनाथ की सातिशय मूर्ति

नेमगिरी (महाराष्ट्र) चिन्तामणि पार्श्वनाथ अतरिक्ष

कचनेर (महाराष्ट्र) चिन्तामणि पार्श्वनाथ की सातिशय मूर्ति

गजपंथा (नासिक) (महाराष्ट्र) सिद्धक्षेत्र
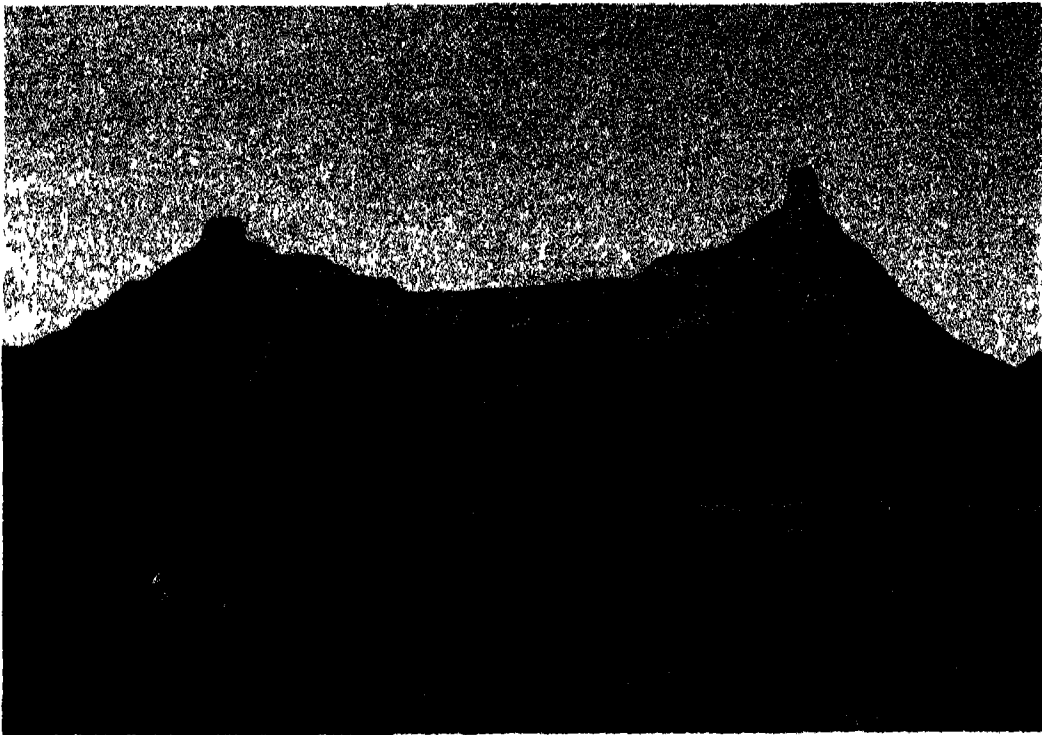
मांगीतुंगी (नासिक) (महाराष्ट्र) सिद्धक्षेत्र
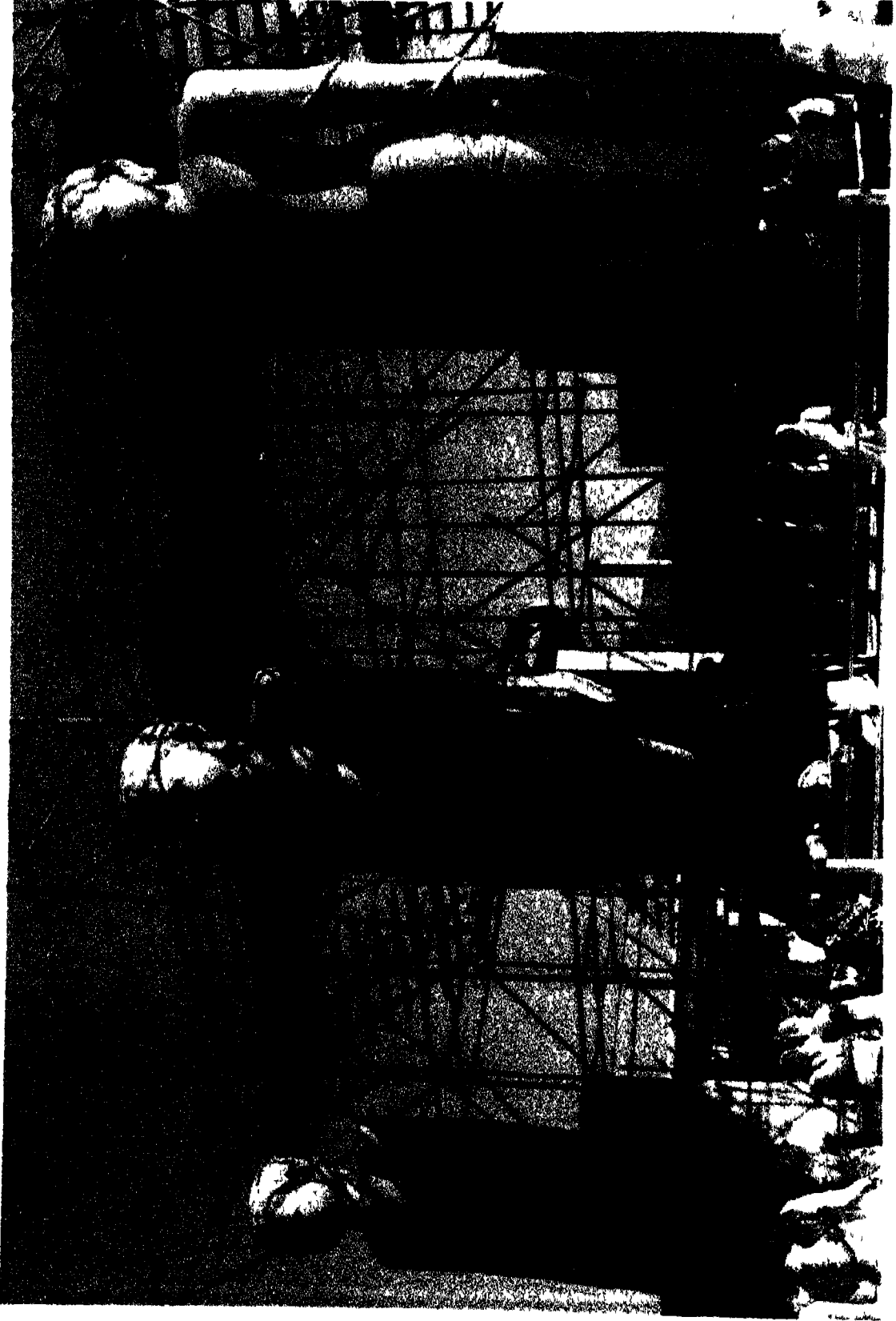
बम्बई त्रि-मूर्ति के चरणो मे आचार्यश्री सघ सहित

भोज (कर्नाटक) आचार्य शातीसागर स्मारक
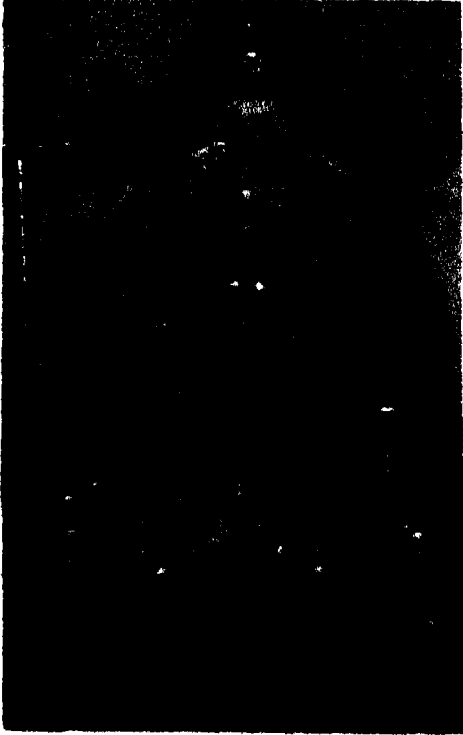
स्तवनिधी (कर्नाटक) क्षेत्रपालजी
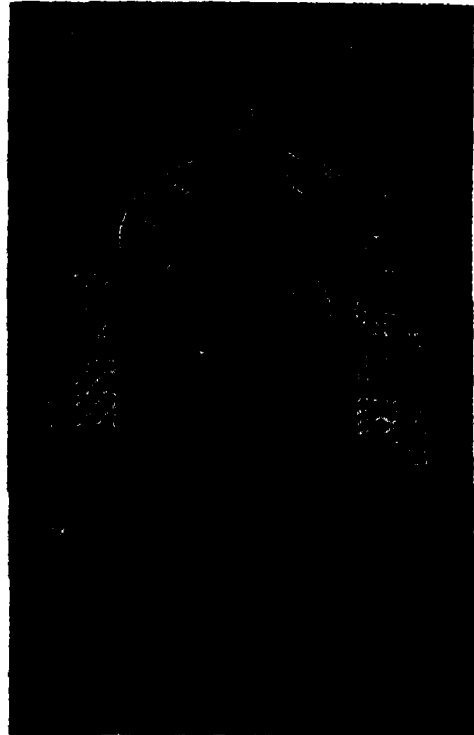
नरसिहराजपुर (कर्नाटक) ज्वालामालिनी देवी
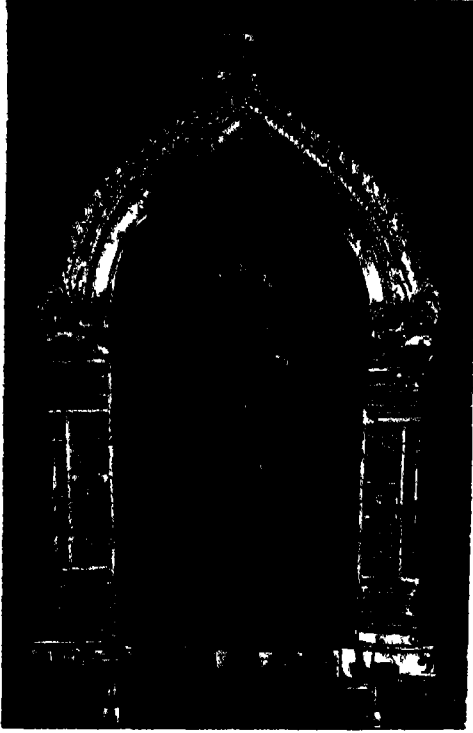
बाबानगर (कर्नाटक) श्री १०८ चितामणी पार्श्वनाथ
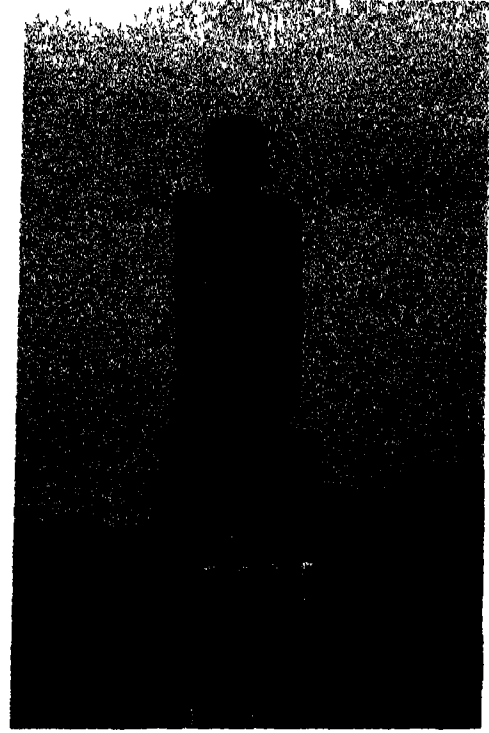
धर्मस्थल (कर्नाटक) भ बाहुबली की नूतन मूर्ति
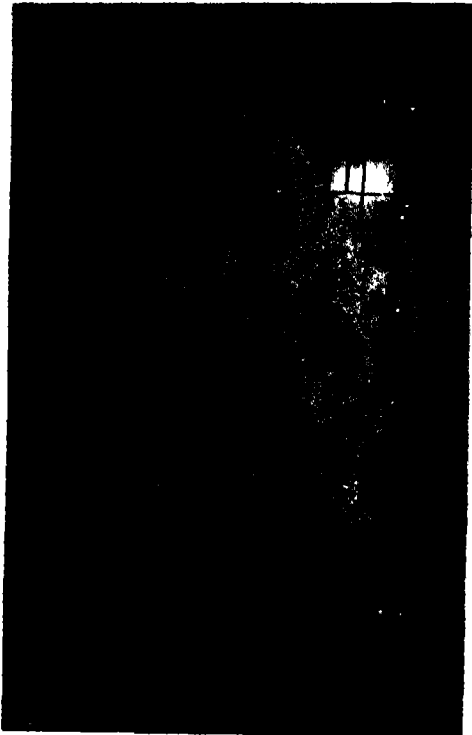
हुमचा (कर्नाटक) पद्मावती की प्रसिद्ध मूर्ति
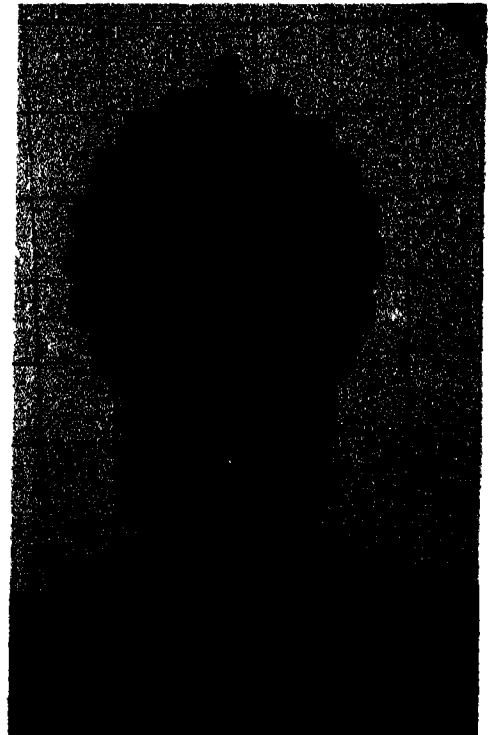
बीजापुर (कर्नाटक) सहस्त्रफणि पार्श्वनाथ
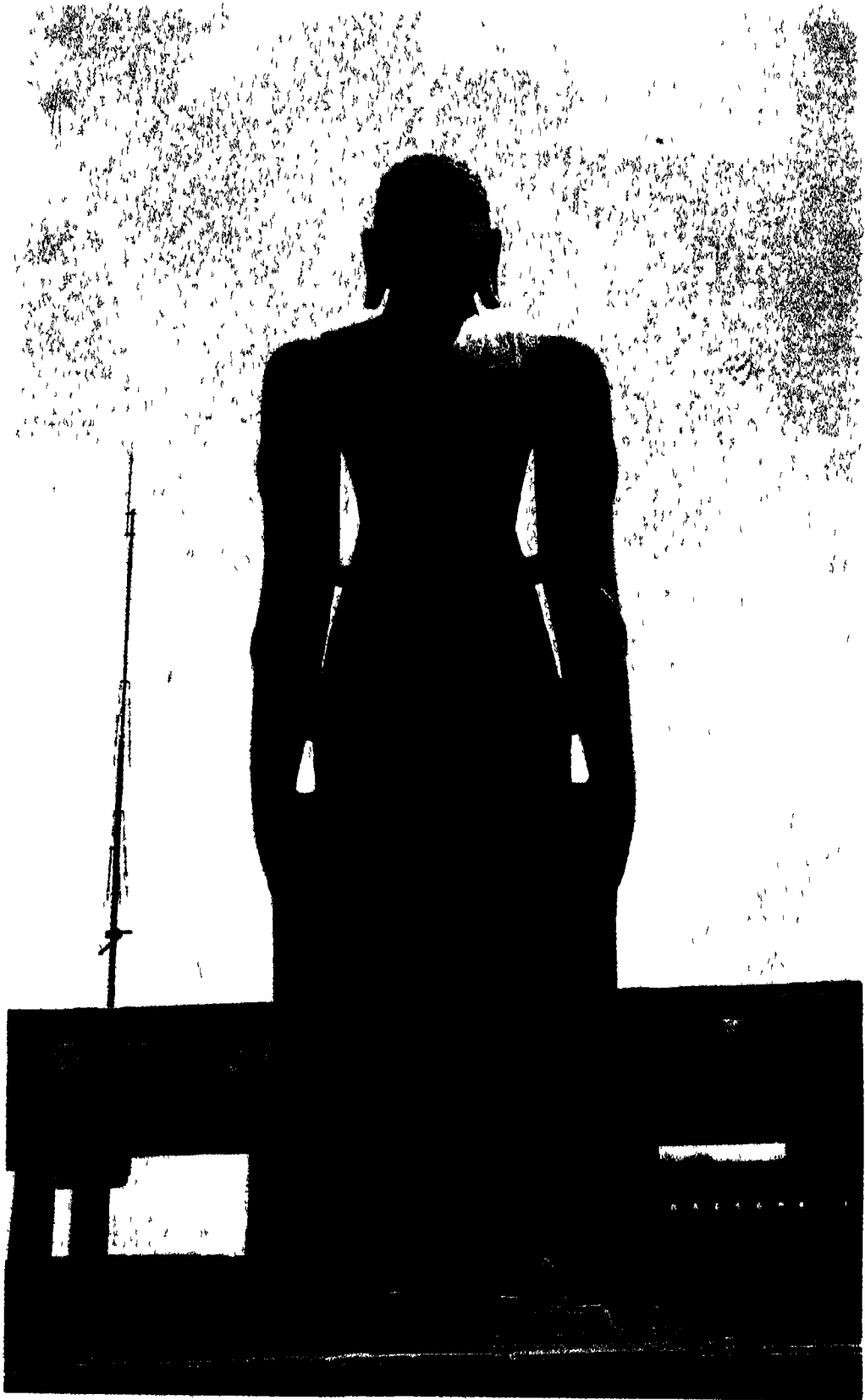
कारकल (कर्नाटक) भ बाहुबली की ४२ फुट उँची मूर्ति
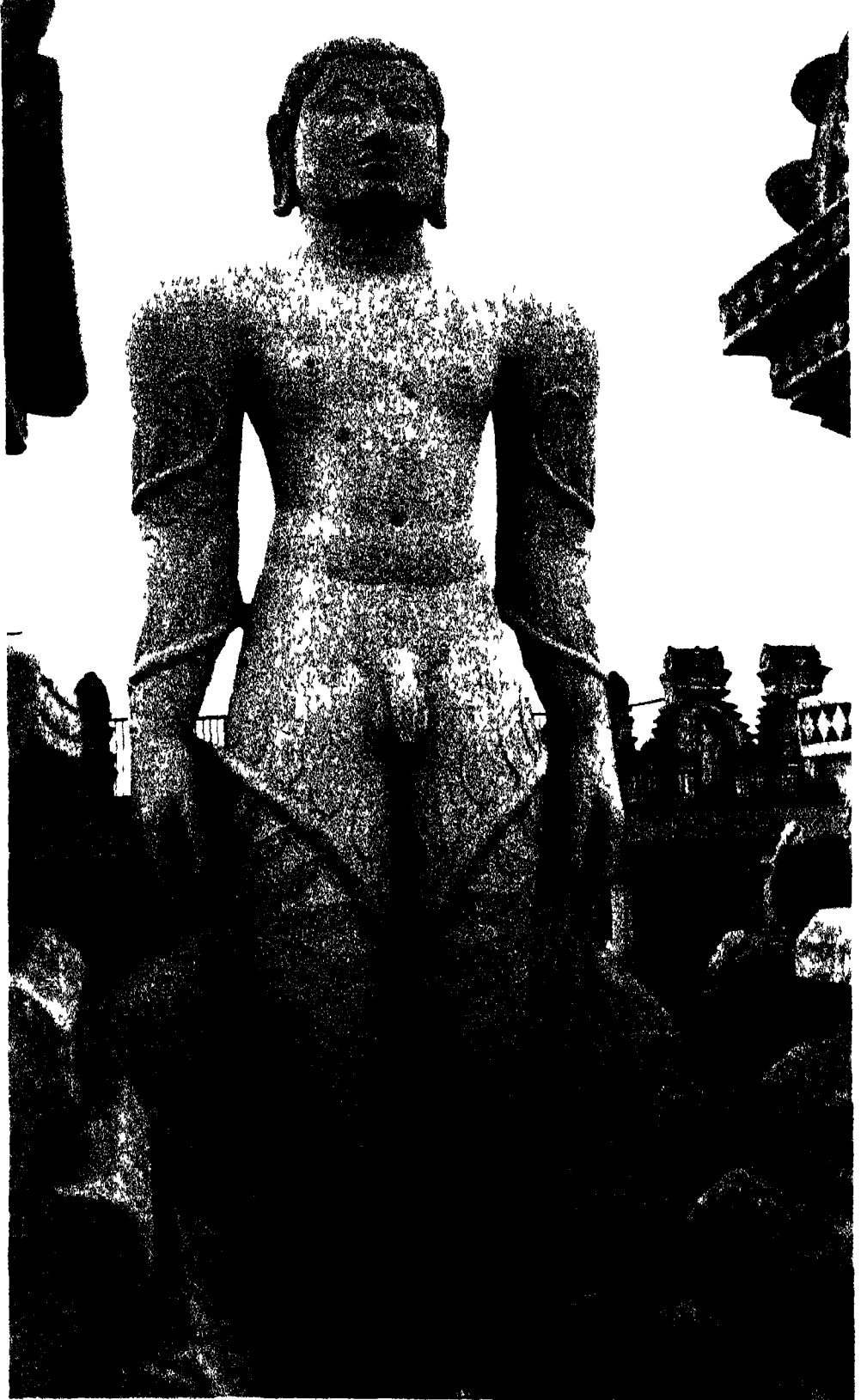
श्रवणबेगोला (कर्नाटक) विश्वप्रसिद्ध एक आश्चर्य भ गोम्मटेश्वर बाहुबली
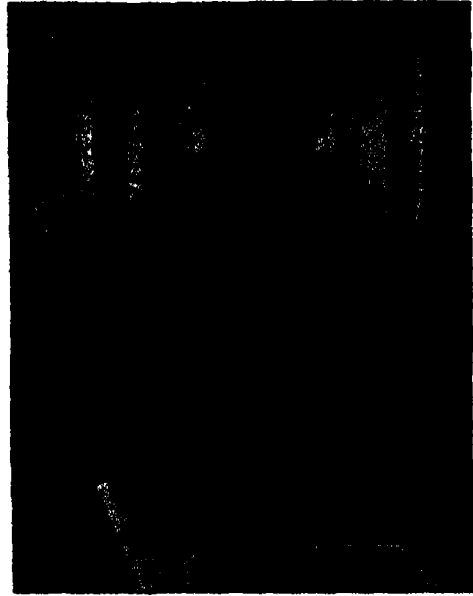
तड़कल (कर्नाटक) भ पार्श्वनाथ की सातिशय मूर्ति

वात्सल्य रत्नाकर जाप मे मग्न
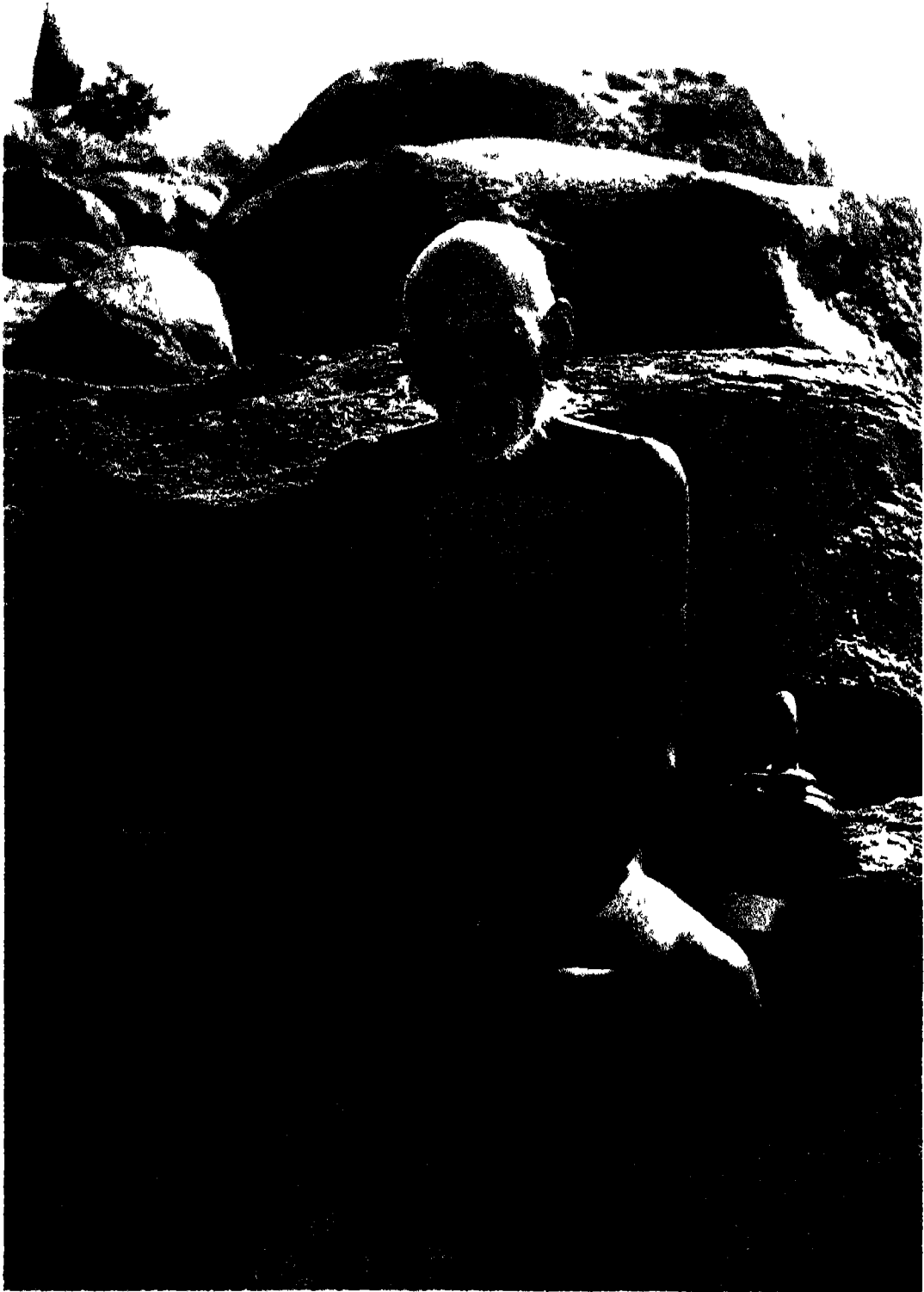
संघस्थ ब्र. अहमदाबाद गये। वहाँ से रात को डॉक्टर आया। ब्लड प्रेशर सिर्फ ६० था, बुखार १०६ डिग्री पर। सभी के नेत्र सजल थे। पर आचार्यश्री के चेहरे से वही मुस्कान बिखर रही थी। दूसरे दिन आहार के बाद विहार जरूरी था, क्योंकि अच्छा इलाका नही होने से वहाँ स्कूल में रहने की स्वीकृति नही मिल पाई। ऐसी स्थिति में भी प्रात बुखार कम होने पर आहार के पश्चात विहार का आदेश आचार्यश्री ने दे दिया। पाँच किलोमीटर जाकर संघ का विश्राम हुआ। पहुँचते ही पुन. आचार्यश्री को बुखार ने आ घेरा। वही १०६ डिग्री तापमान। सभी चिन्तातुर हुए। आचार्यश्री के मुख से मात्र सिध्दाय नम शब्द बार बार निकल रहा था। चेहरे पर तनिक भी मायूसी नजर नहीं आती थी। रात्रि मे बुखार कम होते ही वही अर्धरात्रि में उठकर जाप्य स्वाध्याय आदि का क्रम चालू हो जाता। बाईस दिनों तक आचार्य महाराज की स्थिति विचारणीय रही। पुण्योदय से अहमदाबाद पहुँचने पर स्थिति में कुछ सुधार आया।

अहमदाबाद में सघ बाईस दिन रुका। आचार्यश्री को पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त होने के बाद, यहीं आचार्यश्री का व उपाध्यायश्री का केशलोंच हुआ। यहाँ आचार्यसघ के पधारने से बहुत धर्म-प्रभावना हुई। यहाँ का शिक्षण-शिविर भी बहुत सफल रहा। प्रात , मध्याह्न व रात्रि में शिक्षण तथा त्यागियों के उपदेश हुए। निमित्त-उपादान , व्यवहार-निश्चय, जीवादि सप्त तत्त्व आदि सैद्धान्तिक विषयों पर उपाध्यायश्री व अन्य त्यागियों के विशेष प्रवचन हुए। आचार्यश्री के आशिर्वचनों से पाँच मिनट के प्रवचन में ही जीवों को अमूल्य रत्नों की उपलब्धि हो रही थी। आचार्यश्री के अमूल्य वचनों के प्रभाव से अनेक एकान्तवादियों ने अपनी हठ छोडकर सच्चे अनेकान्तवाद की शरण ली। संघ के पदार्पण से नगर में अच्छी धर्म-प्रभावना हुई। नगरस्थ सभी जिनालयों के दर्शन कर संघ ने विहार किया।

आचार्यसघ विहार करता हुआ परमपूज्य गुरुदेव के दीक्षागुरु आचार्यश्री १०८ समाधिसम्राट महावीरकीर्ति महाराज के समाधिस्थल म्हसाना पहुँच गया। आचार्यश्री के चरणों में मस्तक टेकते ही गुरुदेव के नेत्रों से आनन्दाश्रु छलक पड़े थे। गुरु-चरणों की वन्दना का यह दृश्य भी अनोखा था। यहाँ से संघ तीर्थराज तारगा आ पहुँचा।

तारंगा

तारगा सिध्दक्षेत्र है। यहाँ से वराग आदि ऋषिराज मुक्त हुए है। हमने एक दिन गुरुदेव से पूछा- ''तीर्थ के कितने भेद है? क्या सभी तीर्थो की महत्ता समान है?''

आचार्यश्री ने कहा- ''तीर्थ के तीन भेद किये जा सकते है-(१) सिध्दक्षेत्र, (२) अतिशयक्षेत्र, (३) तीर्थक्षेत्र।''

जहाँ से किसी भव्यात्माने मुक्ति प्राप्त की, वह सिध्दक्षेत्र कहलाता है। जैसे- शिखरजी, गिरनारजी, तारंगाजी आदि। जिस स्थान पर कोई अतिशयकारी घटना घटी हो वह क्षेत्र अतिशय क्षेत्र कहलाता है, जैसे- महावीरजी, पद्मपुरी, कचनेर आदि। जहाँ भगवान के जन्मादि चार कल्याणकों में से कोई एक भी कल्याणक हुआ है वह तीर्थ क्षेत्र समझो, जैसे- कम्पिला, अयोध्या, सौरपुरी, चन्द्रपुरी, सिंहपुरी आदि।''

हमने पूछा- ''महाराजजी? सिध्दक्षेत्र शिखरजी, गिरनारजी की वन्दना बहुत कठिन है। आपने कौन-सा मंत्र जपते हुए गिरनारजी की वन्दना की कि पैर में असह्य पीड़ा होने पर भी आसानी से चढ़ गये थे।''

आचार्यश्री ने बताया- "हमारे गुरु महाराज ने हमे मंत्र दिया था, उसे पढ़कर हम जाते थे और आज भी जाते है।"

"वह मंत्र कौन सा है?"

आचार्य महाराज ने कहा- "ॐ ह्रीं श्री अनंतानंत-परमसिध्देभ्यो नम।" आचार्यश्री ने यह भी बताया कि प्रत्येक भव्यात्मा को तीर्थवन्दना को जाते हुए इस मंत्र का जाप करना चाहिये। इससे यात्रा में कभी भी विघ्न उपस्थित नही हो पाते हैं।

तारंगा पर्वतराज की वन्दना कर संघ माऊण्टआबू (देलवाड़ा) अतिशय क्षेत्र के दर्शन करता हुआ उदयपुर पधारा। उदयपुर में विदुषी आर्यिकारत्न विशुध्दमती माताजी ने आचार्यश्री के दर्शन करके सिध्द-श्रुत आचार्यभक्ति पुरस्सर वन्दना कर गवासन से नमोस्तु किया। उपाध्यायश्री व सर्व साधुवृन्द को नमोस्तु किया। आर्यिका वृन्द ने पूज्य माताजी को वन्दामि किया। परस्पर समाचार-विधी सम्पन्न हुई। यहाँ भगवान महावीर की जन्म-जयन्ती का पर्व आचार्यश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

आचार्यश्री ने अपने उपदेश में बताया- भगवान महावीर के बताये मार्ग पर चलना ही उनके प्रति सच्ची भक्ति है। मात्र नारे लगाने और जय-जयकार करने से कार्य नही बनने वाला है। देश-कुल-जाति की शुध्दता रखो। उत्तम जाति कुल में उत्तम संतान उत्पन्न होती है। जैनधर्म वीरों का धर्म है, कायरों का नही। अपनी-अपनी जातियों की रक्षा करो। जैसै गधे और घोड़े से उत्पन्न सतान न गधा है न घोड़ा, वह तो खच्चर है, वैसे ही सकर दोष से उत्पन्न सतान की स्थिति है।

उपाध्याय महाराज ने भगवान का जीवन वृत्तान्त बताते हुए कहा- 'महावीर की अहिंसा प्राणी मात्र के कल्याण की भावना में निहित है। भ महावीर ने कहा था- 'त्यागात् शान्ति ' शान्ति त्याग से मिलेगी। पर को मारना ही हिंसा नहीं है अपितु परिणामों की मलिनता, राग-द्वेष करना भी हिंसा है। इनसे बचने वाला वीतरागी बनता है।

उदयपुर में सर्व सघ ने सभी मन्दिरों के दर्शन किये। सघ यहाँ ७ दिन रुका। पश्चात् आचार्यश्री ने अलिदा पार्श्वनाथ के अतिशयकारी दर्शन किये। यहाँ पर आचार्यसघ के दर्शनों के लिए चारों ओर से भीड़ उमड़-उमड़ कर आ रही थी, पैर रखने को स्थान नही था।

आचार्य महाराज के उपदेशामृत सुनने के लिए जनता लालायित थी। माईक की व्यवस्था थी पर लाईट चली गई। अतः आचार्यश्री के सामने से माईक ही हटा लिया गया।

उपाध्यायजी ने व्यवस्थापको से कहा- आचार्यश्री के पास माईक रख दीजिये, समय पर लाईट आ जायेगी। माईक आचार्यश्री के सामने रखा गया। व्यवस्थापक लाईट के लिए परेशान थे, चारों और शोरगुल हो रहा था, सबको चुप करके व्यवस्थापक थक गये, तो आचार्य महाराज ने कीर्तन के बोल शुरू कर दिये--

पार्श्वनाथ के चरण कमल में अलि सम लटके कली-कली।
अश्वसेन नृप वामा माता, हरष बनारस गली-गली।।

आचार्यश्री की भक्ति की मधुर ध्वनि निकलते ही माईक चालू हो गया। आचार्यश्री स्वय अतिशयकारी बाबा

है और अलिंदा पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्रभी। सारी जनता के मुख से जय-जयकार ध्वनि निकल पड़ी।

यहाँ भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति में हीरे जड़े हुए हैं। अतिशयकारी प्राचीन जिन प्रतिमा के दर्शन से जीवन में अतिशय आता है, कर्मों की निर्जरा होती है।

यहाँ से आचार्यश्री पलोदा पञ्चकल्याणक में पधारे। पञ्चकल्याणक का सारा कार्य आपके सान्निध्य में हुआ। आचार्य महाराज ने विधिवत् अगन्यास करके मूर्तियो में सूर्यमंत्र दिया।

प्रतिष्ठा में बागड़ प्रान्त के मंत्री श्री हरदेव जोशी पधारे थे। जोशी जी ने आचार्यश्री के चरणों में श्रीफल चढ़ाया व आशीर्वाद प्राप्त किया। जोशी जी ने अपने वक्तव्य में कहा- भारत के सच्चे साधु दिगम्बर मुद्राधारी वीतरागी सत ही है। ये हमारे देश की निधी है। हमें गर्व है कि सच्चे अध्यात्म प्रेमी सतराज हमारे देश में हैं। भगवान महावीर स्वय दिगम्बर, पूर्ण वीतरागी थे। दिगम्बर आम्नाय ही महावीर की सच्ची परपरा है, वीतरागी दिगम्बर सतों से अकिञ्चनवृत्ति का पाठ भारतीय जनता को सिखना चाहिए, तभी देश खुशहाल बन सकेगा।

आचार्यश्री के सान्निध्य में मानस्तभ प्रतिष्ठा व भरत बाहुबली भगवान की प्रतिष्ठा निर्विघ्न सपन्न हुई। सघ ने आगे चल कर नागफणी पार्श्वनाथ के दर्शन किये। केशरिया जी (आदिनाथ) के दर्शन कर सघ देवपुरा में पञ्चकल्याणक के लिए पहुँचा।

पञ्चकल्याणक

देवपुरा पञ्चकल्याणक में पूज्य दयासागरजी, अभिनन्दनसागरजी आदि सघ सहित पधारे थे। ज्ञान कल्याणक के दिन समवसरण सभा का दृश्य, प्रश्नोत्तर शैली से विशेष आकर्षण का केन्द्र बन गया था। आचार्यश्री ने ब्रह्मचारी जी को ऐलक दीक्षा दी, जिनका नामकरण निरञ्जनसागर हुआ। यही पर श्रुतपचमी पर्व पर आचार्यश्री ने आगतुक लोहारिया समाज के आग्रह को स्वीकार कर लोहारिया में चातुर्मास की स्वीकृति प्रदान की।

लोहारिया

भारतीय सस्कृति का सजीव चित्रण यहाँ आज भी देखने को मिलता है। ऐसी पावन नगरी लोहारिया है। सुबह-सुबह महिलाएँ कुएँ पर जाकर घड़े-के-घड़े सिर पर धरकर ले जाती हुई, गीत गाती हुई मस्ती में चलती हुई नजर आती है। भोर होते ही घरों में घट्टियों (हाथ चक्की) के चलने की आवाज सुनाई देती है। कही प्रभाती गान चलता रहा है, बच्चे गाय-भैसों को चराने निकल पड़ते हैं। कही माताएँ दूध निकाल रही है, कही पुरुष मोट खीच रहे है। सच्ची मेहनत की कमाई मनुष्य खाता है। जहाँ न हॉटल है, न कोई सिनेमा। वहाँ रहते है प्रकृति की गोद में रहने वाले मानव , खेती ही जिनका व्यापार है।

सुना जाता है, प्राचीन समय में लोहे की खानें आदि होने से इस गाँव का नाम लोहारिया पड़ गया था। आज वह संतों, त्यागी-तपस्वियों को जन्म देने वाली भूमि बन गई है। यह वह भूमि है जिसने श्रमण सस्कृति के प्रभावक संतश्री उपाध्याय महाराज को आचार्य महाराज के चरण-कमलों में समर्पित किया है।

दिनाक २०-६-१९८५ को आचार्यश्री लोहारिया पधारे। वहाँ उपाध्यायश्री अजितसागरजी म (वर्तमान में आचार्यश्री अजितसागरजी म.) पहले से विशाल संघ सहित विराजमान थे। दोनो सघो का वात्सल्यमयी अपूर्व मिलाप हुआ। छोटे से गाँव में सवा सौ घर की बस्ती में ७५ त्यागियों का एक साथ निवास करीब १५ दिन तक रहा। मेला जैसा दृश्य बना हुआ था।

आ. अजितसागरजी

अजितसागरजी महाराज अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी सन्त है। आपकी नि स्पृह व नि श्छल वृत्ति इस कलियुग में भी प्रशसनीय, विशेष आदरणीय व आचरणीय है। उनके जैसा सस्कृत का ज्ञाता साधु वर्तमान में दुर्लभ है। आचार्यवाणी पर आपको अगाध श्रध्दा है। जैसे आचार्य महाराज पधारे, उपाध्याय अजितसागरजी बहुत दूर तक उन्हें लेने के लिए गये। दोनों संघ वात्सल्य की एक कड़ी में जुड़ गये। अजितसागरजी महाराज ने कहा- "आज मै हल्का हो गया।"

आचार्यश्री ने कहा- "कैसे?"

उपाध्यायजी ने कहा- "जब तक आपके सान्निध्य में रहूँगा, सघ का सारा भार आप पर है।"

दोनो सघ के त्यागी वृन्द एक साथ प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, स्वाध्याय, आहारचर्या आदि क्रियाएँ आचार्यश्री के सान्निध्य में करते थे।

दिनाक १-७-१९८५ को लगभग ४० पिच्छिधारी त्यागियों ने आचार्यश्री के सान्निध्य में वर्षायोग स्थापन किया।

चातुर्मास

लोहारिया जिनालय में पार्श्वनाथ भगवान की प्राचीन एव भव्य प्रतिमा विराजमान है। जिनालय के दर्शन करते ही आचार्य महाराज के मुख से शब्द निकले- यहाँ मानस्तम्भ होना चाहिए। सघस्थ ब्रह्मचारिणी चित्राबाईजी ने मानस्तभ बनवाने की स्वीकृति समाज के बीच आचार्य महाराज को दी। श्रावण शुक्ला ग्यारस को चित्राबाई ने आचार्यश्री के सान्निध्य में मानस्तंभ का शिलान्यास किया।

आचार्य ने जिस समय से मुनिव्रत धारण किया है, चातुर्मास में अन्न का त्याग कर एक आहार एक उपवास करते हैं। विजयादशमी के दिन किसी भव्यात्मा को सप्तम प्रतिमा व्रत देकर आप अन्न व्रत लेते है। यहाँ भी रतनलालजी ने सप्तम प्रतिमा ली और विजयादशमी को अन्नाहार देकर पारणा कराया। यहाँ आपसे लेकर ऐलक निरञ्जनसागर जी मुनि बने, क्षु अनगसागर मुनि अमरसागरजी बने तथा ग्रामवासी ब्र देवीलालजी, ब्र तुलसीबाई, ब्र शकरलालजी व ब्र भूरीबाई व सघस्थ ब्र मुन्नीबाई को क्षुल्लक-क्षुल्लिका के व्रत आचार्यश्री ने दिये। इनके नाम क्रमश -क्षु देवसागरजी, क्षु धवलमतीजी, क्षु स्याद्वादसागरजी, क्षु भरतमती, व मनोवती रखे गये। आचार्यश्री के उपदेशानुसार दो छत्रियों व नौ चौकी में खड्गासन जिन प्रतिमाएँ- पार्श्वनाथजी, शान्तिनाथजी व वासुपूज्य जी की विराजमान की गई जिनके लघु पञ्चकल्याणक आपके ही सान्निध्य में हुए।

वात्सल्यमूर्ति

आचार्यश्री की ७० वी जन्म-जयती पर लोहारिया व बागड़ प्रान्त की समाज ने आपको वात्सल्यमूर्ति पदवी से अलंकृत किया। इस अवसर पर पधारे श्री हरदेव जोशी जी ने आचार्यश्री को नमन कर, दिगम्बरत्व की महिमा बताते हुए अहिंसा की विशालता पर प्रकाश ,डाला।

यहाँ आचार्यश्री धर्मसागर दि जैन पाठशाला का शुभारम्भ आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ। इस पाठशाला में अब बाल, युवा, प्रौढ़, वृध्द सभी धार्मिक अध्ययन और स्वाध्याय करते है।

दिनाक २०-१२-८५ को आचार्यश्री धरियावाद की समाज के अति आग्रह करने पर वहाँ पहुँचे। जिन प्रतिमाको आदिनाथ कहो या महावीर या पद्मप्रभ, सत्यता तो यह है कि उनकी वीतरागता में कोई बाधा नही आती है परन्तु भक्ति में अविवेक दुख का कारण बन जाता है। यद्यपि आचार्यश्री विवाद में पड़ना नहीं चाहते थे पर धर्मसकट समझकर वहाँ पधारे थे।

प्रमुख व्यक्तियों ने कहा- ''महाराज जी तीसरा निर्विवाद रास्ता दीजिये।'' आचार्यश्री ने निष्पक्ष हो सर्वसम्मति से उस विवादास्पद स्थिति में निर्णय देते हुए सीमन्धर भगवान की मूर्ति घोषित की, तथा धरियावाद को सीमन्धर स्वामी अतिशय क्षेत्र नगरी नाम से घोषित किया जिसकी हर्षोल्लसित वातावरण में ताली बजाकर जनता ने तत्काल स्वीकृति प्रदान की।

किसी ने पूछा- ''आचार्यश्री वह झगड़ा तो आज भी चल रहा है।'' आचार्यश्री ने कहा- ''मूर्ति जिस स्थान पर विराजमान है वह स्थान तिरछा होने से अशुभ है। समाज में झगड़ा उत्पन्न करेगा। उस मनोज्ञ प्रतिमा को विशाल खुले मैदान में जब तक नही विराजमान किया जावेगा तब तक गाँव की स्थिति यही रहेगी।''

अविवेकी लोग घर के झगड़े मदिर में लाकर भगवान को दोष देते है, भगवान को लेकर, उनके नाम को लेकर झगड़ना ठीक नही है।

यहाँ से विहार निर्विघ्न हुआ। सघ शातिनाथ अतिशय क्षेत्र आ पहुँचा।

शान्तिनाथ

शान्तिनाथ क्षेत्र पर भगवान शान्तिनाथ की पद्मासन मनोज्ञ प्रतिमाजी विराजमान है। पर प्रतिमा नेत्र विहिन होने से गाँव उजड़ चुका है। विराजमान करने वाले संकट में आ पहुँचे है। आचार्यश्री के आदेश से मूर्ति में नेत्र उकेरे गये। आचार्यश्री ने अगन्यास कर पुन सूर्यमत्र देकर मूर्ति को प्रतिष्ठित किया।

आचार्यश्री ने गाँव-गाँव, नगर-नगर में विहार कर जहाँ भी मन्दिर या मूर्ति आदि में जो भी कमियाँ नजर आई उन्हें समाज को बताकर, जनता का महान उपकार किया है। प्रतापगढ़ के सभी मंदिरों के दर्शन कर, उपदेशामृत का पान कराते हुए, आचार्य महाराज बाँसवाड़ा होते हुए अन्देश्वर पार्श्वनाथ पधारे।

अतिशय योगी

यहाँ प्रभु पार्श्वनाथ की मनोज्ञ, श्यामवर्ण की अतिशयकारी प्रतिमा है। यहाँ पर तीर्थ क्षेत्र कमेटी व बागड़ प्रान्त की समस्त जनता ने आचार्यश्री को 'अतिशय योगी' की उपाधि से विभूषित किया।

यहाँ इन्दौर समाज ने आचार्यश्री के गोम्मटगिरि (इन्दौर) की पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा में पधारने हेतु श्रीफल भेंट किया। यद्यपि पचकल्याणक में पधारने की स्वीकृति लोहारिया में प्राप्त हो चुकी थी पर अब इन्दौर समाज के कार्यकर्ता टोली रूप से आहारदान देते हुए संचालक के रूप में चल रहे थे।

आचार्यश्री बागोलाजी क्षेत्र के दर्शन करते हुए आचार्यश्री सुधर्मसागरजी (आचार्य महाराज के शिक्षागुरु) महाराज के समाधिस्थल पर चरणो के दर्शनार्थ पधारे। सर्वसघ ने उस पावन स्थल की वदना की।

भव्य स्वागत

कुशलगढ़ की जनता ने आचार्यश्री के मगल प्रवेश के समय विशाल भव्य जुलूस निकाला। नगर में घर-घर तोरणद्वार बँधे थे। सभी चौराहे बड़े-बड़े दरवाजों से सजाये गये थे। नगर के आबाल-वृध्द नर-नारी इस स्वागत में सम्मिलित थे। नगर में ७० द्वार बने थे जो आचार्यश्री की ७० वी जन्म-जयन्ती के प्रतीक थे। सघ ने यहाँ ८ दिन विश्राम किया।

मगल बेला मे आचार्यसघ बड़वानी (बावनगजा) आ पहुँचा। यहाँ गुरुदेव के सान्निध्य मे आदिनाथ प्रभु का मस्तकाभिषेक हुआ। सर्वसघ ने पर्वतराज की वन्दना की। मीलों की पदयात्रा करते हुए आचार्यश्री ने इन्दौर नगरी में पदार्पण किया।

गोम्मटगिरि

इन्दौर नगरी मे धर्मस्थल के बाद पुन जिनधर्मप्रभावक दो सतो का अद्‌भुत मिलन हुआ। ऐलाचार्यश्री विद्यानन्दजी महाराज ने आचार्यश्री के चरणो में नमोस्तु किया, आचार्यश्री ने प्रतिनमोस्तु कर सम्मान दिया। यहाँ राष्ट्रीय सतश्री ऐलाचार्य विद्यानन्द महाराज के सदुपदेश से निर्मित भव्य चौबीसी और श्री बाहुबली प्रभु की प्रतिमाजी का पञ्चकल्याणक महोत्सव गोम्मटगिरि पहाड़ी पर आपके सान्निध्य में निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री व ऐलाचार्य महाराज व उपाध्याय जी महाराज ने जिनप्रतिमाओं में अगन्यास विधि और सूर्यमत्र देने की विधि पूर्ण की। इस समय गोम्मटगिरि पर करीब ५०-६० त्यागियों का समागम हुआ था। इन्दौर के इतिहास में यह एक गौरव पूर्ण घटना है। गोम्मटगिरि पर क्षु सुगुणसागरजी आचार्यश्री से दीक्षित हो मुनि गोम्मटसागरजी बने। तीन वर्ष पूर्व आपकी सम्मेदशिखर पर्वतराज पर सम्यक् प्रकारेण समाधि हो गई।

इन्दौर में आचार्यश्री ने शहर व कालोनियों के दर्शन किये। वहाँ से बनेड़िया क्षेत्र के दर्शन कर ससंघ बड़नगर पहुँचे।

बड़नगर

बड़नगर यद्यपि छोटा-गाँव है पर यहाँ जैनियों की सख्या कम नही है। पाँच विशाल जिनमंदिर हैं। इस नगरी में सच्चे गुरुओं के प्रति श्रध्दा-भक्ति-विनय सदैव देखा गया है। इस नगरी में त्यागी व्रती साधु किसी भी समय पहुँच जायें उन्हे आहार मिलने में कठिनाई नहीं होती।

टोंग्या परिवार के लोग आज भी दिगम्बर त्यागी आर्यिका आदि के उपकरण पिच्छि आदि नि शुल्क भेजते हैं, इनके कुल की यह परपरा है।

इस नगर में आचार्यसघ का भव्य स्वागत हुआ। आचार्यश्री व उपाध्यायश्री के केशलोंच भी यहाँ हुए। केशलोंच के समय आचार्यश्री के मच को छत्र-चॅवर-पलासना आदि से जिस प्रकार सजाया गया था वैसा दृश्य आज तक कही नही देखा गया।

यहाँ दो मदिरो में मूलनायक प्रतिमाजी सदोष थी। आचार्यश्री ने कमी निकलवाकर पुन. सूर्यमंत्र दिया। कही वेदी ऊँची थी, दरवाजा नीचे था, वह ठीक कराया।

आचार्य महाराज की महिमा कौन गा सकता है। मार्ग में ऐसे कई गाँव आये जहाँ वर्षो से प्रयत्न करने पर भी मदिरजी पर ध्वजा-शिखर नही चढ़ पा रहे थे, आचार्यश्री के एक दिन के विश्राम से ध्वजाएँ, शिखर चढ़ गये। वर्षो के मदिर विवाद आचार्यश्री के चरण पड़ते ही दूर हो गये। एक नही अनेक घटनाएँ हैं, विस्तार-भय से इशारा काफी है। ऐसे सरल ह्रदयी, करुणामूर्ति दिगम्बर सन्त का दर्शन इस कलिकाल में दुर्लभ है-

> शुष्क तालाब भरे जल से, फल-फूल छहौं ऋतु के फल आवै।
> शेरनि दूध पिलावत गोसुत, नाहर के सुत गाय चुखावै॥
> मूसक नौल भुजग बिलाव, मयूर परस्पर प्रेम बढ़ावै।
> राग विरोध विवर्जित साधू, जहाँ निवसे सब आनन्द पावै॥

बड़नगर से रतलाम, मन्दसौर होते हुए महावीर जयन्ती पर आचार्यश्री भवानीमडी पधारे। वहाँ अच्छी धर्म प्रभावना हुई। पश्चात् आचार्यश्री की सेवा में सदा रत रहने वाले मुनि बाहुबली जी की जन्मभूमि में सघ पधारा, यहाँ "विमल बाहुबली भवन" और जैन पाठशाला का शिलान्यास उद्घाटन आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ। यहाँ से पाटन शान्तिनाथ अतिशय क्षेत्र के दर्शन कर सघ चॉदखेड़ी आया।

चाँदखेड़ी

चाँदखेड़ी राजस्थान का एक प्राचीन तीर्थ है। यहाँ दु.खहारिणी, मोक्षदायिनी, मन-मोहिनी आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा है।यहाँ आचार्यश्री के सान्निध्य में लघुपञ्चकल्याणक हुआ, तथा आचार्यश्री कुन्दकुन्दस्वामी, उमास्वामी, पूज्यपादस्वामी व सकलकीर्ति आचार्यो के चरण-चिन्हों की प्रतिष्ठा तथा स्थापना हुई।आदिनाथ प्रभु को नमन कर सघ कोटा होता हुआ केशवराय पाटन आ पहुँचा।

केशवराय पाटन

संघ ने यहाँ मुनिसुव्रतनाथ भगवान की काले पाषाण की पद्मासन वीतराग मनोज्ञ प्रतिमा के दर्शन किये।यही वह प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है जहाँ बैठकर श्री नेमिचन्द्राचार्य ने लघु द्रव्य-संग्रह की रचना की थी।

यहाँ से सवाई माधोपुर, चमत्कार महावीर जी के दर्शन करते हुए आचार्यश्री आगरा पधारे। आगरा में आचार्यश्री के सान्निध्य में दस दिवसीय शिक्षण-शिविर का आयोजन हुआ। इस शिविर में हजारों बालक-बालिकाओं, युवा-वृध्द, नर-नारियो ने भाग लिया और ज्ञानामृत का रसपान किया। आगरा में सर्व मंदिरों के दर्शन आचार्यश्री ने किये।

आगरा से विहार कर कुबेरपुरा पधारने पर, संघस्थ वयोवृध्द बाबा संभवसागर मुनिराज की णमोकार मंत्र पढ़ते हुए सम्यक् समाधि हो गई, जिनका संस्कार एत्मादपुर के जैन बाग में किया गया। यहाँ से विहार कर संघ चातुर्मास के लिए फिरोजाबाद की ओर प्रस्थान कर गया।

फिरोजाबाद

फिरोजाबाद जैनियों की एक महानगरी है। आचार्य गुरुदेवश्री महावीरकीर्तिजी महाराज की जन्मभूमि, श्री ब्रह्मगुलाल मुनि की तपोभूमि, विद्वानों को उत्पन्न करने वाली सरस्वती भूमि है फिरोजाबाद। इस नगरी में चूड़ियों का विशेष व्यापार होता है इसलिए यह सुहागनगरी के नाम से भी प्रसिध्द है। यहाँ भगवान चन्द्रप्रभस्वामी व शीतलनाथजी की अतिशयकारी प्रतिमाएँ है अत: अतिशय क्षेत्र भी है। फिरोजाबाद में जैननगर के विशाल जिनालय की महावीर जिन की प्रतिमा दर्शनीय है तथा बाहुबली स्वामी की उन्नत प्रतिमा उत्तर प्रान्त की एक महानिधि एवं वन्दनीय है। यहाँ नगरी में २८ जिनालय है।

गुरुवचन

एक बार तपस्वीयतिराज आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज ने अपने शिष्य विमलसागरजी से कहा- ''विमलसागर। एक चातुर्मास फिरोजाबाद करो।''

शिष्य ने कहा- ''गुरुदेव। आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, अभी तो नही पर कभी भी मैं एक चातुर्मास फिरोजाबाद अवश्य करुगा।''

गिरनारजी सिध्दक्षेत्र पर आचार्यश्री चातुर्मास कर रहे थे। भावना बलवती थी-वह शुभ दिन कब आयेगा कि मैं गुरुवचनों को पूर्ण कर सकूँ। एक चातुर्मास फिरोजाबाद करना है पर कैसे? आदि-आदि विचारधाराएँ आचार्यश्री के मन-मस्तिष्क में घुमड़ती रहती थी। यह नीति है कि पुण्यवानात्मा की भावना अवश्य सफल होती है। तदनुसार फिरोजाबाद से सेठ सुदामाजी आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। भावना के तार टकराये होंगे। सुदामाजी ने आचार्यश्री के चरणों में श्रीफल भेंट कर प्रार्थना की- ''गुरुदेव, मेरी बहुत दिनों से भावना है- मैं आपका एक चातुर्मास फिरोजाबाद में कराना चाहता हूँ, स्वीकृति दीजिये।''

आचार्यश्री मुस्कराये। दो वर्ष पूर्व ही आचार्यश्री ने घोषणा कर दी थी कि सन् १९८६ का चातुर्मास फिरोजाबाद में होगा।

आचार्य महाराज ने सुदामा जी से कहा था- "तुम्हारी भावना मुझे ऋणमुक्त करेगी, तुम्हारे लिए हमारा बहुत-बहुत आशीर्वाद है।"

सेठ सुदामाजी फूले नही समाये।

चातुर्मास

दिनाक २०-७-१९८६ को चातुर्मास स्थापन विधि सम्पन्न हुई। बस, महाराज की दुकान तो चालु हो गई। ग्राहको की कमी नही है इनके लिए।

जिस दिन आचार्यश्री का मगल प्रवेश नगर में हुआ, उपाध्यायश्री ने अपने प्रवचन में बताया था- "आचार्य विमलसागरजी अपनी दुकान लेकर आये है जिसे माल खरीदना है अवश्य खरीदे।" इस दुकान की विशेषताएँ है-

(१) दुकान पर बिना कीमत के माल बिकता है।

(२) माल सस्ता होगा, सुन्दर और टिकाऊ होगा।

(३) माल गरण्टेड होगा, जब चाहो तब मिलेगा, दिन में आओ, रात में आओ, सुबह आओ, शाम को आओ, लेते जाओ, पाते जाओ।"

ग्राहकी चालू हो गई, ब्र अकलकसागरजी की क्षुल्लक दीक्षा २१-७-८६ को हुई। इनका नाम सुहागसागरजी रखा गया। सुहागनगरी में सुहागसागर बने। यही रक्षाबन्धन के अवसर पर ब्र मुरारीलाल व महिपालजी ने क्षुल्लक दीक्षा ली जिनके नाम क्षु विष्णुसागर व अकम्पनसागर रखे गये। यहा ब्र प्रेमचन्दजी क्षुल्लक बने जिनका नाम जितेन्द्रसागर रखा गया।

चातुर्मास में विविध कार्यक्रम वृहद् सिध्दचक्र विधान (सुखदेव जी व उनके सुपुत्र कैलाशजी व सुरेश जी द्वारा) तथा शिक्षण-शिविर निर्विघ्न सम्पन्न हुए। विविध विषयों पर चातुर्मास में त्यागी वर्ग के प्रवचन होते थे, जिससे विशेष लाभ मिलता था। एक ही विषय ५-५ दिन तक चलता रहता था। श्रोतागण विषय का निचोड़ अच्छी प्रकार करते थे। यहाँ पर जन्म-जयन्ती पर्व (आचार्यश्री का जन्म दिवस) बड़े उत्साह से मनाया गया।

मैं ऋण मुक्त हुआ

चातुर्मास के बाद विहार के दिन आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में कहा- 'मैं आज ऋण मुक्त हुआ। मेरे गुरु का मुझ पर जो कर्ज था वह सुदामा का निमित्त मिलने से उतर गया। मेरे गुरुदेव ने मुझे फिरोजाबाद में चातुर्मास को कहा था। मैने कहा था, एक बार अवश्य करूँगा, पर अभी नहीं। वह कर्ज मुझ पर कई वर्षो से चढ़ा हुआ

था, आज मैं कर्ज मुक्त हो गया। समय का क्या भरोसा, किस समय श्वास रुक जाए, मुझे एक चातुर्मास करना ही था, वह समय नजदीक आया, सफलता मिल गई। फिरोजाबाद की समाज के लिए पूर्ण आशीर्वाद है। मेरा एक मात्र यही आशीर्वाद है, हिलमिलकर, कंधे से कधा मिलाकर वात्सल्य से रहो। आचार्य गुरुदेव की जन्मभूमि से एक नहीं अनेक महावीरकीर्ति निकले, यही हमारी भावना है।''

यही चातुर्मास में जयपुर के सेठजी चिरजीलाल व उनके सुपुत्र कमलजी एव चिन्तामणीजी ने आचार्य महाराज से जयपुर में चातुर्मास करने की प्रार्थना की। सघ का सारा भार स्वय वहन करने का सकल्प लिया। आचार्यश्री ने आश्वासन देकर सभावना व्यक्त की।

फिरोजाबाद में विहार कर एतमातपुर के जैन बाग (समाधिस्थल) में मुनि सभवसागरजी के चरणचिन्हों की प्रतिष्ठापना कर आचार्यश्री आहरन ग्राम पधारे।

आहरन आचार्यश्री की शिष्या आर्यिका नन्दामतीजी की जन्मभूमि है। यहाँ आचार्यश्री के सान्निध्य में वेदीप्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न हुआ तथा आचार्यश्री ने अपने कर-कमलों द्वारा वेदी में प्रतिमाजी को विराजमान किया। यहाँ से अतिशय क्षेत्र राजमल मे प्रभु नेमिनाथ जी के दर्शन कर आप सघ सहित शकरोली पधारे।

शकरोली

शकरोली में श्री नेमिनाथ भगवान की अतिशयकारी जिनप्रतिमा है। यह अतिशय क्षेत्र है। यह वही स्थान है जहाँ आचार्य महाराज पण्डित अवस्था में बालकों को धार्मिक व लौकिक शिक्षा दिया करते थे। वहाँ शकरोली में एक वृध्द बाबा ने बताया कि ये महाराजजी (पण्डित नेमिचन्दजी) पूर्वावस्था में हमारे गाँव के बच्चों को नि शुल्क धार्मिक अध्ययन कराते थे। कभी बच्चे पाठशाला में पढ़ने नहीं आते तो आस पास से उन्हें बुला बुलाकर धर्म की शिक्षा देते। अपने खाने का भोजन चना, मूँगफली, गुड़ बच्चों में बाँटकर खुद भूखे सो जाते थे। बच्चों से इन्हें बहुत प्यार था। किसी बालक ने यदि णमोकार सीख लिया या सुना दिया तो ये उसे प्यार से आम, अगूर, गुड़ खाने को देते थे।

कौसमा

शकरोली से सघ पावन तीर्थभूमि (आचार्य महाराज की जन्म भूमि) कौसमा पधारा।

कौसमा की अजैन जनता ने आचार्यश्री का बैण्ड-बाजे के साथ भव्य स्वागत किया। हजारों की भीड़ आचार्यश्री के दर्शन के लिए उमड़ पड़ी।

आचार्यश्री की साधना-स्थली आज जिनालय के रूप में बनी हुई है। पूर्व में जहाँ नेमिचन्द ध्यान से अध्ययन करते थे, वहीं आज भगवान नेमिनाथ की श्याम वर्ण की पद्मासन मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है। सर्व संघ ने प्रभु के दर्शन किये। आचार्यश्री का अजैन बधुओं के कल्याणार्थ भव्य उपदेश हुआ। आचार्यश्री ने कहा- ''बन्धुओं! पाप से डरो। किसी को सताओ नहीं। सुबह-शाम कम-से-कम दस-पाँच मिनट भगवान की भक्ति करो, कीर्तन करो। भक्ति

और कीर्तन करने से पाप का नाश होता है, पुण्य बढ़ता है। मद्य, मांस, मधु कभी नही खाना।''

आचार्यश्री का उपदेशामृत सुन व मधुर मुस्कान देख वृध्दों की आँखें भर आई थी।

'नेमि बचपन से ही धर्मात्मा था। जिसे हमने गोदी में खिलाया वह नेमि आज धर्म का राजा बन गया।'' बोलते बोलते एक वृध्द के नेत्रों से अश्रु निकल पड़े। आचार्यश्री ने दो घटे रहकर वहाँ से विहार कर दिया।

हमारे बाबा, हमारे बाबा, कहकर सभी लोग आचार्यश्री के आशीर्वाद की एक दृष्टि पाने के लिए मीलों दूर तक उनके पीछे दौड़ते चले जा रहे थे, पर आचार्यश्री ने पीछे मुँह मोड़कर भी पुन. एक बार अपनी जन्मभूमि को नही देखा। कौसमा नगरी उदास हो मानो कह रही थी- मेरे स्वामी मुझे इतनी जल्दी छोड़कर जा रहे हो, एक बार दृष्टि दीजिये, इस भूमि को अपनी चरणरज से पुन पवित्र करियेगा। स्वामी की याद में कौसमा अश्रु बहाती रह गई। कैसा अनुपम दृश्य था वह भी।

अवागढ़

कौसमा से जलेसर होते हुए आचार्यश्री अवागढ़-पञ्चकल्याणक में पधारे। आदिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर प्रभु की पद्मासन मनोज्ञ प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा सस्कार विधि आपके सान्निध्य में निर्विघ्न सम्पन्न हुई। आपने सूर्यमंत्र देकर मूर्तियो को जीवत किया। इस अवसर पर पधारे हुए काग्रेस के नेता सजयसिह ने अपने वक्तव्य में कहा- ''मैने जैनों को कभी भीख माँगते नही देखा, देते हुए अवश्य देखा । जैन समाज के द्वारा सरकार को जितनी आमदनी होती है उतना अन्य समाज से नही। यह सब अहिंसा का प्रभाव है। हमारी सरकार जैन समाज की ऋणी है।'' जैन समाज को इस कथन पर ध्यान देना चाहिए। त्याग से बड़प्पन मिलता है।

इसी गाँव में पुष्पदंत भगवान का मुख्य मंदिर है। मदिर के पास बाहर मैदान में मानस्तभ का शिलान्यास आपके सान्निध्य में हुआ, तथा 'विमल शास्त्रभवन' का भी शिलान्यास हुआ।

अवागढ़ से सघ एटा पधारा। एटा में आचार्यश्री के सान्निध्य में समाज ने 'विमल-भरत स्वाध्याय भवन' का शिलान्यास किया। यहाँ से कम्पिला और सौरीपुर पधारे।

कम्पिला से विमलनाथ की जन्मस्थली के दर्शन कर आचार्यश्री ने सौरीपुर (बटेश्वर) में मगल प्रवेश किया।

सौरीपुर

सौरीपुर भगवान नेमिनाथ की जन्मभूमि के नाम से प्रसिध्द है, किन्तु सौरीपुर के दर्शन करने पर ज्ञात होता है कि यहाँ से यमधर और धनदत्त मुनिराज मुक्ति पधारे, जिनके चरण आज भी वहाँ दर्शनीय है इससे इसे सिध्दभूमि मानने में भी कोई बाधा नही है। स्थान बहुत रम्य है। यहाँ भगवान नेमिनाथ की अति मनोज्ञ विशाल जिनप्रतिमा है। सिद्धभूमि में सिद्धों की चरण वन्दना कर आचार्यश्री ने आगे विहार किया।

धर्मगंगा अपनी रफ्तार में बहती हुई मथुरा आ पहुँची। मथुरा में क्षु. आदिसागरजी व क्षु. देवसागरजी, क्षु.

सुहागसागरजी ने आचार्यश्री से ऐलक दीक्षा ली, जिनके नाम क्रमश. ऐ मधुसागरजी, देवसागरजी और सुहागसागरजी रक्खे गये। सघ यहाँ तीन दिन रहा। आचार्यश्री व उपाध्यायश्री के केशलोंच भी यहाँ हुए। काफी धर्म प्रभावना हुई। तीर्थो की वन्दना करते हुए आचार्यश्री नवीन तीर्थस्थली माता ज्ञानमतीजी की सुझ-बूझ की अनोखी देन, हस्तिनापुर-जम्बूद्वीप के दर्शनार्थ पधारे। यहाँ की रचना अपने आप में अद्वितीय है।

पावन तीर्थराज पर ब्र. मोतीचन्दजी को आचार्यश्री ने क्षुल्लक मोतिसागर बनाया।भगवान पार्श्वनाथ व भगवान नेमिनाथ का पञ्चकल्याणक महोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ। यहाँ युग-प्रतिक्रमण के अवसर पर आपको "तीर्थोध्दारक चूड़ामणि," पद देकर आपके प्रति श्रध्दा व्यक्त की गई।

इसी अवसर पर रेल्वे केन्द्रिय मंत्री श्री माधवराव सिंधिया भी पधारे। सिंधिया ने आचार्यश्री के चरणों में श्रीफल चढाकर आशीर्वाद प्राप्त किया।

हिंसा क्या है

सिंधियाजी ने अपने वक्तव्य में कहा- "हिसा क्या है। किसी को शस्त्र से मार देना ही हिसा नहीं है अपितु सबसे बड़ी हिसा तो सग्रहवृत्ति है। देश को खुशहाल देखना है तो अकिञ्चन गुरुओं के चरणों में सग्रहवृत्ति को छोड़ना अति आवश्यक है।"

उन्होंने यह भी कहा कि "हमारा परिवार, हमारे वशज, आरभ से ही शाकाहारी रहे है, हमने भी कभी मद्य-मास आदि का सेवन नही किया।"

तदनन्तर आचार्यश्री ने अपने आशीर्वाद में कहा कि राजनीति और धर्मनीति दोनो देश की रक्षा के लिए आवश्यक हैं। पर राजनीति धर्मनीति सहित होगी तो ही शासन और जनता दोनो उन्नति को प्राप्त होंगे। महान राजनेताओं- राजेन्द्र बाबू, लोकमान्य तिलक, महात्मा गाधी ने धर्म के बल पर देश की रक्षा की। जनता का नेता सही होगा तो जनता को भी सही दिशा दे सकेगा। सिंधियाजी धर्मनीति पर चलकर शासन करें, यही इनको हमारा आशीर्वाद है।

उपलब्धियाँ

कई वर्षों से साधुओ के बीच युग-प्रतिक्रमण नही हुआ है, यह सकेत आचार्यश्री को माताजी ने दिया, अत. माताजी की प्रेरणा से आचार्यश्री के सान्निध्य मे फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी को यहाँ से युगप्रतिक्रमण का प्रारम्भ हुआ। वहाँ स्थित सभी त्यागियों ने उपस्थित होकर प्रतिक्रमण किया और आचार्य महाराज से विधिवत् प्रायश्चित लिया।

उपाध्याय महाराज व ज्ञानमती माताजी व त्यागियों ने मिलकर एक विशेष निर्णय लिया कि जैन समाज मे मनाये जाने वाले चार पर्वो की तिथियो का निर्णय आचार्यश्री के द्वारा प्रतिवर्ष हो तथा उसी दिन पूरे भारत मे मनाई जावें। प्रथम तिथि है-चातुर्मास स्थापना दिन, द्वितीय-अनन्त चतुर्दशी, तृतीय-महावीर जयन्ती और चतुर्थ है-महावीर निर्वाण तिथि।

मथुरा से हस्तिनापुर, बड़ौत तक संघपति बनकर नरेश जी बड़ौत वालों ने चतुसंघ की श्रद्धाभक्तिपूर्वक वैयावृत्ति की। महावीर जयन्ती के पावन पर्व पर संघ बड़ौत आ पहुँचा। जयन्ती पर धर्म की अपूर्व प्रभावना हुई। यहाँ क्षु मनोवतीजी की आर्यिका दीक्षा हुई, नाम वही रहा।

भारत की राजधानी दिल्ली

बड़ौत से विहार कर आचार्य बड़ागाँव अतिशय क्षेत्र के दर्शन करते हुए भारत की राजधानी दिल्ली के एक छोर पर आ पहुँचे। गुलाब वाटिका मे क्षुल्लिका राजमती के उपदेश से बनने वाले नव मंदिर का शिलान्यास आचार्यश्री के सान्निध्य में हुआ।

यहाँ से दिल्ली के मुख्य स्थानो मे जिनमन्दिरो के दर्शन करता हुआ सघ लालमदिरसे विशाल जुलूस के साथ पहाड़ी धीरज आ पहुँचा। पहाड़ी धीरज मे सघ की सारी व्यवस्था सेठ श्रीपाल व राजेन्द्र बाबू की ओर से थी। विशाल मच पर सार्वजनिक सभा मे आचार्यश्री के उपदेश हुए। आचार्यश्री के मगल प्रवेश की शुभ वेला मे तत्कालीन केन्द्रीय उड्डयन मन्त्री जगदीश टाइटलर ने आचार्यश्री के चरणो मे नमन कर श्रीफल भेंट चढ़ाया। आचार्यश्री ने उन्हे मद्य-मास का त्याग कराया। मन्त्री जी ने सकल्प किया-"मै जीवन भर शाकाहारी रहूँगा, भारतीय श्रमण सस्कृति की रक्षा करूँगा।" जगदीश जी ने अपने वक्तव्य मे कहा- "राजनीति में सदैव उथल-पुथल होती रहती है अत इस पद से मेरी सफलता नही है। मेरे पद की आज सफलता हुई कि मुझे धर्मनेता के चरणो मे मस्तक टेककर आशीर्वाद प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ है। मै हमारे देश के गौरव-दिगम्बर साधुसमाज विमलसागरजी महाराज व भरतसागरजी तथा समस्त सतों के चरणो मे पुन-पुन वन्दना करता हूँ।"

दिल्ली के कोने-कोने से पुण्यात्माओं ने बहती हुई धर्म-गगा में डुबकी लगाकर जीवन पवित्र किया।

गाजियाबाद पहुँचते ही दुखद समाचार सुनकर चतु सघ में सनसनी फैल गई। परम पूज्य धर्मनेता आचार्यश्री धर्मसागरजी महाराज की समाधि सीकर में हो गई। समाचार मिलते ही सघ में उदासी छा गई। चतुःसंघ ने मिलकर समाधि क्रिया की, श्रध्दाञ्जली सभा में सभी ने आचार्य धर्मसागरजी का गुणानुवाद किया।

आचार्यश्री विमलसागरजी गुरुदेव ने बताया कि-आचार्यश्री धर्मसागरजी बहुत सरल प्रकृति के, आगमनिष्ठ गुरु व निस्पृही साधु थे। वे किसी संस्था आदि के झझट में नही थे। उनकी साधु-चर्या वर्तमान युग के साधुओं के लिए आचरणीय व अनुकरणीय है।

जैना वॉच कम्पनी में आचार्यश्री के प्रवचन हुए, यहाँ सैंकड़ों मजदूर काम करते है। सभी ने प्रवचन सुने तथा अनेक मजदूरों ने मद्य, मांस, मधु का त्याग किया।

दिल्ली से संघ-विहार का कार्य संघपति श्री चिरंजीलालजी बज के परिवार ने सम्हाला। कमल जी व चिन्तामणी जी की देख रेख में संघ का निर्विघ्न विहार हुआ। सघ चन्द्रप्रभ भगवान के अतिशय क्षेत्र तिजारा आ पहुँचा।

तिजारा में श्रुतपञ्चमी का पर्व मनाया गया। यहाँ जयपुर के बज परिवार ने आचार्यश्री से चातुर्मास की पुन प्रार्थना की। आचार्यश्री ने जयपुर चातुर्मास की स्वीकृति चतु.संघ की सम्मति से प्रदान की।

चन्द्रप्रभ भगवान की अतिशय सम्पन्न प्रतिमा के दर्शन कर आचार्यश्री ने चातुर्मासार्थ जयपुर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में अलवर, सिकन्दरा, बस्सी आदि नगर व ग्रामों के जिनालयों के दर्शन करते हुए आचार्यसंघ अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा पधारा।

पद्मपुरा में अतिशयकारी पद्मप्रभ भगवान की जिनप्रतिमा है। यहाँ संघ ने तीन दिन विश्राम किया।

पद्मपुरा से विहार कर संघ सांगानेर की ओर आया।

सांगानेर में जैन संस्कृति की प्राचीन धरोहर सरक्षित है। विशाल बड़े बड़े जिनालय, प्राचीन मनहारी सैकड़ों वीतराग प्रतिमाएँ भव्यात्मा में दर्शन मात्र से सम्यक्त्व दीप प्रज्वलित करती है। यहाँ कुल ७ विशाल जैन मंदिर है। सर्वसंघ ने जिनालयों की वन्दना की। यहाँ जैनियों के लगभग ८० घर है। गुरुभक्तों की यह नगरी विशाल जिनमंदिरों व प्रतिमाओं से शोभायमान है।

यहाँ से भट्टारकजी की नसिया जयपुर, व दीवानजी के मंदिर के दर्शन करके आचार्यश्री संघ सहित आमेर अतिशय क्षेत्र पहुँचे।

आमेर

आमेर में प्रभु नेमिनाथ की आकर्षक जिनप्रतिमा है। यही पार्श्वनाथ प्रभु का नया मंदिर है। इसमें पार्श्वनाथ की विशाल पद्मासन प्रतिमा के सर्वसंघ ने दर्शन किये।

जिनेन्द्रदेव का बड़े-बड़े कलशों से पञ्चामृत महाभिषेक तीन दिनों तक प्रतिदिन प्रात हुआ। आचार्यश्री का विशेष स्वभाव ही है कि पता नही जब तक, दूध, दही आदि के बड़े-बडे कलशों से भर-भरकर अभिषेक नहीं देखते है तब तक इन्हें संतोष नही आता।

किसी ने आचार्य महाराज से पूछा- "जब हमने प्रतिमाजी का मोक्षकल्याणक मना लिया फिर अभिषेक कैसा? अभिषेक तो जन्मकल्याणक का किया जाता है।"

आचार्य महाराज ने मार्मिक शब्दों में समाधान किया- "जैन धर्म में हमारे नवदेवता है। वे हमारे पूज्य है। इनमें साक्षात् अरहंत, सिध्द का अभिषेक नही कर सकते। आचार्य, उपाध्याय व साधु परमेष्ठी का अभिषेक भी नही कर सकते।"

आचार्य महाराज ने बताया- "एक बार भक्तो ने एक मुनिराज का घड़ा भर पानी से अभिषेक कर दिया। महाराज उपसर्ग समझकर शान्त भाव से ध्यान में लीन थे। भक्तों के अविवेक से मुनिश्री को शीतवात ने घेर लिया और उनकी असमय में समाधि हो गई। इसीलिए भक्ति में भी विवेक की जागृति आवश्यक है। जिन चैत्यालय का अभिषेक अशक्य है, जिनवाणी का व जिनमार्ग का अभिषेक भी नहीं होता। एकमात्र जिन चैत्य ही एक ऐसे देवता हैं जिनका विशेष अभिषेक पूजन आदि करके भव्यात्मा पुण्यार्जन कर लेता है। सभी देवता की पूजा का भिन्न-भिन्न विधान है। उनमें जिनचैत्य की पूजा-विधि विशेष उत्साह के साथ भगवान का उत्तमोत्तम द्रव्यों से अभिषेकपूर्वक पूजन करना है इस प्रकार करने से असंख्यात कर्मों का क्षय होता है, पापों का प्रक्षालन होता है

व पुण्यानुबन्धी उत्कृष्ट कर्म बँधता है।''

आमेर के पहाड़ पर विशाल मंदिर व प्राचीन मूर्तियाँ आज भी सुरक्षित हैं।

आमेर से आचार्यसंघ ने विहार कर जयपुर राणाजी की नसिया, खानिया जयपुर में, प्रात काल की मगल वेला में प्रवेश किया। सर्वसंघ ने श्रीवासुपूज्य प्रभू के पावन दर्शन कर ८ माह की थकान को दूर किया।

खानिया

खानिया जयपुर में दो नसिया हैं। दोनो में दो विशाल जिनालय है। राणाजी की नसिया में वासुपूज्य भगवान की मूँगा रग की पाषाण की पद्मासन अतिशयकारी प्रतिमा है, तथा कुल वेदी पाँच है। वेदी की छत व दीवारों पर स्वर्ण का कार्य झिलमिल करता रहता है।

आचार्यश्री व मुनिवृन्द एव क्षुल्लकजी राणाजी की नसिया में ठहरे।

दूसरी नसिया पंचायती है। इसमें मूल वेदी में मूलनायक श्री पार्श्वनाथ प्रभु की मनोज्ञ प्रतिमा है। कुल तीन वेदी हैं। सभी आर्यिका माताजी व क्षुल्लिका जी इसी नसिया में ठहरी थीं।

राणाजी की नसिया में वीरसागरजी महाराज की सम्यक् समाधि हुई। उनकी चरण-चिन्ह रूप निषिधिका के सभी ने दर्शन किये।

यही ऊपर चूलगिरि पर्वत आचार्य देशभूषणजी महाराज की प्रेरणा से बनाया गया है। पर्वत की शोभा अतिरम्य है। पर्वत पर विशाल महावीर जिनबिम्ब, यक्ष-यक्षिणियों सहित चौबीसी प्रतिमाएँ, चरण-चिन्ह आदि व आदिनाथ प्रभू की विशाल प्रतिमा आदि वन्दनीय हैं।

वीर नि सं २५१३, वि स. २०४४, सन् १९८७ आषाढ़ सुदी चतुर्दशी को रात्री आठ बजे आचार्यश्री ने ४३ त्यागियों, व चतु संघ सहित चातुर्मास स्थापना की। मगल कलश स्थापना सघपति चिरजीलालजी, पुत्र कमलजी व चिन्तामणिजी की। चातुर्मास का सारा भार भी इसी परिवार ने उठाया।

चातुर्मास में विविध कार्यक्रम, अनुष्ठान आदि हुए। विशेषता यह रही कि बज परिवार की श्रध्दा भक्ति रोम-रोम से बिखर रही थी। युवा बन्धु चिन्तामणि जी, कमल जी तथा शकुन्तला आदि ने आचार्यश्री को आहार दिया।

इस चातुर्मास मे सघपति का सारा परिवार दर्शनार्थीयों की आवास और भोजन व्यवस्था में तन-मन-धन से जुटा हुआ था। लोग उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। राणा परिवार की भक्ति भी सराहनीय रही।वकील सा गिरराज जी व उनकी धर्मपत्नी ने आचार्यश्री को आहार दान दिया। चातुर्मास में ऐलक मधुसागरजी, देवसागरजी की मुनिदीक्षा हुई तथा धवलमती माताजी ने आचार्य महाराज से आर्यिका दीक्षा ली।

इस चातुर्मास में स्कुलों के बच्चों को धार्मिक शिक्षण दिया गया। स्कूलों के बच्चे-बच्चियों के लिए चार शिविर लगाये गये। छहढाला, भक्तामर, चार भाग व लघुस्तोत्र का उपाध्यायजी व विरागसागरजी महाराज ने शिक्षण दिया।

महिला वर्ग को भी शिविर के माध्यम से शिक्षण दिया।

छोटे-छोटे बच्चों ने ७ दिनो में संस्कृत दर्शनपाठ, महावीराष्टक प्रथम भाग कंठस्थ कर लिये। यह उपलब्धि बहुत बड़ी थी।

एक दिन आचार्य महाराज शिविर की क्लास देखने पधारे। हमने दो बच्चों से कहा- आप दर्शन पाठ अच्छी तरह सुनाना। पर आश्चर्य यह था कि छोटे-छोटे बच्चें हम पर नाराज हो गये। कारण वहाँ होड़ लगी हुई थी। सभी को पाठ कठस्थ था, अत. हमें सभी को बुलवाना पड़ा।

आचार्यश्री ने बच्चों से अनेक प्रश्न किये। बच्चे तडाक से उत्तर देते नजर आये। आचार्यश्री ने कहा-शिविरों से बहुत उपलब्धि हुई है। ऐसे कार्य हमेशा करते रहना चाहिए।

खंडविद्या-धुरन्धर

. यह पद जयपुर में जयन्ती के अवसर पर आपको दिया गया। कार्तिक की अष्टान्हिका में इन्द्रध्वज विधान श्रीपाल जी सघपति के सुपुत्र राजेन्द्र ने करवाया। इस युग में ऐसी उदारता व विशाल श्रध्दा भावना की विशिष्टता का परिचायक ऐसा विधान 'न भूतो न भविष्यति' को चरितार्थ कर रहा था। दीपावली के पूर्व यहाँ राणा परिवारकी ओर से विशाल समवसरण- मडल-विधान-पूजा आचार्यश्री के सान्निध्य में की गई। रथयात्रा भी निकाली गई। अच्छी धर्म-प्रभावना हुई।

वहीं संघ की वृध्दा तपस्विनी आर्यिका सूर्यमती माताजी की मगसर वदी ९ वी नि स २५१४ को सम्यक् समाधि हुई।

तपस्विनी आ. सूर्यमती

सूर्यमतीजी तपस्विनी आर्यिका थी। इनका अधिकाश जीवन उपवासों में बीता। दशलक्षण, अष्टान्हिका पर्वो में ८-१० उपवास, सोलह कारण पर्व में १६ उपवास करना इनके लिए साधारण बात थी। इन्होंने १२३४ चारित्रशुध्दि के व्रत, एकावलि, कनकावलि आदि अनेक व्रत किये। अन्तिम समय में भी आपने एक उपवास पूर्वक समाधि प्राप्त की।

वर्षायोग पूर्ण कर आचार्य सघ ने जयपुर की विशेष कालोनियों में धर्म-प्रभावना करते हुए नगर में पदार्पण किया।

जयपुर

जयपुर गुलाबी नगरी है। इसे जैनपुर भी कहते हैं। एक समय यहाँ जैनियों की संख्या सबसे अधिक थी। एक समान गुलाबी पत्थरों के उन्नत मकान, बाजार, दुकानें होने से यह गुलाबी नगरी कहलाती है।
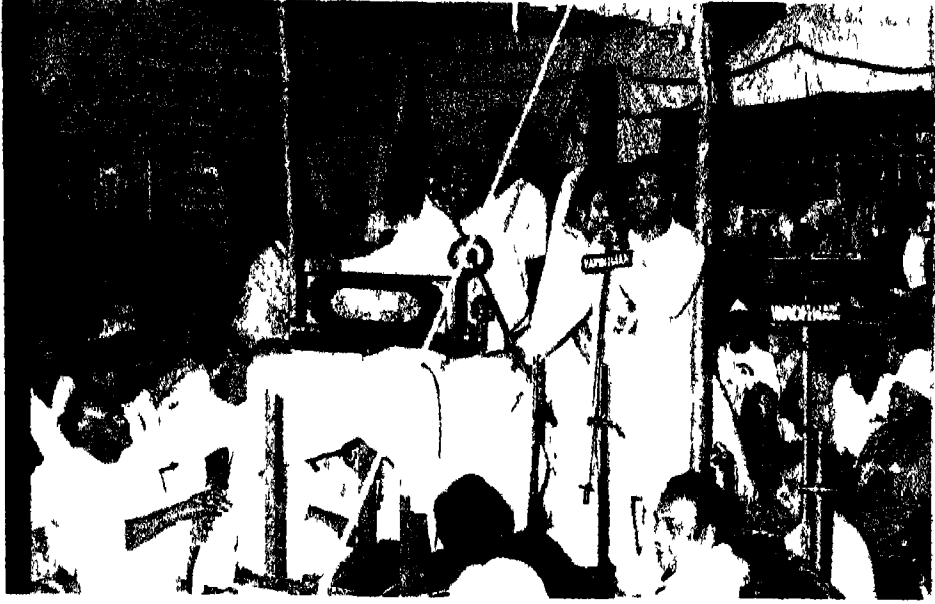
पहाड़ी धीरज, देहली मे आचार्यश्री के मगल पदार्पण पर सुप्रसिद्ध गीतकार श्री रवीन्द्र जैन, बम्बई स्वागत गीत प्रस्तुत करते हुए।
श्री आर के जैन परिचय दे रहे है।

आचार्यश्री के उपदेश से दशलक्षण के दस उपवास सम्पन्नता पर भगवान के चरणो मे श्रीफल समर्पण करती हुई कु सोनिया जैन
(सुपुत्री श्री आर के जैन) साथ मे माँ, दादा, दादी व भाई (गजपथा)

आचार्यश्री के सानिध्य मे राजस्थानके मुख्यमत्री श्री हरदेवसिह जोशी,
साथमे है श्री चिरजीलाल बज, चितामणि बज, पन्नालाल सेठी तथा अन्य महानुभाव (जयपुर)
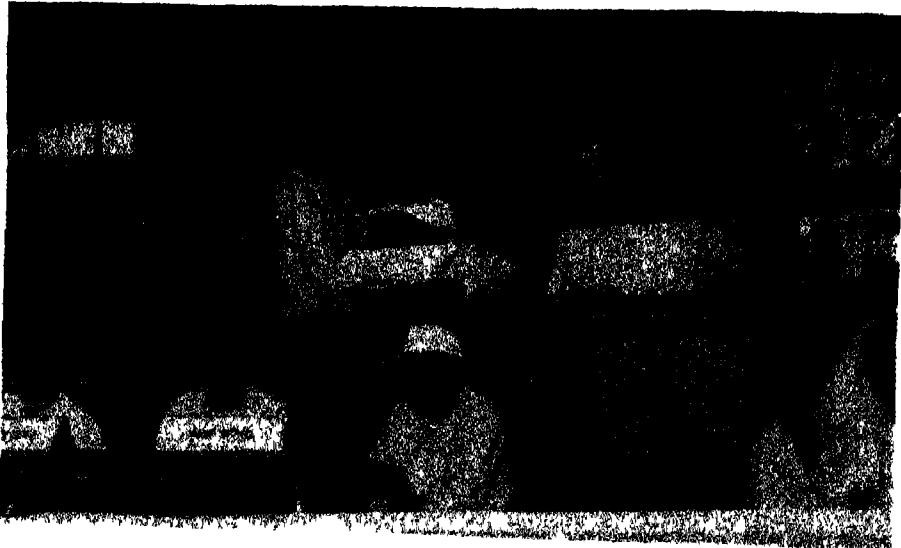
आचार्य सघ की सेवाम श्री चितामणी बज, बम्बई
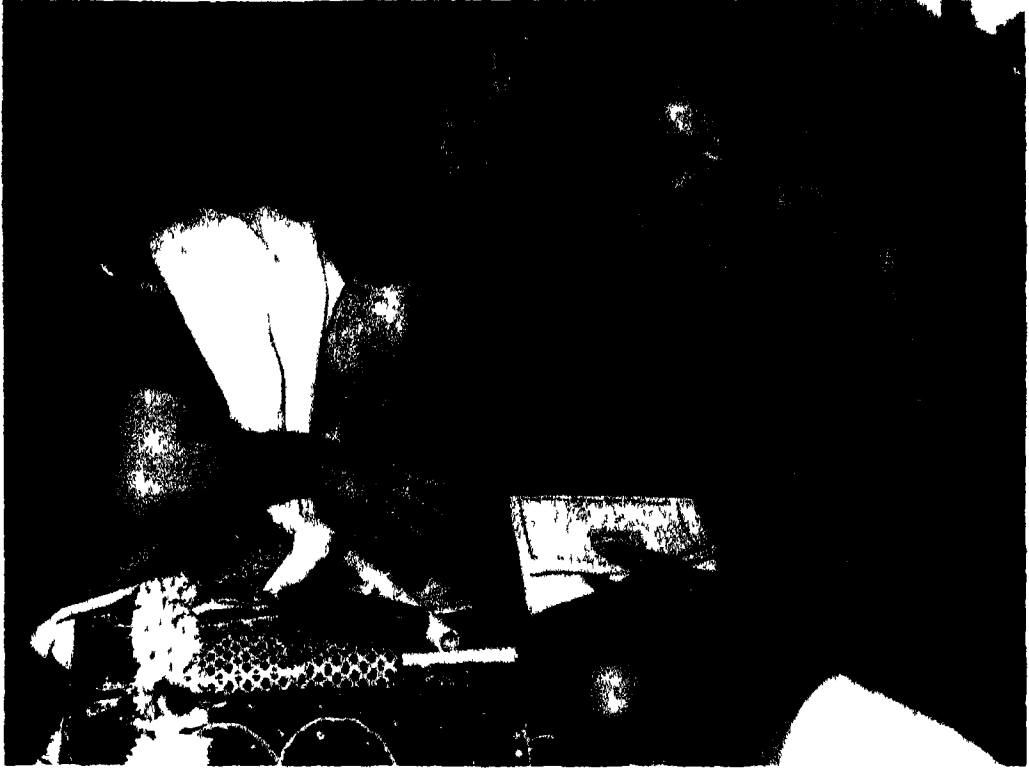
श्री शिखरचदजी पहाड़िया, बम्बई, पूज्य आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए

नीरा (महाराष्ट्र) में चातुर्मास, आचार्यश्री व सघ प्रतिक्रमण मुद्रा में

आचार्यश्री श्री ज्ञानचंदजी लूनिया से नई पीछी स्वीकारते हुए।
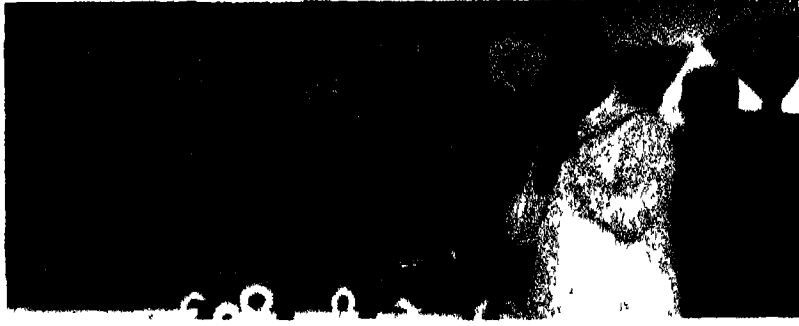
आचार्यश्री की ७४ वी जन्म जयन्ती के प्रसग पर मध्यप्रदेश के मुख्यमत्री श्री मोतीलालजी व्होरा आचार्यश्री को वदना करते हुए।

आचार्यश्री की ७४ वी जन्म जयन्ती के प्रसग-पर आचार्यश्री के पाद प्रक्षालन के लिये तत्पर चम्पालालजी, पाण्डिचेरी।
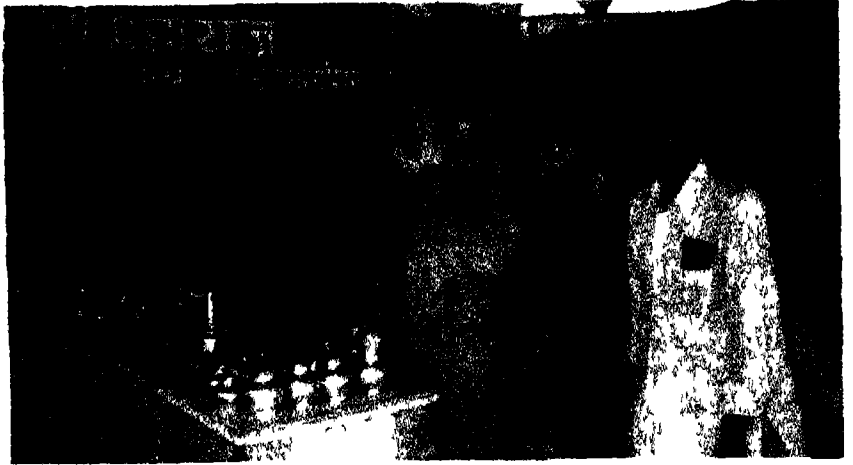
आचार्यश्री की जन्म जयती के शुभावसर पर अमरचन्दजी पहाड़िया आचार्यश्री की पूजन करते हुए।

आनार्यश्री की जन्म जयती के शुभ अवसर पर आचार्यश्री की आरती करते हुए ताराचदजी जैन, सेलम।
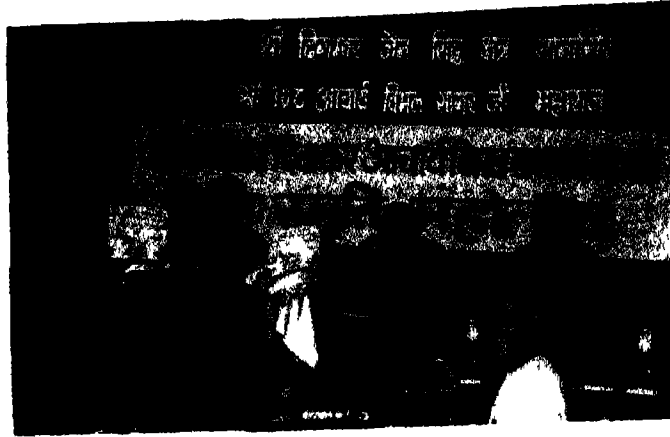
श्री पन्नालालजी सेठी स्व आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज की चित्रकथा का आचार्यश्री क सानिध्य मे विमोचन करते हुए।

आचार्यश्री एव उपाध्यायश्री जैन चित्रकथा अक का अवलोकन करते हुए।

आचार्यश्री की वैय्यावृत्ति करते हुए मुनिभक्त श्री आर. के. जैन, बम्बई, श्री गनरूपजी बाकलीवाल, जयपुर तथा अन्य श्रावक गण (सोनागिर सिद्धक्षेत्र)

आचार्यश्री महिलाओंको आशीर्वाद देते हुए। (सोनागिरजी)

आचार्यश्री प्रतिष्ठाचार्य श्री सूरजमलजी को आशीर्वाद देते हुए (सोनागिर)

आचार्यश्री पाचूलाल पहाडिया एव उनकी धर्मपत्नी निर्मलादेवी पहाडिया को आशीर्वाद देते हुए

आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए श्री पारसकुमार गगवाल, ग्वालियर।

आचार्यश्री को ग्रन्थ भेंट करते हुए श्री शातिलालजी गगवाल, जयपुर।

१९९३ म चातुर्मास कलश स्थापना के समय शिखरचन्द पहाडिया आचार्यश्री के साथ म

'अहिसा' पत्रिका का अवलोकन करते हुए आचार्यश्री, साथ म है सम्पादक स्व श्री जम्बूकुमारजी,
सरक्षक श्री चैनरूपजी बाकलीवाल (जयपुर)

आचार्यश्री का पाद प्रक्षालन करते हुए श्री चम्पालालजी जैन, पॉडिचेरी तथा उनका परिवार
साथ मे है श्री चितामणिजी बज, जयपुर।

श्री कस्तुरचदजी शाह, सोलापुर आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए (सम्मेदशिखरजी)।

श्री ताराचदजी शाह, बम्बई आचार्यश्री से आशीर्वाद लेते हुए।

उपाध्यायश्री की पीछी लेत हुये श्री पाचूलाल पहाड़िया एव श्रीमती निर्मला पहाड़िया
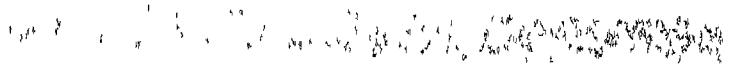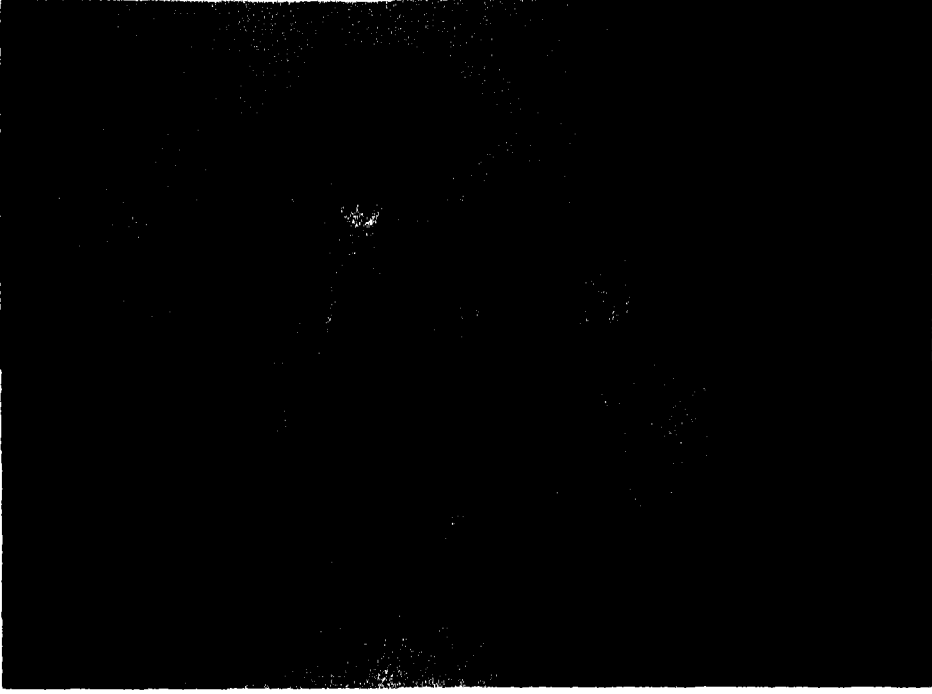
आचार्यश्री शिखरचन्द पहाड़िया एव उनकी धर्मपत्नी प्रेमलता पहाड़िया को आशिर्वाद देते हुए

श्री पुनमचदजी गगवाल, जयपुर श्री अमरचदजी पहाड़िया, कलकत्ता
श्री निर्मलकुमारजी सेठी, लखनऊ आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए, (सोनागिर सिद्धक्षेत्र)।

श्री पूनमचदजी गगवाल, झरिया को आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री

आचार्यश्री की पीछी लेते हुए शिखरचन्द पहाडिया
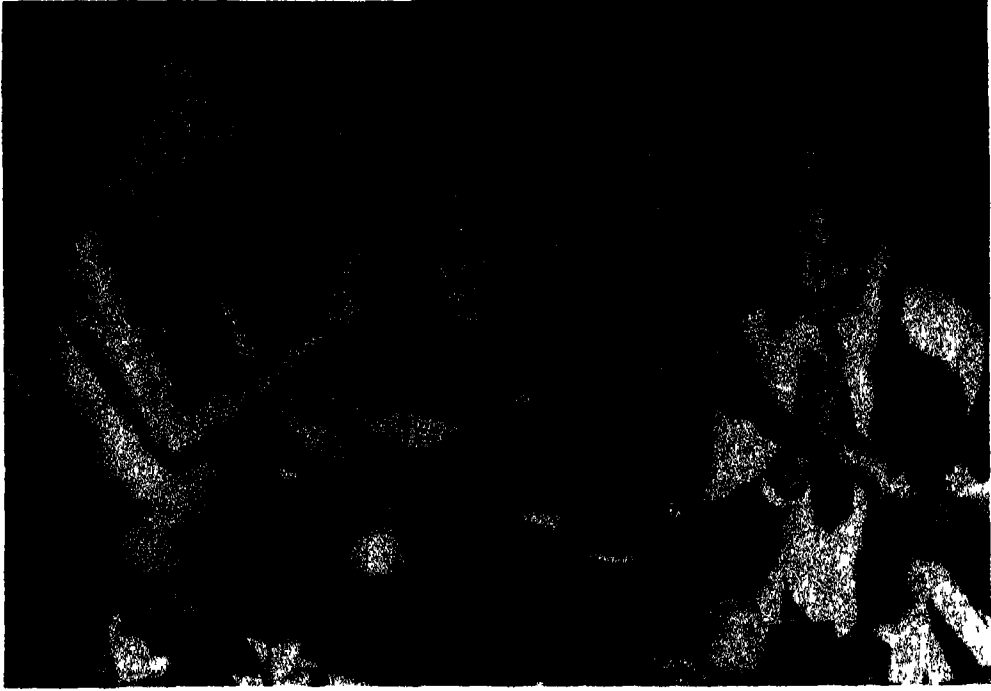
श्री आर के जैन और उनकी धर्मपत्नी सौ मधु, सुपुत्र श्री शरत और सुपुत्री कु सोनिया को आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री

आचार्यश्री शिखरचन्द पहाड़िया और उनकी सुपुत्री कविता को उपदेश देते हुए

आचार्यश्री के चरणो मे श्री ओमप्रकाशजी जैन, बम्बई।

आचार्यश्री की आरती करते हुए श्री माणिकचदजी पालिवाल कोटा।

यहाँ दि. जैन मंदिरों की संख्या बहुत है। लगभग १५० जिनालय व १०० चैत्यालय यहाँ आज भी है। जयपुर की चौबीसी भारत में प्रसिध्द है। कालाडेरा का महावीर भगवान का मन्दिर व सोनिया के पार्श्वनाथ जी का मंदिर विशेष दर्शनीय है।

यहाँ के सभी मंदिर व चैत्यालयों की वन्दना आचार्यश्री ने चतु:संघ सहित की। आचार्यसंघ पार्श्वनाथ भवन में ठहरा था। पार्श्वनाथ भवन में आचार्यश्री विद्यानन्दजी महाराज पूज्य आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। दस मिनट तक युगल आचार्य व उपाध्यायश्री की गहन-गंभीर चर्चाएँ हुई।

रामलीला मैदान में युगल आचार्य व उपाध्याय श्री के मार्मिक हृदयग्राही उपदेश हुए।

जयपुर से विहार कर आचार्यश्री पुन मगलभूमि सागानेर पधारे। सागानेर मे नीचे तलघर में छोटी-छोटीजिनप्रतिमाएँ हैं। वहाँ जाकर कोई दर्शन लाभ नही ले सकता है। केवल दिगम्बर आचार्य, त्यागी मुनि ही वहाँ से उन प्रतिमाओं को ऊपर ला सकते है। पूज्य आचार्यश्री व उपाध्यायश्री नीचे तलघर में पहुँचे और सर्व जिनप्रतिमाओं को ऊपर लेकर आये।

पद्मपुरा

यहाँ आचार्यश्री के दर्शनार्थ परमपूज्य आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज सघ सहित पधारे। सघ में ४ मुनिराज व ३ आर्यिका माताएँ थी। आचार्यकल्पश्री पधार रहे है- यह सूचना पाकर आचार्य महाराज के हर्ष का पार नही था। आचार्यश्री स्वय दूर तक उन्हें लेने के लिए गये थे।

आचार्यकल्पश्री ने आचार्यश्री के चरणों में त्रिभक्तिपूर्वक नमोस्तु किया। यह एक अभूतपूर्व दृश्य था।

दोनों संघो का पाक्षिक प्रतिक्रमण एक साथ हुआ। आचार्यकल्पश्री के सान्निध्य मे स्वाध्याय तत्त्वचर्चा से कई उपलब्धियाँ हुई।

आचार्यकल्प श्रुतसागरजी

आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी महाराज ने आचार्यश्री वीरसागरजी से दीक्षा प्राप्त की थी। आप वर्तमान युग के सच्चे मुनिरत्न है। आप आगम के विशेष ज्ञाता, ख्याति, पूजालाभ से अतिदूर रहने वाले मोक्षपथ के सच्चे साधक थे।

आचार्यकल्पश्री के सान्निध्य में वर्ण-व्यवस्था, आहारचर्या आदि को लेकर अनेक विषयों का शंका-समाधान उपाध्यायश्री व हमने प्राप्त किया। हमने वर्ण-व्यवस्था पर एक लेख लिखा था, उसका वाचन भी आपके सान्निध्य मे किया। आपने अपने अनुभवों से उस लेख का शोधन आदि करके शुध्दिकरण किया। आपने उसे शीघ्र छपवाकर घर-घर बँटवाने का आदेश दिया। वह पुस्तिका 'मर्यादा की रक्षा' नाम से प्रकाशित हो चुकी है।

उत्तमार्थ चर्चा व आचार्यश्री के वचनों की सफलता

सत्य तो यह है कि आचार्यकल्पश्री आचार्यश्री के पास अपनी अन्तिम उत्तम चर्चा करने के लिए पधारे थे। चर्चा के मध्य आचार्यकल्पश्री ने आचार्यश्री को बताया- "मेरे बारह वर्ष की समाधि का समय पूर्ण हो रहा है।" समाधि सम्बंधी पूरा विवरण बताने के पश्चात् आपने यह निर्णय, सकल्पपूर्वक आचार्यश्री के पास रख दिया था- "मै निश्चित ही यम सल्लेखना करूँगा। आप का आशीर्वाद लेने आया हूँ।" आचार्य महाराज ने कहा- "महाराज जी! आप धैर्यवान पुरुष हैं। आपकी समाधि बहुत अच्छी होगी, ऐसा हमारा आत्मविश्वास है। आपका जो सकल्प है, उसे अवश्य पूरा करिये। सयमरूपी मदिर पर कलश चढ़ाना आप जैसे वीरों का ही काम है।"

यद्यपि कई त्यागियों को यह ज्ञात था कि महाराज की समाधि के बारह वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। पर आपकी धीरता, वीरता और शारीरिक शक्ति को देखकर कोई भी यह सोच नही पाया कि ये आगमनिष्ठ साधु इस शरीर को इतनी जल्दी त्यागकर जा सकते हैं।

समाधि का निर्णय पद्मपुरा में आचार्यश्री के चरणों में करने के बाद भी ख्याति-लाभ, पूजा-प्रतिष्ठा की भावना से बहुत दूर रहने वाले सच्चे जीते जागते समयसार गुरुदेव ने रहस्य की बात निकटतम व्यक्ति को भी नही बताई, पूर्वावस्था के पुत्र-पुत्री को भी नही।

जब हम लोग महावीर जी में थे तब श्रुतसागरजी महाराज के पूर्वावस्था के पुत्री और जवाँई वहाँ आये हुए थे। उन्होंने उपाध्यायश्री से कहा- "आचार्यकल्पश्री आहार में कुछ नहीं ले रहे है, थोडा पानी दाल व एक मात्र अनार का रस लेकर बैठ जाते है। किसी को कुछ कहते भी नही है। शरीर में अभी कोई असाध्य रोग भी नही है। क्या उनका सल्लेखना का विचार है। पद्मपुरा में कुछ चर्चा आपसे हुई है क्या?"

उपाध्यायश्री ने कहा- "मुझे भी इस सबध में कुछ पता नही है। आचार्यश्री से पूछने पर पता लगेगा।"

उपाध्याय महाराज आचार्यश्री के पास पहुँचे। पूछने पर आचार्यश्री ने बताया- "श्रुतसागरजी यम सल्लेखना धारण करेंगें यह उनका पक्का सकल्प है। वैशाख में उनकी बारह वर्ष की समाधि का समय पूर्ण हो रहा है। वे दृढ़ है, वचन के पक्के हैं, पीछे हटने वाले नही है।"

आचार्य महाराज ने उनकी पुत्री को यह भी बता दिया था कि आप किसी प्रकार की चिन्ता नही करे, उनकी समाधि बहुत अच्छी होगी, यह हमारा पूर्ण विश्वास है। वे वीर पुरुष है।

आचार्यश्री के वचनों को सुनकर पुत्री के नेत्र सजल हो दुख और आनन्द की उभयरूपता से उमड़ पड़े। आचार्यकल्पश्री ने लूणवाँ पहुँचते ही एक अन्नि व एक रस आहार में लिया, पश्चात् अक्षय तृतीया के दिन अन्न का त्याग कर दूध व एक रस लिया। उसका भी त्याग कर एक रस व पानी लिया। वैशाख मास के अन्तिम दिनों में अन्न-पानी का त्याग कर, सल्लेखना धारणकर ज्येष्ठ वदी ५ दिनाक ६-५-१९८८ को प्रातः ८-३० बजे लुणवाँ अतिशय क्षेत्र पर उपवास निर्जल करके, नौवें दिन सम्यक् समाधिकर स्वर्गारोहण किया।

आचार्यश्री ने समाधि का समाचार सुनते ही कहा कि ऐसे वीर, निर्मोही, निस्पृह साधु इस काल में बहुत दुर्लभ है। आचार्यश्री ने बताया कि वे मुझसे पद्मपुरा में समाधि की पूरी चर्चा करके गये थे। सकल्प के पक्के

निकले। बारह वर्ष पूरे हाने के पूर्व ही उन्होंने अन्न-जल छोड़कर शरीर से आगम अनुसार ममत्व छोड़ दिया। ऐसी उत्कृष्ट समाधि करने वाले लौकान्तिक देवो में जन्म लेकर दूसरे भव में मोक्ष चले जाते है।

प्रकरण पर आते है। पद्मपुरा से आचार्यसघ का विहार था। उस दिन उपाध्यायश्री से आचार्यकल्पश्री श्रुतसागरजी ने एक अमिट बात कही थी- "भरतसागरजी! एक बात ध्यान रखना, "चाहे कितनी मुसीबत आये सुधारवाद के नाम पर आगमनिष्ठ बनकर रहना। आगम को मोड़ने का दु-प्रयास कभी मत करना, यह मेरा अन्तिम सदेश है।" ऐसी वीरात्माओ के लिए कोटिश नमन।

पद्मपुरा से चाकसू में जिनालय के दर्शन कर आचार्यसघ निवाई पहुँच गया।

निवाई धर्मात्माओं की धर्मप्रिय नगरी है। यहाँ आचार्यश्री का भव्य स्वागत किया गया। विशाल जुलूस मदिरों के दर्शन करता हुआ धर्मशाला में आकर ठहरा। यही पर सघ ने निवास किया। सर्दी का मौसम होनेसे आचार्यश्री का स्वास्थ्य कुछ नरम चल रहा था।

यहाँ नसियाजी के मदिर में विशाल मानस्तम्भ का अभिषेक व सहस्रनाम मंडल की पूजा आपके ही सान्निध्य में सम्पन्न हुई। संघ यहाँ एक माह ठहरा था।

आचार्यश्री के सान्निध्य में मुनि विरागसागरजी ने बालकों को धर्म-शिक्षण दिया। शिविर के माध्यम से बालक बालिकाओं में धर्मांकुर फूट पड़े थे।

महावीरजी

महावीरजी का मेला प्रसिध्द है। इस समय जैन-अजैन, मीना गुजर आदि सभी वर्ग के लोग आकर प्रभू महावीर की पूजा, भक्ति विशेष रुप से व्यक्त करते है। एक दिन मीना लोगों का और दूसरे दिन गूजर लोगों का जुलूस निकलता है। भगवान महावीर की इस रथयात्रा की शोभा देखने दूर-दूर से लोग आते है। यह मेला चैत सुदी तेरस से वैशाख वदी दूज तक चलता है।

वर्ष १९८७ का अष्टाह्निका पर्व फाल्गुन सुदी अष्टमी से पूर्णिमा तक आचार्य सघ ने पावन तीर्थ महावीरजी में किया। इस अवसर पर दिल्ली वालों की ओर से वृहद् सिध्दचक्र विधान-पूजा आचार्यश्री के सान्निध्य में कराई गई।

महावीर जयन्ती पर्व और तीर्थ पर होने वाले मेले के अवसर पर भी आचार्य सघ यहीं विद्यमान रहा। यही पर श्री ज्ञानजी मद्रास वालों ने सहस्रनाम विधान-पूजा कराई। दोनों ही पूजा-विधान में आचार्यसघ विराजमान रहता था। पूजा के सभी मत्र आचार्यश्री के मुखारविन्द से बोले जाते थे। यहाँ पर आचार्यसंघ के द्वारा काफी धर्मप्रभावना हुई।

आचार्यसंघ यहाँ करीब दो माह विराजमान रहा। आचार्य महाराज प्रतिदिन मूलनायक भगवान महावीर के दर्शन व अभिषेक देखते थे। अभिषेक देखे बिना इन्हे कभी सन्तोष नही मिलता है। यहाँ प्रतिदिन आचार्यश्री के उपदेशामृत का लाभ भी भव्यजीवो को मिला। आचार्यश्री व उपाध्यायश्री के केशलोंच भी यहाँ हुए। विविध आयोजनों के माध्यम

से महावीर जी में आचार्यसंघ के द्वारा अच्छी धर्म-प्रभावना हुई।

महावीरजी से विहार कर करौली, सरमथुरा होकर सघ धौलपुर आया। धौलपुर में आचार्य महाराज का केशलोंच समारोह विशेष धर्म-प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

आचार्यश्री ने दिगम्बर मुनिचर्या पर प्रकाश डालते हुए बताया कि जैन मुनि स्वतन्त्र चर्या करते हैं, अहिंसा धर्म की रक्षा व याचनावृत्ति को जीतने के लिए यह केशलोंच क्रिया परीक्षा की कसौटी है।

इस वैराग्य-वृत्ति को देखने के लिए कांग्रेस नेता पधारे थे। उन्होंने आचार्य महाराज को श्रीफल चढाकर नमन किया और आशीर्वाद प्राप्त किया। नेता महोदय ने कहा- "जीवन में ऐसे अद्‌भूत दृश्य देखकर मैं आज धन्य हो गया हूँ। सत्य है, दिगम्बर साधु हमारे देश की निधि है।"

कलेक्टर की पोस्ट बढ़ी

धौलपुर से आचार्यश्री विहार करते हुए मौरेना पधारे। मौरेना में आचार्यश्री के मगल प्रवेश पर स्वागतार्थ वहाँ के कलेक्टर पधारे थे। कलेक्टर ने आचार्यश्री के चरणों में नमन कर अपनी पोस्ट बढ़ने की विनती आचार्यश्री के सामने रखी।

कलेक्टर सा ने कहा- "गुरु महाराज, मेरी पोस्ट बढ़ जावे ऐसा आशीर्वाद दीजिये।"

आचार्यश्री ने कहा- "कलेक्टर साहब, आप बहुत जल्दी ऊँची पोस्ट को प्राप्त होने वाले है, ऐसा हमारी आत्मा कह रही है।" कलेक्टर ने गुरु चरणों में नमन किया और चल दिये।

आठ दिनों के बाद आचार्यश्री व उपाध्यायश्री के केशलोंच के अवसर पर वे ही कलेक्टर साहब स्वय गुरु चरणों में पधारे। उन्होने चित्राबाई का स्वागत किया तथा अपने वक्तव्य में कहा- "गुरुदेव एक महान पुरुष है। गुरुदेव वचनसिध्द महापुरुष है। मुझे महापुरुष ने कहा था-तुम्हारी पद वृध्दि शीघ्र होगी, मुझे अत्यन्त खुशी है कि गुरु आशीर्वाद से मेरा तबादला मौरेना से भोपाल हो गया है तथा पदोन्नति भी हो गई है।"

गुरु महाराज के चरणों में उन्होंने मद्य-मास व अण्डा का आजीवन त्याग कर दिया।

आचार्य महाराज के सान्निध्य में नये छात्रावास व भोजनालय का शिलान्यास मौरेना विद्यालय में हुआ।

मौरेना से सघ विहार कर ग्वालियर नगरी में आ पहुँचा।

ग्वालियर नगरी में आचार्यश्री ने सभी मदिरों के दर्शन किये।आचार्य महाराज प्रतिदिन शान्तिनाथ प्रभु के चरणों में दर्शन-वन्दन को जाते व अभिषेक देखते।

श्रुतपञ्चमी पर्व की पूजा व चातुर्मास का निश्चय यही पर हुआ। चतु सघ की सम्मति से सोनागिर सिध्दक्षेत्र पर चातुर्मास की निश्चित सम्भावना की घोषणा आचार्यश्री ने की। सघ एक माह तक यहाँ विराजमान रहा। पश्चात् डबरा होते हुए तीर्थराज सिध्दक्षेत्र सोनागिरजी आ पहुँचा।

जयपुर से सोनागिर तक लाने का भार सघपति सेठ श्री श्रीपालजी राजेन्द्रकुमार दिल्ली वालो ने लिया। उनकी

उदाहरण आदरणीय व आचरणीय हैं। आषाढ शुक्ला चतुर्दशी वी नि. सं. २५१४, सवत् १९८८ को आचार्यश्री ने चतुःसघ सहित चातुर्मास की प्रतिष्ठापना रात्रि आठ बजे की। कलश-स्थापना श्रीमती कैलाशबाई (सेठ सघपति श्रीपालजी की धर्मपत्नी व श्रीमती मधु जैन (राजेन्द्र की धर्मपत्नी) ने की। सघ में कुल त्यागी इस समय ४३ थे।

रात्रि आठ बजे आचार्यश्री ने सघपति व ग्वालियर तथा आगत समाज को सबोधन देते हुए कहा- "सिंह चार माह के लिए पिंजरे में बन्द हो गये।"

बन्धुओं, दिगम्बर साधु की सिहवृत्ति होती है। सिंह पिंजरे में रहना कभी पसन्द नही करता, वैसे ही दिगम्बर साधु स्वतन्त्र विचरण करते हुए नि शक रहते है।

आज चातुर्मास में चार माह के लिए हम साधु वर्ग पिजरे में बन्द हो चुके है। हाथी को बाँधना सरल है पर उसका निभाना अत्यन्त कठिन है।

साधु के धर्मध्यान में त्रुटि दिखे तो आप लोग मुझे आकर कहना, आपस में तनातनी नही करना। कलिकाल है चित्त चलायमान

बाहुबलीसागरजी महाराज

चैत्रवदी अष्टमी गुरुवार को आचार्यश्री के तपस्वी शिष्य बाहुबलीसागर महाराज हमारे बीच से चले गये।

बाहुबलीसागर महाराज कठोर तपस्वी, गुरुभक्त आचार्यश्री के श्रध्दालु शिष्य थे। आपकी वैयावृत्ति की कला सघ में प्रसिध्द थी। आपके समान आचार्यश्री की वैयावृत्ति आज तक कोई भी नही कर पाया। आपने जीवनकाल में कई बार ८-८, १०-१० उपवास आकुलता रहित होकर किये। आपने सचेतावस्था में शान्तिभक्ति का पाठ सुनते हुए, गुरुचरणों में सम्यक् समाधिपूर्वक स्वर्गारोहण किया।

मुनि सोमप्रभसागरजी वयोवृध्द, सरल, शान्त प्रकृति के साधु थे। आपने गुरुचरणों में णमोकर मन्त्र जपते-जपते मुस्कराते हुए सम्यक् समाधिमरण दिनाक १८-४-१९८९ को प्रात ९-४५ पर किया। आपकी समाधि होते ही आचार्यश्री के मुख से उद्गार निकले थे- "बाबा बहुत शान्त थे, कभी कोई शिकायत नही थी, गजब कर गये।"

सोनागिर सिध्दक्षेत्र पर इस वर्ष आचार्यश्री का ७३ वाँ जन्म-जयन्ती समारोह विशेष धूम-धामपूर्वक मनाया गया। जयन्ती पर विशाल रथयात्रा महोत्सव निकाला गया तथा ७३ मगलकलश लेकर सुहागन स्त्रिया आगे-आगे जूलूस की शोभा बढ़ा रही थीं। ७३ मगलदीपकों से आचार्यश्री की आरती उतारी गई।

आचार्यश्री का पाद-प्रक्षालन पूजा व आरती की गई। आगत महानुभावों को तीन दिन भोजन कराया गया। यह भोजन व्यवस्था सेठ पन्नालाल सेठी, श्रीराजेन्द्र कुमार दिल्ली, श्री अशोकजी इन्दौर व श्री सतीशजी जयपुर वालों की ओर से की गई थी।

इस पावन प्रसंग पर त्यागी व विद्वानों के विशेष उपदेश हुए। प्रवचन के विषय थे-(१) जन्म-जयन्ती पर्व क्यो? (२) आचार्यश्री की देन, (३) श्रमण संस्कृति की रक्षा कैसे हो। आदि

आगत विद्वान श्री श्यामसुन्दर जी शास्त्री, श्री नीरज जी जैन सतना, श्री मल्लिनाथ जी जैन शास्त्री, श्रेयांस कुमार बड़ौत आदि ने आचार्यश्री के प्रति पुष्पाञ्जलि अर्पित कर चिरायु होने की शुभकामना व्यक्त की।

आगत राजनेता वित्तमंत्री सोलंकी व मुख्यमंत्री जी ने आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त किया।

जैनधर्म छना-छनाया है

वित्तमत्री सोलकी जी ने अपने वक्तव्य में कहा- "जैन धर्म एक नही अनेक बार छन चुका है। इसे अब छानने की जरूरत नही है। एक नही चौबीस तीर्थंकरों ने उसे छाना है।"

आपने हिंसक-अहिंसक की परिभाषा बहुत सुन्दर शब्दों में बताई- "जो दूसरो को मिटाकर सुखी रहे वह 'हिंसक' है तथा जो दुसरों को सुखी रख उनका साथ दे वह 'अहिंसक' है। दिगम्बर जैन सन्त दूसरों को अपनी निधि बाँटने के लिए गाँव गाँव में घूम रहे है अत ये 'परम अहिंसक' है।"

सोलकी जी के हृदय में देश में फैली दुष्प्रवृत्तियो के प्रति गहरी चोट थी। उन्होंने कहा- "छोटे बच्चों को केन्सर होने से परिवार नष्ट होता है। पर अडे को शाकाहार मानने पर हमारी पीढ़ियाँ नष्ट हो जाती हैं।

"नॉलेज हमें कॉलेज में मिलता है पर गुरु चरणों में Wisdom (विवेक) मिलता है।

सन्त और धर्म अन्दर के अज्ञान को नाश करते है। विज्ञान तोड़ता है, धर्म मानव को जोडता है।"

पश्चात् मुख्यमत्री जी ने आचार्यश्री के दीर्घायु होने की मगल कामना की।

जयन्ती के पावन अवसर पर कमेटी की ओर से आचार्यश्री से वार्षिक मेला (उत्सव-सोनागिरजी का) तक यही विराजमान रहने की प्रार्थना की गई। फाल्गुन सुदी त्रयोदशी को आचार्यश्री का दीक्षा-दिवस मनाने की घोषणा भी की गई।

दीक्षा-दिवस

आचार्यश्री के जीवन में प्राय· सभी मगल कार्य इसी क्षेत्र से प्रारभ हुए तथा यही समापन भी हुए।

आचार्यश्री के व्रतों में चारित्रशुध्दि व्रत समापन होने के पश्चात् सहस्रनाम व्रत उपवास इसी तीर्थ पर पूर्ण हुआ। सहस्रनाम व्रत के उपवास पूर्ण होते ही, तीस-चौबीसी व्रत का आरभ कर विहार किया, समापन फिर यही हुआ। इस चातुर्मास में तीस-चौबीसी व्रत के ७२० उपवास आपने पूर्ण किये तथा कनकावली व्रत चन्द्रप्रभ भगवान की साक्षी से ग्रहण किया।

व्रतों के समापन की खुशी में भक्तों ने सहस्रनाम मडल विधान, तीस-चौबीसी विधान की पूजा की।

फाल्गुन शुक्ला त्रयोदशी से पूर्णमासी तक आचार्यश्री का ३७ वाँ दीक्षा-दिवस विशेष समारोह के साथ सोनागिर सिध्दक्षेत्र पर मनाया गया।

इसी अवसर पर आगत विद्वद् वर्ग श्री प लालबहादुर जी शास्त्री, श्री सत्यन्धर कुमारजी सेठी पंडित श्री

राजकुमारजी शास्त्री व श्री उत्तमचन्दजी राकेश ने तप व वैराग्य की महिमा पर प्रकाश डाला।

इसी पावन अवसर पर जैन मिशन का अधिवेशन हुआ। इस प्रसग में आचार्यश्री के सान्निध्य में उनके आदेश से निम्न प्रस्ताव पास किये गये-

(१) सोनागिर सिध्दक्षेत्र पर होने वाले किसी भी मेला (उत्सव) में अंडे-शराब, लहसुन, प्याज आदि अभक्ष्य वस्तुएँ नहीं बेची जायेंगी।

(२) जैन उत्सव होने के नाते रात्रि में क्षेत्र पर फलाहार मात्र बिकेगा। अन्नाहार बेचने वाले को दडित किया जायेगा।

कमेटी के मंत्री ने स्वीकृति दी तथा जनता ने हर्ष से ताली बजाकर प्रस्ताव पास की स्वीकृति प्रदान की। दीक्षा उत्सव सफल रहा।

सोनागिर हीरक जयंती...

आचार्यश्री का ७४ वां जन्मदिवस सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर...

पावन तीर्थराज पर आचार्य श्री का ७४ वा जन्म-दिवस विशेष धार्मिक कार्यो और विशेष सकल्पो पूर्वक धूमधाम से मनाया गया। इस पावन अवसर पर समिति के अध्यक्ष आर के जैन साहब बम्बई ने आचार्य श्री का ७५ वा जन्म दिवस हीरक-जयन्ती महोत्सव के रूप में मनाने का निर्णय लिया। जैन-समाज ने आपके इस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत किया। तभी समिति के सदस्यों ने आचार्य श्री के कर-कमलो मे "अभिवन्दन ग्रन्थ" शीघ्रातिशीघ्र समर्पण करने का भी निर्णय लिया। सभी कार्यक्रमों मे पारसजी गंगवाल का सभा सचालन उनका अनुशासन भक्तो के लिये अनुकरणीय रहा।

आर्यिका स्याद्वादमती ने आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के चरणारविन्द मे "हीरक-जयन्ती" महोत्सव के अवसर पर आचार्य प्रणीत प्राचीन, ७५ आर्ष ग्रन्थों को प्रकाशित कराने का संकल्प लिया।

आचार्य का ७५ वां जन्म-दिवस "हीरक-जयन्ती" महोत्सव का परिधान धारण कर सामने आया। विशेष-विशेष कार्य इस अवसर पर हुए। आचार्य प्रणीत करीब ४० ग्रन्थो का विमोचन आचार्य श्री के पावन कर-कमलो द्वारा हुआ।

७६ वे जन्मदिवस पर १५ ग्रन्थों का विमोचन हुआ। अभी तक करीब ७० ग्रन्थों का प्रकाशन आचार्य श्री के आशीर्वाद व उपाध्याय श्री के निर्देशन में हो चुका है।

पहला स्वाध्याय

आचार्यश्री ने अपने जीवन में सर्वप्रथम आदिपुराण का स्वाध्याय किया था। आदिपुराण में सस्कारों का जितना सुन्दर वर्णन है उतना ही सस्कारों का प्रभाव आज उनके जीवन में देखा जाता है।

आचार्यश्री ने सर्वप्रथम पार्श्वनाथ स्तोत्र का पाठ सीखा था और प्रतिदिन करते थे। पश्चात् भक्तामर स्तोत्र व एकीभावस्तोत्र में आपकी प्रारम्भ से रुचि रही।

वैराग्य का बीज

भगवान शान्तिनाथ जी की पूजा आपके वैराग्य का बीज रही। 'प्रभो आपने सर्व के फंद तोड़े' शान्तिनाथ भगवान चक्रवर्ती, तीर्थंकर कामदेव होकर भी षट्खड की विभूति छोडकर त्याग-मार्ग में लग गये, फिर मैं क्यों ससार के चक्र में पड़ूँ।

आपकी दूसरी प्रिय पूजा थी चन्द्रप्रभ भगवान की -

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा, निवारे भलिभाँति सभी कर्म फदा।
सो चन्द्रप्रभनाथ तौ सो न दूजा, करूँ जानके नाथ की पाद पूजा।।

आपने बताया कि आज लोग पूजा प्राय तो करते ही नही है अथवा जो करते है वे भी नयी राग-रागिनियों में मस्त हो जाते है, पुरानी पूजाओं में कितना रहस्य भरा हुआ है। आपने बताया कि मै सदैव सस्कृत में लिखी देव-शास्त्र-गुरु की पूजा करता था। उस पूजा में अरहत देव, चौबीस तीर्थंकर, जिनवाणी और गुरु का जैसा महिमापूर्ण चित्रण है वैसा कही नही मिलता।

गुरुओं का वर्णन जब उसमें आता था, वत्ताणुट्ठाणे-मुनि कैसे होते है जो आतापन आदि योग धारण करते है, नीरस-सरस आहार लेते है, एक करवट से सोते है आदि-आदि तब हमारे मन में उस मुनिपद को धारण करने की तीव्र भावना, ललक पैदा होती थी। जिनपूजा करने से पुण्य बढ़ता है और परिणामों की निर्मलता होते ही सवर और निर्जरा होती है।

डॉक्टरी जाँच

छात्र जीवन की एक घटना बताते हुए एक दिन आचार्यश्री ने अपनी बात कही थी .

"एक बार हम चार मित्र कही गये थे। जाते-जाते सध्या हो गई। तीन मित्र सुरक्षा के लिए पुलिस थाना में बैठ गये, वही रात बिताई और मै पर्वत पर चढ़ गया।

रात बीती। हम लोग चारों दोस्त मिले। पुलिस थाना में हम चारों की डॉक्टरी जाँच की गई।

डॉक्टर ने हमारा हार्ट देखा, देखते ही उसने कहा- "इस छात्र का हार्ट बहुत मजबूत है।"

"मुझे कभी किसी का भय नही लगता है।"

॥वात्सल्यरत्नाकर॥
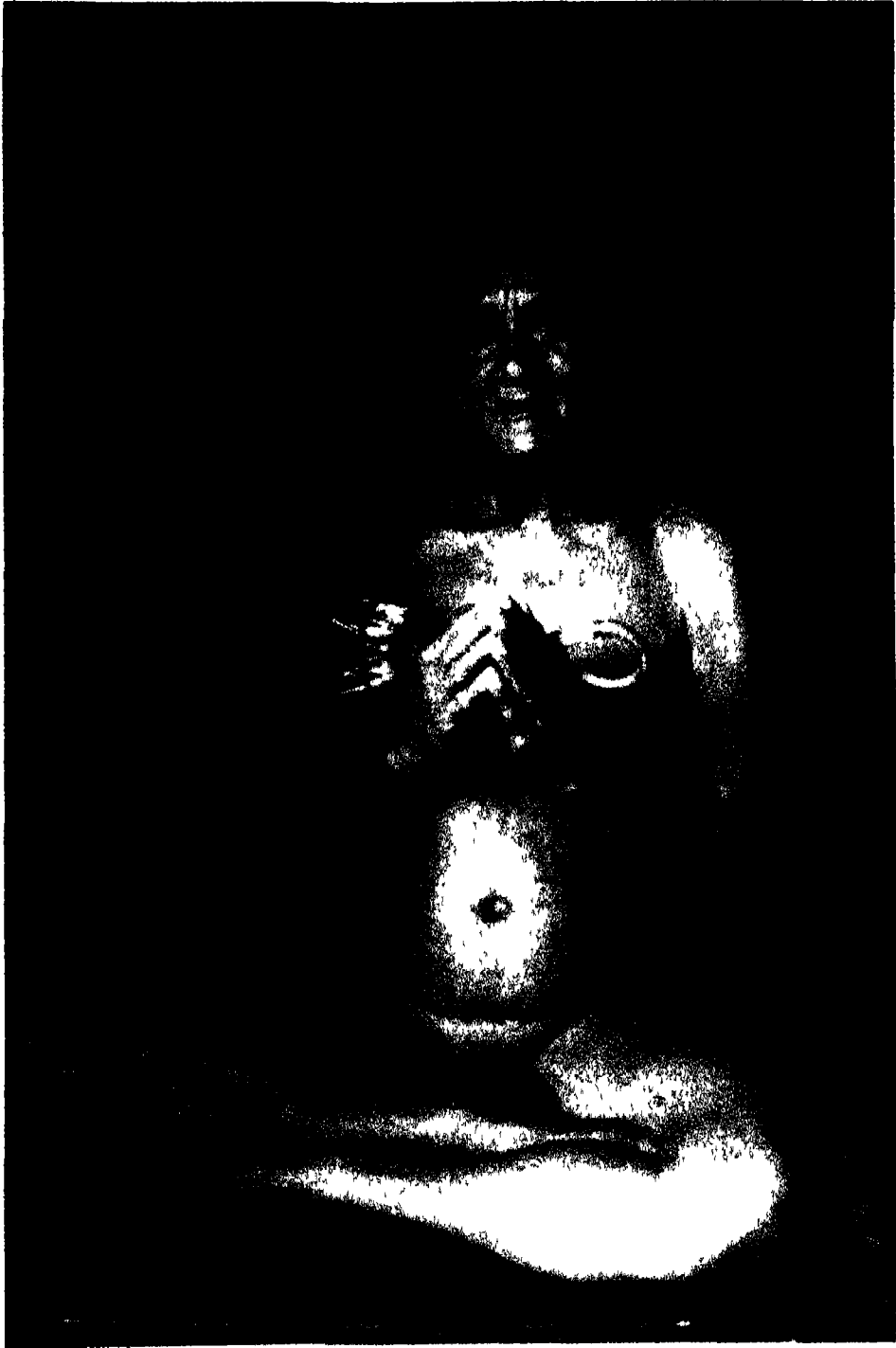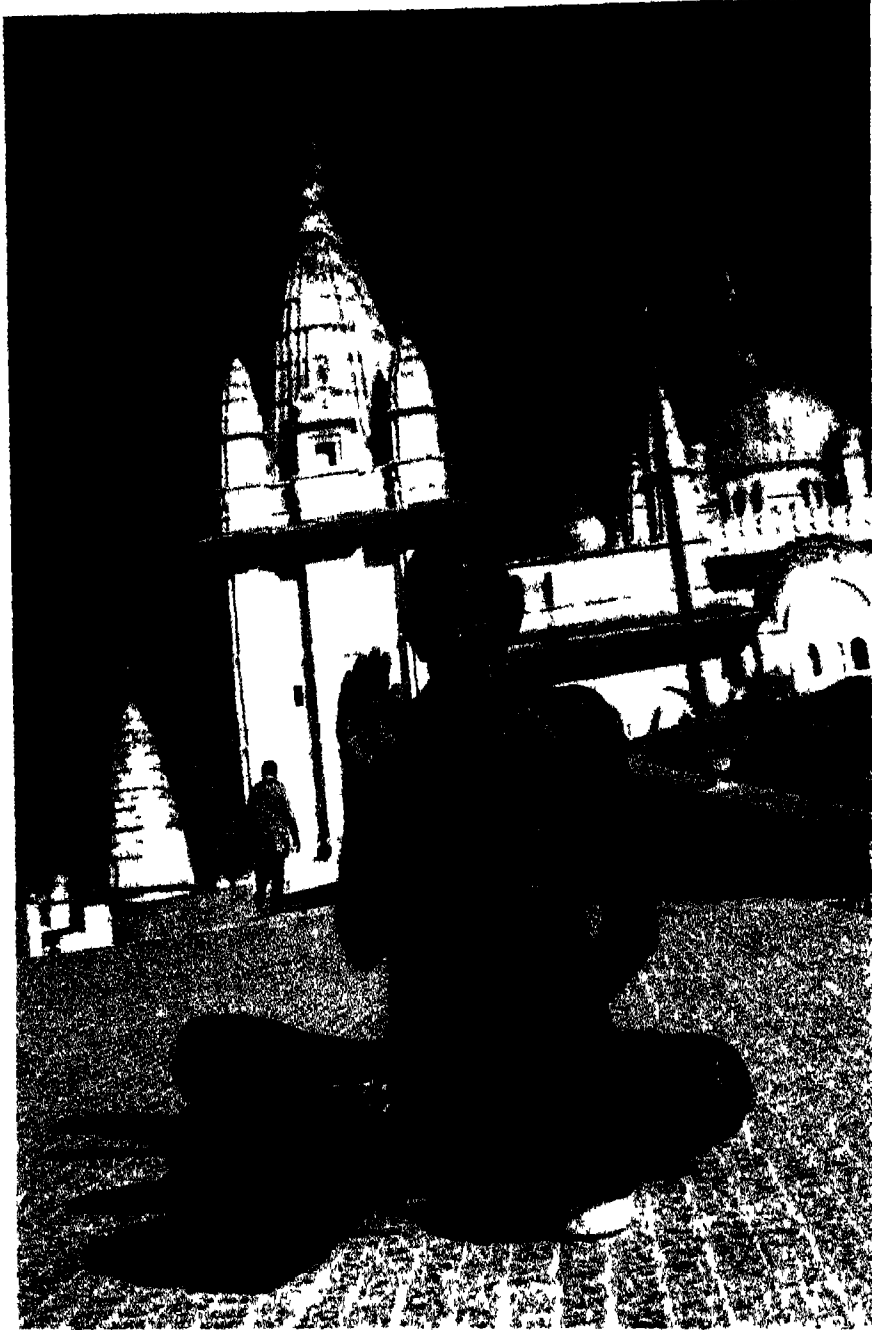
सोनागिरी से सम्मेदशिखर की ओर

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ससंघ... सोनागिरी से सम्मेदशिखर की ओर

धर्म यात्रा के बढ़ते चरण...

२९ नवम्बर १९९१ को आँचार्य श्री विमलसागरजी महाराज सघ का २८ त्यागियों के साथ तीर्थराज श्री सम्मेद-शिखर की ओर विहार हुआ, यह विहार अद्‌भुत था। सघपति लाला श्री श्रीपाल जी के सुपुत्र श्री भाई राजेन्द्र बाबू व पुत्र वधू मधुदेवी ने सघ के साथ रहने का सकल्प लिया। विहार के समय हजारो की सख्या में जनता सोनागिर तीर्थ क्षेत्र पर उमड़ पडी।

सभी ने दोनों की भावभीनी बिदाई की। आचार्य श्री की जय-जयकार से नभोमडल गूज उठा।

दोपहर ठीक २ बजे सघ का विहार अनतनाथ मदिरजी से हुआ। बुन्देलखड की यात्रा करते हुए विहार का मार्ग तय हुआ था। तद्‌नुसार झासी होते हुए सघ सर्व प्रथम अतिशय क्षेत्र करगुंवाजी पहुचा।

करगुवाजी अतिशय क्षेत्र झासी से ५ कि मी दूर है। यह क्षेत्र सावलिया पार्श्वनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। तीर्थंकर पार्श्वनाथजी की मनोज्ञ प्राचीन प्रतिमा भव्यो के मिथ्याधकार को दूर करने वाली है। यहाँ सघ ७ दिन रहा व अपूर्व धर्म प्रभावना हुई।

सघपति श्री राजेन्द्र जी व मधुदेवी जी चतुर्थकालवत् संघ के विहार व सेवा मे सतत लगे रहे। यहाँ से विहार कर सघ पवाजी सिद्धक्षेत्र पहुचा। यहाँ ५ जिनालय हैं। गुफा में भगवान नेमिनाथ जी, अजितनाथ जी, पार्श्वनाथ जी, आदिनाथ जी व सभवनाथ जी की सातिशय मनोहर मूर्तियाँ हैं। ऊपर पहाड़ी पर सुवर्णभद्रादि चार मुनियो के चरण विराजमान हैं। पावन सिद्धक्षेत्र की वन्दना कर सघ आगे बढ़ा।

खनियाधाना जैन नगरी में तीर्थंकर आदिनाथ एव भरत-बाहुबली की विशाल प्रतिमाए हैं। नगरी का बच्चा-बच्चा धर्म से ओतप्रोत है, गुरुभक्ति मे लीन है। अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। सघ को एक दिन रहना था पर भव्यो के भाग्य से प्रकृति ने अपना रूप बदला, असमय में बादलो ने वर्षा प्रारम्भ कर दी, सघ यहाँ तीन दिन रहा। संघपतिजी का फूल मालाओं से खूब स्वागत हुआ।

यहाँ से संघ गोलाकोट अतिशय क्षेत्र पर जा पहुंचा। यहां ऊपर पहाड़ी पर विशाल जिनालय है। आदिनाथ भगवान की मूलनायक प्रतिमाजी अति प्राचीन है। संघपति जी, आचार्य श्री के साथ-साथ पहाड़ी पर चढ़ रहे थे। मधुदेवी तो अपनी कोमल काया के ममत्व को भूल ही चुकी थी। नंगे पाँव पहाड़ी पर चढ़ी जा रही थी। श्री आदिनाथ भगवान के शिखर पर ध्वजा चढ़ा कर मधुजी ने महान पुण्योपार्जन किया। यह क्षेत्र प्राचीन है। क्षेत्र के

जीर्णोद्धार की आवश्यकता समझ राजेन्द्र जी ने विशेष दान देकर अपनी चचला लक्ष्मी का सदुपयोग किया।

यही नीचे गूलर नाम का ग्राम है जहाँ श्री १००८ अभिनन्दन नाथ भगवान की प्रतिमाजी अति प्राचीन व मनोज्ञ है।

श्रमण संस्कृति के बोलते शिल्प...

गूलर से विहार कर सघ सर्वप्रसिद्ध प्राचीन चौबीसी अतिशय क्षेत्र श्री चन्देरीजी पहुँचा। यहाँ की प्राचीन चौबीसी पद्मासन मे पंच रंगों में, तीर्थंकरों के स्वाभाविक शारीरिक रगो के अनुसार विराजमान है। यहाँ दर्शन करते ही मन को अपूर्व शान्ति मिलती है। यहाँ मूलनायक तीर्थंकर अजितनाथ जी की प्राचीन मनोज्ञ प्रतिमाजी व गर्भकल्याणक का दृश्य भी रमणीय है।

चन्देरी से २ कि मी की दूरी पर खण्डारजी अतिशय क्षेत्र बहुत प्राचीन है। इसका जीर्णोद्धार आवश्यक है। विशाल जिन बिम्बो के जीर्णोद्धार के लिए सघपति जी ने विशेष सहयोग दिया। आचार्य श्री, उपाध्याय श्री के उपदेश से भव्यजीवों ने तीर्थ की महानता को जानकर चचला लक्ष्मी का त्याग किया। अत्यधिक धर्मप्रभावना हुई।

चन्देरी से अतिशय क्षेत्र थूबोन जी के लिए सघ का विहार हुआ। थूबोन जी की विशाल-विशाल जिन प्रतिमाऐ मनोज्ञ हैं। संघपति जी तो हर्षोल्लास से नाच ही उठे थे। प्रत्येक प्रतिमाजी के अभिषेक करके अपने आप को धन्य समझने लगे। आपके मुँह से बार-बार एक ही शब्द निकलता रहा- "आचार्य श्री आपके पुण्य से ऐसे तीर्थों के दर्शन कर मै धन्य हो गया।"

पावन तीर्थराज पर २६ जिनालय है। अभिषेक करने मे सीढियो के अभाव मे अति कठिनाई होती है। अत उदारमन राजेन्द्र बाबूने सभी मदिरो मे दोनो ओर सीढियाँ लगवाने की अपनी ओर से स्वीकृति दी व १४ न मदिर श्री आदिनाथ जिनालय के शिखर पर अपनी ओर से स्वर्ण कलश चढ़ाने की स्वीकृति देकर अपने जीवन पर त्याग का शिखर चढ़ाया है। धन्य है पचम काल मे ऐसे नररत्नो को जिनका पैसा तीर्थों की रक्षा व गुरु सेवा मे लगता है।

थूबोन जी से देवगढ़ जाने के लिए कच्चा रास्ता था। साधुओं को कठिनाइयो का सामना करना पड़ा। नदी को पार करने मे वृद्ध त्यागियो को विशेष कठिनाई हुई पर सभी के मन प्रसन्न थे। चारित्र-चक्रवर्ती ग्रन्थ देखने पर ज्ञात होता है कि आचार्यश्री शान्तिसागर जी महाराज अपनी गृहस्थावस्था मे मुनियो को कन्धो पर बैठाकर दूधगगा-वेदगगा नदियाँ पार कराते थे। वही दृश्य आज था। अनेको भक्तगण त्यागियो को हाथ पकड़ कर कन्धे पर बैठाकर विशाल नदी पार करवा रहे थे। साय ५ बजे पानी मे भीगते हुए त्यागीगण दि ३.१ ९२ को देवगढ़ अतिशय क्षेत्र पर पहुचे।

देवगढ़ जैन सस्कृति कला का एक महान तीर्थ है। यहाँ कलाकारो की कला ने मूर्त रूप लिया है। ऐसा प्रतीत होता है मानो कलाकारो ने अपनी-अपनी कला से पाषाण को भी जीवन्त करने का प्रयास कर सफलता प्राप्त की है। मुनि श्री सुधासागर जी ने जीर्णोद्धार का महान कार्य करवाकर जैन तीर्थ रक्षा का अपूर्व कार्य किया है।

इस तीर्थ का देवगढ़ यह नाम अति सार्थक है। यह देवों का गढ़ है। कुल ४२ जिनालय अभी बनकर तैयार हुए हैं उनमें भी इतने देवाधिदेव हैं कि एक-एक दाना चावल चढ़ाया जावे तो भी देवो की गिनती नही हो सकती। शेष यत्र-तत्र बिखरे हुए जिनबिम्ब भी असंख्य ही हैं। दूसरी बात गोम्मटसार ग्रन्थ मे चतुर्थ गुणस्थानवर्ती को भी एकदेश जिन कहा है। उसी सिद्धात को सामने रखकर यहाँ चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अविरत सम्यग्दृष्टि से लेकर व्रती श्रावक-श्राविका, क्षुल्लक, ऐलकजी, आर्यिका, मुनि, उपाध्याय, आचार्य, अरहन्त व सिद्ध सभी की प्रतिमाए उकरी हुई मिलती है इसलिए भी क्षेत्र का नाम देवगढ़ सार्थक है।

मूलनायक श्री शान्तिनाथ जी भगवान की खड्गासन प्रतिमाजी मनोज्ञ है साथ ही तेईस पार्श्वनाथ मदिर भी अपने आप में आकर्षक है। इनके अलावा-यक्षिणी सहित तीन चौबीसी के दर्शन मनोहर व आकर्षक हैं। पंचबालयति की विशाल प्रतिमाऐं तो अनुपम हैं ही जो अन्यत्र मिलना ही दुर्लभ है। भरत चक्रवर्ती की नवनिधियाँ देखने योग्य हैं।

दिवारों पर सुन्दर चित्रकारी में प्रथमानुयोग के मनोरम दृश्य उकरे हुए हैं जो कि जैन संस्कृति कला के अद्भुत नमूने हैं। पचपरमेष्ठी भगवन्तों की मुद्रा सहित मनोज्ञ प्रतिमाए, धर्मशाला के मंदिर में अतीव आकर्षक हैं। अब तो बोलता देवगढ़ सबको अपनी ओर खीच रहा है। भव्यात्मा को एक बार अवश्य दर्शन करना चाहिए।

आनन्द और उत्साह की धर्म गंगा...

सघपति जी ने इस पावन क्षेत्र पर अपनी ओर से एक मंदिर के जीर्णोद्वार की स्वीकृति देकर पुण्योपार्जन किया। आचार्य श्री के उपदेशामृत से अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। कमेटी के सदस्यो ने सघसचालिका व राजेन्द्र जी तथा मधुदेवी का फूल-माला से स्वागत कर अभिनन्दन किया। तीन वदना करके आचार्य श्री सघ सहित विहार कर दि ८ १ ९२ को धर्म नगरी ललितपुर पहुचे।

ललितपुर नगरी पंडित, विद्वान व त्यागियों की नगरी है। ललित का अर्थ ही सुन्दर है। यहाँ के नरनारियो की आत्मा धर्मरूपी श्रृगार से सुन्दर नजर आती है अत यह ललितपुर धर्मपुरी नगरी है। हजारो नर-नारी आचार्य श्री, उपाध्याय श्री के दर्शन को उमड़ पड़े। चारो ओर धर्म की वर्षा हो रही थी। यहाँ के विशाल जिनालय जैन सस्कृति की धरोहर है। एक-एक मदिर मे पचासों वेदियाँ हैं। जो पूर्वजों की धार्मिक भावना का प्रतीक है।

यहाँ क्षेत्रपाल अतिशय क्षेत्र पर सघ तीन दिवस रहा। मूल वेदी के नीचे क्षेत्रपाल विराजमान है इसलिए क्षेत्र का क्षेत्रपाल नाम पड़ा होगा यह सभी की अपनी मनोकामना पूर्ण करती है। मंदिर में अतिशयकारी अभिनन्दन भगवान की मनोहर प्रतिमा मनहर है। गुफा में प्राचीन प्रतिमाएं भी दर्शनीय है।

हजारों नर-नारी की भीड़ उमड़ पड़ी थी क्षेत्रपाल की ओर। कारण था- आचार्य श्री, उपाध्याय श्री व अन्य मुनिराजो का केशलोंच समारोह। केशलोंच के इस वैराग्यमयी दृश्य को हजारों नर-नारी एकटक नयन लगाकर देख रहे थे। विशाल वैराग्यमयी सभा का प्रारंभ ब्र बहन प्रभाजी के मंगलाचरण द्वारा हुआ। स्थानीय पं श्री राकेशजी ने केशलोंच के महत्व पर प्रकाश डालते हुए चित्रा बाई जी व संघपति जी के उदार जीवन पर प्रकाश डाला। आपने बताया कि राजेन्द्र बाबू का जीवन हम लोगों के लिए एक दर्पण है, हमारे लिए एक महान शिक्षा है। इसी मंगल अवसर पर अनेकों जीवों की आँखें चित्राबाई जी व संघपति जी को देखने के लिए लालायित हो

उठीं। समाज ने सभी का फूलों की माला पहनाकर स्वागत किया व जीवन का सार क्या है इसे समझने का प्रयास किया। इस समय सघपति जी की पुत्री सोनिया जी भी साथ में थी। कोमल काया, ठडी का मौसम, कभी जमीन पर पैर नही रखने वाली सोनिया ने भी तपस्वियो की सगति पाकर तपस्या का पाठ सीखा। श्री राजेन्द्र बाबू ने कड़ाके की ठंडी में आचार्य श्री से नियम लिया-जब तक मै सघ के साथ रहूगा ऊनी वस्त्रो को ओढ़ने व पहनने का त्याग है। यह है त्याग का प्रभाव। अन्त मे उपाध्यायश्री-आचार्यश्री के प्रवचनो के पश्चात् मगल णमोकार की ध्वनि, कायोत्सर्ग पूर्वक सभा का विसर्जन हुआ।

ललितपुर से विहार कर दि १४१ ९२ को सघ सैरोनजी तीर्थक्षेत्र पर पहुचा। विशाल उन्नतकाय तीर्थंकर शान्तिनाथ जी की प्रतिमा का सघपति जी ने जोड़े से मनो दूध, दही, घी, शक्कर, केशर से अभिषेक किया। गंधोदक की नदी ही बह चली। क्षेत्र पर तीन दिन तक आचार्य श्री उपाध्याय श्री के प्रवचनो से आस पास की जैन-अजैन जनता बहुत प्रभावित हुई सबने अपने शक्ति अनुसार नियम-व्रत लिए।

सैरोनजी से विहार कर सघ अतिशय क्षेत्र श्री बानपुर पहुचा। क्षेत्र पर श्री शान्तिनाथ-कुन्थनाथ-अरहनाथ भगवान की सातिशय प्रतिमाए है। सघपति जी ने पचामृत अभिषेक व शान्ति धारा करके महापुण्योपार्जन किया।

त्याग की गौरव गाथा...

सघपति जी ने पैसे को पानी की तरह बहाया। उनका एक ही उद्देश्य था साधुओ को किसी भी तरह कष्ट नहीं होने पावे। दो-दो तीन-तीन बार रास्ता देखने आगे जाते थे, चाय-पानी का तो जगल मे कहाँ ठिकाना था। पर चेहरे पर जरा भी उदासी नही नजर आती थी, सदैव प्रसन्न मुद्रा। आपने आचार्य श्री से नियम लिया-मै सघ में रहूँगा तब तक एक समय भोजन करुँगा, पाँच दिनो मे एक दिन दाढ़ी बनाऊगा। क्या ऐसा सघपति अन्य कही नजर आयेगा। शायद नही। आचार्य श्री, उपाध्याय श्री तो बार-बार एक ही बात कहते है-इतने वर्षो मे ऐसा उदार और सरल तथा छ छ महिनो साथ रहने वाला सघपति हमे आज तक नही मिला। सच है "न धर्मो धार्मिकि बिना"। छ माह तक मानो फूलो की तरह हथेली पर रखकर सघ को तीर्थराज पर लाये है। इन निकट भव्यात्माओं की महिमा कौन गा सकता है।

दि २४.१ ९२ को सघ टीकमगढ़ पहुच गया। टीकमगढ़-सघस्थ वयोवृद्ध मुनिराज श्री अरहसागर जी महाराज की जन्मभूमि है। यहाँ मदिरजी मे पद्मासन श्यामवर्ण तीर्थंकर पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा विशाल व मनोज्ञ है। हजारो नर-नारी आचार्य श्री के दर्शन को लालायित थे। गुरु उपदेशामृत सुनकर सबकी लम्बे समय की प्यास को विराम मिला।

इसी नगरी मे दि २५.१ ९२ माह वदी षष्ठी के दिन आचार्य श्री १०८ महावीर कीर्ति महाराज का समाधि दिवस धूमधाम से मनाया गया। आचार्यश्री व उपाध्यायश्री तथा अन्य त्यागीवर्ग व विद्वानो ने आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज की कठोर साधना पर प्रकाश डाला। ५ घन्टे तक सभा चलती रही। अपूर्व धर्म प्रभावना हुई।

टीकमगढ से ४ कि. मी दूर मनोरम अतिशय क्षेत्र पपोराजी है। पपोराजी एक रमणीय प्राचीन अतिशय क्षेत्र है। यहाँ के विशाल उन्नत काय जिन मदिरो मे प्राचीन प्रतिमाओ के दर्शन करते ही अनुपम शान्ति मिलती है।

यहाँ कुल ७७ मंदिर हैं। सबकी अपनी विशेषताएं हैं, अनुपम छटा है। मदिर नं १ मे तीर्थंकर आदिनाथ जी की प्राचीन प्रतिमा गोमुख यक्ष व चक्रेश्वरी यक्षी सहित सातिशय लिए विराजमान है। यहाँ गुफा मे १५०० वर्ष प्राचीन भगवान आदिनाथ जी की पद्मासन प्रतिमाएं भी है। चन्देलो के मंदिर में सिंहनी आकर १ वर्ष तक रही थी ऐसा सुना जाता है। इसी के साथ यहाँ का रथाकार मंदिर भी आकर्षक है।

पपौराजी के मन्त्री जी ने आचार्य श्री से प्रार्थना की- "गुरुदेव! पिछले अनेकों वर्षो से हम परेशान हैं। पार्श्वनाथ जी मदिर का शिखर नहीं बन पा रहा है। आचार्य श्री के वचन थे- 'घबराइये नहीं बहुत जल्दी बन जायेगा।' कुछ ही क्षण मे गुरुभक्त संघपति जी व चिन्तामणि जी तथा गिरराज जी इन तीनो ने मिलकर शिखर बनवाने की स्वीकृति प्रदानकर दी। आचार्य श्री के सानिध्य मे शिखर का शिलान्यास हुआ, बहुत धर्म प्रभावना हुई। महापुरुषो के निमित्त से बिगड़े हुए कार्य भी क्षण भर मे बन जाते है इसमें कोई आश्चर्य नही।

वृद्धजनो से सुना गया कि यहाँ की बावड़ी से पहले यात्रियों को मनचाहे बर्तन मिलते थे। कल्पवृक्ष के समान बावड़ी भाजनाग जाति के कल्पवृक्षवत् लोगो को इच्छित बर्तन देती थी। परन्तु लोभ से लाभ क्षय को प्राप्त होता है तदनुसार एक लोभी व्यक्ति बावड़ी से बर्तन निकालकर घर ले गया पुन. बावड़ी में नही डाले। तभी से बावड़ी का अतिशय समाप्त हो गया। सत्य है लोभी जीवों की प्रवृत्ति बड़े-बडे अतिशयो को समाप्त कर देती है। उपाध्याय श्री कहा करते हैं, 'लाभ मे लोभ न हो गया तो भला है, यदि लाभ में लोभ आ गया तो पतन होगा।'

तीन दिन तक चतु संघ ने तीर्थ क्षेत्र की वंदना की और आगे बढ़े।

पुण्यार्जन का शैलाब

मगल वेला मे आचार्य सघ का आहारजी अतिशय क्षेत्र पर पदार्पण हुआ। मौसम सुहाना था। तीर्थंकर शान्तिनाथ-कुन्थनाथ-अरहनाथ की उन्नत प्रतिमाओ के दर्शन करते ही सभी त्यागियो की थकावट दूर हो गई। दर्शन करते ही सबने परम शान्ति का अनुभव किया।

आचार्य श्री के विशाल सघ के दर्शनो को जनता उमड़ पड़ी। आचार्य श्री ने भव्य जीवो को उपदेश दिया तथा आहारजी क्षेत्र की पूज्यता अतिशयता की रोचक घटनाओ को सुनाया। आचार्य श्री ने अपने उपदेश मे कहा- "इस क्षेत्र पर एक मुनिराज का आहार १२ वर्षो के बाद निरन्तराय हुआ तभी से इस क्षेत्र का नाम आहारजी पड़ गया।" घटना इस प्रकार है- "एक भव्यात्मा ने अपनी पत्नि को पूछे बिना दिगम्बर मुनि दीक्षा ग्रहण की। पत्नि मोह से विव्हल हो मरकर व्यन्तरी बनी। पूर्व बैर के कारण महाराज को आहार के समय विघ्न उत्पन्न करने लगी। रोजाना मुनिराज अन्तराय करके भूखे ही लौट आते। पानी मिले तो भोजन नही, भोजन मिले तो पानी नही। बारह वर्ष व्यतीत हो गये। मुनि श्री विहार करते हुए इधर ग्राम मे आ पहुंचे। नगर सेठ को मुनिराज के उपसर्ग की घटना जानकर बड़ी वेदना हुई। सेठजी के घर में चैत्यालय था। उन्होंने नगर वासियों व परिवारजनो को आदेश दिया कि आज महाराज जी आहार की चर्या को आवे तो जब तक आहार पूर्ण नहीं हो जावे हम सभी लोग णमोकार मन्त्र का जोर-जोर से उच्चारण करें।

पुण्योदय से सेठजी ने नवधाभक्ति पूर्वक पड़गाहन किया। चारों ओर णमोकार मन्त्र की ध्वनि गूंज रही थी। वह व्यन्तरी ऊपर से आने को तैयार हुई तो जिनदेव का मंदिर था। अत: उसका वश नहीं चला चारो दिशाओं

में उसने प्रयत्न किया परन्तु उसके सारे प्रयास आज व्यर्थ हुए। कारण कि यह अकाट्य नियम है कि जितने क्षेत्र मे णमोकार मन्त्र की ध्वनि गूंजेगी उतने में व्यन्तर का प्रभाव नही हो पाता। थककर व्यन्तरी लौट गई। बारह वर्षों बाद इस पावन क्षेत्र पर मुनिश्री का आहार निरन्तराय हुआ। नभ मे जय-जयकार गूज उठा। तभी से इस नगर का नाम आहारजी पड़ गया।''

आचार्य श्री ने इस पावन अतिशय क्षेत्र की दूसरी चमत्कारी घटना सुनाते हुए बताया कि-''पाणाशाह'' रागा के व्यापारी थे। वे मनों रांगा खरीदकर इस मार्ग से जा रहे थे। पाणा का मन मुड़ मुड़कर इसी गाँव को देख रहा था। उन्हे ऐसा महसूस हुआ मानों हठात् कोई उन्हे यहाँ रोक रहा है। वे रुके। रागा का थैला खोला। आश्चर्य में डूब गये। यह तो चादी है। यह कैसे? दूसरा थैला खोला। यह भी चादी है। सब थैलों मे चांदी ही चादी नजर आ रही है।

''पाणाशाह'' सज्जन पुरुष थे। सोचा-व्यापारी ने भूल से चादी तोल दी है। चलो वापिस दे आता हूँ। बातचीत के दौरान व्यापारी ने कहा मेरे दुकान मे १५ दिनों से चादी है ही नही। मैंने तो रागा ही दिया है। पाणा ने सब थैले खोले-वहाँ हताश हो चुप बैठ गया। चमत्कार था कि सब मे रागा ही रागा नजर आया। ''पाणा'' चल दिया घर की ओर। आहारजी आते ही वही पूर्ववत स्थिती बनी। पुन व्यापारी के पास गया। वहाँ जाते ही रागा था। तीन-चार बार इस प्रकार चमत्कार देख पाणाशाह ने विचार किया यह अतिशय इसी भूमि का है जो मुझे विशाल जिन मदिर निर्माण की ओर इगित कर रहा है। यह धन मेरा नही इसी भूमि का है, इसी को अर्पण करता हूँ। चांदी को बेचकर जितना धन कमाया सारा धन यहाँ के विशाल पावन मदिर बनवाने में लगा दिया।

यहाँ श्री १००८ भगवान शान्तिनाथ जी की २१ फुट ऊँची अखण्ड शिला मे निर्मित वि स १२३७ की प्रतिष्ठित भव्य सातिशय प्रतिमा एव उनके दोनो पार्श्व भागो मे श्री १००८ भगवान कुन्थनाथ एव अरहनाथ के ११-११ फीट उत्तुग प्रतिबिंब शोभायमान हैं तथा इसी मदिर की परिक्रमा मे भूत भविष्यत वर्तमानकी त्रिकाल चौबीसी और विद्यमान बीस तीर्थकरो के चैत्यालयो की भव्य रचना भारत मे अद्वितीय है। भोवरा मे बाहुबली, वर्द्धमान, मेरु, चन्द्रप्रभ, पार्श्वनाथ एव महावीर मदिर, युगल मानस्तभ, संग्रहालय, पचपहाड़ी के निर्वाणस्थल पर चरण चिन्हो के कूट आदि दर्शनीय है।

आचार्य श्री ने अपने प्रवचन मे एक विशेष बात बतायी कि उस समय पचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर बावन मन काली मिर्च खर्च हुई थी, इतनी सख्या मे यात्री थे।

संघ यहाँ तीन दिन रहा। सघपति जी ने धूम-धाम से बड़े वैभव के साथ तीनो दिन पचामृत अभिषेक धर्मपत्नि सहित किया। माघवदी चतुदर्शी के दिन श्री आदिनाथ प्रभु का निर्वाण दिवस धूमधाम से मनाया गया। मोतीचूर के लड्डू चढाकर सेठजी ने जीवन को धन्य बनाया। सच है बिना पुण्य के ऐसे अवसर प्राप्त नही होते। बहुत धर्म प्रभावना हुई।

आहारजी से सघ बड़ागाँव पहुचा। यहाँ जैनो के बहुत घर है। यहाँ के निवासियो का कथन है-गुरुदत्त महाराज यहीं के निवासी थे तथा यही से मुक्त हुए अत कोई इसे सिद्धक्षेत्र भी मानते है। परन्तु प्राकृत निर्वाण काण्ड गाथा के अनुसार द्रोणगिरि से गुरुदत्त मुनि मुक्त हुए-

फलहोडी बड़गामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरि सिहरे।
गुरुदत्तादिमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं॥नि का॥

प्रकृति का मनोहारी प्रांगण...

दि. ६ २.९२ को संघ द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र पर पहुंचा। मनोरम क्षेत्र का प्राकृतिक सौन्दर्य कण-कण से सिद्धो की अनुपम शान्ति बिखेर रहा है। पर्वतराज पर सीढ़ियों से चढ़ना होता है। पर्वत पर कुल २८ जिनालय है। प्रत्येक जिनालय में प्रशान्त वीतराग प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं। अंतिम मंदिर में गुरुदत्त महाराज का जीवन पाषाण पर उकरा हुआ है। सुन्दर चित्रावली दर्शनीय है। पास ही विशाल गुफा में गुरुदत्त महाराज के चरण चिन्ह है। दर्शन करते ही अपूर्व शान्ति का अनुभव होता है। संघपतिजी पानी का बड़ा सिर पर रखकर पर्वत राज की ओर आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के साथ आगे बढ़ते जा रहे थे व मधुजी दूध का घड़ा हाथ में लिए पर्वतराज पर चढ़ रहीं थी। कहीं मान-सम्मान अभिमान की झलक नजर नहीं आती थी। जिनेन्द्रदेव के अभिषेक के लिए दोनो दल-बल सहित बढ़ रहे थे। प्रत्येक जिनबिम्बों का उत्साह पूर्वक अभिषेक कर दोनों ने अपूर्व पुण्य कमाया। चतुर्विध सघ के सानिध्य में यह अभिषेक बड़े धूमधाम से हुआ। सभी त्यागीगण ने अभिषेक मस्तक पर लगाकर कर्ममल का प्रक्षालन किया। यही पडित श्री धर्मचंद जी शास्त्री जी ने पधारकर अपूर्व लाभ लिया। पडितजी ने स्तूप की रचना व भिन्न-भिन्न मूर्तियो की कलाकारी के सम्बन्ध में सभी को जानकारी दी। यहाँ पर्वत राज पर एक गोल स्तूप है जिसमे कुल "९६" मूर्तियाँ है। वह प्राचीन कला का एक अनुपम नमूना है। "९६" मूर्तियाँ किस अपेक्षा से है इसका निर्णय नहीं हो पाया।

नीचे तलहटी मे दो जिनालय हैं। आश्रम मे श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा जी व चौबीसी के दर्शन अति मनोहर है। यहाँ तीन दिनों तक श्री जी का महाभिषेक एवम् आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के प्रवचन हुए। आचार्य श्री ने गुरुदत्त महाराज पर सिह द्वारा किये जाने वाले घोर उपसर्ग का वर्णन करते हुए बताया है कि "भव्यात्माओं! कभी भी किसी के साथ बैर भाव मत करो। एक बार बैर बंध गया तो भव-भव मे दु:ख देता है। गुरुदत्त महाराज ने राजा की पर्याय मे पूजा की शान्ति के लिए गुफा मे स्थित सिंह को जलवाया था, उस बैर के कारण सिंह ने भी कपिल ब्राम्हण पर्याय प्राप्त कर गुरुदत्त को मुनि पर्याय में ध्यानस्थ देख सेमर की रुई चारो ओर लगाकर आग लगाकर घोर उपसर्ग किया। गुरुदत्त मुनि को ध्यान के प्रभाव से केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया।

उपाध्याय श्री ने जिनाभिषेक के महत्व पर प्रकाश डालते हुए बताया कि अभिषेक करने से पापों का प्रक्षालन होता है, परिणामों की विशुद्धि होती है तथा जो जिन देव का अभिषेक करता है उसका भी पाण्डुक शिला पर अभिषेक होता है। यहाँ से विहार कर संघ नैनागिरि जी के दर्शनार्थ आगे बढ़ चला।

दि. १३.२.९२ को विहार करता हुआ आचार्य संघ नैनागिरि सिद्ध क्षेत्र पहुँचा। यह अति रमणीय है। प्राकृतिक छटा चारों ओर बिखर रही है। यहाँ श्री पार्श्वनाथ प्रभु का समवसरण आया था। पार्श्व प्रभु के समवसरण मे वरदत्त इन्द्रदत्तादि पाँच राजा दीक्षित हुए तथा इसी पावन क्षेत्र से मुक्त हुए। यहाँ कुल ५३ जिनालय हैं। पर्वत की चढ़ाई बहुत सरल है। पर्वत पर ३९ मंदिर हैं तथा नीचे १४ जिनालय हैं। ३४ नं मंदिर में वरदत्त मुनिराज की खड्गासन मूर्ति अति आकर्षक, प्राचीन व मनोज्ञ है तथा ३९ नं. मंदिर की पार्श्व जिन की खड्गासन प्रतिमा,

वर्तमान चौबीसी तथा वरदत्त, मेघदत्त, गुणदत्त व मुनीचन्द्र दत्त जी की खड्गासन प्रतिमा दर्शनीय है। यहीं के मंदिर न ४२ मे प्रभु पार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा भी अति मनोज्ञ प्राचीन व मनोहर है। तीन दिन तक संघ यहाँ रहा, आचार्य श्री का उपदेशामृत पान कर भव्यात्माओ ने व्रतादि ग्रहण किये।

बड़े बाबा की ओर बढ़ते पग...

नैनागिरि से बम्हौरी, बकस्वाहा, सादपुर, हटा आदि ग्रामो मे त्याग तपस्या का बिगुल बजाते हुए, धर्म की मधुरिम वर्षा करते हुए सघ आगे कुण्डलपुर बडे बाबा के पावन तीर्थपर पहुँचा गया। कुण्डलाकार कुण्डलपुर का भव्य सौन्दर्य, ऊँची पहाड़ी मानो पुकार-पुकार कर बुलाती सी नजर आती है। चढ़ना-उतरना, आगे चलो, पीछे चलो जहाँ भी पग बढ़े प्राचीन जिनालय जिनबिम्बो का दर्शन कर आनन्दाश्रु छलछला उठते है। तालाब की शीतल लहरों की ठंडी हवा का आनन्द लेता हुआ पथिक आगे बढता है। पहला श्री आदिनाथ मदिर है, आगे खड़ी चढ़ाई से सांस भरने लगती है पर ऊपर चढने के बाद प्रभु के दर्शन करते ही सारी थकान विलय हो जाती है। प्रत्येक दर्शनार्थी मदिर न २३ की प्रतीक्षा करता हुआ उल्लास से आगे बढ़ता जाता है। श्रीधर केवली के प्राचीन चरणों के दर्शन कर आत्मिक शान्ति प्राप्त करता है। अन्दर प्रवेश करते ही बड़े बाबा की भव्य आकर्षक मूर्ति के दर्शन करते ही दर्शक चित्रलिखित सा, स्तब्ध सा-रह जाता है। किकर्तव्यविमूढ़ सा भावविभोर हो अपूर्व शान्ति, तुष्टि का अनुभव करता है। चारो ओर दर्शनार्थियो की भीड नजर आती थी। उतरते वक्त श्री महावीर स्वामी का जल मदिर सारी थकान को दूर कर मन को प्रफुल्लित तरोताजा बना देता है। नीचे के मंदिरो मे भी प्रत्येक जिनबिम्ब आकर्षक, मनोहर व पापपक का प्रक्षालन करने वाले अनुपम अलौकिक दर्पण है। इस मगलबेला के ईष्ट सयोग के मध्य अचानक इष्ट वियोग का अवसर सामने आ खडा हुआ। समाचार मिले शिक्षा गुरु आचार्य श्री १०८ श्रेयाँससागर जी महाराजकी हालत गभीर है। मन उद्विग्न था, असख्य वेदना थी वही सहन नही हो पा रही थी कि तत क्षण समाचार मिला गुरुदेव की समाधि हो गई। यकायक विश्वास नही हो पाया अतः फोन तार से समाचार मगवाने का आश्वासन करुणामूर्ति आचार्य श्री, उपाध्याय श्री ने दिया और कुण्डलपुर जी से विहार हो गया।

मझगुवा पहुचे ही थे कि श्री आचार्य श्रेयाँससागर जी महाराज की समाधि का पत्र सामने था। पढ़ते ही मन उदास हो गया। आचार्य श्री-उपाध्याय श्री सारा सघ स्तब्ध सा रह गया। अचानक यह क्या हुआ। खैर, आयु समाप्त होने पर कोई किसी को रोक नही सकता। आचार्य श्री के सानिध्य मे सर्व सघ ने सिद्ध-श्रुत-योग-आचार्य भक्ति पूर्वक शान्ति भक्ति कर आचार्य श्री को श्रद्धाजंलि अर्पित करते हुए समाधि क्रिया सम्पन्न की। "हटा" पहुचकर शोक सभा की गई। सैकड़ो नर-नारी इस समय उपस्थित थे। आचार्य श्रेयाँससागर जी महाराज की कठोर तपश्चर्या का वर्णन सुनकर सभी को आश्चर्य हो रहा था। आचार्य श्री के मुख से यही निकला था- "एक महान् आर्षमार्गी कठोर साधु हमारे बीच से चल बसा, उसकी पूर्ति इस युग में होना अति कठिन है।" अन्त मे सभी ने नौ बार णमोकार मन्त्र का स्मरण करते हुए भावभीनी श्रद्धाजंलि अर्पित की।

हटा मदिर जी से विहार कर आचार्य सघ गैसाबाद, अमानगंज आदि शहरों में धर्मप्रभावना करता हुआ धर्मनगरी गुनौर की ओर बढ़ा।

आवार्यश्री सोनागिरजी पहाड़ पर।

सोनागिरी से सम्मेदशिखरजी की ओर आचार्यश्री सघसहित
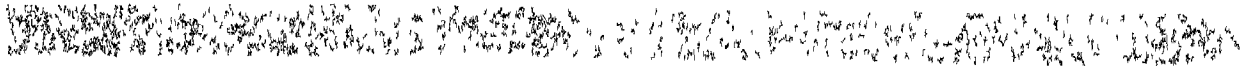
आचार्यश्री सोनागिरजी की वदना करते हुए।

आचार्यश्री सोनागिर तीर्थ वदना करते हुए
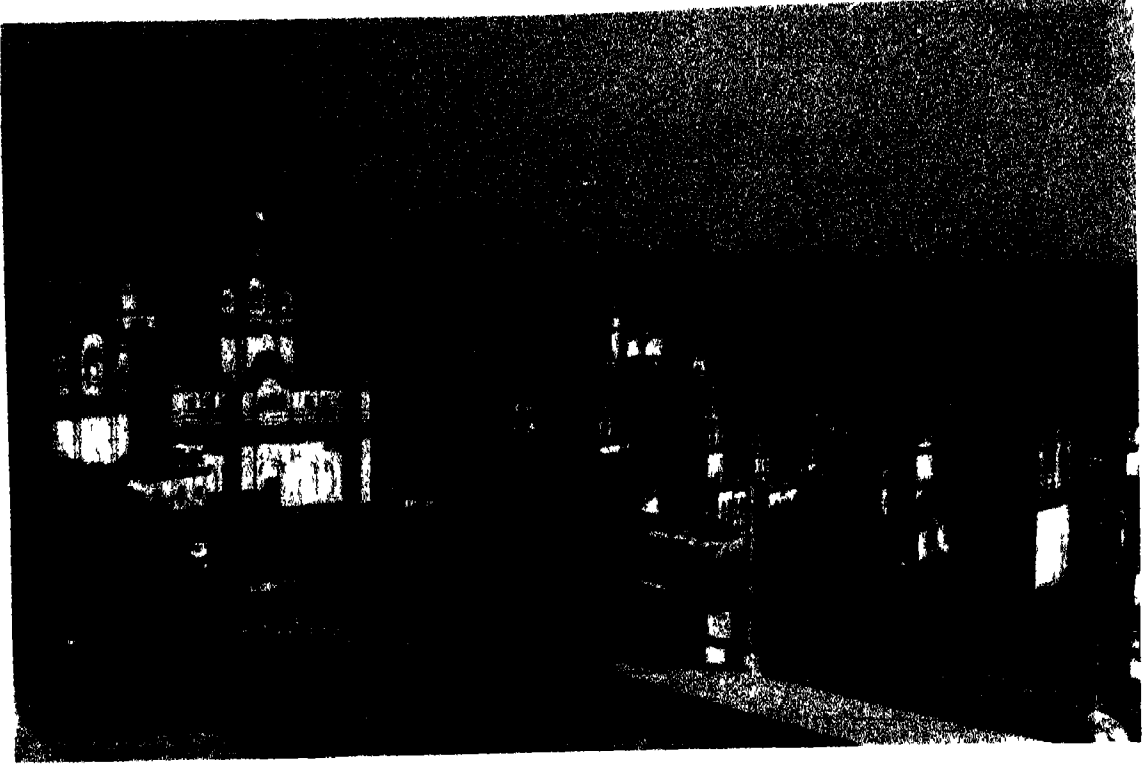
सोनागिर सिद्धक्षेत्र, आचार्यश्री वदना करते हुए।

सोनागिर से सम्मेदशिखरजी आचार्यश्री का आशीर्वाद लेते हुए श्री व श्रीमती आर के जैन, बम्बई।

सोनागिर से सम्मेदशिखरजी पदविहार में स्थान स्थान पर आचार्यश्री संघका स्वागत।

सोनागिर से सम्मेदशिखरजी प्राचीन मूर्ति व शिल्पकला का अवलोकन करते हुए आचार्यश्री

श्री नीरज जैन सतना परिचय दे रहे है

सोनागिर से सम्मेदशिखरजी पदविहारमे स्थान स्थान पर आचार्यश्री सघका स्वागत

सोनागिर से सम्मेदशिखरजी पदविहार म एक नगर मे भगवान का नित्याभिषेक पूजन मे आचार्यश्री सघ सहित साथ मे है सघपति श्री आर के जैन और उनकी धर्मपत्नी

आचार्यश्री गधोदक देते हुए

गिरीराज श्री सम्मेदशिखरजी का रमणीय पहाड़ जहाँ पर आचार्यश्री संघ सहित दर्शनार्थ पधारते हुए।

आचार्यश्री संघसहित पार्श्वनाथ टोक (सम्मेदशिखरजी) पर

सम्मेदशिखरजी पहाड़ से उतरते हुए आचार्यश्री संघसहित
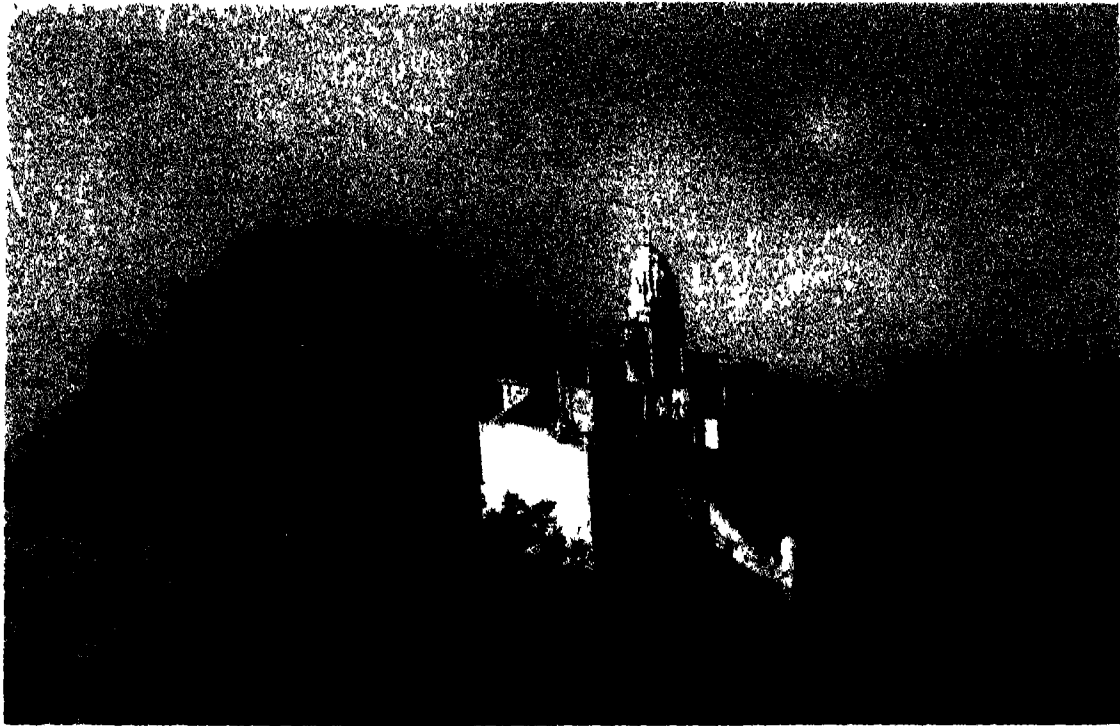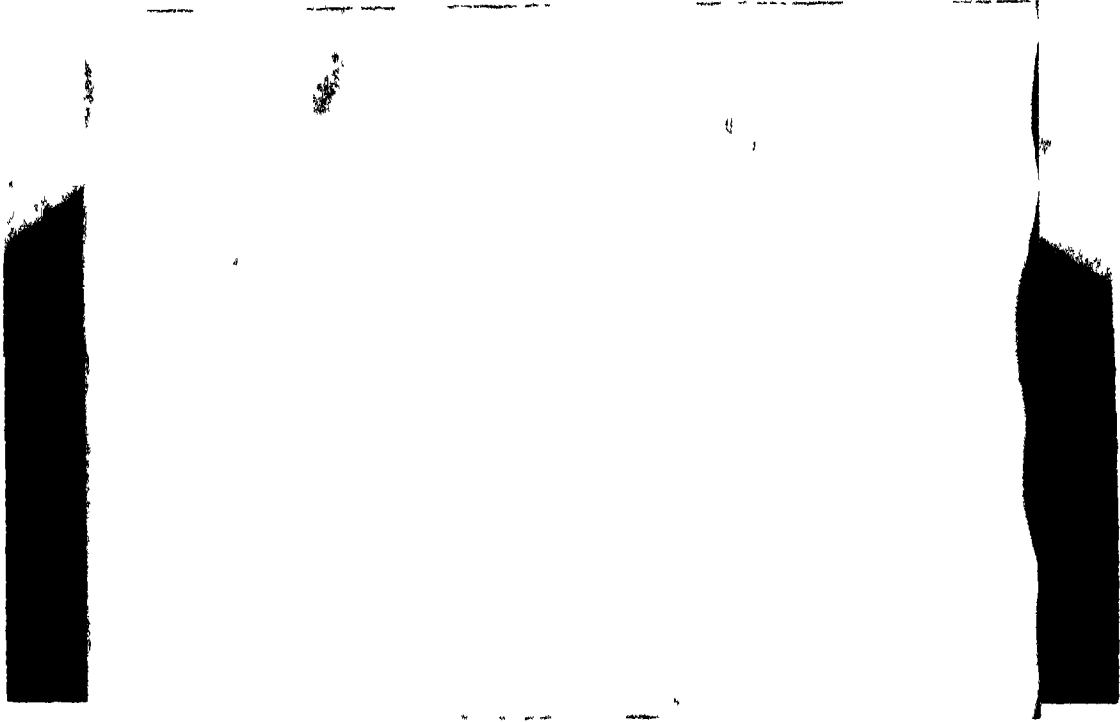
सम्मेदशिखरजी तीर्थ की अनुपम छवि।
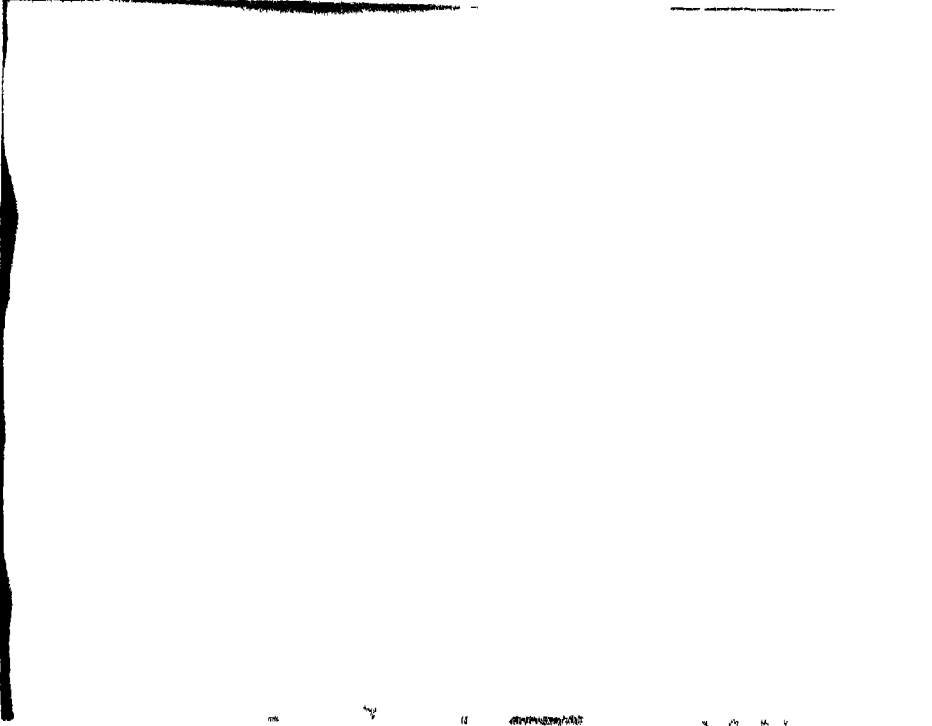
गिरिराज सम्मेदशिखरजी, पार्श्वनाथ टोक
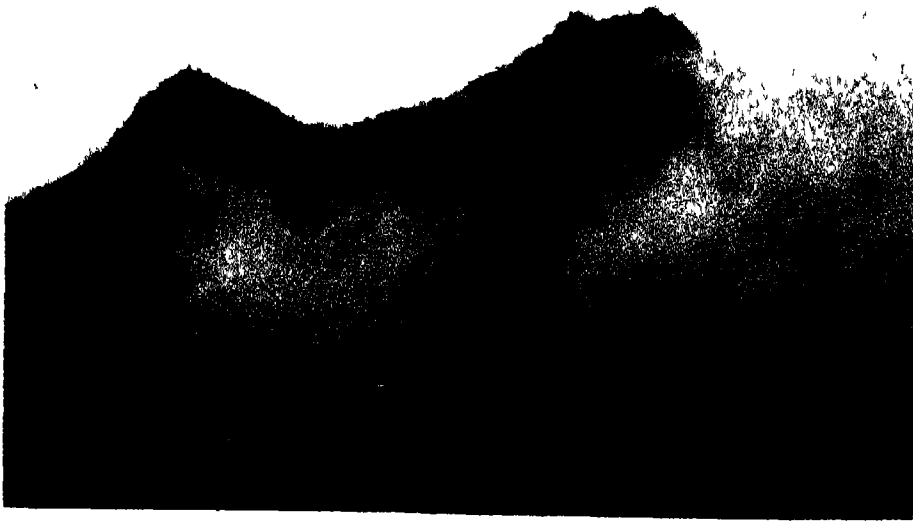
गिरिराज सम्मेदशिखरजी, वर्षाऋतु मे
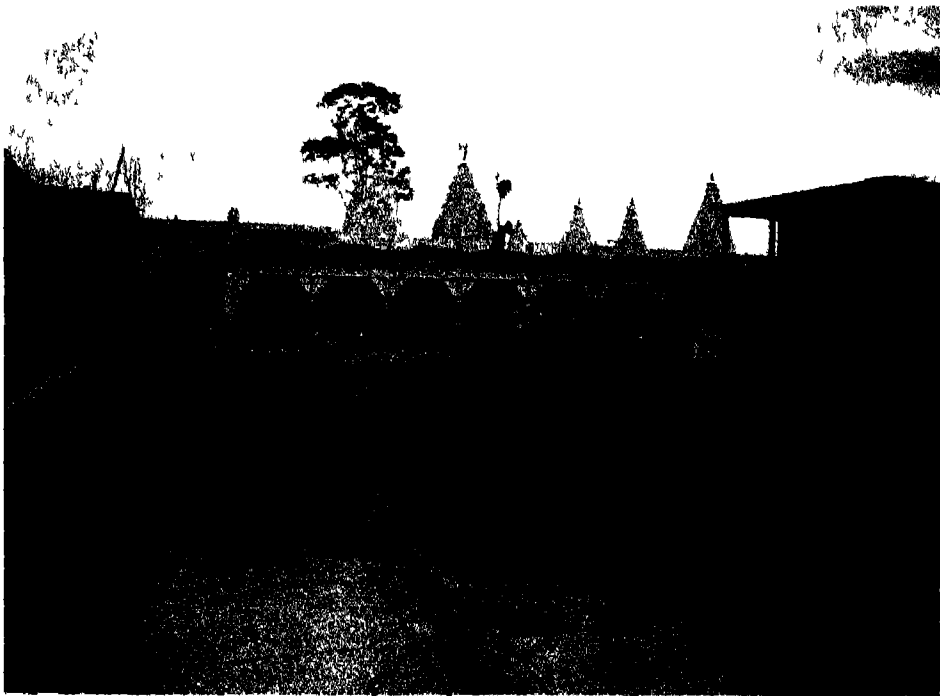
गिरीराज सम्मेदशिखरजी, बीसपथी कोठी दिगबर जैन मदिर जहाँ पर आचार्यश्री सघसहित विराजमान है (१९९३)।
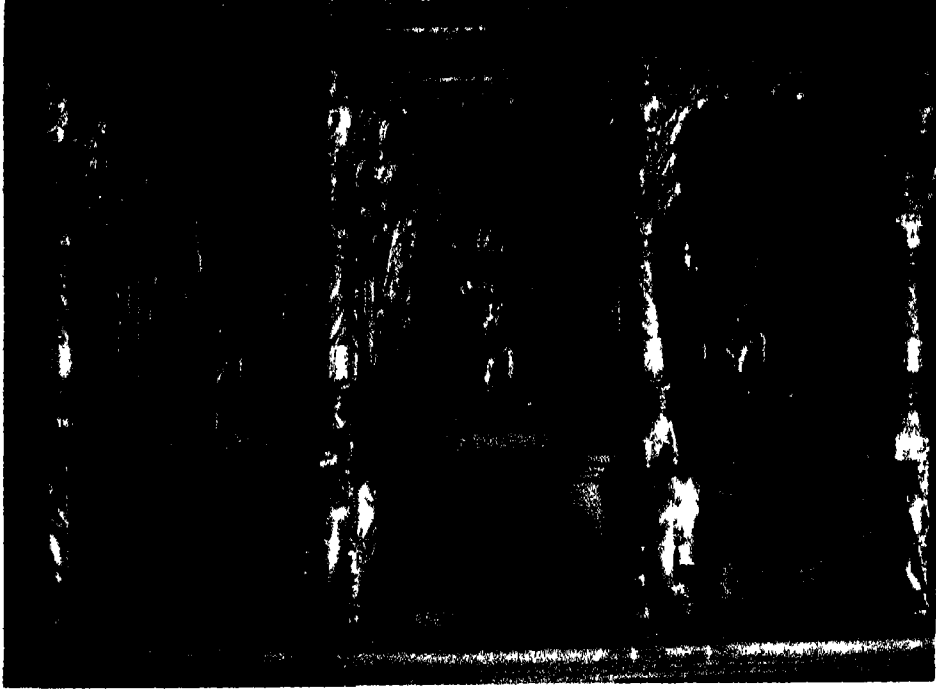
श्री सम्मेदशिखरजी (बीसपंथी कोठी) जिनमंदिर।

आचार्यश्री संघसहित प्रतिक्रमण करते हुए।

इस ग्रथ के फोटोग्राफर श्री अविनाश मोतीचन्द मेहता को आचार्यश्री आशीर्वाद देते हुए

"वात्सल्य रत्नाकर" ग्रन्थ का अतिम प्रूफ का अवलोकन करते हुए उपाध्याय श्री भरतसागरजी,
आर्यिका श्री स्याद्वादमतीजी, ब्र प्रभा पाटनी एव श्री भरतकुमार काला

आचार्यश्री आशीर्वाद मुद्रा मे (सन् १९६९, सम्मेदशिखरजी)।

गुनौर का बच्चा-बच्चा आचार्य श्री के दर्शन को पलक-पावड़े बिछाये प्रतीक्षा कर रहा था। सारी नगरी दुल्हन की तरह सजी हुई थी। बेण्ड-बाजो की मधुर ध्वनि व फूलों की वर्षा करते हुए जय-जयकार के नारो की गूज से नभोमंडल गुंजायमान हो रहा था। हजारों नर-नारी स्वागत में खड़े थे। कुंवारी कन्याएं मंगलदीप लेकर आरती करते चल रही थी, सुहागन स्त्रियों के माथे पर मंगल कलश शोभायमान थे। गुनौर की धर्मप्रेमी जनता गुरुदेव के गुणों को गुनगुनाती हुई अपने नगर में ले गई। पग-पग पर विशाल दरवाजे बने हुए थे। घर-घर पर आचार्य श्री व उपाध्याय श्री का चरण-प्रक्षालन हुआ व मंगल आरती उतारी गई। ऐसी प्रतीत हो रहा था मानो गुनौर का चप्पा-चप्पा, प्रकृति, पशु-पक्षी सभी आनंद मे झूम रहे थे।

गुनौर नगरी में आचार्य श्री का ३९ वर्ष पूर्व चातुर्मास हुआ था। उस समय अजैन-जैन सभी बन्धुओं मे धर्म का बीज बोकर आचार्य श्री विहार कर गये थे। आज मानो अपनी हरी भरी खेती को देखने के लिए इनका पुन पदार्पण हुआ।

आचार्य श्री संघ सहित यहाँ तीन दिवस रहे। प्रथम दिन सतना से पधारे नीरज जी व निर्मलजी ने आचार्य श्री की महिमा व उनके चमत्कारिक जीवन के सम्बन्ध में बताते हुए कहा कि आचार्य श्री विमलसागर जी जैसा करुणावान, वात्सल्यमूर्ति साधु इस युग मे मिलना अति कठिन है। गुनौर में आचार्य श्री द्वारा स्थापित स्कूल मे हाल की कमी थी उसकी पूर्ति संघपति जी व चित्राबाई के तथा समाज के सहयोग से हुई। आचार्य श्री के सानिध्य मे हाल का शिलान्यास हुआ।

आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के मगल प्रवचनों को सुनकर सैकड़ो नर-नारियो ने रात्रि भोजन त्याग किया व अजैन बन्धुओ ने मद्य-मॉस मधु का त्याग किया। सत्य है सन्तो की वाणी ही भटके जीवों को सन्मार्ग पर ला सकती है- 'सन्त न होते तो जल जाता संसार।' गुनौर की जनता ने सघपति जी का भव्य अभिनन्दन किया तथा सघपति जी ने भी गुनौर समाज की धार्मिक भावना की भूरि-भूरि प्रशसा की। युवा संगठन के लिए हार्दिक धन्यवाद दिया। सघपति जी ने जनता को सबोधित करते हुए धर्मप्राण जनता को एक मगल प्रेरणा दी वह यह कि-''आप लोग सभी अपनी कमाई का दसवा हिस्सा दान करो'' गुरुदेव के इस उपदेश को पालने वाला कभी भी दरिद्री नही होता। अपूर्व धर्मप्रभावना के बाद तीसरे दिन अश्रुपूरित नेत्रों से जनता ने आचार्य सघ की बिदाई की।

गुनौर से सघ सीरा पहाड़ (श्रेयाँसगिरि) की ओर विहार कर गया। मार्ग अति कठिन था। कच्चा मार्ग था, चलते जाइये पता नही लगता कितना मार्ग तय हो गया। खेतों को पार करते हुए सघ बढ़ता चला जा रहा था। गेहूँ व चना के खेत झूम-झूम कर मानो निर्ग्रन्थ सन्तो का स्वागत ही कर रहे थे। हरी-हरी बड़ी-बड़ी गेहू की बाली के मध्य पगडंडी से विहार करते हुए आचार्य श्री व उपाध्याय श्री का कंचनमय शरीर मानों पन्ना की हरी-हरी आभा से कांतिमान हो रहा था। ऐसा लगता था मानो सोने में पन्ना जड़ा गया हो। खेतों का प्रात कालीन मनोरम दृश्य ही अपूर्व था।

मंगल बेला में दि. ९.३.९२ को प्रातः श्रेयाँसगिरि पहुंचे। आचार्य श्री-उपाध्याय श्री पर्वतराज की ओर चढ़ रहे है। ऊपर पर्वत की चोटी पर संघपति खड़ें हुए भक्ति में तल्लीन हो आचार्य श्री का जय-जयकार कर रहे हैं। यह दृश्य भी मनोरम था। पर्वत की चढ़ाई अति कठिन है। घना जंगल व चढ़ाई को देखकर उपाध्याय श्री

ने सहसा प्रमुदित हो कर कहा-यह तो पूर्व में कोई सिद्ध क्षेत्र ही रहा है, ऐसा लगता है। यहाँ की गुफाएं तपस्वियों की साधना स्थली की प्रतीक हैं। धीरे-धीरे आगे बढ़ते कदम पर्वत पर चढ़ गये। प्रथम मंदिर जी में भगवान महावीर जी की प्राचीन पद्मासन सातिशय मूर्ति का दर्शन कर सबकी थकान दूर हो गई। संघपति जी ने जिनदेव का अभिषेक किया। दूसरे मंदिर में दीवार की ऊँचाई पर भगवान पार्श्वनाथ जी की खडगासन प्रतिमाजी हैं तथा तीसरे मंदिर मे पुनः श्री महावीर जी हैं व चौथे मंदिर मे श्री आदिनाथ जी की मनोज्ञ लाल पाषाण की पद्मासन प्रतिमाजी है। आगे फिर चढ़ाई और कठिन है। गिरनार पर्वत की चौथी टोक का स्मरण दर्शक को यहाँ चढ़ते ही अवश्य होता है। वृद्ध त्यागियों को पकड़कर चढ़ाया गया। श्री पार्श्वनाथ जी की भव्य प्रतिमा के दर्शनकर सभी लोग नीचे उतर गये। आचार्य श्री के शिष्य विरागसागर जी महाराज ने पिछले वर्ष, पावन भूमि पर चातुर्मास कर जीर्णोद्धार का कार्य करवाया है। श्री महावीर भगवान की मूर्ति पर काफी धूल चढ़ी थी, भील लोग अपनी मनोकामना यहाँ आकर पूरी करते थे। वे इन्हें अपना देव मानकर सिन्दूर आदि पोत दिया करत थे। मुनि विरागसागर जी जब यहाँ पहुंचे वीतराग प्रभु की यह अवस्था उनके लिए असह्य हो गई और भव्यात्माओ मे एक नयी लहर पैदा हो गयी। अभी पर्वत पर कार्य चालू है। यहाँ १००८ श्री मल्लिनाथ भगवान का निर्वाण लड्डू चढ़ाया गया। उपाध्याय श्री ने क्षेत्र की पूज्यता, महानता का वर्णन करते हुए कहा- "तीर्थ हमारी धरोहर है। प्रत्येक धर्मस्नेही का कर्तव्य है कि अपनी कमाई का दसवां हिस्सा सीरा पहाड़ के जीर्णोद्धार मे लगावे।" अपनी अचल सम्पत्ति की रक्षा करने मे अचल सिद्धावस्था का ही रिजर्वेशन हो जाता है। आचार्य श्री ने भी भव्यों को 'तीर्थ की रक्षा हमारी रक्षा है' ऐसा कहकर सच्चे मार्ग की ओर प्रेरित किया। निर्वाण लड्डू जबलपुर वाले सेठ श्री ज्ञानचन्द जी व उनके परिवार ने विशेष भक्ति पूर्वक चढ़ाया। संघपति जी ने क्षेत्र कमेटी को आश्वासन दिया कि क्षेत्र के जीर्णोद्धार में मैं अधिक से अधिक सहयोग दूँगा।धन्य है सघपति जी की उदारता। न्याय से अर्जित किया धन ही शुभ कार्यों में लगता है। श्रेयासंगिरि से गुनौर-ककरहेटी होता हुआ सघ "जनवार" नाम के छोटे गाँव में आया। इतने बड़े संघ के आहार व ठहरने की व्यवस्था कहाँ हो। कोई स्कूल नही। जैनियों का नाम नहीं। सघपति चिन्तित थे। पर पुण्य से क्या नही होता? गाँव के पटेल के सात पुत्र थे, बड़ा परिवार बड़ा घर। सबने अपने अपने मकान खाली कर दिये। सघपति जी ने जनवार की समस्त अजैन समाज को स्नेह से भोजन कराया। ३०० व्यक्तियों का जीमन उस दिन आपकी तरफ से हुआ।

> "दातारों का मजा इसी मे खाने और खिलाने में,
> कजूसो का मजा इसी में जोड़-जोड मर जाने में।"

दोपहर ठीक तीन बजे आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के मगल प्रवचन हुए। सभी लोगों ने मद्य-मांस मधु का त्याग किया। आचार्य सघ के विहार में नगर के पटेल एव उनकी पत्नी, पुत्र व पुत्रवधूओं तथा अन्य ग्रामवासियों सहित बहुत दूर तक साथ-साथ नगे पैर चले। सत्य ही है यह मेरा, यह तेरा ऐसी भावना छोटे पुरुषों की ही होती है। महापुरुष उदारचरित्र होते हैं उनके लिए समस्त पृथ्वी उनका परिवार है।

शुभ दिन की प्रतीक्षा मे पन्ना के नर-नारी उत्कंठित हो पलक-पाँवड़े बिछाये थे। स्वागत की बड़ी भारी तैयारियाँ चल रही थीं। आचार्य श्री के शिष्य श्री मुनि विरागसागर जी पन्ना में विराजमान थे। आचार्य श्री का ३९ वाँ दीक्षा दिवस मनाने की धूमधाम से तैयारियाँ चल रही थी। मुनि श्री विराग सागर जी ने आचार्य श्री एवं उपाध्याय

श्री का नत मस्तक हो अभिनन्दन किया। प्रातः की मंगल बेला में गुरु-शिष्य का मधुर-मिलन हुआ। आचार्य संघ का विशाल जुलुस एवम् बैण्ड-बाजों की मधुर ध्वनि तथा जनता की जय-जयकार से नभोमण्डल गुंजाते हुए नगर प्रवेश हुआ।

तीन अनुभवी प्रवचन...

प्रवेश की मंगल बेला में विशाल पंडाल में जैन ध्वज फहराया गया। आचार्य श्री का मंगल आशीर्वाद होकर सभा का समापन हुआ। आचार्य श्री का ३९ वाँ दीक्षा दिवस फाल्गुन सुदी द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी दि १५ मार्च से १७ मार्च तक मनाया गया। प्रत्येक दिन विविध कार्यक्रम हुए। विभिन्न विषयों पर आचार्य श्री-उपाध्याय श्री, त्यागीगण व विद्वानों के सार गर्भित प्रवचन हुए।

तीनों दिन प्रवचन सभा के विषय रोचक व हृदयस्पर्शी रहे, प्रथम दिन का विषय था- 'सगठन ही शक्ति है।' इस दिन सभा का संचालन निर्मल जी सतना वालों ने किया तथा ब्र. प्रभाजी ने मंगलाचरण कर मंगल कार्य का प्रारंभ किया। उपाध्याय श्री ने अपने प्रवचन मे बताया कि- 'सगठन के बिना मोक्षमार्ग नही बनता। तत्त्वार्थसूत्र ग्रन्थ के कर्ता श्री उमास्वामी आचार्य श्री ने लिखा—''सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्राणि मोक्ष मार्ग.। अकेला सम्यग्दर्शन, अकेला ज्ञान व अकेला चारित्र शाश्वत सुख के लिए असमर्थ है। तीनो का संगठन मुक्ति मार्ग है। इसी प्रकार आपने अनेकों उदाहरणों द्वारा संबोधित करते हुए कहा कि- घास का एक-एक तिनका मिलकर चटाई बन त्यागियों की शीत वेदना को दूर करता है, फूलों का गुलदस्ता घर की मेज, आफिस की शोभा बढ़ाता है जबकि अकेला फूल पैरों तले रुंध कर जीवन की शोभा खो देता है। श्रावक व साधु का सिन्धू व बिन्दू जैसा सम्बन्ध है। बिन्दू-सिन्धू के साथ रहे तो उसे करोड़ों सूर्य भी नहीं सुखा सकते। वही बिन्दू-सिन्धू से अलग हो जाय तो क्षणमात्र में सूख जाती है। इसी प्रकार जो श्रावक या साधु समाज से, धर्म से जुड़कर रहता है उसे कोई शक्ति मिटा नहीं सकती, जबकि समाज या धर्म से हटकर रहने वाला श्रावक या साधु मिट जाता है।''

आचार्य श्री ने अपनी मधुर वाणी में बताया कि- ''सुख चाहते हो तो कन्धे से कन्धा मिलाकर चलो। पाप से घृणा करो पापी से नहीं। घर में हो या मठ में या आश्रम मे, वात्सल्य/सगठन है तो शक्ति है अन्यथा अकेला पिछड़ जायेगा।''

द्वितीय दिन का विषय था- ''सदाचार जीवन का दर्पण है।'' द्वितीय व तृतीय दिनों की सभा का सम्यक् संचालन पंडित श्री धर्मचन्द जी शास्त्री जी के कुशल नेतृत्व मे हुआ। इस विषय पर मुनि श्री विरागसागर जी, उपाध्याय श्री, आचार्य श्री व अन्य त्यागियों के मार्मिक उपदेश हुए। उपाध्याय श्री ने बताया कि ''आचरण से मानव के कुल, जाति, वंश व ज्ञान की परीक्षा होती है। प्राचीन काल में जैनी भाई नल पर छन्ना लगाकर पानी पीते थे, उसे दूर से देखते ही लोग निर्णय कर लेते थे कि यह जैनी भाई है, पर आज के जैनी भाई कहीं भोजन को जावें, अजैन बन्धु उनके लिए छने पानी व दिन में भोजन की व्यवस्था करे तो जैन बन्धु कहते हैं 'तकलीफ मत कीजिए हमें सब चलता है। यह कदाचार जब तक नही मिटेगा तब तक सदाचार जीवन मे आ नहीं सकता।''

आचार्य श्री ने अपने आशीष वचन में कहा- ''मोटा खाओ मोटा पहनो''। आज के मानव सुबह से शाम

तक बकरी की तरह चर रहे हैं और लकड़ी की तरह सूख रहे है, इसका कारण खान पान की शुद्धि नहीं है। "जैसा खाओ अन्न वैसा होय मन, जैसा पीओ पानी वैसी होय वाणी"। शुद्ध खान पान करो तुम्हारा आचार-विचार भी शुद्ध होगा। आचार विचार की शुद्धता ही सदाचार है।"

दि १६ ३ ९२ को आचार्य श्री का पाद प्रक्षालन, पूजा व आरती की गई जो गुरु भक्ति के प्रतीक है। पश्चात् ब्र बहन उषा जी, आशाजी ने अपने परिकर सहित भक्ति गीत प्रस्तुत किया व तत्पश्चात् आचार्य श्री को पीछी, शास्त्र व कमण्डल भेट किये गये जो सम्यक् दान के प्रतीक है।

श्रावकाचार्य मे श्रावकों के लिए एक प्रसग आया है जिसमे लिखा है- "श्रावक का कर्तव्य है वह मुनियों के सयम का साधन पिच्छी, ज्ञान का साधन शास्त्र, शुद्धि का साधन कमण्डल भेट दे। इसके अलावा आर्यिका व क्षुल्लक-क्षुल्लिकाओं को साड़ी-कपड़े व अन्य सयम के साधन चटाई, माला आदि उपकरण देवे। इनके अलावा रुपया पैसा, अन्य श्रृगारिक वस्तुएँ, टी वी , रेडियो, आदि कभी भी भेट न दे। इससे संसार मार्ग बढ़ता है।"

तृतीय दिवस प्रवचन का विषय था- "सयम ही देश की निधि है।" विषय के अनुरूप विद्वानों व त्यागी वर्ग के सुन्दर प्रवचन हुए। आचार्य श्री ने अपने प्रवचन मे बताया कि "सयम बिना एक समय ना मुक्कउ" हे भव्यात्माओ। प्रति समय सयम की ओर लक्ष्य रखो। एक समय भी बिना सयम के न रहे। खाने के बाद तुरन्त त्याग करो। पेट भरने के बाद कोई भोजन नही करता, प्यास बुझने के बाद कोई पानी नही पीता, तृष्णा के वशीभूत मानव एक घन्टे के लिए भी त्याग नही करता। इसके कारण प्रतिपल अशुभास्रव होता रहता है। अत. ज्यादा नही तो खाने-पीने के बाद पुन जब तक खाते-पीते नही तब तक का भी त्याग करो तो कल्याण होगा। एक कौवे का माँस त्याग करने वाला भील का जीव भगवान महावीर बन गया। तुम तो मानव हो। जैसे ब्रेक रहित गाड़ी गड्ढों में पटक देती है वैसे ही सयम रुपी ब्रेक नहीं है तो जीवन रुपी गाड़ी नरक निगोद रुपी गड्ढो मे गिरेगी। इस प्रकार आचार्य श्री के प्रवचनो को सुनकर कई लोगो ने शक्ति अनुसार सयम धारण किया।

भक्त की भक्ति...

सघपति जी का फूल मालाओ से भारी स्वागत किया गया। सघपति जी ने कहा-पन्ना मे पुद्गल-अचेतन हीरा-पन्ना की तो खदाने है पर आज असली पन्ना आचार्य श्री यहाँ पधारे है। इनकी चमक को हमें अपने जीवन में उतारकर जीवन को आचार्य श्री के समान असली हीरा बनाना है। अन्त मे पचपरमेष्ठी के मगल गीत के साथ दीक्षा महोत्सव की पूर्णता हुई। बहुत धर्म प्रभावना हुई।

पन्ना से सर्करिया होते हुए सघ धर्म नगरी देवेन्द्र नगर आ पहुचा। देवेन्द्र नगर में आचार्य श्री ने, उपाध्याय श्री ने सुसस्कारो पर प्रवचन देते हुए श्रावको को मधुर सबोधन दिया। सघपति जी व सचालिका जी को फूल माला व शास्त्र भेटकर सम्मानित किया। धर्म प्रभावना के साथ एक चिन्ता ने सघ व सघपति जी को चिन्तित कर दिया- आचार्य श्री के पैर मे "साईटीका" की बड़ी वेदना शुरु हो गई थी। यह वेदना यद्यपि काफी समय से चल रही थी पर अब इसका रूप विकराल बन गया था। ऐसी स्थिति मे भी आचार्य श्री विहार करते रहे। नागोद में स्थिति गभीर बनी। आचार्य श्री से एक-कदम भी चलना मुश्किल हो गया। सघपति जी की चिन्ता का कोई ठिकाना न था। वे उपाध्याय श्री के चरणो मे साष्टाग नमस्कृत हुए। कहने लगे- "महाराज जी! आचार्य श्री का स्वास्थ्य शीघ्र

ठीक हो जावे, हमारी सम्मेद शिखर यात्रा निर्विघ्न हो बस यही आशीर्वाद दीजिये।'' उपाध्याय श्री ने कहा- ''चिन्ता न करें, आचार्य श्री का पैर जल्दी ठीक होगा अन्यथा कोई उपाय करके जल्दी छोटे रास्ते से शिखरजी पहुचेंगे।''

भव्यात्माओं के पुण्य से, उपचार से, साईटीका का दर्द दूर हुआ पर अभी भी घुटनों में दर्द बना हुआ है। प्रभु से प्रार्थना करती हूँ कि यह दर्द भी शीघ्र दूर हो और करोड़ों जीवों के महा उपकारी आचार्य श्री पूर्ण स्वस्थ हो शतायु हों, दीर्घायु हों।

मागोद से सितपुरा होते हुए गुरु भक्त विद्वानों की नगरी 'सतना' संघ आ पहुंचा। सतना में आचार्य श्री के दर्शन की उमंग लिए जनता दौड़ रही थी। यहाँ १००८ श्री शान्तिनाथ जी भगवान की प्राचीन विशाल प्रतिमाजी के दर्शन कर थकान दूर हो जाती है, तथा कविराज श्री नीरज जी की मधुर वाणी व निर्मल जी की नम्रता से मानव मन मुग्ध हो जाता है। पूज्य १०५ आर्यिका श्री विशुद्धमती जी (शिवसागर जी की शिष्या) की यह जन्म स्थली है। माताजी ने 'तिलोय पण्णत्ति' महाग्रन्थ की टीका करके जैन आगम का महान कार्य किया है। सतना मे अच्छी धर्म प्रभावना रही।

जैनागम की वीरोदात्त वाणी एवं यात्रा के बढ़ते चरण...

सतना से विहार कर संघ रीवा मे श्री शान्तिनाथ भगवान के दर्शन करता हुआ हनुमना ग्राम पहुंचा। आचार्य श्री के कर-कमलों द्वारा यहाँ श्री सेठजी कोमलचन्द जी के यहाँ गृह चैत्यालय मे श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमाजी विराजमान की गई।

एक पुण्य अवसर जिसका पुण्यात्माओं को इन्तजार था, सामने आया दि ११ ४ ९२ रामनवमी के दिन उपाध्याय श्री का जन्म-दिवस। सघपति राजेन्द्र बाबू सोच रहे थे कोई बड़ा शहर मिले। जैनियों की बस्ती हो, खूब प्रभावना पूर्वक यह दिवस मैं मनाऊं।

तपस्या का चमत्कार देखिये- गर्मी की भयानकता में अष्टमी की रात बीती। नवमी के विहार मे मौसम ने अपना रूप बदला। आकाश मे काले-काले बादल मडराने लगे। मन्द-मन्द रिम झिम वर्षा होने लगी। आचार्य श्री के मुख से सहसा निकल पड़ा- ''जानते हो आज ''भरतजी'' उपाध्याय श्री का जन्म दिन है इसलिए पानी बरस रहा है।'' सत्य है नगर में मात्र मानव ही झूमता पर रामचन्द्रजी के जन्म दिवस के दिन जन्म लेने वाले उपाध्याय श्री भरतसागर जी का जन्म दिवस जंगल में मंगल ले आया। वृक्ष-पेड़-पत्ते सभी इस उत्सव को झूम-झूम कर मना रहे थे। ''बबोरा'' ग्राम में सारे अजैन बन्धुओं के मध्य यह दिवस धूम-धाम से मनाया गया। ''हनुमना'' के सेठजी ने सपरिवार उत्साह सहित इस कार्यक्रम की शोभा में चार चांद लगाये। विभिन्न नगरों से भक्त समय पर आ पहुंचे। जैन-अजैन बन्धुओं ने वात्सल्य पूर्वक भोजन किया, उम्मीद से बाहर लोगों का भोजन हुआ। उपाध्याय श्री का पाद-प्रक्षालन, पूजा व ४२ दीपकों से आरती उतारी गई। काफी धर्म प्रभावना हुई।

महावीर जयन्ती मनाने का उत्साह लिए संघ आगे बढ़ता चला। मिर्जापुर में विशेष धर्म प्रभावना के साथ महावीर जयन्ती मनाई गई। प्रातः प्रभात फैरी, रथ यात्रा व दोपहर में जिनाभिषेक तथा आचार्य श्री, उपाध्याय श्री के मंगल प्रवचन हुए। धर्म सभा संघस्थ ब्र बहन प्रभाजी पाटनी के मंगल वीर स्तवन से प्रारंभ हुई जिसमें प्रभाजी ने भ. महावीर की जीवन झांकी जन समुदाय के समक्ष प्रस्तुत कर बताया कि महावीर के सिद्धान्तों को पालन

करने पर ही मानव सुख शान्ति को प्राप्त हो सकता है।

मध्यान्ह सभा में उपाध्याय श्री ने भगवान महावीर के जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया कि "महावीर बाल ब्रह्मचारी थे, वे ३० वर्ष गृह मे रहे, अपने पिता के साथ प्रजातन्त्र की पालना करते हुए युवावस्था में ही सिद्ध साक्षी पूर्वक दिगबर मुनि दीक्षा धारण की। बारह वर्ष तपस्या की व केवल ज्ञान प्राप्त कर ३० वर्ष तक समवशरण के साथ विहार कर भव्यात्माओं को धर्म का उपदेश दिया।

श्री महावीर ने उपदेश दिया- "आचार मे अहिंसा, विचार मे अनेकान्त, वाणी मे स्याद्वाद व जीवन में अपरिग्रह धारण करो। आपने बताया भगवान महावीर की शिक्षा थी हर जीव मे कोई न कोई गुण अवश्य है। पाप से घृणा करो पापी से नही। पाप कभी अच्छा नही होता। पापी तो सुधर सकता है पाप नहीं। आपने बताया कि भगवान महावीर ने देना सिखाया माँगना नही। जो त्यागता गया वह ऊँचा उठता गया और जो जोड़ता गया वह डूबता गया।"

अन्त में आचार्य श्री ने अपने प्रवचन मे बताया कि प्रत्येक आत्मा भगवान महावीर बन सकती है। भगवान महावीर ने त्याग व सयम के महापथ पर चलकर जीवन को श्रेष्ठ बनाया। आप सब भी कुछ न कुछ त्याग व सयम धारण कीजिये यही मुक्ति मार्ग है। मीर्जापुर की धर्म स्नेही जनता ने सघ सचालिका चित्राबाई जी का सादर अभिनन्दन कर सघपति जी को अभिनन्दन पत्र भेट किया। मिर्जापुर का युवा समाज सघपति जी के उदार सरल जीवन से बहुत प्रभावित हुआ।

मिर्जापुर से श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान की जन्म स्थली बनारस मे आचार्यश्री का पदार्पण हुआ। प्रभु पार्श्वनाथ की मनमोहक प्रतिमाओ के दर्शन कर सबके मन प्रफुल्लित हो उठे। यहाँ की पावन नगरी मे विद्वानों का समागम देख प्रमोद भाव जागृत हुए बिना नही रहता। भेलूपुरा के विशाल मदिर मे सघ ठहरा। वर्तमान में मंदिर का जो जीर्णोद्धार हुआ है वह सबके लिए आदर्श है, पूरे मदिर में दातार का कही नाम भी नजर नही आता। सत्य है गुप्तदान की अपूर्व महिमा है। दीवालो पर पार्श्वनाथ भगवान के नव भवो का सुन्दर चित्रण हृदयस्पर्शी है।

यहाँ से मदैनी श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की जन्म स्थली व वर्णी विद्यालय में प्रभु के दर्शन कर संघ भेदागिन मे पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन करते हुए श्री १००८ श्रेयाँसनाथ जी की जन्म स्थली सारनाथ/सिंहपुरी पहुचा। तत्पश्चात गगा नदी के पावन किनारे पर बसी हुई सुन्दर नगरी चन्द्रपुरी श्री १००८ चन्द्रप्रभु भगवान की जन्म स्थली पर पहुचा।

बनारस से आगे जैन मदिर व जैन श्रावको के दर्शन अति कठिन हैं। स्कूलो मे आहार होता था। संघ में प्रात· चैत्यालय के दर्शन अभिषेक आदि करके श्रावक जन अपना पुण्यार्जन करते थे। सायंकाल में जंगल में मंगल नजर आता था। क्योंकि सायकाल का विश्राम जगल मे खेतो मे होता था। सायकाल पक्षियों का मधुर कलरव, ठडी-ठडी व कभी गरम-गरम हवा दशंमशक परीषह, कभी चीटियाँ, सूक्ष्म जीवों की अधिकता से त्यागियों की सहिष्णुता, धीरता की अपूर्व परीक्षा होती थी।

संघपति जी की आज्ञा से गुरुसेवा मे जैन-अजैन सेवकजन आचार्य श्री की, उपाध्याय श्री की आरती बहुत भक्ति से करते व णमोकार मन्त्र की ध्वनि से जगल मे भी मधुर ध्वनि का गुंजार करते थे।

बनारस के बाद लम्बे समय के पश्चात् औरंगाबाद में श्री वीर भगवान के दर्शन कर संघ आगे कूच कर गया। आगे फिर जंगल में निवास करता हुआ संघ चौपारन पहुंच गया। चौपारन में भी वीर प्रभु के पावन दर्शन, आहार व धर्मोपदेश दे सायंकाल जंगल में विश्राम के लिए संघ आगे बढ़ गया।

आरा, गया, कोडरमा, रांची चारों ओर की जनता महाराज श्री को अपने नगर की ओर ले जाने को तड़फ रही थी। पर भीषण गर्मी, वृद्ध तपस्वियों का संघ व आचार्य श्री के पैर की तकलीफ ने संघ को सीधा छोटे रास्ते से शिखरजी पहुचने के लिए बाध्य कर दिया।

भगवान कहीं रहें भक्त वहीं जाकर अपनी भक्ति समर्पित अवश्य करेगा। कोडरमा निवासी अपने नगर आचार्य श्री को ले जाने में असमर्थ रहे तो उन्होंने बरही स्कूल में जैन धर्म का नगाड़ा बजवाया। विशाल सभा में आचार्य श्री के गुणों का गुंजन हुआ। पाद-प्रक्षालन, आरती व धर्मोपदेश की लहर से बरही में भी चार चांद लग गये। सब शिक्षक अपने आप को धन्य मान रहे थे।

उत्तर प्रान्त छोड़कर संघ बिहार प्रान्त में प्रवेश कर गया। बिहार प्रान्त की सीमा में पहला पड़ाव तीर्थराज सम्मेद शिखर की बीसपंथी कोठी के मन्त्री जी श्री महावीर प्रसाद जी सेठी सरिया वालों के पेट्रोल पंप पर हुआ। चारों ओर से लोग आ-आकर आचार्य श्री के मंगल आशीर्वाद की प्रतीक्षा में पंक्ति बद्ध खड़े नजर आ रहे थे।

दोपहर में आचार्य श्री- उपाध्याय श्री के मंगल प्रवचन हुए। उपाध्याय श्री ने अपने उपदेश मे एक विशेष बात कहकर सबको आकर्षित किया। आपने कहा- "पेट्रोल पंप में अचेतन गाड़ियों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिए पेट्रोल मिलता है। महावीर जी ने गाड़ियो मे पेट्रोल डलवाया पर आत्मा को मुक्तिनगर पहुंचाने वाला रत्नत्रय पेट्रोल आचार्य श्री की दुकान पर मिलता है, एक बार मन लगाकर खरीद लिया तो बीच में खत्म होने वाला नही, सस्ता ही नहीं बिना मूल्य का है, टिकाऊ है। आइये, जितना चाहें खरीद लीजिये, यहाँ कंट्रोल का काम नहीं है।"

आचार्य श्री ने अपने मंगल आशीर्वाद में चार भावनाओं को प्रतिदिन भाने का उपदेश दिया- १ प्राणी मात्र में मैत्री भाव धारण करो, २. गुणिजनों में प्रमोद भाव धारण करो, ३. दुखीजनों में करुणा करो और ४ विपरीत वृत्ति वालों में मध्यस्थ हो जाओ। रात्रि में संघ का यहीं विश्राम हुआ। प्रातः मंगल बेला में संघ ईसरी के लिए प्रस्थान कर गया।

ईसरी में बीसरी...

ईसरी-श्री सम्मेदशिखर का प्रथम स्टेशन है। यह मधुरिम स्थल है। त्यागी, साधक, स्वाध्याय प्रेमी, गृहस्थजन यहाँ महिनों आकर निवास करते हैं। यहाँ चार मंदिर हैं। ब्र. कृष्णाबाई जी द्वारा स्थापित आश्रम में भगवान श्री पार्श्वनाथ जी की पद्मासन श्यामवर्ण की विशाल मनोज्ञ प्रतिमाजी विशेष दर्शनीय है। वृद्धजन यहाँ से ही पर्वतराज की चौबीस टोंकों के दर्शन कर तृप्ति का अनुभव करते हैं।

अब तो सभी के हृदय आनन्द से उमड़ रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो दौड़कर भगवान पार्श्वनाथ जी व चन्द्रप्रभु जी की टोंक पर पहुंच जावें। संघस्थ कई त्यागी के अपूर्ण दर्शन थे अतः उनके हर्ष की तो सीमा ही नहीं थी। संघपति जी की भाव विभोरता तो अवर्णनीय ही है। ईसरी में लाला श्रीपाल जी व कैलाशी बाई

जी, पौत्र शरद कुमार और पौत्री सोनिया भी आचार्य श्री के तीर्थराज पर मगल प्रवेश के समय अभिवन्दनार्थ पधार गये थे। दूर-दूर से भक्तो की टोली उमड़ आई थी। जय-जयकार के नारों से आकाश गूंज उठा था। बादलों ने पानी की रिमझिम वर्षा कर आचार्य श्री का अभिनदन प्रारभ कर दिया था तो पेड़-पौधे झूम-झूम कर अपने आनद को बिखेर रहे थे। वहीं पक्षीगण मधुर कलरव से गुरु भक्ति मे नाच रहे थे। चारो ओर आनन्द का वातावरण था।

"ईसरी मे बीसरी"। भव्यात्माओ ने ईसरी मे ससार-शरीर-भोगो की रुचि को भुलाया। एक ही लक्ष्य सब की दृष्टि मे नजर आता था- बस, आचार्य श्री के साथ पर्वतराज की वन्दना करनी है। संघ ईसरी से विहार कर कल्याण निकेतन पहुंचा। कल्याण निकेतन मे आचार्य सघ की आहार चर्या निर्दोष पूर्ण हुई। तत्पश्चात मध्यान्ह में आचार्य श्री व उपाध्याय श्री के मगल प्रवचन हुए। धर्मसभा ब्र प्रभा जी के मगलाचरण से प्रारम्भ हुई।

आचार्य श्री ने कल्याण का अर्थ बताते हुए कहा कि- "कृतकत्य अवस्था की प्राप्ति ही "कल्याण" प्राप्ति है। वह कल्याण अवस्था पञ्चपरमेष्ठी की आराधना, तीर्थवन्दना, प्रभु भक्ति सयम व चरित्र के द्वारा ही प्राप्त होती है। वात्सल्य और स्थितिकरण अग के पालन बिना सम्यग्दर्शन की निर्मलता नहीं होती है। अत कन्धे से कन्धा मिलाकर चलो। सुई बनो कैची मत बनो। अन्त मे आचार्य श्री ने मगल आशीर्वाद देते हुए अपना उपदेश पूर्ण किया।"

यही सायं ४ बजे पूज्य आचार्य श्री सभवसागरजी व मोक्ष सागरजी, आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारे। रात्रि विश्राम आचार्य श्री के श्री चरणो मे किया।

दिनाक २१ मई १९९२, आचार्य श्री विमल सागरजी महाराज, उपाध्याय श्री भरत सागरजी महाराज सहित २८ त्यागियो का प्रात· ७ बजे मुधवन मे मगल पदार्पण हुआ। बिहार-बगाल, बम्बई आदि भारत देश के विभिन्न प्रान्तो के हजारो नर-नारियो ने चतुर्विध सघ का हार्दिक स्वागत किया।

आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज अपने सघ सहित आचार्य श्री के दर्शनार्थ, आचार्य श्री को एक किलोमीटर दूर लेने गये। आचार्य श्री सुमतिसागर जी ने आचार्य देव को विधिवत् नमोस्तु किया व सभी करीब ६० त्यागीगण गाजे-बाजे के साथ मन्दिरो के दर्शन करते हुए बीस पथी कोठी मधुवन पधारे।

प्रवेश की मगल बेला मे सेठ श्रीपाल जी, राजेन्द्र बाबू जी ने सपरिवार मिलकर आचार्य श्री व उपाध्याय श्री का नीर-क्षीर से पाद प्रक्षालन किया। कैलाशवती जी व मधुजी ने आरती उतारी तथा शरदबाबू ने पुष्पवृष्टि की। मध्यान्ह १२॥ बजे मूल नायक तीर्थंकर पार्श्वनाथजी का पञ्चामृताभिषेक व बड़ी शान्ति धारा का कार्य संघपति जी के द्वारा आचार्य श्री के सानिध्य मे सम्पन्न हुआ।

अपराह्न २ बजे मध्यलोक शोध सस्थान में अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। बिहार प्रान्त की ओर से श्री महावीर प्रसाद जी सेठी क्षेत्रीय मन्त्री ने सघ सचालिका ब्र चित्राबाई जी का एवं संघपति श्री श्रीपाल जी राजेन्द्र कुमार जी जैन बम्बई का स्वागत किया। राय बहादुर हरकचन्द जी जैन ने समारोह की अध्यक्षता की। श्री सेठ श्रीपाल जी, श्रीमती कैलाशवती जी, श्रीमती मधुजी, श्री शरद जी व सुश्री सोनियाजी का भव्य स्वागत एव अभिनन्दन किया गया। श्रीमान् स्वरूपचन्द जी सोगानी हजारीबाग ने सघपतिजी के परिवार का परिचय देते

आचार्यश्री के चरणों मे द्वय संघपति श्री आर के जैन, बम्बई और श्री शिखरचदजी पहाड़िया, बम्बई।

मुनिभक्त श्री आर के जैन आचार्यश्री से मार्गदर्शन प्राप्त करते हुए।
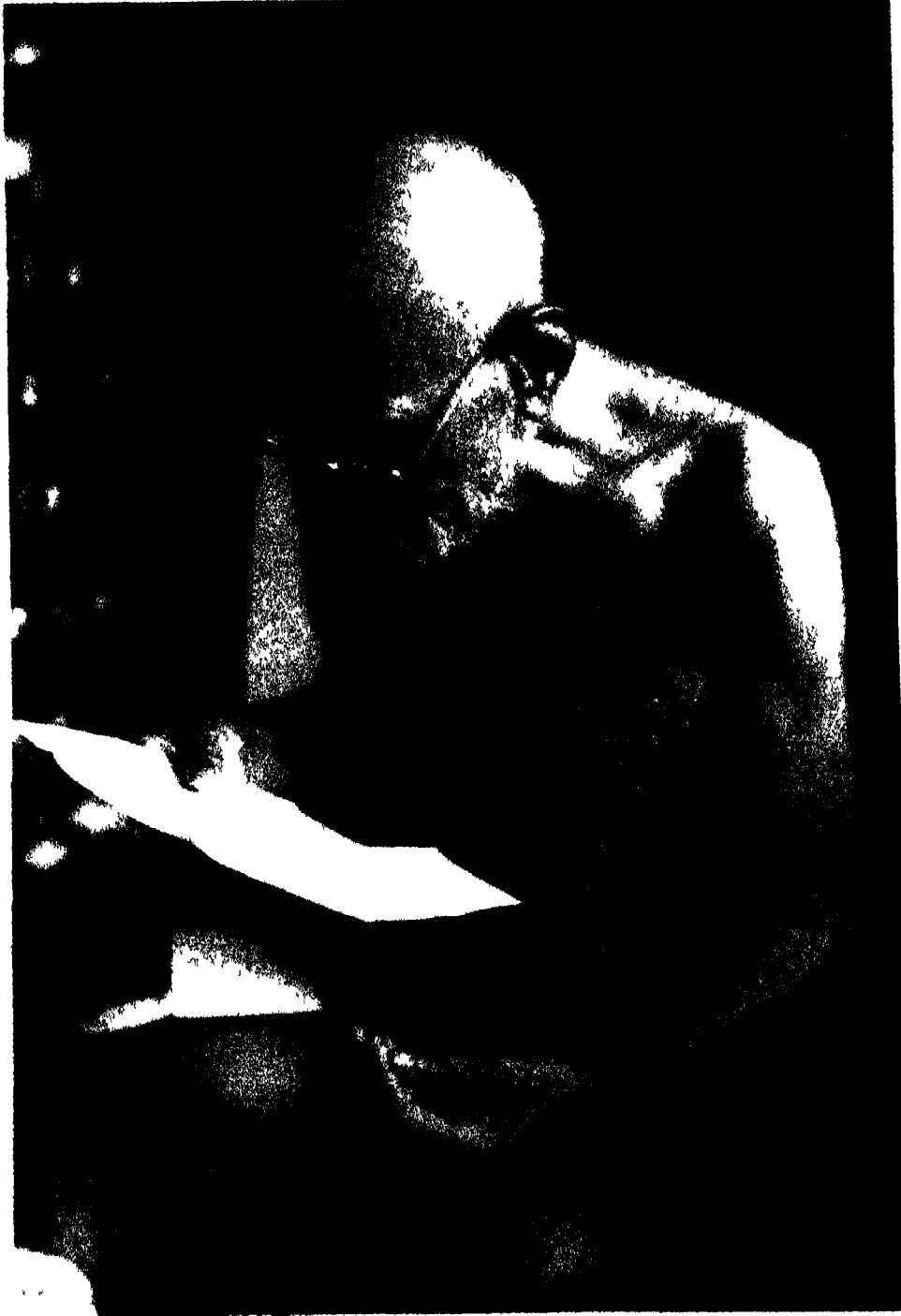
आचार्यश्री स्वाध्याय मुद्रा मे

आचार्यश्री चातुर्मास स्थापना का सकल्प करते हुए (सम्मेदशिखरजी १९९३)।

बिहार प्रान्त के मुख्यमत्री श्री लालूप्रसाद यादव पूज्य आचार्यश्री से वार्ता करते हुएं।
साथ मे है साहू श्री अशोक जैन और श्री आर के जैन।

आचार्यश्री से महावीरप्रसादजी जैन, सरिया, आशीर्वाद प्राप्त करते हुए

बिहार प्रान्त के मुख्यमत्री श्री लालूप्रसाद यादव पूज्य आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए
साथ मे है साहू श्री अशोक जैन और श्री आर के जैन

डी आय् जी (बिहार) तथा डी एस् पी (गिरिडिह) आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए

आचार्यश्री प्रशान्त बाबू एव रेनू गगवाल को आशीर्वाद देते हुए
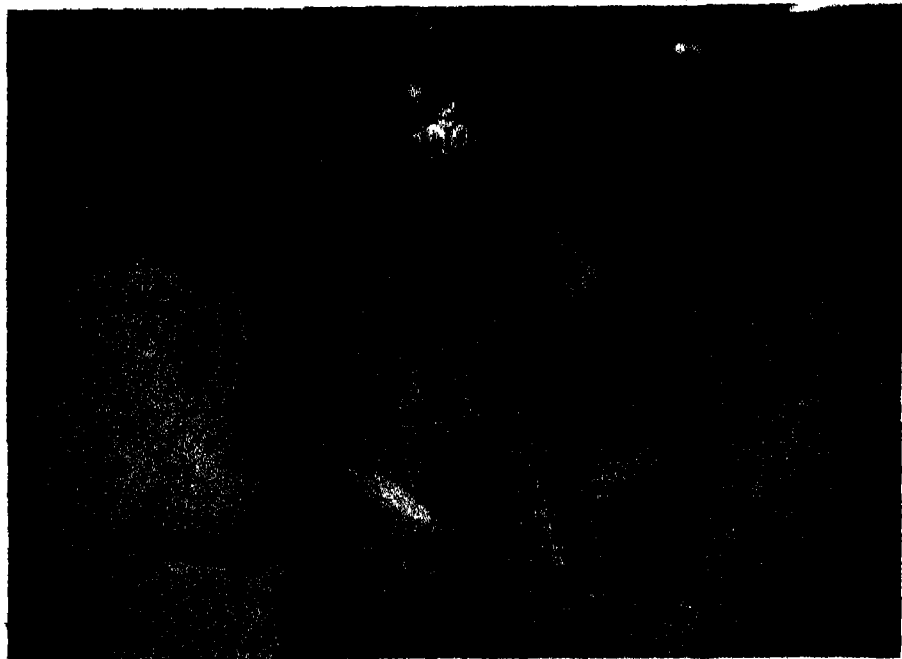
१९९२ में शिखरचन्द पहाड़िया एव उनकी धर्मपत्नी प्रेमलता पहाड़िया और पाचूलाल पहाड़िया
एव उनकी धर्मपत्नी निर्मलादेवी पहाड़िया चातुर्मास स्थापना का कलश ले जाते हुए
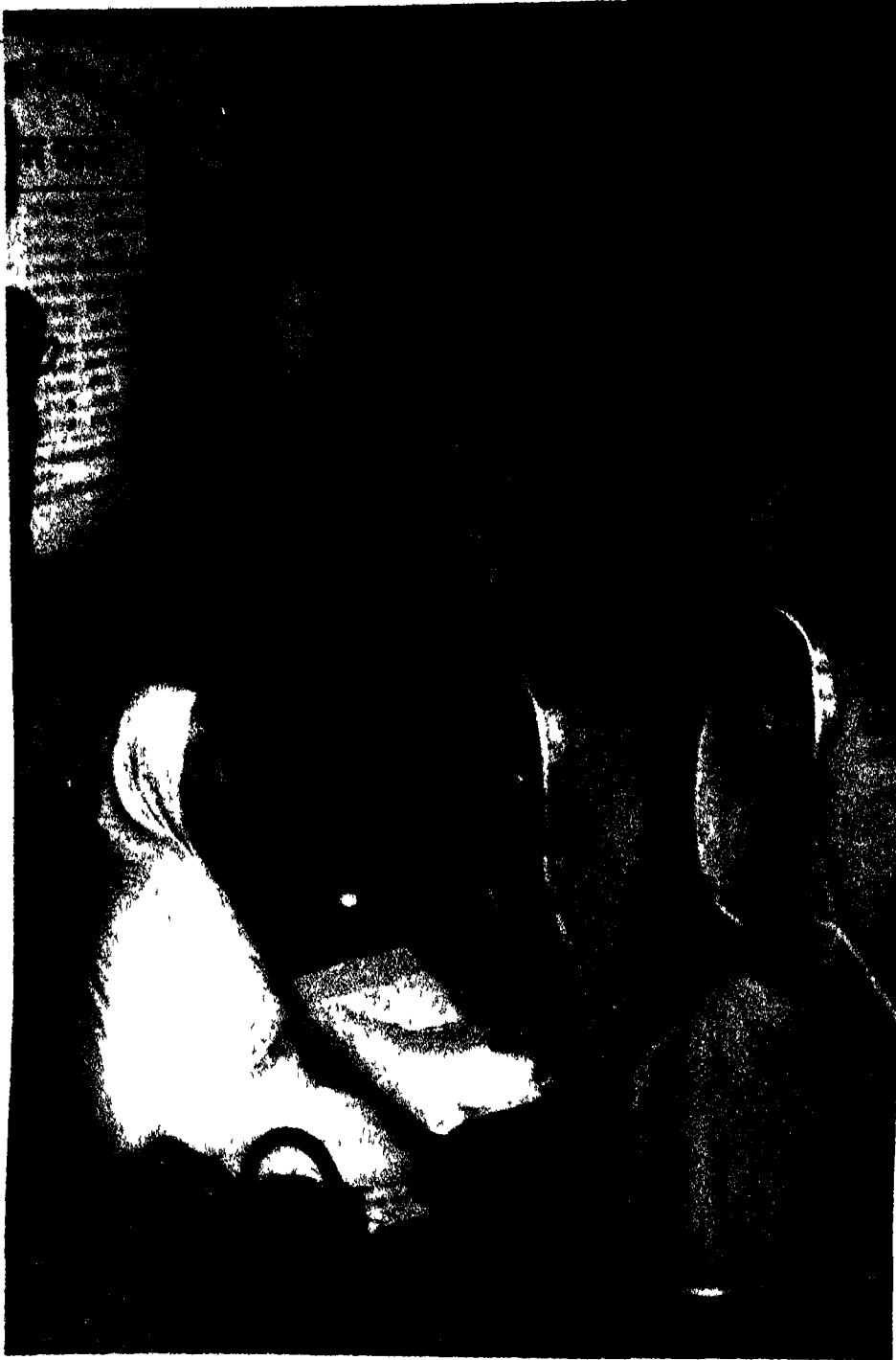
वर्तमान सघपति श्री शिखरचदजी पहाड़िया, बम्बई परिवार के साथ आचार्यश्री के चरणो मे आशीर्वाद लेते हुए।
साथ मे है पूज्य नदामतीजी माताजी जिन्हे श्रीमती प्रेमलता एव श्रीमती निर्मलादेवी पहाड़िया साड़ी भेट कर रही है।

हुए उपस्थित जन समूह को उनसे सम्बन्धित जानकारी दी। अभिनन्दन की इस कड़ी में पप्पू भाई जी जबलपुर व मनोज भाई धनबाद को भी हार्दिक बधाई दी गई तथा पुष्पमाला पहनाकर अभिनन्दन किया गया। स्मरण रहे कि दोनों युवाओं ने विहार में आचार्य संघ के साथ महिनों रहकर अपनी गुरु भक्ति का महान परिचय दिया है।

सघपति श्री राजेन्द्र जी का विभिन्न संस्थाओं एवं बिहार स्थित नगरों के प्रमुख व्यक्तियों ने भी माला पहनाकर अभिनन्दन किया। अभिनन्दन करने वालों में प्रमुख श्री हरकचन्द जी सरावगी, अमरचन्द जी पहाड्या कलकत्ता, पूनमचन्द गंगवाल झरिया, उम्मेदमल जी शाह गिरडीह, किशनलालजी विनायक्या हजारीबाग, श्री महावीर प्रसाद जी झाझरी कोडरमा एवं अनेकों गणमान्य व्यक्ति थे। अभिनन्दन की इस मंगल बेला में आचार्य श्री सुमति सागरजी महाराज भी ससघ उपस्थित थे। उपाध्याय श्री के मंगल प्रवचन व युगल आचार्य श्री के मंगल आशीर्वाद से सभा का विसर्जन हुआ। मध्यलोक संस्थान की सुन्दर सजावट व स्टेज की सुन्दर व्यवस्था मधुवन युवा संगठन ने की तथा उत्साही युवक शैलेश बाबू का परिश्रम व भक्ति भी उल्लेखनीय है।

सभी जन समुदाय एक स्वर मे सघपतिजी के लिए धन्य-धन्य शब्दोच्चारण कर कहने लगे थे- वास्तविक लक्ष्मी का सदुपयोग इन्होंने किया है। इसके पूर्व कभी इतने त्यागियो का समुदाय मधुवन में एकत्रित नही हुआ। ऐसा वृद्धजनो का कहना है। आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज सप्तर्षियों सहित जब पधारे थे उस समय संघपति सेठ श्री पूनमचन्द घासीलाल ने जिस परिश्रम और उदारता का परिचय दिया था वही उदारता सेठ श्रीपाल जी राजेन्द्र बाबू जी में भी दृष्टिगत होती है।

आपने इस युग मे कीर्ति स्तभ प्राप्त किया-

> सूरत से कीरत बड़ी बिना पंख उड़ जाय,
> सूरत तो जाती रहे, कीरत कभी न जाय।

परिव्राजक की धर्मयात्रा एवं प्रकृति का नृत्य...

पश्चात् अपरान्ह ४ बजे आचार्य श्री ने चतुर्विध संघ सहित पर्वतराज की वन्दनार्थ गमन किया। साथ में अपने विशाल परिवार सहित सघपतिजी आचार्य श्री के पीछे-पीछे आगे बढ़ते चले जा रहे थे। जय-जयकार की ध्वनि पर्वतराज पर गूज रही थी। इस समय बादलों ने रिमझिम जल वर्षा कर आचार्य श्री का अभिनन्दन किया। पानी मे भींगते हुए सभी आगे बढ़ते चले जा रहे थे। ठडी-ठडी हवा आचार्य श्री व सघपतिजी का यशोगान करती हुई दिग-दिगन्त मे बह रही थी। ऐसा लग रहा था कि मानो बादल अपने अद्वितीय आनन्द को भीतर समेट नही पा रहा है उछल-उछलकर जल वर्षाते हुए अपने आनन्दाश्रुओं को बिखेरता ही जा रहा है। अन्ततोगत्वा नीचे धर्मशाला मे ही सबने रात्रि में विश्राम किया।

सुप्रभात की शुभ बेला में उषा की लालिमा ने गुरुदेव का पर्वतराज पर अभिवादन किया तभी मानो सूर्य ने उदयाचल से सहस्त्ररश्मियों की पुष्पमाला भेंट कर गुरुदेव का वन्दन किया।

पर्वतराज पर पक्षियों ने अपनी मधुर ध्वनि द्वारा सर्वसघ का अभिनन्दन किया। तभी गन्धर्व नाला के झरने की मधुरिम आवाज ने सबके मन को आकर्षित किया। सीता नाला पर भक्तो की मडली ने पूजा की सामग्री को शुद्ध किया व कलशों में नीर भरकर गणधर टोंक की प्रतीक्षा मे पग बढ़ाये।

अब क्या था? मंगल सुप्रभात की मंगल बेला मे सभी गणधर टोक पर पहुचे। संघपतिजी का मन-मयूर हिलोरें ले रहा था। हृदय नाच रहा था। अपने अगणित आनन्द को वे मूक हो अन्तर में समेटे सिद्धों की भक्ति में तल्लीन हुए। नीर-क्षीर से चरण-कमलों का अभिषेक किया। गंधोदक की नदी बहने लगी। सभी भक्त जनों ने नदी मे डुबकी लगा पाप पक का प्रक्षालन किया। फिर भगवान कुन्थुनाथ जी, नेमिनाथ जी, अरहनाथ जी, मल्लिनाथ जी, श्रेयाँसनाथ जी, पुष्पदन्त जी, मुनिसुव्रत जी व पद्मप्रभ जी की टोको के दर्शन कर चन्द्रप्रभु जी के दर्शन के लिए सभी बढ़ते चले। रास्ता बहुत लम्बा था। कोई बैठता था, कोई चलता था, कोई चन्द्रप्रभुजी की जयकार करता था। ऊँची चढ़ाई से संघपतिजी के पुत्र शरत व पुत्री सोनिया थके से मालूम देते थे। फिर भी प्रसन्न मुद्रा मे सब आगे बढ़ते जाते थे। तीर्थंकर चन्द्रप्रभु जी के दर्शन कर किसी ने अभिषेक किया, किसी ने पुष्प, किसी ने अर्घ समर्पण किया व किसी ने आरती उतारी।

आगे भगवान आदिनाथ जी, शीतलनाथ जी, अनन्तनाथ जी, संभवनाथ जी, वासुपूज्य जी, अभिनन्दन जी, धर्मनाथ जी, सुमतिनाथ जी, शान्तिनाथ जी, महावीर जी, सुपार्श्वनाथ जी, विमलनाथ जी, अजितनाथ जी, नेमीनाथ जी की सिद्धभूमि के दर्शन कर सभी सुवर्णभद्र कूट पर तीर्थंकर श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान के चरणो में पहुचे। यहाँ आते ही दर्शन कर सबकी थकान दूर हुई।

कुछ देर विश्राम कर सबका उतरना प्रारभ हुआ। दोपहर ११॥ बज चुके थे अत पर्वतराज पर ही आचार्यश्री उपाध्याय श्री व अन्य त्यागीवर्ग ने सामायिक क्रिया पूर्ण की। ठीक एक बजे चतुर्विध संघ नीचे मधुवन बीसपंथी कोठी आ पहुचा।

परमपूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज ससघ तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर जी पर पावन विश्राम कर रहे है। आप सभी आमन्त्रित हैं बीस तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि एवं आचार्य श्री के दर्शन/ज्ञान अर्जित करने हेतू। आइये . आचार्य श्री विमलसागरजी महारज के दर्शन कर एवं बीस तीर्थंकरो की निर्वाण भूमि की वन्दना कर अपना जीवन धर्ममय बनाइयें।

भाव सहित वन्दे जो कोई।
ताहि नरक पशुगति नहिं होई॥

वन्दना मुद्रा में आचार्यश्री
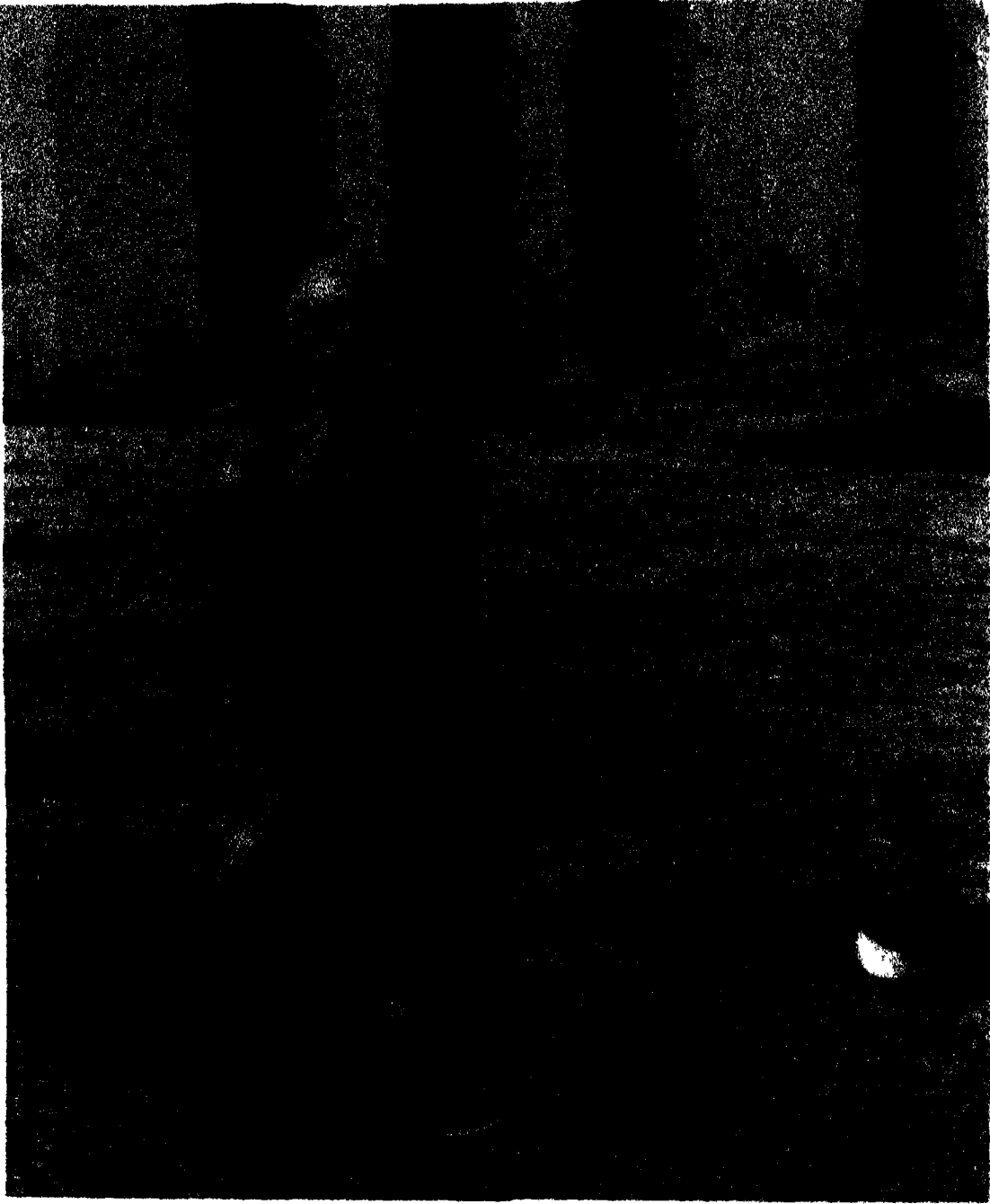
सोनागिर ध्यान डूगरी पर ध्यान करते हुए आचार्यश्री।

विचित्रालोक-यात्रेयम्

समस्त कर्मो के क्षय से मोक्ष होता है। कर्मो का क्षय सम्यक्-ध्यान से होता है और वह सम्यक् ध्यान चारित्र से होता है। अर्थात ध्यान से चित्त की एकाग्रता होती है, इस कारण ध्यान ही आत्मा का हितू है। जिस प्रकार दूध में घृत विद्यमान रहते हुए भी उसे पाने के लिए दही तैयार करके, पश्चात् उसका मथन करके नवनीत प्राप्त करते है। आगे उस मक्खन को अग्नि पर रखने रुप उद्योग की आवश्यकता पडती है। उसी प्रकार प्रत्येक शरीर मे आत्मा (सिद्ध स्वरुप) विद्यमान रहते हुए भी उसे पाने के लिए प्रथम सम्यग्दर्शन प्राप्त करके, पश्चात् ज्ञान के द्वारा तत्त्व का मथन करके चारित्र पर्याय प्राप्त करते है। आगे उस चारित्र को पूर्ण निर्मल बनाने के लिए ध्यान रुपी अग्नि की आवश्यकता होती है। और ध्यानरुपी अग्नि के तप से तपाने पर ही हमे शुद्धात्मा की प्राप्ति होती है।

आत्मध्यान के प्रेमी सज्जन पुरुष को परिपूर्ण सामग्री के सग्रह किये बिना मोह शत्रु पर विजय प्राप्त करना असम्भव है।

> सगत्याग कषायाणा निग्रहो व्रतधारणम्।
> मनोक्षाणा जयश्चेति सामग्री ध्यान-सन्मन ॥

परिग्रह का त्याग, क्रोध, मान, माया, लोभरुपी कषायों का जीतना, अहिसा आदि व्रतो का पालना, मन और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना-इस सामग्री के द्वारा विशुद्ध ध्यान की उत्पत्ति होती है। इस उचित और उपयोगी मार्ग पर चलने वाला सच्चरित्र मानव आत्म-ध्यान रुपी कठिन कार्य मे सफलीभूत होता है। जब लौकिक, क्षणिक तथा नकली सुख की प्राप्ति करने के लिए यह मोही अपार कष्ट उठाया करता है, तब क्या सच्चे अविनाशी सुख की प्राप्ति के लिए इसे महान उद्योग और पुरुषार्थ नही करना पडेगा। अवश्य ही करना पड़ेगा। सच्चा पुरुषार्थ ध्यान के द्वारा ही सिध्द होता है। यहाँ प्रश्न उठता है- ध्यान किसे कहते है।। उत्तर मिलता है- 'एकाग्रचिन्तानिरोधो' ध्यानम् एक वस्तु को अग्र करके चिन्ताओं का निरोध करना अथवा मन की एकाग्रता ही ध्यान है।

ध्यान के दो भेद है- (१) प्रशस्त ध्यान और (२) अप्रशस्त ध्यान। प्रशस्त ध्यान के भी दो भेद है (१)

धर्मध्यान और (२) शुक्लध्यान।

आचार्यश्री से शिष्य पूछते है- "गुरुदेव! आप हमसे माला फेरने को कहते हैं किन्तु हमारा मन तो माला में लगता नही है। हम अपना मन कैसे लगाये?"

आचार्य श्री कहते है- "घबराओ नही, तुम लोग अपने माथे पर श्री सम्मेदशिखरजी का रूप बनाकर पावन सिध्दक्षेत्र का दर्शन करो, मन लग जायेगा। मै तो प्रतिदिन करता हूँ।"

शिष्य कहते है- "गुरुदेव! हम नही समझ पाये, आप भली प्रकार समझाइये।"

आचार्यश्री- "अपने दोनों होठों को मधुवन समझो। उसके दाहिनी और तेरापथी कोठी, बीच में श्वेताम्बर कोठी और बायी ओर बीसपथी कोठी समझो। बीसपथी कोठी से तुम वन्दना को रवाना हो जाओ। अपने दोनों नाक के छेदों को गधर्व नाला समझो। आगे चलो और अपनी दोनों आँखों के मध्य स्थान को सीता नाला समझो। फिर आगे माथे के ऊपर के पहले भाग को गणधर टोंक समझो, समीप ही कुन्थुनाथजी की टोंक से वन्दना प्रारम्भ करो। फिर क्रम से टोकों की रचना करते हुए मस्तक के बीच पीछे जलमदिर समझो, फिर वहाँ से वन्दना करते हुए सिर के दूसरे भाग को पाश्र्वनाथ प्रभू की टोंक समझो। वन्दना करते हुए जिस मार्ग से चढ़े थे उसी प्रकार उतर कर नीचे आ जाइये। इस प्रकार करोगे तो आप लोगों का मन निश्चित ही एकाग्र हो जाएगा।"

इस प्रकार आचार्यश्री के द्वारा ध्यान की महिमा सुनकर शिष्य कहने लगे-"गुरुदेव! मन को एकाग्र करने के लिए क्या और भी ध्यान है?" आचार्यश्री कहने लगे- "हाँ! हाँ! बेटा और भी ध्यान है, मै क्रमश- सभी बताऊँगा। देखो, अष्टाह्निका पर्व में मन को एकाग्र करने के लिए मैं पचमेरू, नदीश्वर द्वीप और सिध्दचक्र का ध्यान करता हूँ।"

शिष्य कहने लगे-"जी हाँ गुरुजी बताइये, इसे पूरा समझाइये। क्योंकि हम वहाँ जा तो सकते नही है, ध्यान कैसे करे?" आचार्यश्री कहने लगे- "देखो बेटा! तुम्हारे एक हाथ में कितनी अगुलियाँ हैं?" - "पाँच।" - "बीच में कौनसी अगुली है।" - "मध्यमा।" - "मध्यमा अगुली को सुदर्शन मेरू समझो, फिर समीप की अगुली विजय, अचल, मदर, विद्युन्माली समझकर इसमें ४-४ वनों की स्थापना कर ध्यान करो, मन निश्चित ही एकाग्र होगा।"

शिष्य- "गुरुदेव! नन्दीश्वर द्वीप के ध्यान का उपाय बताइये।"

आचार्यश्री- "पचमेरू की स्थापना ह्रदय में करो और उनके चारों ओर उत्तर में १. अजनगिरि, ४. दधिमुख, ८ रतिकर, इस प्रकार १३ चैत्यालयों को विराजमान कर, पूर्व, उत्तर, दक्षिण और पश्चिम चारों दिशाओं में १३ - १३ = कुल ५२ चैत्यालयों की स्थापना कर नन्दीश्वर द्वीप का ध्यान करो।"

शिष्य - "गुरुदेव! यह तो पर्व के दिन का हुआ, परन्तु और भी कोई साधन है जिससे हम अपने मन को प्रतिदिन एकाग्र कर सके।"

आचार्यश्री - "हाँ बेटा, देखो अभी बताता हूँ।" और फिर ध्यान मग्न से होते हुए बतलाने लगे-

"अपने शरीर में तीन लोक की रचना करो-ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक। ऊपर का भाग ऊर्ध्वलोक, मध्य का भाग मध्यलोक तथा नाभि से नीचे का भाग अधोलोक है। ऊर्ध्वलोक में देवों के विमानों में ८४ लाख ९७

हजार २६ अकृत्रिम चैत्यालय है, मध्य में ढाई द्वीप है। सबसे मध्य में जम्बूद्वीप है। उसके सात भाग है। मध्यभाग में हृदय पर विदेह क्षेत्र की स्थापना कर सीमंधर परमात्मा के दर्शन करो। विदेह क्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी में हृदय-कमल में विराजमान अष्ट प्रातिहार्य से युक्त प्रभू के दर्शन करना चाहिए। विशाल भव्य समवसरण है, बारह सभायें लगी हुई हैं, मनुष्य के कोठे में हम बैठे हैं, दिव्यध्वनि खिर रही है, प्रभू का उपदेश सुनकर अपने को धन्य मानो। इस प्रकार अर्हन्त प्रभू के साक्षात् दर्शन कर मध्यलोक के ४५८ चैत्यालयों के दर्शन करना चाहिए। पश्चात् अधोभाग में व्यन्तर और भवनवासी देवों के आवासों की स्थापना कर वहाँ के सात करोड़ बहत्तर लाख कृत्रिम चैत्यालयों के भाव दर्शन करना चाहिए। पश्चात् ऊर्ध्वलोक में कल्पवासी देवों के विमानो में स्थित भव्य जिनबिम्बो के दर्शन करना चाहिए। इस प्रकार प्रतिदिन तीन लोक सम्बन्धी जिनालयों की वन्दना करने से असंख्यात गुणी कर्मो की निर्जरा होती है।''

शिष्य- ''दर्शन के द्वारा मन एकाग्र करने के लिए क्या और भी साधन हैं गुरुदेव?''

आचार्यश्री- ''हाँ हैं। शिखरजी के दर्शन करो, चम्पापुरी, पावापुरी, कैलाश पर्वत, गिरनार, सोनागिर आदि जिन जिन क्षेत्रों से जो जो महापुरुष मोक्ष गये है, उन उन महापुरुषों की वहाँ स्थापना करके, वहाँ पर उनके भावपूर्वक दर्शन करना चाहिए।

अथवा जिन जिन मदिरों के दर्शन हमने किये है, प्रतिदिन उनका ध्यान करना चाहिए। जिस प्रकार रील में चित्रों के एक बार आ जाने पर जब भी बटन दबाया, बस, चित्रों को दिखाना शुरू कर देती है, उसी प्रकार आप सभी का भी कर्तव्य है कि मन को एकाग्र करने के लिए जिन-जिन मदिरों की, सिध्दक्षेत्रों की, अतिशय क्षेत्रो की वन्दना अभी तक की है उनकी सुन्दर सी रील अपने मानसपटल पर खीच लो और जब भी इच्छा हो ध्यान रूपी बटन को दबा दो, एक-एक करके जिनबिम्बों के दर्शन करते जाईये, सारी रील अचेतन से चेतन मस्तिष्क में आ जायेगी और आप घण्टों उस फिल्म को देखते रहोगे तो भी नही थकोगे। मन कही नहीं भटकेगा।''

शिष्य- ''हे कृपावान्! दर्शन के अलावा मन को एकाग्र करने का और कोई तरीका है?''

आचार्यश्री- 'हाँ बेटे, और भी तरीके है।'

''अपने हृदय में एक सिध्दचक्र यत्र बनाकर सिध्दप्रभु का चिन्तन करो। मै प्रतिदिन सिध्दचक्र यत्र, ऋषिमण्डल यन्त्र, विनायक यन्त्र आदि यन्त्रों का चिन्तवन करता हूँ। इससे भी मन बहुत एकाग्र हो जाता है।''

शिष्य- ''माला फेरते समय स्थिरता लाने के लिए हे गुरुदेव! क्या किया जाये?''

आचार्यश्री- ''अष्टदल कमल हृदय में बनाकर उसकी १-१ पांखुड़ी पर १२-१२ बिन्दु स्थापित करो। कर्णिका पर भी बिन्दु स्थापित करो। पश्चात् प्रत्येक बिन्दु पर एक बार णमोकार मन्त्र का जाप करो। इस तरह कुल १०८ बार मन्त्र का जाप हो जाने पर, पुनः क्रिया को दोहराओ। मन चंचल नही हो पाएगा, तुरन्त रूक जाएगा।''

आचार्यश्री एक दिन शिष्यों से कहने लगे- ''मैं हीरों का एक २४ मणियों का सुन्दर हार रोजाना पहिनता हूँ। बड़ा अच्छा लगता है। कई बार तो चौबीस घंटे पहिने रहता हूँ।''

शिष्य- 'निर्ग्रन्थ साधु भी कभी हार पहनते हैं?'' (हँसता है)

आचार्यश्री- "अरे! तुम हँसते हो, मै सच कहता हूँ।"

शिष्य- 'हे गुरुदेव! वह हार हम भी पहिनना चाहते है।'

आचार्यश्री- 'लो अभी पहिनाता हूँ।'

मन ही मन चौबीसों भगवानों के पवित्र नामों रूपी मणियों से निर्मित जयमाला को अपने कण्ठ का स्पर्श देते हुए हृदय में धारण करना चाहिए। कैसी है जयमाला? पाँचों इन्द्रियों और मन पर विजय की प्रतीक है जयमाला। ऐसी माला धारण करने से क्या मन भटक सकता है? कभी नही।

शिष्य- "गुरुदेव! जबतक ये परावलम्बन है। तब तक तो आत्मा की सिध्दि नही है। फिर इस प्रकार दर्शनादि के द्वारा मन को एकाग्र करने से क्या लाभ?"

आचार्यश्री- "ठीक है, परावलम्बन में ही आकुलता है। किन्तु जब तक स्वावलम्बन की प्राप्ति नही हुई है तब तक हम ससारी आत्माओं को अवलम्बन की आवश्यकता बनी रहती है। हाँ, इसे ही साध्य मानकर चुप नही बैठ जाना है। साध्य की प्राप्ति के लिए ये सब साधन है। जैसे सिध्दक्षेत्र पर सिध्दों का ध्यान करते-करते जब एकाग्रता आ जाती है तब अपने अन्दर विराजमान सिध्दात्मा के दर्शन कर आत्मानन्द का पान करना चाहिए। इसी प्रकार प्रत्येक स्थिति में भी ध्यान द्वारा मन की एकाग्रता होते ही अपनी ओर लक्ष्य करना और विचार करना चाहिए कि-मैं भी वही सिध्दस्वरूपी आत्मा हूँ, मै ही अनन्तचतुष्टय से युक्त पूज्य अरहन्त हूँ, मैं ही सिध्द समशुध्द हूँ, मै ही पचपरमेष्ठी हूँ। इस प्रकार की साधना करने से व साध्य की प्राप्ति करने का निरन्तर पुरुषार्थ करते रहने से एक दिन यह आत्मा स्वय भी सिध्द बन जायेगी।"

शिष्य- 'हे गुरुदेव! शारीरिक पीड़ा होने पर मन आकुलित होता है, मन बिल्कुल नही लगता। शारीरिक रोग दूर करने के लिए भी कोई उपाय हो तो बताईये।"

आचार्यश्री- "हाँ बेटा! साधु लोग हर समय दवाई का उपयोग तो कर नही सकते, परन्तु ध्यान ऐसी औषधि है जिससे सब रोग जड़मूल से नष्ट हो जाते है।"

शिष्य- 'पेट में किसी प्रकार की पीडा हो जाय तो क्या उपाय करना चाहिए?"

आचार्यश्री- (१) पेट के रोगी को "ॐ ह्री श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यो नम " इस मन्त्र का पेट पर स्थापन करना चाहिए। इसका जाप्य देना चाहिए, जिससे पेट के रोग शमन हो जाते है।

(२) ह्री बीजाक्षर या ब को गुह्य स्थान में स्थापन करने से गुह्य रोग दूर हो जाते है।

(३) भ का नाभि में स्थापन करके ध्यान करने से पेट सबधी रोग दूर हो जाते है।

(४) १६ स्वरों की स्थापना नाभिमडल पर करके चिन्तवन करने से भी पेट संबधी समस्त विकार दूर हो जाते हैं।

शिष्य- 'हे महाराज! हृदय रोग (हार्ट की बिमारी) कैसे दूर हो सकता है?'

आचार्यश्री- "हृदय में क् से म् तक के व्यञ्जनों की स्थापना करो एव उन पर से चिन्तवन करो, सारा रोग

दूर से ही भाग जाएगा।''

शिष्य- हे गुरुदेव! दातों से खून निकलता है, मंजन नहीं कर सकते, व्रतों में दोष लगता है। हमें पायरिया हो गया है। कुछ उपाय बताइये।''

आचार्यश्री- ''दाँतों की पक्तियों में य, र, ल, व, श, ष, स, ह, वर्णो की स्थापना करो और ध्यान में मग्न हो जाओ। सारा रोग भाग जाएगा।''

शिष्य- ''सिर में दर्द के कारण हमें अध्ययन में बाधा आती है। गुरुदेव कुछ उपाय बताइये।''

आचार्यश्री- ''मस्तक पर अ-आ वर्णो की स्थापना करो। उन वर्णो के ध्यान का अभ्यास करो। मस्तक सम्बन्धी सारे रोग दूर हो जायेगे।''

शिष्य- ''आँखों की ज्योति कमजोर हो रही है, आँखों में जलन आदि पीड़ा भी होती है। कृपया कुछ उपाय बताइये।''

आचार्यश्री- ''नेत्रों में इ-ई की स्थापना कर इनका तद्रूप चिन्तन करो। नेत्र सम्बन्धी रोग दूर हो जायेगे।''

आचार्यश्री- ''हमारे हाथों में २४ हीरे हर समय चमकते रहते है।''

शिष्य- कैसे?'

आचार्यश्री- ''आपकी अगुलियाँ कितनी है?- आठ आठ अगुलियो में पोरें कितने है? २४। २४ ही पोरों में १—१ भगवान रूप हीरों की मूर्तियाँ चमचमा रही हैं। १६ भगवान पीतवर्ण है, २ श्वेतवर्ण (चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त) हैं, २ लालवर्ण (पद्मप्रभ, वासुपूज्य)है, दो श्याम वर्ण (मुनिसुव्रत, नेमिनाथ) और दो भगवान हरित वर्ण (सुपार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ) है।''

शिष्य- ''गुरुजी और भी नये तरीके हैं क्या?''

गुरुजी- ''हाँ बेटे, देखो यह शरीर पूरा द्वादशांग रूप ही है-कैसे? स्वर और व्यजनों को अपने शरीर पर स्थापित करके ध्यान करना चाहिए-

अ आ	मस्तक के दोनों ओर
इ ई	आँखों में, दायी बायी में क्रम से
उ ऊ	कर्ण में, दायें बायें में क्रम से
ऋ ॠ	नासिका में, दायी बायी में क्रम से
लृ ॡ	गण्डस्थल में, दायें बायें में क्रम से
ए ऐ	दतपक्ति पर
ओ औ	दोनो स्कंधों पर
अं	जिव्हा पर

अः — सिर पर

क ख ग घ ङ — दाहिने हाथ पर

च छ ज झ ञ — बायें हाथ पर

ट ठ ड ढ ण — दायी ओर हृदय पर

त थ द ध न — बायी ओर हृदय पर

प फ — दाए बाए पैर (जघास्थान)

ब — गुह्य इन्द्रिय पर

भ — नाभि पर

म — पृष्ठ भाग पर

य — हृदय पर

र — सिर पर

ल — पीछे गर्दन पर

व — गले पर

श ष स — पैरों पर (श स नीचे दोनो पजो पर और ष बीच में)

ह — हृदय पर''

शिष्य- ''इसकी स्थापना करने के बाद क्या करना चाहिए?''

आचार्यश्री- ''एक-एक अक्षर पर चिन्तन करना चाहिए।''

शिष्य- 'कैसे चिन्तन करे? आप बता दीजिये।''

आचार्यश्री- ''जैसे अ है। अ से प्रभु का चिन्तवन करो। हे प्रभु! आप अ रूप है, अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त-वीर्य स्वरूप है और फिर अपनी आत्मा की ओर विचार कीजिए-हे आत्मन्! तू भी अ रूप है। कैसे? अनन्त चतुष्टय रूप है, अनन्त ज्ञान रूप है। इसी प्रकार समस्त अक्षरों के द्वारा प्रभु का ध्यान करते हुए अपने आत्मस्वरूप का मनन चिन्तवन करने से मन बिल्कुल एकाग्र होता है और अपने स्वरूप की प्राप्ति भी होती हैं।

अ — अनन्तदर्शनस्वरूपोऽहम्, अनन्तज्ञानस्वरूपोऽहम्।

आ — आनन्दस्वरूपोऽहम्।

इ — ईर्ष्यारहितोऽहम्।

ई — ईश्वरस्वरूपोऽहम्।

उ	उच्चादि गोत्ररहितोऽहं।
ऊ	ऊर्ध्वगमन स्वभावरूपोऽहं।
ऋ	ऋषिवर-स्वरूपोऽह।
ॠ	ॠश-रहितोऽह।
ऌ	लोभ-रहितोऽहं।
ॡ	लालचरहितोऽह।
ए	एकत्व-स्वरूपोऽह।
ऐ	ऐन्द्र-रहितोऽहं।
ओ	ओघभाव-रहितोऽह।
औ	औपशमिकभाव-रहितोऽह।
अं	अनन्तसुखस्वरूपोऽह।
अः	आनन्दस्वरूपोऽह।

इसी प्रकार व्यञ्जनों में निज वैभव घटित कीजिए-

क	कषायरहितोऽह।
ख	ख (इन्द्रिय)रहितोऽह।
ग	गति, गुणस्थान-रहितोऽहं।
घ	घातिकर्म-रहितोऽहं।
ङ	अगरहितोऽहं।
च	चित्, चमत्कार-स्वरूपोऽहं
छ	छल-रहितोऽहं।
ज	जन्म-जरा-जीवस्थान-रहितोऽहं।
झ	झझावात-रहितोऽहं।
ञ	आर्त-रहितोऽहं।
ट	टंकोत्कीर्ण ज्योति स्वरूपोऽहं।
ठ	ठाण (जीवस्थान) रहितोऽहं।
ड	डर रहितोऽह।
ढ	ढोंग रहितोऽह।

ण	णिम्मलोऽह।
त	तीर्थंकर नामकर्मरहितोऽह, तपरहितोऽह।
थ	थावर नामकर्म रहितोऽह।
द	देवाधिदेव-स्वरुपोऽह, दीनता-रहितोऽह।
ध	धर्मस्वरूपोऽह।
न	नर-नरकादि-पर्याय-रहितोऽह।
प	पुण्य-पाप-रहितोऽह।
फ	फासा (स्पर्श) रहितोऽह।
ब	बधरहितोऽह।
भ	भगवत् स्वरूपोऽह।
म	ममता रहितोऽह।
य	यतिवर-स्वरूपोऽह।
र	राग-द्वेषादि-रहितोऽह।
ल	लिंगातीतोऽह।
व	वीतरागोऽह।
श	शरीरातीतोऽह।
स	ससारातीतोऽह।
ष	षटकायातीतोऽह।
ह	हास्यादि कर्म रहितोऽह।
क्ष	क्षमा स्वरूपोऽह।
त्र	त्रिकालज्ञोऽह।
ज्ञ	ज्ञायकभावयुक्तोऽह''

इस प्रकार पदस्थ ध्यान के द्वारा अपने स्वरूप का विचार करते-करते एक ऐसा समय आवेगा कि जिस समय एक अद्भुत आनन्द की अनुभूति होगी वही जीवन का वास्तविक आनन्द है।''

पुन आचार्यश्री- ''हमारे हाथ पाँच रत्नो से सुशोभित है।''

शिष्य- 'कैसे? समझाइये।''

आचार्यश्री- पाँच अगुलियों पर पाँचों परमेष्ठीरूप रत्न विराजमान हैं। इस प्रकार चौबीसों भगवान् और

पंचपरमेष्ठियों को अपने में ही स्थापित करके उनके गुणों का चिन्तवन करना चाहिए।''

शिष्य- ''महाराज जी, कभी-कभी हमें बहुत भय लगता है। उस समय क्या करना चाहिए? मन आकुलित हो जाता है।''

आचार्यश्री- ''एक चार पाखुड़ी का कमल बनाकर, बीच में अर्हन्त भगवान को विराजमान करो, ऊपर सिध्द भगवान को विराजमान करो, दाहिनी ओर आचार्यश्री को तथा बायीं ओर अध्ययन कराते हुए उपाध्यायश्री को और नीचे साधु परमेष्ठी को विराजमान करो। अब विचार करो, जैसे अरहन्त भगवान आठ प्रातिहार्य सहित सुन्दर समवसरण में विराजमान हैं, दिव्यध्वनि खिर रही है। अब अपने आपको मनुष्यों के कोठे में विराजमान करो।बस, दिव्यध्वनि सुनने लग जाओ, सारा डर छूमन्तर हो जाएगा।''

शिष्य- 'हे गुरुदेव! पदस्थ ध्यान के द्वारा भी मन रोका जा सकता है क्या? कैसे रोकते है? कृपया उपाय बताइये।''

''पदस्थ ध्यान में पंचपरमेष्ठी वाचक पदों का चिन्तन किया जाता है। भिन्न भिन्न पदों के द्वारा जाप्य भी किये जाते है।यह पदस्थ ध्यान भी एकाग्रता का बहुत बड़ा साधन है। एक, दो,तीन, चार, पाँच आदि अक्षरों का जाप्य करना चाहिये-

ॐ नम,

अरिहन्त, सिद्ध नमः,

अ सि आ उ सा नमः इत्यादि।

।माहात्म्यरत्नाकर।

प्रश्न हमारे
उत्तर आपके

॥वात्सल्य रत्नाकर॥
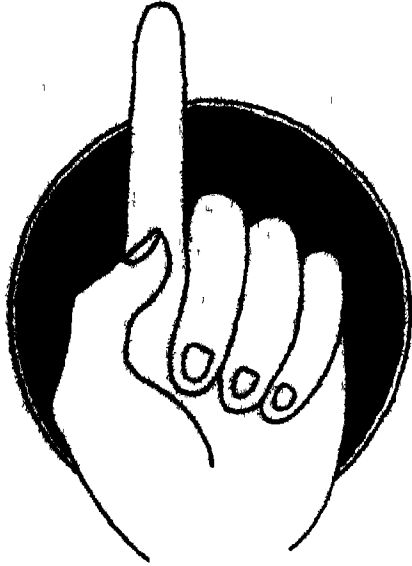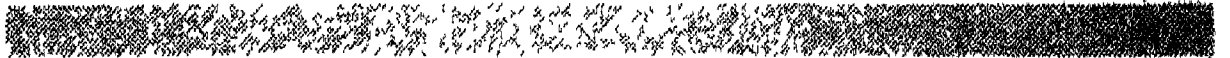
प्रश्न हमारे उत्तर आपके

साधुसमाज को आचार्यश्री का उदबोधन

दिगम्बर जैन साधु-साध्वियों को अपनी वीतरागता, अपने व्रतो की ओर लक्ष्य करना चाहिए। संहनन-हीन होने से कहीं शिथिलता आये तो प्रायश्चित्त द्वारा शुद्धिकरण गुरु से करवाना चाहिए। जिनभक्ति व पञ्चपरमेष्ठी के गुणों का चिन्तन करते हुए अपने कर्त्तव्यों मे दृढ़ रहना चाहिए।

प्रश्न—व्रतों मे दृढ रहने के लिए साधु क्या करें?

उत्तर—प्रतिदिन बारह भावनाओं का चिन्तन करें तथा एक-एक व्रत की पाँच-पाँच भावनाएँ, जो आचार्य उमास्वामी ने बतायी हैं, उनका प्रतिसमय चिंतन करे।

प्रश्न—परीषह व उपसर्ग आने पर साधु को क्या करना चाहिए?

उत्तर—पञ्च नमस्कार मंत्र का जाप करना चाहिए तथा उपसर्ग विजयी साधु सुकुमाल, सुकौशल, सजयन्त आदि का ध्यान करना चाहिए।

प्रश्न—एकलविहारी साधु के लिए आगम मे क्या कथन है?

समाधान—वर्तमान में साधु को एकल विहारी रहने की जिनेन्द्रदेव की आज्ञा नही है। इससे महादोष उत्पन्न होते है।

प्रश्न—एकलविहारी के लिए श्रावक का क्या कर्त्तव्य है?

उत्तर—श्रावक का कर्त्तव्य है कि उसे एक दिन आहार कराके समझा-बुझाकर संघ में पहुँचा दे। नही मानने पर उसकी नवधाभक्ति, विशेषभक्ति, आदर सन्मान आदि नही करे।

भारतवासियों को आचार्य महाराज का संदेश

भारत की जनता को प्रतिदिन प्रात परमात्मा की भक्ति व आत्मा का ध्यान करना चाहिए।

हमारा देश श्रमप्रधान देश है, भारत की जनता ने श्रम करना छोड़ दिया, सारा कार्य मशीनों के अधीन हो जाने से देश की श्रमण सस्कृति का ह्रास होता चला जा रहा है।

आज मानव ने मानसिक श्रम तो चालू किया है पर शारीरिक श्रम को छोड़ दिया, फलत अनेक प्रकार के शारीरिक व मानसिक रोग पनप रहे है।

प्राचीन काल में महिलाएँ धट्टी पीसती थी, कुएँ से पानी खीचती थी जिससे पेट, कमर की पीड़ाएँ स्त्री को नहीं होती थी। पर आज स्त्रियों के हाथ तो ठडे बने हुए है। घर-घर मे प्रमाद छा गया है। स्त्रियों के प्रमादी बन जाने से घर के घर बर्बाद हो रहे है।

हमारे देश की समस्त जनता को मात्र इतना ही उपदेश है कि 'श्रम करे, श्रमण बने'।

जैन समाज को आचार्यश्री का संदेश

(१) जैन समाज को हमारा प्रथम उपदेश है कि उसे प्रथम तो पुण्य का अधिक से अधिक सञ्चय चाहिए।

(२) जिनवाणी पर श्रध्दा रखकर, उसमे बताये मार्ग पर चलना चाहिए।

(३) दि जैन साधु समाज के प्रति विनय व श्रध्दा करनी चाहिए।

(४) अपने नगर, गाँव, प्रान्त की प्रथाओं के चक्कर मे न फँसकर आगम परम्परा की रक्षा करनी चाहिए।

(५) समाज मे फैली विकृतियो (विधवा विवाह, दहेज-प्रथा, विजातीय विवाह आदि) को दूर करने का प्रयत्न करे।

प्रश्न हमारे: उत्तर आपके

प्रश्न—गुरुदेव! देश में बढ़ती हुई हिसा का नाश कैसे हो?

उत्तर—हम भारतीय भाई-भाई है, यहाँ के पशु-पक्षी हमारे देश की सम्पत्ति है, इस प्रकार की वात्सल्य भावना की जागृति करे। 'वात्सल्य हिसा का नाशक है'।

प्रश्न—गुरुदेव! विज्ञान से हमारे देश को क्या हानि हुई है?

उत्तर—विज्ञान से हमारे देश को लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक हुई है। जितनी-जितनी मशीनें आ रही है, उतना-उतना आज का जीवन प्रमादी बन रहा है। देश मे बेरोजगारी, भूखमरी पनपती जा रही है।

आज मनुष्य निरन्तर भयभीत है। घर से बाहर निकलने के बाद सकुशल लौट आने का भी उसे विश्वास नही है। पहले मनुष्य मोटा खाते थे, मोटा पहनते थे और सुख से सोते थे पर आज सब दिखावटी कार्य बन

गये हैं। श्रमण परम्परा मे हमारे देश की जीवन्त उज्ज्वलता आध्यात्मिक उन्नति से है, विज्ञान से नही।

प्रश्न—भारत की जनसंख्या बढ़ रही है? इसे कैसे रोका जाय?

उत्तर—बेटा! यह सब गलत है। भारत में मानव की संख्या घट रही है, बढ़ी नही है।

पूर्व काल का इतिहास देखिए, हमारे देश में सिर्फ यादव वशी ही ५६ करोड़ थे। बताओ, आज क्या स्थिति है। आज तो पाप कि तीव्रता से तिर्यञ्चों की संख्या बढ़ती चली जा रही है। कितनी मछलियाँ, मेढक, मच्छर आदि हो रहे हैं, यह सब पाप का फल समझो।

प्रश्न—गुरुदेव! प्रकृति विरुध्द क्यो हो रही है? घनघोर घटा भी छा जाती है, पर पानी नही बरसता है, और बादल उड़ जाते है, यह क्यों?

उत्तर—आज मानव मानव को ठग रहा है। देव-शास्त्र-गुरुओं से मायाचारी करते है। 'हाँ, हाँ, करके धोका देते रहते हैं, प्रकृति उसी का फल दे रही है। जैसा करोगे, वैसा पाओगे।

प्रश्न—देश मे पानी इतना कम क्यो बरस रहा है?

उत्तर—आज जगह-जगह के बड़े-बड़े पेड़ कटवा दिये जा रहे है, इससे इस देश को महान हानि हुई है। प्राचीन काल मे देश हरा-भरा था, बड़े-बड़े पेड़ नजर आते थे, आज शहरो मे पेड़ को काटना ही शहर की शान है। फलत प्रकृति भी विरुध्द बन गई है। जिस देश मे जितने अधिक पेड-पौधे होगे, उस देश मे उतनी अधिक वर्षा होगी। पेड़ हमारे देश की सम्पत्ति हैं, उन्हे काटना दानवता है।

आज तो शुध्द हवा भी नही मिलती। सुबह से शाम तक कल-कारखानो की, मोटर, कार, स्कूल की धूँ-धूँ की आवाज से मानव-मन भारी भारी हो जाता है। ये सब जीवन की शाति के नाशक समझो।

प्रश्न—जैन समाज मे फैली विकृतियाँ दूर कैसे हों?

उत्तर—प्राचीनकाल मे पचायत प्रथा थी। समाज का कोई भी व्यक्ति गलत कार्य करता तो पचायत उसे दडित करती या समाज से निष्कासित कर देती थी अत: पाप का भय था। पर आज पचायत प्रथा नही होने से समाज मे विकृतियाँ पनपने लगी है।

जैन समाज में फैली विकृतियों को निकालने के लिए 'पचांयत प्रथा' लागू करना आवश्यक है।

प्रश्न—विकृतियों का मूल बीज क्या है?

उत्तर—(१) कुसंगति और (२) पाप-भय की समाप्ति।

प्रश्न—विधवा विवाह हानिकर क्यों?

उत्तर—यह अनैतिकता है। नारी का शील हमारे देश की सम्पत्ति है। विधवा विवाह व्यभिचार का पोषक है। भारतीय संस्कृति में नारी का एक बार ही विवाह होता है।

प्रश्न—पुरुष के समान स्त्री को भी पुनर्विवाह की आज्ञा क्यों नही?

उत्तर—विवाह स्त्री का होता है। पुरुष का नहीं। पुरुष एक समय में ९६,००० स्त्रियों का भोग कर सकता है पर स्त्री में वह शक्ति नहीं है। पुरुष आकाश (बादल) के समान है और स्त्री पृथ्वी के समान।

आकाश छोड़ता चला जाता है अत. नवीन-नवीनगर्भा आकाश मे आते रहते हैं और वह शुध्द का शुध्द रहता है, और पृथ्वी ग्रहण करती रहती है, वह अशुध्द ही बनी रहती है। दृष्टान्त तो यह हुआ। इसी प्रकार पुरुष छोड़ता चला जाता है, वह शुध्द रहता है पर स्त्री ग्रहण करती है अत. उसका पुनर्विवाह करना नैतिकता का पतन है।

❀❀❀
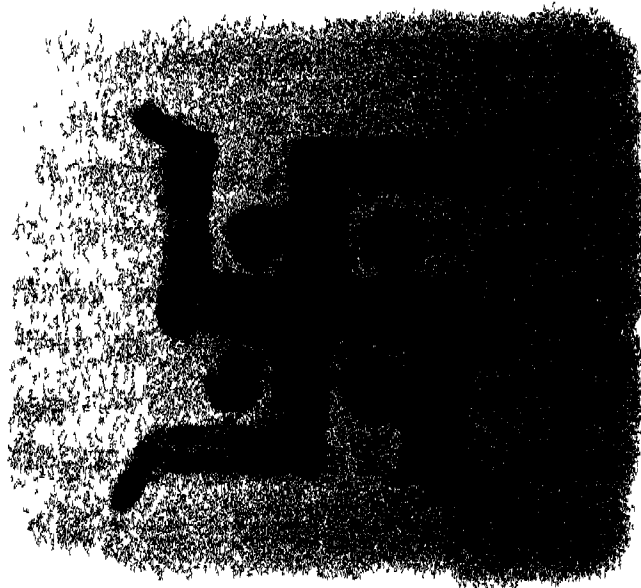
पंचपरमेष्ठी स्तवन

अरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय
सर्व साधु सुख साता
इन्द्र नरेन्द्र सब सुर जेते
पंडित बुध जन सारे

भवतम भंजन शीश नमावत
रक्षक तुम्ही हमारे
जब शुभ मन से ध्यावे
तब शुभ आशीष पावे।।

गावें तब जय गाथा
भव दुख बाधा हरो हमारी
तुम्हें नमावे माथा
जय है, जय है, जय है, जय जय जय जय है
सर्व साधु सुख साता।

चारों गति भ्रमत फिरे है
दुख अनेक उठाये
ज्ञान चक्षु जब हमारे
तुमरे दर्शन पाये
सुख की ये आश लगाये
हम सब तुमरे ढिग आये
कहाँ मिले सुख साता

नाथ तुम्हारे पथ पर चलकर
मुक्ति पथ मिल जाता है
जय है, जय है, जय है, जय जय जय जय है
सर्व साधु सुख साता।

॥वात्सल्यरत्नाकर॥

''वात्सल्य रत्नाकर'' के लिए समर्पित
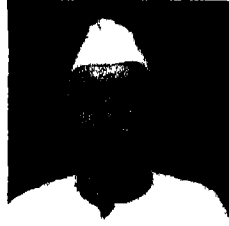
स्व लाला मोहनलाल जैन

स्व सौ चन्द्रवती जैन

लाला श्रीपाल जैन
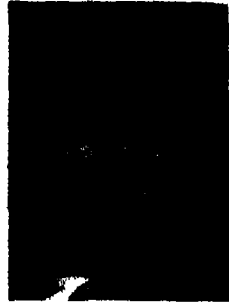
सौ कैलाशवती जैन

राजेन्द्र कुमार जैन
(आर के जैन)

सौ मधु जैन

शरत जैन

सौ रचना जैन

कुमारी सोनिया जैन
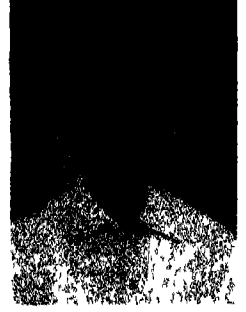
स्व श्री मोहनलालजी पहाड़िया

शिखरचद पहाड़िया

सौ प्रमलता पहाड़िया

कविता

आनन्द

टीना
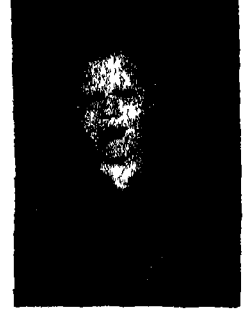
वरुण

प्रशान्त गगवाल

सौ ग्नू गगवाल

स्व श्रीमती लादी देवी पहाड़िया

पाचूलाल पहाड़िया

सौ निर्मलादेवी पहाड़िया

सपना

अमित

विकास

॥वात्सल्यरत्नाकर॥